भा० दि० जैनसंघग्रन्थमालायाः प्रथमपुष्पस्य दशमोदलः

श्रीयतिवृषभाचार्यरचितचूर्णिसूत्रसमन्वितम्

श्रीभगवद्गुणभद्राचार्यप्रणीतम्

कसायपाहुडं

तयोश्च

श्रीवीरसेनाचार्यविरचिता जयधवला टीका

[सप्तमोऽधिकारः वेदकअनुयोगद्वारम्]

सम्पादकौ

पं० फूलचन्द्र
सिद्धान्तशास्त्री, सिद्धान्ताचार्य
सम्पादक महाबन्ध, सहसम्पादक
धवला

पं० कैलाशचन्द्र
सिद्धान्तरत्न, सिद्धान्ताचार्य,
सिद्धान्तशास्त्री, न्यायतीर्थ
प्रधानाचार्य स्याद्वाद महाविद्यालय
काशी

प्रकाशक
मंत्री साहित्य विभाग
भा० दि० जैन संघ, चौरासी मथुरा

वि० सं० २०२४] वीरनिर्वाणाब्द २४९३ [ई० सं० १९६७

मूल्यं रूप्यकद्वादशकम्

संशोधित मूल्य .... ७०)

प्रकाशककी ओरसे

कसायपाहुडं (श्री जयधवल जी) का दसवाँ भाग पाठकों के कर-कमलोंमें अर्पित करते हुए हमें प्रसन्नता हो रही है। यद्यपि इस भागका प्रकाशन चार वर्ष के बाद हो रहा है। नौवाँ भाग चार वर्ष पूर्व प्रकाशित हुआ था।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

इस समय देशमें घोर महंगाई होनेसे कागज, छपाई, जिल्द बंधाई आदिके व्ययमें भी वृद्धि हुई है और इस तरह लागत व्यय पहलेसे ड्योढ़ा हो गया है। फिर भी मूल्य पुराना ही रखा गया है। ऐसे महान् ग्रन्थ बार-बार नहीं छपते। अतः मन्दिरोंके शास्त्र भण्डारोंमें इन ग्रन्थराजोंकी एक-एक प्रति सर्वत्र विराजमान अवश्य करना चाहिये।

यह ऐसा ग्रन्थ है जिसका जिनवाणीसे एक तरहसे साक्षात् सम्बन्ध है। पं० आशाधर जीने कहा है—

ये यजन्ते श्रुतं भक्त्या ते यजन्तेऽञ्जसा जिनम्।
न किञ्चिदन्तरं प्राहुराप्ता हि श्रुतदेवयोः॥

जो शास्त्रकी पूजन करते हैं वे वस्तुतः जिनदेवकी ही पूजन करते हैं। क्योंकि सर्वज्ञदेवने जिनवाणीमें और जिनदेवमें कुछ भी अन्तर नहीं कहा है।

अतः जिन मन्दिरों और जिन मूर्तियोंके निर्माणमें द्रव्य व्यय करनेके इच्छुक दानी जनोंको जिनवाणीके उद्धारमें भी अपना धन लगाकर सुकीर्तिके साथ सम्यग्ज्ञानके प्रसारमें हाथ बटाना चाहिये।

अब इस ग्रन्थके केवल चार भाग शेष हैं। यदि उदार धनिक एक-एक भाग अपनी ओरसे प्रकाशित करा दें तो यह महान् कार्य जल्द पूर्ण हो सकता है।

अन्तमें हम इस कार्यमें सहयोग देनेवाले सभी सज्जनोंका आभार मानते हैं।

जयधवला कार्यालय
भदैनी, वाराणसी
वी० नि० सं० २४९३

कैलाशचन्द्र शास्त्री
मंत्री साहित्य विभाग
भा० दि० जैन संघ
चौरासी, मथुरा

मार्गदर्शक :- ... सागर जी महाराज

विषय परिचय

अनादिकालसे जैन परम्परामें जो भी मङ्गल कार्य किया जाता है उसके मंगलाचरण पूर्वक करनेका प्रघात है। टीकाकार आचार्यने अपने इष्ट मंगलकार्यकी सिद्धिके अभिप्रायवश वेदक महाधिकारके आदिमें सर्व प्रथम सिद्धोंको भाव-द्रव्य नमस्कार किया है।

जैसा कि इस अर्थाधिकारके नामसे स्पष्ट है इसमें यह संसारी जीव मोहनीय कर्म और उसके अवान्तर भेदोंका कहाँ कितने काल तक सान्तर या निरन्तर किस रूपमें वेदन करता है आदि विषयका स्पष्ट निर्देश किया गया है। इसके मुख्य अधिकार दो हैं—उदय और उदीरणा. यहाँ कषायप्राभृतके पन्द्रह अधिकारोंमेंसे इसे छटा अधिकार कहा गया है। इस ग्रन्थके प्रारम्भमें आचार्यवर्य वीरसेनने इन अधिकारोंका विचार तीन प्रकारसे किया है। उसके अनुसार एक दृष्टिसे यह सातवाँ अधिकार भी ठहरता है। हमने उस दृष्टिकी मुख्यतासे इसे सातवाँ अधिकार सूचित किया है। इसके लिए इस ग्रन्थकी प्रथम पुस्तक पर दृष्टिपात कीजिए।

यों तो उदीरणा उदयविशेषका ही दूसरा नाम है। किन्तु इन दोनोंमें अन्तर यह है कि कर्मोंका जो यथाकाल फलविपाक होता है उसकी उदय संज्ञा है और जिन कर्मोंका उदयकाल प्राप्त नहीं हुआ उनको उपाय विशेषसे पचाना उदीरणा कहलाती है। इस महाधिकारको आचार्यवर्य गुणधरने चार सूत्र गाथाओंमें निबद्ध किया है। उनमेंसे प्रथम सूत्र गाथा **कदि आवलियं पवेसेइ** इत्यादि है।

इसका विवेचन यहाँ दो प्रकारसे किया गया है। इसकी प्रथम व्याख्यामें बतलाया है कि इस द्वारा प्रकृति उदीरणा, प्रकृति उदय और उसकी कारणभूत बाह्य सामग्रीका निर्देश किया गया है। वहाँ बतलाया है कि इसके प्रथम पाद द्वारा उदीरणा सूचित की गई है, दूसरे पाद द्वारा विस्तार सहित उदय सूचित किया गया है। उक्त गाथाके दूसरे पादद्वारा क्या सूचित किया गया है इसका प्रकारान्तरसे निर्देश करते हुए वहाँ बतलाया है कि अथवा उदयावलिके भीतर प्रविष्ट हुई उदय प्रकृतियों और अनुदय प्रकृतियोंको ग्रहण कर प्रवेश संज्ञावाला अर्थाधिकार इस सूत्रवचन द्वारा सूचित किया गया है।

यहाँ यह शंका होनेपर कि पहले जब कि वेदक महाधिकारमें उदय और उदीरणा ये दो अधिकार ही सूचित किये गये हैं ऐसी अवस्थामें उक्त पाद द्वारा तीसरे अधिकारका सूचन हुआ है यह कहना उपयुक्त नहीं है, समाधान करते हुए बतलाया है कि किसी भी प्रकारसे इस प्रवेश संज्ञावाले अधिकारका उदयके भीतर ही अन्तर्भाव हो जाता है, इसलिए कोई दोष नहीं है।

इसप्रकार गाथाके पूर्वार्धका स्पष्टीकरण करनेके बाद उसके उत्तरार्धका स्पष्टीकरण करते हुए बतलाया है कि क्षेत्र, भव, काल और पुद्गलोंको निमित्तकर कर्मोंका उदय और उदीरणारूप फलविपाक होता है। यहाँ क्षेत्र पदसे नरकादि गतियोंका क्षेत्र लिया गया है, भवपदसे एकेन्द्रिय आदि पर्यायोंको ग्रहण किया गया है, काल पदसे शिशिर, वसन्त, ग्रीष्म और वर्षाकाल आदिका ग्रहण हुआ है तथा पुद्गल पदसे गन्ध, ताम्बूल, वस्त्र, आभरण आदि पुद्गलोंका ग्रहण हुआ है।

प्रकृति उदीरणाके समग्र विवेचनके बाद प्रकृति उदयका संकेत करते हुए उक्त गाथाके उत्तरार्धका आलम्बन लेकर चूर्णिसूत्र और उसकी टीकामें पुनः इसका विचार किया गया है। यहाँ उदयकी व्याख्या करनेके बाद लिखा है कि कर्मोंका वह उदय क्षेत्र, भव, काल और पुद्गलोंको निमित्तकर होता है। टीकाके शब्द हैं—**खेत्त-भव-काल-पोग्गले अस्सिऊण जो ट्ठिदिक्खयो उदिण्णफलकम्मक्खंधपरिसडण-लक्खणो सोदयो त्ति सुत्तत्थावलंबणादो।**

इस विवेचनसे स्पष्ट है कि कर्मशास्त्रमें कर्मोदय और कर्म उदीरणामें नरकगति आदिके योग्य क्षेत्र, एकेन्द्रियादि भव, शिशिर आदि काल और पुद्गलोंके परिणामरूप गृह, वस्त्र, भोजन, धन आदि बाह्य सामग्रीको बाह्य निमित्तरूपमें स्वीकार किया गया है। श्रीगोम्मटसार कर्मकाण्ड कर्मशास्त्रका प्रमुख ग्रन्थ है। इसके प्रथम अधिकारमें नामादि चार निक्षेपों द्वारा कर्म पदका व्याख्यान करते हुए द्रव्यनिक्षेपके दूसरे भेद नोआगम द्रव्यकर्मके निरूपणके प्रसंगसे उसके तीन भेद किये गये हैं—ज्ञायकशरीर, भावि और तद्व्यतिरिक्त। इनमेंसे ज्ञायकशरीरका एक भेद च्यावित है। इसकी व्याख्या करते हुए वहाँ पर बतलाया है कि जो मरण विषवेदन, रक्तक्षय, भय, शस्त्र-प्रहार और संक्लेशवश तथा श्वासोच्छ्वासके निरोधसे होता है उसकी च्यावित संज्ञा है। स्पष्ट है कि यहाँपर शरीरके त्यागपूर्वक मरणमें बुद्धिपूर्वक या अबुद्धिपूर्वक बाह्य संयोगकी मुख्यतासे यह संज्ञा रखी गई है। यहाँ बाह्य संयोग बाह्य निमित्त है और उसको निमित्तकर शरीरके त्यागपूर्वक मरण होना नैमित्तिक कार्य है। इस अपेक्षासे इसकी च्यावित संज्ञा रखी गई है। च्युत शरीरसे च्यावित शरीरका भेद दिखलाना ही इसका मुख्य प्रयोजन है। इस प्रकार इस कथनमें बाह्य सामग्रीको जहाँ व्यवहार हेतुरूपसे स्वीकार किया गया है वहाँ त्यक्त शरीरके विवेचनके प्रसंगसे भी उसके प्रथम भेद इंगिनीमरणमें भी स्व-परोपचाररूप बाह्य निमित्तको स्वीकार किया गया है। समाधिमरणका इंगिनीमरण एक भेद है वह बुद्धिपूर्वक उपचारको निमित्तकर होता है यह इसका तात्पर्य है।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

इस प्रकार गोम्मटसार कर्मकाण्डके इस विवेचनसे यह स्पष्ट हो जाता है कि किस अवस्थामें वर्तमान आयुकी उदीरणा किस बाह्य सामग्रीको निमित्तकर होती है। किसी भी कर्मके उदयका कोई न कोई बाह्य निमित्त अवश्य होता है ऐसा कर्मशास्त्रका अभिप्राय है और इसी लिए तद्व्यतिरिक्त नोआगम द्रव्यनिक्षेपके द्वितीय भेद नोकर्मका निरूपण करते हुए इसी गोम्मटसार कर्मकाण्डमें प्रत्येक मूल व उत्तर प्रकृतियोंके नोकर्म (बाह्य निमित्त) का पृथक्-पृथक् विचार किया गया है। वहाँ बतलाया है कि—

इष्ट अन्न-पानादि सातवेदनीयके नोकर्म (सातावेदनीयके उदयमें बाह्य निमित्त) हैं और अनिष्ट अन्न-पानादि असातावेदनीयके नोकर्म हैं (१–७३)। छह आयतन सम्यक्त्व प्रकृतिके नोकर्म हैं अर्थात् सम्यक्त्व प्रकृतिके उदयमें बाह्य निमित्त हैं, छह अनायतन मिथ्यात्व प्रकृतिके नोकर्म हैं तथा दोनों सम्यग्मिथ्यात्व प्रकृतिके नोकर्म हैं (१–७४)। मिथ्या आयतन अर्थात् कुदेवादिक अनन्तानुबन्धी चतुष्कके नोकर्म हैं, शेष कषायोंके अपने अपने योग्य मिथ्या शास्त्र आदि नोकर्म हैं (१–७५)। स्त्री शरीर आदि स्त्रीवेद आदिके नोकर्म हैं, विदूषक आदि हास्य कर्मके नोकर्म हैं, सुपुत्र आदि रतिकर्मके नोकर्म हैं (१–७६)। इष्टवियोग और अनिष्ट संयोग आदि अरति कर्मके नोकर्म हैं, मृत सुपुत्र आदि शोक कर्मके नोकर्म हैं तथा सिंहादि और अशुचि आदि द्रव्य भययुगलके क्रमसे नोकर्म हैं (१–७७) आदि।

यहाँ पर हमने कुछ ही कर्मोंके उदय और उदीरणाका बाह्य निमित्त क्या है इसका उल्लेख किया है। कर्मकाण्डमें तो इसका सभी कर्मोंकी अपेक्षा विस्तारसे विचार किया गया है, जो कषायप्राभृतके उक्त कथनके अनुरूप है। हमें विश्वास है कि आगमके अभ्यासी सभी धर्मबन्धु इस विषयमें अपना कर्मशास्त्रके अनुकूल दृष्टिकोण बनाते समय इन तथ्योंको ध्यानमें रखेंगे।

हम यह अच्छी तरहसे जानते हैं कि चरणानुयोग और प्रथमानुयोगमें बाह्य सामग्रीका प्रायः पुण्य-पापके फलरूपमें निर्देश दृष्टिगोचर होता है, किन्तु उन अनुयोगोंमें बाह्य साधनका फलरूपसे प्रतिपादन करना ही इसका मुख्य कारण है। ये बाह्य साधन कहीं विस्रसा मिलते हैं और कहीं इनके मिलनेमें जीवका योग और विकल्प निमित्त होता है।

यह **'कदि आवलियं पवेसेइ'** इत्यादि गाथाकी प्रथम व्याख्या है। इसकी दूसरे प्रकारसे व्याख्या करते हुए वहाँ बतलाया है कि इसके प्रथम पाद द्वारा उदीरणाकी, द्वितीय पाद द्वारा प्रकृति प्रवेशकी

और गाथाके उत्तरार्ध द्वारा सकारण कर्मोदयकी सूचना की गई है—**एदम्मि गाहापच्छद्धे कम्मोदओ सकारणो पडिबद्धो त्ति घेत्तव्वो।**

वेदक अनुयोगद्वारकी दूसरी सूत्रगाथा है—'**को कदमाए ट्ठिदीए**' इत्यादि। इसके पूर्वार्ध द्वारा स्थिति उदीरणा, अनुभाग उदीरणा और प्रदेश उदीरणाकी सूचना की गई है। तथा इसी द्वारा स्थिति, अनुभाग और प्रदेशोंका प्रवेश सूचित किया है, क्योंकि देशामर्षकभावसे इस सूत्रकी प्रवृत्ति हुई है। तथा इसके उत्तरार्ध द्वारा मोहनीयकर्मके सभी प्रकारके उदय और उदीरणाके सान्तरकाल और निरन्तर काल तथा नाना जीव और एक जीव विषयक काल और अन्तरकी सूचना की गई है। गाथामें दो बार 'वा' पदका प्रयोग हुआ है, अतएव दूसरे 'वा' पद द्वारा गाथामें नहीं कहे गये समुत्कीर्तना आदि समस्त अनुयोगद्वारोंकी सूचना की गई है।

वेदक अनुयोगद्वारकी तीसरी गाथा है '**बहुगदरं बहुगदरं से**' इत्यादि। इस द्वारा प्रकृति, स्थिति, अनुभाग और प्रदेशविषयक भुजगार अनुयोगद्वार का विस्तारके साथ निरूपण किया गया है। पदनिक्षेप और वृद्धि अनुयोगद्वारोंका इसीमें अन्तर्भाव हो जाता है।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज
वेदक अनुयोगद्वारकी चौथी गाथा है '**जो जं संकामेदि य**' इत्यादि। इस द्वारा मोहनीय कर्मके जघन्य और उत्कृष्ट रूप प्रकृति, स्थिति, अनुभाग और प्रदेशविषयक बन्ध, संक्रम, उदय, उदीरणा और सत्कर्मके अल्पबहुत्वकी सूचना की गई है।

इस प्रकार उक्त चारों गाथाओंका तात्पर्य स्पष्ट करनेके बाद सर्व प्रथम प्रकृति उदीरणाका विवेचन विस्तारसे किया गया है।

प्रकृतिउदीरणा

प्रकृति उदीरणा दो प्रकारकी है—मूल प्रकृति उदीरणा और उत्तर प्रकृतिउदीरणा। उत्तर प्रकृतिउदीरणा भी दो प्रकारकी है—एकैक उत्तर प्रकृतिउदीरणा और प्रकृतिस्थान उदीरणा।

यहाँ पर शंकाकारका कहना है कि वेदक अनुयोगद्वारके प्रथम गाथासूत्रके प्रथम पाद द्वारा प्रकृतिस्थान उदीरणाका ही संकेत किया गया है, इसलिए यहाँ पर उसीकी प्ररूपणा करना योग्य है, मूलप्रकृतिउदीरणा और एकैक उत्तर प्रकृतिउदीरणाकी प्ररूपणा करना योग्य नहीं है, क्योंकि गाथासूत्र द्वारा उनका सूचन नहीं हुआ है? समाधान यह है कि देशामर्षकभावसे उनका संग्रह कर लिया गया है, इसलिए उनका यहाँ विस्तारसे कथन करनेमें कोई दोष नहीं है। साधारणतः यहाँ गाथासूत्रके अनुसार प्रकृतिस्थान उदीरणाकी प्ररूपणा सर्वप्रथम करनी चाहिए। किन्तु जब तक एकैक प्रकृतिउदीरणाकी प्ररूपणा न की जाय तब तक प्रकृतिस्थान उदीरणाकी प्ररूपणा नहीं हो सकती, इसलिए यहाँ प्रकृतिस्थान उदीरणाकी प्ररूपणाको स्थगित करके सर्व प्रथम एकैक प्रकृतिउदीरणाकी प्ररूपणा की गई है। वह दो प्रकारकी है—एकैक मूल प्रकृतिप्ररूपणा और एकैक उत्तर प्रकृतिप्ररूपणा।

मूलप्रकृतिउदीरणा

इस प्रकार इतने विवेचन द्वारा मोहनीयकर्म उदीरणाका प्रास्ताविक विवेचन करके आगे उच्चारणाका आलम्बन लेकर मूलप्रकृतिउदीरणा और एकैकउत्तरप्रकृतिउदीरणाका यथासम्भव अनुयोगद्वारोंका आश्रय लेकर कथन किया गया है। उसमें भी सर्वप्रथम १७ अनुयोगद्वारोंका आश्रय लेकर मूलप्रकृति उदीरणाका विवेचन किया गया है। वे १७ अनुयोगद्वार ये हैं—समुत्कीर्तना, स्वामित्व, सादि, अनादि,

ध्रुव, अध्रुव, एक जीवकी अपेक्षा काल, अन्तर, नाना जीवोंकी अपेक्षा भंगविचय, भागाभाग, परिमाण, क्षेत्र, स्पर्शन, काल, अन्तर, भाव और अल्पबहुत्व ।

इस प्रकार इन अनुयोगद्वारोंका नाम निर्देश कर सर्व प्रथम उनके माध्यमसे मूलप्रकृतिउदीरणाका विवेचन किया गया है । सुगम होनेसे यहाँ उनका विस्तारसे स्पष्टीकरण नहीं करेंगे ।

एकैकउत्तरप्रकृतिउदीरणा

इसके बाद एकैक उत्तरप्रकृतिउदीरणाका उल्लेख कर उच्चारणाके बलसे २४ अनुयोगद्वारोंका आलम्बन लेकर उसका विचार किया गया है । १७ अनुयोगद्वार तो पूर्वोक्त ही हैं । इनमें सर्व, नोसर्व, उत्कृष्ट, अनुत्कृष्ट, जघन्य, अजघन्य और सन्निकर्ष इन ७ अनुयोगद्वारोंके मिलानेपर २४ अनुयोगद्वार हो जाते हैं । मोहनीयकी २८ प्रकृतियोंमेंसे प्रत्येककी उदीरणाका विचार एकैक प्रकृतिउदीरणा अधिकारमें विस्तारसे किया गया है । सुगम होनेसे इनका विचार भी हम यहां पर अलगसे नहीं कर रहे हैं ।

प्रकृतिस्थानउदीरणा

आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

इस प्रकार इतना विवेचन करनेके बाद चूर्णिसूत्र और उच्चारणा दोनोंका आलम्बन लेकर प्रकृतिस्थानउदीरणाका विचार किया गया है । प्रकृतियोंके स्थान अर्थात् प्रकृतिसमूहका नाम प्रकृतिस्थान है और उसकी उदीरणाको प्रकृतिस्थानउदीरणा कहते हैं । एक कालमें जितनी प्रकृतियोंकी उदीरणा एक जीवके सम्भव है उतनी प्रकृतियोंके समुदायकी प्रकृतिस्थान उदीरणा संज्ञा है यह उक्त कथनका तात्पर्य है । इसके १७ अनुयोगद्वार हैं—समुत्कीर्तनासे लेकर अल्पबहुत्व तक । साथ ही भुजगार, पदनिक्षेप और वृद्धि ये तीन अनुयोगद्वार और जानने चाहिए ।

मोहनीय कर्मकी उत्तर प्रकृतियोंके उदीरणारूप कुल प्रवेशस्थान ९ हैं—तीन प्रकृतिक स्थानको छोड़कर एक प्रकृतिक स्थानसे लेकर दस प्रकृतिक स्थान तक, क्योंकि तीन प्रकृतिक कोई उदीरणास्थान नहीं है । इनका यहाँ सांगोपांग विचार किया ही है । इन स्थानोंमेंसे प्रत्येकके कितने भंग हैं और कौन किस गुणस्थानमें होता है इसके विशेष विचारके लिए आचार्य यतिवृषभने तीन गाथाएँ अपने चूर्णिसूत्रोंमें उद्धृत की हैं । प्रथम गाथामें प्रत्येक स्थानके भंगोंकी संख्या दी है तथा दूसरी और तीसरी गाथामें किस गुणस्थानमें कौन कौन और कितने उदीरणास्थान होते हैं इसका विवरण दिया है । इसप्रकार इन गाथाओं द्वारा स्वामित्वका विचार कर तथा आगे एक जीवकी अपेक्षा काल आदि शेष अनुयोगद्वारोंका निरूपणकर १७ अनुयोगद्वार समाप्त किये गये हैं । इसके बाद भुजगार, पदनिक्षेप और वृद्धि इन अनुयोग-द्वारोंका आलम्बन लेकर प्रकृतिस्थान उदीरणाका विचार किया गया है । इतने विचारके बाद इस अधिकारके समाप्त होनेके साथ प्रकृति उदीरणाका कथन समाप्त होता है ।

प्रकृतिप्रवेश

आगे प्रकृतिप्रवेश प्रकरणका अधिकार है जिसकी सूचना वेदक अनुयोगद्वारकी प्रथम गाथाके दूसरे पादसे मिलती है । इस प्रकरणमें उदयावलिमें प्रवेश करनेवाली उदय और अनुदयरूप प्रकृतिमात्रका ग्रहण किया गया है, इसीलिए इसका प्रकृतिप्रवेश यह नाम सार्थक है । इसके दो भेद हैं—मूल प्रकृतिप्रवेश और उत्तर प्रकृतिप्रवेश । उत्तर प्रकृतिप्रवेश दो प्रकारका है—एकैक उत्तर प्रकृतिप्रवेश और प्रकृतिस्थान प्रवेश । सुगम होनेसे यहाँ मूल प्रकृतिप्रवेश और एकैकउत्तर प्रकृतिप्रवेश अधिकारका व्याख्यान न कर मात्र प्रकृतिस्थानप्रवेश अधिकारका समुत्कीर्तना आदि १७ अनुयोगद्वारों तथा भुजगार, पदनिक्षेप और वृद्धि इन अधिकारों द्वारा निरूपण किया गया है ।

२८ प्रकृतिक प्रवेशस्थानसे लेकर १ प्रकृतिक प्रवेशस्थान तक कुल प्रवेशस्थानोंकी संख्या २० है। मध्यके १८, १७, १६, १५ और १४ प्रकृतिक ५ प्रवेशस्थान, ११ प्रकृतिक १ प्रवेशस्थान, ८ प्रकृतिक १ प्रवेशस्थान तथा ५ प्रकृतिक १ प्रवेशस्थान कुल ८ प्रवेशस्थान नहीं हैं। इनमेंसे कौन प्रवेशस्थान किस प्रकार घटित होता है और प्रत्येक प्रवेशस्थानमें किन प्रकृतियोंका ग्रहण हुआ है इसका अधिकारी भेदके कथनपूर्वक सांगोपांग विचार किया गया है। आगे इसी क्रमसे शेष अनुयोगद्वारों तथा भुजगार आदिका विचार कर यह अधिकार समाप्त होता है।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

प्रकृति उदय

यह तो हम पहले ही सूचित कर आये हैं कि वेदक अनुयोगद्वारकी प्रथम गाथाके उत्तरार्धद्वारा सकारण प्रकृति उदयकी सूचना की गई है, इसलिए प्रकृतिप्रवेश अधिकारकी प्ररूपणाके बाद प्रकृति उदय अधिकारका कथन अवसर प्राप्त है, क्योंकि मोहनीय कर्मका उदय चार प्रकारका है—प्रकृति उदय, स्थिति उदय, अनुभाग उदय और प्रदेश उदय। अतएव प्रकरणानुसार यहाँ सर्वप्रथम प्रकृति उदयका कथन करना चाहिए, किन्तु उदीरणासे ही उदयका ग्रहण हो जाता है, क्योंकि किंचित् विशेषताको छोड़कर उदीरणासे उदय सर्वथा भिन्न नहीं है। इसलिए यहाँ उदयका पृथकरूपसे अलगसे व्याख्यान नहीं किया है।

स्थिति उदीरणा

अब वेदक अनुयोगद्वारकी दूसरी गाथाके प्रथम पादद्वारा सूचित स्थितिउदीरणाका कथन अवसर प्राप्त है। स्थितिउदीरणा दो प्रकारकी है—मूल प्रकृति स्थितिउदीरणा और उत्तर प्रकृति स्थितिउदीरणा। प्रमाणानुगम आदि कुल अनुयोगद्वार २४ हैं। उनमेंसे मूल प्रकृति स्थितिउदीरणाका सन्निकर्षके सिवाय २३ अनुयोगद्वारोंके द्वारा और उत्तर प्रकृति स्थितिउदीरणाका सन्निकर्ष सहित २४ अनुयोगद्वारोंके द्वारा कथन हुआ है। इसके सिवाय भुजगार, पदनिक्षेप, वृद्धि और स्थान ये चार अधिकार और हैं। इन द्वारा भी दोनों प्रकारकी स्थितिउदीरणाओंका विचार किया गया है। इतने विचारके बाद अन्तमें संक्षेपसे स्थानकी प्ररूपणा करके स्थितिउदीरणाका प्रकरण समाप्त किया गया है।

विषय-सूची

विषय	पृष्ठ
मंगलाचरण	१
वेदक अनुयोगद्वारके दो उत्तर भेदोंकी सूचना	२
उदयका लक्षण	२
उदीरणाका लक्षण	२
उदय और उदीरणा दोनोंकी वेदक संज्ञा होनेका खुलासा	२
इस विषयमें चार सूत्र गाथाओंकी सूचना	२
प्रथम सूत्रगाथा और उसका खुलासा	३
प्रथम सूत्र गाथाके प्रथम पादसे प्रकृतिउदीरणाकी सूचना मिलती है इसका निर्देश	३
दूसरे पादसे प्रकृतिउदय और प्रकृतिप्रवेशकी सूचना मिलती है इसका निर्देश	४
क्षेत्र, भव, काल और पुद्गल ये कर्मोदय और कर्मोदीरणाके निमित्त हैं इसका उक्त गाथाके उत्तरार्ध द्वारा निर्देश	४
कुछ परिवर्तन पूर्वक उक्त गाथाके उक्त अर्थका खुलासा	५
द्वितीय सूत्र गाथाके पूर्वार्ध द्वारा स्थिति, अनुभाग और प्रदेशोदीरणाकी सूचना	६
तथा उत्तरार्ध द्वारा कालादि अनुयोगद्वारोंकी सूचना	६
तृतीय सूत्र गाथा द्वारा भुजगार अनुयोगद्वार और उसके कालादि उत्तर अनुयोगद्वारोंकी सूचना	७
चतुर्थ सूत्र गाथा द्वारा बन्ध, संक्रम, उदय, उदीरणा और सत्त्व इनकी तथा इनके अल्पबहुत्वकी सूचना	८
प्रथम गाथा किस अर्थमें निबद्ध है इसका चूर्णिसूत्रों द्वारा खुलासा	९
प्रकृतिउदीरणाके दो भेद और उन्हें स्थगित करनेकी सूचना	१०
एकैक प्रकृति उदीरणाके दो भेद और उनके चौबीस अनुयोगद्वारोंकी सूचना	१०
उदीरणाके चार भेदोंकी सूचना	११
प्रकृति उदीरणाके दो भेदोंका तथा उसके १७ अनुयोगद्वारोंकी सूचना	११

१ मूलप्रकृतिउदीरणा

विषय	पृष्ठ
समुत्कीर्तनानुगम	११
सादि आदि ४ अनुयोगद्वार	११
स्वामित्वानुगम	१२
कालानुगम	१२
अन्तरानुगम	१३
नाना जीवोंकी अपेक्षा भंगविचय	१३
भागाभागानुगम	१४
परिमाणानुगम	१५
क्षेत्रानुगम	१५
स्पर्शनानुगम	१५
कालानुगम	१६
अन्तरानुगम	१७
भावानुगम	१७
अल्पबहुत्वानुगम	१७

२ एकैकउत्तरप्रकृतिउदीरणा

विषय	पृष्ठ
उत्तरप्रकृतिउदीरणाके दो भेदोंका निर्देश	१८
एकैकउत्तरप्रकृतिउदीरणाके २४ अनुयोगद्वारोंका निर्देश	१८
समुत्कीर्तनानुगम	१८
सर्व-नोसर्व उदीरणानुगम	१९
उत्कृष्टानुत्कृष्ट उदीरणानुगम	१९
जघन्याजघन्य उदीरणानुगम	१९
सादि आदि ४ अनुयोगद्वार	२०
स्वामित्वानुगम	२१
कालानुगम	२२
अन्तरानुगम	२६
सन्निकर्षानुगम	२९

मार्गदर्शक - आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

विषय	पृष्ठ
नाना जीवोंकी अपेक्षा भंगविचयानुगम	३३
भागाभागानुगम	३५
परिमाणानुगम	३७
क्षेत्रानुगम	३८
स्पर्शनानुगम	३८
कालानुगम	४१
अन्तरानुगम	४२
भावानुगम	४२
अल्पबहुत्व	४२

३ प्रकृतिस्थान उदीरणा

विषय	पृष्ठ
प्रकृतिस्थान उदीरणाका तात्पर्य	४२
उसके १७ अनुयोगद्वारोंकी तथा भुजगारादि पदोंकी सूचना	४३
स्थानसमुत्कीर्तना	४३
स्थानोंमें प्रकृतियोंका निर्देश	४५
सादि आदि ४ अनुयोगद्वार	५३
स्वामित्व	५३
एक जीवकी अपेक्षा काल	५७
एक जीवकी अपेक्षा अन्तर	६०
नाना जीवोंकी अपेक्षा भंगविचय	६६
भागाभागानुगम	७१
परिमाणानुगम	७२
क्षेत्रानुगम	७२
स्पर्शनानुगम	७३
नाना जीवोंकी अपेक्षा काल	७५
नाना जीवोंकी अपेक्षा अन्तर	७७
सन्निकर्ष	७८
भावानुगम	७६
अल्पबहुत्व	७६
भुजगार	**८२**
अर्थपद	८३
१३ अनुयोगद्वारोंकी सूचना	८४
समुत्कीर्तना	८४
स्वामित्व	८४
एक जीवकी अपेक्षा काल	८५
एक जीवकी अपेक्षा अन्तर	८६
नाना जीवोंकी अपेक्षा भंगविचय	६४
भागाभाग	६४
परिमाण	६५
क्षेत्र	६५
स्पर्शन	६६
नाना जीवोंकी अपेक्षा काल	६७
नाना जीवोंकी अपेक्षा अन्तर	६८
अल्पबहुत्व	६६
पदनिक्षेप	**१००**
३ अनुयोगद्वारोंकी सूचना	१००
समुत्कीर्तना	१००
स्वामित्वके दो भेद	१०१
उत्कृष्ट स्वामित्व	१०१
जघन्य स्वामित्व	१०२
अल्पबहुत्वके दो भेद	१०२
उत्कृष्ट अल्पबहुत्व	१०२
जघन्य अल्पबहुत्व	१०३
वृद्धिउदीरणा	**१०३**
१३ अनुयोगद्वारोंकी सूचना	१०३
समुत्कीर्तना	१०३
स्वामित्व	१०३
कालानुगम	१०४
अन्तरानुगम	१०५
नाना जीवोंकी अपेक्षा भंगविचय	१०६
भागाभागानुगम	१०७
परिमाणानुगम	१०७
क्षेत्रानुगम	१०८
स्पर्शनानुगम	१०८
कालानुगम	१०६
अन्तरानुगम	११०
भावानुगम	१११
अल्पबहुत्व	१११

मार्गदर्शक :– आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

४ प्रकृतिप्रवेश

विषय	पृष्ठ
प्रकृतिप्रवेश अधिकारके दो भेद	११२
उत्तर प्रकृतिप्रवेश अधिकारके दो भेद	११२
मूल प्रकृतिप्रवेश और एकैक उत्तर प्रकृतिप्रवेश अधिकार सुगम हैं	११२

विषय	पृष्ठ
प्रकृतिस्थानप्रवेशके १७ अनुयोगद्वार	११२
समुत्कीर्तनाके दो भेद	११२
इन दोनोंके एक साथ कथनका निर्देश	११३
स्थानसमुत्कीर्तनाका लक्षणनिर्देश	११३
प्रकृतिनिर्देशका लक्षणकथन	११३
इन दोनोंका एक साथ कथन	११३
सादि आदि ४ अनुयोगद्वार	१३०
स्वामित्व	१३०
एक जीवकी अपेक्षा काल	१३१
एक जीवकी अपेक्षा अन्तर	१४२
नाना जीवोंकी अपेक्षा भंगविचय	१४७
भागाभागानुगम	१४९
परिमाणानुगम	१४९
क्षेत्रानुगम	१५०
स्पर्शनानुगम	१५०
कालानुगम	१५३
अन्तरानुगम	१५६
भावानुगम	१५८
अल्पबहुत्व	१५८
भुजगार	**१६४**
इसके १३ अनुयोगद्वार	१६४
समुत्कीर्तनानुगम	१६४
स्वामित्वानुगम	१६५
कालानुगम	१६५
अन्तरानुगम	१६८
नाना जीवोंकी अपेक्षा भंगविचय	१७१
भागाभागानुगम	१७१
परिमाणानुगम	१७१
क्षेत्रानुगम	१७१
स्पर्शनानुगम	१७२
कालानुगम	१७४
अन्तरानुगम	१७५
भावानुगम	१७६
अल्पबहुत्व	१७६
पदनिक्षेप	**१७७**
इसके तीन अनुयोगद्वारोंकी सूचना	१७७
समुत्कीर्तनाके दो भेद	१७७
उत्कृष्ट समुत्कीर्तना	१७७
जघन्य समुत्कीर्तना	१७७
स्वामित्वके दो भेद	१७७
उत्कृष्ट स्वामित्व	१७७
जघन्य स्वामित्व	१७८
अल्पबहुत्वके दो प्रकार	१७९
उत्कृष्ट अल्पबहुत्व	१७९
जघन्य अल्पबहुत्व	१७९

५ वृद्धिप्रवेशक

विषय	पृष्ठ
इसके १३ अनुयोगद्वार	१८०
समुत्कीर्तनानुगम	१८०
स्वामित्वानुगम	१८०
कालानुगम	१८१
अन्तरानुगम	१८२
नाना जीवोंकी अपेक्षा भंगविचयानुगम	१८२
भागाभागानुगम	१८२
परिमाणानुगम	१८३
क्षेत्रानुगम	१८३
स्पर्शनानुगम	१८४
कालानुगम	१८४
अन्तरानुगम	१८५
भावानुगम	१८५
अल्पबहुत्वानुगम	१८५
'खेत-भव-काल' इत्यादि गाथांशका विशेष व्याख्यान	१८७
कर्मोदय और उसके बाह्य निमित्तोंका निर्देश	१८७
कर्मोदय चार प्रकारका है इसका निर्देश	१८७
उदय और उदीरणामें अन्तरका निर्देश	१८८
उदीरणाके कथनसे ही उदयका कथन हो जाता है इसका निर्देश	१८८

६ स्थितिउदीरणा

विषय	पृष्ठ
स्थितिउदीरणाके दो भेदोंका निर्देश	१८८
स्थितिउदीरणाके अनुयोगद्वारोंका निर्देश	१८९

७ मूलप्रकृतिस्थितिउदीरणा

मूलप्रकृति स्थितिउदीरणामें २३ तथा उत्तर-

विषय	पृष्ठ
प्रकृति स्थितिउदीरणामें २४ अनुयोगद्वार होते हैं इसका निर्देश	१८६
स्थितिउदीरणाके २ भेदोंका निर्देश	१६०
प्रमाणानुगम दो प्रकारका है इसका निर्देश	१६०
सर्व-नोसर्व स्थितिउदीरणा	१६१
उत्कृष्ट-अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणा	१६१
जघन्य-अजघन्य स्थितिउदीरणा	१६२
सादिआदि स्थितिउदीरणा	१६२
स्वामित्वानुगमके दो भेद	१६२
उत्कृष्ट स्वामित्वानुगम	१६२
जघन्य स्वामित्वानुगम	१६३
कालानुगमके दो भेद	१६४
उत्कृष्ट कालानुगम	१६४
जघन्य कालानुगम	१६६
अन्तरानुगमके दो भेद	१६८
उत्कृष्ट अन्तरानुगम	१६८
जघन्य अन्तरानुगम	१६६
नाना जीवोंकी अपेक्षा भंगविचयानुगमके दो भेद	२००
उत्कृष्ट भंगविचयानुगम	२००
जघन्य भंगविचयानुगम	२०१
भागाभागानुगमके दो भेद	२०१
उत्कृष्ट भागाभागानुगम	२०१
जघन्य भागाभागानुगम	२०१
परिमाणानुगमके दो भेद	२०२
उत्कृष्ट परिमाणानुगम	२०२
जघन्य परिमाणानुगम	२०२
क्षेत्रानुगमके दो भेद	२०३
उत्कृष्ट क्षेत्रानुगम	२०३
जघन्य क्षेत्रानुगम	२०३
स्पर्शनानुगमके दो भेद	२०४
उत्कृष्ट स्पर्शनानुगम	२०४
जघन्य स्पर्शनानुगम	२०५
कालानुगमके दो भेद	२०६
उत्कृष्ट कालानुगम	२०६
जघन्य कालानुगम	२०८
अन्तरानुगमके दो भेद	२०६
उत्कृष्ट अन्तरानुगम	२०६
जघन्य अन्तरानुगम	२०६
दोनों प्रकारके भावका निर्देश	२१०
अल्पबहुत्वके दो भेद	२१०
उत्कृष्ट अल्पबहुत्व	२१०
जघन्य अल्पबहुत्व	२१०
भुजगारस्थितिउदीरणा	२११
उसके १३ अनुयोगद्वारोंकी सूचना	२११
समुत्कीर्तनानुगम	२११
स्वामित्वानुगम	२११
कालानुगम	२१२
अन्तरानुगम	२१४
नाना जीवोंकी अपेक्षा भंगविचयानुगम	२१५
भागाभागानुगम	२१६
परिमाणानुगम	२१६
क्षेत्रानुगम	२१७
स्पर्शनानुगम	२१७
कालानुगम	२१८
अन्तरानुगम	२१६
भावानुगम	२१६
अल्पबहुत्वानुगम	२१६
पदनिक्षेप	२२०
इसके तीन अनुयोगद्वार	२२०
समुत्कीर्तनानुगमके दो भेद	२२०
उत्कृष्ट समुत्कीर्तनानुगम	२२०
जघन्य समुत्कीर्तनानुगम	२२०
स्वामित्वानुगमके दो भेद	२२०
उत्कृष्ट स्वामित्वानुगम	२२०
जघन्य स्वामित्वानुगम	२२१
अल्पबहुत्वके दो भेद	२२२
उत्कृष्ट अल्पबहुत्व	२२२
जघन्य अल्पबहुत्व	२२२
वृद्धिउदीरणा	२२२
उसके तेरह अनुयोगद्वार	२२२
समुत्कीर्तनानुगम	२२२
स्वामित्वानुगम	२२३
कालानुगम	२२३

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

विषय	पृष्ठ
अन्तरानुगम	२२६
नाना जीवोंकी अपेक्षा भंगविचयानुगम	२२८
भागाभागानुगम	२२८
परिमाणानुगम	२२९
क्षेत्रानुगम	२२९
स्पर्शनानुगम	२२९
कालानुगम	२३०
अन्तरानुगम	२३०
भावानुगम	२३०
अल्पबहुत्वानुगम	२३०

८ उत्तरप्रकृतिस्थितिउदीरणा

विषय	पृष्ठ
२४ अनुयोगद्वारों तथा भुजगा…	
अद्धाच्छेदके दो भेद	२३१
उत्कृष्ट अद्धाच्छेद	२३१
जघन्य अद्धाच्छेद	२३२
सर्वआदि ४ अनुयोगद्वार	२३४
सादिआदि ४ अनुयोगद्वार	२३४
स्वामित्वानुगमके दो भेद	२३५
उत्कृष्ट स्वामित्वानुगम	२३५
जघन्य स्वामित्वानुगम	२३६
कालानुगमके दो भेद	२४०
उत्कृष्ट कालानुगम	२४०
जघन्य कालानुगम	२४९
अन्तरानुगमके दो भेद	२५४
उत्कृष्ट अन्तरानुगम	२५४
जघन्य अन्तरानुगम	२५९
सन्निकर्षके दो भेद	२६७
उत्कृष्ट सन्निकर्ष	२६७
जघन्य सन्निकर्ष	२७५
नाना जीवोंकी अपेक्षा भंगविचयके दो भेद	२८८
उत्कृष्ट भंगविचय	२८८
जघन्य भंगविचय	२८८
भागाभागानुगमके दो भेद	२८८
उत्कृष्ट भागाभागानुगम	२८८
जघन्य भागाभागानुगम	२८९
परिमाणानुगमके दो भेद	२९०
उत्कृष्ट परिमाणानुगम	२९०
जघन्य परिमाणानुगम	२९१
क्षेत्रानुगमके दो भेद	२९३
उत्कृष्ट क्षेत्रानुगम	२९३
जघन्य क्षेत्रानुगम	२९३
स्पर्शनानुगमके दो भेद	२९५
उत्कृष्ट स्पर्शनानुगम	२९५
जघन्य स्पर्शनानुगम	२९८
कालानुगमके दो भेद	३०२
उत्कृष्ट कालानुगम	३०२
जघन्य कालानुगम	३०४
अन्तरानुगमके दो भेद	३०८
उत्कृष्ट अन्तरानुगम	३०८
[illegible]	३०८
दो प्रकारका भाव	३११
अल्पबहुत्वके दो भेद	३११
उत्कृष्ट अल्पबहुत्व	३११
जघन्य अल्पबहुत्व	३१२
स्थिति अल्पबहुत्वके दो भेद	३१३
उत्कृष्ट स्थिति अल्पबहुत्व	३१३
जघन्य स्थिति अल्पबहुत्व	३१४
भुजगार	**३१८**
समुत्कीर्तनानुगम	३१८
स्वामित्वानुगम	३१९
कालानुगम	३२१
अन्तरानुगम	३२८
नाना जीवोंकी अपेक्षा भंगविचयानुगम	३३५
भागाभागानुगम	३३७
परिमाणानुगम	३३९
क्षेत्रानुगम	३३९
स्पर्शनानुगम	३४०
कालानुगम	३४३
अन्तरानुगम	३४६
भावानुगम	३४८
अल्पबहुत्वानुगम	३४८
पदनिक्षेप	**३५**
इसके ३ अनुयोगद्वार	३५१
समुत्कीर्तनानुगमके २ भेद	३५१

मार्गदर्शक:- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

विषय	पृष्ठ
उत्कृष्ट समुत्कीर्तनानुगम	३५१
जघन्य समुत्कीर्तनानुगम	३५१
स्वामित्वानुगमके दो भेद	३५१
उत्कृष्ट स्वामित्वानुगम	३५१
जघन्य स्वामित्वानुगम	३५४
अल्पबहुत्व के दो भेद	३५५
उत्कृष्ट अल्पबहुत्व	३५५
जघन्य अल्पबहुत्व	३५६
वृद्धि स्थितिउदीरणा	३५६
उसके १३ अनुयोगद्वार	३५६
समुत्कीर्तनानुगम	३५६
स्वामित्वानुगम	३५८
कालानुगम	३६०
अन्तरानुगम	३६१
नानाजीवोंकी अपेक्षा भंगविचयानुगम	३७४
भागाभागानुगम	३७५
परिमाणानुगम	३७७
क्षेत्रानुगम	३७८
स्पर्शनानुगम	३७८
कालानुगम	३८२
अन्तरानुगम	३८५
भावानुगम	३८८
अल्पबहुत्वानुगम	३८८
स्थान	३९३

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

मार्गदर्शक :– आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

सिरि-जइवसहाइरियविरइय-चुण्णिसुत्तसमण्णिदं

सिरि-भगवंतगुणहरभडारओवइट्ठं

कसायपाहुडं

तस्स

सिरि-वीरसेणाइरियविरइया टीका

जयधवला

तत्थ

वेदगो णाम सत्तमो अत्थाहियारो

वेदगवेदगवेदगमवेदगं वेदगंथसंसिद्धं ।
सिद्धं पणमिय सिरसा वोच्छं वेदगमहाहियारसद्दं ॥ १ ॥

जो सब वेदकोंमें अतिशय वेदक हैं अर्थात् चराचर विश्वके ज्ञाता हैं, जो शुभाशुभ कर्मफलके वेदनसे मुक्त हैं और वेदग्रन्थों (जिनागम) से जिनके अस्तित्वकी सिद्धि होती है उन सिद्ध परमेष्ठीको सिरसे प्रणाम करके मैं (वीरसेन आचार्य) वेदक नामक महाधिकारका व्याख्यान करता हूँ ॥ १ ॥

*** वेदगे त्ति अणियोगद्दारे दोण्णि अणियोगद्दाराणि। तं जहा—उदयो च उदीरणा च।**

§ १. एदस्स सुत्तस्स अत्थो वुच्चदे। तं जहा—वेदगे त्ति अणियोगद्दारं कसायपाहुडस्स पण्णारसण्हमत्थाहियाराणं मज्झे छट्ठं। तत्थेमाणि दोण्णि अणियोगद्दाराणि भवंति। काणि ताणि त्ति सिस्साहिप्पायमासंकिय उदयो च उदीरणा चेव तेसिं णामणिद्देसो कओ। तत्थोदयो णाम कम्माणं जहाकालजणिदो फलविवागो। कम्मोदयो उदयो त्ति भणिदं होइ। उदीरणा पुण अपरिपत्तकालाणं चेव कम्माणमुवायविसेसेण परिपाचनं 'अपक्वपरिपाचनमुदीरणा' इति वचनात्। वुत्तं च—

कालेण उवायेण य पच्चंति जहा वणप्फइफलाइं।
मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज
तह कालेण तवेण य पच्चंति कयाइं कम्माइं ॥ १ ॥ इदि

§ २. एवंविहउदयोदीरणाओ जत्थ परूविज्जंति ताणि वि अणियोगद्दाराणि तण्णामधेयाणि। कधं पुण उदयोदीरणाणं वेदगववएसो? ण, वेदिज्जमाणत्तसामण्णावेक्खाए दोण्हमेदेसिं तव्ववएससिद्धीए विरोहाभावादो।

*** तत्थ चत्तारि सुत्तगाहाओ।**

§ ३. तम्मि वेदगसण्णिदे महाहियारे उदयोदीरणाविसयम्मि चत्तारि सुत्त-

---

*** वेदक इस अनुयोगद्वारके दो अनुयोगद्वार हैं। यथा—उदय और उदीरणा।**

§ १. अब इस सूत्रका अर्थ कहते हैं। यथा—जो यह कषायप्राभृतके पन्द्रह अर्थाधिकारोंमें वेदक नामका छठा अनुयोगद्वार है उसमें ये दो अनुयोगद्वार हैं। वे कौन हैं इस प्रकार शिष्यके अभिप्रायके अनुरूप आशंका करके उदय और उदीरणा इस प्रकार उनका नामनिर्देश किया। प्रकृतमें कर्मोंके यथाकाल उत्पन्न हुए फलके विपाकका नाम उदय है। कर्मोंके उदयका नाम उदय है यह उक्त कथनका तात्पर्य है। परन्तु जिन कर्मोंके उदयका काल प्राप्त नहीं हुआ उनका उपाय विशेषसे पचाना उदीरणा है, क्योंकि अपक्वका परिपाचन करना उदीरणा है ऐसा वचन है। कहा भी है—

जिस प्रकार वनस्पतिके फल परिपाककालके द्वारा या उपायके द्वारा परिपाकको प्राप्त होते हैं उसी प्रकार किये गये कर्म परिपाककालके द्वारा या तपके द्वारा पचते हैं ॥ १ ॥

§ २. इस प्रकार उदय और उदीरणाका जिन अनुयोगद्वारोंमें कथन किया जाता है वे अनुयोगद्वार भी उन्हीं नामवाले होते हैं।

शंका—उदय और उदीरणाकी वेदक संज्ञा कैसे है?

समाधान—नहीं, क्योंकि उदय और उदीरणा दोनों ही सामान्यसे वेद्यमान हैं इस अपेक्षा उन दोनोंकी उक्त संज्ञाके सिद्ध होनेमें कोई विरोध नहीं आता।

*** वेदक नामके इस अनुयोगद्वारमें चार सूत्रगाथाएँ हैं।**

§ ३. उदय और उदीरणा इन भेदोंसे युक्त वेदक संज्ञावाले इस महाधिकारमें गुणधर

गाहाओ गुणहराइरियमुहकमलविणिग्गयाओ अत्थि त्ति भणिदं होइ। एदेण 'चत्तारि वेदगम्मि दु' इच्चेदस्स संबंधगाहावयवस्स परामरसो कओ त्ति दट्ठव्वो। संपहि संखाविसेसावहारियाणं गाहाणं सरूवाणुवादमुहेण तदट्ठविवरणं कुणमाणो पुच्छावक्कमाह—

* तं जहा।

§ ४. सुगमं।

कदि आवलियं पवेसेइ कदि च पविस्संति कस्स आवलियं।
खेत्त-भव-काल-पोग्गल-ट्ठिदिविवागोदयखयो दु ॥५९॥

§ ५. एसा पढमगाहा। एदीए पयडिउदीरणा पयडिउदयो तदुभयकारणदव्वादिपरूवणा च कया। संपहि एदिस्से गाहाए अवयवत्थविवरणं कस्सामो। तं जहा—'कदि आवलियं पवेसेदि' त्ति एदेण पढमावयवेण पयडिउदीरणा परूविदा, कदि पयडीओ उदयावलिब्भंतरं पओगविसेसेण पवेसेदि त्ति सुत्तत्थावलंबणादो। सा पुण पयडिउदीरणा दुविहा—मूलपयडिउदीरणा च उत्तरपयडिउदीरणा च। उत्तरपयडिउदीरणा दुविहा—एगेगुत्तरपयडिउदीरणा पयडिट्ठाणउदीरणा चेदि। एत्थ सेसाणं देसामासयभावेण पयडिट्ठाणउदीरणा चेव मुत्तकंठमेदेण सुत्तावयवेण णिद्दिट्ठा। तदो पयडिउदीरणा सव्वा चेव एदम्मि बीजपदे णिलीणा त्ति दट्ठव्वं।

आचार्यके मुख कमलसे निकली हुई चार सूत्र गाथाएँ हैं यह उक्त कथनका तात्पर्य है। इस वचन द्वारा सम्बन्ध गाथाके 'चत्तारि वेदगम्मि' इस अवयववचनका परामर्श किया है ऐसा जानना चाहिए। अब संख्याविशेषके द्वारा अवधारण को प्राप्त गाथाओंके स्वरूपके अनुवाद द्वारा उनके अर्थका विवरण करते हुए पृच्छावाक्यको कहते हैं—

* यथा।

§ ४. यह सूत्र सुगम है।

कितनी प्रकृतियोंको उदयावलिमें प्रवेश कराता है और किस जीवके कितनी प्रकृतियाँ उदयावलिमें प्रविष्ट होती हैं, क्योंकि क्षेत्र, भव, काल और पुद्गलको निमित्त कर कर्मोंका स्थितिविपाक और उदयक्षय होता है ॥५९॥

§ ५. यह प्रथम गाथा है। इस द्वारा प्रकृति उदीरणा, प्रकृतिउदय और इन दोनोंके कारणभूत द्रव्यादिका कथन किया गया है। अब इस गाथाके अवयवोंका अर्थविवरण करते हैं। यथा—'कदि आवलियं पवेसेदि' इस प्रथम अवयवके द्वारा प्रकृतिउदीरणा कही गई है, क्योंकि कितनी प्रकृतियोंको उदयावलिके भीतर प्रयोग-विशेषके द्वारा प्रवेश कराता है इस प्रकार यहाँ उक्त गाथासूत्रके अर्थका अवलम्बन लिया गया है। वह प्रकृतिउदीरणा दो प्रकार की है—मूलप्रकृतिउदीरणा और उत्तरप्रकृतिउदीरणा। उत्तरप्रकृतिउदीरणा दो प्रकार की है—एकैकउत्तरप्रकृतिउदीरणा और प्रकृतिस्थानउदीरणा। यहाँ पर शेष उदीरणाओंके देशामर्षकभावसे इस सूत्रावयवके द्वारा प्रकृतिस्थानउदीरणा ही मुक्तकण्ठ होकर निर्दिष्ट की गई है।

§ ६. 'कदि च पविसंति कस्स आवलियं' इच्चेदेण वि विदियसुत्तावयवेण पयडिउदयो सप्पभेदो समुद्दिट्ठो। किं कारणं? कदि च केत्तियाओ खलु पयडीओ कस्स जीवस्स आवलियमुदयावलियब्भंतरमुदीरणाए विणा ट्ठिदिक्खएण पविसंति त्ति पुच्छावलंबणादो। अथवा उदयावलियपविट्ठोदयाणुदयपयडीओ घेत्तूण पवेससण्णिदो अत्थाहियारो एदेण सुत्तावयवेण सूचिदो त्ति दट्ठव्वो; चुण्णिसुत्तणिबद्धत्तपरूवणाए सवित्थरमुवरि समुवलंभादो। जइ एवं; वेदगे त्ति अणियोगद्दारे उदयो च उदीरणा चेदि दोण्हमत्थाहियाराणं पुव्वमब्भुवगमं कादूण संपहि तदुभयवदिरित्तपवेसपरूवणाव-लंबणे सुत्तयारस्स पइण्णादत्थपरिच्चागदोसो पसज्जइ त्ति? ण एस दोसो, केण वि पयारेण तस्स वि उदयंतब्भावदंसणादो। तदो पयडिउदयो पयडिपवेसो चेदि एदे दोण्णि अणियोगा 'कदि च पविस्संति कस्स आवलियं' इच्चेदेण सुत्तावयवेण संगहिदा त्ति दट्ठव्वं।

§ ७. एवं गाहापुव्वद्धे पडिबद्धाणं पयडिउदयोदीरणाणं णिरहेउत्त-णिरायरणमुहेण सहेउत्तपदुप्पायणट्ठमागदो गाहापच्छिमद्धस्स अवयारो 'खेत्त-भव-काल-पोग्गल-ट्ठिदि-विवागोदयखओ दु।' एतदुक्तं भवति—खेत्त-भव-काल-पोग्गले समस्सिऊण जो ट्ठिदिविवागो उदयक्खयो च सो जहाकममुदीरणा उदयो च भण्णइ

इसलिए प्रकृतिउदीरणा समस्त ही इस बीजपदमें अन्तर्निहित है ऐसा जानना चाहिए।

§ ६. 'कदि च पविसंति कस्स आवलियं' इस दूसरे सूत्रावयवके द्वारा भी अपने उत्तर भेदोंके साथ प्रकृतिउदयका कथन किया गया है, क्योंकि इसमें 'कदि च' अर्थात् कितनी प्रकृतियाँ किस जीवके 'आवलियं' अर्थात् उदयावलिके भीतर उदीरणाके बिना स्थितिका क्षय होनेसे प्रवेश करती हैं इसप्रकार पृच्छाका अवलम्बन लिया है। अथवा उदयावलिके भीतर प्रविष्ट हुई उदयप्रकृतियों और अनुदयप्रकृतियोंको ग्रहण कर प्रवेश संज्ञावाला अर्थाधिकार इस सूत्रावयवके द्वारा सूचित किया गया है ऐसा प्रकृतमें जानना चाहिए, क्योंकि चूर्णिसूत्रमें निबद्ध होकर उक्त प्ररूपणा विस्तारके साथ आगे उपलब्ध होती है।

शंका—यदि ऐसा है तो वेदक इस अनुयोगद्वारमें उदय और उदीरणा इन दो अनुयोगद्वारोंको पहले स्वीकार करके अब इन दोनों अर्थाधिकारोंसे भिन्न प्रवेशप्ररूपणावाले अर्थाधिकारके कथनका अवलम्बन लेने पर सूत्रकारको प्रतिज्ञात अर्थका त्याग करनेका दोष लगता है?

समाधान—यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि किसी भी प्रकारसे उसका भी उदयके भीतर अन्तर्भाव देखा जाता है। इसलिए प्रकृतिउदय और प्रकृतिप्रवेश ये दो अनुयोगद्वार 'कदि च पविसंति कस्स आवलियं' इस सूत्रावयवके द्वारा संग्रहीत किये गये हैं ऐसा यहाँ जानना चाहिए।

§ ७. इसप्रकार गाथाके पूर्वार्धमें जो प्रकृतिउदय और प्रकृतिउदीरणा प्रतिबद्ध हैं उनके निरहेतुकपनेके निराकरणद्वारा सहेतुकपनेका कथन करनेके लिए गाथाके 'खेत्त-भव काल-पोग्गल-ट्ठिदिविवागोदयखओ दु' इस पश्चिमार्धका अवतार हुआ है। उक्त कथनका यह तात्पर्य है कि क्षेत्र, भव, काल और पुद्गलोंका आश्रय लेकर जो स्थितिविपाक और उदयक्षय होता है उसे

त्ति। संपहि खेत्तादीणमत्थो वुच्चदे। तं जहा—खेत्तमिदि भणिदे णिरयादिखेत्तस्स गहणं कायव्वं। भव इदि भणिदे एइंदियादिभवस्स गहणं कायव्वं। काल इदि भणिदे सिसिर-वसंतादिकालविसेसस्स गहणं कायव्वं। बाल-जोव्वण-थविरादिकाल-जणिदपज्जायस्स वा। पोग्गल इदि भणिदे गंध-तंबूल-वत्थाभरणविसेसत्थकंदयादि-दव्वाणमिट्ठाणिट्ठसरूवाणं [गहणं] कायव्वं। एवमेदे खेत्त-भव-काल-पोग्गले पडुच्च कम्माणमुदयोदीरणसरूवो फलविवागो होदि त्ति एसो एदस्स सुत्तस्स भावत्थो।

§ ८. अथवा 'कदि आवलियं पवेसेदि' त्ति पयडिउदीरणा 'कदि च पविसंति कस्स आवलियं' इदि उदयोदीरणावदिरित्तो पयडिपवेसो त्ति विदियो अत्थाहियारो। एवं गाहा-पुव्वद्धे दो चेव अत्थाहियारा पडिबद्धा। पुणो 'खेत्त-भव-काल-पोग्गल ट्ठिदिविवागोदयखयो दु' त्ति एदम्मि गाहापच्छद्धे कम्मोदयो सकारणो पडिबद्धो त्ति घेत्तव्वो, चुण्णिसुत्तयारेण मुत्तकंठमुवरि तहा परूविस्समाणत्तादो। कथं पुण कम्मोदयस्स एसो गाहावयवो वाचओ त्ति वुत्ते वुच्चदे—खेत्त-भव-काल-पोग्गले अस्सिऊण जो ट्ठिदिक्खयलक्खणो कम्मस्स विवागो सो उदयो त्ति ववहिदसंबंधवसेण सुत्तत्थवक्खाणादो, एसो गाहापच्छिमद्धो कम्मोदयस्स वाचओ त्ति घेत्तव्वं।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

क्रमसे उदीरणा और उदय कहते हैं। अब क्षेत्रादिकका अर्थ कहते हैं। यथा - क्षेत्र ऐसा कहने पर नरकादि क्षेत्रका ग्रहण करना चाहिए। भव ऐसा कहने पर एकेन्द्रियादिरूप भवका ग्रहण करना चाहिए। काल ऐसा कहने पर शिशिर और वसन्त आदि काल विशेषका ग्रहण करना चाहिए अथवा बालकाल, यौवनकाल और स्थविर आदि कालके आलम्बनसे उत्पन्न हुई पर्याय का ग्रहण करना चाहिए। तथा पुद्गल ऐसा कहने पर इष्टानिष्टरूप गन्ध, ताम्बूल, वस्त्र और आभरणविशेषरूप स्कन्ध आदि द्रव्योंका ग्रहण करना चाहिए। इसप्रकार इन क्षेत्र, भव, काल और पुद्गलोंका आलम्बन लेकर कर्मोंका उदय और उदीरणारूप फलविपाक होता है यह इस सूत्रका भावार्थ है।

§ ८. अथवा 'कदि आवलियं पवेसेदि' इस द्वारा प्रकृतिउदीरणा नामवाला पहला अर्थाधिकार तथा 'कदि च पविसंति कस्स आवलियं' इस द्वारा उदय और उदीरणाके सिवा प्रकृतिप्रवेश नामवाला यह दूसरा अधिकार कहा गया है। इसप्रकार गाथाके पूर्वार्धमें दो ही अर्थाधिकार प्रतिबद्ध हैं। पुनः गाथाके 'खेत्त-भव-काल-पोग्गलट्ठिदिविवागोदयखयो दु' इस पश्चिमार्धमें कारण सहित कर्मोदय नामक अधिकार प्रतिबद्ध है ऐसा यहाँ ग्रहण करना चाहिए, क्योंकि चूर्णिसूत्रकार मुक्तकण्ठ होकर आगे इसीप्रकार कथन करनेवाले हैं।

शंका—यह गाथाका पश्चिमार्ध कर्मोदयका वाचक कैसे है ?

समाधान—क्षेत्र, भव, काल और पुद्गलोंका आश्रय लेकर जो स्थितिक्षयलक्षण कर्मका विपाक होता है वह उदय है इसप्रकार व्यवहित सम्बन्धवश सूत्रके अर्थका व्याख्यान करनेसे यह गाथाका पश्चिमार्ध कर्मोदयका वाचक है ऐसा यहाँ ग्रहण करना चाहिए।

को कदमाए ट्ठिदीए पवेसगो को व के य अणुभागे ।
सांतर-णिरंतरं वा कदि वा समया दु बोद्धव्वा ॥६०॥

महाराज

§ ९. एसा विदियगाहा ट्ठिदि-अणुभाग-पदेसुदीरणासु पडिबद्धा । तं जहा— 'को कदमाए ट्ठिदीए पवेसगो' इच्चेदेण पढमावयवेण ट्ठिदिउदीरणा सूचिदा । 'को व के य अणुभागे इच्चेदेण वि बिदियावयवेण अणुभागुदीरणा परूविदा । एत्थेव पदे पदेसउदीरणा वि णिद्दिट्ठा त्ति दट्ठव्वा; ट्ठिदि-अणुभागाणं पदेसाविणाभाविसादो । देसामासयणाएण तस्सेह गहणं कायव्वं । एवमेदेण गाहापुव्वद्धेण ट्ठिदि-अणुभाग-पदेसुदीरणाओ सामित्तमुहेण पुच्छिदाओ । एदेणेव ट्ठिदि-अणुभाग-पदेसुदयो तेसिं पवेसो च सूचिदो; देसामासयभावेणेदस्स पयट्टत्तादो । 'सांतरणिरंतरं वा० बोद्धव्वा' त्ति उदयोदीरणाणं पयडि-ट्ठिदि-अणुभाग-पदेसविसेसिदाणं सांतरकालो णिरंतरकालो वा केत्तिया समया त्ति एदेण पुच्छावक्केण णाणेगजीवसंबंधिकालंतराणं परूवणा सूचिदा । एत्थतणविदिय'वा'-सद्देण अणुत्तसमुच्चयट्ठेण समुक्कित्तणादिसेसाणियोगद्दाराणं परूवणा सूचिदा । तदो समुक्कित्तणादि जाव अप्पाबहुए त्ति चउवीसमणिओगद्दाराणं जहासंभवमुदयोदीरणाविसयाणं सूचणमेदेण कदमिदि घेत्तव्वं ।

कौन जीव किस स्थितिमें और कौन जीव किस अनुभागमें कर्मोंका प्रवेश करानेवाला है तथा इनका सान्तर और निरन्तर काल और अन्तर कितने समय तक होता है यह जानने योग्य है ॥६०॥

§ ९. यह दूसरी गाथा स्थितिउदीरणा, अनुभागउदीरणा और प्रदेशउदीरणाके विषयमें प्रतिबद्ध है । यथा—'को कदमाए ट्ठिदीए पवेसगो' इसप्रकार इस प्रथम अवयवके द्वारा स्थिति-उदीरणा सूचित की गई है । 'को वा के य अणुभागे' इसप्रकार इस द्वितीय अवयवके द्वारा भी अनुभागउदीरणा कही गई है । तथा इसी पदमें प्रदेशउदीरणा भी निर्दिष्ट की गई है ऐसा जानना चाहिए, क्योंकि स्थिति और अनुभाग प्रदेशोंके अविनाभावी होते हैं । अथवा देशामर्षक न्यायसे उसका यहाँ पर ग्रहण करना चाहिए । इसप्रकार इस गाथाके पूर्वार्धद्वारा स्थितिउदीरणा, अनु-भागउदीरणा और प्रदेशउदीरणाके स्वामित्वकी प्रमुखता द्वारा पृच्छा की गई है । तथा इसी द्वारा स्थितिउदय, अनुभागउदय और प्रदेश उदय तथा उनका प्रवेश सूचित किया गया है, क्योंकि देशामर्षकभावसे यह वचन (गाथाका पूर्वार्ध) प्रवृत्त हुआ है । 'सांतर-णिरंतरं वा० बोद्धव्वा ।' अर्थात् प्रकृति, स्थिति, अनुभाग और प्रदेशसे विशेषताको प्राप्त हुए उदय और उदीरणाका सान्तर और निरन्तर काल कितना है इसप्रकार इस पृच्छावाक्यके द्वारा नाना जीव और एक जीवसम्बन्धी काल और अन्तरप्ररूपणा सूचित की गई है । तथा यहाँ आये हुए अनुक्तका समुच्चय करनेवाले दूसरे 'वा' शब्दके द्वारा समुत्कीर्तना आदि शेष अनुयोगद्वारोंकी प्ररूपणा सूचित की गई है । इसलिए यथासम्भव उदय और उदीरणाको विषय करनेवाले समुत्कीर्तनासे लेकर अल्पबहुत्व तक चौबीस अनुयोगद्वारोंका सूचन इस वचनके द्वारा किया गया है ऐसा यहाँ पर ग्रहण करना चाहिए ।

बहुगदरं बहुगदरं से काले को णु थोवदरगं वा।
अणुसमयमुदीरेंतो कदि वा समयं उदीरेदि ॥६१॥

§ १०. एसा तदियगाहा। एदीए पयडि-ट्ठिदि-अणुभाग-पदेसविसयस्स भुजगाराणियोगो सप्पभेदो णिद्दिट्ठो। तं जहा—णिरुद्धसमयादो 'से काले' समणंतरसमए 'बहुगदरं० को उदीरेदि' त्ति एदेण पयडि-ट्ठिदि-अणुभाग-पदेसविसयस्स भुजगारपदस्स णिद्देसो कओ। 'को णु थोवदरगं वा' त्ति एदेण वि तव्विसयअप्पदरपदं जाणाविदं। एत्थतण-'वा'-सद्देणाणुत्तसमुच्चयट्ठेणावट्ठिदावत्तव्वपदाणं गहणं कायव्वं। तदो एदेण गाहापुव्वद्धेण पयडि-ट्ठिदि-अणुभाग-पदेसुदीरणाविसयो भुजगाराणियोगो परूविदो त्ति सिद्धं। 'अणुसमयमुदीरेंतो' अणुसमयं समयं पडि भुजगारादिसरूवेणुदीरेमाणो 'कदि वा समए' केत्तिए वा समए णिरंतरमुदीरेदि त्ति एदेण भुजगारविसयकालाणियोगद्दारं सूचिदं। एदेणेव देसामासयवयणेण सेसाणियोगद्दाराणं पि संगहो कायव्वो। एदेणेव पदणिक्खेवो वड्ढी च परूविदा; भुजगारविसेसो पदणिक्खेवो, पदणिक्खेवविसेसो वड्ढि त्ति णायादो।

---

* विवक्षित समयसे तदनन्तर समयमें कौन जीव बहुतर बहुतर कर्मोंकी उदीरणा करता है और कौन जीव अल्पतर अल्पतर कर्मोंकी उदीरणा करता है तथा प्रति समय उदीरणा करता हुआ यह जीव कितने समय तक निरन्तर उदीरणा करता है ॥६१॥

§ १०. यह तीसरी गाथा है। इस द्वारा प्रकृति, स्थिति, अनुभाग और प्रदेशविषयक अपने भेदोंके साथ भुजगारअनुयोगद्वार निर्दिष्ट किया गया है। यथा—विवक्षित समयसे 'से काले' अर्थात् तदनन्तर समयमें बहुतर बहुतर कर्मोंकी कौन उदीरणा करता है इसप्रकार इस वचनद्वारा प्रकृति, स्थिति, अनुभाग और प्रदेशविषयक भुजगारपदका निर्देश किया गया है। 'को णु थोवदरगं वा' इसप्रकार इस वचन द्वारा भी तद्विषयक अल्पतरपदका ज्ञान कराया गया है। यहाँ पर अनुक्तका समुच्चय करनेके लिए आये हुए 'वा' शब्दके द्वारा अवस्थित और अवक्तव्य पदोंका ग्रहण करना चाहिए। इसलिए गाथाके पूर्वार्धद्वारा प्रकृति, स्थिति, अनुभाग और प्रदेशविषयक भुजगार अनुयोगद्वारकी प्ररूपणा की गई है यह सिद्ध होता है। 'अणुसमयमुदीरेंतो' अर्थात् प्रत्येक समयमें भुजगारादि रूपसे उदीरणा करता हुआ यह जीव 'कदि वा समए' अर्थात् कितने समय तक निरन्तर उदीरणा करता है इसप्रकार इस वचनके द्वारा भुजगारविषयक कालानुयोगद्वार सूचित किया गया है। तथा इसी देशामर्षक वचनके द्वारा शेष अनुयोगद्वारोंका भी संग्रह किया गया है। तथा इसी वचन द्वारा पदनिक्षेप और वृद्धि अनुयोगद्वार की प्ररूपणा की गई है, क्योंकि भुजगार विशेषका नाम पदनिक्षेप है और पदनिक्षेपविशेषका नाम वृद्धि है ऐसा न्याय है।

जो जं संकामेदि य जं बंधदि जं च जो उदीरेदि ।
तं केण होइ अहियं ट्ठिदि अणुभागे पदेसग्गे ॥६२॥

§ ११. एसा चउत्थी मूलगाहा । एदिस्से वत्तव्वं पयडि-ट्ठिदि-अणुभाग-पदेस-विसयाणं बंध-संकमोदयोदीरणा-संतकम्माणं जहण्णुकस्स-पदविसेसियाणमप्पाबहुअ-गवेसणं । तं जहा—'जो जं संकामेदि' त्ति वुत्ते संकमो गहेयव्वो । सो च पयडि-ट्ठिदि-अणुभाग-पदेसभेयभिण्णो जहण्णुक्कस्सपदविसेसिदो घेत्तव्वो । 'ट्ठिदि अणुभागे पदेसग्गे' त्ति वयणादो पयडीए गहणमेत्थ ण लब्भदि त्ति णासंकियव्वं; पयडिवदि-रित्ताणं ट्ठिदि-अणुभाग-पदेसाणमभावेण पयडीए अणुत्तसिद्धत्तादो । 'जो जं बंधदि' त्ति एदेण बंधो पयडि-ट्ठिदि-अणुभाग-पदेसभेयभिण्णो घेत्तव्वो । एत्थेव संतकम्मस्स वि अंतब्भावो वक्खाणेयव्वो । 'जं च जो उदीरेदि' त्ति एदेण वि पयडि-ट्ठिदि-अणुभाग-पदेसभेयभिण्णाए उदीरणाए उदयसहगदाए गहणं कायव्वं । 'तं केण होइ अहियं' इदि वुत्ते बंधसंकमोदयोदीरणासंतकम्मवियप्पाणं मज्झे कत्तो कदमं केत्तिएणाहियं होइ त्ति पुच्छा कया होइ । 'ट्ठिदि अणुभागे पदेसग्गे' इदि सुत्तावयवो बंधसंकमोदीरणाणं संतकम्मोदयसहगयाणं विसयपदंसणट्ठो दट्ठव्वो । ण च पयडीए एत्थासंभवो आसंकणिज्जो; दत्तुत्तरत्तादो । तम्हा बंधो संकमो उदयो उदीरणा

---

* जो जीव स्थिति, अनुभाग और प्रदेशोंमें से जिसे संक्रमित करता है, जिसे बाँधता है और जिसे उदीरित करता है वह किससे अधिक होता है ॥६२॥

§ ११. यह चौथी मूलगाथा है । जघन्य और उत्कृष्ट पदोंसे विशेषताको प्राप्त हुए प्रकृति, स्थिति, अनुभाग और प्रदेशविषयक बन्ध, संक्रम, उदय, उदीरणा और सत्कर्मोंके अल्पबहुत्वकी गवेषणा करना इसका वक्तव्य है । यथा—'जो जं संकामेदि' ऐसा कहने पर संक्रमका ग्रहण करना चाहिए । और वह जघन्य और उत्कृष्ट पदसे विशेषताको प्राप्त होकर प्रकृति, स्थिति, अनुभाग और प्रदेशभेदसे अनेक प्रकारका ग्रहण करना चाहिए । 'ट्ठिदि अणुभागे पदेसग्गे' इस वचन द्वारा यहाँ पर प्रकृतिका ग्रहण नहीं प्राप्त होता ऐसी आशंका नहीं करनी चाहिए, क्योंकि प्रकृतिके बिना स्थिति, अनुभाग और प्रदेशोंका अभाव होनेसे प्रकृति अनुक्तसिद्ध है । 'जो जं बंधदि' इसप्रकार इस वचनद्वारा प्रकृति, स्थिति, अनुभाग और प्रदेशोंके भेदसे अनेक प्रकारके बन्धका ग्रहण करना चाहिए । तथा यहीं पर सत्कर्मके अन्तर्भावका भी व्याख्यान करना चाहिए । तथा 'जं च जो उदीरेदि' इसप्रकार इस वचनके द्वारा भी प्रकृति, स्थिति, अनु-भाग और प्रदेशोंके भेदसे अनेक प्रकारकी उदयके साथ उदीरणाका ग्रहण करना चाहिए । 'तं केण होइ अहियं' ऐसा कहने पर बन्ध, संक्रम, उदय, उदीरणा और सत्कर्मरूप विकल्पोंके मध्य किससे कौन कितना अधिक होता है यह पृच्छा की गई है । 'ट्ठिदि अणुभागे पदेसग्गे' यह सूत्रावयव सत्कर्म और उदय सहित बन्ध, संक्रम और उदीरणाके विषयको दिखलानेके लिये आया है ऐसा जानना चाहिए । यहाँ पर प्रकृतिका कथन असम्भव है ऐसी आशंका नहीं करनी चाहिए, क्योंकि इसका उत्तर पूर्वमें ही दे आये हैं । इसलिए बन्ध, संक्रम, उदय, उदी-

संतकम्ममिदि एदेसिं पंचण्हं वियप्पाणं जहण्णस्स जहण्णएण, उक्कस्सस्स उक्कस्सएण पयडीहिं ट्ठिदीहिं अणुभागेहिं पदेसेहिं य थोवबहुत्तपरूवणा। एदिस्से चउत्थसुत्तगाहाए अत्थो त्ति सिद्धं।

§ १२. एवमेदासिं सुत्तगाहाणमवयारं कादूण संपहि एत्थ पढमगाहाए वक्खाणं कुणमाणो चुण्णिसुत्तयारो एसा गाहा एदम्मि अत्थविसेसे पडिबद्धा त्ति जाणावणट्ठमुत्तरसुत्तमाह —

⊛ तत्थ पढमिल्लगाहा पयडिउदीरणाए पयडिउदए च बद्धा।

§ १३ गयत्थमेदं सुत्तं, गाहाणमुत्थाणत्थपरूवणाए चेव पयदत्थस्स समत्थियत्तादो। एवमेदेण सुत्तेण पयडिउदीरणाए पयडिउदए च पढमगाहाए पडिबद्धत्तं सामण्णेण जाणाविय संपहि पदच्छेदमुहेण पढमगाहाए कदमम्मि पदे पयडिउदीरणा पडिबद्धा, कदमम्मि वा पयडिउदयो त्ति एदस्स विसेसस्स जाणावणट्ठमुत्तरं सुत्तमाह—

⊛ कदि आवलियं पवेसेदि त्ति एस गाहाए पढमपादो पयडिउदीरणाए।

§ १४. एत्थ पडिबद्धो त्ति अहियारसंबंधो कायव्वो। सेसं सुगमं। एवं ताव गाहापढमावयवे पयडिउदीरणाए पडिबद्धत्तं परूविय पुणो वि तत्थेव विसेसणिण्णयट्ठमिदमाह—

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

रणा और सत्कर्म इसप्रकार इन पाँच भेदोंके जघन्यका जघन्यके साथ और उत्कृष्टका उत्कृष्टके साथ प्रकृतियों, स्थितियों, अनुभागों और प्रदेशोंका अवलम्बन लेकर अल्पबहुत्वकी प्ररूपणा की गई है। इसप्रकार यह चौथी सूत्रगाथाका अर्थ है यह सिद्ध हुआ।

§ १२. इस प्रकार इन सूत्रगाथाओंका अवतार करके अब यहाँ पर प्रथम गाथाका व्याख्यान करते हुए चूर्णिसूत्रकार यह गाथा इस अर्थविशेषमें प्रतिबद्ध है ऐसा जतलानेके लिये आगेके सूत्रको कहते हैं —

⊛ उनमेंसे प्रथम गाथा प्रकृति उदीरणा और प्रकृति उदयमें प्रतिबद्ध है।

§ १३. यह सूत्र गतार्थ है, क्योंकि उक्त गाथाओंके उत्थानिकारूप अर्थकी प्ररूपणाके द्वारा ही प्रकृत अर्थका समर्थन कर आये हैं। इस प्रकार इस सूत्रके द्वारा प्रथम गाथा प्रकृति उदीरणा और प्रकृति उदयमें प्रतिबद्ध है इस बातका सामान्यसे ज्ञान कराके अब पदच्छेदकी प्रमुखतासे प्रथम गाथाके किस पदमें प्रकृतिउदीरणा प्रतिबद्ध है तथा किस पदमें प्रकृतिउदय प्रतिबद्ध है इस प्रकार इस विशेषका ज्ञान करानेके लिये आगेका सूत्र कहते हैं—

⊛ 'कदि आवलियं पवेसेदि' यह गाथाका प्रथम पाद प्रकृतिउदीरणामें प्रतिबद्ध है।

§ १४. यहाँ प्रतिबद्ध है इस पदका अधिकारके साथ सम्बन्ध करना चाहिए। शेष कथन सुगम है। इस प्रकार गाथाके प्रथम अवयवमें प्रकृतिउदीरणाकी प्रतिबद्धताका कथन करके फिर भी उसीमें विशेष अर्थका निर्धारण करनेके लिए यह वचन कहा है—

❀ एदं पुण सुत्तं पयडिट्ठाणउदीरणाए बद्धं ।

§ १५. कुदो ? कदिसद्दस्स भेदगणणप्पयस्स अण्णत्थासंभवादो । एतदुक्तं भवति—पयडिउदीरणा दुविहा—मूलपयडिउदीरणा उत्तरपयडिउदीरणा च । उत्तरपयडिउदीरणा दुविहा—एगेगुत्तरपयडिउदीरणा पयडिट्ठाणउदीरणा चेदि । एत्थ पयडिट्ठाणउदीरणाए पडिबद्धमेदं सुत्तं; णाण्णत्थेत्ति । जइ एवं; मूलपयडिउदीरणाए एगेगुत्तरपयडिउदीरणाए च एत्थ परूवणा ण जुज्जदे; गाहासुत्तेण तासिमसंगहियत्तादो ? ण एस दोसो; देसामासयण्णाएण तेसिं पि तत्थ संगहियत्तादो ।

❀ एदं ताव ठवणीयं ।

§ १६. एदं पयडिट्ठाणुदीरणापडिबद्धं सुत्तपदं ताव ठवणीयं । किं कारणं ? एगेगपयडिउदीरणाए अपरूविदाए तप्परूवणासंभवादो ।

❀ एगेगपयडिउदीरणा दुविहा—एगेगमूलपयडिउदीरणा च एगेगुत्तरपयडिउदीरणा च ।

§ १७. एगेगपयडिउदीरणा ताव मूलुत्तरपयडिभेयभिण्णा विहासियव्वा त्ति वुत्तं होइ ।

❀ एदाणि बे वि पत्तेगं चउवीसमणियोगद्दारेहिं मग्गिऊण ।

※ परन्तु यह सूत्र प्रकृतिस्थानउदीरणामें प्रतिबद्ध है ।

§ १५. क्योंकि भेदोंकी गणना करनेवाला 'कति' शब्द अनर्थक नहीं हो सकता। तात्पर्य यह है—प्रकृति उदीरणा दो प्रकारकी है—मूल प्रकृति उदीरणा और उत्तर प्रकृति उदीरणा। उत्तर प्रकृति उदीरणा दो प्रकारकी है—एकैकप्रकृतिउदीरणा और प्रकृतिस्थान-उदीरणा। इनमेंसे यहाँ पर प्रकृतिस्थानउदीरणामें यह सूत्र प्रतिबद्ध है, अन्यत्र नहीं।

शंका—यदि ऐसा है तो मूलप्रकृतिउदीरणा और एकैकप्रकृतिउदीरणा इनकी प्ररूपणा यहाँ पर नहीं बनती, क्योंकि गाथा सूत्र द्वारा उनका संग्रह नहीं किया गया है।

समाधान—यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि देशामर्षक न्यायसे उनका भी उसमें संग्रह हुआ है।

※ परन्तु इसे स्थगित करना चाहिए ।

§ १६. प्रकृतिस्थान उदीरणासे सम्बन्ध रखनेवाले इस सूत्र पदको स्थगित करना चाहिए, क्योंकि एकैकप्रकृतिउदीरणाकी प्ररूपणा किये बिना उसकी प्ररूपणा नहीं हो सकती।

※ एकैकप्रकृतिउदीरणा दो प्रकारकी है—एकैकमूलप्रकृतिउदीरणा और एकैक उत्तरप्रकृतिउदीरणा ।

§ १७. मूलप्रकृतियों और उत्तरप्रकृतियोंके भेदसे भेदको प्राप्त हुई एकैकप्रकृतिउदीरणा सर्व प्रथम व्याख्यान करने योग्य है यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

※ इन दोनों ही प्रकारकी उदीरणाओंको पृथक् पृथक् चौबीस अनुयोगद्वारोंके आश्रयसे अनुमार्गण करके ''''''।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

§ १८. एदाणि वे वि अहियारवत्थूणि एगेगपयडिपडिबद्धाणि पादेक्कं चउवीसमणियोगद्दारेहिं अणुमग्गिऊण तदो पच्छा 'कदि आवलियं पवेसेदि' त्ति एदस्स सुत्तावयवस्स अत्थविहासा कायव्वा, तेसु अविहासिदेसु तस्सावसराभावादो त्ति एसो एदस्स सुत्तस्स भावत्थो। काणि ताणि चउवीसमणियोगद्दाराणि त्ति वुत्ते समुक्कित्तणादीणि अप्पाबहुअपज्जंताणि।

§ १९. संपहि जहासंभवमेदेहिं अणियोगद्दारेहिं मूलपयडिउदीरणा एगेगुत्तरपयडिउदीरणा च परूवणभेदेण सुत्तेण समप्पिदमुच्चारणाबलेण वत्तइस्सामो। तं जहा—उदीरणा चउव्विहा—पयडिउदीरणा ट्ठिदिउदीरणा अणुभागुदीरणा पदेसुदीरणा चेदि। पयडिउदीरणा दुविहा—मूलपयडिउदीरणा च उत्तरपयडिउदीरणा च। मूलपयडिउदीरणाए तत्थेमाणि सत्तारस अणिओगद्दाराणि—समुक्कित्तणा सादि० अणादि० धुव० अद्धुव० सामित्तं जाव अप्पाबहुगे त्ति।

§ २०. समुक्कित्तणाणुगमेण दुविहो णिद्देसो—ओघेण आदेसेण य। ओघेण मोह० अत्थि उदीरगा च अणुदीरगा च। एवं मणुसतिए। आदेसेण णेरइय० मोह० अत्थि उदीरगा। एवं सव्वणेरइय-सव्वतिरिक्खमणुस्सअपज्ज०-सव्वदेवा त्ति। एवं जाव०।

§ २१. सादि०-अणादि०-धुव०-अद्धुवाणु० दुविहो णि०—ओघे० आदेसे०।

§ १८. एकैक प्रकृतिसे सम्बन्ध रखनेवाले इन दोनों ही अधिकारवस्तुओंका पृथक् पृथक् चौबीस अनुयोगद्वारोंके आश्रयसे अनुमार्गण करके इसके बाद 'कदि आवलियं पवेसेदि' इस सूत्रावयवके अर्थका व्याख्यान करना चाहिए, क्योंकि उक्त दोनों अनुयोगद्वारोंका व्याख्यान किये बिना उक्त सूत्रवचनके व्याख्यानका अवसर नहीं है। इस प्रकार यह इस सूत्रका भावार्थ है। वे चौबीस अनुयोगद्वार कौनसे हैं ऐसा पूछने पर समुत्कीर्तनासे लेकर अल्पबहुत्व पर्यन्त ये चौबीस अनुयोगद्वार हैं ऐसा कहा है।

§ १९. अब यथासम्भव इन अनुयोगद्वारोंका आश्रय लेकर मूलप्रकृतिउदीरणा और एकैकउत्तरप्रकृतिउदीरणाका कथन इस सूत्रसे प्राप्त हुए उच्चारणाके बलसे बतलाते हैं। यथा—उदीरणा चार प्रकारकी है—प्रकृतिउदीरणा, स्थितिउदीरणा अनुभागउदीरणा और प्रदेशउदीरणा। प्रकृति उदीरणा दो प्रकारकी है—मूलप्रकृति उदीरणा और उत्तरप्रकृति उदीरणा। मूलप्रकृति उदीरणाके ये सत्रह अनुयोगद्वार हैं—समुत्कीर्तना, सादि, अनादि, ध्रुव, अध्रुव, और स्वामित्वसे लेकर अल्पबहुत्व तक।

§ २०. समुत्कीर्तनानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मोहनीयके उदीरक और अनुदीरक जीव हैं। इसी प्रकार मनुष्यत्रिकमें जानना चाहिए। आदेशसे नारकियोंमें मोहनीयके उदीरक जीव हैं। इसी प्रकार सब नारकी, सब तिर्यञ्च, मनुष्य अपर्याप्त और सब देवोंमें जानना चाहिए। इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

§ २१. सादि, अनादि, ध्रुव और अध्रुवानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ

ओघेण मोह० उदीरणा किं सादि० ४ ? सादि० अणादि० धुव० अद्धुवा वा। आदे० णेर० मोह० उदीर० किं० सादि० ४ ? सादि० अद्धुवा वा। एवं चदुगदीसु। एवं जाव० ।

§ २२. सामित्ताणु० दुविहो णिद्दे०। ओघे० मोह० उदीरणा कस्स ? अण्णदरस्स सम्माइट्ठि० मिच्छाइट्ठिस्स वा। एवं चदुगदीसु। पंचिंदियतिरिक्ख-अपज्ज-मणुसअपज्ज०-अणुदिसादि। सव्वट्ठा त्ति मोह० उदीरणा कस्स० ? अण्णद०। एवं जाव०।

§ २३. कालाणु० दुविहो णि०—ओघे० आदेसे०। ओघेण मोह० उदीरणा केवचिरं कालादो ? तिण्णि भंगा। तत्थ जो सो सादि-सपज्जवसिदो तस्स जह० अंतोमुहुत्तं, उक्क० उवड्ढपोग्गलपरियट्टं। आदेसेण णेरइय० मोह० उदीर० केव० ? जहण्णुकस्सट्ठिदीओ। एवं सव्वणेरइय०-सव्वतिरिक्ख०-मणुसअपज्ज०-सव्वदेवा त्ति। मणुसतिए मोह० उदीर० जह० एयसमओ, उक्कस्सेण तिण्णि पलिदोवमाणि पुव्वकोडिपुधत्तेणब्भहियाणि। एवं जाव० जी। महाराज

और आदेश। ओघसे मोहनीय कर्मके उदीरक जीव क्या सादि हैं, अनादि हैं, ध्रुव हैं या अध्रुव हैं ? सादि हैं, अनादि हैं, ध्रुव हैं और अध्रुव हैं। आदेशसे नारकियोंमें मोहनीयकर्मके उदीरक जीव क्या सादि हैं, अनादि हैं, ध्रुव हैं या अध्रुव हैं ? सादि और अध्रुव हैं। इसी प्रकार चारों गतियोंमें जानना चाहिए। इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक यथायोग्य जान लेना चाहिए।

विशेषार्थ—सूक्ष्मसाम्पराय गुणस्थान तक मोहनीयकर्मकी उदीरणा अनादि है और सम्यग्दृष्टि जीवके उपशमश्रेणिसे उतरने पर उसकी उदीरणा सादि है। तथा वह अभव्योंकी अपेक्षा ध्रुव और भव्योंकी अपेक्षा अध्रुव है, इसलिए यहाँ पर मोहनीयके उदीरक जीव ओघसे अनादि, सादि, ध्रुव और अध्रुव कहे गये हैं। किन्तु नरकगति आदि चारों गति मार्गणाएँ सादि और सान्त हैं, इसलिए इनमें मोहनीय कर्मके उदीरकोंको सादि और सान्त कहा है। शेष कथन सुगम है।

§ २२. स्वामित्वानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मोहनीय कर्मकी उदीरणा किसके होती है ? अन्यतर सम्यग्दृष्टि और मिथ्यादृष्टिके होती है। इसीप्रकार चारों गतियोंमें जानना चाहिए। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त, मनुष्य अपर्याप्त और अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें मोहनीय कर्मकी उदीरणा किसके होती है ? अन्यतरके होती है। इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

§ २३. कालानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मोहनीयकी उदीरणाका कितना काल है ? तीन भंग हैं। उनमेसे जो सादि-सान्त भंग है उसकी अपेक्षा जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट काल उपार्ध पुद्गलपरिवर्तनप्रमाण है। आदेशसे नारकियोंमें मोहनीयकी उदीरणाका कितना काल है ? जघन्य और उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण है। इसी प्रकार सब नारकी, सब तिर्यञ्च, मनुष्य अपर्याप्त और सब देवोंमें जानना चाहिए। मनुष्य-त्रिकमें मोहनीयकी उदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल पूर्वकोटि पृथक्त्व अधिक तीन पल्य है। इसी प्रकार अनाहारक मार्गणातक जानना चाहिए।

§ २४. अंतराणु० दुविहो णि०—ओघेण आदेसेण य। ओघेण मोह० उदीर० जह० एयसमओ, उक्क० अंतोमु०। मणुसतिए मोह० उदी० जहण्णुक्क० अंतोमु०। सेसगइमग्गणासु णत्थि अंतरं, णिरंतरं। एवं जाव०।

§ २५. णाणाजीवभंगविचयाणु० दुविहो० णि०—ओघेण आदेसेण य। ओघेण मोह० सिया सव्वे जीवा उदीरगा, सिया उदीरगा च अणुदीरगो च। सिया उदीरगा च अणुदीरगा च ३। एवं मणुसतिए। आदेसेण णेरइय० मोह० अत्थि

विशेषार्थ—ओघसे मोहनीय कर्मकी उदीरणाके कालके तीन भंग हैं—अनादि-अनन्त अनादि-सान्त और सादि-सान्त। अभव्योंके और अभव्यसमान भव्योंके अनादि-अनन्त भंग होता है। जो भव्य जीव उपशमश्रेणि पर प्रथमबार चढ़ कर उसके अनुदीरक होते हैं उनके अनादि-सान्त भंग होता है। और जो जीव उपशमश्रेणिसे उतर कर पुनः उसकी उदीरणा करने लगते हैं उनके सादि-सान्त भंग होता है। यतः ऐसा जीव कमसे कम अन्तर्मुहूर्त काल तक और अधिकसे अधिक कुछ कम अर्धपुद्गल परिवर्तन काल तक इसका उदीरक हो सकता है, अतः इसका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्तप्रमाण और उत्कृष्ट काल उपार्ध पुद्गल परिवर्तनप्रमाण कहा है। आदेशसे चारों गतियोंमें जो काल कहा है वह स्पष्ट ही है। मात्र मनुष्यत्रिकमें जघन्य काल एक समय उपशमश्रेणिमें उतरते समय एक समय उदीरक होकर जो मर कर देव हो जाता है उसकी अपेक्षा कहा है।

§ २४. अन्तरानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मोहनीय कर्मकी उदीरणाका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। मनुष्यत्रिकमें मोहनीयकी उदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। शेष मार्गणाओं में मोहनीयकी उदीरणाका अन्तरकाल नहीं है, वह निरन्तर है। इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

विशेषार्थ—जो जीव उपशमश्रेणि पर चढ़ कर सूक्ष्मसाम्पराय गुणस्थानमें एक आवली कालके शेष रहने पर एक समयके लिए अनुदीरक होकर तथा मरकर देव हो जाता है उसके मोहनीयकी उदीरणाका अन्तरकाल एक समय देखा जाता है और जो जीव उपशमश्रेणि पर चढ़ कर सूक्ष्मसाम्परायमें चढ़ते समय एक आवली काल तक तथा उपशान्तगुणस्थानमें चढ़ते और उतरते समय अन्तर्मुहूर्त काल तक उसका अनुदीरक रह कर पुनः उसकी उदीरणा करने लगता है उसके उसकी उदीरणाका अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त देखा जाता है। यही कारण है कि यहाँ पर ओघसे मोहनीयकी उदीरणाका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त कहा है। यतः ओघसे जघन्य अन्तर दो गतियोंके आश्रयसे कहा है जो मनुष्यत्रिकमें नहीं बनता, इसलिए उनमें मोहनीयकी उदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त कहा है। गतिमार्गणाके शेष भेदोंमें उपशमश्रेणिकी प्राप्ति सम्भव नहीं है। इसलिए उनमें मोहनीयकी उदीरणाके अन्तरकालका निषेध किया है। अन्य मार्गणाओंमें इस व्याख्यान को ध्यानमें रखकर जहाँ अन्तरकाल सम्भव हो उसे उस प्रकारसे और जहाँ सम्भव न हो उसे उस प्रकारसे घटित कर लेना चाहिए।

§ २५. नाना जीवों की अपेक्षा भंगविचयानुगमसे निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मोहनीयकर्मके कदाचित् सब जीव उदीरक हैं। कदाचित् नाना जीव उदीरक हैं और एक जीव अनुदीरक है। कदाचित् नाना जीव उदीरक हैं और नाना जीव अनुदीरक

उदीरगा, अणुदीरगा णत्थि। एवं सव्वणेरइय-सव्वतिरिक्ख-सव्वदेवा त्ति। मणुस-अपज्ज० मोह० सिया उदीरगो सिया उदीरगा। एवं जाव०।

§ २६. भागाभागाणु० दुविहो णि०—ओघेण आदेसेण य। ओघेण मोह० उदी० सव्वजी० केवडिओ भागो? अणंता भागा। अणुदीर० अणंतभागो। मणुसेसु उदीरगा असंखेज्जा भागा। अणुदीर० असंखे०भागो। मणुसपज्ज०-मणुसिणी० मोह० उदी० केवडि०? संखेज्जा भागा। अणुदी० संखेज्जदिभागो। सेसगइमग्गणासु णत्थि भागाभागो। एवं जाव०।

हैं। इसी प्रकार मनुष्यत्रिकमें जानना चाहिए। आदेशसे नारकियोंमें मोहनीयके सब जीव उदीरक हैं, अनुदीरक नहीं हैं। इसी प्रकार सब नारकी, सब तिर्यञ्च और सब देवोंमें जानना चाहिये। मनुष्य अपर्याप्तकोंमें मोहनीयका कदाचित् एक जीव उदीरक है। कदाचित् नाना जीव उदीरक हैं। इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

विशेषार्थ—जितने काल तक एक भी जीव श्रेणी पर आरोहण कर एक आवलि प्रविष्ट सूक्ष्मसाम्पराय नहीं होता उतने काल तक सब संसारी छद्मस्थ जीव मोहनीयके उदीरक ही होते हैं, इसलिए तो कदाचित् सब जीव मोहनीयके उदीरक होते हैं यह वचन कहा है। तथा जब नाना जीव श्रेणी पर आरोहण नहीं करते, किन्तु एक जीव उस पर आरोहण कर एक आवलि प्रविष्ट सूक्ष्मसाम्पराय या उपशान्तकषाय हो जाता है, तब नाना जीव मोहनीयके उदीरक और एक जीव अनुदीरक होता है, इसलिए कदाचित् नाना जीव मोहनीयके उदीरक और एक जीव अनुदीरक होता है यह वचन कहा है। तथा जब नाना जीव श्रेणी पर आरोहण कर एक आवलि प्रविष्ट सूक्ष्मसाम्पराय और उपशान्तकषाय हो जाते हैं तब नाना जीव मोहनीयके उदीरक और अनुदीरक दोनों प्रकारके पाये जाते हैं, इसलिए यहाँ पर कदाचित् नाना जीव मोहनीयके उदीरक और नाना जीव मोहनीयके अनुदीरक होते हैं यह वचन कहा है। यह ओघप्ररूपणा है जो मनुष्यत्रिकमें भी बन जाती है, इसलिए मनुष्यत्रिकमें ओघके समान जाननेकी सूचना की है। इनके सिवा गतिमार्गणाके अन्य जितने भेद हैं उनमें सब जीव मोहनीयके उदीरक ही होते हैं, इसलिए मोहनीयके सब जीव उदीरक होते हैं, अनुदीरक नहीं होते यह वचन कहा है। मात्र मनुष्य अपर्याप्त यह सान्तर मार्गणा है। इसमें कदाचित् एक जीव होता है और कदाचित् नाना जीव होते हैं, इसलिए मनुष्य अपर्याप्तकोंमें कदाचित् एक जीव उदीरक होता है और कदाचित् नाना जीव उदीरक होते हैं यह वचन कहा है।

§ २६. भागाभागानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मोहनीयके उदीरक जीव सब जीवोंके कितने भागप्रमाण हैं? अनन्त बहुभागप्रमाण हैं। अनुदीरक जीव अनन्तवें भागप्रमाण हैं। मनुष्योंमें उदीरक जीव असंख्यात बहुभागप्रमाण हैं और अनुदीरक जीव असंख्यातवें भागप्रमाण हैं? मनुष्य पर्याप्त और मनुष्यिनियोंमें मोहनीयके उदीरक जीव कितने भागप्रमाण हैं? संख्यात बहुभागप्रमाण हैं तथा अनुदीरक जीव संख्यातवें भागप्रमाण हैं। शेष गति मार्गणाके भेदोंमें भागाभाग नहीं है। इसी प्रकार अनाहारक मार्गणातक जानना चाहिए।

विशेषार्थ—आगे ओघसे और गति मार्गणाके अवान्तर भेदोंमें मोहनीयके उदीरकों और अनुदीरकोंके परिमाणका विचार किया है, उससे भागाभागका ज्ञान हो जाता है, इसलिए यहाँ पर अलगसे खुलासा नहीं किया है।

§ २७. परिमाणाणु० दुविहो णि०—ओघेण आदेसेण य। ओघेण मोह० उदी० केत्ति० ? अणंता। अणुदी० केत्ति० ? संखेज्जा। आदेसेण णेरइय० मोह० उदीर० केत्ति० ? असंखेज्जा। एवं सव्वणेरइय०-सव्वपंचिंदियतिरिक्ख०-मणुस०-अपज्ज०-देवगइदेवा भवणादि जाव अवराइदा त्ति। मणुसेसु मोह० उदी० केत्ति० ? असंखेज्जा। अणुदी० केत्ति० ? संखेज्जा। मणुसपज्ज०-मणुसिणी० मोह० उदी० अणुदी० केत्ति० ? संखेज्जा। सव्वट्ठे मोह० उदीर० केत्ति० ? संखेज्जा। तिरिक्खेसु मोह० उदीरगा केत्तिया ? अणंता। एवं जाव०।

§ २८. खेत्ताणु० दुविहो णि०—ओघेण आदेसे०। ओघेण मोह० उदी० केव० ? सव्वलोगे। अणुदी० लोगस्स असंखे०भागे। एवं तिरिक्खा०। णवरि अणुदीरगा णत्थि। सेसगइमग्गणासु मोह० उदीर० लोगस्स असंखे०भागे। मणुसतिए अणुदी० ओघभंगो। एवं जाव०।

§ २९. पोसणाणु० दुविहो णि०—ओघे० आदेसे०। ओघेण मोह० उदी० सव्वलोगो। अणुदी० लोगस्स असंखे०भागो। एवं तिरिक्खेसु। णवरि अणुदी०

---

§ २७. परिमाणानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मोहनीयके उदीरक जीव कितने हैं? अनन्त हैं। अनुदीरक जीव कितने हैं? संख्यात हैं। आदेशसे नारकियोंमें मोहनीयके उदीरक जीव कितने हैं? असंख्यात हैं। इसी प्रकार सब नारकी, सब पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च, मनुष्य अपर्याप्त और देवगतिमें देव तथा भवनवासियोंसे लेकर अपराजित तकके देवोंमें जानना चाहिए। मनुष्योंमें मोहनीयके उदीरक जीव कितने हैं? असंख्यात हैं। अनुदीरक जीव कितने हैं? संख्यात हैं। मनुष्य पर्याप्त और मनुष्यिनियोंमें मोहनीयके उदीरक और अनुदीरक जीव कितने हैं? संख्यात हैं। सर्वार्थसिद्धिमें मोहनीयके उदीरक जीव कितने हैं? संख्यात हैं। तिर्यञ्चोंमें मोहनीयके उदीरक जीव कितने हैं? अनन्त हैं। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

§ २८. क्षेत्रानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मोहनीयके उदीरक जीवोंका कितना क्षेत्र है? सब लोक क्षेत्र है। अनुदीरक जीवोंका लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्र है। इसीप्रकार तिर्यञ्चोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनमें अनुदीरणा नहीं है। गतिमार्गणाके शेष भेदोंमें मोहनीयके उदीरकोंका लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्र है। मनुष्यत्रिकमें अनुदीरकोंके क्षेत्रका भंग ओघके समान है। इसीप्रकार अनाहरक मार्गणा तक जानना चाहिए।

विशेषार्थ—ओघसे जो क्षेत्र बतलाया है और गतिमार्गणाके अवान्तर भेदोंका जो क्षेत्र है उसे जानकर यहाँ पर मोहनीयके उदीरकोंका क्षेत्र जान लेना चाहिए। अनुदीरक श्रेणिमें होते हैं और उनका क्षेत्र लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण होता है, इसलिए यहाँ पर वह ओघसे तत्प्रमाण कहा है। किन्तु ये अनुदीरक जीव मनुष्यत्रिकमें ही होते हैं, इसलिए इनमें ओघके समान जाननेकी सूचना की है।

§ २९. स्पर्शनानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मोहनीयके उदीरक जीवोंका स्पर्शन सब लोकप्रमाण है। तथा अनुदीरक जीवोंका स्पर्शन लोकके

णत्थि। आदेसेण णेरइय० मोह० उदीर० केव० पोसिदं ? लोगस्स असंखे०भागो छचोद्दसभागा वा देसूणा। एवं सव्वणेरइय०। णवरि सगफोसणं। पढमाए खेत्तं। सव्वपंचिंदियतिरिक्ख-सव्वमणुस० मोह० उदीर० लोग० असंखे०भागो सव्वलोगो वा। णवरि मणुसतिए अणुदी० ओघभंगो। सव्वदेवेसु उदीर० अप्पप्पणो पोसणं णेदव्वं। एवं जाव०।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

§ ३०. कालाणु० दुविहो णि०—ओघेण आदेसे०। ओघेण मोह० उदीर० केवचिरं ? सव्वद्धा। अणुदी० जह० एयस०, उक्क० अंतोमु०। एवं चदुसु गदीसु। णवरि मणुसतियं मोत्तूणण्णत्थाणुदीरगा णत्थि। मणुसअपज्ज० मोह० उदी० जह० खुद्दाभवग्गहणं, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो। एवं जाव०।

असंख्यातवें भागप्रमाण है। इसीप्रकार तिर्यञ्चोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनमें अनुदीरक जीव नहीं हैं। आदेशसे नारकियोंमें मोहनीयके उदीरक जीवोंने कितने क्षेत्रका स्पर्शन किया है ? लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और त्रसनालीके चौदह भागोंमें से कुछ कम छह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। इसीप्रकार सब नारकियोंमें जानना चाहिए। प्रथम पृथवीमें क्षेत्रके समान स्पर्शन है। सब पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च और सब मनुष्योंमें मोहनीयके उदीरक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और सब लोकका स्पर्शन किया है। किन्तु इतनी विशेषता है कि मनुष्यत्रिकमें अनुदीरकोंका स्पर्शन ओघके समान है। सब देवोंमें उदीरकोंका स्पर्शन अपने अपने स्पर्शनके समान ले जाना चाहिए। इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा-तक जानना चाहिए।

विशेषार्थ—मोहनीयके अनुदीरक श्रेणिगत जीव होते हैं और उनका स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण होता है, इसलिए यहाँ पर ओघसे अनुदीरकोंका स्पर्शन तत्प्रमाण बतला कर मनुष्यत्रिकमें भी इसे ओघके समान जाननेकी सूचना की है। ओघसे और गति-मार्गणाके अवान्तर भेदोंमें जहाँ जो स्पर्शन है उसे ध्यानमें रख कर सर्वत्र उदीरकोंका स्पर्शन बतलाया है यह स्पष्ट ही है।

§ ३०. कालानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मोहनीयके उदीरकोंका कितना काल है ? सर्वदा है। अनुदीरकोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। इसी प्रकार चारों गतियोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि मनुष्यत्रिकको छोड़कर अन्यत्र अनुदीरणा नहीं है। मनुष्य अपर्याप्तकोंमें मोहनीयके उदीरकोंका जघन्य काल क्षुल्लकभवग्रहणप्रमाण है और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भाग-प्रमाण है। इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

विशेषार्थ—नाना जीवोंकी अपेक्षा भी मोहनीयकी अनुदीरणाका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त बन जाता है, क्योंकि बहुतसे नाना जीव एक साथ उपशम-श्रेणि पर आरोहण करके एक समयके लिए अनुदीरक होकर उदीरक हो जाँय यह भी सम्भव है और लगातार संख्यात समय तक उपशमश्रेणि पर आरोहण करके मरणके बिना वे उपशम-श्रेणिमें अन्तर्मुहूर्त काल तक उसके अनुदीरक बने रहें यह भी सम्भव है। यही कारण है कि यहाँ पर ओघ तथा मनुष्यत्रिककी अपेक्षा मोहनीयके अनुदीरकोंका जघन्य काल एक समय

§ ३१. अंतराणु० दुविहो णि०—ओघे० आदेसे० । ओघेण मोह० उदी० णत्थि अंतरं । अणुदी० जह० एयसमओ, उक्क० वासपुधत्तं । एवं चदुसु गदीसु । णवरि मणुसतियं मोत्तूणएणत्थ अणुदीरगा णत्थि । मणुसअपज्ज० मोह० उदी० जह० एयसमओ, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो । एवं जाव० ।

§ ३२. भावो सव्वत्थ ओदइओ भावो ।

§ ३३. अप्पाबहुगाणु० दुविहो णि०—ओघे० आदेसे० । ओघेण मोह० सव्वत्थोवा अणुदी० । उदीरगा अणंतगुणा । मणुसेसु सव्वत्थो० मोह० अणुदी० । उदीरगा असंखे०गुणा । एवं मणुसपज्ज०-मणुसिणी० । णवरि संखेज्जगुणा कायव्वा । सेसगदीसु णत्थि अप्पाबहुअं । एवं जाव ।

और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त कहा है । तथा मनुष्य अपर्याप्त यह अन्तर मार्गणा है और उसका जघन्य काल क्षुल्लकभवप्रमाण तथा उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण होनेसे इस मार्गणामें उदीरकोंका जघन्य और उत्कृष्ट काल क्रमसे उक्त प्रमाण कहा है । शेष गतिमार्गणाके भेदोंमें उदीरकोंका काल जो सर्वदा कहा है सो वह उन मार्गणाओंके निरन्तर होनेसे ही कहा है ।

§ ३१. अन्तरानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश ओघसे मोहनीयके उदीरकोंका अन्तरकाल नहीं है । अनुदीरकोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर वर्षपृथक्त्वप्रमाण है । इसी प्रकार चारों गतियोंमें जानना चाहिए । किन्तु इतनी विशेषता है कि मनुष्यत्रिकको छोड़कर अन्यत्र अनुदीरणा नहीं है । मनुष्य अपर्याप्तकोंमें मोहनीयके उदीरकोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है । इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए ।

विशेषार्थ—उपशमश्रेणिमें मोहनीयके अनुदीरक जीव होकर तथा एक समयका अन्तर देकर पुनः दूसरे जीव अनुदीरक हो जावें यह भी सम्भव है और वर्षपृथक्त्वके अन्तरसे अनुदीरक हों यह भी सम्भव है । यही कारण है कि यहाँ ओघ और मनुष्यत्रिककी अपेक्षा अनुदीरकोंका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर वर्षपृथक्त्व प्रमाण कहा है । मनुष्य अपर्याप्तक सान्तर मार्गणा होनेसे उनका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है, इसलिए इनमें मोहनीयके उदीरकोंका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर क्रमसे उक्त कालप्रमाण कहा है । गतिमार्गणाके शेष भेदोंमें अनुदीरक न होकर उदीरक ही होते हैं, इसलिए उनमें उदीरकोंके अन्तरकालका निषेध किया है । ओघसे भी सब या नाना जीव मोहनीयके उदीरक पाये जाते हैं, इसलिए इस अपेक्षासे भी उदीरकोंके अन्तरका निषेध किया है ।

§ ३२. भाव सर्वत्र औदयिक होता है ।

§ ३३. अल्पबहुत्वानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे मोहनीयके अनुदीरक जीव सबसे स्तोक हैं । उदीरक जीव अनन्तगुणे हैं । मनुष्योंमें मोहनीयके अनुदीरक जीव सबसे स्तोक हैं । उदीरक जीव असंख्यातगुणे हैं । इसीप्रकार मनुष्य पर्याप्त और मनुष्यिनियोंमें जानना चाहिए । किन्तु इतनी विशेषता है कि संख्यातगुणे करने चाहिए । शेष गतियोंमें अल्पबहुत्व नहीं है । इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए ।

§ ३४. उत्तरपयडिउदीरणा दुविहा—एगेगउत्तरपयडिउदीरणा पयडिट्ठाण-उदीरणा च। एगेगउत्तरपयडिउदीरणाए तत्थ इमाणि चउवीसमणिओगद्दाराणि—समुक्कित्तणा जाव अप्पाबहुए त्ति। समुक्कित्तणाणु० दुविहो णि०—ओघे० आदेसे०। ओघेण अट्ठावीसपयडीणमत्थि उदीरगा अणुदीरगा च। आदेसेण णेरइय० इत्थिवे०-पुरिसवे० अणुदीरगा, सेसाणमुदीरगाणुदीरगा अत्थि। णवरि णवुंसय० अणुदी० णत्थि। एवं सव्वणेरइय०। तिरिक्खाणमोघभंगो। एवं पंचिंदियतिरिक्खतिए। णवरि पंचिं०तिरि०पज्ज० इत्थिवे० अणुदी०। जोणिणी० पुरिस०-णवुंस० अणुदी०। इत्थिवे० अणुदी० णत्थि। पंचिं०तिरि०अपज्ज०-मणुसअपज्ज० सम्म०-सम्मामि०-इत्थि-पुरिसवे० अणुदी०। मिच्छ०-णवुंस० अत्थि उदीरगा, अणुदीरगा णत्थि। सोलसक० छण्णोक० अत्थि उदीर० अणुदीर०। मणुसतिए ओघं। णवरि मणुसपज्ज० इत्थिवे० अणुदी०। मणुसिणी० पुरिस०-णवुंसयवे० अणुदीर०। देवेसु ओघं। णवरि णवुंस० अणुदी०। एवं भवण०-वाणवें०-जोदिसिय-सोहम्मीसाणदेवाणं। सणक्कुमारादि जाव णवगेवज्जा त्ति एवं चेव। णवरि इत्थिवे० अणुदी०। पुरिसवे० अणुदी० णत्थि। अणुद्दिसादि सव्वट्ठा त्ति मिच्छ०-सम्मामि०-अणंताणु०४-इत्थिवे०-णवुंस० अणुदी०। सेसाणमत्थि उदीर० अणुदी०। णवरि पुरिसवे० अणुदी० णत्थि।

---

§ ३४. उत्तरप्रकृति उदीरणा दो प्रकारकी है—एकैकप्रकृति उदीरणा और प्रकृतिस्थान उदीरणा। एकैकप्रकृति उदीरणाके विषयमें ये चौबीस अनुयोगद्वार होते हैं—समुत्कीर्तनासे लेकर अल्पबहुत्व तक। समुत्कीर्तनानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे अट्ठाईस प्रकृतियोंके उदीरक और अनुदीरक जीव हैं। आदेशसे नारकियोंमें स्त्रीवेद और पुरुषवेदके अनुदीरक जीव हैं। शेष प्रकृतियोंके उदीरक और अनुदीरक जीव हैं। किन्तु इतनी विशेषता है कि नपुंसकवेदकी अनुदीरणा नहीं है। इसीप्रकार सब नारकियोंमें जानना चाहिए। तिर्यञ्चोंमें ओघके समान भंग है। इसीप्रकार पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकमें जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च पर्याप्तक स्त्रीवेदके अनुदीरक होते हैं तथा योनिनी जीव पुरुषवेद और नपुंसकवेदके अनुदीरक होते हैं। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्त जीव सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व, स्त्रीवेद और पुरुषवेदके अनुदीरक होते हैं। मिथ्यात्व और नपुंसकवेदके उदीरक होते हैं, अनुदीरक नहीं होते। सोलह कषाय और छह नोकषायोंके उदीरक और अनुदीरक दोनों प्रकारके होते हैं। मनुष्यत्रिकमें ओघके समान भंग है। किन्तु इतनी विशेषता है कि मनुष्य पर्याप्त स्त्रीवेदके अनुदीरक होते हैं तथा मनुष्यिनी पुरुषवेद और नपुंसकवेदके अनुदीरक होते हैं। देवोंमें ओघके समान भंग है। किन्तु इतनी विशेषता है कि ये नपुंसकवेदके अनुदीरक होते हैं। इसीप्रकार भवनवासी, व्यन्तर, ज्योतिषी, तथा सौधर्म और ऐशानकल्पके देवोंमें जानना चाहिए। सनत्कुमारसे लेकर नौग्रैवेयकतकके देवोंमें इसीप्रकार जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि ये स्त्रीवेदके अनुदीरक होते हैं। इनमें पुरुषवेदकी अनुदीरणा नहीं है। अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देव मिथ्यात्व, सम्यग्मिथ्यात्व, अनन्तानुबन्धी चतुष्क, स्त्रीवेद और नपुंसकवेदके अनुदीरक होते हैं। शेष प्रकृतियोंके उदीरक भी होते हैं और अनुदीरक भी होते हैं। इतनी विशेषता है कि ये पुरुषवेदके अनुदीरक नहीं होते।

एवं जाव० ।

§ २५. सव्वउदीर०-णोसव्वउदीरणाणु० दुविहो णि०—ओघे० आदेसे० । ओघेण सव्वाओ पयडीओ उदीरेंतस्स सव्वुदीरणा। तदूणं णोसव्वुदीर० । एवं जाव० ।

§ २६. उक्क०-अणुक्क०उदीरणाणु० दुविहो णि०—ओघे० आदे०। ओघेण सव्वुक्कस्सियाओ पयडीओ उदीरयंतस्स उक्क० उदीरणा। तदूणमणुक्क० उदीरणा। एवं० जाव०।

§ २७. जह०उदी०-अज०उदीरणाणु० दुविहो णि०—ओघेण आदेसे०। ओघेण एगं पयडिमुदीरयंतस्स जहण्णउदीरणा। तदो उवरिमजह०उदीर०। एवं मणुसतिए। आदेसेण णेरइय० छप्पयडीओ उदीरेमाण० जह० उदी०। तदो उवरि अजह०उदीर०। एवं सव्वणेरइय०-सव्वदेवा०। सव्वतिरिक्खेसु पंचपयडीओ उदीरेमाणयस्स जहण्णउदी०। तदो उवरिमजह०उदीर०। णवरि पंचि०तिरिक्ख-अपज०-मणुसअपज० अट्ठपयडीओ उदीरेमाण० जह० उदीर०। तदो उवरि

इसीप्रकार अनाहारक मार्गणातक जानना चाहिए।

विशेषार्थ—कुछ अपवादोंको छोड़कर साधारण नियम यह है कि जब जिस प्रकृतिका उदय होता है तब उसकी उदीरणा भी होती है। इस नियमको ध्यानमें रखकर सर्वत्र समुत्कीर्तनाका विचार कर लेना चाहिए।

§ २५. सर्व और नोसर्व उदीरणानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे सब प्रकृतियोंकी उदीरणा करनेवाले जीवके सर्व उदीरणा होती है तथा उससे कमकी उदीरणा करनेवाले जीवके नोसर्व उदीरणा होती है। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

§ २६. उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट उदीरणानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे सबसे उत्कृष्ट प्रकृतियोंकी उदीरणा करनेवाले जीवके उत्कृष्ट उदीरणा होती है और उससे कम प्रकृतियोंकी उदीरणा करनेवाले जीवके अनुत्कृष्ट उदीरणा होती है। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

§ २७. जघन्य उदीरणा और अजघन्य उदीरणानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे एक प्रकृतिकी उदीरणा करनेवाले जीवके जघन्य उदीरणा होती है। तथा इससे अधिक प्रकृतियोंकी उदीरणा करनेवाले जीवके अजघन्य उदीरणा होती है। इसीप्रकार मनुष्यत्रिकमें जानना चाहिए। आदेशसे नारकियोंमें छह प्रकृतियोंकी उदीरणा करनेवाले जीवके जघन्य उदीरणा होती है और उनसे अधिक प्रकृतियोंकी उदीरणा करनेवाले जीवके अजघन्य उदीरणा होती है। इसीप्रकार सब नारकी और सब देवोंमें जानना चाहिए। सब तिर्यञ्चोंमें पाँच प्रकृतियोंकी उदीरणा करनेवाले जीवके जघन्य उदीरणा होती है और इनसे अधिक प्रकृतियोंकी उदीरणा करनेवाले जीवके अजघन्य उदीरणा होती है। किन्तु इतनी विशेषता है कि पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्तकोंमें आठ प्रकृतियोंकी उदीरणा करनेवाले जीवके जघन्य उदीरणा होती है और इनसे अधिक प्रकृतियोंकी

अजह०उदीर० । एवं जाव० ।

§ ३८. सादि०-अणादि०-धुव०-अद्धुवाणु० दुविहो णि०—ओघे० आदेसेण । ओघेण मिच्छ० उदीर० किं सादि० ४ ? सादिया वा अणादिया वा धुवा वा अद्धुवा वा । सेसाणं पयडीणं सादि-अद्धुवा उदीरणा । आदेसेण णेरइय० सव्वपयडीणं० सादि० अद्धुवा वा । एवं चदुगदीसु । एवं जाव० ।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

उदीरणा करनेवाले जीवके अजघन्य उदीरणा होती है। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

विशेषार्थ—ओघसे कमसे कम एक लोभ प्रकृतिकी उदीरणा होती है। यह जघन्य उदीरणा है। अधिकसे अधिक एक मिथ्यात्व, सोलह कषायोंमेंसे क्रोध, मान, माया और लोभ जातिकी कोई चार कषाय, हास्य और शोकमेंसे कोई एक, रति और अरतिमेंसे कोई एक, तीनों वेदोंमेंसे कोई एक तथा भय और जुगुप्सा इन दस प्रकृतियोंकी उदीरणा होती है। यह अजघन्य उदीरणा है। मनुष्यत्रिकमें यह ओघप्ररूपणा बन जाती है, इसलिए उनमें ओघके समान जाननेकी सूचना की है। नारकियोंमें कमसे कम बारह कषायोंमेंसे क्रोध, मान, माया और लोभ जातिकी कोई तीन कषाय, हास्य और शोकमेंसे कोई एक, रति और अरतिमेंसे कोई एक तथा एक नपुंसकवेद इन छह प्रकृतियोंकी उदीरणा होती है। यह जघन्य प्रकृति उदीरणा है। अधिकसे अधिक ओघके समान दस प्रकृतियोंकी उदीरणा होती है। मात्र इनमें तीनों वेदोंमेंसे एक नपुंसक वेदकी ही उदीरणा होती है। यह अजघन्य प्रकृति उदीरणा है। नारकियोंके समान सामान्य देवोंमें और ऐशान कल्प तकके देवोंमें व्यवस्था बन जाती है, इसलिए उनमें नारकियोंके समान जाननेकी सूचना की है। मात्र इनमें स्त्रीवेद और पुरुषवेद इनमेंसे कोई एक वेदकी उदीरणा कहनी चाहिए, क्योंकि देवोंमें नपुंसकवेदकी उदीरणा नहीं होती। आगे नौ ग्रैवेयकतकके देवोंमें अन्य सब कथन पूर्वोक्त प्रमाण है। मात्र इनमें एक पुरुषवेदकी ही उदीरणा कहनी चाहिए। तथा नौ अनुदिशादिकमें कमसे कम छह और अधिकसे अधिक नौ प्रकृतियोंकी उदीरणा होती है। तिर्यञ्चोंमें पञ्चम गुणस्थानकी प्राप्ति सम्भव होनेसे कमसे कम पाँच और अधिकसे अधिक दस प्रकृतियोंकी उदीरणा सम्भव है। तथा पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्तकोंमें एक मिथ्यात्व गुणस्थान सम्भव होनेसे कमसे कम आठ और अधिकसे अधिक दस प्रकृतियोंकी उदीरणा सम्भव है। सर्वत्र अजघन्य उदीरणाके जो अन्य विकल्प सम्भव हैं वे यथायोग्य लगा लेना चाहिए। यह जघन्य और अजघन्यकी अपेक्षा व्याख्यान है। यही व्याख्यान उत्कृष्ट अनुत्कृष्टकी अपेक्षासे भी जान लेना चाहिए। मात्र सर्वत्र सबसे अधिक प्रकृतियोंकी उदीरणा उत्कृष्ट प्रकृति उदीरणा है और उनसे कम प्रकृतियोंकी उदीरणा अनुत्कृष्ट प्रकृति उदीरणा है इस व्याख्यानके अनुसार यह कथन करना चाहिए। सर्वप्रकृति उदीरणा और नोसर्वप्रकृति उदीरणाका खुलासा भी इसीप्रकार घटित कर लेना चाहिए।

§ ३८. सादि, अनादि, ध्रुव और अध्रुवानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मिथ्यात्वके उदीरक क्या सादि, अनादि, ध्रुव या अध्रुव हैं ? सादि, अनादि, ध्रुव और अध्रुव हैं। शेष प्रकृतियोंकी सादि और अध्रुव उदीरणा है। आदेशसे नारकियोंमें सब प्रकृतियोंकी सादि और अध्रुव उदीरणा है। इसीप्रकार चारों गतियोंमें जानना चाहिए। इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

§ ३९. सामित्ताणु० दुविहो णि०—ओघे० आदेसे० । ओघेण मिच्छ०-सम्म०-सम्मामि० उदीर० कस्स ? अण्णद० मिच्छाइट्ठिस्स सम्माइट्ठिस्स सम्मामिच्छाइट्ठिस्स । अणंताणु०४ उदीर० कस्स ? अण्णद० मिच्छाइट्ठि० सासणसम्माइट्ठिस्स वा । बारसक०-णवणोक० उदीरणा कस्स ? अण्णद० मिच्छाइट्ठि० सम्माइट्ठिस्स वा । आदेसेण णेरइय० ओघं । णवरि इत्थिवे०-पुरिसवे० णत्थि उदीर० । एवं सव्वणेरइय० । तिरिक्खेसु ओघं । एवं पंचिंदियतिरिक्खतिए । णवरि पंचिंदियतिरिक्खपज्ज० इत्थिवेद०उदीरणा णत्थि । जोणिणीसु पुरिसवे०-णवुंसय०उदीरणा णत्थि । पंचिं०तिरि०अपज्ज०-मणुसअपज्ज० चउवीसंपयडीणं उदीर० कस्स ? अण्णद० । मणुसतिए पंचिं०तिरिक्खतियभंगो । देवेसु ओघं । णवरि णवुंस०उदीर० णत्थि । एवं भवण०-वाणवें०-जोदिसि०-सोहम्मीसाण० । सणक्कुमारादि जाव णवगेवज्जा त्ति एवं चेव । णवरि इत्थिवे०उदीरणा णत्थि । अणुदिसादि सव्वट्ठा त्ति वीसण्हं पयडीणमुदीरणा कस्स ? अण्णद० । एवं जाव० ।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

विशेषार्थ—मिथ्यात्व प्रकृतिकी उदीरणा मिथ्यात्व गुणस्थानमें निरन्तर होती रहती है, इसलिए ओघसे भव्य और अभव्य दोनोंकी अपेक्षा इसकी उदीरणाके सादि आदि चारों भंग बन जाते हैं। किन्तु अन्य प्रकृतियोंकी उदीरणा अपने अपने उदयानुसार कादाचित्क है, इसलिए उनकी उदीरणाके सादि और अध्रुव ये दो ही भंग बनते हैं। यह ओघप्ररूपणा है। गति आदि मार्गणाएँ प्रत्येक जीवकी अपेक्षा कादाचित्क हैं, इसलिए इनमें सब प्रकृतियोंकी उदीरणा सादि और अध्रुव ही है।

§ ३९. स्वामित्वानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मिथ्यात्व, सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी उदीरणा किसके होती है ? अन्यतर मिथ्यादृष्टि, सम्यग्दृष्टि और सम्यग्मिथ्यादृष्टिके होती है। अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी उदीरणा किसके होती है ? अन्यतर मिथ्यादृष्टि और सासादनसम्यग्दृष्टिके होती है। बारह कषाय और नौ नोकषायोंकी उदीरणा किसके होती है ? अन्यतर मिथ्यादृष्टि और सम्यग्दृष्टिके होती है। आदेशसे नारकियोंमें ओघके समान भंग है। किन्तु इतनी विशेषता है कि इनके स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी उदीरणा नहीं होती। इसी प्रकार सब नारकियोंमें जानना चाहिए। तिर्यञ्चोंमें ओघके समान भङ्ग है। इसी प्रकार पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकमें जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि पञ्चेन्द्रिय तिर्यंच पर्याप्तकोंमें स्त्रीवेदकी उदीरणा नहीं होती। तथा योनिनी तिर्यञ्चोंमें पुरुषवेद और नपुंसकवेदकी उदीरणा नहीं होती। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्तकोंमें चौबीस प्रकृतियोंकी उदीरणा किसके होती है ? अन्यतरके होती है। मनुष्यत्रिकमें पञ्चेन्द्रिय तिर्यंचत्रिकके समान भङ्ग है। देवोंमें ओघके समान भङ्ग है। किन्तु इतनी विशेषता है कि इनमें नपुंसकवेदकी उदीरणा नहीं है। इसी प्रकार भवनवासी, व्यन्तर, ज्योतिषी सौधर्म और ऐशान-देवोंमें जानना चाहिए। तथा सनत्कुमारसे लेकर नौ ग्रैवेयक तकके देवोंमें इसी प्रकार जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि इनमें स्त्रीवेदकी उदीरणा नहीं होती। अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें बीस प्रकृतियोंकी उदीरणा किसके होती है ? अन्यतरके होती है। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणातक जानना चाहिए।

§ ४०. कालाणु० दुविहो णि०—ओघेण आदेसे० । ओघेण मिच्छ०उदीर० केवचिरं० ? तिण्णि भंगा । तत्थ जो सो सादिओ सपज्जवसिदो तस्स इमो०—जह० अंतोमु०, उक्क० अद्धपोग्गल० देसू० । सम्म० उदीर० जह० अंतोमु०, उक्क० छावट्ठिसागरोवमाणि आवलिऊणाणि । सम्मामि० जह० उक्क० अंतोमु० । सोलसक०-भय-दुगुंछ० जह० एयस०, उक्क० अंतोमु० । हस्स-रदि० जह० एयसमओ, उक्क० छम्मासा । अरदि-सोग० जह० एयस०, उक्क० तेत्तीसं सागरो० सादिरेयाणि । इत्थिवे० जह० एयस०, उक्क० पलिदोवमसदपुधत्तं । पुरिसवे० जह० अंतोमु०, उक्क० सागरोवमसदपुधत्तं । णवुंस० जह० एयस०, उक्क० अणंतकालमसंखेज्जा पोग्गलपरियट्टा । आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

§ ४१. आदेसेण णेरइय० मिच्छ० उदी० जह० अंतोमु०, णवुंस० जह० दसवस्ससहस्साणि, अरदि०-सोग० जह० एयस०, उक्क० सव्वेसिं तेत्तीसं सागरोवमं । सम्म० जह० एय०, उक्क० तेत्तीसं सागरो० देसूणाणि । सम्मामि० ओघं ।

विशेषार्थ—पञ्चेन्द्रिय तिर्यंच अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्तकोंमें सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व, स्त्रीवेद और पुरुषवेदके बिना चौबीस प्रकृतियोंकी उदीरणा सम्भव है । तथा अनुदिशादिकमें मिथ्यात्व, सम्यग्मिथ्यात्व, अनन्तानुबन्धीचतुष्क नपुंसकवेद और स्त्रीवेदके बिना बीस प्रकृतियोंकी उदीरणा सम्भव है । शेष कथन सुगम है ।

§ ४०. कालानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे मिथ्यात्वके उदीरकका कितना काल है ? तीन भङ्ग हैं । उनमेंसे जो सादि-सान्त भंग है उसका यह निर्देश है—जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट काल उपार्ध पुद्गल परिवर्तनप्रमाण है । सम्यक्त्वके उदीरकका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट काल एक आवलि कम छ्यासठ सागर है । सम्यग्मिथ्यात्वके उदीरकका जघन्य और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है । सोलह कषाय, भय और जुगुप्साके उदीरकका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है । हास्य और रतिके उदीरकका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल छह महीना है । अरति और शोकके उदीरकका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल साधिक तेतीस सागर है । स्त्रीवेदके उदीरकका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल पृथक्त्व सौ पल्य प्रमाण है । पुरुषवेदके उदीरकका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट काल पृथक्त्व सौ सागर प्रमाण है । नपुंसकवेदके उदीरकका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अनन्त काल है ।

विशेषार्थ—प्रत्येक प्रकृतिका जो जघन्य और उत्कृष्ट उदय काल है वही यहाँ लिया गया है । अरति-शोकके उदीरकका उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त अधिक तेतीस सागर है । स्त्रीवेद और नपुंसकवेदका एक समय काल उपशम श्रेणिसे गिरकर मरनेकी अपेक्षा है । अपूर्वकरणके अन्तिम समयमें भय जुगुप्साका एक समयके लिये वेदक होकर अनन्तर समयमें अनिवृत्तिकरण गुणस्थानके प्राप्त होनेपर उक्त प्रकृतियोंकी उदीरणा व्युच्छित्ति देखी जाती है ।

§ ४१. आदेशसे नारकियोंमें मिथ्यात्वके उदीरकका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है, नपुंसकवेदके उदीरकका जघन्य काल दश हजार वर्ष है, अरति और शोकके उदीरकका जघन्य काल एक समय है तथा सबका उत्कृष्ट काल तेतीस सागर है । सम्यक्त्वके उदीरकका जघन्य काल

सोलसक०-हस्स-रदि०-भय-दुगुंछा० जह० एयस०, उक्क० अंतोमु० । एवं सत्तमाए । णवरि णवुंस० जह० बावीसं सागरोवमाणि सादिरेयाणि । सम्म० जह० अंतोमु० । पढमाए जाव छट्टि त्ति णारयभंगो । णवरि सगट्ठिदी । अरदि-सोग० जह० एयस०, उक्क० अंतोमु० । णवुंस० जहण्णुक्कस्सट्ठिदी । बिदियादि जाव छट्टि त्ति सम्म० जह० अंतोमु०, उक्क० सगट्ठिदी देसूणा ।

मार्गदर्शक § ४२. तिरिक्खेसु मिच्छ०-णवुंस० उदीर० जह० खुद्दाभव०, उक्क० अणंतकालमसंखेज्जा पोग्गलपरियट्टा । सम्म० उदीर० जह० एगस०, उक्क० तिण्णि पलिदोवमाणि देसूणाणि । सम्मामि० ओघं । सोलसक०-छण्णोक० जह० एयस०, उक्क० अंतोमु० । इत्थिवे०-पुरिसवे० जह० अंतोमु०, उक्क० तिण्णि पलिदो० पुव्वकोडिपुधत्तेणब्भहियाणि । एवं पंचिंदियतिरिक्खतिए । णवरि मिच्छ० जह०

एक समय है और उत्कृष्ट काल कुछ कम तेतीस सागर है । सम्यग्मिथ्यात्वका भंग ओघके समान है । सोलह कषाय, हास्य, रति, भय और जुगुप्साके उदीरकका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है । इसी प्रकार सातवीं पृथिवीमें जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि नपुंसकवेदके उदीरकका जघन्य काल साधिक बाईस सागर है तथा सम्यक्त्वके उदीरकका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है । पहिली पृथिवीसे लेकर छठी पृथिवी तकके नारकियोंमें सामान्य नारकियोंके समान भंग है । किन्तु इतनी विशेषता है कि अपनी स्थिति कहनी चाहिए । तथा अरति और शोकके उदीरकका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है । नपुंसकवेदके उदीरकका जघन्य और उत्कृष्ट काल जघन्य और उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण है । दूसरीसे लेकर छठी पृथिवी तकके नारकियोंमें सम्यक्त्वके उदीरकका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट काल कुछ कम अपनी स्थितिप्रमाण है ।

विशेषार्थ—क्षायिक सम्यक्त्वके सन्मुख वेदक सम्यग्दृष्टि जीव भी मर कर प्रथम नरकमें उत्पन्न होता है इसलिए इसमें सम्यक्त्वकी उदीरणाका एक समय काल बन जाता है और इसी अपेक्षासे सामान्य नारकियोंमें सम्यक्त्वकी उदीरणाका एक समय काल कहा है । नारकियोंमें हास्य और रतिकी उदीरणाका उत्कृष्ट काल छह महीना देवोंमें ही घटित होता है । अन्यत्र वह अन्तर्मुहूर्त ही बनता है, इसलिए नारकियोंमें भी वह अन्तर्मुहूर्त ही कहा है । अरति और शोककी उदीरणाका उत्कृष्ट काल तेतीस सागर सातवें नरकमें ही बनता है । अन्यत्र वह अन्तर्मुहूर्त ही प्राप्त होता है । यही कारण है कि सामान्य नारकियोंमें और सातवें नरकमें तेतीस सागर कहा है तथा शेष नरकोंमें अन्तर्मुहूर्त बतलाया है । शेष कथन सुगम है ।

§ ४२. तिर्यंचोंमें मिथ्यात्व और नपुंसकवेदके उदीरकका जघन्य काल क्षुल्लकभवग्रहणप्रमाण है और उत्कृष्ट अनन्त कालप्रमाण है जो असंख्यात पुद्गल परिवर्तनके बराबर है । सम्यक्त्वकी उदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल कुछ कम तीन पल्य है । सम्यग्मिथ्यात्वका भंग ओघके समान है । सोलह कषाय और छह नोकषायोंके उदीरकका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है । स्त्रीवेद और पुरुषवेदके उदीरकका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट काल पूर्व कोटिपृथक्त्व अधिक तीन पल्य है । इसीप्रकार पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकमें जानना चाहिए । किन्तु इतनी विशेषता है कि इनमें मिथ्यात्वके

खुद्दाभव० अंतोमु०, उक्क० सगट्ठिदी। णवुंस० जह० खुद्दाभव० अंतोमु०, उक्क० पलिदोवमाणि पुव्वकोडिपुधत्तेणब्भहियाणि। णवरि पंचि०तिरि०पज्ज० इत्थिवेद० णत्थि। जोणिणी० पुरिस०-णवुंस० णत्थि। सम्म० जह० अंतोमु०, उक्क० तिण्णि पलिदो० देसूणाणि। पंचि०तिरि०अपज्ज०-मणुसअपज्ज० मिच्छ०-णवुंस० जह० खुद्दाभव०, उक्क० अंतोमु०। सोलसक०-छण्णोक० तिरिक्खोघं।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

§ ४३. मणुसेसु पंचि०तिरिक्खभंगो। णवरि सम्म० जह० अंतोमु०। तिण्णवे० जह० एयस०। एवं मणुसपज्ज०। णवरि सम्म० जह० एयस०। इत्थिवे० णत्थि। मिच्छ० जह० अंतोमु०। मणुसिणी० मणुसोघं। णवरि मिच्छ० जह० अंतोमु०। पुरिस-णवुंस० णत्थि।

उदीरकका जघन्य काल सामान्य पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चोंमें क्षुल्लकभवग्रहणप्रमाण और शेष दो में अन्तर्मुहूर्त है तथा उत्कृष्ट काल अपनी अपनी कायस्थितिप्रमाण है। नपुंसकवेदके उदीरकका जघन्य काल पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चोंमें क्षुल्लकभवग्रहणप्रमाण और शेषमें अन्तर्मुहूर्तप्रमाण है तथा उत्कृष्ट काल पूर्वकोटिपृथक्त्व है। किन्तु इतनी विशेषता है कि पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च पर्याप्तकोंमें स्त्रीवेदकी उदीरणा नहीं है तथा योनिनी तिर्यञ्चोंमें पुरुषवेद और नपुंसकवेदकी उदीरणा नहीं है। सम्यक्त्वके उदीरकका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट काल कुछ कम तीन पल्य है। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्तकोंमें मिथ्यात्व और नपुंसकवेदके उदीरकका जघन्य काल क्षुल्लक भवग्रहणप्रमाण है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। सोलह कषाय और छह नोकषायोंका भंग सामान्य तिर्यञ्चोंके समान है।

विशेषार्थ—क्षायिकसम्यक्त्वके सन्मुख क्षायिक सम्यग्दृष्टि जीव मर कर योनिनी तिर्यञ्चोंमें नहीं उत्पन्न होते, इसलिए उनमें सम्यक्त्वके उदीरकका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट काल कुछ कम तीन पल्य कहा है। तथा नपुंसकवेदकी उदीरणा और उदय भोगभूमिमें नहीं होता, इसलिए इसके उदीरक तिर्यञ्चोंका उत्कृष्ट काल पूर्वकोटिपृथक्त्वप्रमाण कहा है। शेष कथन सुगम है।

§ ४३. मनुष्योंमें पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चोंके समान भंग है। किन्तु इतनी विशेषता है कि इनमें सम्यक्त्वके उदीरकका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है। तथा तीनों वेदोंके उदीरकका जघन्य काल एक समय है। इसीप्रकार मनुष्य पर्याप्तकोंमें जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि इनमें सम्यक्त्वके उदीरकका जघन्य काल एक समय है। इनमें स्त्रीवेदकी उदीरणा नहीं है। तथा मिथ्यात्वके उदीरकका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है। मनुष्यिनियोंमें सामान्य मनुष्योंके समान भंग है। किन्तु इतनी विशेषता है कि मिथ्यात्वके उदीरकका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है। तथा इनमें पुरुषवेद और नपुंसकवेदकी उदीरणा नहीं होती।

विशेषार्थ—पहले पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चोंमें सम्यक्त्वके उदीरकका जघन्य काल एक समय कह आये हैं, इसलिए यहाँ सामान्य मनुष्योंमें उसका निषेध करके वह अन्तर्मुहूर्त बतलाया है। वैसे मनुष्य पर्याप्तकोंमें यह काल एक समय बन जाता है, क्योंकि जिसने पहले मनुष्यायुका बन्ध किया है ऐसा मनुष्यिनी जीव यदि क्षायिक सम्यक्त्वको उत्पन्न करता हुआ सम्यक्त्वकी उदीरणा में एक समय शेष रहने पर मर कर यदि पर्याप्त मनुष्योंमें उत्पन्न होता है तो उसके सम्यक्त्वकी

§ ४५. देवेसु मिच्छ० जह० अंतोमु०, उक्क० एक्कत्तीसं सागरोवमं। सम्म० जह० एयस०, उक्क तेत्तीसं सागरोवमं। सम्मामि०-सोलसक०-अरदि-सोग-भय-दुगुंछ० तिरिक्खोघं। हस्स-रइ० ओघं। इत्थिवे० जह० दसवस्ससहस्साणि, उक्क० पणवण्णपलिदो०। पुरिस० जह० दसवस्ससहस्साणि, उक्क० तेत्तीसं सागरो०। भवणादि जाव णवगेवज्जा त्ति मिच्छ०-सम्म० जह० अंतोमु० एयस०, उक्क० सगट्ठिदी। पुरिस० जहण्णु० जह०-उक्क०ठिदी। सम्मामि०-सोलसक०-छण्णोक० तिरिक्खोघं। णवरि भवण०-वाणवें-जोदिसि० सम्म० जह० अंतोमु०, उक्क० सगट्ठिदी देसूणा। इत्थिवे० जह० दसवस्ससहस्साणि दसवस्ससह० पलिदो० अट्ठमभागो, उक्क० तिण्णि पलिदो० पलिदोव० सादिरेयाणि पलिदोव० सादिरे०। सोहम्मीसाण० इत्थिवे० जह० पलिदो० सादिरे०, उक्क० पणवण्णं पलिदोवमाणि। सदर-सहस्सार० हस्स-रइ० देवोघं। अणुद्दिसादि सव्वट्ठा त्ति सम्म० जह० एयस०, उक्क० सगट्ठिदी। बारसक०-

---

उदीरणाका जघन्य काल एक समय बन जाता है। परन्तु ऐसा होने पर भी सामान्य मनुष्योंमें इसकी उदीरणाका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त ही बनता है। यही कारण है कि यहाँ पर सामान्य मनुष्योंमें सम्यक्त्वके उदीरकका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त बतलाया है। सामान्य मनुष्योंमें तीनों वेदोंके उदीरकका जघन्य काल एक समय उपशमश्रेणिमें एक समय तक उस उस वेदकी उदीरणा करा कर मरणकी अपेक्षा कहा है। पर्याप्त मनुष्योंमें पुरुषवेद और नपुंसकवेदके उदीरकका तथा मनुष्यिनियोंमें स्त्रीवेदके उदीरकका जघन्य काल एक समय इसीप्रकार घटित कर लेना चाहिए। शेष कथन सुगम है।

§ ४५. देवोंमें मिथ्यात्वके उदीरकका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट काल इकतीस सागर है। सम्यक्त्वके उदीरकका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल तेतीस सागर है। सम्यग्मिथ्यात्व, सोलह कषाय, अरति, शोक, भय और जुगुप्साका भंग सामान्य तिर्यञ्चोंके समान है। हास्य और रतिका भंग ओघके समान है। स्त्रीवेदके उदीरकका जघन्य काल दस हजार वर्ष है और उत्कृष्ट काल पचवन पल्य है। पुरुषवेदके उदीरकका जघन्य काल दस हजार वर्ष है और उत्कृष्ट काल तेतीस सागर है। भवनवासियोंसे लेकर नौ ग्रैवेयक तकके देवोंमें मिथ्यात्व और सम्यक्त्वके उदीरकका जघन्य काल क्रमसे अन्तर्मुहूर्त और एक समय है। तथा उत्कृष्ट काल अपनी स्थितिप्रमाण है। पुरुषवेदके उदीरकका जघन्य और उत्कृष्ट काल जघन्य और उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण है। सम्यग्मिथ्यात्व, सोलह कषाय और छह नोकषायोंके उदीरकका भंग सामान्य तिर्यंचोंके समान है। किन्तु इतनी विशेषता है कि भवनवासी, व्यन्तर और ज्योतिषी देवोंमें सम्यक्त्वके उदीरकका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट काल कुछ कम अपनी स्थितिप्रमाण है। स्त्रीवेदके उदीरकका जघन्य काल क्रमसे दस हजार वर्ष, दस हजार वर्ष और पल्यके आठवें भागप्रमाण है तथा उत्कृष्ट काल तीन पल्य, साधिक एक पल्य और साधिक एक पल्य है। सौधर्म और ऐशान कल्पमें स्त्रीवेदके उदीरकका जघन्य काल साधिक एक पल्य और उत्कृष्ट काल पचवन पल्य है। शतार और सहस्रार कल्पमें हास्य और रतिके उदीरकका काल सामान्य देवोंके समान है। अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें सम्यक्त्वके उदीरकका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अपनी स्थितिप्रमाण है।

छण्णोक० जह० एगस०, उक्क० अंतोमु० । पुरिसवेद० जहण्णुक्कस्सट्ठिदी । एवं जाव० ।

§ ४५. अंतराणु० दुविहो णि०—ओघेण आदेसे० । ओघेण मिच्छ० उदीर० अंतरं जह० अंतोमु०, उक्क० बेछावट्ठिसागरो० देसूणाणि । सम्म०-सम्मामि० जह० अंतोमु०, उक्क० अद्धपोग्गल० देसूणाणि । अणंताणु०चउक्क० जह० एयस०, उक्क० बेछावट्ठिसागरो० देसूणाणि । अट्ठक० जह० एयसमओ, उक्क० पुव्वकोडी देसूणा । चदुसंज०-भय-दुगुंछ० जह० एयस०, उक्क० अंतोमु० । हस्स-रदि० जह० एयस०, उक्क० तेत्तीसं सागरो० सादिरेयाणि । अरदि-सोग० जह० एयस०, उक्क० छम्मासा । इत्थिवे०-पुरिसवे० जह० अंतोमु० एगस०, उक्क० अणंतकालमसंखेज्जा पोग्गलपरियट्टा । णवुंस० जह० अंतोमु०, उक्क० सागरोवमसदपुधत्तं ।

बारह कषाय और छह नोकषायोंके उदीरकका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है । पुरुषवेदके उदीरकका जघन्य और उत्कृष्ट काल अपनी जघन्य और उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण है । इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए ।

विशेषार्थ—भवनत्रिकमें क्षायिक सम्यक्त्वके सन्मुख वेदकसम्यग्दृष्टि जीवोंकी उत्पत्ति
मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज
नहीं होती, इसलिए उनमें सम्यक्त्वके उदीरकका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त कहा है । किन्तु अन्यत्र ऐसे जीवकी उत्पत्ति होती है, इसलिए सामान्य देवोंमें और सौधर्म कल्पसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें सम्यक्त्वके उदीरकका जघन्य काल एक समय बन जानेसे वह तत्प्रमाण कहा है । हास्य और रतिके उदीरकका ओघसे जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल छह महीना पहले बतला आये हैं । यह काल सामान्यसे देवोंमें प्राप्त होकर भी वह शतार और सहस्रार कल्पमें ही प्राप्त होता है, अन्यत्र नहीं । इसलिए यहाँ पर सामान्य देवोंमें यह काल ओघके समान बतला कर शतार और सहस्रार कल्पमें उक्त अर्थको फलित करनेके लिए उसे सामान्य देवोंके समान जाननेकी सूचना की है । शेष कथन सुगम है ।

§ ४५. अन्तरानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे मिथ्यात्वके उदीरकका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम दो छयासठ सागर है । सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके उदीरकका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम अर्धपुद्गल परिवर्तन प्रमाण है । अनन्तानुबन्धीचतुष्कके उदीरकका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम दो छयासठ सागर है । आठ कषायोंके उदीरकका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम एक पूर्वकोटि है । चार संज्वलन, भय और जुगुप्साके उदीरकका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है । हास्य और रतिके उदीरकका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक तेतीस सागर है । अरति और शोकके उदीरकका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर छह महीना है । स्त्रीवेद और पुरुषवेदके उदीरकका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त और एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अनन्त काल है जो असंख्यात पुद्गल परिवर्तन प्रमाण है । नपुंसकवेदके उदीरकका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर सौ सागरपृथक्त्व-प्रमाण है ।

§ ४६. आदेसेण णेरइय० मिच्छ०-सम्म०-सम्मामि-अणंताणु०४-हस्स-रदि० जह० अंतोमु०, उक्क० तेत्तीसं सागरो० देसूणाणि। बारसक०-अरदि-सोग०-भय-दुगुंछ० जह० उक्क० अंतोमु०। णवुंस० णत्थि अंतरं। एवं सत्तमाए। एवं पढमाए जाव छट्ठि त्ति। णवरि सगट्ठिदी देसूणा। हस्स-रदि० जहण्णुक्क० अंतोमु०।

विशेषार्थ—मिथ्यात्व गुणस्थानका जघन्य और उत्कृष्ट जो अन्तरकाल बतलाया है वही यहाँ मिथ्यात्वके उदीरकका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तरकाल लिया गया है। तथा सम्यग्दर्शनका जघन्य और उत्कृष्ट जो अन्तरकाल है वही यहाँ सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके उदीरकका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तरकाल लिया गया है। इसीप्रकार अनन्तानुबन्धीचतुष्क आदि कषायोंके उदीरकका यथायोग्य उत्कृष्ट अन्तरकाल घटित कर लेना चाहिए। मात्र इनके उदीरकका जघन्य अन्तरकाल एक समय इसलिए बन जाता है, क्योंकि प्रत्येक कषायकी तदनुगत उदीरणा कारणविशेषसे कमसे कम एक समय तक देखी जाती है। किसी जीवके भय और जुगुप्साकी उदीरणा कमसे कम एक समय तक और अधिकसे अधिक अन्तर्मुहूर्त काल तक न हो यह सम्भव है, इसलिए इनके उदीरकका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त कहा है। आगे जो हास्य, रति, अरति और शोकके उदीरकका जघन्य अन्तर एक समय कहा है वह अपनी सप्रतिपक्ष प्रकृतिकी उदीरणा कमसे कम एक समय तक सम्भव होनेसे कहा है। मात्र सातवें नरकमें निरन्तर अरति और शोकका उदय रहता है। तथा वहाँ जानेके पूर्व भी अन्तर्मुहूर्त काल तक इनका उदय रहता है, इसलिए तो हास्य और रतिके उदीरकका उत्कृष्ट अन्तर साधिक तेतीस सागर कहा है और शतार-सहस्रार कल्पमें हास्य और रतिका उत्कृष्ट उदय छह महीना तक सम्भव है, इसलिए अरति और शोकके उदीरकका उत्कृष्ट अन्तर छह माह कहा है। स्त्रीवेद और पुरुषवेदका उदय तिर्यञ्चोंमें अनन्तकाल तक न हो यह सम्भव है। तथा इसीप्रकार जो जीव सौ सागर पृथक्त्व कालतक पुरुषवेदी है उसके उतने कालतक नपुंसकवेदकी उदीरणा नहीं होती यह भी सम्भव है, इसलिए तो स्त्रीवेद और पुरुषवेदके उदीरकका उत्कृष्ट अन्तर अनन्त काल और नपुंसकवेदके उदीरकका उत्कृष्ट अन्तर सौ सागरपृथक्त्वप्रमाण कहा है। तथा स्त्रीवेद और नपुंसकवेदकी अनुदीरणा कमसे कम अन्तर्मुहूर्त कालतक न हो यह भी सम्भव है, क्योंकि एक तो प्रतिपक्ष वेदका वेदन करनेवाले जीवके इन वेदोंकी उदीरणा नहीं होती। दूसरे उपशमश्रेणिमें भी इनकी उदीरणाका अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्तसे कम नहीं बनता, क्योंकि जो इन वेदोंके उदयसे उपशमश्रेणि पर चढ़ता है उसके इनकी अनुदीरणा होकर पुनः उदीरणा होनेमें अन्तर्मुहूर्तसे कम काल नहीं लगता, इसलिए इनके उदीरकका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त कहा है। किन्तु पुरुषवेदके विषयमें यह बात नहीं है, क्योंकि उपशमश्रेणिमें इसकी अनुदीरणा होनेपर एक समय तक ही वह इसका अनुदीरक रहे और दूसरे समयमें मर कर उसके देव हो जानेपर पुनः पुरुषवेदका उदीरक हो जाय यह सम्भव है, इसलिए इसके उदीरकका जघन्य अन्तर एक समय कहा है।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

§ ४६. आदेशसे नारकियोंमें मिथ्यात्व, सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व, अनन्तानुबन्धीचतुष्क, हास्य और रतिके उदीरकका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तेतीस सागर है। बारह कषाय, अरति, शोक, भय और जुगुप्साके उदीरकका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। नपुंसकवेदके उदीरकका अन्तरकाल नहीं है। इसीप्रकार सातवीं पृथिवीमें जानना चाहिए। इसीप्रकार पहली पृथिवीसे लेकर छठी पृथिवी तक जानना चाहिए।

§ ४७. तिरिक्खेसु मिच्छ०-अणंताणु०४ जह० अंतोमु०, उक्क० तिण्णि पलिदोवमाणि देसूणाणि । सम्म०-सम्मामि० ओघं । अपच्चक्खाणचउक्क० जह० अंतोमु०, उक्क० पुव्वकोडी देसूणा । अट्ठक०-छण्णोक० जह० उक्क० अंतोमु० । इत्थिवे०-पुरिस० जह० खुद्दाभव०, उक्क० अणंतकालमसंखेज्जा पोग्गलपरियट्टा । णवुंस० जह० अंतोमु०, उक्क० पुव्वकोडिपुधत्तं । एवं पंचिंदियतिरिक्खाणं० । णवरि सम्म०-सम्मामि० जह० अंतोमु०, उक्क० तिण्णि पलिदोवमाणि पुव्वकोडिपुधत्तेणब्भहियाणि । इत्थिवेद-पुरिस० जह० खुद्दाभव०, उक्क० पुव्वकोडिपुधत्तं । एवं पंचिं०तिरि०पज्ज० । णवरि इत्थिवे० णत्थि । पुरिस० जह० अंतोमु० । जोणिणी० पंचिंदियतिरिक्खभंगो । णवरि णवुंस०-पुरिस० णत्थि । इत्थिवे० णत्थि अंतरं । पंचिं०तिरि०अपज्ज०-मणुसअपज्ज० मिच्छ-णवुंस० णत्थि अंतरं । सोलसक०-छण्णोक० जह० उक्क० अंतोमु० । मणुसतिए पंचिंदियतिरिक्खतियभंगो । णवरि

किन्तु इतनी विशेषता है कि कुछ कम अपनी-अपनी स्थिति कहनी चाहिए । तथा इन नरकोंमें हास्य और रतिके उदीरकका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है ।

विशेषार्थ—नरकमें अरति, शोक, भय और जुगुप्साका वेदक जीव अवेदक होकर पुनः अन्तर्मुहूर्त कालके पहले उनका वेदक नहीं होता, इसलिए इनके उदीरकका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त कहा है । यहाँ इतना विशेष समझना चाहिए कि अरति और शोकका अवेदक होनेपर ऐसा जीव हास्य और रतिका अन्तर्मुहूर्त कालतक नियमसे वेदन करता है ।

§ ४७. तिर्यञ्चोंमें मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धीचतुष्कके उदीरकका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तीन पल्य है । सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका भंग ओघके समान है । अप्रत्याख्यानावरणचतुष्कके उदीरकका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम एक पूर्वकोटि है । आठ कषाय और छह नोकषायोंके उदीरकका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है । स्त्रीवेद और पुरुषवेदके उदीरकका जघन्य अन्तर क्षुल्लक भव ग्रहणप्रमाण है और उत्कृष्ट अन्तर अनन्त काल है जो असंख्यात पुद्गल परिवर्तनप्रमाण है । नपुंसकवेदके उदीरकका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर पूर्वकोटिपृथक्त्वप्रमाण है । इसीप्रकार पञ्चेन्द्रियतिर्यञ्चके जानना चाहिए । किन्तु इतनी विशेषता है कि इनमें सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके उदीरकका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर पूर्वकोटिपृथक्त्व अधिक तीन पल्य है । स्त्रीवेद और पुरुषवेदके उदीरकका जघन्य अन्तर क्षुल्लकभवग्रहणप्रमाण है और उत्कृष्ट अन्तर पूर्वकोटिपृथक्त्वप्रमाण है । इसीप्रकार पञ्चेन्द्रियतिर्यञ्च पर्याप्तकोंके जानना चाहिए । किन्तु इतनी विशेषता है कि इनमें स्त्रीवेदकी उदीरणा नहीं है । तथा पुरुषवेदके उदीरकका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है । योनिनी तिर्यञ्चोंमें पञ्चेन्द्रियतिर्यञ्चोंके समान भंग है । किंतु इतनी विशेषता है कि इनमें नपुंसकवेद और पुरुषवेदकी उदीरणा नहीं होती । तथा स्त्रीवेदकी उदीरणाका अन्तरकाल नहीं है । पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्तकोंमें मिथ्यात्व और नपुंसकवेदके उदीरकका अन्तरकाल नहीं है । सोलह कषाय और छह नोकषायोंके उदीरकका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है । मनुष्यत्रिकमें

पच्चक्खाण०४ अपच्चक्खाण४भंगो। मणुसिणी० इत्थिवे० जह० उक्क० अंतोमुहुत्तं।

§ ४८. देवेसु मिच्छ०-सम्म०-सम्मामि०-अणंताणु०४ जह० अंतोमु०, उक्क० एक्कत्तीसं सागरोवमाणि देसूणाणि। बारसक०-हस्स-रदि-भय-दुगुंछ० जह० उक्क० अंतोमु०। अरदि-सोग० जह० अंतोमु०, उक्क० छम्मासा। इत्थिवे०-पुरिस० णत्थि अंतरं। भवणादि जाव णवगेवज्जा त्ति एवं चेव। णवरि सगट्ठिदी देसूणा। अरदि-सोग० जह० उक्क० अंतोमु०। सदर-सहस्सार० अरदि-सोग० देवोघं। सणक्कुमारादि जाव णवगेवज्जा त्ति इत्थिवेदो णत्थि। अणुद्दिसादि जाव सव्वट्ठा त्ति सम्म०-पुरिस० णत्थि अंतरं। बारसक०-छण्णोक० जह० उक्क० अंतोमुहुत्तं। एवं० जाव०।

§ ४९. सण्णियासाणु० दुविहो णि०—ओघे० आदेसे०। ओघेण मिच्छत्तमुदीरेंतो सोलसक०-णवणोक० सिया उदीर० सिया अणुदीर०। सम्मत्तमुदीरेंतो बारसक०-णवणोक० सिया उदीर० सिया अणुदीर०। एवं सम्मामि०। अणंताणु०-कोधमुदीरेंतो तिण्हं कोधाणं णिय० उदीर०। मिच्छ०-णवणोक० सिया उदीर०। एवं तिण्हं कसायाणं। अपच्चक्खाणकोहमुदीरेंतो दोण्हं कोहाणं णिय० उदीर०।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

पञ्चेन्द्रियतिर्यञ्चत्रिकके समान भंग है। किन्तु इतनी विशेषता है कि इनमें प्रत्याख्यानावरणचतुष्कका भंग अप्रत्याख्यानावरणचतुष्कके समान है। तथा मनुष्यिनियोंमें स्त्रीवेदके उदीरकका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है।

§ ४८. देवोंमें मिथ्यात्व, सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धीचतुष्कके उदीरकका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम इकतीस सागर है। बारह कषाय, हास्य, रति, भय और जुगुप्साके उदीरकका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अरति और शोकके उदीरकका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर छह महीना है। स्त्रीवेद और पुरुषवेदके उदीरकका अन्तरकाल नहीं है। भवनवासियोंसे लेकर नौ ग्रैवेयक तकके देवोंमें इसीप्रकार जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि कुछ कम अपनी स्थिति कहनी चाहिए। तथा इनमें अरति और शोकके उदीरकका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। शतार और सहस्रारमें अरति और शोकके उदीरकका अन्तरकाल सामान्य देवोंके समान है। सनत्कुमारसे लेकर नौ ग्रैवेयक तकके देवोंमें स्त्रीवेदकी उदीरणा नहीं है। अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें सम्यक्त्व और पुरुषवेदके उदीरकका अन्तरकाल नहीं है। बारह कषाय और छह नोकषायोंके उदीरकका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

§ ४९. सन्निकर्षानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मिथ्यात्वकी उदीरणा करनेवाला जीव सोलह कषाय और नौ नोकषायोंका कदाचित् उदीरक होता है और कदाचित् अनुदीरक होता है। सम्यक्त्वकी उदीरणा करनेवाला जीव बारह कषाय और नौ नोकषायोंका कदाचित् उदीरक होता है और कदाचित् अनुदीरक होता है। इसीप्रकार सम्यग्मिथ्यात्वकी मुख्यतासे जान लेना चाहिए। अनन्तानुबन्धी क्रोधकी उदीरणा करनेवाला जीव तीन क्रोधोंका नियमसे उदीरक होता है। मिथ्यात्व और नौ नोकषायोंका कदाचित् उदीरक होता है। इसीप्रकार तीन अनन्तानुबन्धी कषायोंकी मुख्यतासे जान लेना चाहिए। अप्रत्याख्यानावरण क्रोधकी उदीरणा करनेवाला जीव दो क्रोधोंका नियमसे उदीरक होता है। अनन्ता-

अणंताणु०कोह०-मिच्छ०-सम्म०-सम्मामि०-णवणोक० सिया उदीर०। एवं माण-माय-लोभाणं। पच्चक्खाणकोधमुदीरेंतो कोधसंजलण० णिय० उदीर०। दोण्णि कोध०-मिच्छ०-सम्म०-सम्मामि०-णवणोक० सिया उदीर०। एवं पच्चक्खाणमाण-माया-लोहाणं। कोहसंजलणमुदीरेंतो मिच्छ०-सम्म०-सम्मामि०-तिण्णिकोध०-णवणोक० सिया उदीर०। एवं तिण्हं संजलणाणं। इत्थिवे० उदीरेंतो मिच्छ०-सम्म०-सम्मामि०-सोलसक०-छण्णोक० सिया उदीर०। एवं पुरिसवे०-णवुंस०। हस्समुदीरेंतो मिच्छ०-सम्म०-सम्मामि०-सोलसक०-तिण्णिवे०-भय-दुगुंछ० सिया उदीर०। रदीए णिय० उदीर०। एवं रदीए। एवमरदि-सोगाणं। भयमुदीरेंतो दंसणतिय-सोलसक०-तिण्णिवेद-हस्स-रदि-अरदि-सोग-दुगुंछ० सिया उदीर०। एवं दुगुंछा०।

§ ५०. आदेसेण णेरइय० मिच्छत्तमुदीरेंतो० सोलसक०-छण्णोक० सिया उदीर०। णवुंस० णिय० उदीर०। सम्मत्तमुदीरेंतो० बारसक०-छण्णोक० सिया उदीर०। णवुंस० णियमा उदीर०। एवं सम्मामि०। अणंताणु०कोधमुदीरेंतो तिण्हं कोधाणं णवुंस० णिय० उदीर०। मिच्छ०-छण्णोक० सिया उदीर०। जीर्णहाराज

नुबन्धी क्रोध, मिथ्यात्व, सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व और नौ नोकषायोंका कदाचित् उदीरक होता है। इसीप्रकार अप्रत्याख्यानावरण मान, माया और लोभकी मुख्यतासे जान लेना चाहिए। प्रत्याख्यानावरण क्रोधकी उदीरणा करनेवाला जीव क्रोधसंज्वलनका नियमसे उदीरक होता है। दो क्रोध, मिथ्यात्व, सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व और नौ नोकषायोंका कदाचित् उदीरक होता है। इसीप्रकार प्रत्याख्यानावरण मान, माया और लोभकी मुख्यतासे जान लेना चाहिए। क्रोधसंज्वलनकी उदीरणा करनेवाला जीव मिथ्यात्व, सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व, तीन क्रोध और नौ नोकषायोंका कदाचित् उदीरक होता है। इसीप्रकार तीन संज्वलनोंकी मुख्यतासे जानना चाहिये। स्त्रीवेदकी उदीरणा करनेवाला जीव मिथ्यात्व, सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व, सोलह कषाय और छह नोकषायोंका कदाचित् उदीरक होता है। इसीप्रकार पुरुषवेद और नपुंसकवेदकी मुख्यतासे जानना चाहिए। हास्यकी उदीरणा करनेवाला जीव मिथ्यात्व, सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व, सोलह कषाय, तीन वेद, भय और जुगुप्साका कदाचित् उदीरक होता है। रतिका नियमसे उदीरक होता है। इसीप्रकार रतिकी मुख्यतासे जानना चाहिए। तथा इसीप्रकार अरति और शोककी मुख्यतासे भी जानना चाहिए। भयकी उदीरणा करनेवाला जीव तीन दर्शनमोहनीय, सोलह कषाय, तीन वेद, हास्य, रति, अरति, शोक और जुगुप्साका कदाचित् उदीरक होता है। इसीप्रकार जुगुप्साकी मुख्यतासे जानना चाहिए।

§ ५०. आदेशसे नारकियोंमें मिथ्यात्वकी उदीरणा करनेवाला जीव सोलह कषाय और छह नोकषायोंका कदाचित् उदीरक होता है। नपुंसकवेदका नियमसे उदीरक होता है। सम्यक्त्वकी उदीरणा करनेवाला जीव बारह कषाय और छह नोकषायोंका कदाचित् उदीरक होता है। नपुंसकवेदका नियमसे उदीरक होता है। इसीप्रकार सम्यग्मिथ्यात्वकी मुख्यतासे जानना चाहिए। अनन्तानुबन्धी क्रोधकी उदीरणा करनेवाला जीव तीन क्रोध और नपुंसकवेदका नियमसे उदीरक होता है। मिथ्यात्व और छह नोकषायोंका कदाचित् उदीरक होता है। इसीप्रकार अनन्तानुबन्धी मान

तिण्हं कसायाणं । अपचक्खाणकोधमुदीरेंतो मिच्छ०-सम्म०-सम्मामि०-अणंताणु० कोध०-छण्णोक० सिया उदीर० । दोण्हं कोधाणं णवुंस० णिय० उदीर० । एवमेकारसक० । हस्समुदीरेंतो० मिच्छ०-सम्म०-सम्मामि०-सोलसक०-भय-दुगुंछ० सिया उदीर० । णवुंस०-रदि० णिय० उदीर० । एवं रदीए । एवमरदि-सोग० । भयमुदीरेंतो० दंसणतिय-सोलसक०-हस्स-रदि-अरदि-सोग०-दुगुंछा० सिया उदीर० । णवुंस० णिय० उदीर० । एवं दुगुंछा० । एवं सत्तसु पुढवीसु ।

§ ५१. तिरिक्खेसु दंसणतिय-अणंताणु०४-अपचक्खाणचउक०-णवणोकसाय० ओघं । पचक्खाणकोधमुदीरेंतो मिच्छ०-सम्म०-सम्मामि०-अणंताणु०४-अपचक्खाण-कोध०-णवणोक० सिया उदीर० । कोहसंज० णिय० उदीर० । एवं सत्तकसा० । एवं पंचिंदियतिरिक्ख३ । णवरि पंचिंदियतिरिक्खपज्जत्तएसु इत्थिवेदो णत्थि । जोणिणी० पुरिस०-णवुंस० णत्थि । इत्थिवे० धुवं कायव्वं ।

§ ५२. पंचिंदियतिरिक्खअपज्ज०-मणुसअपज्ज० मिच्छत्तमुदीरें० सोलसक०-छण्णोक० सिया उदीर० । णवुंस० णियमा उदीर० । एवं णवुंस० । अणंताणु०-

---

आदि तीन कषायोंकी मुख्यतासे जानना चाहिए। अप्रत्याख्यानावरण क्रोधकी उदीरणा करनेवाला जीव मिथ्यात्व, सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व, अनन्तानुबन्धी क्रोध और छह नोकषायोंका कदाचित् उदीरक होता है। प्रत्याख्यानावरण क्रोध और संज्वलन क्रोध इन दो क्रोधोंका नियमसे उदीरक होता है। इसीप्रकार अप्रत्याख्यानावरण मान आदि ग्यारह कषायोंकी मुख्यतासे जानना चाहिए। हास्यकी उदीरणा करनेवाला जीव मिथ्यात्व, सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय और जुगुप्साका कदाचित् उदीरक होता है। नपुंसकवेद और रतिका नियमसे उदीरक होता है। इसीप्रकार रतिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। तथा इसीप्रकार अरति और शोककी मुख्यतासे भी सन्निकर्ष जानना चाहिए। भयकी उदीरणा करनेवाला जीव तीन दर्शनमोहनीय, सोलह कषाय, हास्य, रति, अरति, शोक और जुगुप्साका कदाचित् उदीरक होता है। नपुंसकवेदका नियमसे उदीरक होता है। इसीप्रकार जुगुप्साकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। इसीप्रकार सातों पृथिवियोंमें सन्निकर्ष जानना चाहिए।

§ ५१. तिर्यञ्चोंमें दर्शनमोहनीय तीन, अनन्तानुबन्धीचतुष्क, अप्रत्याख्यावरणचतुष्क और नौ नोकषायोंका भंग ओघके समान है। प्रत्याख्यानावरण क्रोधकी उदीरणा करनेवाला जीव मिथ्यात्व, सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व अनन्तानुबन्धीचतुष्क, अप्रत्याख्यानावरण क्रोध और नौ नोकषायोंका कदाचित् उदीरक होता है। क्रोधसंज्वलनका नियमसे उदीरक होता है। इसीप्रकार प्रत्याख्यानावरण मान आदि सात कषायोंकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। इसीप्रकार पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकमें जानना चाहिए। किंतु इतनी विशेषता है कि पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च पर्याप्तकोंमें स्त्रीवेदकी उदीरणा नहीं होती। तथा योनिनी तिर्यञ्चोंमें पुरुषवेद और स्त्रीवेदकी उदीरणा नहीं होती। योनिनी तिर्यञ्चोंमें स्त्रीवेदकी उदीरणाको ध्रुव करना चाहिए।

§ ५२. पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तक और मनुष्य अपर्याप्तकोंमें मिथ्यात्वकी उदीरणा करनेवाला जीव सोलह कषाय और छह नोकषायोंका कदाचित् उदीरक होता है। नपुंसकवेदका नियमसे उदीरक होता है। इसीप्रकार नपुंसकवेदकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

कोधमुदीरेंतो मिच्छ०-णवुंस० तिण्हं कोधाणं णिय० उदीर० । छण्णोक० सिया उदीर० । एवं पण्णारसकसाय० । हस्समुदीरेंतो मिच्छ०-णवुंस०-रदि० णिय० उदी० । सोलसक०-भय-दुगुंछ० सिया उदीर० । एवं रदीए । एवमरदि-सोग० । भयमुदीरेंतो मिच्छ०-णवुंस० णिय० उदीर० । सेसाणं सिया उदीर० । एवं दुगुंछ० ।

§ ५३. मणुसतिए ओघं । णवरि पज्जत्तएसु इत्थिवेदो णत्थि । मणुसिणी० पुरिस०-णवुंस० णत्थि । इत्थिवे० मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज धुवं कादव्वं । णवरि चदुसंजलणमुदीरेंतो इत्थिवेद० सिया उदीरेंतो० ।

§ ५४. देवेसु मिच्छ० उदीरेंतो सोलसक०-अट्ठणोक० सिया उदीर० । सम्म० उदीरेंतो बारसक०-अट्ठणोक० सिया उदीर० । एवं सम्मामि० । अणंताणु०कोहमुदिरेंतो मिच्छ-अट्ठणोक० सिया उदीर० । तिण्हं कोहाणं णिय० । एवं तिण्हं कसायाणं । अपच्चक्खाणकोहमुदीरेंतो दोण्हं कोहाणं णियमा उदीर० । अणंताणु०कोह-दंसणतिय-अट्ठणोक० सिया उदीर० । एवमेक्कारसकसाय० । इत्थिवेदमुदीरेंतो दंसणतिय-सोलस-

---

अनन्तानुबन्धी क्रोधकी उदीरणा करनेवाला जीव मिथ्यात्व, नपुंसकवेद और तीन क्रोधोंका नियमसे उदीरक होता है। छह नोकषायोंका कदाचित् उदीरक होता है। इसीप्रकार शेष पन्द्रह कषायोंकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। हास्यकी उदीरणा करनेवाला जीव मिथ्यात्व, नपुंसकवेद और रतिका नियमसे उदीरक होता है। सोलह कषाय, भय और जुगुप्साका कदाचित् उदीरक होता है। इसीप्रकार रतिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। तथा इसीप्रकार अरति और शोककी मुख्यतासे भी सन्निकर्ष जानना चाहिए। भयकी उदीरणा करनेवाला जीव मिथ्यात्व और नपुंसकवेदका नियमसे उदीरक होता है। शेषका कदाचित् उदीरक होता है। इसीप्रकार जुगुप्साकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

§ ५३. मनुष्यत्रिकमें ओघके समान भंग है। किंतु इतनी विशेषता है कि मनुष्य पर्याप्तकोंमें स्त्रीवेदकी उदीरणा नहीं होती। तथा मनुष्यिनियोंमें पुरुषवेद और नपुंसकवेदकी उदीरणा नहीं होती। इनमें स्त्रीवेदकी उदीरणा ध्रुव करनी चाहिए। किंतु इतनी विशेषता है कि चार संज्वलनकी उदीरणा करनेवाला जीव स्त्रीवेदका कदाचित् उदीरक होता है।

§ ५४. देवोंमें मिथ्यात्वकी उदीरणा करनेवाला जीव सोलह कषाय और आठ नोकषायोंका कदाचित् उदीरक होता है। सम्यक्त्वकी उदीरणा करनेवाला जीव बारह कषाय और आठ नोकषायोंका कदाचित् उदीरक होता है। इसीप्रकार सम्यग्मिथ्यात्वकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। अनन्तानुबन्धी क्रोधकी उदीरणा करनेवाला जीव मिथ्यात्व और आठ नोकषायोंका कदाचित् उदीरक होता है। शेष तीन क्रोधोंका नियमसे उदीरक होता है। इसीप्रकार अनन्तानुबन्धी मान, माया और लोभ कषायोंकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जान लेना चाहिए। अप्रत्याख्यानावरण क्रोधकी उदीरणा करनेवाला जीव प्रत्याख्यानावरण और संज्वलन इन दो क्रोधोंका नियमसे उदीरक होता है। अनन्तानुबन्धी क्रोध, तीन दर्शनमोहनीय और आठ नोकषायोंका कदाचित् उदीरक होता है। इसीप्रकार अप्रत्याख्यानावरण मान आदि ग्यारह कषायोंकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। स्त्रीवेदकी उदीरणा करनेवाला जीव तीन दर्शनमोहनीय,

क०-छण्णोक० सिया उदीर० । एवं पुरिसवे० । हस्समुदीरेंतो दंसणतिय-सोलसक०-इत्थिवे०-पुरिस०-भय-दुगुंछ० सिया उदीर० । रदि० णियमा उदीर० । एवं रदीए । एवमरदि-सोग० । भयमुदीरेंतो सेसं सिया उदीरेंतो । एवं दुगुंछा० । एवं भवण०-वाणवें०जोइसि०-सोहम्मीसाण० । एवं चेव सणक्कुमारादि जाव णवगेवज्जा त्ति णवरि इत्थिवेदो णत्थि । पुरिस० धुवं कायव्वं । अणुद्दिसादि सव्वट्ठा त्ति सम्म० उदीरेंतो बारसक०-छण्णोक० सिया उदीर० । पुरिस० णिय० उदीर० । अपच्चक्खाण-कोहमुदीरेंतो दोण्हं कोहाणं पुरिसवे० णियमा उदीर० । सम्म०-छण्णोक० सिया उदीर० । एवमेक्कारसक० । पुरिस० उदीरेंतो सम्म०-बारसक०-छण्णोक० सिया उदीर० । हस्समुदीरेंतो सम्म०-बारसक०-भय-दुगुंछ० सिया उदीर० । पुरिस०-रदि० णिय० उदीर० । एवं रदीए । एवमरदि-सोग० । भयमुदिरेंतो सम्म०-बारसक०-पंचणोक० सिया उदीर० । पुरिसवे० णिय० उदीर० । एवं दुगुंछ० । एवं जाव० ।

§ ५५. णाणाजीवेहि भंगविचयाणु० दुविहो णि०—ओघेण आदेसेण य ।

सोलह कषाय और छह नोकषायोंका कदाचित् उदीरक होता है । इसीप्रकार पुरुषवेदकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए । हास्यकी उदीरणा करनेवाला जीव तीन दर्शनमोहनीय, सोलह कषाय, स्त्रीवेद, पुरुषवेद, भय और जुगुप्साका कदाचित् उदीरक होता है । रतिका नियमसे उदीरक होता है । इसीप्रकार रतिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए । तथा इसीप्रकार अरति और शोककी मुख्यतासे भी सन्निकर्ष जानना चाहिए । भयकी उदीरणा करनेवाला जीव शेष प्रकृतियोंका कदाचित् उदीरक होता है । इसीप्रकार जुगुप्साकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए । इसीप्रकार भवनवासी, व्यन्तर, ज्योतिषी, सौधर्म और ऐशानमें जानना चाहिए । सनत्कुमारसे लेकर नौ ग्रैवेयक तकके देवोंमें भी इसीप्रकार जानना चाहिए । किंतु इतनी विशेषता है कि इनमें स्त्रीवेदकी उदीरणा नहीं होती । पुरुषवेदकी उदीरणा ध्रुव करनी चाहिए । अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धितकके देवोंमें सम्यक्त्वकी उदीरणा करनेवाला जीव बारह कषाय और छह नोकषायोंका कदाचित् उदीरक होता है । पुरुषवेदका नियमसे उदीरक होता है । अप्रत्याख्यानावरण क्रोधकी उदीरणा करनेवाला जीव प्रत्याख्यानावरण और संज्वलन इन दो क्रोधों और पुरुषवेदका नियमसे उदीरक होता है । सम्यक्त्व और छह नोकषायोंका कदाचित् उदीरक होता है । इसीप्रकार अप्रत्याख्यानावरण मान आदि ग्यारह कषायोंकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए । पुरुषवेदकी उदीरणा करनेवाला जीव सम्यक्त्व, बारह कषाय और छह नोकषायोंका कदाचित् उदीरक होता है । हास्यकी उदीरणा करनेवाला जीव सम्यक्त्व, बारह कषाय, भय और जुगुप्साका कदाचित् उदीरक होता है । पुरुषवेद और रतिका नियमसे उदीरक होता है । इसीप्रकार रतिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए । तथा इसीप्रकार अरति और शोककी मुख्यतासे भी सन्निकर्ष जानना चाहिए । भयकी उदीरणा करनेवाला जीव सम्यक्त्व, बारह कषाय और पाँच नोकषायोंका कदाचित् उदीरक होता है । पुरुषवेदका नियमसे उदीरक होता है । इसीप्रकार जुगुप्साकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए । इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए ।

§ ५५. नाना जीवोंकी अपेक्षा भंगविचयानुगमके आश्रयसे निर्देश दो प्रकारका है—ओघ

ओघेण मिच्छ०-सम्म-सोलसक०-णवणोक० उदीर० अणुदीर० णियम० अत्थि। सम्मामि० सिया सव्वे अणुदीर०, सिया अणुदीरगा च उदीरगो च, सिया अणुदीरगा च उदीरगा च ३।

§ ५६. आदेसेण णेरइय० ओघं। णवरि इत्थिवे०-पुरिस० उदीर० णत्थि। णवुंस० उदीर० णियमा अत्थि। एवं सव्वणेरइय०। तिरिक्खेसु ओघं। पंचिंदियतिरिक्खतिए ओघं। णवरि पज्जत्तएसु इत्थिवेदो णत्थि। जोणिणी० पुरिस०-णवुंस० णत्थि। इत्थिवे० उदीर० णिय० अत्थि, अणुदीरगा णत्थि। पंचिंदियतिरिक्खअपज्ज० मिच्छ०-णवुंस० सव्वे उदीरया, अणुदीरया णत्थि। सोलसक०-छण्णोक० उदीर० अणुदीर० णिय० अत्थि। मणुसतिए ओघं। णवरि पज्जत्तएसु इत्थिवे० णत्थि०। मणुसिणी० पुरिस०-णवुंस० णत्थि। इत्थिवे० सिया सव्वे जीवा उदीरगा। एवं तिण्णि भंगा। मणुसअपज्ज० मिच्छ०-णवुंस० सिया उदीरगो, सिया उदीरगा। सोलसक०-छण्णोक० अट्ठ भंगा। देवेसु ओघं। णवरि णवुंस० अणुदी०। एवं भवण०-वाणवें०-जोदिसि०-सोहम्मीसाण०। एवं सणक्कुमारादि जाव णवगेवज्जा त्ति। णवरि इत्थिवे० उदीरगा णत्थि। पुरिस० णिय० उदीर०, अणुदीर० णत्थि।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

और आदेश। ओघसे मिथ्यात्व, सम्यक्त्व, सोलह कषाय और नौ नोकषायोंके उदीरक और अनुदीरक जीव नियमसे हैं। सम्यग्मिथ्यात्वके कदाचित् सब जीव अनुदीरक होते हैं। कदाचित् नाना जीव अनुदीरक होते हैं और एक जीव उदीरक होता है। कदाचित् नाना जीव अनुदीरक होते हैं और नाना जीव उदीरक होते हैं ३।

§ ५६. आदेशसे नारकियोंमें ओघके समान भंग है। किन्तु इतनी विशेषता है कि इनमें स्त्रीवेद और पुरुषवेदके उदीरक जीव नहीं हैं। नपुंसकवेदके उदीरक जीव नियमसे हैं। इसीप्रकार सब नारकियोंमें जानना चाहिए। तिर्यञ्चोंमें ओघके समान भंग है। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकमें ओघके समान भंग है। इतनी विशेषता है कि तिर्यञ्च पर्याप्तकोंमें स्त्रीवेदकी उदीरणा नहीं होती। योनिनी तिर्यञ्चोंमें पुरुषवेद और नपुंसकवेदकी उदीरणा नहीं होती। इनमें स्त्रीवेदकी उदीरणा नियमसे होती है। इसके अनुदीरक नहीं हैं। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंमें मिथ्यात्व और नपुंसकवेदके सब जीव उदीरक होते हैं। इनके अनुदीरक नहीं हैं। सोलह कषाय और छह नोकषायोंके उदीरक और अनुदीरक नाना जीव नियमसे होते हैं। मनुष्यत्रिकमें ओघके समान भंग है। किन्तु इतनी विशेषता है कि मनुष्य पर्याप्तकोंमें स्त्रीवेदकी उदीरणा नहीं होती। तथा मनुष्यिनियोंमें पुरुषवेद और नपुंसकवेदकी उदीरणा नहीं होती। स्त्रीवेदके कदाचित् सब जीव उदीरक होते हैं। कदाचित् नाना जीव उदीरक और एक जीव अनुदीरक होता है। कदाचित् नाना जीव उदीरक और नाना जीव अनुदीरक होते हैं। इस प्रकार तीन भंग होते हैं। मनुष्य अपर्याप्तकोंमें मिथ्यात्व और नपुंसकवेदका कदाचित् एक जीव उदीरक होता है। कदाचित् नाना जीव उदीरक होते हैं। सोलह कषाय और छह नोकषायोंकी अपेक्षा आठ भंग हैं। देवोंमें ओघके समान भंग है। किन्तु इतनी विशेषता है कि नपुंसकवेदकी उदीरणा नहीं होती। इसीप्रकार भवनवासी, व्यन्तर, ज्योतिषी, सौधर्म और ऐशान देवोंमें जानना चाहिए। सनत्कुमारसे लेकर नौ ग्रैवेयक तकके देवोंमें भी इसीप्रकार जानना चाहिए। किन्तु इनमें स्त्रीवेदकी उदीरणा नहीं होती। इनमें पुरुषवेदके उदीरक नियमसे होते

अणुदिसादि जाव सव्वट्ठा त्ति सम्मत्त० सिया सव्वे उदीर०, सिया उदीरगा च अणुदीरगो च, सिया उदीरगा च अणुदीरगा च। बारसक०-छण्णोक० उदीर० अणुदीर० णिय० अत्थि। पुरिसवे० उदीर० णिय० अत्थि। अणुदीरगा णत्थि। एवं जाव०।

§ ५७. भागाभागाणु० दुविहो णि०—ओघेण आदेसे०। ओघेण मिच्छ०-णवुंस० उदीर० अणंता भागा। अणुदी० अणंतभागो। सम्म० उदीर० असंखेज्जा भागा। अणुदी० असंखे०भागो। सम्मामि० उदीर० असंखे०भागो। अणुदी० असंखेज्जा भागा। चउण्हं लोभाणमुदीर० चदुब्भागो सादिरे०। अणुदी० संखे०-भागा। बारसक० उदीर० चदुब्भागो देसूणा। अणुदी० संखेज्जा भागा। इत्थिवे०-पुरिस० उदीर० अणंतभागो। अणुदीर० अणंता भागा। हस्स-रदि-भय-दुगुंछा० उदीर० संखे०भागो। अणुदीर० संखेज्जा भागा। अरदि-सोग० उदीर० संखेज्जा भागा। अणुदी० संखे०भागो।

§ ५८. आदेसेण णेरइय० मिच्छ०-सम्म० उदीर० असंखे० भागा। अणुदीर० असंखे०भागो। सम्मामि० ओघं। चउण्हं कोध० अरदि-सोग० उदीर० संखे०

हैं। अनुदीरक नहीं होते। अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें सम्यक्त्वके कदाचित् सब जीव उदीरक होते हैं। कदाचित् नाना जीव उदीरक होते हैं और एक जीव अनुदीरक होता है। कदाचित् नाना जीव उदीरक होते हैं और नाना जीव अनुदीरक होते हैं। बारह कषाय और छह नोकषायोंके उदीरक और अनुदीरक नाना जीव नियमसे हैं। पुरुषवेदके सब जीव नियमसे उदीरक होते हैं। अनुदीरक नहीं होते। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

§ ५७. भागाभागानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मिथ्यात्व और नपुंसकवेदके उदीरक जीव अनन्त बहुभागप्रमाण हैं। तथा अनुदीरक जीव अनन्तवें भागप्रमाण हैं। सम्यक्त्वके उदीरक जीव असंख्यात बहुभागप्रमाण हैं और अनुदीरक जीव असंख्यातवें भागप्रमाण हैं। सम्यग्मिथ्यात्वके उदीरक जीव असंख्यातवें भाग प्रमाण हैं और अनुदीरक जीव असंख्यात बहुभागप्रमाण हैं। चार लोभोंके उदीरक जीव कुछ अधिक चतुर्थ भागप्रमाण हैं और अनुदीरक जीव संख्यात बहुभागप्रमाण हैं। बारह कषायोंके उदीरक जीव कुछ कम चतुर्थ भागप्रमाण हैं और अनुदीरक जीव संख्यात बहुभागप्रमाण हैं। स्त्रीवेद और पुरुषवेदके उदीरक जीव अनन्तवें भागप्रमाण हैं और अनुदीरक जीव अनन्त बहुभागप्रमाण हैं। हास्य, रति, भय और जुगुप्साके उदीरक जीव संख्यातवें भागप्रमाण हैं और अनुदीरक जीव संख्यात बहुभागप्रमाण हैं। अरति और शोकके उदीरक जीव संख्यात बहुभागप्रमाण हैं और अनुदीरक जीव संख्यातवें भागप्रमाण हैं।

§ ५८. आदेशसे नारकियोंमें मिथ्यात्व और सम्यक्त्वके उदीरक जीव असंख्यात बहुभागप्रमाण हैं और अनुदीरक जीव असंख्यातवें भागप्रमाण हैं। सम्यग्मिथ्यात्वका भंग ओघके समान है। चार क्रोध, अरति और शोकके उदीरक जीव संख्यात बहुभागप्रमाण हैं।

भागा। अणुदीर० संखे०भागो। बारसक०-हस्स-रइ-भय-दुगुंछ० उदीर० संखेज्जदि-भागो। अणुदी० संखेज्जा भागा। एवं सव्वणेरइय०। तिरिक्खाणमोघं। एवं पंचिंदियतिरिक्खतिय३। णवरि मिच्छ०-णवुंस० उदीर० असंखेज्जा भागा। अणुदी० असंखे०भागो। इत्थिवे०-पुरिस० उदीर० असंखे०भागो। अणुदी० असंखे० भागा। णवरि पज्ज० इत्थिवेदो णत्थि। णवुंस० उदीर० संखेज्जा भागा। अणुदी० संखे०-भागो। पुरिसवे० उदीर० संखे०भागो। अणुदी० संखेज्जा भागा। जोणिणी० पुरिस०-णवुंस० णत्थि। इत्थिवेद० णत्थि भागाभागो। पंचिंदियतिरिक्खअपज्ज०-मणुसअपज्ज० मिच्छ०-णवुंस० णत्थि भागाभागो। सोलसक०-छण्णोक० पंचिं०-तिरिक्खभंगो। मणुसाणं पंचिंदियतिरिक्खभंगो। णवरि सम्म० उदीर० असंखे०-भागो। अणुदी० असंखेज्जा भागा। एवं पज्जत्त०। णवरि संखेज्जं कायव्वं। इत्थिवे० णत्थि। एवं मणुसिणी०। णवरि पुरिस०-णवुंस णत्थि। इत्थिवे० उदीरगा संखेज्जा भागा। अणुदी० संखे०भागो।

§ ५९. देवेसु मिच्छ०-सम्म०-सम्मामि० णिरयोघं। चउण्हं लोभ० इत्थिवे०-हस्स-रदि० उदीर० संखेज्जा भागा। अणुदी० संखे०भागो। बारसक०-अरदि-सोग-

और अनुदीरक जीव संख्यातवें भागप्रमाण हैं। बारह कषाय, हास्य, रति, भय और जुगुप्साके उदीरक जीव संख्यातवें भागप्रमाण हैं और अनुदीरक जीव संख्यात बहुभागप्रमाण हैं। इसीप्रकार सब नारकियोंमें जानना चाहिए। तिर्यञ्चोंमें ओघके समान भंग हैं। इसीप्रकार पञ्चेन्द्रियतिर्यञ्चत्रिकमें जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि मिथ्यात्व और नपुंसकवेदके उदीरक जीव असंख्यात बहुभागप्रमाण हैं और अनुदीरक जीव असंख्यातवें भागप्रमाण हैं। स्त्रीवेद और पुरुषवेदके उदीरक जीव असंख्यातवें भागप्रमाण हैं और अनुदीरक जीव असंख्यात बहुभागप्रमाण हैं। किन्तु इतनी विशेषता है कि तिर्यञ्च पर्याप्तकोंमें स्त्रीवेदके उदीरक जीव नहीं हैं। तथा नपुंसकवेदके उदीरक जीव संख्यात बहुभागप्रमाण हैं और अनुदीरक जीव संख्यातवें भागप्रमाण हैं। पुरुषवेदके उदीरक जीव संख्यातवें भागप्रमाण हैं और अनुदीरक जीव संख्यात बहुभागप्रमाण हैं। योनिनी तिर्यञ्चोंमें पुरुषवेद और नपुंसकवेदके उदीरक जीव नहीं हैं। तथा इनमें स्त्रीवेदकी अपेक्षा भागाभाग नहीं है। पञ्चेन्द्रियतिर्यञ्च अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्तकोंमें मिथ्यात्व और नपुंसकवेदकी अपेक्षा भागाभाग नहीं है। सोलह कषाय और छह नोकषायोंके उदीरक जीवोंका भंग पञ्चेन्द्रियतिर्यञ्चोंके समान है। मनुष्योंमें पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चोंके समान भंग है। किन्तु इतनी विशेषता है कि सम्यक्त्वके उदीरक जीव असंख्यातवें भागप्रमाण हैं और अनुदीरक जीव असंख्यात बहुभागप्रमाण हैं। इसीप्रकार मनुष्य पर्याप्तकोंमें जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि असंख्यातके स्थानमें संख्यात करना चाहिए। इनमें स्त्रीवेदके उदीरक नहीं होते। इसीप्रकार मनुष्यिनियोंमें जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि इनमें पुरुषवेद और नपुंसकवेदके उदीरक नहीं होते। तथा स्त्रीवेदके उदीरक संख्यात बहुभागप्रमाण हैं और अनुदीरक जीव संख्यातवें भागप्रमाण हैं।

§ ५९. देवोंमें मिथ्यात्व, सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका भंग नारकियोंके समान है। चार लोभ, स्त्रीवेद, हास्य और रतिके उदीरक जीव संख्यात बहुभागप्रमाण हैं और अनुदीरक

भय-दुगुंछा०-पुरिसवे० उदीर० संखेज्जदिभा०, अणुदीर० संखेज्जा भागा। एवं भवण०-वाणवें०-जोदिसि०-सोहम्मीसा०। सणक्कुमारादि सहस्सारा त्ति एवं चेव। णवरि इत्थिवे० णत्थि। पुरिसवे० णत्थि भागा०। आणदादि णव गेवज्जा त्ति मिच्छ०-तेरसकसाय०-अरदि०-सोग-भय-दुगुंछा० उदीर० संखे०भागो। अणुदी० संखेज्जा भागा। सम्म०-हस्स-रदि० तिण्हं लोभाणमुदीरगा संखेज्जा भागा। अणुदी० संखे०-भागो। पुरिसवे० णत्थि भागाभागो। सम्मामि० ओघं। अणुद्दिसादि अवराजिदा त्ति सम्म० उदीर० असंखेज्जा भागा। अणुदीर० असंखे०भागो। तिण्हं लोभाणं हस्स-रदि० उदीर० संखेज्जा भागा। अणुदीर० संखे०भागो। णवकसा०-अरदि-सोग-भय-दुगुंछा० उदीर० संखे०भागो। अणुदीर० संखेज्जा भागा। पुरिसवे० णत्थि भागा०। एवं सव्वट्ठे। णवरि संखेज्जं कायव्वं। एवं जाव०।

§ ६०. परिमाणाणु० दुविहो णि०—ओघे० आदेसे०। ओघेण मिच्छ०-

जीव संख्यातवें भागप्रमाण हैं। बारह कषाय, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा और पुरुषवेदके उदीरक जीव संख्यातवें भागप्रमाण हैं और अनुदीरक जीव संख्यात बहुभागप्रमाण हैं। इसीप्रकार भवनवासी, व्यन्तर, ज्योतिषी, सौधर्म और ऐशान देवोंमें जानना चाहिए। सनत्कुमारसे लेकर सहस्रार कल्प तकके देवोंमें इसीप्रकार जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि इनमें स्त्रीवेदके उदीरक देव नहीं हैं। पुरुषवेदकी अपेक्षा भागाभाग नहीं है। आनतसे लेकर नौ ग्रैवेयक तकके देवोंमें मिथ्यात्व, तेरह कषाय, अरति, शोक, भय और जुगुप्साके उदीरक जीव संख्यातवें भागप्रमाण हैं और अनुदीरक जीव संख्यात बहुभागप्रमाण हैं। सम्यक्त्व, हास्य, रति और तीन लोभके उदीरक जीव संख्यात बहुभागप्रमाण हैं और अनुदीरक जीव संख्यातवें भागप्रमाण हैं। पुरुषवेदकी अपेक्षा भागाभाग नहीं है। सम्यग्मिथ्यात्वका भंग ओघके समान है। अनुदिशसे लेकर अपराजित तकके देवोंमें सम्यक्त्वके उदीरक जीव असंख्यात बहुभागप्रमाण हैं और अनुदीरक जीव असंख्यातवें भागप्रमाण हैं। तीन लोभ, हास्य और रतिके उदीरक जीव संख्यात बहुभागप्रमाण हैं और अनुदीरक जीव संख्यातवें भागप्रमाण हैं। नौ कषाय अरति, शोक भय और जुगुप्साके उदीरक जीव संख्यातवें भागप्रमाण हैं अनुदीरक जीव संख्यात बहुभागप्रमाण हैं। पुरुषवेदकी अपेक्षा भागाभाग नहीं है। इसीप्रकार सर्वार्थसिद्धिके देवोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि असंख्यातके स्थानमें संख्यात करना चाहिए। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

विशेषार्थ—ओघ और आदेशसे जहाँ जितनी प्रकृतियोंकी उदीरणा होती है उसे ध्यानमें रखकर भागाभागका विचार किया है। इतना अवश्य है कि जहाँ सप्रतिपक्ष प्रकृतियोंकी उदीरणा न होकर मात्र एक प्रकृतिकी उदीरणा होती है वहाँ उसकी अपेक्षा भागाभाग सम्भव न होनेसे उसका निषेध किया है। इतना अवश्य है कि अनुदिशादिकमें मात्र सम्यग्दृष्टि जीव होते हैं और वहाँ मात्र सम्यक्त्व प्रकृतिकी उदीरणा सम्भव है फिर भी वहाँ सम्यक्त्व प्रकृतिकी अपेक्षा भागाभाग बन जाता है, क्योंकि वहाँ पर बहुतसे वेदक सम्यग्दृष्टि जीव उसकी उदीरणा करनेवाले होते हैं और अल्प उपशमसम्यग्दृष्टि तथा क्षायिक सम्यग्दृष्टि जीव उसकी उदीरणा नहीं करते। शेष कथन सुगम है।

§ ६०. परिमाणानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे

सोलसक०-सत्तणोक० उदीर० केत्तिया ? अणंता । सम्म०-सम्मामि०-इत्थिवे०-पुरिस० उदीर० केत्तिया ? असंखेज्जा । आदेसे० णेरइय० सव्वपयडी० उदीर० केत्ति० ? असंखेज्जा । एवं सव्वणेरइय०-सव्वपंचिंदिय०तिरिक्ख-मणुसअपज्ज०-देवा भवणादि जाव अवराजिदा त्ति । तिरिक्खेसु ओघं । मणुसेसु मिच्छ०-सोलसक०-
मार्गदर्शक आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज
सत्तणोक० उदीर० असंखेज्जा । सम्म०-सम्मामि०-इत्थिवे०-पुरिस० उदीर० केत्तिया ? संखेज्जा । मणुसपज्ज०-मणुसिणी०-सव्वट्ठदेवा जाओ पयडीओ उदी० तत्थ संखेज्जा । एवं जाव० ।

§ ६१. खेत्ताणु० दुविहो णि०—ओघे० आदेसे० । ओघेण मिच्छ०-सोलसक०-सत्तणोक० उदीर० केव० ? सव्वलोगे । सम्म०-सम्मामि०-इत्थिवे०-पुरिस० उदीर० लोग० असंखे०भागे । एवं तिरिक्खाणं । सेसगइमग्गणासु सव्वपदा० लोगस्स असंखे०भागे । एवं जाव० ।

§ ६२. पोसणाणु० दुविहो णि०—ओघेण आदेसे० । ओघेण मिच्छ०-

मिथ्यात्व, सोलह कषाय और सात नोकषायके उदीरक जीव कितने हैं ? अनन्त हैं । सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व, स्त्रीवेद और पुरुषवेदके उदीरक जीव कितने हैं ? असंख्यात हैं । आदेशसे नारकियोंमें सब प्रकृतियोंके उदीरक जीव कितने हैं ? असंख्यात हैं । इसी प्रकार सब नारकी, सब पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च, मनुष्य अपर्याप्त, सामान्य देव और भवनवासियोंसे लेकर अपराजित तकके देवोंमें जानना चाहिए । तिर्यञ्चोंमें ओघके समान भंग है । मनुष्योंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय और सात नोकषायोंके उदीरक जीव असंख्यात हैं । सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व, स्त्रीवेद और पुरुषवेदके उदीरक जीव कितने हैं ? संख्यात हैं । मनुष्य पर्याप्त, मनुष्यिनी और सर्वार्थसिद्धिके देवोंमें जिन प्रकृतियोंकी उदीरणा होती है उनके उदीरक जीव संख्यात हैं । इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए ।

§ ६१. क्षेत्रानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे मिथ्यात्व, सोलह कषाय और सात नोकषायोंके उदीरक जीवोंका कितना क्षेत्र है ? सर्व लोक क्षेत्र है । सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व, स्त्रीवेद और पुरुषवेदके उदीरक जीवोंका क्षेत्र लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण है । इसीप्रकार तिर्यञ्चोंमें जानना चाहिए । शेष गति मार्गणाओंमें सब पदोंकी अपेक्षा क्षेत्र लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण है । इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए ।

विशेषार्थ—मिथ्यात्व, सोलह कषाय और सात नोकषायोंकी उदीरणा एकेन्द्रियादि जीव भी करते हैं, इसलिए इनका क्षेत्र सब लोक बन जानेसे वह ओघसे तथा सामान्य तिर्यञ्चोंमें सर्व लोकप्रमाण कहा है । परन्तु शेष प्रकृतियोंकी उदीरणा पञ्चेन्द्रिय जीवोंमें ही सम्भव है और ऐसे जीवोंका क्षेत्र लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण ही होता है, इसलिए सर्वत्र इन प्रकृतियोंके उदीरक जीवोंका क्षेत्र उक्त प्रमाण कहा है । सामान्य तिर्यञ्चोंको छोड़ कर गति मार्गणाके अन्य जितने भेद हैं उन सबका क्षेत्र लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण होनेसे उनमें सम्भव सब प्रकृतियोंके उदीरकोंका क्षेत्र उक्तप्रमाण कहा है ।

§ ६२. स्पर्शनानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकार है– ओघ और आदेश । ओघसे

सोलसक०-सत्तणोक० उदीर० सव्वलोगो। सम्म०-सम्मामि० उदीर० लोग० असंखे०-भागो अट्ठचोद्दस भागा० देसूणा। इत्थिवे०-पुरिस० उदीर० लोग० असंखे०भागो अट्ठचोद्दस० देसूणा सव्वलोगो वा।

§ ६३. आदेसेण णेरइय० मिच्छ०-सोलसक०-सत्तणोक० उदीर० लोग० असंखे०भागो छचोद्दस० देसूणा। सम्म०-सम्मामि० खेत्तं। एवं विदियादि० जाव सत्तमा त्ति। णवरि सगपोसणं। पढमाए खेत्तं।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

§ ६४. तिरिक्खेसु मिच्छ०-सोलसक०-सत्तणोक० उदीर० सव्वलोगो। सम्मामि० खेत्तं। सम्म० उदीर० लोगस्स असंखे० छच्चोद्द०। इत्थिवे०-पुरिस०

मिथ्यात्व, सोलह कषाय और सात नोकषायोंके उदीरकोंने सब लोकप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके उदीरक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और चौदह राजुमेंसे कुछ कम आठ भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। स्त्रीवेद और पुरुषवेदके उदीरक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण, चौदह राजुमेंसे कुछ कम आठ भागप्रमाण और सर्व लोकप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है।

विशेषार्थ—मिथ्यात्व आदि चौबीस प्रकृतियोंकी उदीरणा एकेन्द्रिय जीवोंमें भी होती है और उनका स्पर्शन सर्व लोकप्रमाण है, इसलिए यहाँ पर उक्त चौबीस प्रकृतियोंके उदीरकोंका स्पर्शन सर्व लोकप्रमाण कहा है। सम्यग्दृष्टि और सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंका वर्तमान स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और अतीत स्पर्शन त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ भागप्रमाण बतलाया है। इसी बातको ध्यानमें रख कर यहाँ पर सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके उदीरकोंका उक्त प्रमाण स्पर्शन कहा है। स्त्रीवेदकी उदीरणा नारकियों और पञ्चेन्द्रिय लब्ध्यपर्याप्तकोंको छोड़कर अन्य पञ्चेन्द्रिय जीवोंमें यथायोग्य होती है और उनका वर्तमान स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण, विहार आदिकी अपेक्षा अतीत स्पर्शन त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ भागप्रमाण और मारणान्तिक समुद्घात या उपपाद पदकी अपेक्षा सर्व लोकप्रमाण बतलाया है। इसीसे यहाँ पर इन दो प्रकृतियोंके उदीरकोंका स्पर्शन उक्त प्रमाण कहा है।

§ ६३. आदेशसे नारकियोंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय और सात नोकषायोंके उदीरकोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम छह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके उदीरकोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। इसीप्रकार दूसरी पृथिवीसे लेकर सातवीं पृथिवी तक जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि अपना अपना स्पर्शन कहना चाहिए। पहली पृथिवीमें स्पर्शन क्षेत्रके समान है।

विशेषार्थ—नरक और प्रत्येक पृथिवीका जो स्पर्शन है वही यहाँ पर साधारणतः जानना चाहिए। मात्र सम्यक्त्वकी उदीरणा सम्यग्दृष्टि जीवोंमें और सम्यग्मिथ्यात्वकी उदीरणा सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंमें होती है, इसलिए इन दो प्रकृतियोंके उदीरकोंका स्पर्शन उक्त गुणस्थानवाले नारकियोंके स्पर्शनको ध्यानमें रखकर क्षेत्रके समान लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण कहा है।

§ ६४. तिर्यञ्चोंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय और सात नोकषायोंके उदीरक जीवोंने सब लोकप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। सम्यग्मिथ्यात्वके उदीरक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। सम्यक्त्वके उदीरक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और त्रसनालीके चौदह भागोंमें

लोग० असंखे०भागो सव्वलोगो वा।

§ ६५. पंचिंदियतिरिक्खतिय३ मिच्छ०-सोलसक०-णवणोक० उदीर० लोगस्स असंखे०भागो सव्वलोगो०। सम्म०-सम्मामि० तिरिक्खोघं। णवरि पज्ज० इत्थिवे० णत्थि। जोणिणी० पुरिस०-णवुंस० णत्थि। पंचिं०तिरि०अपज्ज०-मणुसअपज्ज० मिच्छ०-सोलसक०-सत्तणोक० उदीर० लोग० असंखे०भागो सव्वलोगो वा। मणुसतिए पंचिं०तिरिक्खतियभंगो। णवरि सम्मत्त० खेत्तं।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

§ ६६. देवेसु मिच्छ०-सोलसक०-अट्ठणोक० उदीर० लोगस्स असंखे०भागो अट्ठ-णवचोद्दस०। सम्म०-सम्मामि० लोग० असंखे०भागो अट्ठचोद्दस०। एवं सव्व-देवाणं। णवरि अप्पप्पणो पयडीओ णादूण सगपोसणं णेदव्वं। एवं जाव०।

से कुछ कम छह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। स्त्रीवेद और पुरुषवेदके उदीरक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और सर्व लोकप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है।

विशेषार्थ—सम्यग्दृष्टि तिर्यञ्च सोलहवें कल्प तक मारणान्तिक समुद्घात करते हैं, इसीलिए तिर्यञ्चोंमें सम्यक्त्वके उदीरक जीवोंका अतीत स्पर्शन त्रसनालीके चौदह भागोंमें से कुछ कम छह भागप्रमाण कहा है। शेष कथन स्पष्ट ही है।

§ ६५. पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय और नौ नोकषायोंके उदीरक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और सर्व लोकप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके उदीरकोंका स्पर्शन सामान्य तिर्यञ्चोंके समान है। किन्तु इतनी विशेषता है कि पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च पर्याप्तकोंमें स्त्रीवेदकी उदीरणा नहीं होती और पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च योनिनियोंमें पुरुषवेद और नपुंसकवेदकी उदीरणा नहीं होती। पञ्चेन्द्रिय तिर्यंच अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्तकोंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय और सात नोकषायोंके उदीरक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और सर्व लोकप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। मनुष्यत्रिकमें पञ्चेन्द्रियतिर्यञ्चत्रिकके समान भंग है। इतनी विशेषता है कि इनमें सम्यक्त्वका भंग क्षेत्रके समान है।

विशेषार्थ—मनुष्यत्रिकमें संख्यात मनुष्य ही सम्यक्त्वके उदीरक होते हैं और ऐसे मनुष्योंका अतीत स्पर्शन भी लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण होता है, इसलिए यहाँ पर इसके उदीरकोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान कहा है। सम्यग्मिथ्यात्वके उदीरकोंका स्पर्शन भी इसीप्रकार प्रकृतमें क्षेत्रके समान जान लेना चाहिए। इसका स्पष्टीकरण सामान्य तिर्यञ्चोंमें स्पर्शनका कथन करते समय कर ही आये हैं। शेष कथन सुगम है।

§ ६६. देवोंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय और आठ नोकषायोंके उदीरक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण तथा त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ और कुछ कम नौ भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके उदीरक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। इसीप्रकार सब देवोंमें जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि अपनी अपनी प्रकृतियोंको जानकर अपना अपना स्पर्शन जानना चाहिए। इसीप्रकार अनाहारक

§ ६७. कालाणु० दुविहो णि०—ओघे० आदेसे० । ओघेण अट्ठावीसंपयडीणं उदीर० सव्वद्धा । णवरि सम्मामि० जह० अंतोमु०, उक्क० पलिदो० असंखे०-भागो । एवं सव्वणेरइय० । णवरि इत्थिवे०-पुरिस० णत्थि । तिरिक्खेसु ओघं । एवं पंचिं०तिरिक्खतिए । णवरि पज्ज० इत्थिवेदो णत्थि । जोणिणी० पुरिस०-णवुंस० णत्थि । पंचिं०तिरिक्खअपज्ज० मिच्छ०-सोलसक०-सत्तणोक० उदीर० सव्वद्धा । मणुसतिए पंचिं०तिरिक्खतियभंगो । णवरि सम्मामि० उदीर० जह० उक्क० अंतोमु० । मणुसअपज्ज० मिच्छ०-णवुंसय० जह० खुद्दाभव० । सोलसक०-छण्णोक० जह० एयसमओ, उक्क० दो वि पलिदो० असंखे०भागो । देवेसु ओघं । णवरि णवुंस० णत्थि । एवं भवण०-वाण०-जोदिसि०-सोहम्मीसाण० । एवं चेव सणक्कुमारादि जाव णवगेवज्जा त्ति । णवरि इत्थिवे० णत्थि । अणुद्दिसादि सव्वट्ठा त्ति सम्म०-बारसक०-सत्तणोक० सव्वद्धा । एवं जाव० ।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

मार्गणा तक जानना चाहिए ।

विशेषार्थ—यहाँ इतना ही वक्तव्य है कि सम्यक्त्वके उदीरक जीव एकेन्द्रियोंमें मारणान्तिक समुद्घात नहीं करते, इसलिए इसके उदीरक जीवोंका अतीत स्पर्शन मात्र त्रसनालीके चौदह भागोंमें से कुछ कम आठ भागप्रमाण कहा है । शेष कथन सुगम है ।

§ ६७. कालानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे अट्ठाईस प्रकृतियोंके उदीरक जीवोंका काल सर्वदा है । किन्तु इतनी विशेषता है कि सम्यग्मिथ्यात्वके उदीरक जीवोंका जघन्य काल अन्तमुहूर्त है और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है । इसी प्रकार सब नारकियोंमें जानना चाहिए । किन्तु इतनी विशेषता है कि इनमें स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी उदीरणा नहीं है । तिर्यञ्चोंमें ओघके समान कालका भंग है । इसी प्रकार पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकमें जानना चाहिए । किन्तु इतनी विशेषता है कि पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च पर्याप्तकोंमें स्त्रीवेदकी उदीरणा नहीं है और पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च योनिनियोंमें पुरुषवेद और नपुंसकवेदकी उदीरणा नहीं है । पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय और सात नोकषायोंके उदीरक जीवोंका काल सर्वदा है । मनुष्यत्रिकमें पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकके समान भंग है । किन्तु इतनी विशेषता है कि इनमें सम्यग्मिथ्यात्वके उदीरक जीवोंका जघन्य और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है । मनुष्य अपर्याप्तकोंमें मिथ्यात्व और नपुंसकवेदके उदीरक जीवोंका जघन्य काल क्षुल्लकभवग्रहणप्रमाण है, सोलह कषाय और छह नोकषायोंका जघन्य काल एक समय है तथा उत्कृष्ट काल दोनों प्रकारकी प्रकृतियोंके उदीरकोंका पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है । देवोंमें ओघके समान भंग है । किन्तु इतनी विशेषता है कि इनमें नपुंसकवेदकी उदीरणा नहीं है । इसी प्रकार भवनवासी, व्यन्तर, ज्योतिषी, सौधर्म और ऐशान देवोंमें जानना चाहिए । सनत्कुमारसे लेकर नौ ग्रैवेयक तकके देवोंमें भी इसी प्रकार जानना चाहिए । किन्तु इतनी विशेषता है कि इनमें स्त्रीवेदकी उदीरणा नहीं है । अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें सम्यक्त्व, बारह कषाय और सात नोकषायोंके उदीरक जीवोंका काल सर्वदा है । इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए ।

विशेषार्थ—सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थान सान्तर मार्गणा है । उसे ध्यानमें रखकर यहाँ ओघसे सम्यग्मिथ्यात्वके उदीरक जीवोंका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट काल पल्यके

§ ६८. अंतराणुगमाणु विहासो णिद्दे०—ओघेण आदेसेण य। ओघेण अट्ठावीसपयडीणं उदीरणा णत्थि अंतरं। णवरि सम्मामि० जह० एयस०, उक्क० पलिदो० असंखे०-भागो। सव्वणेरइय०-सव्वतिरिक्ख०-सव्वमणुस्स०-सव्वदेवेसु जाओ पयडीओ उदीरिज्जंति तासिमोघभंगो। णवरि मणुसअपज्ज० सव्वपयडी० जह० एयसमओ, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो। एवं जाव०।

§ ६९. भावाणुगमेण सव्वत्थ ओदइओ भावो।

§ ७०. अप्पाबहुअं भागाभागादो साहेदूण णेदव्वं।

एवमेगेगउत्तरपयडिउदीरणा समत्ता।

❀ तदो पयडिट्ठाणउदीरणा कायव्वा।

§ ७१. तदो एगेगपयडिउदीरणादो अणंतरमिदाणिं पयडिट्ठाणउदीरणा विहासियव्वा त्ति अहियारपरामरसवक्कमेदं काऊण पयडिट्ठाणउदीरणा णाम वुच्चदे—

असंख्यातवें भागप्रमाण कहा है। किन्तु ऐसे मनुष्य संख्यात ही होते हैं जो इसकी उदीरणा करते हैं। अतः इनमें इसके उदीरक जीवोंका जघन्य और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त बन सकनेसे उतना ही कहा है। मनुष्य अपर्याप्त यह सान्तर मार्गणा है अतः इस विशेषताको ध्यानमें रखकर इनमें जिनकी उदीरणा सम्भव है उनका काल कहा है। शेष कथन सुगम है।

§ ६८. अन्तरानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे अट्ठाईस प्रकृतियोंके उदीरकोंका अन्तरकाल नहीं है। किन्तु इतनी विशेषता है कि सम्यग्मिथ्यात्वके उदीरकोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। सब नारकी, सब तिर्यञ्च, सब मनुष्य और सब देवोंमें जो प्रकृतियाँ उदीरित होती हैं उनका भंग ओघके समान है। किन्तु इतनी विशेषता है कि मनुष्य अपर्याप्तकोंमें सब प्रकृतियोंके उदीरकोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

विशेषार्थ—सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थान सान्तर मार्गणा होनेसे उसका जो जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर है उसे ध्यानमें रखकर ही यहाँ ओघ और आदेशसे सम्यग्मिथ्यात्वके उदीरकोंका अन्तरकाल कहा है। तथा लब्ध्यपर्याप्त मनुष्योंमें सब प्रकृतियोंके उदीरकोंके अन्तर काल कथनमें यही दृष्टि मुख्य है। शेष कथन सुगम है।

§ ६९. भावानुगमकी अपेक्षा सर्वत्र औदयिक भाव है।

§ ७०. अल्पबहुत्वको भागाभागसे साधकर ले जाना चाहिए।

इसप्रकार एकैक-उत्तरप्रकृति-उदीरणा समाप्त हुई।

❀ तदनन्तर प्रकृतिस्थान उदीरणा करनी चाहिए।

§ ७१. ततः अर्थात् एकैकप्रकृतिउदीरणाके बाद इस समय प्रकृतिस्थान उदीरणाका व्याख्यान करना चाहिए इसप्रकार अधिकारका परामर्श करनेवाले इस वाक्यको करके प्रकृति-

पयडीणं ट्ठाणं पयडिट्ठाणं। पयडि-समूहो त्ति भणिदं होइ। तस्स उदीरणा पयडिट्ठाणउदीरणा। पयडीणं एककालम्मि जेत्तियाणमुदीरेदुं संभवो तेत्तियमेत्तीणं समुदायो पयडिट्ठाणउदीरणा त्ति वुत्तं भवदि। तत्थ इमाणि सत्तारस अणियोगद्दाराणि णादव्वाणि भवंति—समुक्कित्तणा जाव अप्पाबहुए त्ति। भुजगार-पदणिक्खेव-वड्ढीओ च। एत्थ समुक्कित्तणा दुविहा—ट्ठाणसमुक्कित्तणा पयडिसमुक्कित्तणा चेदि। तत्थ ताव ट्ठाणसमुक्कित्तणं भणामि त्ति आह—

❀ तत्थ ट्ठाणसमुक्कित्तणा।

§ ७२. तम्मि पयडिट्ठाणउदीरणाए ट्ठाणसमुक्कित्तणा ताव अहिकीरदे त्ति वुत्तं होइ।

❀ अत्थि एक्किस्से पयडीए पवेसगो। :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

§ ७३. तं जहा—अण्णदरवेद-संजलणाणमुदएण खवगसेढिमुवसमसेढिं वा समारूढस्स वेदपढमट्ठिदीए आवलियमेत्तसेसाए वेदोदीरणा फिट्टदि त्ति तदो प्पहुडि एक्किस्से संजलणपयडीए पवेसगो होइ।

❀ दोण्हं पयडीणं पवेसगो।

§ ७४. तं जहा—उवसम-खवगसेढीसु अणियट्टिपढमसमयप्पहुडि जाव समयाहियावलियमेत्ती वेदपढमट्ठिदि त्ति ताव दोण्हं पयडीणमुदीरगो होदि, तत्थ पयारंतरासंभवादो।

स्थान उदीरणाका कथन करते हैं—प्रकृतियोंका स्थान प्रकृतिस्थान कहलाता है। प्रकृतिस्थान अर्थात् प्रकृतिसमूह यह उक्त कथनका तात्पर्य है। उसकी उदीरणा प्रकृतिस्थान उदीरणा है। एक कालमें जितनी प्रकृतियोंकी उदीरणा सम्भव है उतनी प्रकृतियोंका समुदाय प्रकृतिस्थानउदीरणा है। यह उक्त कथनका तात्पर्य है। उसके विषयमें ये सत्रह अनुयोगद्वार ज्ञातव्य हैं—समुत्कीर्तना-से लेकर अल्पबहुत्व तक तथा भुजगार, पदनिक्षेप और वृद्धि। यहाँ पर समुत्कीर्तना दो प्रकारकी है—स्थानसमुत्कीर्तना और प्रकृतिसमुत्कीर्तना। उनमेंसे सर्वप्रथम स्थानसमुत्कीर्तनाका कथन करते हैं, इसलिए कहते हैं—

*** प्रकृतमें स्थानसमुत्कीर्तनाका अधिकार है।**

§ ७२. उस प्रकृतिस्थानउदीरणामें सर्वप्रथम स्थानसमुत्कीर्तनाका अधिकार है यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

*** एक प्रकृतिका प्रवेशक जीव है।**

§ ७३. यथा—अन्यतर वेद और अन्यतर संज्वलनके उदयसे क्षपकश्रेणि या उपशमश्रेणि पर चढ़े हुए जीवके वेदकी प्रथम स्थितिके एक आवलिमात्र शेष रहने पर वेदकी उदीरणा होना रुक जाता है, इसलिए वहाँसे लेकर यह जीव एक संज्वलन प्रकृतिका प्रवेशक होता है।

*** दो प्रकृतियोंका प्रवेशक जीव है।**

§ ७४. यथा—उपशम और क्षपकश्रेणिमें अनिवृत्तिकरणके प्रथम समयसे लेकर एक समय अधिक आवलिमात्र वेदकी प्रथम स्थिति शेष रहने तक दो प्रकृतियोंका उदीरक होता है, क्योंकि यहाँ पर अन्य प्रकार सम्भव नहीं है।

❀ तिण्हं पयडीणं पवेसगो णत्थि।

§ ७५. कुदो पुव्वुत्तदोपयडीणमुवरि अपुव्वकरणपविट्ठम्मि हस्सरदि-अरदि-सोगाणमण्णदरजुगलस्स अक्कमप्पवेसणेण तिण्णमुदीरणट्ठाणस्साणुप्पत्तीदो।

❀ चउण्हं पयडीणं पवेसगो।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

§ ७६. अत्थि त्ति एत्थाहियारसंबंधो कायव्वो। तदो उवसम-खइयसम्माइट्ठि-पमत्तापमत्तसंजदेसु अपुव्वकरणे च हस्सरदि-अरदिसोगाणमण्णदरजुगलेण सह अण्णदरवेद-संजलणपयडीओ घेत्तूण चउण्हं पवेसगस्स अत्थित्तं सिद्धं।

❀ एत्तो पाए णिरंतरमत्थि जाव दसण्हं पयडीणं पवेसगो।

§ ७७. चउण्हं पवेसगमादिं कादूण जाव दसण्हं पयडीणं पवेसगो त्ति ताव एदेसिं ठाणाणं पवेसगो णिरंतरमत्थि त्ति सुत्तत्थसंबंधो। एत्तो उवरि णत्थि मोहणीयस्स, उक्कस्सेणुदीरिज्जमाणपयडीणं दससंखाणइक्कमादो। एवं समुक्कित्तिदाण-मुदीरणट्ठाणाणमेसा संदिट्ठी १,२,४,५,६,७,८,९,१०।

एवमोघेण समुक्कित्तणा गया।

---

* तीन प्रकृतियोंका प्रवेशक जीव नहीं है।

§ ७५. क्योंकि पूर्वोक्त दो प्रकृतियोंके ऊपर अपूर्वकरणमें प्रवेश करते समय हास्य-रति और अरति-शोक इनमेंसे अन्यतर युगलके युगपत् प्रवेश करनेपर तीन प्रकृतिकस्थानकी उत्पत्ति नहीं होती है।

* चार प्रकृतियोंका प्रवेशक जीव है।

§ ७६. यहाँ पर 'अस्ति' इस पदका अधिकारवश सम्बन्ध कर लेना चाहिए। तदनुसार उपशमसम्यग्दृष्टि और क्षायिकसम्यग्दृष्टि प्रमत्तसंयत और अप्रमत्तसंयत तथा अपूर्वकरण जीवके हास्य-रति और अरति-शोक इन दो युगलोंमेंसे अन्यतर युगलके साथ अन्यतर एक वेद और अन्यतर एक संज्वलन प्रकृतिको लेकर चार प्रकृतियोंका प्रवेशकरूपसे अस्तित्व सिद्ध होता है।

* इससे आगे दस प्रकृतियोंके प्रवेशक जीवके प्राप्त होने तक इन स्थानोंका प्रवेशक जीव निरन्तर है।

§ ७७. चार प्रकृतियोंके प्रवेशक जीवसे लेकर दस प्रकृतियोंके प्रवेशक जीवके प्राप्त होने तक इन स्थानोंका प्रवेशक जीव है इस प्रकार यह सूत्रार्थसम्बन्ध है। इसके ऊपर मोहनीय कर्मके उदीरणास्थान नहीं हैं, क्योंकि उत्कृष्टरूपसे उदीरणाको प्राप्त होनेवाली प्रकृतियाँ दस संख्याको उल्लंघन नहीं करती हैं। इसप्रकार समुत्कीर्तना अनुयोगद्वारके आश्रयसे कहे गये उदीरणास्थानोंकी यह संदृष्टि है—१, २, ४, ५, ६, ७, ८, ९, १०।

इस प्रकार ओघसे समुत्कीर्तना समाप्त हुई।

§ ७८. संपहि आदेसेण मणुसतिए ओघभंगो। णेरइएसु अत्थि दसण्हं णवण्हं अट्ठण्हं सत्तण्हं छण्हं पवेसगा १०,९,८,७,६,। एवं सव्वणेरइय० देवा भवणादि जाव णवगेवज्जा त्ति। एवं तिरिक्ख-पंचिंदियतिरिक्खतिए। णवरि पंचण्हं पि पवेसगा अत्थि ५। पंचिंदियतिरिक्खअपज्जत्त-मणुस०अप्प० अत्थि दसण्हं णवण्हमट्ठण्हं पवे० १०,९,८। अणुद्दिसादि जाव सव्वट्ठा त्ति अत्थि णवण्हमट्ठण्हं सत्तण्हं छण्हं पवेसगा ९,८,७,६। एवं जाव०।

§ ७९. एवं ट्ठाणसमुक्कित्तणं समाणिय संपहि एदेसु ट्ठाणेसु पयडिसमुक्कित्तणं कुणमाणो सुत्तपबंधमुत्तरं भणइ—

*** एदेसु ट्ठाणेसु पयडिणिद्देसो कायव्वो भवदि।**

§ ८०. एदेसु अणंतरणिद्दिट्ठउदीरणाट्ठाणेसु काओ पयडीओ घेत्तूण कदमं ट्ठाणमुप्पज्जदि त्ति जाणावणट्ठमेत्थ पयडिणिद्देसो कायव्वो, अण्णहा तव्विसय-सम्मण्णाणाणुप्पत्तीदो।

मार्गदर्शक- आचार्य श्री विद्यासागर जी महाराज

*** एयपयडिं पवेसेदि सिया कोहसंजलणं वा सिया माणसंजलणं वा सिया मायासंजलणं वा सिया लोभसंजलणं वा।**

§ ८१. एदस्सत्थो वुच्चदे—अत्थि एक्किस्से पयडीए पवेसगो त्ति समुक्किचिदं।

---

§ ७८. अब आदेश प्ररूपणा करते हैं। उसकी अपेक्षा मनुष्यत्रिकमें ओघके समान भंग है। नारकियोंमें दस, नौ, आठ, सात और छह प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव हैं—१०, ९, ८, ७, ६। इस प्रकार सब नारकी, सामान्य देव, और भवनवासियोंसे लेकर नौ ग्रैवेयक तकके देवोंमें जानना चाहिए। तथा इसी प्रकार सामान्य तिर्यञ्च और पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकमें भी जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि इनमें पाँच प्रकृतियोंके भी प्रवेशक जीव हैं ५। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्तकोंमें दस, नौ और आठ प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव हैं—१०, ९, ८। अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें नौ, आठ, सात और छह प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव हैं—९, ८, ७, ६। इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

§ ७९. इसप्रकार स्थानसमुत्कीर्तनाको समाप्त करके अब इन स्थानोंमें प्रकृतियोंकी समुत्कीर्तना करते हुए आगेके सूत्रप्रबन्धको कहते हैं—

*** इन स्थानोंमें प्रकृतियोंका निर्देश करना योग्य है।**

§ ८०. पूर्वमें कहे गये इन उदीरणास्थानोंमें किन प्रकृतियोंको लेकर कौनसा स्थान उत्पन्न होता है यह जतलानेके लिए यहाँ पर प्रकृतियोंका निर्देश करना चाहिए, अन्यथा तद्विषयक सम्यग्ज्ञान नहीं उत्पन्न होता।

*** एक प्रकृतिका प्रवेश करनेवाला जीव कदाचित् क्रोधसंज्वलनको, कदाचित् मानसंज्वलनको, कदाचित् मायासंज्वलनको और कदाचित् लोभसंज्वलनको प्रविष्ट करता है।**

§ ८१. अब इस सूत्रका अर्थ कहते हैं—एक प्रकृतिका प्रवेशक जीव है यह पहले समु-

तत्थेगपयडिं पवेसमाणो कदमं पयडिं पवेसेदि त्ति आसंकिय 'सिया कोहसंजलणं वा' इच्चादि वुत्तं। कोहोदएण सेढिमारूढस्स वेदपढमट्ठिदीए आवलियं पविट्ठाए तदो पहुडि कोधसंजलणमेक्कं चेव पवेसेदि तेणेव कोहपढमट्ठिदीए आवलियं पवेसिदाए तदो पहुडि माणसंजलणं पवेसेदि। तस्सेव माणपढमट्ठिदीए आवलियपविट्ठाए तदो पहुडि मायासंजलणं पवेसेदि। तदो मायासंजलणपढमट्ठिदीए आवलिय-पविट्ठाए तदो पहुडि लोभसंजलणस्सेव पवेसगो होइ। अहवा अप्पप्पणो उदएण चडिदस्स वेदपढमट्ठिदीए आवलियपविट्ठाए कोहसंजलणादीणं पवेसगो होदि त्ति वत्तव्वं। एत्थ सव्वत्थ 'सिया' सद्दो एयंतावहारणपडिसेहफलो। 'वा' सद्दो 'च' वियप्पवाचओ त्ति घेत्तव्वं। एवमेदे चत्तारि भंगा एयपयडिपवेसगस्स होइ त्ति उवसंहारवक्कमाह—

❀ एवं चत्तारि भंगा।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

§ ८२. सुगमं।

❀ दोण्हं पयडीणं पवेसगस्स बारस भंगा।

§ ८३. कुदो? तिण्हं वेदाणमेक्केकसंजलणेण सह अक्खपरावत्तेण तेत्तियमेत्त-भंगुप्पत्तीए णिव्वाहमुवलंभादो। तं कधं? सिया पुरिसवेदं कोहसंजलणं च पवेसेदि।

त्कीर्तना अनुयोगद्वारमें कह आये हैं सो उस विषयमें एक प्रकृतिका प्रवेश करनेवाला जीव किस प्रकृतिका प्रवेशक होता है ऐसी आशंका करके 'सिया कोहसंजलणं वा' इत्यादि वचन कहा है। क्रोधके उदयसे श्रेणि पर चढ़े हुए जीवके वेदकी प्रथम स्थितिके उदयावलिके भीतर प्रवेश करने पर वहाँसे लेकर वह जीव एक क्रोध संज्वलनको ही उदीरणामें प्रवेश कराता है। उसी जीवके द्वारा क्रोधकी प्रथम स्थितिके उदयावलिमें प्रवेशित करने पर वहाँसे लेकर वह जीव मानसंज्वलनको उदीरणारूपसे प्रवेश कराता है। उसी जीवके मानकी प्रथम स्थितिके उदया-वलिमें प्रवेश करने पर वहांसे लेकर मायासंज्वलनको उदीरणारूपसे प्रवेश कराता है। इसके बाद मायासंज्वलनकी प्रथम स्थितिके उदयावलिमें प्रविष्ट होने पर उससे आगे एकमात्र लोभका प्रवेशक होता है। अथवा अपने अपने उदयसे चढ़े हुए जीवके वेदकी प्रथम स्थितिके उदया-वलिमें प्रविष्ट होने पर क्रोधसंज्वलन आदिका प्रवेशक होता है ऐसा कहना चाहिए। यहां पर सर्वत्र 'सिया' शब्दका फल एकान्तरूप अवधारणका निषेध करना है और 'वा' शब्द 'च' रूप विकल्पका वाचक है ऐसा ग्रहण करना चाहिए। इसप्रकार ये चार भंग एक प्रकृतिके प्रवेशकके होते हैं इसप्रकार इस अर्थके सूचक उपसंहार वाक्यको कहते हैं—

✽ इसप्रकार चार भंग होते हैं।

§ ८२. यह सूत्र सुगम है।

✽ दो प्रकृतियोंके प्रवेशकके बारह भंग होते हैं।

§ ८३. क्योंकि तीन वेदोंका एक एक संज्वलनके साथ अक्षपरावर्तन होकर उतने भंग निर्बाधरूपसे उपलब्ध होते हैं। यथा—कदाचित् पुरुषवेद और क्रोधसंज्वलनको प्रवेशित करता

सिया पुरिस० माणसं० च पवे० । सिया पुरिस० मायासंज० च पवे० । सिया पुरिस० लोहसंज० च पवे० । एवं पुरिसवेदेण चत्तारि भंगा । एवमित्थि-णवुंसयवेदेहिं मि पत्तेक्कं चत्तारि भंगा उच्चारिय घेत्तव्वा । तदो दोण्हं पयडीणं पवेसगाणं बारस भंगा त्ति सिद्धं १२ ।

❀ चउण्हं पयडीणं पवेसगस्स चदुवीसं भंगा ।

§ ८४. किं कारणं ? हस्सरदि-अरदिसोगसण्णिदाणं दोण्हं जुगलाणं तिण्णिवेद-चदुसंजलणेहि सह संजोगे कीरमाणे तत्तियमेत्तभंगाणमुप्पत्तिदंसणादो । तं जहा—सिया हस्स-रदीओ पुरिसवेद-कोहसंजलणे च पवेसेदि । सिया हस्स-रदीओ पुरिस-माणसंज० पवे० । सिया हस्स-रदीओ पुरिस०-मायासंज० पवे० । सिया हस्स-रदीओ पुरिस०-लोहसंज० पवे० । एवं हस्स-रदीणं पुरिसवेदेण सह चदुसु संजलणेसु संचारिदाणि चत्तारि भंगा । एवमित्थि०-णवुंस०वेदेहिं मि पादेक्कं चउण्हं भंगाणमुच्चारणा कायव्वा । तदो हस्स-रदीणं बारस भंगा । अरदि-सोगाणं पि एवमेव बारस भंगा १२ समुप्पज्जंति त्ति चउण्हं पवेसगस्स चउवीसं भंगाणमुप्पत्ती सिद्धा २४ ।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

❀ पंचण्हं पयडीणं पवेसगस्स चत्तारि चउवीसं भंगा ।

§ ८५. तं जहा—हस्सरदि-अरदिसोगाणं दोण्हं जुगलाणं चउण्हं संजलणाणं

है । कदाचित् पुरुषवेद और मानसंज्वलनको प्रवेशित करता है । कदाचित् पुरुषवेद और माया-संज्वलनको प्रवेशित करता है तथा कदाचित् पुरुषवेद और लोभसंज्वलनको प्रवेशित करता है । इसप्रकार पुरुषवेदके साथ चार भंग प्राप्त होते हैं । इसीप्रकार स्त्रीवेद और नपुंसकवेदके साथ भी प्रत्येकके चार भंगोंका उच्चारण कर ग्रहण करना चाहिए । इसलिए दो प्रकृतियोंके प्रवेशकोंके बारह १२ भंग होते हैं यह सिद्ध हुआ ।

※ चार प्रकृतियोंके प्रवेशकके चौबीस भंग होते हैं ।

§ ८४. क्योंकि हास्य-रति और अरति-शोक इस संज्ञावाले दो युगलोंके तीन वेद और चार संज्वलनके साथ संयोग करने पर उतने भंगोंकी उत्पत्ति देखी जाती है । यथा—कदाचित् हास्य-रति, पुरुषवेद और क्रोधसंज्वलनको प्रवेशित करता है । कदाचित् हास्य-रति, पुरुषवेद और मानसंज्वलनको प्रवेशित करता है । कदाचित् हास्य-रति, पुरुषवेद और मायासंज्वलनको प्रवेशित करता है तथा कदाचित् हास्य-रति, पुरुषवेद और लोभसंज्वलनको प्रवेशित करता है । इस प्रकार हास्य और रतिका पुरुषवेदके साथ चार संज्वलनोंमें संचार करने पर चार भंग होते हैं । इसीप्रकार स्त्रीवेद और नपुंसकवेदके आश्रयसे भी प्रत्येकके चार भंगोंकी उच्चारणा करनी चाहिए । इसलिए हास्य-रतिकी अपेक्षा बारह भंग होते हैं । तथा इसीप्रकार अरति-शोककी अपेक्षा बारह १२ भंग उत्पन्न होते हैं । इसप्रकार चार प्रकृतियोंके प्रवेशक जीवके चौबीस २४ भंगोंकी उत्पत्ति सिद्ध हुई ।

※ पाँच प्रकृतियोंके प्रवेशक जीवके चार चौबीस भंग होते हैं ।

§ ८५. यथा—हास्य-रति और अरति-शोक इन दो युगलोंका, चार संज्वलनोंका, तीन

मार्गदर्शक : आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

तिण्हं वेदाणं भय-दुगुंछाणं च जहाकमं पत्थारं कादूणेत्थ भएण सह एक्का चउवीसभंगाणं सलागा १। दुगुंछाए सह अण्णा २। अण्णेगा भय-दुगुंछाहि विणा सम्मत्तोदयावलंबणेण ३। एवं संजदेसु तिण्णि चउवीसभंगा लब्भंति। पुणो खइगसम्माइट्ठिम्मि उवसमसम्माइट्ठिम्मि वा संजदासंजदम्मि भय-दुगुंछाहिं विणा पच्चक्खाणकसायप्पवेसणेण अण्णेगा चउवीसभंगसलागा लब्भइ ४। एवमेदे चत्तारि चदुवीस भंगा पंचण्हं पवेसगस्स लद्धा भवंति। एत्थ सव्वभंगसमासो एत्तिओ होइ ९६।

✽ छण्हं पयडीणं पवेसगस्स सत्त चउवीस भंगा।

§ ८६. तं जहा—उवसमसम्माइट्ठिस्स खइयसम्माइट्ठिस्स वा संजदस्स भय-दुगुंछाहि सह एगा चउवीस भंगसलागा १। संजदस्सेव वेदयसम्माइट्ठिस्स भएण विणा दुगुंछाए सह बिदिया २। तस्सेव दुगुंछाए विणा भएण सह तदिया ३। एवं संजदमस्सिऊण तिण्ण चउवीसभंगा लद्धा। पुणो उवसमसम्माइट्ठिस्स खइयसम्माइट्ठिस्स वा संजदासंजदस्स दुगुंछाए विणा पच्चक्खाणकसाएण सह भयं वेदयमाणस्स चउत्थी चउवीसभंगसलागा ४। तस्सेव भएण विणा पच्चक्खाण-दुगुंछाहिं सह पंचमी ५। वेदगसम्माइट्ठिसंजदासंजदस्स भय-दुगुंछोदयविरहियस्स छट्ठो चउवीसभंगवियप्पो ६। उवसंतदंसणमोहणीयस्स खीणदंसणमोहस्स वा असंजद-

---

वेदोंका तथा भय और जुगुप्साका क्रमसे प्रस्तार करके यहाँ पर भयके साथ चौबीस भंगोंकी एक शलाका १, जुगुप्साके साथ उससे भिन्न दूसरी २ तथा भय और जुगुप्साके बिना सम्यक्त्वप्रकृतिके उदयका अवलम्बन लेकर उन दोनोंसे भिन्न एक ३ इस प्रकार संयत जीवोंमें तीन चौबीस भंग प्राप्त होते हैं। पुनः क्षायिकसम्यग्दृष्टि या उपशमसम्यग्दृष्टि संयतासंयत जीवके भय और जुगुप्सा के बिना प्रत्याख्यानावरण कषायके प्रवेश करनेसे अन्य एक चौबीस भंगरूप शलाका प्राप्त होती है ४। इस प्रकार पाँच प्रकृतियोंके प्रवेशक जीवके चार चौबीस भंग प्राप्त होते हैं। यहाँ पर सब भंगोंका योग इतना होता है—९६।

✽ छह प्रकृतियोंके प्रवेशक जीवके सात चौबीस भंग होते हैं।

§ ८६. यथा—उपशमसम्यग्दृष्टि या क्षायिकसम्यग्दृष्टि संयत जीवके भय और जुगुप्साके साथ एक चौबीस भंगशलाका होती है—१। वेदकसम्यग्दृष्टि संयत जीवके ही भयके बिना जुगुप्साके साथ दूसरी चौबीस भंगशलाका होती है २। उसी संयत जीवके जुगुप्साके बिना भयके साथ तीसरी चौबीस भंगशलाका होती है ३। इस प्रकार संयत जीवका आश्रय कर तीन चौबीस भंग प्राप्त हुए। पुनः उपशमसम्यग्दृष्टि या क्षायिकसम्यग्दृष्टि संयतासंयत जीवके जुगुप्साके बिना प्रत्याख्यानावरण कषायके साथ भयका वेदन करते हुए चौथी चौबीस भंगशलाका होती है ४। उसी जीवके भयके बिना प्रत्याख्यानावरण और जुगुप्साके साथ पाँचवीं चौबीस भंगशलाका होती है—५। भय और जुगुप्साके उदयसे रहित वेदकसम्यग्दृष्टि संयतासंयत जीवके छठी चौबीस भंगशलाका होती है—६। तथा जिसने दर्शनमोहनीयका उपशम किया है या दर्शन-

सम्माइट्ठिस्स भय-दुगुंछाहिं विणा अपच्चक्खाणपवेसेण सत्तमो चउवीसभंगपयारो ७ । एवमेदे सत्त चेव चउवीस भंगा लब्भंति । एत्थ सव्वभंगसमासो अट्ठसट्ठिसदमेत्तो १६८ ।

ॐ सत्तण्हं पयडीणं पवेसगस्स दस चउवीस भंगा ।

§ ८७. तं जहा—संजदस्स वेदगसम्मत्त-चदुसंजलण-तिण्णिवेद-दोजुगल-भय-दुगुंछाओ अस्सिऊण पढमो चउवीसभंगपयारो १ । उवसमसम्माइट्ठिस्स खइयसम्माइट्ठिस्स वा संजदासंजदस्स पच्चक्खाण-भय-दुगुंछाहिं सह बिदियो २ । संजदासंजदस्सेव वेदगसम्मत्तेण भएण च तदियो ३ । भएण विणा दुगुंछाए सह चउत्थो ४ । पुणो खीणोवसंतदंसणमोहणीयस्स असंजदसम्माइट्ठिस्स भय-अपच्चक्खाणेहि सह पंचमो ५ । तस्सेव भएण विणा दुगुंछाए सह छट्ठो ६ । तस्सेव अक्खीणोवसंतदंसणमोहस्स भय-दुगुंछाहि विणा वेदगसम्मत्तोदएण सत्तमो ७ । सम्मामिच्छाइट्ठिस्स भय-दुगुंछाहि विणा सम्मामिच्छत्तेण सह अट्ठमो ८ । सासणसम्माइट्ठिम्मि भय-दुगुंछाहि विणा अणंताणुबंधिपवेसेण णवमो ९ । मिच्छाइट्ठिस्स अणंताणुबंधि-भय-दुगुंछाहि विणा संजुत्तपढमावलियाए वट्टमाणस्स दसमो १० । एवं दस चउवीसभंगा सत्तपयडिट्ठाणपवेसगस्स लब्भंति । एत्थ सव्वभंगसमासो चालीसुत्तरविसदमेत्तो २४० ।

मोहका क्षय किया है ऐसे असंयतसम्यग्दृष्टि जीवके भय और जुगुप्साके बिना अप्रत्याख्यानावरणके प्रवेशसे सातवाँ चौबीस भंगोंका प्रकार होता है—७ । इसप्रकार ये सात ही चौबीस भंग प्राप्त होते हैं । यहाँ पर सब भंगोंका योग एकसौ अरसठमात्र है—१६८ ।

* सात प्रकृतियोंके प्रवेशक जीवके दस चौबीस भंग होते हैं ।

§ ८७. यथा—संयत जीवके वेदकसम्यक्त्व, चार संज्वलन, तीन वेद, दो युगल, भय और जुगुप्साके आश्रयसे पहला चौबीस भंगोंका प्रकार होता है—१ । उपशमसम्यग्दृष्टि या क्षायिकसम्यग्दृष्टि संयतासंयत जीवके प्रत्याख्यानावरण, भय और जुगुप्साके साथ दूसरा चौबीस भंगोंका प्रकार होता है—२ । संयतासंयत जीवके ही वेदकसम्यक्त्व और भयके साथ तीसरा चौबीस भंगोंका प्रकार होता है—३ । भयके बिना जुगुप्साके साथ चौथा चौबीस भंगोंका प्रकार होता है—४ । पुनः जिसने दर्शनमोहनीयका क्षय या उपशम किया है ऐसे असंयतसम्यग्दृष्टि जीवके भय और अप्रत्याख्यानावरणके साथ पाँचवां चौबीस भंगोंका प्रकार होता है ५ । उसीके भयके बिना जुगुप्साके साथ छठा चौबीस भंगोंका प्रकार होता है ६ । जिसने दर्शनमोहनीयका क्षय या उपशम नहीं किया है ऐसे उसी जीवके भय और जुगुप्साके बिना वेदकसम्यक्त्व (सम्यक्त्व प्रकृति) के उदयसे सातवाँ चौबीस भंगोंका प्रकार होता है । सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवके भय और जुगुप्साके बिना सम्यग्मिथ्यात्वके साथ आठवाँ चौबीस भंगोंका प्रकार होता है ८ । सासादनसम्यग्दृष्टि जीवके भय और जुगुप्साके बिना अनन्तानुबन्धीका प्रवेश होनेसे नौवाँ चौबीस भंगोंका प्रकार होता है ९ । अनन्तानुबन्धी, भय और जुगुप्साके बिना अनन्तानुबन्धीसे संयुक्त प्रथम आवलिमें विद्यमान मिथ्यादृष्टि जीवके दसवाँ चौबीस भंगोंका प्रकार होता है । इस प्रकार सात प्रकृतियोंके प्रवेशक जीवके दस चौबीस भंग प्राप्त होते हैं । यहाँ पर सब भंगोंका जोड़ दोसौ चालीस २४० होता है ।

आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

* अट्ठण्हं पयडीणं पवेसगस्स एक्कारस चउवीस भंगा ।

§ ८८. तं जहा—संजदासंजदस्स वेदगसम्मत्त-पच्चक्खाण-संजलण-वेद-दोजुगल-भय-दुगुंछाहि पढमो चउवीसभंगुप्पादो १ । उवसंत-खीणदंसणमोहणीयस्स असंजदसम्माइट्ठिस्स अपच्चक्खाणकसाएण सह ताओ चेव सम्मत्तविरहिदाओ घेत्तूण बिदियो २ । तस्सेव वेदयसम्माइट्ठिस्स दुगुंछाए विणा भएण सह तदियो ३ । भएण विणा दुगुंछाए सह चउत्थो ४ । सम्मामिच्छाइट्ठिम्मि दुगुंछाए विणा सम्मामि०-भएहिं सह पंचमो ५ । तस्सेव भएण विणा दुगुंछाए सह छट्ठो ६ । सासणसम्माइट्ठिस्स दुगुंछाए विणा भयमुदीरेमाणस्स अणंताणुबंधिपवेसेण सत्तमो ७ । तस्सेव भएण विणा दुगुंछं वेदेमाणस्स अट्ठमो ८ । मिच्छाइट्ठिस्स संजुत्तपढमावलियाए भएण सह मिच्छत्तं वेदेमाणस्स णवमो ९ । भएण विणा दुगुंछाए सह मिच्छत्तमुदीरेमाणस्स दसमो १० । भय-दुगुंछाहि विणा अणंताणुबंधिणा सह मिच्छत्तं वेदेमाणस्स एक्कारसमो ११ । एवमट्ठण्हं पवेसगस्स एक्कारसभेदेहिं चउवीस भंगा लब्भंति । एत्थ सव्वभंगसमासो चउसट्ठि-विसदमेत्तो २६४ ।

* णवण्हं पयडीणं पवेसगस्स छ चदुवीस भंगा ।

---

* आठ प्रकृतियोंके प्रवेशक जीवके ग्यारह चौबीस भंग होते हैं ।

§ ८८. यथा—संयतासंयत जीवके वेदकसम्यक्त्व, प्रत्याख्यानावरण कषाय, संज्वलन कषाय, वेद, दो युगल, भय और जुगुप्साके द्वारा प्रथम चौबीस भंगोंका प्रकार उत्पन्न होता है १ । जिसने दर्शनमोहनीयका क्षय और उपशम किया है ऐसे असंयतसम्यग्दृष्टि जीवके अप्रत्याख्यानावरण कषायके साथ सम्यक्त्वप्रकृतिके बिना उन्हीं पूर्वोक्त प्रकृतियोंको ग्रहण करके दूसरा चौबीस भंगोंका प्रकार होता है २ । वेदकसम्यग्दृष्टि उसी जीवके जुगुप्साके बिना भयके साथ तीसरा चौबीस भंगोंका प्रकार होता है ३ । भयके बिना जुगुप्साके साथ चौथा चौबीस भंगोंका प्रकार होता है ४ । सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवके जुगुप्साके बिना सम्यग्मिथ्यात्व और भयके साथ पाँचवां चौबीस भंगोंका प्रकार होता है ५ । उसीके भयके बिना जुगुप्साके साथ छठा चौबीस भंगोंका प्रकार होता है ६ । जुगुप्साके बिना भयकी उदीरणा करनेवाले सासादन-सम्यग्दृष्टि जीवके अनन्तानुबन्धीका प्रवेश होनेसे सातवाँ चौबीस भंगोंका प्रकार होता है ७ । भयके बिना जुगुप्साका वेदन करनेवाले उसी जीवके आठवाँ चौबीस भंगोंका प्रकार होता है ८ । संयुक्त प्रथम आवलिमें भयके साथ मिथ्यात्वका वेदन करनेवाले मिथ्यादृष्टि जीवके नौवाँ चौबीस भंगोंका प्रकार होता है ९ । भयके बिना जुगुप्साके साथ मिथ्यात्वकी उदीरणा करनेवाले जीवके दसवां चौबीस भंगोंका प्रकार होता है १० । भय और जुगुप्साके बिना अनन्तानुबन्धीके साथ मिथ्यात्वका वेदन करनेवाले जीवके ग्यारहवां चौबीस भंगोंका प्रकार होता है ११ । इस प्रकार आठ प्रकृतियोंके प्रवेशक जीवके ग्यारह प्रकारके चौबीस भंग प्राप्त होते हैं । यहां सब भंगोंका जोड़ दो सौ चौंसठ २६४ होता है ।

* नौ प्रकृतियोंके प्रवेशक जीवके छह चौबीस भंग होते हैं ।

§ ८९. तं कधं ? असंजदस्स वेदगसम्माइट्ठिस्स वेदगसम्मत्त-पच्चक्खाणापच्चक्खाण-संजलण-वेदण्णदरजुगल-भय-दुगुंछाओ पवेसेमाणस्स पढमो चउवीसभंगुप्पत्तिवियप्पो १। सम्मामिच्छाइट्ठिस्स समत्तेण विणा सम्मामिच्छत्त-भय-दुगुंछाहि बिदियो २। सासणसम्माइट्ठिम्मि सम्मामिच्छत्तेण विणा अणंताणुबंधिणा सह पुव्विल्लपयडीओ घेत्तूण तदियो ३। मिच्छाइट्ठिस्स संजुत्तपढमावलियाए मिच्छत्तेण सह भय-दुगुंछा-वेदयस्स चउत्थो ४। तस्सेवाणंताणु०वेदमाणस्स भएण विणा दुगुंछाए सह पंचमो ५। दुगुंछाए विणा भएण सह छट्ठो ६। एवमेदे छचदुवीसभंगा णवण्हं पवेसगस्स लब्भंति। एत्थ सव्वभंगसमासो चउवेतालसदमेत्तो १४४।

- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

* दसण्हं पयडीणं पवेसगस्स एक्कचदुवीस भंगा।

§ ९०. तं जहा—मिच्छत्त-अणंताणु०-पच्चक्खाणापच्चक्खाण-संजलण-वेददो-जुगल-भय-दुगुंछाओ एवं ठविय

२
२ २
१ १ १
४ ४ ४ ४
१

अक्खसंचारं कादूण चउवीसभंगाणमुच्चारणा कायव्वा। एवं पयडिसमुक्कित्तणाए भंगपरूवणं कादूण संपहि वुत्ताणं भंगाण-

---

§ ८९. सो कैसे ? वेदक सम्यक्त्व, प्रत्याख्यानावरण, अप्रत्याख्यानावरण, संज्वलन, वेद, अन्यतर युगल, भय और जुगुप्साका प्रवेश करनेवाले जीवके प्रथम चौबीस भंगोंकी उत्पत्तिका विकल्प होता है १। सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवके सम्यक्त्वके बिना सम्यग्मिथ्यात्व, भय और जुगुप्साके साथ दूसरा चौबीस भंगोंका प्रकार होता है २। सासादनसम्यग्दृष्टि जीवके सम्यग्मिथ्यात्वके बिना अनन्तानुबन्धीके साथ पूर्वोक्त प्रकृतियोंको ग्रहण कर तीसरा चौबीस भंगोंका प्रकार होता है ३। संयुक्त प्रथम आवलिमें मिथ्यात्वके साथ भय और जुगुप्साका वेदन करनेवाले जीवके चौथा चौबीस भंगोंका प्रकार होता है ४। अनन्तानुबन्धीका वेदन करनेवाले उसी जीवके भयके बिना जुगुप्साके साथ पाँचवाँ चौबीस भंगोंका प्रकार होता है ५। जुगुप्साके बिना भयके साथ छठा चौबीस भंगोंका प्रकार होता है ६। इस प्रकार नौ प्रकृतियोंके प्रवेशक जीवके छह प्रकारके चौबीस भंग प्राप्त होते हैं। यहाँ पर सब भङ्गोंका जोड़ एक सौ चवालीस १४४ है।

* दस प्रकृतियोंके प्रवेशक जीवके एक चौबीस भंग होते हैं।

§ ९०. यथा—मिथ्यात्व, अनन्तानुबन्धी, प्रत्याख्यानावरण, अप्रत्याख्यानावरण, संज्वलन, वेद, दो युगलमें अन्यतर युगल, भय और जुगुप्सा इस प्रकार

२
२ २
१ १ १
४ ४ ४ ४
१

स्थापित कर अक्षसंचार करके चौबीस भंगोंकी उच्चारणा करनी चाहिए। इस प्रकार प्रकृति समुत्कीर्तनामें

मुवसंहारगाहं परूवेमाणो इदमाह—

❀ एदेसिं भंगाणं गाहा दसण्हमुदीरणट्ठाणमादिं कादूण ।

§ ९१. सुगमं । णवरि दसण्हमुदीरणट्ठाणमादिं कादूणेत्ति वयणं पच्छाणुपुव्वीए गाहा वुच्चिहिदि त्ति जाणावणट्ठं ।

❀ तं जहा ।

§ ९२. सुगमं ।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

एक्कग छक्केक्कारस दस सत्त चउक्क एक्कगं चेव ।
दोसु च बारस भंगा एक्कम्हि य होंति चत्तारि ॥१॥

§ ९३. सुगमं चेदं, अणंतरादीदपबंधेण गयत्थत्तादो । णवरि एत्थ गाहासुत्तपुव्वद्धे चउवीसं भंगा त्ति पयरणवसेणाहिसंबंधो कायव्वो । एदेसिं च भंगाणमप्पप्पणो उदीरणट्ठाणपडिबद्धाणमेसो अंकविण्णासो

१०,	९,	८,	७,	६,	५,	४,	२,	१,
१,	६,	११,	१०,	७,	४,	१,	१२,	४,

भंगोंका कथन करके अब उक्त भंगोंकी उपसंहार गाथाका कथन करते हुए यह कहते हैं—

* दस प्रकृतियोंके उदीरणास्थानसे लेकर इन पूर्वोक्त भंगोंकी गाथा इस प्रकार है ।

§ ९१. यह सूत्र सुगम है । किन्तु इतनी विशेषता है कि 'दस प्रकृतियोंके उदीरणास्थानसे लेकर' यह वचन पश्चादानुपूर्वीसे गाथा कहेगी यह बतलानेके लिए आया है ।

* यथा—

§ ९२. यह सूत्र सुगम है ।

* दस प्रकृतिक स्थानके एक चौबीस, नौ प्रकृतिक स्थानके छह चौबीस, आठ प्रकृतिक स्थानके ग्यारह चौबीस, सात प्रकृतिक स्थानके दस चौबीस, छह प्रकृतिक स्थानके सात चौबीस, पाँच प्रकृतिक स्थानके चार चौबीस और चार प्रकृतिक स्थान के एक चौबीस तथा दो प्रकृतिक स्थानके बारह और एक प्रकृतिक स्थानके चार भंग होते हैं ।

§ ९३. यह गाथासूत्र सुगम है, क्योंकि अनन्तर अतीत प्रबन्धके द्वारा इसका अर्थ कह दिया गया है । किन्तु इतनी विशेषता है कि इस गाथासूत्रके पूर्वार्धमें 'चौबीस भङ्ग' इस पदका प्रकरणवश सम्बन्ध कर लेना चाहिए । अपने अपने उदीरणास्थानसे सम्बन्ध रखनेवाले इन भङ्गोंका यह अंकविन्यास है--

१०	९	८	७	६	५	४	२	१
१ चौ०	६ चौ०	११ चौ०	१० चौ०	७ चौ०	४ चौ०	१ चौ०	१२	४

एत्थ सव्वभंगसमासो एत्तियो होइ ९७६। एवं पयडिसमुक्कित्तणाए समत्ताए ट्ठाणसमुक्कित्तणा समत्ता।

§ ९४. एत्थ सादि-अणादि-धुव-अद्धुवाणुगमो ताव कायव्वो, तम्मि अपरूविदे सामित्तस्सावयाराभावादो। तं जहा—सादि-अणादि-धुव-अद्धुवाणुगमेण दुविहो णिद्देसो ओघादेसभेएण। ओघेण सव्वपदाणि किं सादि० ४। सादि-अद्धुवाणि। एवं जाव०।

❀ सामित्तं।

§ ९५. एत्तो सामित्तं वत्तइस्सामो त्ति पइण्णावक्कमेदं।

❀ सामित्तस्स साहणट्ठमिमाओ दो सुत्तगाहाओ।

§ ९६. सुगमं।

❀ तं जहा।

§ ९७. सुगमं।

सत्तादि दसुक्कस्सा मिच्छत्ते मिस्सए णउक्कस्सा।
छादी णव उक्कस्सा अविरदसम्मे दु आदिस्से ॥२॥

यहाँ पर सब भङ्गोंका जोड़ इतना ९७६ होता है—
२४ + १४४ + २६४ + २४० + १६८ + ९६ + २४ + १२ + ४ = ९७६।

इस प्रकार प्रकृतिसमुत्कीर्तनाके समाप्त होने पर स्थानसमुत्कीर्तना समाप्त हुई।

§ ९४. यहाँ पर सर्व प्रथम सादि, अनादि, ध्रुव और अध्रुवानुगम करना चाहिए, क्योंकि इसकी प्ररूपणा किये बिना स्वामित्व अनुयोगद्वारका अवतार नहीं हो सकता। यथा—सादि, अनादि, ध्रुव और अध्रुवानुगमकी अपेक्षा ओघ और आदेशके भेदसे निर्देश दो प्रकारका है। ओघसे सब पद क्या सादि हैं, अनादि हैं, ध्रुव हैं या अध्रुव हैं? सादि और अध्रुव हैं। इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

विशेषार्थ—पूर्वमें दस प्रकृतिकसे लेकर एक प्रकृतिक तक जितने पद बतलाये हैं उनमें प्रकृतियोंके परिवर्तनसे या अन्य कारणसे स्थायी कोई भी पद नहीं है, इसलिए इन्हें ओघसे भी सादि और अध्रुव कहा है। शेष कथन सुगम है।

❀ स्वामित्व

§ ९५. इससे आगे स्वामित्वको बतलाते हैं इस प्रकार यह प्रतिज्ञावाक्य है।

❀ स्वामित्वकी सिद्धि करनेके लिए ये दो सूत्रगाथाएँ हैं।

§ ९६. यह सूत्र सुगम है।

❀ यथा—

§ ९७. यह सूत्र सुगम है।

❀ सातसे लेकर दस तकके चार उदीरणास्थान मिथ्यात्व गुणस्थानमें होते हैं, सातसे लेकर उत्कृष्टरूपसे नौ तकके तीन उदीरणा स्थान मिश्र गुणस्थानमें होते

पंचादि-अट्ठणिहणा विरदाविरदे उदीरणट्ठाणा ।
एगादी तिगरहिदा सत्तुक्कस्सा च विरदेसु ॥३॥

§ ९८. एत्थ ताव पढमसुत्तगाहाए अत्थो वुच्चदे । तं कधं ? सत्त आदिं कादूण जाव दस ताव एदाणि चत्तारि उदीरणट्ठाणाणि मिच्छाइट्ठिगुणट्ठाणे होंति । तं जहा—मिच्छत्तमणंताणुबंधीणमेकदरमपच्चक्खाणाणमेकदरं पच्चक्खाणाणमेकदरं संजलणाणमेकदरं तिण्हं वेदाणमेकदरं दोण्हं जुगलाणमेकदरं भय-दुगुंछाओ च घेत्तूण दसण्हमुदीरणट्ठाणं होइ १० । एत्थ भय-दुगुंछाणमण्णदरेण विणा णवण्हमुदीरणट्ठाणं होइ ९ । दोहिं मि विणा अट्ठण्हमुदीरणा ८ । भय-दुगुंछाणंताणुबंधीहि विणा सत्तण्हमुदीरणट्ठाणं होइ ७ । तदो एदेसिं मिच्छाइट्ठी सामी होइ त्ति भावत्थो । 'मिस्सए णवुक्कस्सा' सत्तादिग्गहणमिहाणुवट्टदे, तेणेवं सुत्तत्थसंबंधो कायव्वो—मिस्सए सम्मामिच्छाइट्ठिगुणट्ठाणे सत्त आदिं कादूण जाव णव ताव एदाणि तिण्णि उदीरणाट्ठाणाणि लब्भंति त्ति । तं जहा—सम्मामिच्छत्तमपच्चक्खाणाणमेकदरं, पच्चक्खाणाणमेकदरं, संजलणाणमेकदरं, तिण्हं वेदाणमेकदरं, दोण्हं जुगलाणमेकदरं, भय-दुगुंछाओ घेत्तूण एवमेदाओ णव ९ । एत्थ भय-दुगुंछाणमण्णदरेण विणा अट्ठ ८ । दोहिं मि विणा

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

हैं, छहसे लेकर उत्कृष्टरूपसे नौ तकके चार उदीरणास्थान अविरतसम्यग्दृष्टि गुणस्थानमें होते हैं, पाँचसे लेकर आठ तकके चार उदीरणास्थान विरताविरत गुणस्थानमें होते हैं तथा तीनके सिवा एकसे लेकर उत्कृष्टरूपसे सात तकके उदीरणास्थान विरत गुणस्थानोंमें होता है ॥२-३॥

§ ९८. यहाँ पर सर्वप्रथम पहली सूत्रगाथाका अर्थ कहते हैं । यथा—सातसे लेकर दस तकके ये चार उदीरणास्थान मिथ्यादृष्टि गुणस्थानमें होते हैं । यथा—मिथ्यात्व, अनन्तानुबन्धियोंमेंसे कोई एक, अप्रत्याख्यानावरणचतुष्कमेंसे कोई एक, प्रत्याख्यानावरणचतुष्कमेंसे कोई एक, संज्वलनचतुष्कमेंसे कोई एक, तीन वेदोंमेंसे कोई एक, दो युगलोंमेंसे कोई एक युगल तथा भय और जुगुप्सा इनको लेकर दसप्रकृतिक १० उदीरणास्थान होता है । यहाँ पर भय और जुगुप्सामेंसे किसी एकके विना नौ प्रकृतिक ९ उदीरणास्थान होता है । इन दोनोंके विना आठ प्रकृतिक ८ उदीरणास्थान होता है । तथा भय, जुगुप्सा और अनन्तानुबन्धीके विना सातप्रकृतिक ७ उदीरणास्थान होता है, इसलिए इनका मिथ्यादृष्टि जीव स्वामी है यह उक्त कथनका भावार्थ है । 'मिस्सए णवुक्कस्सा' इस पदका व्याख्यान करते समय 'सत्तादि' इस पदको ग्रहण कर उसकी अनुवृत्ति करनी चाहिए । इसलिए सूत्रका अर्थके साथ इस प्रकार सम्बन्ध करना चाहिए—मिश्र अर्थात् सम्यग्मिथ्यादृष्टि गुणस्थानमें सातसे लेकर नौ तक ये तीन उदीरणास्थान प्राप्त होते हैं । यथा—सम्यग्मिथ्यात्व, अप्रत्याख्यानावरणचतुष्कमेंसे कोई एक, प्रत्याख्यानावरणचतुष्कमेंसे कोई एक, संज्वलनचतुष्कमेंसे कोई एक, तीन वेदोंमेंसे कोई एक, दो युगलोंमेंसे कोई एक युगल तथा भय और जुगुप्सा इनको ग्रहणकर इस प्रकार ये नौ ९ प्रकृतियाँ होती हैं । इनमें भय और जुगुप्सामेंसे किसी एकके विना आठ ८ प्रकृतियाँ होती हैं तथा दोनोंके ही विना

सत्त ७ । एवमेदेसिं ट्ठाणाणं सम्मामिच्छाइट्ठी सामिओ होइ । सासणसम्माइट्ठिम्मि वि एदाणि तिण्णि उदीरणट्ठाणाणि होंति, सम्मामिच्छत्तेण विणा अणंताणुबंधीणमण्णदरेण सह तदुप्पत्तिदंसणादो । ण च एदम्मि सुत्तम्मि एसो अत्थो ण संगहिओ त्ति आसंकणिज्जं, देसामासयभावेण सूचिदत्तादो । 'छादी णव उक्कसा अविरदसम्मे दु आदिस्से' छ आदिं कादूण जा उक्कस्सेण णव पयडीओ त्ति ताव एदाणि चत्तारि उदीरणट्ठाणाणि अविरदसम्मे असंजदसम्माइट्ठिम्मि होंति त्ति आदिस्से णिद्दिस्से । तं कथं ? सम्मत्त-अपच्चक्खाण-पच्चक्खाण-संजलण-वेद-अण्णदरजुगल-भय-दुगुंछा त्ति एवमुक्कस्सेण णव पयडीओ असंजदसम्माइट्ठिम्मि उदीरिज्जमाणाओ होंति । एत्थ भय-दुगुंछाणं अण्णदरेण विणा अट्ठ, दोहिं मि विणा सत्त, सम्मत्तेण विणा खीणोवसंतदंसणमोहणीयस्स जहण्णेण छप्पयडीओ होंति । तदो एदेसिं ट्ठाणाणमसंजदसम्माइट्ठी सामिओ होदि । एवं पढमगाहाए अत्थपरूवणा समत्ता ।

§ ९९. संपहि विदियगाहाए अत्थो वुच्चदे—'पंचादि अट्ठणिहणा०' एवं वुत्ते पंच आदिं कादूण जावुक्कस्सेण अट्ठणिहणा अट्ठपज्जवसाणा त्ति एवमेदे चत्तारि उदीरणट्ठाणाणि विरदाविरदम्मि संजदासंजदगुणट्ठाणे होंति त्ति भणिदं होइ । तत्थ जहण्णेण पंच पयडीओ कदमाओ त्ति भणिदे उवसमसम्माइट्ठिस्स खइयसम्माइट्ठिस्स वा संजदासंजदस्स पच्चक्खाण-संजलण-वेदण्णदरजुगले त्ति एदाओ पंच उदीरण-

---

सात ७ प्रकृतियां होती हैं । इस प्रकार इन स्थानोंका सम्यग्मिथ्यादृष्टि स्वामी होता है । सासादन सम्यग्दृष्टि गुणस्थानमें भी ये तीन उदीरणास्थान होते हैं, क्योंकि सम्यग्मिथ्यात्व प्रकृतिके बिना अनन्तानुबन्धीचतुष्कमेंसे किसी एक प्रकृतिके साथ इन स्थानोंकी उत्पत्ति देखी जाती है । इस सूत्रमें यह अर्थ संगृहीत नहीं है ऐसी आशंका करना ठीक नहीं है, क्योंकि देशामर्षक भावसे यह अर्थ सूचित होता है । 'छादी णउक्कसा अविरदसम्मे दु आदिस्से' इहसे लेकर उत्कृष्टरूपसे नौ प्रकृतियों तक ये चार उदीरणास्थान 'अविरदसम्मे' अर्थात् अविरतसम्यग्दृष्टि गुणस्थानमें होते हैं ऐसा निर्देश किया है । अब वे किस प्रकार होते हैं यह बतलाते हैं—सम्यक्त्व, अप्रत्याख्यानावरणचतुष्कमेंसे कोई एक, प्रत्याख्यानावरणचतुष्कमेंसे कोई एक, संज्वलनचतुष्कमेंसे कोई एक, तीन वेदोंमेंसे कोई एक, अन्यतर युगल तथा भय और जुगुप्सा इस प्रकार उत्कृष्टरूपसे ये नौ प्रकृतियां असंयतसम्यग्दृष्टि गुणस्थानमें उदीर्यमाण होती हैं । यहां पर भय और जुगुप्सामेंसे किसी एकके बिना आठ, दोनोंके बिना सात तथा उपशान्तदर्शनमोहनीय और क्षीणदर्शनमोहनीय जीवके सम्यक्त्वके बिना जघन्यरूपसे छह प्रकृतियां उदीर्यमाण होती हैं । इसलिए इन स्थानोंका असंयतसम्यग्दृष्टि जीव स्वामी होता है । इस प्रकार प्रथम गाथाकी अर्थप्ररूपणा समाप्त हुई ।

§ ९९. अब दूसरी गाथाका अर्थ कहते हैं—'पंचादि अट्ठणिहणा' ऐसा कहने पर पाँचसे लेकर उत्कृष्टरूपसे आठ पर्यन्त इस प्रकार ये चार उदीरणास्थान विरताविरत अर्थात् संयतासंयत गुणस्थानमें होते हैं यह उक्त कथनका तात्पर्य है । उनमेंसे जघन्यरूपसे पाँच प्रकृतियाँ कौनसी हैं ऐसा कहनेपर उपशमसम्यग्दृष्टि या क्षायिकसम्यग्दृष्टि संयतासंयतके प्रत्याख्यानावरणचतुष्कमेंसे कोई एक, संज्वलनचतुष्कमेंसे कोई एक, तीन वेदोंमेंसे कोई एक और दो युगलोंमें

पयडीओ होंति । एत्थ भय-दुगुंछाणमण्णदरे पवेसिदे छ होंति । दोसु वि पइट्ठेसु सत्त भवंति । वेदगसम्माइट्ठिम्मि सम्मत्ते पइट्ठे अट्ठ होंति । तदो एदेसिं चउण्हमुदीरणट्ठाणाणं संजदासंजदो सामी होइ । 'एगादी तिगरहिदा' एदस्सत्थो—जहण्णदो एयपयडिमादिं कादूण जा उक्कस्सदो सत्त पयडीओ त्ति ताव एदाणि ट्ठाणाणि विरदेसु होंति । णवरि तिगरहिदा कायव्वा । कुदो ? तिण्हमुदीरणट्ठाणस्स अच्चंताभावेण पडिसिद्धत्तादो । तदो एक्किस्से दोण्हं चदुण्हं पंचण्हं छण्हं सत्तण्हं च उदीरणट्ठाणाणं संजदा सामिणो होंति त्ति एसो सुत्तत्थसंगहो । तत्थाणियट्टिम्मि संजलणाणमेकदरं होदूणेक्किस्से उदीरणट्ठाणं लब्भइ । तस्सेव अण्णदरवेदेण सह दोण्णि । अपुव्वकरण-पमत्तापमत्तसंजदेसु दोण्हमण्णदरजुगलेण सह चत्तारि, भएण सह पंच, दुगुंछाए सह छ । अक्खीणदंसणमोहस्स पमत्तापमत्तसंजदस्स सम्मत्ते पविट्ठे सत्त होंति । संपहि एदासिं गाहाणं विहासणट्ठमुच्चारणाणुगममेत्थ वत्तइस्सामो । तं जहा—

§ १००. सामित्ताणु० दुविहो णिद्देसो—ओघेण आदेसेण य । ओघेण दसण्हमुदीर० कस्स ? अण्णद० मिच्छाइट्ठि० । णव अट्ठ सत्त० उदीर० कस्स ? अण्णद० सम्माइट्ठिस्स मिच्छाइट्ठि० । छ० पंच० चत्तारि० दोण्णि० एक्किस्से उदीर०

से कोई एक युगल इस प्रकार ये पाँच उदीरणा प्रकृतियां होती हैं । तथा इनमें भय और जुगुप्सा में से किसी एक प्रकृतिका प्रवेश करने पर छह उदीरणा प्रकृतियां होती हैं और दोनों ही प्रकृतियोंका प्रवेश करनेपर सात उदीरणा प्रकृतियां होती हैं । तथा वेदकसम्यग्दृष्टि जीवके सम्यक्त्व प्रकृतिका प्रवेश करने पर आठ उदीरणाप्रकृतियां होती हैं । इसलिए इन चार उदीरणास्थानोंका संयतासंयत जीव स्वामी है । अब 'एगादी तिगरहिदा' इस पदका अर्थ कहते हैं—जघन्यरूपसे एक प्रकृतिसे लेकर उत्कृष्टरूपसे सात प्रकृतियों तक ये स्थान विरत जीवोंके होते हैं । किन्तु इतनी विशेषता है कि तीनप्रकृतिक स्थानसे रहित करना चाहिए, क्योंकि तीन प्रकृतिक उदीरणास्थानका अत्यन्त अभाव होनेसे उसका निषेध किया है । इसलिए एकप्रकृतिक, दोप्रकृतिक, चारप्रकृतिक, पांचप्रकृतिक, छहप्रकृतिक और सातप्रकृतिक उदीरणास्थानोंके संयत जीव स्वामी होते हैं इस प्रकार यह सूत्रार्थका संग्रह है । उनमेंसे अनिवृत्ति गुणस्थानमें चार संज्वलनोंमेंसे कोई एककी उदीरणा होकर एकप्रकृतिक उदीरणास्थान प्राप्त होता है । उसी जीवके अन्यतर वेदके साथ दोप्रकृतिक उदीरणास्थान प्राप्त होता है । अपूर्वकरण, प्रमत्त और अप्रमत्तसंयत जीवोंमें दो युगलोंमें से किसी एकके साथ चार प्रकृतिक उदीरणास्थान प्राप्त होता है । भयके साथ पांचप्रकृतिक और जुगुप्साके साथ छहप्रकृतिक उदीरणास्थान प्राप्त होता है । तथा जिसने दर्शनमोहनीयका क्षय नहीं किया है ऐसे प्रमत्तसंयत और अप्रमत्तसंयत जीवके सम्यक्त्व प्रकृतिके प्रविष्ट होने पर सातप्रकृतिक उदीरणास्थान होता है । अब इन गाथाओंका विशेष व्याख्यान करनेके लिए यहां पर उच्चारणाका अनुगम करके बतलाते हैं । यथा—

§ १००. स्वामित्वानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे दशप्रकृतिक उदीरणास्थान किसके होता है ? अन्यतर मिथ्यादृष्टि जीवके होता है । नौ, आठ और सातप्रकृतिक उदीरणास्थान किसके होता है ? अन्यतर सम्यग्दृष्टि और मिथ्यादृष्टिके होता

कस्स० ? अण्णद० सम्माइट्ठिस्स । एवं मणुसतिए । आदेसेण णेरइय० १०, ९, ८, ७, ६ ओघं । एवं सव्वणेरइय० देवा भवणादि जाव णवगेवज्जा त्ति । तिरिक्ख-पंचिंदियतिरिक्खतिए १०, ९, ८, ७, ६, ५ ओघं । पंचिं०तिरिक्खअपज्ज०-मणुसअपज्ज० १०, ९, ८ उदीर० कस्स ? अण्णदरस्स । अणुदिसादि सव्वट्ठा त्ति ९, ८, ७, ६ उदीर० कस्स ? अण्णद० । एवं जाव० ।

❀ एदासु दोसु गाहासु विहासिदासु सामित्तं समत्तं भवदि ।

§ १०१. सुगमं । मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

❀ एयजीवेण कालो ।

§ १०२. सुगममेदमहियारसंभालणसुत्तं ।

❀ एक्किस्से दोण्हं चदुण्हं पंचण्हं छण्हं सत्तण्हं अट्ठण्हं णवण्हं दसण्हं पयडीणं पवेसगो केवचिरं कालादो होदि ?

§ १०३. सुगममेदेसिं ट्ठाणाणमुदीरगस्स जहण्णुक्कस्सकालणिद्देसावेक्खं पुच्छावक्कं ।

❀ जहण्णेण एयसमओ ।

है। छह, पांच, चार, दो और एक प्रकृतिक उदीरणास्थान किसके होता है ? अन्यतर सम्यग्दृष्टिके होता है। इसी प्रकार मनुष्यत्रिकमें जानना चाहिए। आदेशसे नारकियोंमें १०, ९, ८, ७ और ६ प्रकृतिक स्थानोंका भंग ओघके समान है। इसी प्रकार सब नारकी, सामान्य देव, और भवन वासियोंसे लेकर नौ ग्रैवेयक तकके देवोंमें जानना चाहिए। सामान्य तिर्यञ्च और पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकमें १०, ९, ८, ७, ६ और ५ प्रकृतिक स्थानोंका भंग ओघके समान है। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्तकोंमें १०, ९ और ८ प्रकृतिक स्थान किसके होता है ? अन्यतरके होता है। अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें ९, ८, ७ और ६ प्रकृतिक उदीरणास्थान किसके होता है ? अन्यतरके होता है। इस प्रकार अनाहारकमार्गणा तक जानना चाहिए।

❀ इन दो गाथाओंका व्याख्यान करने पर स्वामित्व समाप्त होता है।

§ १०१. यह सूत्र सुगम है।

❀ एक जीवकी अपेक्षा काल ।

§ १०२. अधिकारकी सम्हाल करनेवाला यह सूत्र सुगम है।

❀ एक, दो, चार, पाँच, छह, सात, आठ, नौ और दस प्रकृतियोंके प्रवेशकका कितना काल है ?

§ १०३. इन स्थानोंके उदीरक जीवके जघन्य और उत्कृष्ट कालके निर्देशकी अपेक्षा करनेवाला यह पृच्छावाक्य सुगम है।

❀ जघन्य काल एक समय है।

§ १०४. एक्किस्से पवेसगस्स ताव उच्चदे । तं जहा—एक्को अण्णदरवेद-संजलणाण-मुदएण उवसमसेढिमारूढो वेदपढमट्ठिदीए आवलियपविट्ठाए एयसमयमेक्किस्से पवेसगो जादो। बिदियसमए कालं कादूण देवेसुववण्णो । लद्धो एक्किस्से पवेसगस्स जहण्ण-कालो एयसमयमेत्तो । अथवा ओदरमाणो उवसंतकसायो सुहुमसांपरायो होदि त्ति एग-समयमेक्किस्से पवेसगो जादो । बिदियसमए कालं कादूण देवेसुप्पण्णो, लद्धो एगसमओ ।

§ १०५. संपहि दोण्हं पवेसग० उच्चदे । तं कथं ? उवसमसेढीए अणियट्टि-करणपढमसमए दोण्हं पवेसगो होऊण बिदियसमए कालं करिय देवेसुप्पण्णस्स लद्धो एयसमयमेत्तो दोण्हं पवेस० जहण्णकालो । अथवा ओदरमाणगो अणियट्टिवेदमोक-ड्डिऊणेगसमयं दोण्हं पवेसगो जादो, बिदियसमए कालं कादूण देवेसुववण्णो, तस्स लद्धो एगसमओ ।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज
§ १०६. संपहि चउण्हं पवेसग० उच्चदे—ओदरमाणगो उवसामगो अपुव्वकरण-भावेणेगसमयं चउण्हं पवेसगो होदूण से काले कालगदो देवो जादो, सत्थाणे चेव वा भय-दुगुंछाणमुदीरगो जादो, लद्धो चउण्हं पवेसगस्स जहण्णकालो एयसमयमेत्तो । अथवा खीणोवसंतदंसणमोहणीयस्स संजदस्स पढमसमए भय-दुगुंछाहि विणा चउण्हं पवेसगत्तं दिट्ठं । अणंतरसमए च भय-दुगुंछासु पविट्ठासु लद्धो विवक्खियपदस्स एय-

§ १०४. सर्व प्रथम एक प्रकृतिके प्रवेशकका जघन्य काल कहते हैं । यथा—कोई एक जीव अन्यतर वेद और अन्यतर संज्वलनके उदयसे उपशमश्रेणि पर चढ़ा । अनन्तर वेदकी प्रथम स्थितिके उदयावलिमें प्रविष्ट होनेपर एक समय तक एक प्रकृतिका प्रवेशक हो गया और दूसरे समयमें मरकर देवोंमें उत्पन्न हुआ । उसके एक प्रकृतिके प्रवेशकका जघन्य काल एक समय प्राप्त हुआ । अथवा उपशान्तकषाय जीव उतरते हुए सूक्ष्मसाम्पराय होकर एक समय तक एक प्रकृतिका प्रवेशक हुआ और दूसरे समयमें मर कर देवोंमें उत्पन्न हुआ । उसके एक प्रकृतिके प्रवेशकका एक समय काल प्राप्त हो गया ।

§ १०५. अब दो प्रकृतियोंके प्रवेशकका काल कहते हैं । वह कैसे ? उपशमश्रेणिमें अनि-वृत्तिकरणके प्रथम समयमें दो प्रकृतियोंका प्रवेशक होकर और दूसरे समयमें मर कर देवोंमें उत्पन्न हुए जीवके दो प्रकृतियोंके प्रवेशकका जघन्य काल एक समय प्राप्त हुआ । अथवा उप-शमश्रेणिसे उतरनेवाला जीव अनिवृत्तिकरणमें वेदका अपकर्षण कर एक समय तक दो प्रकृतियोंका प्रवेशक हुआ और दूसरे समयमें मर कर देवोंमें उत्पन्न हुआ । उसके दो प्रकृतियोंके प्रवेशकका जघन्य काल एक समय प्राप्त हुआ ।

§ १०६. अब चार प्रकृतियोंके प्रवेशकका जघन्य काल कहते हैं—उपशमश्रेणिसे उतरने-वाला उपशामक जीव अपूर्वकरणभावसे एक समय तक चार प्रकृतियोंका प्रवेशक होकर तद-नन्तर समयमें मर कर देव हो गया । अथवा स्वस्थानमें ही भय और जुगुप्साका उदीरक हो गया । उसके चार प्रकृतियोंके प्रवेशकका जघन्य काल एक समयमात्र प्राप्त हुआ । अथवा जिसने दर्शनमोहनीयका क्षय या उपशम किया है ऐसे संयत जीवके प्रथम समयमें भय और जुगुप्साके बिना चार प्रकृतियोंका प्रवेशकपना दिखलाई दिया और तदनन्तर समयमें भय और

समयमेत्तो जहण्णकालो। एवं सेसाणं पि पदाणं जहण्णकालो अणुमग्गियव्वो, तत्थ सव्वत्थ पयडिपरावत्तीए गुणपरावत्तीए मरणेण च जहासंभवमेगसमयोवलंभस्स पडिसेहाणुवलंभादो। संपहि एदेसिमुक्कस्सकालपरूवणट्ठमुत्तरसुत्तमोइण्णं—

※ उक्कस्सेणंतोमुहुत्तं।

§ १०७. तं कथं? एक्किस्से पवेसगस्स ताव उच्चदे—इत्थि-णवुंसयवेदोदएण

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

खवगसेढिमारूढस्स वेदपढमट्ठिदीए आवलियपविट्ठाए एक्किस्से पवेसगो होदि। तदो ताव एक्किस्से पवेसगो जाव सुहुमसांपराइयस्स समयाहियावलियचरिमसमयो त्ति। एसो च कालो अंतोमुहुत्तपमाणो।

§ १०८. संपहि दोण्हं पवे० वुच्चदे—पुरिसवेदोदएण सेढिमारूढो अणियट्टिकरणपढमसमयप्पहुडि दोण्हं पवेसगो होंतो गच्छइ जाव पुरिसवेदपढमट्ठिदी अणावलियपविट्ठा त्ति; तत्तो परमेक्किस्से पवेसगत्तदंसणादो। एसो च कालो [अंतोमुहुत्तपमाणो]।

§ १०९. संपहि चदुण्हं पवेसग० वुच्चदे—अपुव्वकरणपविट्ठम्मि खीणोवसंतदंसणमोहणीयपमत्तापमत्तसंजदेसु च भय-दुगुंछाणमुदएण विणा अवट्ठाणकालो सव्वुक्कस्सो चउण्हं पवेसगस्स उक्कस्सकालो होइ। सो पुण अंतोमुहुत्तमेत्तो। एवं पंचण्हं छण्हं

जुगुप्साके प्रविष्ट हो जाने पर विवक्षित पदका जघन्य काल एक समयमात्र प्राप्त हो गया। इसी प्रकार शेष पदोंका भी जघन्य काल विचारकर जान लेना चाहिए, क्योंकि उन सब पदोंमें प्रकृतिके परावर्तन, गुणस्थानके परावर्तन और मरणके द्वारा यथासम्भव एक समय कालके उपलब्ध होनेमें प्रतिषेध नहीं है। अब इनके उत्कृष्ट कालका कथन करनेके लिए आगेका सूत्र आया है—

※ उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है।

§ १०७. वह कैसे? सर्व प्रथम एक प्रकृतिके प्रवेशकका कहते हैं—स्त्रीवेद और नपुंसकवेदके उदयसे क्षपकश्रेणि पर चढ़े हुए जीवके वेदकी प्रथम स्थितिके उदयावलिके भीतर प्रविष्ट होने पर वह एक प्रकृतिका प्रवेशक होता है। उसके बाद वह सूक्ष्मसाम्परायके एक समय अधिक आवलिके अन्तिम समयके शेष रहने तक एक प्रकृतिका प्रवेशक रहता है और यह काल अन्तर्मुहूर्तप्रमाण है।

§ १०८. अब दो प्रकृतियोंके प्रवेशकका कहते हैं—पुरुषवेदके उदयसे श्रेणिपर चढ़ा हुआ जीव अनिवृत्तिकरणके प्रथम समयसे लेकर दो प्रकृतियोंका प्रवेशक होकर पुरुषवेदकी प्रथम स्थितिके उदयावलिमें प्रविष्ट होनेके पूर्व तक दो प्रकृतियोंका प्रवेशक रहा, क्योंकि उसके बाद एक प्रकृतिका प्रवेशक देखा जाता है और यह काल अन्तर्मुहूर्तप्रमाण है।

§ १०९. अब चार प्रकृतियोंके प्रवेशकका काल कहते हैं—जो जीव अपूर्वकरणमें प्रविष्ट हुआ है ऐसे जीवके तथा जिन्होंने दर्शनमोहनीयका क्षय या उपशम किया है ऐसे प्रमत्तसंयत और अप्रमत्तसंयत जीवोंके भय और जुगुप्साके बिना जो सर्वोत्कृष्ट अवस्थानकाल है वह चार प्रकृतियोंके प्रवेशकका उत्कृष्ट काल है जो कि अन्तर्मुहूर्तप्रमाण है। इसीप्रकार पाँच, छह,

सत्तण्हं अट्ठण्हं च पवेसगस्स उक्कस्सकालाणुगमो कायव्वो, भय-दुगुंछाणुदयकालं मोत्तूणण्णस्स मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज एदेसिमुक्कस्सकालस्साणुवलंभादो। एवं चेव णवण्हं दसण्हं पि उक्कस्सकालो अणुगंतव्वो। णवरि भय-दुगुंछाणमण्णदरस्साणुदयकालो णवण्हं कायव्वो। दोण्हं पि उदयकालो दसण्हमणुगंतव्वो त्ति। एवमोघेण कालाणुगमो समत्तो। आदेसेण मणुसतिए ओघभंगो। सेससव्वगईसु अप्पप्पणो पदाणं जह० एयसमओ, उक्क० अंतोमु०। एवं जाव०।

❀ एगजीवेण अंतरं।

§ ११०. एत्तो एगजीवविसयमंतरं वत्तइस्सामो त्ति अहियारपरामरसवक्कमेदं।

❀ **एक्किस्से दोण्हं चदुण्हं पयडीणं पवेसगंतरं केवचिरं कालादो होदि।**

§ १११. सुगमं

❀ **जहण्णेण अंतोमुहुत्तं।**

§ ११२. तं जहा—एक्किस्से ताव उच्चदे—सुहुमसांपराइयो एक्किस्से पवेसगो लोहसंजलणपढमट्ठिदीए आवलियपविट्ठाए अपवेसगो होदूणंतरिदो तदो उवसंतद्धं बोलाविय परिवदमाणओ सुहुमसांपराइयपढमसमए एक्किस्से पवेसगो जादो। लद्धमेक्किस्से पवेसगस्स जहण्णंतरमंतोमुहुत्तमेत्तं। एवं दोण्हं पवेसगस्स वि वत्तव्वं।

सात और आठ प्रकृतियोंके प्रवेशकके उत्कृष्ट कालका अनुगम करना चाहिए, क्योंकि भय और जुगुप्साके उदयकालको छोड़कर अन्यके इनका उत्कृष्ट काल नहीं उपलब्ध होता। तथा इसीप्रकार नौ और दस प्रकृतियोंके प्रवेशकका उत्कृष्ट काल जान लेना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि भय और जुगुप्सामेंसे अन्यतरका जो अनुदयकाल है वह नौ प्रकृतियोंके प्रवेशकका उत्कृष्ट काल करना चाहिए और दोनों प्रकृतियोंका जो उदय काल है वह दस प्रकृतियोंके प्रवेशकका जानना चाहिए। इसप्रकार ओघसे कालानुगम समाप्त हुआ। आदेशसे मनुष्यत्रिकमें ओघके सामान भंग है। शेष सब मार्गणाओंमें अपने-अपने पदोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

❀ एक जीवकी अपेक्षा अन्तर।

§ ११०. आगे एक जीव विषयक अन्तरको बतलाते हैं। इसप्रकार अधिकारका परामर्श करनेवाला यह वचन है।

❀ **एक, दो और चार प्रकृतियोंके प्रवेशकका अन्तरकाल कितना है?**

§ १११. यह सूत्र सुगम है।

❀ **जघन्य अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त है।**

§ ११२. यथा—सर्वप्रथम एक प्रकृतिका अन्तर कहते हैं—एक प्रकृतिका प्रवेशक एक सूक्ष्मसाम्परायिक जीव लोभसंज्वलनकी प्रथम स्थितिके उदयावलिमें प्रविष्ट होने पर उसका अप्रवेशक होकर अन्तर किया। उसके बाद उपशान्तकषाय गुणस्थानके कालको बिता कर गिरते समय वह पुनः सूक्ष्मसाम्परायके प्रथम समयमें एक प्रकृतिका प्रवेशक हो गया। इसप्रकार एक प्रकृतिके प्रवेशकका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त प्राप्त हो गया। इसीप्रकार दो प्रकृतियोंके

णवरि एक्किस्से पवेसगकालो अपवेसगकालो च तदंतरं होदूण पुणो ओदरमाणेण जम्मि वेदो ओकड्डिदो तम्मि अंतरसमत्ती होदि। एवं चउण्हं पवेसगस्स वि। णवरि दोण्हं पवेसगकालो एक्किस्से पवेसगकालो अपवेसगकालो च तदंतरं होदूण पुणो ओदरमाणापुव्वकरणपढमसमए भय-दुगुंछाओ अणुदीरेमाणस्स पयदंतरपरिसमत्ती होदि त्ति वत्तव्वं। अथवा खीणोवसंतदंसणमोहपमत्तापमत्तापुव्वकरणाणमण्णदरगुणट्ठाणे भय-दुगुंछाहि विणा चत्तारि उदीरेमाणस्स भय-दुगुंछाणमण्णदरपवेसेणंतरिदस्स पुणो तदुदयवोच्छेदेण लद्धमंतरं कायव्वं।

❀ उक्कस्सेण उवड्ढपोग्गलपरियट्टं।

§ ११३. कुदो ? अद्धपोग्गलपरियट्टादिसमए पढमसम्मत्तं घेत्तूण सव्वलहुमुव-समसेढिमारुहिय हेट्ठा ओदरमाणो अप्पप्पणो ट्ठाणे आदिं कादूणंतरिय देसूणद्धपोग्गल-परियट्टमेत्तकालं परिभमिय थोवावसेसे संसारे पुणो वि सम्मत्तमुप्पाइय खवगसेढि-मारोहणेण पडिलद्धतब्भावम्मि तदुवलद्धीदो।

❀ पंचण्हं छण्हं सत्तण्हं पयडीणं पवेसगंतरं केवचिरं कालादो होइ ?

§ ११४. सुगमं।

प्रवेशकका भी जघन्य अन्तर कहना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि एक प्रकृतिके प्रवे-शकका काल और अप्रवेशकका काल उसका अन्तर होकर पुनः उतरते हुए जहाँ वेदका अपकर्षण करता है वहाँ जाकर उसके अन्तरकी समाप्ति होती है। इसीप्रकार चार प्रकृतियोंके प्रवेशकका भी जघन्य अन्तर कहना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि दो प्रकृतियोंके प्रवेशकका काल एक प्रकृतिके प्रवेशकका काल और अप्रवेशकका काल उसका अन्तर होकर पुनः उतरते हुए अपूर्व-करणके प्रथम समयमें भय और जुगुप्साकी उदीरणा नहीं करनेवाले जीवके प्रकृत पदके अन्तरकी परिसमाप्ति होती है ऐसा यहाँ कहना चाहिए। अथवा जिसने दर्शनमोहनीयका क्षय या उपशम किया है ऐसे जीवके प्रमत्तसंयत, अप्रमत्तसंयत और अपूर्वकरण गुणस्थानोंमेंसे किसी एक गुणस्थानमें भय और जुगुप्साके बिना चार प्रकृतियोंकी उदीरणा करनेवाले जीवके भय और जुगुप्सामेंसे किसी एक प्रकृतिके प्रवेश द्वारा अन्तर कराकर पुनः उन दोनों प्रकृतियोंकी उदय-व्युच्छित्तिके द्वारा अन्तरको समाप्तकर उसका अन्तर प्राप्त करना चाहिए।

❀ उत्कृष्ट अन्तर उपार्धपुद्गलपरिवर्तनप्रमाण है।

§ ११३. क्योंकि अर्धपुद्गलपरिवर्तनकालके प्रथम समयमें प्रथम सम्यक्त्वको ग्रहण कर और अतिशीघ्र उपशमश्रेणिपर आरोहणकर नीचे उतरते हुए अपने-अपने स्थानमें उक्त पदोंका प्रारम्भ कर तथा उसके बाद उनका अन्तरकर कुछ कम अर्धपुद्गलपरिवर्तन कालतक परिभ्रमण कर संसारमें रहनेका कुछ काल शेष रहने पर फिर भी सम्यक्त्वको उत्पन्न कर क्षपकश्रेणि पर आरोहण करनेसे उस उस पदके प्राप्त होनेपर उक्त पदोंका अन्तरकाल प्राप्त हो जाता है।

❀ पाँच, छह और सात प्रकृतियोंके प्रवेशकका अन्तरकाल कितना है ?

§ ११४. यह सूत्र सुगम है।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

* जहण्णेण एयसमओ।

§ ११५. पंचण्हं पवेसगस्स ताव वुच्चदे। तं जहा—खइयसम्माइट्ठी उवसमसम्माइट्ठी वा संजदो भएण सह पंच उदीरेमाणो ट्ठिदो, तस्स भयकालो एगसमओ अत्थि त्ति दुगुंछाए पवेसगो जादो। तत्थ छण्हमुदीरणट्ठाणेणेकसमयमंतरिय विदियसमए भयवोच्छेदेण पुणो वि पंचण्हं पवेसगो जादो। लद्धमंतरं जहण्णदो एयसमयमेत्तं। अथवा एसो चेव पंचमे पवेसगो संजदो भयवोच्छेदेणेगसमयं चउण्हं पवेसगो होदूणंतरिय पुणो विदियसमए दुगुंछापवेसेण पंचण्हं पवेसगो जादो। लद्धमेगसमयमेत्तं जहण्णंतरं।

§ ११६. संपहि छण्हं पवे० वुच्चदे—छण्हमुदीरगो होदूण ट्ठिदवेदगसम्माइट्ठी संजदस्स भयवोच्छेदेणेगसमयमंतरिदस्स पुणो वि से काले दुगुंछोदएण परिणदस्स लद्धमंतरं होइ। अथवा तस्सेव छप्पवेसगस्स भयकालो एगसमयो अत्थि त्ति दुगुंछागमेणंतरिदस्स से काले भयवोच्छेदेण लद्धमंतरं कायव्वं। उवसम-खइयसम्माइट्ठिसंजदासंजदस्स वि एवं चेव दोहि पयारेहि जहण्णंतरमेदं वत्तव्वं।

§ ११७. संपहि सत्तण्हं पवेसग० उच्चदे—वेदगसम्माइट्ठिसंजदासंजदस्स ताव

* जघन्य अन्तर एक समय है।

§ ११५. सर्वप्रथम पाँच प्रकृतियोंके प्रवेशकका अन्तरकाल कहते हैं। यथा—क्षायिकसम्यग्दृष्टि या उपशमसम्यग्दृष्टि जो संयत जीव भयके साथ पाँच प्रकृतियोंकी उदीरणा करता हुआ स्थित है उसके भयकी उदीरणाका एक समय काल शेष रहा कि वह जुगुप्साका प्रवेशक हो गया। वहाँ छह प्रकृतिक उदीरणास्थानके द्वारा एक समय तक उसका अन्तर करके दूसरे समयमें भयकी उदयव्युच्छित्तिके द्वारा फिरसे पाँच प्रकृतियोंका प्रवेशक हो गया। इस प्रकार पाँच प्रकृतियोंके प्रवेशकका जघन्य अन्तर एक समयमात्र प्राप्त हो गया। अथवा यही पाँच प्रकृतियोंका प्रवेशक संयत जीव भयकी उदयव्युच्छित्तिद्वारा एक समय तक चार प्रकृतियोंका प्रवेशक होकर उस द्वारा उसका अन्तर करके पुनः दूसरे समयमें जुगुप्साके प्रवेशद्वारा पाँच प्रकृतियोंका प्रवेशक हो गया। इस प्रकार पाँच प्रकृतियोंके प्रवेशकका जघन्य अन्तर एक समय प्राप्त हो गया।

§ ११६. अब छह प्रकृतियोंके प्रवेशकका अन्तरकाल कहते हैं—छह प्रकृतियोंकी उदीरणा करनेवाले जिस वेदकसम्यग्दृष्टि संयत जीवने भयकी व्युच्छित्ति कर एक समयके लिए उसका अन्तर किया, उसके फिरसे तदनन्तर समयमें जुगुप्साके उदयसे परिणत होनेपर छह प्रकृतियोंके प्रवेशकका एक समय जघन्य अन्तर प्राप्त होता है। अथवा छह प्रकृतियोंके प्रवेशक उसी जीवके भयका एक समय काल शेष है कि उस जीवने जुगुप्साके प्रवेशद्वारा उसका अन्तर किया तथा तदनन्तर समयमें भयकी उदयव्युच्छित्ति द्वारा वह पुनः छह प्रकृतियोंका प्रवेशक हो गया। इस प्रकार भी इसका एक समय जघन्य अन्तर प्राप्त करना चाहिए। उपशमसम्यग्दृष्टि या क्षायिकसम्यग्दृष्टि संयतासंयत जीवके भी इसीप्रकार दो प्रकारसे इस पदका यह जघन्य अन्तर कहना चाहिए।

§ ११७. अब सात प्रकृतियोंके प्रवेशकका अन्तरकाल कहते हैं—वेदकसम्यग्दृष्टि संयता-

...हं भणिदविहाणेण पयदजहण्णंतराणुगमो कायव्वो। अथवा खीणोवसंतदंसण-मोहणीयस्स असंजदसम्माइट्ठिस्स सत्तण्हं जहण्णंतरं भय-दुगुंछाओ अस्सिऊण पुव्वुत्तेणेव विहाणेणाणुगंतव्वं।

❀ उक्कस्सेण उवड्ढपोग्गलपरियट्टं।

§ ११८. कुदो ? अद्धपोग्गलपरियट्टादिसमए पढमसम्मत्तग्गहणपुव्वं तिण्हमेदेसिं ठाणाणं जहासंभवमप्पणो विसए उक्कस्संतराविरोहेणादिं कादूणंतरिय मिच्छत्तं गंतूण देसूणमद्धपोग्गलपरियट्टं परियट्टिदूण थोवावसेसे संसारे पुणो वि सम्मत्तपडिलंभेण पडिवण्णतब्भावम्मि तदुवलंभादो।

❀ अट्ठण्हं णवण्हं पयडीणं पवेसगंतरं केवचिरं कालादो होदि।

§ ११९. सुगमं

❀ जहण्णेण एयसमओ।

§ १२०. तं कधं ? असंजदो वेदगसम्माइट्ठी अट्ठण्हं पवेसगो भयकालो एगसमयो अत्थि त्ति दुगुंछोदएण परिणदो तत्थेगसमयमंतरिय पुणो वि तदणंतरसमए भयवोच्छेदेणट्ठण्हं पवेसगो जादो। लद्धमंतरं। अथवा एसो चेव भयवोच्छेदेणेगसमयं सत्तपवेसगो होदूणंतरिय से काले दुगुंछोदएण लद्धमंतरं करेदि त्ति वत्तव्वं। एवं

संयत जीवके जिसप्रकार छह प्रकृतियोंके प्रवेशकका जघन्य अन्तर कहा है उसीप्रकार प्रकृत पदके जघन्य अन्तरका अनुगम करना चाहिए। अथवा जिसने दर्शनमोहनीय कर्मका क्षय या उपशम किया है ऐसे असंयतसम्यग्दृष्टि जीवके सात प्रकृतियोंके प्रवेशकका जघन्य अन्तर भय और जुगुप्साका आश्रयकर पूर्वोक्त विधिसे ही जानना चाहिए।

✽ उत्कृष्ट अन्तर उपार्धपुद्गलपरिवर्तनप्रमाण है।

§ ११८. क्योंकि अर्धपुद्गलपरिवर्तनप्रमाण कालके प्रथम समयमें प्रथम सम्यक्त्वके ग्रहण-पूर्वक इन तीन स्थानोंका यथासम्भव अपने विषयमें उत्कृष्ट अन्तरके अविरोधरूपसे प्रारम्भ करके और अन्तर करके अनन्तर मिथ्यात्वमें जाकर कुछ कम अर्धपुद्गलपरिवर्तन कालतक परिवर्तन करके संसारके स्तोक शेष रहने पर पुनः सम्यक्त्वकी प्राप्तिके साथ उन स्थानोंके प्राप्त होने पर उनका अन्तर उपलब्ध होता है।

✽ आठ और नौ प्रकृतियोंके प्रवेशकका अन्तर कितना है।

§ ११९. यह सूत्र सुगम है।

✽ जघन्य अन्तर एक समय है।

§ १२०. वह कैसे ? कोई एक आठ प्रकृतियोंका प्रवेशक असंयत वेदकसम्यग्दृष्टि जीव भयकी उदीरणामें एक समय काल बचा है कि वह जुगुप्साके उदयसे परिणत होगया और वहाँ एक समय तक उसका अन्तर करके फिरसे तदन्तर समयमें भयकी उदयव्युच्छित्ति करके आठ प्रकृतियोंका प्रवेशक हो गया। इसप्रकार आठ प्रकृतियोंके प्रवेशकका एक समय अन्तर प्राप्त हुआ। अथवा यह जीव भयकी उदयव्युच्छित्ति करके एक समय तक सात प्रकृतियोंका

चेव सम्मामि०-सासणसम्माइट्ठीसु वि अट्ठण्हं जहण्णंतरं जाणिय जोजेयव्वं । संपहि णवण्हं मिच्छाइट्ठिम्हि एवं चेव भय-दुगुंछावलंबणेण जहण्णंतरमेदमणुगंतव्वं ।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

※ उक्कस्सेण पुव्वकोडी देसूणा ।

§ १२१. तं जहा—एक्को मणुस्सो वेदगसम्माइट्ठी गब्भादिअट्ठवस्साणमुवरि अट्ठण्हमादिं कादूण णवपवेसगो होदूणंतरिदो । तदो विसोहिं पूरिय संजमं घेत्तूण पुव्वकोडिं सव्वमंतरिय कमेण कालं कादूण देवेसुववण्णो तस्स अंतोमुहुत्ते वोलीणे भय-दुगुंछाणमण्णदरमुदीरमाणस्स लद्धमंतरं होइ । एवमंतोमुहुत्तब्भहियअट्ठवस्सेहिं ऊणिया पुव्वकोडी अट्ठण्हं पवे० उक्कस्संतरं होइ । संपहि णवण्हं पवेसगस्स भण्णमाणे अट्ठावीससंतकम्मियमिच्छाइट्ठिस्स पुव्वकोडाउअसम्मुच्छिमतिरिक्खेसुप्पज्जिय छहिं पज्जत्तीहिं पज्जत्तयदभावेण विस्संतस्स तत्थेव णवण्हमादिं कादूणंतरिदस्स सव्वविसुद्धीए पडिवण्णसम्मत्तसहिदसंजमासंजमस्स देसूणपुव्वकोडिमंतरिय भवावसाणे देवेसुप्पण्णस्स अंतोमुहुत्ते गदे लद्धमंतरं होइ त्ति वत्तव्वं ।

※ दसण्हं पयडीणं पवेसगस्स अंतरं केवचिरं कालादो होदि ?

प्रवेशक होकर और उसका अन्तर करके अनन्तर समयमें जुगुप्साके उदयसे अन्तरको प्राप्त करता है ऐसा कहना चाहिए। इसीप्रकार सम्यग्मिथ्यादृष्टि और सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंमें भी आठ प्रकृतियोंके प्रवेशकका जघन्य अन्तर जानकर उसकी योजना करनी चाहिए। तथा नौ प्रकृतियोंके प्रवेशकका मिथ्यादृष्टि गुणस्थानमें इसीप्रकार भय और जुगुप्साके अवलम्बनसे यह जघन्य अन्तर जान लेना चाहिए।

※ उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम एक पूर्वकोटि है ।

§ १२१. यथा—एक मनुष्य वेदकसम्यग्दृष्टि जीवने गर्भसे लेकर आठ वर्षके बाद आठ प्रकृतियोंकी उदीरणाका प्रारम्भ करके अनन्तर नौ प्रकृतियोंका प्रवेशक होकर उसका अन्तर किया। अनन्तर विशुद्धिको पूर्ण करके और संयमको ग्रहण कर पूरे पूर्वकोटि कालका अन्तर देकर क्रमसे वह मरा और देव हो गया। फिर उसके अन्तर्मुहूर्त काल जाने पर भय और जुगुप्सा इनमेंसे किसी एककी उदीरणा करने पर आठ प्रकृतियोंके प्रवेशकका अन्तर प्राप्त हो जाता है। इसप्रकार अन्तर्मुहूर्त अधिक आठ वर्ष कम एक पूर्वकोटिप्रमाण आठ प्रकृतियोंके प्रवेशकका उत्कृष्ट अन्तर होता है। अब नौ प्रकृतियोंके प्रवेशकका उत्कृष्ट अन्तर कहने पर जो अट्ठाईस प्रकृतियोंकी सत्तावाला मिथ्यादृष्टि जीव पूर्वकोटिकी आयुवाले सम्मूर्च्छिम तिर्यञ्चोंमें उत्पन्न हुआ और जिसने छह पर्याप्तियोंसे पर्याप्त होकर उसरूपसे विश्राम किया। पुनः वहीं पर नौ प्रकृतियोंके प्रवेशका प्रारम्भ करके अन्तर किया। फिर सर्वविशुद्धिके साथ सम्यक्त्वसहित संयमासंयमको प्राप्त कर कुछ कम एक पूर्वकोटिकालका अन्तर देकर भवके अन्तमें देवोंमें उत्पन्न हुआ। उसके वहाँ पर अन्तर्मुहूर्त काल जाने पर उक्त पदका अन्तर प्राप्त हो जाता है ऐसा यहाँ पर कहना चाहिए।

※ दस प्रकृतियोंके प्रवेशकका अन्तरकाल कितना है ?

§ १२२. सुगममेदं पुच्छासुत्तं ।

* जहण्णेण अंतोमुहुत्तं ।

§ १२३. कुदो ? दसण्हमुदीरगस्स भयवोच्छेदेण सव्वजहण्णमंतोमुहुत्तमणप्पिदपदेणंतरिदस्स तदुवलंभादो ।

* उक्कस्सेण वेछावट्ठिसागरोवमाणि सादिरेयाणि ।

§ १२४. तं जहा—एक्को मिच्छाइट्ठी दसण्हं पवेसगो अणप्पिदपदेणंतोमुहुत्तमंतरिय तदो सम्मत्तं घेत्तूण वेछावट्ठिसागरोवमाणि परिभमिय पुणो मिच्छत्तं गंतूणंतोमुहुत्तेण दसण्हं पवेसगो जादो । तस्स लद्धमंतरं होइ । एवमोघेण सव्वेसिमुदीरणाट्ठाणाणमंतरपरूवणा कया ।

§ १२५. संपहि आदेसपरूवणट्ठमुच्चारणाणुगममेत्थ वत्तइस्सामो । तं जहा—अंतराणुगमेण दुविहो णिद्देसो—ओघेण आदेसेण य । ओघेण दसण्हमुदीर० जह० अंतोमु०, उक्क० वेछावट्ठिसागरोवमाणि देसूणाणि । णव० अट्ठ० जह० एयसमओ, उक्क० पुव्वकोडी देसूणा । सत्त-छ-पंच० जह० एयसमओ, उक्क० उवड्ढपोग्गलपरियट्टं । चदुण्हं दोण्हमेक्किस्से उदीर० जह० अंतोमु०, उक्क० उवड्ढपोग्गलपरियट्टं ।

§ १२६. आदेसेण णेरइय० दस० छण्हं जह० अंतोमुहुत्तं, सत्त० जह०

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

§ १२२. यह पृच्छासूत्र सुगम है ।

* जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है ।

§ १२३. क्योंकि जो दस प्रकृतियोंका उदीरक जीव भय की व्युच्छित्तिके साथ सबसे जघन्य अन्तर्मुहूर्त कालतक अनर्पित पदके द्वारा उसका अन्तर करता है उसके उक्त पदका उक्त अन्तरकाल उपलब्ध होता है ।

* उत्कृष्ट अन्तर साधिक दो छयासठ सागरप्रमाण है ।

§ १२४. यथा—किसी एक दस प्रकृतियोंके प्रवेशक मिथ्यादृष्टि जीवने अनर्पित पदके द्वारा अन्तर्मुहूर्त कालतक उसका अन्तर किया । फिर सम्यक्त्वको ग्रहण कर और दो छयासठ सागर कालतक परिभ्रमणकर पुनः मिथ्यात्वमें जाकर अन्तर्मुहूर्तमें जो दस प्रकृतियोंका प्रवेशक हो गया उसके उक्त कालप्रमाण उत्कृष्ट अन्तर प्राप्त होता है । इसप्रकार ओघसे सब उदीरणास्थानोंके अन्तरकी प्ररूपणा की ।

§ १२५. अब आदेशका कथन करनेके लिए यहाँ पर उच्चारणाका अनुगम करके बतलाते हैं । यथा—अन्तरानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे दस प्रकृतियोंके उदीरकका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम दो छयासठ सागर है । नौ और आठ प्रकृतियोंके प्रवेशकका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम एक पूर्वकोटि है । सात, छह और पाँच प्रकृतियोंके उदीरकका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर उपार्धपुद्गलपरिवर्तनप्रमाण है । चार, दो और एक प्रकृतिके उदीरकका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर उपार्धपुद्गलपरिवर्तनप्रमाण है ।

§ १२६ आदेशसे नारकियोंमें दस और छह प्रकृतियोंके उदीरकका जघन्य अन्तर

एयस०, उक० सव्वेसिं तेत्तीसं सागरोवमाणि देसूणाणि। णव० अट्ठ० जह० एयस०, उक० अंतोमु०। एवं सव्वणेरइय०। णवरि सगट्ठिदी देसूणा।

§ १२७. तिरिक्खेसु दसण्हं जह० अंतोमु०, उक० तिण्णि पलिदोवमाणि देसूणाणि। णव० जह० एयस०, उक० पुव्वकोडी देसूणा। अट्ठ० जह० एयस०,

अन्तर्मुहूर्त है, सात प्रकृतियोंके उदीरकका जघन्य अन्तर एक समय है और सबका उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तेतीस सागर है। नौ और आठ प्रकृतियोंके उदीरकका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। इसीप्रकार सब नारकियोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि अपनी अपनी स्थिति कहनी चाहिए।

विशेषार्थ—ओघसे दस, नौ, आठ और सात प्रकृतियोंके उदीरकका जो जघन्य अन्तरकाल घटित करके बतला आये हैं उसी प्रकार यहाँ भी वह घटित कर लेना चाहिए। उससे इसमें कोई विशेषता नहीं है, इसलिए यहाँ पर उसका अलगसे खुलासा नहीं किया है। रह गया मात्र छह प्रकृतियोंके प्रवेशकके जघन्य अन्तर कालका खुलासा, सो जो उपशमसम्यग्दृष्टि या क्षायिकसम्यग्दृष्टि जीव भय और जुगुप्साका अनुदीरक होकर छह प्रकृतियोंका उदीरक होता है वह भय और जुगुप्साकी उदीरणा द्वारा इसका अन्तर करके पुनः कमसे कम अन्तर्मुहूर्तके बाद ही उनका अनुदीरक होकर इस स्थानको प्राप्त कर सकता है। यही कारण है कि नारकियोंमें छह प्रकृतियोंके उदीरकका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त कहा है। यह तो सब पदोंके जघन्य अन्तरकालका विचार है। उत्कृष्ट अन्तरकालका खुलासा इस प्रकार है—जो नारकी भवके प्रारम्भमें और अन्तमें दस प्रकृतियोंका उदीरक होकर मध्यमें कुछ कम तेतीस सागर कालतक सम्यग्दृष्टि हो दस प्रकृतियोंका अनुदीरक बना रहता है उसके दस प्रकृतियोंके उदीरकका उत्कृष्ट अन्तरकाल कुछ कम तेतीस सागर प्राप्त होनेसे तत्प्रमाण कहा है तथा जो नारकी जीव भवके प्रारम्भमें और अन्तमें सम्यग्दृष्टि होकर सात और छह प्रकृतियोंका उदीरक होता है और मध्यमें कुछ कम तेतीस सागर काल तक मिथ्यादृष्टि बना रहता है उसके छह और सात प्रकृतियोंके उदीरकका उत्कृष्ट अन्तरकाल कुछ कम तेतीस सागर प्राप्त होनेसे तत्प्रमाण कहा है। अब रहा नौ और आठ प्रकृतियोंके उदीरकके उत्कृष्ट अन्तरकालका विचार सो इनका उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्तसे अधिक नहीं प्राप्त हो सकता, क्योंकि जो मिथ्यादृष्टि या वेदकसम्यग्दृष्टि नारकी है उसके आठ और नौ प्रकृतियोंके उदीरकका उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्तसे अधिक नहीं प्राप्त होता और जो उपशमसम्यग्दृष्टि है उसका उसके साथ रहनेका काल ही अन्तर्मुहूर्त है, इसलिए नारकियोंमें नौ और आठ प्रकृतियोंके उदीरकका उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त कहा है। यह ओघ प्ररूपणा है जो सातवें नरकमें अविकल बन जाती है, इसलिए इस प्ररूपणाको तो सातवें नरकमें इसी प्रकार जानना चाहिए। मात्र अन्य नरकोंमें जघन्य अन्तर तो ओघ प्ररूपणाके समान प्राप्त होनेमें कोई बाधा नहीं है। हाँ दस, सात और छह प्रकृतियोंके उदीरकका उत्कृष्ट अन्तर ओघके समान नहीं बनता। सो उसका कारण केवल उस उस नरककी भवस्थिति है जिसकी सूचना मूलमें की ही है।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

§ १२७. तिर्यञ्चोंमें दस प्रकृतियोंके उदीरकका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तीन पल्य है। नौ प्रकृतियोंके उदीरकका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम एक पूर्वकोटि है। आठ प्रकृतियोंके उदीरकका जघन्य अन्तर एक समय

जह० अंतोमु० । सत्त० छण्हं जह० एयस०, पंच० जह० अंतोमु०, उक्क० सव्वेसि-मद्धपोग्गलपरियट्टं ।

§ १२८. पंचिंदियतिरिक्खतिए दस० णव० अट्ठ० तिरिक्खोघं । सत्त० छ० जह० एयस०, उक्क० तिण्णि पलिदो० पुव्वकोडिपुधत्तेणब्भहियाणि । पंच० जह० उक्क० अंतोमु० ।

है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है । सात और छह प्रकृतियोंके उदीरकका जघन्य अन्तर एक समय है, पाँच प्रकृतियोंके उदीरकका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और सबका उत्कृष्ट अन्तर उपार्धपुद्गलपरिवर्तनप्रमाण है ।

विशेषार्थ—तिर्यञ्चोंमें सम्यग्दृष्टिका उत्कृष्ट काल कुछ कम तीन पल्य प्राप्त होनेसे इनमें दस प्रकृतियोंके उदीरकका उत्कृष्ट अन्तर उक्त काल प्रमाण कहा है । इनमें संयमासंयमका उत्कृष्ट काल कुछ कम एक पूर्वकोटि होनेसे नौ प्रकृतियोंके उदीरकका उत्कृष्ट अन्तरकाल उक्त कालप्रमाण कहा है, क्योंकि संयमासंयम जीवके नौ प्रकृतियोंकी उदीरणा सम्भव नहीं है । किन्तु तिर्यञ्चोंमें आठ प्रकृतियोंकी उदीरणाका उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्तसे अधिक नहीं बन सकता यह स्पष्ट ही है, इसलिए इनमें उक्त प्रकृतियोंके उदीरकका उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त कहा है । यह सम्भव है कि कोई तिर्यञ्च उपार्ध पुद्गलपरिवर्तन कालके प्रारम्भमें और अन्तमें सात, छह और पाँच प्रकृतियोंकी उदीरणा करे और मध्यके कालमें मिथ्यादृष्टि बना रहकर इनका अनुदीरक रहे यह भी सम्भव है, इसलिए इनके तीन स्थानोंके उदीरकका उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम उपार्ध पुद्गल परिवर्तन प्रमाण कहा है । यहाँ पर दस आदि अन्य सब स्थानोंके उदीरकका जो जघन्य अन्तर बतलाया है वह ओघके समान होनेसे उसका ओघप्ररूपणामें खुलासा कर ही आये हैं, इसलिए इसे वहाँसे जान लेना चाहिए । मात्र तिर्यञ्चोंमें पाँच प्रकृतियोंका उदीरक ऐसा उपशमसम्यग्दृष्टि संयमासंयम-गुणस्थानवाला जीव ही हो सकता है जो भय और जुगुप्साकी उदीरणा नहीं कर रहा है । चूँकि इस जीवको भय या जुगुप्साका उदीरक होकर तदनन्तर पुनः पाँच प्रकृतियोंका उदीरक होने के लिए कमसे कम अन्तर्मुहूर्त काल लगता है । यही कारण है कि यहाँ पर पाँच प्रकृतियोंके उदीरकका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त कहा है ।

§ १२८. पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकमें दस, नौ और आठ प्रकृतियोंके उदीरकका भंग सामान्य तिर्यञ्चोंके समान है । सात और छह प्रकृतियोंके उदीरकका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर पूर्वकोटिपृथक्त्व अधिक तीन पल्य है । पाँच प्रकृतियोंके उदीरकका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है ।

विशेषार्थ—पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिककी उत्कृष्ट कायस्थिति पूर्वकोटिपृथक्त्व अधिक तीन पल्य बतलाई है, इसलिये यहाँ पर सात और छह प्रकृतियोंके उदीरकका उत्कृष्ट अन्तर उक्त कालप्रमाण बन जानेसे वह तत्प्रमाण कहा है । तथा उक्त तीन प्रकारके तिर्यञ्चोंमें अपनी अपनी पर्यायके रहते हुए पाँच प्रकृतियोंके उदीरकका अन्तर उपशमसम्यक्त्व सहित संयमा-संयमके कालको ध्यानमें रखकर प्राप्त किया जा सकता है और उक्त तीनों प्रकारके तिर्यञ्चोंमेंसे किसी एक तिर्यञ्चकी कायस्थितिके भीतर दो बार उपशमसम्यक्त्वका प्राप्त होना सम्भव नहीं है, इसलिए यहाँ पर उक्त तिर्यञ्चोंमें पाँच प्रकृतियोंके उदीरकका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त कहा है । शेष कथन सुगम है ।

§ १२९. पंचि०तिरिक्खअपज्ज०-मणुसअपज्ज० दस० अट्ठ० जह० उक्क० अंतोमु० । णव० जह० एयस०, उक्क० अंतोमु० ।

§ १३०. मणुसतिए दसण्हं जह० अंतोमु०, उक्क० तिण्णि पलिदो० देसूणाणि । णव० अट्ठ० जह० एयस०, उक्क० पुव्वकोडी देसूणा । सत्त० छ० जह० एयस०, उक्क० तिण्णि पलिदो० पुव्वकोडिपुधत्तेणब्भहियाणि । पंच० जह० एयस०, उक्क० पुव्वकोडिपुध० । चदुण्हं दोण्हमेक्किस्से० जह० अंतोमु०, उक्क० पुव्वकोडिपुध० ।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

§ १२९. पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तक और मनुष्य अपर्याप्तक जीवोंमें दस और आठ प्रकृतियोंके उदीरक जीवका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। नौ प्रकृतियोंके उदीरक जीवका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है।

विशेषार्थ—दस प्रकृतियोंके उदीरक उक्त जीवोंको उनके अनुदीरक होकर पुनः उदीरक होनेमें अन्तर्मुहूर्त काल लगता है। यही नियम आठ प्रकृतियोंके उदीरकोंके विषयमें भी जान लेना चाहिए, इसलिए तो इन दोनों प्रकारके जीवोंमें दस और आठ प्रकृतियोंके उदीरकका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त कहा है। पर नौ प्रकृतियोंके उदीरकोंके लिए ऐसी बात नहीं है, क्योंकि भयके साथ जो नौ प्रकृतियोंकी उदीरणा कर रहा है उसके भयकी उदयव्युच्छित्ति होने पर एक समयके अन्तरसे जुगुप्साकी उदीरणा होने लगे यह सम्भव है, इसलिए तो यहाँ पर नौ प्रकृतियोंके उदीरकका जघन्य अन्तर एक समय कहा है और भयके साथ नौ प्रकृतियोंका उदीरक उक्त जीव उसकी उदयव्युच्छित्ति करके अन्तर्मुहूर्तके बाद जुगुप्साका उदीरक हो यह भी सम्भव है, इसलिए नौ प्रकृतियोंके उदीरकका उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त कहा है।

§ १३०. मनुष्यत्रिकमें दस प्रकृतियोंके उदीरकका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तीन पल्य है। नौ और आठ प्रकृतियोंके उदीरकका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम एक पूर्वकोटि है। सात और छह प्रकृतियोंके उदीरकका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर पूर्वकोटिपृथक्त्व अधिक तीन पल्य है। पाँच प्रकृतियोंके उदीरकका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर पूर्वकोटिपृथक्त्वप्रमाण है। चार, दो और एक प्रकृतिके उदीरकका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर पूर्वकोटिपृथक्त्वप्रमाण है।

विशेषार्थ—दस आदि प्रकृतियोंके उदीरकका जघन्य अन्तर जिस प्रकार ओघमें घटित करके बतला आये हैं उसीप्रकार यहाँ पर घटित कर लेना चाहिए। मात्र उत्कृष्ट अन्तर मनुष्यत्रिककी कायस्थिति और अन्य विशेषताओंको ध्यानमें रख कर घटित करना चाहिए। यथा—दस प्रकृतियोंका उदीरक मिथ्यादृष्टि ही होता है, इसलिए इन प्रकृतियोंके उदीरकका उत्कृष्ट अन्तरकाल कुछ कम तीन पल्य ही प्राप्त होगा, क्योंकि जिसने उत्तम भोगभूमिके प्रारम्भ और अन्तमें दस प्रकृतियोंकी उदीरणा की और मध्य में सम्यग्दृष्टि रह कर इनका अनुदीरक रहा उसके यह अन्तरकाल बन जाता है। युक्तिसे विचार करने पर इससे अधिक अन्तरकाल नहीं बनता, क्योंकि कृतकृत्यवेदक सम्यग्दृष्टि मनुष्यको छोड़ कर अन्य वेदकसम्यग्दृष्टि मनुष्यका मर कर मनुष्योंमें उत्पन्न होना सम्भव नहीं है और अन्यत्र मिथ्यादृष्टि रहते हुए इस पदका उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त ही प्राप्त होता है। नौ और आठ प्रकृतियोंके उदीरकका उत्कृष्ट अन्तर कुछ

§ १३१. देवेसु दस० छ० जह० अंतोमु०, सत्त० जह० एयस०, उक्क० सव्वेसि- मेक्कत्तीससागरो० देसूणाणि। णव० अट्ठ० जह० एयस०, उक्क० अंतोमु०। एवं भवणादि जाव णवगेवज्जा त्ति। णवरि सगट्ठिदी देसूणा। अणुदिसादि जाव सव्वट्ठा त्ति णव० छ० जहण्णुक्क० अंतोमु०। अट्ठ० सत्त० जह० एगस०, उक्क० अंतोमु०। एवं जाव०।

❀ णाणाजीवेहि भंगविचयो।

कम एक पूर्वकोटि ओघप्ररूपणामें घटित करके बतलाया ही है। उसीप्रकार यहाँ पर भी घटित कर लेना चाहिए। अन्य विशेषता नहीं होनेसे अलगसे खुलासा नहीं किया। सात और छह प्रकृतियोंका उदीरक कोई उपशमसम्यग्दृष्टि मनुष्य मिथ्यात्वमें गया और पूर्वकोटिपृथक्त्व अधिक तीन पल्य काल तक वह उसके साथ रहा। फिर अन्तमें उसने उपशमसम्यक्त्वपूर्वक इन पदोंको पुनः प्राप्त किया यह सम्भव है, इसलिए यहाँ पर इन दो पदोंके उदीरकका उत्कृष्ट अन्तर पूर्वकोटिपृथक्त्व अधिक तीन पल्य कहा है। पाँच प्रकृतियोंका उदीरक संयमासंयमी या संयमी ही होता है, और मनुष्य पर्यायके रहते हुए संयमासंयम या संयमका उत्कृष्ट अन्तर पूर्वकोटिपृथक्त्वसे अधिक नहीं प्राप्त होता। यही कारण है कि पाँच प्रकृतियोंके उदीरकका उत्कृष्ट अन्तर उक्त कालप्रमाण कहा है। पर इतनी विशेषता है कि संयमासंयममें उत्कृष्ट अन्तरके लिए प्रथम बार उपशम सम्यग्दर्शनके साथ संयमासंयम ग्रहण कराना चाहिए और दूसरी बार क्षायिक सम्यक्त्वके साथ संयमासंयम ग्रहण कराना चाहिए। चार, दो और एक प्रकृतिके उदीरकका उत्कृष्ट अन्तर पूर्वकोटिपृथक्त्वप्रमाण है यह स्पष्ट ही है।

§ १३१. देवोंमें दस और छह प्रकृतियोंके उदीरकका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। सात प्रकृतियोंके उदीरकका जघन्य अन्तर एक समय है और सब पदोंका उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम इकतीस सागर है। नौ और आठ प्रकृतियोंके उदीरकका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। इसीप्रकार भवनवासियोंसे लेकर नौ ग्रैवेयकतकके देवोंमें जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि कुछ कम अपनी अपनी स्थिति कहनी चाहिए। अनुदिशासे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें नौ और छह प्रकृतियोंके उदीरक जीवका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। आठ और सात प्रकृतियोंके उदीरक जीवका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

विशेषार्थ—सामान्य देवोंमें सामान्य नारकियोंके समान अन्तरकाल घटित कर लेना चाहिए। मात्र देवोंमें मिथ्यादृष्टि जीव नौवें ग्रैवेयक तक ही पाये जाते हैं और नौवें ग्रैवेयकके देवकी उत्कृष्ट आयु इकतीस सागर है। इसलिए यहाँ पर कुछ कम तेतीस सागरके स्थानमें कुछ कम इकतीस सागर कहा है। इसीप्रकार नौ ग्रैवेयक तकके देवोंमें यह अन्तरकाल बन जाता है, इसलिए उसे सामान्य देवोंके समान जाननेकी सूचना की है। मात्र इनमें दस, सात और छह प्रकृतियोंके उदीरकका उत्कृष्ट अन्तर अपनी अपनी स्थितिप्रमाण ही प्राप्त होगा, इसलिए इस विशेषताकी अलगसे सूचना की है। नौ अनुदिशादिमें सम्यग्दृष्टि ही होते हैं, इसलिए उनमें यह जानकर वहाँ सम्भव पदोंका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर कहा है। सुगम होनेसे उसका खुलासा नहीं किया है।

❀ नाना जीवोंकी अपेक्षा भंगविचय।

§ १३२. अहियारसंभालणपरमेदं सुत्तं ।

*** सव्वजीवा दसण्हं णवण्हमट्ठण्हं सत्तण्हं छण्हं पंचण्हं चदुण्हं णियमा पवेसगा ।**

§ १३३. एदेसिं ठाणाणं पवेसगा णाणाजीवा णियमा अत्थि; ण तेसिं पवाहो वोच्छिज्जदि त्ति वुत्तं होइ ।

*** दोण्हमेक्किस्से पवेसगा भजियव्वा ।**

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

§ १३४. किं कारणं? उवसम-खवगसेढिपडिबद्धाणमेदेसिं णिरंतरभावाणुवलंभादो ।

एवमोघेण भंगविचयो समत्तो ।

§ १३५. आदेसेण णेरइय० सव्वट्ठाणाणि णियमा अत्थि । एवं पढमाए । विदियादि जाव सत्तमा त्ति दस० णव० अट्ठ० सत्त० णियमा अत्थि; सिया एदे च छण्हमुदीरगो च । सिया एदे च छण्हमुदीरगा च ३ । तिरिक्ख-पंचिंदियतिरिक्खतिय-दस० णव० अट्ठ० सत्त० छ० णिय० अत्थि, सिया एदे च पंचउदीरगो च । सिया एदे च पंचउदीरगा च ३ । पंचि०तिरि०अपज्ज० १०, ९, ८ णिय० अत्थि । मणुसतिए ओघं । मणुसअपज्ज० सव्वट्ठाणाणि भयणिज्जाणि । भंगा छव्वीस २६ ।

§ १३२. यह सूत्र अधिकारकी सम्हाल करनेवाला है ।

*** दस, नौ, आठ, सात, छह, पाँच और चार प्रकृतियोंके प्रवेशक सब जीव नियमसे हैं ।**

§ १३३. इन स्थानोंके प्रवेशक नाना जीव नियमसे हैं । उनके प्रवाहका व्युच्छेद नहीं होता यह उक्त कथनका तात्पर्य है ।

*** दो और एक प्रकृतिके प्रवेशक जीव भजनीय हैं ।**

§ १३४. क्योंकि उपशमश्रेणि और क्षपकश्रेणिसे सम्बन्ध रखनेवाले इन जीवोंका निरन्तर सद्भाव नहीं पाया जाता ।

इस प्रकार ओघसे भंगविचय समाप्त हुआ ।

§ १३५. आदेशसे नारकियोंमें सब स्थान नियमसे हैं । इसी प्रकार पहली पृथिवीमें जानना चाहिए । दूसरीसे लेकर सातवीं तकके नारकियोंमें दस, नौ, आठ और सात प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव नियमसे हैं । कदाचित् ये हैं और छह प्रकृतियोंका उदीरक एक जीव है । कदाचित् ये हैं और छह प्रकृतियोंके उदीरक नाना जीव हैं ३ । तिर्यञ्च और पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकमें दस, नौ, आठ, सात और छह प्रकृतियोंके उदीरक जीव नियमसे हैं १ । कदाचित् ये हैं और पाँच प्रकृतियोंका उदीरक एक जीव है २ । कदाचित् ये हैं और पाँच प्रकृतियोंके उदीरक नाना जीव हैं ३ । पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंमें १०, ९ और ८ प्रकृतियोंके उदीरक जीव नियमसे हैं । मनुष्यत्रिकमें ओघके समान भंग है । मनुष्य अपर्याप्तकोंमें सब स्थान भजनीय हैं । भंग छब्बीस

णारयभंगो। एवं सोहम्मादि जाव णवगेवज्जा त्ति। भवण०-वाणवें०-जोदिसि० विदियपुढविभंगो। अणुदिसादि सव्वट्ठा त्ति णव० अट्ठ० सत्त० छ० णिय० अत्थि। णाहार०।

§ १३६. एत्थुद्देसे सुगमत्तादो चुण्णिसुत्तयारेणापरूविदाणं भागाभाग-परिमाण-खेत्त-फोसणाणमुच्चारणाबलेन परूवणं कस्सामो। तं जहा—भागाभागाणु० दुविहो णि०—ओघे० आदेसे०। ओघेण अट्ठण्हमुदीर० सव्वजीवाणं केवडि०? संखेज्जा भागा। दस० णव० उदी० संखे०भागो। ७, ६, ५, ४, २, १ उदीर० सव्वजी० केव०? अणंतिमभागो।

§ १३७. आदे० णेरइय० अट्ठ० संखेज्जा भागा। दस० णव० संखे०भागो। सेसमसंखे०भागो। एवं सव्वणेर० पंचि०तिरि०तिय० देवा भवणादि जाव सहस्सार त्ति। तिरिक्खेसु दस० णव० अट्ठ० सत्त० छ० पंच० ओघं। पंचि०तिरि०अपज्ज० मणुसअपज्ज० दस० णव० अट्ठ० ओघं। मणुसेसु दस० णव० संखे०भागो। अट्ठ० संखेज्जा भागा। सेसमसंखे०भागो। एवं मणुसपज्ज०-मणुसिणीसु। णवरि संखेज्जं कायव्वं। आणदादि णवगेवज्जा त्ति दस० णव० अट्ठ० छ० संखे०भागो। सत्त०

हैं। देवोंमें नारकियोंके समान भंग है। इसी प्रकार सौधर्म कल्पसे लेकर नौ ग्रैवेयक तकके देवोंमें जानना चाहिए। भवनवासी, व्यन्तर और ज्योतिषी देवोंमें दूसरी पृथिवीके समान भंग है। अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें नौ, आठ, सात और छह प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव नियमसे हैं। इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

§ १३६. यहाँ पर सुगम होनेसे चूर्णिसूत्रकारके द्वारा नहीं कहे गये भागाभाग, परिमाण, क्षेत्र और स्पर्शनका उच्चारणाके बलसे कथन करते हैं। यथा—भागाभागानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे आठ प्रकृतियोंके उदीरक जीव सब जीवोंके कितने भागप्रमाण हैं? संख्यात बहुभागप्रमाण हैं। दस और नौ प्रकृतियोंके उदीरक जीव संख्यातवें भागप्रमाण हैं। सात, छह, पाँच, चार, दो और एक प्रकृतिके उदीरक जीव सब जीवोंके कितने भागप्रमाण हैं? अनन्तवें भागप्रमाण हैं।

§ १३७. आदेशसे नारकियोंमें आठ प्रकृतियोंके उदीरक जीव संख्यात बहुभागप्रमाण हैं। दस और नौ प्रकृतियोंके उदीरक जीव संख्यातवें भागप्रमाण हैं। शेष प्रकृतियोंके उदीरक जीव असंख्यातवें भागप्रमाण हैं। इसी प्रकार सब नारकी, पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिक, देव और भवनवासियोंसे लेकर सहस्रार कल्प तकके देवोंमें जानना चाहिए। तिर्यञ्चोंमें दस, नौ, आठ, सात, छह और पाँच प्रकृतियोंके उदीरकोंका भंग ओघके समान है। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्तकोंमें दस, नौ और आठ प्रकृतियोंके उदीरकोंका भंग ओघके समान है। मनुष्योंमें दस और नौ प्रकृतियोंके उदीरक जीव संख्यातवें भागप्रमाण हैं। आठ प्रकृतियोंके उदीरक जीव संख्यात बहुभागप्रमाण हैं। शेष प्रकृतियोंके उदीरक जीव असंख्यातवें भागप्रमाण हैं। इसी प्रकार मनुष्य पर्याप्त और मनुष्यिनियोंमें जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि असंख्यातके स्थानमें संख्यात करना चाहिए। आनत कल्पसे लेकर नौ ग्रैवेयक तकके देवोंमें दस, नौ, आठ और छह प्रकृतियोंके उदीरक जीव संख्यातवें भागप्रमाण हैं। सात

संखेज्जा भागा। एवमणुदिसादि सव्वट्ठा त्ति। णवरि दस० णत्थि। एवं जाव०।

§ १३८. परिमाणाणु० दुविहो णि०—ओघे० आदेसे०। ओघे० दस० णव० अट्ठ० उदीर० केत्तिया? अणंता। सत्त० छ० पंच० के०? असंखेज्जा। चउण्हं दोण्हमेक्किसे उदी० के०? संखेज्जा। आदेसेण णेरइय० सव्वपदा केत्तिया? असंखेज्जा। एवं सव्वणेरइय-सव्वपंचिंदियतिरिक्ख-मणुसअपज्ज० देवा भवणादि जाव अवराइदा त्ति। तिरिक्खेसु सव्वपदाणमोघं। मणुसेसु दस० णव० अट्ठ० के०? असंखेज्जा। सेस० के०? संखे०। मणुसपज्ज०-मणुसिणी०-सव्वट्ठदेवा सव्वपदा० केत्ति०? संखेज्जा। एवं जाव०।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

§ १३९. खेत्ताणु० दुविहो णि०—ओघेण आदेसे०। ओघेण दस० णव० अट्ठ० सव्वलोगे। सेसं लोग० असंखे०भागे। एवं तिरिक्खेसु। सेसमग्गणासु सव्वपदा लोग० असंखे०भागे। एवं जाव०।

प्रकृतियोंके उदीरक जीव संख्यात बहुभागप्रमाण हैं। इसी प्रकार अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें जानना चाहिए। मात्र इनमें दस प्रकृतियोंके उदीरक जीव नहीं हैं। इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

§ १३८. परिमाणानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे दस, नौ और आठ प्रकृतियोंके उदीरक जीव कितने हैं? अनन्त हैं। सात, छह और पाँच प्रकृतियोंके उदीरक जीव कितने हैं? असंख्यात हैं। चार, दो और एक प्रकृतिके उदीरक जीव कितने हैं? संख्यात हैं। आदेशसे नारकियोंमें सब पदोंके उदीरक जीव कितने हैं? असंख्यात हैं। इसी प्रकार सब नारकी, सब पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च, मनुष्य अपर्याप्त, सामान्य देव तथा भवनवासियोंसे लेकर अपराजित तकके देवोंमें जानना चाहिए। तिर्यञ्चोंमें सब पदोंका भंग ओघके समान है। मनुष्योंमें दस, नौ और आठ प्रकृतियोंके उदीरक जीव कितने हैं? असंख्यात हैं। शेष पदोंके उदीरक जीव कितने हैं? संख्यात हैं। मनुष्य पर्याप्त, मनुष्यिनी और सर्वार्थसिद्धिके देवोंमें सब पदोंके उदीरक जीव कितने हैं? संख्यात हैं। इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

§ १३९. क्षेत्रानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे दस, नौ और आठ प्रकृतियोंके उदीरक जीवोंका क्षेत्र सब लोकप्रमाण है। शेष प्रकृतियोंके उदीरक जीवोंका क्षेत्र लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण है। इसी प्रकार तिर्यञ्चोंमें जानना चाहिए। शेष मार्गणाओंमें सब पदोंके उदीरक जीवोंका क्षेत्र लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण है। इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

विशेषार्थ—दस, नौ और आठ प्रकृतियोंके उदीरक जीव एकेन्द्रिय भी होते हैं, इसलिए इनका सब लोक क्षेत्र बन जाता है। परन्तु शेष प्रकृतियोंके उदीरक जीव प्रायः संज्ञी पञ्चेन्द्रिय जीव ही होते हैं और उनका वर्तमान निवास लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण है, इसलिए इन पदोंके उदीरक जीवोंका क्षेत्र उक्तप्रमाण कहा है। सामान्य तिर्यञ्चोंमें यह ओघप्ररूपणा अपने पदानुसार अविकल बन जाती है, इसलिए उनमें सम्भव पदोंका क्षेत्र ओघके समान जाननेकी

§ १४०. पोसणाणु० दुविहो णि०—ओघेण आदेसे० । ओघेण दस० णव० अट्ठ० सव्वलोगो । सत्त० लोग० असंखे०भागो अट्ठ-बारहचोद्दस० । [छण्णं लोगस्स असंखे० अट्ठचोद्दस०] । सेसं लोग० असंखे०भागो ।

§ १४१. आदेसेण णेरइय० दस० णव० अट्ठ० लोग० असंखे०भागो छ-चोद्दस० । सत्त० लोग० असंखे०भागो पंचचोद्दस० । छ०उदीर० लोग० असंखे०-भागो । एवं विदियादि सत्तमा त्ति । णवरि सगपोसणं । णवरि सत्तमाए सत्त०-उदीर० लोग० असंखे०भागो । पढमाए खेत्तं ।

सूचना की है। गतिसम्बन्धी शेष मार्गणाओंका क्षेत्र ही लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण है, इसलिए उनमें सब पदोंका क्षेत्र लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण कहा है। आगेकी मार्गणाओंमें इसीप्रकार क्षेत्र जान लेना चाहिए।

१४०. स्पर्शनानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे दस, नौ और आठ प्रकृतियोंके उदीरकोंने सब लोकप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। सात प्रकृतियोंके उदीरकोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्रका और त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ और बारह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। छह प्रकृतियोंके उदीरक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। शेष पदोंके उदीरक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

विशेषार्थ—दस, नौ और आठ प्रकृतियोंके उदीरक जीव एकेन्द्रिय जीव भी होते हैं, इसलिए इन पदोंके उदीरक जीवोंका स्पर्शन सब लोकप्रमाण बतलाया है। सात प्रकृतियोंके उदीरकोंमें देवों और सासादन गुणस्थानवाले जीवोंकी मुख्यता है और इनका स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भाग तथा त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ और बारह भागप्रमाण है, इसलिए इस पदकी अपेक्षा यह स्पर्शन बतलाया है। शेष पदोंकी अपेक्षा मूलमें जो स्पर्शन बतलाया है वह सुगम है, इसलिए उसका अलगसे खुलासा नहीं किया है।

§ १४१. आदेशसे नारकियोंमें दस, नौ और आठ प्रकृतियोंके उदीरक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग और त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम छह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। सात प्रकृतियोंके उदीरक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग और त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम पांच भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। तथा छह प्रकृतियोंके उदीरक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। इसी प्रकार दूसरी पृथिवीसे लेकर सातवीं पृथिवीतकके नारकियोंमें जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि अपना अपना स्पर्शन कहना चाहिए। तथा इतनी विशेषता और है कि सातवीं पृथिवीमें सात प्रकृतियोंके उदीरक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। पहली पृथिवीमें स्पर्शन क्षेत्रके समान है।

विशेषार्थ—दस, नौ और आठ प्रकृतियोंकी उदीरणा सभी मिथ्यादृष्टि नारकी जीवोंके सम्भव है और सामान्यसे नारकियोंका वर्तमान स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और अतीत स्पर्शन त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम छह भागप्रमाण है। यही कारण है कि यहाँ पर उक्त तीन पदवाले जीवोंका यह स्पर्शन बतलाया है। सात प्रकृतिक उदीरणास्थानकी

§ १४२. तिरिक्खेसु दस० णव० अट्ठ० सव्वलोगो। सत्त० लोग० असंखे० भागो सत्त०। [छण्णं] लोग० असंखे०भागो छचोद्द०। पंच० लोग० असंखे० भागो। पंचिं०तिरिक्खतिए दस० णव० अट्ठ० लोग० असंखे०भागो सव्वलोगो वा। सेसं तिरिक्खभंगो। पंचिं०तिरिक्खअपज्ज०-मणुसअपज्ज० दस० णव० अट्ठ० लोग० असंखे०भागो सव्वलोगो वा। मणुसतिए दस० णव० अट्ठ० सत्त० पंचिंदियतिरिक्खभंगो। सेसं लोग० असंखे०भागो।

प्राप्ति सासादनगुणस्थानमें सम्भव है और सामान्यसे सासादन सम्यग्दृष्टि नारकियोंका वर्तमान स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और अतीत स्पर्शन त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम पाँच भागप्रमाण है। इसीसे यहाँ पर सात प्रकृतियोंकी उदीरणा करनेवाले नारकियोंका स्पर्शन उक्त क्षेत्रप्रमाण कहा है। छह प्रकृतियोंकी उदीरणा करनेवाले नारकी जीव या तो उपशमसम्यग्दृष्टि होते हैं या क्षायिक सम्यग्दृष्टि होते हैं और ऐसे नारकियोंका स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण ही होता है। यही कारण है कि इस स्थानवाले नारकियोंका स्पर्शन उक्त क्षेत्रप्रमाण कहा है। शेष कथन सुगम है। मात्र सातवीं पृथिवीके नारकी मिथ्यात्व गुणस्थानके साथ ही मरण करते हैं, इसलिए इनमें सात प्रकृतियोंके उदीरक नारकियोंका स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण कहा है।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

§ १४२. तिर्यञ्चोंमें दस, नौ और आठ प्रकृतियोंके उदीरक जीवोंने सर्व लोकप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। सात प्रकृतियोंके उदीरक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम सात भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। छह प्रकृतियोंके उदीरक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम छह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। पाँच प्रकृतियोंके उदीरक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकमें दस, नौ और आठ प्रकृतियोंके उदीरक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और सर्व लोकप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। शेष भंग सामान्य तिर्यञ्चोंके समान है। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्तकोंमें दस, नौ और आठ प्रकृतियोंके उदीरक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और सर्व लोकप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। मनुष्यत्रिकमें दस, नौ, आठ और सात प्रकृतियोंके उदीरक जीवोंका स्पर्शन पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चोंके समान है और शेष पदवाले जीवोंका स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण है।

विशेषार्थ—एकेन्द्रियादि अधिकतर तिर्यञ्च दस, नौ और आठ प्रकृतियोंकी उदीरणा करते हैं और इनका स्पर्शन सर्व लोकप्रमाण है, इसलिए दस, नौ और आठ प्रकृतियोंके उदीरक तिर्यञ्चोंका स्पर्शन सर्व लोकप्रमाण कहा है। सासादन तिर्यञ्च ऊपर सात राजु क्षेत्रका स्पर्शन करते हैं, इसलिए तिर्यञ्चोंमें सात प्रकृतियोंके उदीरकोंका स्पर्शन त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम सात भागप्रमाण कहा है। संयतासंयत तिर्यञ्चोंका वर्तमान स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और अतीत स्पर्शन त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम छह भागप्रमाण है। यही कारण है कि यहां पर छह प्रकृतियोंके उदीरक तिर्यञ्चोंका उक्त स्पर्शन कहा है। पांच प्रकृतियोंके उदीरक तिर्यञ्च उपशमसम्यग्दृष्टि विरताविरत होते हैं और इनका स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण होनेसे यह उक्त प्रमाण कहा है। शेष कथन सुगम है।

§ १४३. देवेसु दस० णव० अट्ठ० सत्त० लोग० असंखे०भागो अट्ठ-णव-चोद्दस० । [छण्णं लोग० असंखे० अट्ठचोद्दस० ।] एवं सोहम्मीसाण० । भवण०-वाणवें०-जोदिसि० दस० णव० अट्ठ० सत्त० लोग० असंखे०भागो अद्धुट्ठा वा अट्ठ-णवचोद्दस० देसूणा । छउदीर० लोग० असंखे० भागो अद्धुट्ठ अट्ठचोद्दस० । सणक्कुमारादि जाव सहस्सारे त्ति दस० णव० अट्ठ० सत्त० छ० लोग० असंखे०भागो अट्ठचोद्द० । आणदादि अच्चुदा त्ति सव्वट्ठाणाणि लोग० असंखे०भागो छचोद्दस० । उवरि खेत्तं । एवं जाव० ।

* णाणाजीवेहि कालो ।

§ १४४. सुगममेदमहियारसंभालणसुत्तं ।

* एक्किस्से दोण्हं पवेसगा केवचिरं कालादो होंति ?

§ १४५. सुगमं ।

* जहण्णेण एयसमओ ।

---

§ १४३. देवोंमें दस, नौ, आठ और सात प्रकृतियोंके उदीरक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण तथा त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ और कुछ कम नौ भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। छह प्रकृतियोंके उदीरक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग और त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। इसी प्रकार सौधर्म और ऐशान कल्पमें जानना चाहिए। भवनवासी, व्यन्तर और ज्योतिषी देवोंमें दस, नौ, आठ और सात प्रकृतियोंके उदीरक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण तथा त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम साढ़े तीन, कुछ कम आठ और कुछ कम नौ भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। छह प्रकृतियोंके उदीरक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग, त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम साढ़े तीन और कुछ कम आठ भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। सनत्कुमारसे लेकर सहस्रार कल्प तकके देवोंमें दस, नौ, आठ, सात और छह प्रकृतियोंके उदीरक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। आनत कल्पसे लेकर अच्युत कल्प तकके देवोंमें सब स्थानोंके उदीरक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम छह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। आगे स्पर्शन क्षेत्रके समान है। इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

विशेषार्थ—देवोंमें जहां जो स्पर्शन बतलाया है उसे ध्यानमें रखकर स्पर्शन ले आना चाहिए।

* नाना जीवोंकी अपेक्षा काल ।

§ १४४. अधिकारकी सम्हाल करनेवाला यह सूत्र सुगम है।

* एक और दो प्रकृतियोंके प्रवेशक जीवोंका कितना काल है ?

§ १४५. यह सूत्र सुगम है।

* जघन्य काल एक समय है।

§ १४६. तं जहा—सत्तट्ठ जणा बहुगा वा अणियट्टिउवसामगा एकसमयमेकिस्से पवेसगा होदूण बिदियसमए कालं करिय पज्जायंतरमुवगया, लद्धो एकिस्से पवेसगाणं जहण्णेणेयसमओ। एवं दोण्हं पवेसगाणं पि वत्तव्वं, विसेसाभावादो।

※ उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं।

§ १४७. कुदो ? संखेज्जवारमणुसंधिदपवाहाणमुवसामग-खवगाणमेक्क-दोपयडिपवेसगपज्जायपरिणदाणमुक्कस्सावट्ठाणकालस्स तप्पमाणत्तदंसणादो।

※ सेसाणं पयडीणं पवेसगा सव्वद्धा।

§ १४८. सुगममेदं। एवमोघो समत्तो। मणुसतिए एवं चेव। आदेसेण णेरइय० सव्वपदा० सव्वद्धा। एवं सव्वणेरइय०। णवरि बिदियादि सत्तमा त्ति छ०-उदीर० जह० एयसमओ, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो। तिरिक्ख-पंचिंदियतिरिक्खतिय० सव्वपदा सव्वद्धा। णवरि पंच जह० एयस०, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो। पंचिं०तिरिक्खअपज्ज० सव्वपदा सव्वद्धा। मणुसअपज्ज० सव्वट्ठाणाणि जह० एयस०, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो। देवाणं णारयभंगो। एवं सोहम्मादि जाव णवगेवज्जा त्ति। भवण०-वाणवें०-जोदिसि० बिदियपुढविभंगो। अणुदिसादि सव्वट्ठा त्ति

---

§ १४६. यथा—सात आठ अथवा बहुत अनिवृत्ति उपशामक जीव एक समय तक एक प्रकृतिके प्रवेशक होकर दूसरे समयमें मरकर दूसरी पर्यायको प्राप्त हो गये। इस प्रकार एक प्रकृतिके प्रवेशकोंका जघन्य काल एक समय प्राप्त हुआ। इसी प्रकार दो प्रकृतियोंके प्रवेशकोंका भी जघन्य काल एक समय कहना चाहिए, क्योंकि उससे इसमें कोई विशेषता नहीं है।

※ उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है।

§ १४७. क्योंकि जिन्होंने संख्यात बार प्रवाहको मिलाया है ऐसे एक और दो प्रकृतियोंकी प्रवेशक पर्यायसे परिणत हुए उपशामक और क्षपक जीवोंका अवस्थानकाल तत्प्रमाण देखा जाता है।

※ शेष प्रकृतियोंके प्रवेशकोंका काल सर्वदा है।

§ १४८. यह सूत्र सुगम है। इसप्रकार ओघप्ररूपणा समाप्त हुई। मनुष्यत्रिकमें इसीप्रकार जानना चाहिए। आदेशसे नारकियोंमें सब पदवाले जीवोंका काल सर्वदा है। इसीप्रकार सब नारकियोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि दूसरीसे लेकर सातवीं तकके नारकियोंमें छह प्रकृतियोंके उदीरक जीवोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। सामान्य तिर्यञ्चों और पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकमें सब पदोंके उदीरक जीवोंका काल सर्वदा है। किन्तु इतनी विशेषता है कि पाँच प्रकृतियोंके उदीरक जीवोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंमें सब पदोंके उदीरक जीवोंका काल सर्वदा है। मनुष्य अपर्याप्तकोंमें सब पदोंके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। देवोंमें नारकियोंके समान भंग है। इसीप्रकार सौधर्म कल्पसे लेकर नौ ग्रैवेयक तकके देवोंमें जानना चाहिए। भवनवासी, व्यन्तर और ज्योतिषी देवोंमें दूसरी पृथिवीके समान भंग है। अनुदिशसे

सुअड्ढाणाणि सव्वद्धा। एवं जाव०।

ॐ णाणाजीवेहि अंतरं।

§ १४९. सुगममेदमहियारपरामरसवर्कं।

ॐ एक्किस्से दोण्हं पवेसगंतरं केवचिरं कालादो होदि ?

§ १५०. सुगमं। मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

ॐ जहण्णेण एयसमओ।

§ १५१. एगसमयमंतरिदपवाहाणमेदेसिमणंतरसमए पुणो वि संभवे विप्पडिसेहाभावादो।

ॐ उक्कस्सेण छम्मासा।

§ १५२. किं कारणं ? खवगसेढिसमारोहणविरहकालस्स उक्कस्सेण तप्पमाणोवलंभादो।

ॐ सेसाणं पयडीणं पवेसगाणं णत्थि अंतरं।

§ १५३. सुगमं। एवमोघो समत्तो। मणुसतिए एवं चेव। णवरि मणुसिणीसु

लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें सब पदोंके उदीरक जीवोंका काल सर्वदा है। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

विशेषार्थ—द्वितीयादि पृथिवियोंमें छह प्रकृतियोंके उदीरक जीव उपशम सम्यग्दृष्टि ही हो सकते हैं और उपशम सम्यग्दृष्टियोंका उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है, इसलिए इन पृथिवियोंमें छह प्रकृतियोंके उदीरकोंका उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण कहा है। तथा जघन्य काल एक समय प्रकृति परिवर्तनकी अपेक्षा प्राप्त होता है। तिर्यंचोंमें पाँच प्रकृतियोंके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण इसीप्रकार घटित कर लेना चाहिए। शेष कथन सुगम है।

* नाना जीवोंकी अपेक्षा अन्तरकाल।

§ १४९. अधिकारका परामर्श करनेवाला यह वाक्य सुगम है।

* एक और दो प्रकृतियोंके प्रवेशक जीवोंका अन्तरकाल कितना है ?

§ १५०. यह सूत्र सुगम है।

* जघन्य अन्तर एक समय है।

§ १५१. क्योंकि प्रवाहका एक समयके लिए अन्तर देकर प्राप्त हुए इन जीवोंका अनन्तर समयमें फिरसे सम्भव होनेमें कोई निषेध नहीं है।

* उत्कृष्ट अन्तर छह महीना है।

§ १५२. क्योंकि क्षपकश्रेणिके आरोहणका विरहकाल उत्कृष्टरूपसे तत्प्रमाण उपलब्ध होता है।

* शेष प्रकृतियोंके प्रवेशक जीवोंका अन्तरकाल नहीं है।

§ १५३. यह सूत्र सुगम है। इस प्रकार ओघप्ररूपणा समाप्त हुई। मनुष्यत्रिकमें इसी

दोण्हमेक्किस्से च जह० एयस०, उक्क० वासपुधत्तं ।

§ १५४. आदेसेण णेरइयसव्वट्ठाणाणं णत्थि अंतरं । एवं सव्वणेरइय० । णवरि बिदियादि सत्तमा त्ति छ० जह० एयस०, उक्क० सत्त रादिंदियाणि । तिरिक्ख-पंचिं० तिरिक्खतिय० सव्वट्ठाणाणं णत्थि अंतरं । णवरि पंच०उदीर० जह० एयसमओ, उक्क० चोद्दस रादिंदियाणि । पंचिं०तिरि०अपज्ज० सव्वट्ठाणाणं णत्थि अंतरं । मणुसअपज्ज० सव्वट्ठाणा० जह० एयस०, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो । देवाणं णारयभंगो । एवं सोहम्मादि णवगेवज्जा त्ति । भवण०-वाण०-जोदिसि० बिदियपुढविभंगो । अणुदिसादि जाव सव्वट्ठा त्ति सव्वट्ठाणाणं णत्थि अंतरं । एवं जाव० ।

❀ सण्णियासो ।

§ १५५. एत्तो सण्णियासो कायव्वो त्ति अहियारसंभालणवक्कमेदं ।

❀ एक्किस्से पवेसगो दोण्हमपवेसगो ।

प्रकार है । किन्तु इतनी विशेषता है कि मनुष्यिनियोंमें दो और एक प्रकृतियोंके प्रवेशक जीवोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर वर्षपृथक्त्व है ।

§ १५४. आदेशसे नारकियोंमें सब स्थानोंका अन्तरकाल नहीं है । इसी प्रकार सब नारकियोंमें जानना चाहिए । किन्तु इतनी विशेषता है कि दूसरीसे लेकर सातवीं पृथिवी तकके नारकियोंमें छह प्रकृतियोंके प्रवेशकोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर सात दिन-रात है । सामान्य तिर्यञ्च और पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकमें सब स्थानोंका अन्तरकाल नहीं है । किन्तु इतनी विशेषता है कि पांच प्रकृतियोंके उदीरकोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर चौदह दिन-रात है । पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंमें सब स्थानोंका अन्तरकाल नहीं है । मनुष्य अपर्याप्तकोंमें सब स्थानोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है । देवोंमें नारकियोंके समान भंग है । इसीप्रकार सौधर्म कल्पसे लेकर नौ ग्रैवेयक तकके देवोंमें जानना चाहिए । भवनवासी, व्यन्तर और ज्योतिषी देवोंमें दूसरी पृथिवीके समान भंग है । अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें सब स्थानोंका अन्तरकाल नहीं है । इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए ।

विशेषार्थ—मनुष्यिनियोंमें क्षपकश्रेणिका जघन्य अन्तरकाल एक समय और उत्कृष्ट अन्तरकाल वर्ष पृथक्त्व प्रमाण है, इसीसे इनमें एक और दो प्रकृतियोंके उदीरकोंका उक्त कालप्रमाण अन्तरकाल कहा है । उपशमसम्यक्त्व और उपशमसम्यक्त्वके साथ संयमासंयम ये सान्तर मार्गणाएँ हैं । इनका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर क्रमशः सात और चौदह दिन-रात है । यही कारण है कि यहां पर द्वितीयादि पृथिवियोंके नारकियोंमें छह प्रकृतियोंके उदीरकोंका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर सात दिन-रात कहा है । तथा सामान्य तिर्यञ्चोंमें और पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकमें पांच प्रकृतियोंके उदीरकोंका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर चौदह दिन-रात कहा है । शेष कथन सुगम है ।

❀ सन्निकर्ष ।

§ १५५. आगे सन्निकर्ष करना चाहिए इस प्रकार अधिकारकी सम्हाल करनेवाला यह वाक्य है ।

❀ जो एक प्रकृतिका प्रवेशक है वह दो प्रकृतियोंका अप्रवेशक है ।

§ १५६. कुदो ? परोप्परविरुद्धसहावत्तादो। चउण्हं पंचण्हं छण्हं सत्तण्हं अट्ठण्हं णवण्हं दसण्हं च अपवेसगो त्ति एदमत्थदो लब्भदे, एक्किस्से पवेसगस्स सेसासेसट्ठाणाणमपवेसयभावस्स देसामासयभावेणेदस्स पयट्टत्तादो।

❀ एवं सेसाणं।

§ १५७. सुगमं। उच्चारणाहिप्पाएण पुण सण्णियासो णत्थि, तत्थ सत्तारसण्हमेवाणिओगद्दाराणं परूवणादो।

§ १५८. भावो सव्वत्थ ओदइओ भावो।

❀ अप्पाबहुअं।

§ १५९. एत्तो अप्पाबहुअमहिकयं कादव्वमिदि भणिदं होइ। सुविधिसागर जी महाराज

❀ सव्वत्थोवा एक्किस्से पवेसगा।

§ १६०. कुदो ? सुहुमसांपराइयद्धाए अणियट्टियद्धासंखेज्जदिभागे च संचिदखवगोवसामगजीवाणमिह ग्गहणादो।

❀ दोण्हं पवेसगा संखेज्जगुणा।

§ १६१. कुदो ? अणियट्टिपढमसमयप्पहुडि तदद्धाए संखेज्जेसु भागेसु संचिदखवगोवसामगजीवाणमिहावलंबणादो।

❀ चउण्हं पयडीणं पवेसगा संखेज्जगुणा।

---

§ १५६. क्योंकि ये परस्पर विरुद्ध स्वभाववाले हैं। जो एक प्रकृतिका प्रवेशक है वह चार, पाँच, छह, सात, आठ, नौ और दस प्रकृतियोंका अप्रवेशक है यह पूर्वोक्त कथनसे ही फलित हो जाता है, क्योंकि जो एक प्रकृतिका प्रवेशक है वह शेष समस्त स्थानोंका अप्रवेशक है इस प्रकार देशामर्षक भावसे इस अर्थको सूचित करनेमें इस सूत्रकी प्रवृत्ति हुई है।

※ इसी प्रकार शेष स्थानोंके विषयमें जानना चाहिए।

§ १५७. यह सूत्र सुगम है। किन्तु उच्चारणाके अभिप्रायसे सन्निकर्ष अधिकार नहीं है, क्योंकि उसमें सत्रह अनुयोगद्वारोंकी ही प्ररूपणा की है।

§ १५८. भाव सर्वत्र औदयिक है।

※ अल्पबहुत्व।

§ १५९. आगे अल्पबहुत्व अधिकृतरूपसे जानना चाहिए यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

※ एक प्रकृतिके प्रवेशक जीव सबसे स्तोक हैं।

§ १६०. क्योंकि सूक्ष्मसाम्परायके कालमें और अनिवृत्तिकरणके संख्यातवें भागप्रमाण कालमें सञ्चित हुए क्षपक और उपशामक जीवोंका यहाँ पर ग्रहण किया है।

※ उनसे दो प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव संख्यातगुणे हैं।

§ १६१. क्योंकि अनिवृत्तिकरणके प्रथम समयसे लेकर उसके कालके संख्यात बहुभाग प्रमाण कालमें सञ्चित हुए क्षपक और उपशामक जीवोंका यहां पर ग्रहण किया है।

※ उनसे चार प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव संख्यातगुणे हैं।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

§ १६२. किं कारणं ? उवसम-खइयसम्माइट्ठिस्स पमत्तापमत्तसंजदाणमपुव्वकरणखवगोवसामगाणं च भय-दुगुंछोदयविरहिदाणमेत्थ गहणादो ।

❀ पंचण्हं पयडीणं पवेसगा असंखेज्जगुणा ।

§ १६३. कुदो ? उवसम-खइयसम्माइट्ठिसंजदासंजदरासिस्स संखेज्जाणं भागाणमेत्थ पहाणभावेणावलंबियत्तादो ।

❀ छण्हं पयडीणं पवेसगा असंखेज्जगुणा ।

§ १६४. कुदो ? वेदगसम्माइट्ठिसंजदासंजदाणं संखेज्जेहिं भागेहिं सह उवसम-खइयसम्माइट्ठिअसंजदरासिस्स संखेज्जाणं भागाणमिह पहाणभावदंसणादो । णेदमसिद्धं, भय-दुगुंछाणुदयकालमाहप्पावलंबणेण सिद्धसरूवत्तादो ।

❀ सत्तण्हं पयडीणं पवेसगा असंखेज्जगुणा ।

§ १६५. कुदो ? खइयसम्माइट्ठीणं संखेज्जदिभागेण सह वेदगसम्माइट्ठिअसंजदरासिस्स संखेज्जाणं भागाणमिह पहाणत्तदंसणादो ।

❀ दसण्हं पयडीणं पवेसगा अणंतगुणा ।

§ १६६. कुदो ? मिच्छाइट्ठिरासिस्स संखेज्जदिभागपमाणत्तादो ।

❀ णवण्हं पयडीणं पवेसगा संखेज्जगुणा ।

---

§ १६२. क्योंकि भय और जुगुप्साके उदयसे रहित जो उपशमसम्यग्दृष्टि और क्षायिक सम्यग्दृष्टि प्रमत्तसंयत और अप्रमत्तसंयत जीव हैं तथा अपूर्वकरण उपशामक और क्षपक जीव हैं उनका यहाँ पर ग्रहण किया है।

* उनसे पाँच प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव असंख्यातगुणे हैं।

§ १६३. क्योंकि उपशमसम्यग्दृष्टि और क्षायिक सम्यग्दृष्टि संयतासंयत जीवराशिके संख्यात बहुभागप्रमाण जीव राशिका यहां प्रधानभावसे अवलम्बन लिया है।

* उनसे छह प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव असंख्यातगुणे हैं।

§ १६४. क्योंकि वेदकसम्यग्दृष्टि संयतासंयत जीवोंके संख्यात बहुभागके साथ उपशम सम्यग्दृष्टि और क्षायिक सम्यग्दृष्टि असंयत जीवराशिके संख्यात बहुभागकी प्रधानता यहां पर देखी जाती है। और यह असिद्ध भी नहीं है, क्योंकि भय और जुगुप्साके अनुदय कालके माहात्म्यका अवलम्बन लेनेसे यह सिद्धस्वरूप है।

* उनसे सात प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव असंख्यातगुणे हैं।

§ १६५. क्योंकि क्षायिकसम्यग्दृष्टियोंके संख्यातवें भागके साथ वेदकसम्यग्दृष्टि असंयतराशिके संख्यात बहुभागप्रमाण जीवोंकी यहां पर प्रधानता देखी जाती है।

* उनसे दस प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव अनन्तगुणे हैं।

§ १६६. क्योंकि वे मिथ्यादृष्टि राशिके संख्यातवें भागप्रमाण हैं।

* उनसे नौ प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव संख्यातगुणे हैं।

§ १६७. कुदो ? भय-दुगुंछाणं दोण्हं पि समुदिदाणमुदयकालादो अण्णदरविरहिद-कालस्स संखेज्जगुणत्तोवएसादो ।

❀ अट्ठण्हं पयडीणं पवेसगा संखेज्जगुणा ।

§ १६८. किं कारणं ? अण्णदरविरहकालादो दोण्हं पि विरहिदकालस्स संखेज्ज-गुणत्तावलंबणादो । णेदमसिद्धं, एदम्हादो चेव सुत्तादो सिद्धसरूवत्तादो । एवमोघेण [illegible]णुगमो समत्तो ।

§ १६९. संपहि आदेसपरूवणट्ठमुवरिमं पबंधमाह—

❀ णिरयगदीए सव्वत्थोवा छण्हं पयडीणं पवेसगा ।

§ १७०. किं कारणं ? उवसम-खइयसम्माइट्ठिजीवाणं पलिदोवमासंखेज्ज०भाग-पमाणाणमिह ग्गहणादो ।

❀ सत्तण्हं पयडीणं पवेसगा असंखेज्जगुणा ।

§ १७१. कुदो ? वेदयसम्माइट्ठिरासिस्स पहाणभावेणेत्थ विवक्खियत्तादो ।

❀ दसण्हं पयडीणं पवेसगा असंखेज्जगुणा ।

§ १७२. किं कारणं ? भय-दुगुंछोदयसहिदमिच्छाइट्ठिरासिस्स विवक्खियत्तादो ।

❀ णवण्हं पयडीणं पवेसगा संखेज्जगुणा ।

---

§ १६७. क्योंकि भय और जुगुप्सा इन दोनोंके मिले हुए उदयकालसे अन्यतर विरहित काल संख्यातगुणा है ऐसा उपदेश है ।

* उनसे आठ प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव संख्यातगुणे हैं ।

§ १६८. क्योंकि अन्यतर विरहित कालसे दोनोंके ही उदयसे रहित काल संख्यातगुणा है ऐसा अवलम्बन किया गया है । और यह असिद्ध नहीं है, क्योंकि इसी सूत्रसे वह सिद्धस्वरूप है ।

इस प्रकार ओघसे अल्पबहुत्वानुगम समाप्त हुआ ।

§ १६९. अब आदेशका कथन करनेके लिए आगेका प्रबन्ध कहते हैं—

* नरकगतिमें छह प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव सबसे स्तोक हैं ।

§ १७०. क्योंकि पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण उपशमसम्यग्दृष्टि और क्षायिकसम्यग्दृष्टि जीवोंका यहां पर ग्रहण किया है ।

* उनसे सात प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव असंख्यातगुणे हैं ।

§ १७१. क्योंकि वेदकसम्यग्दृष्टि जीवराशि प्रधानभावसे यहां पर विवक्षित है ।

* उनसे दस प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव असंख्यातगुणे हैं ।

§ १७२. क्योंकि भय और जुगुप्साके उदयवाली मिथ्यादृष्टि जीवराशि यहां पर विवक्षित है ।

* उनसे नौ प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव संख्यातगुणे हैं ।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी

§ १७३. कुदो ? भय-दुगुंछाणमण्णदरोदयविरहिदकालम्मि दोण्हमुदयकालादो संखेज्जगुणम्मि संचिदत्तादो ।

❀ अट्ठण्हं पयडीणं पवेसगा संखेज्जगुणा ।

§ १७४. कुदो ? अण्णदरविरहिदकालादो संखेज्जगुणम्मि दोण्हं विरहिदकालम्मि संचिदत्तादो । एवं णिरओघो समत्तो । एवं सव्वणेरइय-देवा भवणादि जाव सहस्सारा त्ति । तिरिक्खेसु सव्वत्थोवा पंच० उदीर० । छ० उदीर० असंखे०गुणा। सत्त० उदीर० असंखे०गुणा । दस० उदीर० अणंतगुणा । णव०उदीर० संखे०गुणा। अट्ठ० उदीर० संखे०गुणा । एवं पंचि०तिरिक्खतिए । णवरि दस० उदी० असंखे०गुणा । पंचि०तिरि०अप०-मणुसअप० सव्वत्थो० दस० उदी० । णव० उदी० संखेज्ज०गु० । अट्ठ० उदी० संखे०गु० । मणुसेसु सव्वत्थोवा एक्किस्से उदी० । दोण्हमुदी० संखेज्जगुणा । चदुण्हं संखे०गुणा । पंचण्हं संखे०गुणा । छ० उदी० संखे०गुणा । सत्त० उदी० संखे०गुणा । दस० उदी० असंखे०गुणा । णव० उदी० संखे०गुणा । अट्ठ० उदी० संखे०गुणा । एवं मणुसपज्ज०-मणुसिणी० । णवरि संखे०गुणं कायव्वं । आणदादि जाव णवगेवज्जा त्ति सव्वत्थो० दस० उदीर० । छ० उदी० संखे०-

---

§ १७३. क्योंकि दोनोंके उदयकालसे संख्यातगुणे भय और जुगुप्सामेंसे किसी एकके उदयसे रहित कालमें उक्त जीवोंका सञ्चय हुआ है ।

✻ उनसे आठ प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव संख्यातगुणे हैं ।

§ १७४. क्योंकि अन्यतरके उदयसे रहित कालसे दोनोंके उदयसे रहित संख्यातगुणे कालमें उक्त जीवोंका सञ्चय हुआ है । इसप्रकार सामान्यसे नारकियोंमें अल्पबहुत्व समाप्त हुआ । इसीप्रकार सब नारकी, सामान्य देव और भवनवासियोंसे लेकर सहस्रार कल्प तकके देवोंमें जानना चाहिए । तिर्यञ्चोंमें पाँच प्रकृतियोंके उदीरक जीव सबसे स्तोक हैं । उनसे छह प्रकृतियोंके उदीरक जीव असंख्यातगुणे हैं । उनसे सात प्रकृतियोंके उदीरक जीव असंख्यातगुणे हैं । उनसे दस प्रकृतियोंके उदीरक जीव अनन्तगुणे हैं । उनसे नौ प्रकृतियोंके उदीरक जीव संख्यातगुणे हैं । उनसे आठ प्रकृतियोंके उदीरक जीव संख्यातगुणे हैं । इसीप्रकार पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकमें जानना चाहिए । किन्तु इतनी विशेषता है कि इनमें दस प्रकृतियोंके उदीरक जीव असंख्यातगुणे हैं । पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्तकोंमें दस प्रकृतियोंके उदीरक जीव सबसे स्तोक हैं । उनसे नौ प्रकृतियोंके उदीरक जीव संख्यातगुणे हैं । उनसे आठ प्रकृतियोंके उदीरक जीव संख्यातगुणे हैं । मनुष्योंमें एक प्रकृतिके उदीरक जीव सबसे स्तोक हैं । उनसे दो प्रकृतियोंके उदीरक जीव संख्यातगुणे हैं । उनसे चार प्रकृतियोंके उदीरक जीव संख्यातगुणे हैं । उनसे पाँच प्रकृतियोंके उदीरक जीव संख्यातगुणे हैं । उनसे छह प्रकृतियोंके उदीरक जीव संख्यातगुणे हैं । उनसे सात प्रकृतियोंके उदीरक जीव संख्यातगुणे हैं । उनसे दस प्रकृतियोंके उदीरक जीव असंख्यातगुणे हैं । उनसे नौ प्रकृतियोंके उदीरक जीव संख्यातगुणे हैं । उनसे आठ प्रकृतियोंके उदीरक जीव संख्यातगुणे हैं । इसीप्रकार मनुष्य पर्याप्त और मनुष्यिनियोंमें जानना चाहिए । किन्तु इतनी विशेषता है कि असंख्यातगुणेके स्थानमें संख्यातगुणा करना चाहिए । आनत कल्पसे लेकर नौ ग्रैवेयक तकके देवोंमें दस प्रकृतियोंके उदीरक जीव सबसे स्तोक हैं । उनसे छह

णा। णव० उदी० संखे०गुणा। अट्ठ० उदी० संखेज्जगुणा। सत्त० उदी० संखे०-गुणा। एवमणुदिसादि सव्वट्ठा त्ति। णवरि दस० उदीरणा णत्थि। एवं जाव०।

एवमप्पाबहुए समत्ते पयडिट्ठाणउदीरणाए सत्तारस अणियोगद्दाराणि समत्ताणि।

क :- आचार्य श्री सु

* एत्तो भुजगारपवेसगो।

§ १७५. एत्तो उवरि पयडिट्ठाणउदीरणाए भुजगारपवेसगो कायव्वो त्ति अहियारसंभालणवक्कमेदं—

* तत्थ अट्ठपदं कायव्वं।

§ १७६. तम्मि भुजगारपवेसगपरूवणाए पुव्वमेव ताव अट्ठपदपरूवणा कायव्वं, अण्णहा भुजगारादिपदविसेसविसयणिण्णयाणुप्पत्तीदो। तं जहा—अणंतरादिक्कंतसमए थोवयरपयडिपवेसादो एण्हिं बहुदरियाओ पयडीओ पवेसेदि त्ति एसो भुजगारपवेसगो। अणंतरवदिक्कंतसमए बहुदरपयडिपवेसादो एण्हिं थोवयरपयडीओ पवेसेदि त्ति एसो अप्पदरपवेसगो। अणंतरविदिक्कंतसमए एण्हिं च तत्तियाओ चेव पयडीओ पवेसेदि त्ति एसो अवट्ठिदपवेसगो। अणंतरविदिक्कंतसमए अपवेसगो होदूण एण्हिं पवेसेदि त्ति एस अवत्तव्वपवेसगो। एवमट्ठपदपरूवणा गया।

प्रकृतियोंके उदीरक जीव संख्यातगुणे हैं। उनसे नौ प्रकृतियोंके उदीरक जीव संख्यातगुणे हैं। उनसे आठ प्रकृतियोंके उदीरक जीव संख्यातगुणे हैं। उनसे सात प्रकृतियोंके उदीरक जीव संख्यातगुणे हैं। इसीप्रकार अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि इनमें दस प्रकृतियोंके उदीरक जीव नहीं हैं। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

इसप्रकार अल्पबहुत्वके समाप्त होने पर प्रकृतिस्थानउदीरणामें सत्रह अनुयोगद्वार समाप्त हुए।

* आगे भुजगारप्रवेशकका अधिकार है।

§ १७५. इससे आगे प्रकृतिस्थान उदीरणामें भुजगारप्रवेशक करना चाहिए इस प्रकार यह प्रतिज्ञावचन कहने योग्य है।

* उसके विषयमें अर्थपद करना चाहिए।

§ १७६. उस भुजगारप्रवेशकप्ररूपणामें सर्वप्रथम अर्थपदकी प्ररूपणा करनी चाहिए, अन्यथा भुजगार आदि पदविशेषविषयक निर्णय नहीं हो सकता। यथा—अनन्तर अतिक्रान्त समयमें हुए स्तोकतर प्रकृतियोंके प्रवेशसे वर्तमान समयमें बहुतर प्रकृतियोंका प्रवेश कराता है यह भुजगारप्रवेशक है। अनन्तर अतिक्रान्त समयमें हुए बहुतर प्रकृतियोंके प्रवेशसे वर्तमान समयमें स्तोकतर प्रकृतियोंका प्रवेश कराता है यह अल्पतरप्रवेशक है। अनन्तर अतिक्रान्त समयमें और वर्तमान समयमें उतनी ही प्रकृतियोंको प्रवेश कराता है यह अवस्थितप्रवेशक है। अनन्तर अतिक्रान्त समयमें अप्रवेशक होकर वर्तमान समयमें प्रवेश कराता है यह अवक्तव्यप्रवेशक है। इस प्रकार अर्थपद प्ररूपणा समाप्त हुई।

§ १७७. संपहि एत्थ तेरस अणियोगद्दाराणि णादव्वाणि भवंति—समुक्कित्तणादि जाव अप्पाबहुए त्ति। तत्थ ताव समुक्कित्तणं वत्तइस्सामो। तं जहा—समुक्कित्तणाणु० दुविहो णिद्देसो—ओघेण आदेसेण य। ओघेण अत्थि भुज०-अप्प०-अवट्ठि०-अवत्त० उदीर०। एवं मणुसतिए। आदेसेण णेरइय० अत्थि भुज०-अप्प०-अवट्ठि० उदीर०। एवं सव्वणेरइय०-सव्वतिरिक्ख-मणुसअपज्ज०-सव्वदेवा त्ति। एवं जाव०। एवं सुगमत्तादो अप्पवण्णणीयत्तादो च समुक्कित्तणाणुगममुल्लंघिय सामित्तविहासणट्ठमिदमाह—

❀ तदो सामित्तं।

§ १७८. सुगमं।

❀ भुजगार-अप्पदर-अवट्ठिदपवेसगो को होइ ?

§ १७९. सुगमं।

❀ अण्णदरो।

§ १८०. मिच्छाइट्ठी सम्माइट्ठी वा सामिओ होदि त्ति भणिदं होइ।

❀ अवत्तव्वपवेसगो को होइ।

§ १८१. सुगममेदं पुच्छावक्कं।

❀ अण्णदरो उवसामणादो परिवदमाणो जी महाराज

§ १७७. अब यहाँ पर समुत्कीर्तनासे लेकर अल्पबहुत्व तक तेरह अनुयोगद्वार ज्ञातव्य हैं। उनमेंसे सर्व प्रथम समुत्कीर्तनाको बतलाते हैं। यथा—समुत्कीर्तनानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे भुजगार, अल्पतर, अवस्थित और अवक्तव्यपदके उदीरक जीव हैं। इसी प्रकार मनुष्यत्रिकमें जानना चाहिए। आदेशसे नारकियोंमें भुजगार, अल्पतर और अवस्थितपदके उदीरक जीव हैं। इसी प्रकार सब नारकी, सब तिर्यञ्च, मनुष्य अपर्याप्त और सब देवोंमें जानना चाहिए। इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए। इस प्रकार सुगम होनेसे और अल्प वर्णनीय होनेसे समुत्कीर्तनानुगमको उल्लंघन कर स्वामित्वका व्याख्यान करनेके लिए आगेका सूत्र कहते हैं—

* उसके बाद स्वामित्वका अधिकार है।

§ १७८. यह सूत्र सुगम है।

* भुजगार, अल्पतर और अवस्थितपदका प्रवेशक कौन जीव है ?

§ १७९. यह सूत्र सुगम है।

* अन्यतर उक्त पदोंका प्रवेशक है।

§ १८०. मिथ्यादृष्टि और सम्यग्दृष्टि जीव स्वामी है यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

* अवक्तव्यपदका प्रवेशक कौन जीव है ?

§ १८१ यह पृच्छावाक्य सुगम है।

* उपशमनासे गिरनेवाला अन्यतर जीव अवक्तव्यपदका प्रवेशक है।

§ १८२. सव्वोवसमं कादूण परिवदमाणगो पढमसमयसुहुमसांपराइयो पढम-...देवो वा अवत्तव्वपवेसगो होइ त्ति भणिदं होइ। एवमोघो समत्तो। एवं मणुस-...। णवरि अवत्तव्व०पवे० पढमसमयदेवो त्ति ण वत्तव्वं। आदेसेण णेरइय०...। णवरि अवत्त० णत्थि। एवं सव्वणेर०-सव्वतिरिक्ख-सव्वदेवा त्ति। णवरि ...०तिरिक्खअपज्ज०-मणुसअपज्ज०-अणुद्दिसादि सव्वट्ठा त्ति भुज०-अप्प-अवट्ठि० ...स्स ? अण्णदरस्स। एवं जाव०।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

*** एगजीवेण कालो।**

§ १८३. सामित्ताणंतरमेगजीवविसयो कालो विहासियव्वो त्ति भणिदं होइ। ...स्स दुविहो णिद्देसो—ओघादेसभेदेण। तत्थोघपरूवणट्ठमाह—

*** भुजगारपवेसगो केवचिरं कालादो होदि ?**

§ १८४. सुगमं।

*** जहण्णेण एयसमओ।**

§ १८५. तं कथं ? सत्तण्हं पवेसगो होदूण ट्ठिदो सम्माइट्ठी मिच्छाइट्ठी वा भय-दुगुंछाणमण्णदरं पवेसिय भुजगारपवेसगो जादो। पुणो बिदियसमए तत्तियं चे उदीरे-माणस्स तस्स लद्धो एयसमयमेत्तो भुजगारपवेसगजहण्णकालो। एवमण्णत्थ वि ...संभवमेयसमयो अणुगंतव्वो।

---

§ १८२. सर्वोपशम करके गिरनेवाला प्रथम समयवर्ती सूक्ष्मसाम्परायिक जीव अथवा प्रथम समयवर्ती देव अवक्तव्यपदका प्रवेशक है यह उक्त कथनका तात्पर्य है। इस प्रकार ओघप्ररूपणा समाप्त हुई। इसी प्रकार मनुष्यत्रिकमें जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि इनमें अवक्तव्यपदका प्रवेशक प्रथम समयवर्ती देव है यह नहीं कहना चाहिए। आदेशसे नारकियोंमें ओघके समान भंग है। किन्तु इतनी विशेषता है कि इनमें अवक्तव्यपद नहीं है। इसीप्रकार सब नारकी, सब तिर्यञ्च और सब देवोंमें जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त, मनुष्य अपर्याप्त और अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें भुजगार, अल्पतर और अवस्थितपद किसके होते हैं ? अन्यतरके होते हैं। इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

*** एक जीवकी अपेक्षा काल।**

§ १८३. स्वामित्वके बाद एक जीवविषयक कालका व्याख्यान करना चाहिए यह उक्त कथनका तात्पर्य है। उसका ओघ और आदेशके भेदसे दो प्रकारका निर्देश है। उनमेंसे ओघका कथन करनेके लिए कहते हैं—

*** भुजगारप्रवेशकका कितना काल है ?**

§ १८४. यह सूत्र सुगम है।

*** जघन्य काल एक समय है।**

§ १८५. वह कैसे ? सात प्रकृतियोंका प्रवेशक होकर स्थित कोई एक मिथ्यादृष्टि या सम्यग्दृष्टि जीव भय और जुगुप्सामेंसे किसी एकका प्रवेश करा कर भुजगारप्रवेशक हो गया। पुनः दूसरे समयमें उतनी प्रकृतियोंकी ही उदीरणा करनेवाले उसके भुजगारप्रवेशकका जघन्य काल एक समय प्राप्त हुआ। इसीप्रकार अन्यत्र भी यथासम्भव एक समय काल जान लेना चाहिए।

❀ उक्कस्सेण चत्तारि समया ।

§ १८६. तं जहा—उवसमसम्माइट्ठिणो पमत्तसंजदा संजदासंजदा असंजद-सम्माइट्ठिणो च जहाकमं चत्तारि पंच छ पयडीओ उदीरेमाणा ट्ठिदा । पुणो तेसिं उवसमसम्मत्तकालो एयसमयमेत्तो अत्थि त्ति सासणगुणं पडिवण्णेसु एको भुजगार-समओ लद्धो । से काले मिच्छत्तं पडिवण्णेसु विदिओ भुजगारसमओ लब्भदे । से काले भये पवेसिदे तदियो भुजगारसमयो । तदणंतरसमए दुगुंछाए पवेसिदाए चउत्थो भुजगारसमयो त्ति एवमुक्कस्सेण चत्तारि समया भुजगारपवेसगस्स लब्भंति । अथवा ओदरमाणगो अणियट्टिउवसामगो अण्णदरसंजलणमुदीरेमाणो पुरिसवेदमोकड्डिय एयसमयं भुजगारपवेसगो जादो । तदणंतरसमए कालं कादूण देवेसुप्पण्णपढमसमए विदियो भुजगारसमयो । पुणो तत्तो अणंतरसमए भयमुदीरे-माणस्स तदियो भुजगारसमयो । से काले दुगुंछोदएण परिणदस्स चउत्थो भुजगार-समयो त्ति एवं चत्तारि समया ।

❀ अप्पदरपवेसगो केवचिरं कालादो होदि ?

§ १८७. सुगममेदं पुच्छावक्कं । मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

❀ जहण्णेण एयसमओ ।

§ १८८. कुदो ? एयसमयमप्पयरं कादूण तदणंतरसमए भुजगारमवट्ठिदं वा गदस्स तदुवलंभादो ।

---

* उत्कृष्ट काल चार समय है ।

§ १८६. यथा—उपशमसम्यग्दृष्टि प्रमत्तसंयत, संयतासंयत और असंयतसम्यग्दृष्टि जीव क्रमसे चार, पाँच और छह प्रकृतियोंकी उदीरणा करते हुए स्थित हैं । पुनः उपशमसम्यक्त्वका काल एक समयमात्र शेष है कि उनके सासादन गुणस्थानको प्राप्त होनेपर एक भुजगारसमय प्राप्त हुआ । तदनन्तर समयमें मिथ्यात्वको प्राप्त होनेपर दूसरा भुजगार समय प्राप्त होता है । तदनन्तर समयमें भयके प्रवेश कराने पर तीसरा भुजगार समय प्राप्त होता है और तदनन्तर समयमें जुगुप्साके प्रवेश कराने पर चौथा भुजगार समय प्राप्त होता है । इस प्रकार भुजगार-प्रवेशकके उत्कृष्टरूपसे चार समय प्राप्त होते हैं । अथवा उतरनेवाला तथा अन्यतर संज्वलनकी उदीरणा करनेवाला अन्यतर अनिवृत्तिउपशामक जीव पुरुषवेदका अपकर्षण करके एक समय तक भुजगार प्रवेशक हो गया । पुनः तदनन्तर समयमें मरकर देवोंमें उत्पन्न होनेके प्रथम समयमें दूसरा भुजगारसमय प्राप्त हुआ । पुनः उसके बाद अनन्तर समयमें भयकी उदीरणा करनेवाले उसके तीसरा भुजगारसमय प्राप्त हुआ । तथा तदनन्तर समयमें जुगुप्साके उदयसे परिणत हुए उसके चौथा भुजगारसमय प्राप्त हुआ । इस प्रकार भुजगारप्रवेशकके चार समय प्राप्त हुए ।

* अल्पतरप्रवेशकका कितना काल है ?

§ १८७. यह पृच्छावाक्य सुगम है ।

* जघन्य काल एक समय है ।

§ १८८. क्योंकि एक समय तक अल्पतरपद करके तदनन्तर समयमें भुजगार या अवस्थितपदको प्राप्त हुए जीवके उक्त काल उपलब्ध होता है ।

* उक्कस्सेण तिण्णि समया।

§ १८९. तं जहा—मिच्छाइट्ठिस्स दस पयडीओ उदीरेमाणस्स भयवोच्छेदेण णवण्हमुदीरणा होदूणेको अप्पदरसमयो। से काले दुगुंछोदयवोच्छेदेणट्ठं होदूण बिदियो अप्पयरसमयो। तदणंतरसमए सम्मत्तं पडिवण्णस्स मिच्छत्ताणंताणुबंधिवोच्छेदेण तदियो अप्पदरसमयो त्ति। एवं अप्पदरपवेसगस्स उक्कस्सकालो तिसमयमेत्तो। एवं चेवासंजदसम्माइट्ठिस्स संजमासंजमं पडिवज्जमाणस्स संजदासंजदस्स वा संजमं पडिवज्जमाणस्स तिसमयमेत्तप्पदरुक्कस्सकालपरूवणा कायव्वा।

* अवट्ठिदपवेसगो केवचिरं कालादो होदि?

§ १९०. सुगमं।

* जहण्णेण एगसमओ।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

§ १९१. तं कथं? णवपयडीओ पवेसमाणस्स दुगुंछागमणेयसमयं भुजगारपज्जाएण परिणमिय से काले तत्तियमेत्तेणावट्ठिदस्स तदणंतरसमए भयवोच्छेदेणप्पदरपज्जायमुवगयस्स लद्धो एयसमयमेत्तो अवट्ठिदजहण्णकालो। एवमण्णत्थ वि वत्तव्वं।

* उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं।

---

* उत्कृष्ट काल तीन समय है।

§ १८९. यथा—दस प्रकृतियोंकी उदीरणा करनेवाले मिथ्यादृष्टि जीवके भयकी व्युच्छित्ति हो जानेसे नौकी उदीरणा होकर एक अल्पतर समय प्राप्त हुआ। तदनन्तर समयमें जुगुप्साकी उदयव्युच्छित्ति हो जानेसे आठ प्रकृतियोंकी उदीरणा होकर दूसरा अल्पतर समय प्राप्त हुआ। तदनन्तर समयमें सम्यक्त्वको प्राप्त हुए उसके मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धीकी व्युच्छित्ति हो जानेसे तीसरा अल्पतर समय प्राप्त हुआ। इसप्रकार अल्पतरप्रवेशकका उत्कृष्ट काल तीन समय होता है। इसीप्रकार संयमासंयमको प्राप्त होनेवाले असंयतसम्यग्दृष्टि जीवके तथा संयमको प्राप्त होनेवाले संयतासंयत जीवके अल्पतर प्रवेशक सम्बन्धी तीन समयमात्र उत्कृष्ट कालकी प्ररूपणा करनी चाहिए।

* अवस्थितप्रवेशकका कितना काल है?

§ १९०. यह सूत्र सुगम है।

* जघन्य काल एक समय है।

§ १९१. वह कैसे? जो नौ प्रकृतियोंका प्रवेशक जीव जुगुप्साके आनेसे एक समय तक भुजगार पर्यायसे परिणत हुआ। पुनः तदनन्तर समयमें उतनी ही प्रकृतियोंकी उदीरणाके साथ अवस्थित रहा। फिर तदनन्तर समयमें भयकी व्युच्छित्तिके द्वारा अल्पतरपर्यायको प्राप्त हो गया उसके अवस्थितपदका जघन्य काल एक समयमात्र प्राप्त हुआ। इसी प्रकार अन्यत्र भी जानना चाहिए।

* उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है।

§ १९२. तं जहा—दसपयडीओ उदीरेमाणस्स भय-दुगुंछाणमुदयवोच्छेदेण अप्पदरं कादूणावट्ठिदस्स जाव पुणो भय-दुगुंछाणमणुदयो ताव अंतोमुहुत्तमेत्तो अवट्ठिदपवेसगस्स उक्कस्सकालो होइ ।

❀ अवत्तव्वपवेसगो केवचिरं कालादो होदि ?

§ १९३. सुगमं ।

❀ जहण्णुक्कस्सेण एयसमयो ।

§ १९४. कुदो ? सव्वोवसामणादो परिवदिदपढमसमयं मोत्तूणण्णत्थ तदसंभवादो । एवमोघेण कालाणुगमो समत्तो ।

§ १९५. एवं मणुसतिए । आदेसेण णेरइय० भुज०-अप्प०-अवट्ठि० ओघं । एवं सव्वणेरइय-तिरिक्ख-पंचिंदियतिरिक्खतिय-देवा भवणादि जाव णवगेवज्जा त्ति । पंचिंदियतिरिक्खअपज्ज०-मणुसअपज्ज० भुज० जह० एगस०, उक्क० वेसमया । एवमप्पदर० । अवट्ठि० ओघं । अणुद्दिसादि सव्वट्ठा त्ति भुज०-अप्प० जह० एयस०, उक्क० तिण्णि समया । अवट्ठि० ओघं । एवं जाव० ।

---

§ १९२. यथा—दस प्रकृतियोंकी उदीरणा करनेवाला जो जीव भय और जुगुप्साकी उदयव्युच्छित्तिके द्वारा अल्पतरपद करके अवस्थित है । पुनः जबतक उसके भय और जुगुप्साका अनुदय बना रहता है तबतक उसके अवस्थित प्रवेशकसम्बन्धी अन्तर्मुहूर्तप्रमाण उत्कृष्ट काल प्राप्त हो जाता है ।

* अवक्तव्यप्रवेशकका कितना काल है ?

§ १९३. यह सूत्र सुगम है ।

* जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है ।

§ १९४. क्योंकि सर्वोपशामनासे गिरते हुए प्रथम समयको छोड़कर अन्यत्र अवक्तव्यपद असम्भव है ।

इस प्रकार ओघसे कालानुगम समाप्त हुआ ।

§ १९५. इसी प्रकार मनुष्यत्रिकमें जानना चाहिए । आदेशसे नारकियोंमें भुजगार, अल्पतर और अवस्थितप्रवेशकका काल ओघके समान है । इसी प्रकार सब नारकी, सामान्य तिर्यञ्च, पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिक, सामान्य देव और भवनवासियोंसे लेकर नौ ग्रैवेयक तकके देवोंमें जानना चाहिए । पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्तकोंमें भुजगार प्रवेशकका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल दो समय है । इसी प्रकार अल्पतरप्रवेशकका काल है । अवस्थितप्रवेशकका काल ओघके समान है । अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें भुजगार और अल्पतरप्रवेशकका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल तीन समय है । अवस्थितप्रवेशकका काल ओघके समान है । इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए ।

विशेषार्थ—मनुष्यत्रिकमें प्रथमादि सर्वोपशामना तकके सब गुणस्थान सम्भव हैं, इसलिए उनमें ओघप्ररूपणा अविकल बन जानेसे वह ओघके समान जाननेकी सूचना की है । परन्तु सब नारकी, सामान्य तिर्यञ्च, पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिक, सामान्य देव और भवन-

✻ एयजीवेण अंतरं ।

§ १९६. सुगममेदमहियारपरामरसवक्कं ।

✻ भुजगार-अप्पदर-अवट्ठिदपवेसगंतरं केवचिरं कालादो होदि ?

§ १९७. सुगमं ।

✻ जहण्णेण एयसमओ ।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

§ १९८. तं जहा—भुजगारस्स ताव उच्चदे । एक्को ओदरमाणउवसामगो ...मुदीरेमाणो पुरिसवेदमोकड्डिय भुजगारपवेसगो जादो । तदो से काले तत्तिय-...वट्ठिदो होदूणंतरिदो । तदणंतरसमए कालं कादूण देवेसुप्पण्णो भुजगारपवेसगो ...। लद्धमंतरं । हेट्ठिमगुणट्ठाणेसु वि लब्भदे । तं कधं ? भय-दुगुंछाविरहिदमप्पप्पणो ...ट्ठाणमुदीरेमाणो अण्णदरगुणट्ठाणजीवो भयागमेणेगसमयं भुजगारं काद्-

---

...से लेकर नौ ग्रैवयक तकके देवोंमें सर्वोपशामनाकी प्राप्ति सम्भव नहीं होनेसे उनमें तीन ...की अपेक्षा कालका निर्देश किया । ये तीन पद पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त, मनुष्य ...र्याप्त और अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धिके देवोंमें भी सम्भव हैं । परन्तु पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च ...र्याप्त और मनुष्य अपर्याप्तकोंमें एक मिथ्यात्व गुणस्थान होनेसे वहाँ भुजगार और अल्पतर ...का उत्कृष्ट काल दो समय ही बनता है तथा अनुदिशादिकमें जो उपशमसम्यग्दृष्टि और ...कृत्यवेदक सम्यग्दृष्टि उत्पन्न होता है उसके यह काल तीन समय भी बन जाता है । ...शामसम्यग्दृष्टिके प्रथम समयमें सम्यक्त्व प्रकृतिकी, दूसरे समयमें भयकी और तीसरे ...समयमें जुगुप्साकी उदीरणा करानेसे भुजगार प्रवेशकका तीन समय उत्कृष्ट काल बन जाता ...। तथा कृतकृत्यवेदक सम्यग्दृष्टिके प्रथम समयमें सम्यक्त्व प्रकृतिको, दूसरे समयमें भयको और तीसरे समयमें जुगुप्साको अनुदीरणारूपसे परिणत करने पर अल्पतर प्रवेशकका तीन समय उत्कृष्ट काल बन जाता है । शेष कथन सुगम है ।

✻ एक जीवकी अपेक्षा अन्तर ।

§ १९६. अधिकारका परामर्श करनेवाला यह वाक्य सुगम है ।

✻ भुजगार, अल्पतर और अवस्थितप्रवेशकका अन्तरकाल कितना है ?

§ १९७. यह सूत्र सुगम है ।

✻ जघन्य अन्तरकाल एक समय है ।

§ १९८. यथा—सर्वप्रथम भुजगारका कहते हैं, संज्वलनकी उदीरणा करनेवाला उतरता हुआ एक उपशामक जीव पुरुषवेदका अपकर्षण करके भुजगारप्रवेशक हुआ । इसके बाद तदनन्तर समयमें उतनी ही प्रकृतियोंकी उदीरणाके साथ अवस्थितप्रवेशक होकर उसने भुजगार-...का अन्तर किया । पुनः तदनन्तर समयमें मरकर और देवोंमें उत्पन्न होकर वह भुजगार-प्रवेशक हो गया । इसप्रकार भुजगारप्रवेशकका जघन्य अन्तर एक समय प्राप्त हो गया । यह अन्तर नीचेके गुणस्थानोंमें भी प्राप्त होता है ।

शंका—यह कैसे ?

समाधान—भय और जुगुप्साकी उदीरणासे रहित अपने उदीरणास्थानकी उदीरणा करनेवाला अन्यतर गुणस्थानवर्ती जीव भयके आगमन द्वारा एक समय तक भुजगारपद

णंतरसमए तत्तियमेत्तावट्ठाणेणंतरिदो, से काले दुगुंछोदएण पविसिदो, पुणो
मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज
भुजगारपवेसगो जादो । लद्धमंतरं होइ ।

§ १९९. संपहि अप्प०पवे० उच्चदे । तं जहा— भय-दुगुंछाहि सह अप्पि मुदीरणट्ठाणमुदीरेमाणस्स अण्णदरगुणट्ठाणजीवस्स भयवोच्छेदेणेगसमयमप्पदरपज्जाए परिणदस्स तदणंतरसमए तत्तियमेत्तेणंतरं होदूण से काले दुगुंछोदयवोच्छेदेण अप्प दरभावमुवगयस्स लद्धमंतरं होइ । अथवा मिच्छाइट्ठिणा सम्मत्ते गहिदे तप्पढमसमयम्मि मिच्छत्ताणंताणुबंधिवोच्छेदेणप्पदरं कादूणाणंतरसमए तत्तियमेत्तेणावट्ठिदस्स एगसम मंतरं होदूण तदियसमयम्मि भय-दुगुंछाणमण्णदरवोच्छेदेणुभयवोच्छेदेण वा लद्धमंतरं होइ । एवमसंजदसम्माइट्ठिणा संजमासंजमे गहिदे संजदासंजदेण वा संजमे गहिदे अप्पदरस्स एगसमयमेत्तजहण्णंतरोवलंभो वत्तव्वो । संपहि अवट्ठि०पवे० जहण्णंतरं उच्चदे । तं जहा—सत्त वा अट्ठ वा पयडीओ पवेसेमाणगस्स भयागमेणेगसमयं भुजगारेणंतरं होदूण तदुवरिमसमयम्मि तत्तियमेत्तेणावट्ठिदस्स लद्धमंतरं होइ । एवमप्पदरेण वि अवट्ठिदस्स जहण्णंतरं साहेयव्वं ।

※ उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं ।

करके पुनः तदनन्तर समयमें उतनी ही प्रकृतियोंकी उदीरणारूप अवस्थित पद द्वारा भुजगार-पदको अन्तरित करके तदनन्तर समयमें जुगुप्साके उदयरूपसे परिणत होकर पुनः भुजगार-प्रवेशक हो गया । इसप्रकार भुजगारप्रवेशकका एक समय जघन्य अन्तर प्राप्त होता है ।

§ १९९. अब अल्पतरप्रवेशकको कहते हैं । यथा—भय और जुगुप्साके साथ विवक्षित उदीरणास्थानकी उदीरणा करनेवाला अन्यतर गुणस्थानवाला जो जीव भयकी उदयव्युच्छित्ति द्वारा एक समय तक अल्पतर पर्यायसे परिणत हुआ, पुनः तदनन्तर समयमें उतनी ही प्रकृतियोंकी उदीरणा द्वारा अल्पतर पदका अन्तर करके तदनन्तर समयमें जुगुप्साकी उदय-व्युच्छित्ति द्वारा अल्पतरपदको प्राप्त हुआ, उसके अल्पतरपदका जघन्य अन्तर एक समय प्राप्त होता है । अथवा जो मिथ्यादृष्टि जीव सम्यक्त्वको ग्रहणकर उसके प्रथम समयमें मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धीकी उदयव्युच्छित्ति द्वारा अल्पतरपदको करता है, पुनः तदनन्तर समयमें उतनी ही प्रकृतियोंकी उदीरणा द्वारा अल्पतरपदका अन्तर करता है और तीसरे समयमें भय और जुगुप्सामेंसे किसी एक प्रकृतिकी उदयव्युच्छित्ति द्वारा या दोनोंकी उदयव्युच्छित्तिद्वारा अल्पतरपद करता है उसके अल्पतरपदका जघन्य अन्तर एक समय प्राप्त होता है । इसीप्रकार असंयतसम्यग्दृष्टिके द्वारा संयमासंयमके ग्रहण करने पर या संयतासंयतके द्वारा संयमके ग्रहण करने पर अल्पतरपदका जघन्य अन्तर एक समयमात्र प्राप्त होता है ऐसा कथन करना चाहिए । अब अवस्थितप्रवेशकका जघन्य अन्तर कहते हैं । यथा सात या आठ प्रकृतियोंका प्रवेश करनेवाला जो जीव भयके आगमन द्वारा एक समय तक भुजगारपद करता हुआ उस द्वारा अवस्थित पदका अन्तर करके पुनः तदनन्तर समयमें उतनी प्रकृतियोंके उदय द्वारा अवस्थित पद करता है उसके अवस्थितपदका जघन्य अन्तर एक समय प्राप्त होता है । इसी प्रकार अल्पतरपदका आश्रय लेकर भी अवस्थितप्रवेशकका जघन्य अन्तर साध लेना चाहिए ।

※ उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है ।

§ २००. तत्थ ताव भुज०पवे० वुच्चदे। तं जहा—एको संजदासंजदो [पंचुदीरेमाणगो] असंजमं पडिवण्णो, पढमसमए भुजगारस्सादिं कादूणंतरिदो। [सव्वुक्कस्]समंतोमुहुत्तमच्छिय भय-दुगुंछोदयवसेण पुणो वि भुजगारपवेसगो जादो। [लद्धम]ंतरं होइ। अहवा एको उवसमसम्माइट्ठी पमत्तापमत्तसंजदो चदुण्हमुदीरगो [भ]य-दुगुंछागमेण भुजगारस्सादिं कादूण पुणो सत्थाणे चेव अंतोमुहुत्तमविवक्खिय-[पज्ज]एणंतरिदो उवसमसेढिमारुहिय सव्वोवसमं कादूणोदरमाणगो लोभसंजलणमुदीरेदूण [हे]ट्ठा णिवदिय जम्मि इत्थिवेदमुदीरेमाणगो भुजगारपवेसगो जादो तम्मि लद्धमंतरं होइ।

§ २०१. संपहि अप्पदर०पवेस० वुच्चदे—णव वा दस पयडीओ उदीरेमाणस्स [भ]य-दुगुंछोदयवोच्छेदेणप्पदरपज्जायपरिणदस्साणंतरसमए अंतरं होदूणंतोमुहुत्तेण [भ]य-दुगुंछासु उदयमागदासु पुणो वि अंतोमुहुत्तमंतरिदस्स तदुदयवोच्छेदसमकालमप्पदर-[प]वेण लद्धमंतरं होइ। अथवा उवसमसेढिमारुहिय इत्थिवेदोदयवोच्छेदेणप्पदरस्सादिं [क]ादूणंतरिय उवरि चढिय हेट्ठा ओदिण्णस्स भय-दुगुंछाणमुदीरणा होदूणंतोमुहुत्तेण [ज]त्थ तदुदयवोच्छेदो जादो तत्थ लद्धमंतरं कायव्वं।

§ २०२. संपहि अवट्ठिदपवे० उच्चदे—उवसामगो लोहसंजलणमुदीरेमाणो अवट्ठिदस्सादिं कादूणाणुदीरगो होदूणंतोमुहुत्तमंतरिय पुणो ओदरमाणो सुहुमसांपरायो

§ २००. उसमें सर्वप्रथम भुजगारप्रवेशकका कहते हैं। यथा—पाँच प्रकृतियोंकी उदीरणा करनेवाले एक संयतासंयत जीवने असंयमको प्राप्त होकर प्रथम समयमें भुजगारपदका आरम्भ-कर उसका अन्तर किया। पुनः सबसे उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त काल तक रहकर अन्तमें भय और जुगुप्साके उदय द्वारा फिरसे जो भुजगारप्रवेशक हो गया उसके भुजगारपदका उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त प्राप्त होता है। अथवा चार प्रकृतियोंकी उदीरणा करनेवाला एक उपशमसम्यग्दृष्टि प्रमत्त और अप्रमत्तसंयत जीव भय और जुगुप्साके आगमन द्वारा भुजगारपदका प्रारम्भ करके पुनः स्वस्थानमें ही अन्तर्मुहूर्त कालतक अविवक्षित पर्यायके द्वारा उसका अन्तर करके उपशम-श्रेणि पर चढ़ा और वहाँ सर्वोपशम करके उतरते हुए लोभसंज्वलनकी उदीरणा करके तथा नीचे गिरकर जहाँ जाकर स्त्रीवेदकी उदीरणा करता हुआ भुजगारप्रवेशक हुआ वहाँ उस जीवके भुजगारपदका उत्कृष्ट अन्तर प्राप्त होता है।

§ २०१. अब अल्पतरप्रवेशकका कहते हैं—नौ या दस प्रकृतियोंकी उदीरणा करनेवाला कोई एक जीव भय और जुगुप्साकी उदयव्युच्छित्तिद्वारा अल्पतर पर्यायसे परिणत हुआ। पुनः अनन्तर समयमें उसका अन्तर होकर अन्तर्मुहूर्त कालके बाद भय और जुगुप्साके उदयमें आने पर फिरसे अन्तर्मुहूर्त काल तक उसका अन्तर किया। फिर उन दोनों प्रकृतियोंकी उदय-व्युच्छित्तिके कालमें ही अल्पतर पर्यायसे परिणत हुआ उसके अल्पतरपदका उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त प्राप्त होता है। अथवा उपशमश्रेणि पर चढ़कर स्त्रीवेदकी उदयव्युच्छित्ति द्वारा अल्पतरपदका प्रारम्भकर और अविवक्षित पदद्वारा उसका अन्तर कर ऊपर चढ़ा। फिर नीचे उतरते हुए उसके भय और जुगुप्साकी उदीरणा होकर अन्तर्मुहूर्त काल बाद जहाँ उन दोनोंकी उदयव्युच्छित्ति होती है वहाँ अल्पतर पदका प्राप्त हुआ उत्कृष्ट अन्तर करना चाहिए।

§ २०२. अब अवस्थितप्रवेशकका कहते हैं—लोभसंज्वलनकी उदीरणा करनेवाला उपशामक जीव अवस्थित पदका प्रारम्भ करके बादमें उसका अनुदीरक होकर अन्तर्मुहूर्त काल

होदूण बिदियसमए कालं कादूण देवेसुप्पज्जिय जहाकममण्णेसु दोसु समएसु भ दुगुंछाओ उदीरिय तदो अवट्ठिदपवेसगो जादो, लद्धमंतरं होइ।

❀ अवत्तव्वपवेसगंतरं केवचिरं कालादो होदि ?

§ २०३. सुगमं।

❀ जहण्णेण अंतोमुहुत्तं।

§ २०४. तं जहा—उवसमसेढिमारुहिय सव्वोवसामणापडिवादपढमसम अवत्तव्वस्सादिं कादूण हेट्ठा णिवदिय अंतरिदो। पुणो वि सव्वलहुमंतोमुहुत्ते उवसमसेढिमारोहणं कादूण सुहुमसांपराइयचरिमावलियपढमसमए अपवेसगभावमुव मिय तत्थेव कालं कादूण देवेसुप्पण्णपढमसमए लद्धमंतरं करेदि, पयारंतरेण जहण्ण तराणुप्पत्तीदो।

❀ उक्कस्सेण उवड्ढपोग्गलपरियट्टं।

§ २०५. तं कथं ? अद्धपोग्गलपरियट्टपढमसमए सम्मत्तमुप्पाइय सव्वलहुमुवसम- सेढिसमारोहणपुरस्सरपडिवादेणादिं कादूणंतरिदो किंचूणमद्धपोग्गलपरियट्टं परियट्टिदूण थोवावसेसे संसारे पुणो वि सव्वविसुद्धो होदूण उवसमसेढिमारूढो पडिवादपढमसमए लद्धमंतरं करेदि त्ति वत्तव्वं। एवमोघपरूवणा समत्ता।

तक अवस्थितपदका अन्तर करके पुनः उतरता हुआ सूक्ष्मसाम्परायिक होकर तथा दूसरे समयमें मरकर और देवोंमें उत्पन्न होकर क्रमसे अन्य दो समयोंमें भय और जुगुप्साकी उदीरणा करके अनन्तर अवस्थितप्रवेशक हो गया। इसप्रकार अवस्थितप्रवेशकका उत्कृष्ट अन्तर प्राप्त हो जाता है।

* अवक्तव्यप्रवेशकका अन्तरकाल कितना है ?

§ २०३. यह सूत्र सुगम है।

* जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है।

§ २०४. यथा—उपशमश्रेणिपर आरोहण करके तथा सर्वोपशामनासे गिरनेके प्रथम समयमें अवक्तव्यपदका प्रारम्भ करके पुनः नीचे गिरकर उसका अन्तर किया। पुनः सबसे लघु अन्तर्मुहूर्त कालके द्वारा उपशमश्रेणिपर आरोहण करके सूक्ष्मसाम्परायकी अन्तिम आवलिके प्रथम समयमें अप्रवेशकभावको प्राप्त होकर और वहीं पर मरकर जो देवोंमें उत्पन्न हुआ वह वहाँ उत्पन्न होनेके प्रथम समयमें अवक्तव्यप्रवेशकसम्बन्धी अन्तरको प्राप्त करता है, क्योंकि प्रकारान्तरसे जघन्य अन्तरकी उत्पत्ति नहीं हो सकती।

* उत्कृष्ट अन्तर उपार्ध पुद्गल परिवर्तनप्रमाण है।

§ २०५. शंका—वह कैसे ?

समाधान—अर्धपुद्गल परिवर्तनके प्रथम समयमें सम्यक्त्वको उत्पन्न करके अतिशीघ्र उपशमश्रेणिपर आरोहण पूर्वक गिरते समय अवक्तव्यपदका प्रारम्भ करके जो उसका अन्तर करता है। पुनः कुछ कम अर्धपुद्गलपरिवर्तन काल तक परिभ्रमण कर संसारमें रहनेका थोड़ा काल शेष रह जाने पर फिरसे जो सर्व विशुद्ध होकर उपशमश्रेणि पर आरोहण करता है वह गिरनेके प्रथम समयमें उसका उत्कृष्ट अन्तर प्राप्त करता है ऐसा यहाँ कहना चाहिए।

इस प्रकार ओघप्ररूपणा समाप्त हुई।

§ २०६. आदेसेण णेरइय० भुज०-अप्प० जह० एयसमओ, उक्क० अंतोमु० । अवट्ठि० जह० एयस०, उक्क० चत्तारि समया । एवं सव्वणिरय-तिरिक्ख-पंचिंदिय-तिरिक्खतिय-देवा भवणादि जाव णवगेवज्जा त्ति । पंचि०तिरि०अपज्ज०-मणुसअपज्ज० भुज०-अप्प० ओघं । अवट्ठि० जह० एयस०, उक्क० बेसमया । मणुसतिए भुज०-अप्प०-अवट्ठि० ओघं । अवत्त० जह० अंतोमु०, उक्क० पुव्वकोडिपुधत्तं । अणुदिसादि सव्वट्ठा त्ति भुज०-अप्प० ओघं । अवट्ठि० जह० एयसमओ, उक्क० तिण्णि समया । एवं जाव०।

*** णाणाजीवेहि भंगविचयादिअणियोगद्दाराणि अप्पाबहुअवज्जाणि कायव्वाणि ।**

§ २०७. णाणाजीवेहि भंगविचय-भागाभाग-परिमाण-खेत्त-पोसण-कालंतर-भाव-सण्णिदाणमणियोगद्दाराणमेदेण सुत्तेण समप्पिदाणमुच्चारणाबलेण परूवणमिह कस्सामो । तं जहा—

§ २०६. आदेशसे नारकियोंमें भुजगार और अल्पतरप्रवेशकका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है । अवस्थितप्रवेशकका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर चार समय है । इसी प्रकार सब नारकी, सामान्य तिर्यञ्च, पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिक, सामान्य देव और भवनवासियोंसे लेकर नौ ग्रैवेयक तकके देवोंमें जानना चाहिए । पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्तकोंमें भुजगार और अल्पतरप्रवेशकका अन्तर-काल ओघके समान है । अवस्थितप्रवेशकका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर दो समय है । मनुष्यत्रिकमें भुजगार, अल्पतर और अवस्थितप्रवेशकका अन्तरकाल ओघके समान है । अवक्तव्यप्रवेशकका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर पूर्वकोटि-पृथक्त्वप्रमाण है । अनुदिशसे लेकर सवार्थसिद्धितकके देवोंमें भुजगार और अल्पतर प्रवेशकका अन्तरकाल ओघके समान है । अवस्थितप्रवेशकका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर तीन समय है । इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए ।

विशेषार्थ—मनुष्यत्रिकको छोड़कर अन्य सब गतियोंमें और उनके अवान्तर भेदोंमें जहाँ जो भुजगारपदका उत्कृष्ट काल बतलाया है वही वह अवस्थितप्रवेशकका उत्कृष्ट अन्तरकाल जानना चाहिए । मनुष्यत्रिकका कर्मभूमिमें रहनेका उत्कृष्ट काल पूर्वकोटिपृथक्त्व प्रमाण है । यह सम्भव है कि कोई जीव पूर्वकोटिपृथक्त्व कालके प्रारम्भमें और अन्तमें अवक्तव्यपद करे और मध्यमें उसका अन्तरकाल रहा आवे । इसीसे इनमें अवक्तव्यप्रवेशकका उत्कृष्ट अन्तर पूर्वकोटि पृथक्त्वप्रमाण कहा है । तथा अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अतिशीघ्र दो बार उपशमश्रेणि पर चढ़ाकर ले आना चाहिए । शेष कथन सुगम है ।

*** अल्पबहुत्वके सिवा नाना जीवोंकी अपेक्षा भंगविचय आदि अनुयोगद्वार करने चाहिए ।**

§ २०७. इस सूत्रके द्वारा मुख्यभावको प्राप्त हुए नाना जीवोंकी अपेक्षा भंगविचय, भागाभाग, परिमाण, क्षेत्र, स्पर्शन, काल, अन्तर और भाव संज्ञावाले अनुयोगद्वारोंकी प्ररूपणा उच्चारणाके बलसे यहाँ पर बतलाते हैं । यथा—नाना जीवोंका आश्रय लेकर भंगविचया-नुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे भुजगार, अल्पतर और

§ २०८. णाणाजीवेहि भंगविचयाणुगमेण दुविहो णिद्देसो—ओघेण आदे
य । ओघेण भुज०-अप्प०-अवट्ठि०उदीर० णिय० अत्थि, सिया एदे
अवत्तव्वओ च, सिया एदे च अवत्तव्वगा च । भंगा तिण्णि ३ । आदे
णेरइय० अवट्ठि० णियमा अत्थि, सेसपदा भयणिज्जा । भंगा ९ । एवं सव्वणेरइय
सव्वपंचिंदियतिरिक्ख-सव्वमणुस०-सव्वदेवा त्ति । णवरि मणुस०अपज्ज
सव्वपदा भयणिज्जा । भंगा २६ । मणुसतिए भंगा २७ । तिरिक्खेसु भुज
अप्प०-अवट्ठि० णिय० । एवं जाव० ।

§ २०९. भागाभागाणु० दुविहो णि०—ओघेण आदेसेण य । ओघेण भुज०
अप्प० सव्वजी० केव० ? असंखे० भागो । अवट्ठि० असंखेज्जा भागा । अवत्त

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

अवस्थित पदके उदीरक जीव नियमसे हैं । कदाचित् ये नाना जीव हैं और एक अवक्तव्यपदका
उदीरक जीव है । कदाचित् ये नाना जीव हैं और अवक्तव्यपदके उदीरक जीव नाना हैं।
भंग तीन हैं ३ । आदेशसे नारकियोंमें अवस्थितपदके उदीरक जीव नियमसे हैं । शेषपद भजनीय
हैं । भंग ९ हैं । इसी प्रकार सब नारकी, सब पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च, सब मनुष्य और सब देवोंमें
जानना चाहिए । किन्तु इतनी विशेषता है कि मनुष्य अपर्याप्तकोंमें सब पद भजनीय हैं।
भंग २६ हैं । मनुष्यत्रिकमें भंग २७ हैं । तिर्यञ्चोंमें भुजगार, अल्पतर और अवस्थितपदके
उदीरक जीव नियमसे हैं । इसी प्रकार अनाहारक मार्गणातक जानना चाहिए ।

विशेषार्थ—सब नारकी, सब पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च और सब देवोंमें एक ध्रुव पद है और दो अध्रुव पद हैं, इसलिए एक जीव और नाना जीवोंकी अपेक्षा इन पदोंके ध्रुव भंग सहित नौ भंग होते हैं । मनुष्य अपर्याप्तकोंमें तीन अध्रुव पद हैं, इसलिए इनके एक और नाना जीवोंकी अपेक्षा छब्बीस भंग होते हैं । मनुष्यत्रिकमें एक ध्रुव पद और तीन अध्रुव पद हैं, इसलिए इनमें ध्रुव भंगके साथ एक और नाना जीवोंकी अपेक्षा सत्ताईस भंग होते हैं ।

§ २०८ भागाभागानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे भुजगार और अल्पतरपदके उदीरक जीव सब जीवोंके कितने भागप्रमाण हैं ? असंख्यातवें भागप्रमाण हैं । अवस्थितपदके उदीरक जीव असंख्यात बहुभागप्रमाण हैं । तथा अवक्तव्य पदके उदीरक जीव अनन्तवें भागप्रमाण हैं । आदेशसे नारकियोंमें ओघके समान भंग है। किन्तु अवक्तव्यपदके उदीरक जीव नहीं हैं । इसी प्रकार सब नारकी, सब तिर्यञ्च, मनुष्य अपर्याप्त, सामान्य देव और भवनवासियोंसे लेकर अपराजित तकके देवोंमें जानना चाहिए। मनुष्योंमें भुजगार, अल्पतर और अवक्तव्यपदके उदीरक जीव सब जीवोंके कितने भागप्रमाण हैं ? असंख्यातवें भागप्रमाण हैं । अवस्थितपदके उदीरक जीव असंख्यात बहुभागप्रमाण हैं। इसी प्रकार मनुष्य पर्याप्त और मनुष्यिनियोंमें जानना चाहिए । किन्तु इतनी विशेषता है कि असंख्यातके स्थानमें संख्यात करना चाहिए । इसी प्रकार सर्वार्थसिद्धिमें जानना चाहिए । किन्तु इतनी विशेषता है कि इनमें अवक्तव्यपदके उदीरक जीव नहीं हैं । इसी प्रकार अनाहारक मार्गणातक जानना चाहिए ।

§ २०९. परिमाणानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे भुजगार, अल्पतर और अवस्थितपदके उदीरक जीव कितने हैं ? अनन्त हैं । अवक्तव्यपदके उदीरक जीव कितने हैं ? संख्यात हैं । इसी प्रकार तिर्यञ्चोंमें जानना चाहिए । किन्तु इतनी

असंखे०भागो । आदेसेण णेरइय० ओघं । णवरि अवत्त० णत्थि । एवं सव्वणेरइय०-तिरिक्ख-मणुसअपज्ज०-देवा भवणादि जाव अवराजिदा त्ति । मणुसेसु भुज०-अप्प०-अवत्त० सव्वजी० केवडि० ? असंखे०भागो । अवट्ठि० असंखेज्जा भागा । एवं मणुसपज्ज०-मणुसिणी० । णवरि संखेज्जं कायव्वं । एवं चेव सव्वट्ठे । णवरि अवत्त०उदीर० णत्थि । एवं जाव० ।

§ २१०. परिमाणाणु० दुविहो णि०—ओघे० आदेसे० । ओघेण भुज०-अप्प०-अवट्ठि०उदीर० केत्तिया ? अणंता । अवत्त० केत्ति० ? संखेज्जा । एवं तिरिक्खेसु । णवरि अवत्त० णत्थि । आदेसेण णेरइय० भुज०-अप्प०-अवट्ठि०उदी० केत्ति० ? असंखेज्जा । एवं सव्वणेरइय०-सव्वपंचिंदियतिरिक्ख-मणुसअपज्ज०-देवा भवणादि जाव अवराइदा त्ति । मणुसेसु भुज०-अप्प०-अवट्ठि० के० ? असंखेज्जा । अवत्त० के० ? संखेज्जा । मणुसपज्ज०-मणुसिणी-सव्वट्ठदेवेसु सव्वपदा संखेज्जा । एवं जाव० ।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

§ २११. खेत्ताणु० दुविहो णि०—ओघेण आदेसेण य । ओघेण भुज०-अप्प०-

विशेषता है कि इनमें अवक्तव्यपदके उदीरक जीव नहीं हैं। आदेशसे नारकियोंमें भुजगार, अल्पतर और अवस्थितपदके उदीरक जीव कितने हैं ? असंख्यात हैं। इसी प्रकार सब नारकी, सब पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च, मनुष्य अपर्याप्त, सामान्य देव और भवनवासियोंसे लेकर अपराजित तकके देवोंमें जानना चाहिए। मनुष्योंमें भुजगार, अल्पतर और अवस्थित पदके उदीरक जीव कितने हैं ? असंख्यात हैं। अवक्तव्यपदके उदीरक जीव कितने हैं ? संख्यात हैं। मनुष्य पर्याप्त, मनुष्यिनी और सर्वार्थसिद्धिके देवोंमें सब पदोंके उदीरक जीव संख्यात हैं। इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

§ २११. क्षेत्रानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे भुजगार, अल्पतर और अवस्थितपदके उदीरक जीवोंका कितना क्षेत्र है ? सर्व लोक क्षेत्र है। अवक्तव्यपदके उदीरक जीवोंका लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्र है। इसी प्रकार तिर्यञ्चोंमें जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि इनमें अवक्तव्यपदके उदीरक जीव नहीं हैं। शेष मार्गणाओंमें सब पदोंके उदीरक जीवोंका क्षेत्र लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण है। इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

विशेषार्थ—भुजगार आदि तीन पद एकेन्द्रिय आदि जीवोंमें भी होते हैं और उनका क्षेत्र सर्व लोक है, इसलिए यहाँ पर ओघसे इन तीन पदोंके उदीरक जीवोंका क्षेत्र सर्व लोक कहा है। परन्तु अवक्तव्य पद उपशमश्रेणिसे गिरते समय ही होता है और ऐसे जीवोंका क्षेत्र लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण है, इसलिए ओघसे अवक्तव्य पदके उदीरक जीवोंका क्षेत्र लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण कहा है। यह व्यवस्था सामान्य तिर्यञ्चोंमें बन जाती है, इसलिए सम्भव पदोंका भंग ओघके समान जाननेकी सूचना की है। मात्र तिर्यञ्चोंमें उपशमश्रेणिकी प्राप्ति सम्भव नहीं है, इसलिए इनमें अवक्तव्यपद सम्भव न होनेसे उसका निषेध किया है। गतिमार्गणाके शेष भेदोंका क्षेत्र ही लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण है, इसलिए इनमें सम्भव सब पदोंका क्षेत्र लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण कहा है।

§ २१२. स्पर्शनानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे भुजगार, अल्पतर और अवस्थितपदके उदीरक जीवोंने कितने क्षेत्रका स्पर्शन किया है ? सर्व

अवट्ठि० केवडि खेत्ते ? सव्वलोगे । अवत्त० उदीर० लोग० असंखे०भागे । एवं तिरिक्खा० । णवरि अवत्त० णत्थि । सेसगइमग्गणासु सव्वपदा० लोग० असंखे०भागे । एवं जाव० ।

§ २१२. पोसणाणु० दुविहो णि०—ओघेण आदेसे० । ओघेण भुज०-

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

अप्प०-अवट्ठि० केव० पोसिदं ? सव्वलोगो । अवत्त० केव० पोसिदं ? लोग० असंखे०भागो । एवं तिरिक्खा० । णवरि अवत्त० णत्थि । आदेसे० णेरइय० पदेहि लोग० असंखे०भागो छ चोद्दस० देसूणा । एवं विदियादि सत्तमा त्ति । णवरि सगपोसणं । पढमाए खेत्तं । सव्वपंचिंदियतिरिक्ख-मणुसअपज्ज० भुज०-अप्प०-अवट्ठि० लोग० असंखे०भागो सव्वलोगो वा । एवं मणुसतिए । णवरि अवत्त० लोग० असंखे०भागो । देवेसु सव्वपद० लोग० असंखे०भागो अट्ठ णवचोद्दस० । भवणादि जाव सव्वट्ठा त्ति सव्वपदाणं सगपोसणं कायव्वं । एवं जाव० ।

लोकप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अवक्तव्य पदके उदीरक जीवोंने कितने क्षेत्रका स्पर्शन किया है ? लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। इसीप्रकार तिर्यञ्चोंमें जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि इनमें अवक्तव्यपद नहीं है। आदेशसे नारकियोंमें सब पदोंके उदीरक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम छह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। इसीप्रकार दूसरी पृथिवीसे लेकर छठी पृथिवी तकके नारकियोंमें जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि अपना स्पर्शन कहना चाहिए। पहली पृथिवीमें क्षेत्रके समान भंग है। सब पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च और मनुष्य अपर्याप्तकोंमें भुजगार, अल्पतर और अवस्थितपदके उदीरक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और सर्व लोकप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। इसीप्रकार मनुष्यत्रिकमें जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि इनमें अवक्तव्यपदके उदीरक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। देवोंमें सब पदोंके उदीरक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ और नौ भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। भवनवासियोंसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें अपना अपना स्पर्शन करना चाहिए। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

विशेषार्थ—ओघसे और आदेशसे गतिमार्गणाके सब भेदोंमें जहाँ जो स्पर्शन है वह वहाँ भुजगार, अल्पतर और अवस्थित पदके उदीरकोंका होता है यह उक्त कथनका तात्पर्य है। मात्र अवक्तव्यपदके उदीरकोंका स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण ही प्राप्त होता है। कारणका निर्देश हम पूर्वमें कर आये हैं, इसलिए ओघसे और मनुष्यत्रिकमें इस पदके उदीरकोंका स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण कहा है।

§ २१२. कालानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे भुजगार, अल्पतर और अवस्थितपदके उदीरक जीवोंका कितना काल है ? सर्वदा है। अवक्तव्य पदके उदीरक जीवोंका कितना काल है ? जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल संख्यात समय है। इसीप्रकार तिर्यञ्चोंमें जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि इनमें अवक्तव्यपद नहीं है।

§ २१३. कालाणुगमेण दुविहो णि०—ओघेण आदेसे० । ओघेण भुज०-अप्प०-अवट्ठि० केवचिरं ? सव्वद्धा । अवत्त० जह० एगसमओ, उक्क० संखेज्जा समया । एवं तिरिक्खा० । णवरि अवत्त० णत्थि ।

मार्गदर्शक आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

§ २१४. आदेसेण णेरइय० भुज०-अप्प० जह० एयस०, उक्क० आवलि० असंखे०भागो । अवट्ठि० सव्वद्धा । एवं सव्वणेरइय०-सव्वपंचिंदियतिरिक्ख-देवा भवणादि जाव अवराजिदा त्ति ।

§ २१५. मणुसेसु णारयभंगो । णवरि अवत्त० ओघं । मणुसपज्ज०-मणुसिणी० भुज०-अप्प०-अवत्त० जह० एयस० उक्क० संखेज्जा समया । अवट्ठि० सव्वद्धा । एवं सव्वट्ठे० । णवरि अवत्त० णत्थि । मणुसअपज्ज० भुज०-अप्प० जह० एयस०, उक्क० आवलि० असंखे०भागो । अवट्ठि० जह० एयस०, उक्क० पलिदो० असंखे०-

---

विशेषार्थ—अवक्तव्यपदकी उदीरणा उपशमश्रेणिसे उतरते समय ही होती है। और उपशमश्रेणि पर आरोहणका काल कमसे कम एक समय और लगातार संख्यात समय है, इसलिए अवक्तव्यपदका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल संख्यात समय कहा है।

§ २१४. आदेशसे नारकियोंमें भुजगार और अल्पतर पदके उदीरक जीवोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है। अवस्थितपदके उदीरक जीवोंका काल सर्वदा है। इसीप्रकार सब नारकी, सब पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च, सामान्य देव और भवनवासियोंसे लेकर अपराजित विमान तकके देवोंमें जानना चाहिए।

विशेषार्थ—पहले नारकियोंमें एक जीवकी अपेक्षा भुजगारपदके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल चार समय तथा अल्पतरपदके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल तीन समय बतला आये हैं। इसी तथ्यको ध्यानमें रखकर यहाँ पर नाना जीवोंकी अपेक्षा भुजगार और अल्पतरपदके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण कहा है, क्योंकि अनेक नारकी जीव भी उक्त दोनों पद एक समय तक करके दूसरे समयमें न करें यह भी सम्भव है और नारकियोंकी संख्या असंख्यात होनेसे लगातार असंख्यात जीव भी क्रमसे यदि उक्त दोनों पद करें तो भी सब कालका योग आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण होता है। पहले एक जीवकी अपेक्षा अवस्थित पदके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त बतला आये हैं, इसलिए यहाँ पर नाना जीवोंकी अपेक्षा इस पदके उदीरकोंका सब काल बन जानेसे वह उक्त प्रमाण कहा है। शेष कथन सुगम है।

§ २१५. मनुष्योंमें नारकियोंके समान भङ्ग है। किन्तु इतनी विशेषता है कि अवक्तव्य पदके उदीरकोंका भंग ओघके समान है। मनुष्य पर्याप्त और मनुष्यिनियोंमें भुजगार, अल्पतर और अवक्तव्यपदके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल संख्यात समय है। अवस्थितपदके उदीरकोंका काल सर्वदा है। इसीप्रकार सर्वार्थसिद्धिमें जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि इनमें अवक्तव्यपद नहीं है। मनुष्य अपर्याप्तकोंमें भुजगार और अल्पतरपदके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है। अवस्थितपदके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल पल्यके

भागो । एवं जाव० ।

§ २१६. अंतराणु० दुविहो णि०—ओघे० आदेसे० । ओघेण भुज०-अप्प०-अवट्ठि० णत्थि अंतरं । अवत्त० जह० एयसमओ, उक्क० वासपुधत्तं । एवं तिरिक्खेसु । णवरि अवत्त० णत्थि । आदेसेण णेरइय० भुज०-अप्प० जह० एयस०, उक्क० अंतोमु० । अवट्ठि० णत्थि अंतरं । एवं सव्वणेरइय-सव्वपंचिंदियतिरिक्ख-सव्वदेवा त्ति । मणुसतिए णारयभंगो । णवरि अवत्त० ओघं । मणुसअपज्ज० भुज०-अप्प०-अवट्ठि० जह० एयस०, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो । एवं जाव० ।

मार्गदर्शक आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज
§ २१७. भावो सव्वत्थ ओदइओ भावो । एवमेदेसिमुच्चारणाबलेण परूवणं कादूण संपहि अप्पाबहुअपरूवणट्ठमुत्तरं पबंधमोदारइस्सामो—

असंख्यातवें भागप्रमाण है । इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए ।

विशेषार्थ—मनुष्य पर्याप्त और मनुष्यिनियोंकी संख्या संख्यात है, इसलिए इनमें भुजगार, अल्पतर और अवक्तव्यपदके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल संख्यात समय कहा है । मनुष्य अपर्याप्त यह सान्तर मार्गणा है और इनकी संख्या असंख्यात है, इसलिए इनमें भुजगार और अल्पतर पदके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण तथा अवस्थितपदके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण कहा है । शेष कथन सुगम है ।

§ २१६. अन्तरानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे भुजगार, अल्पतर और अवस्थितपदके उदीरकोंका अन्तरकाल नहीं है । अवक्तव्यपदके उदीरकोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर वर्षपृथक्त्वप्रमाण है । इसीप्रकार सामान्य तिर्यञ्चोंमें जानना चाहिए । किन्तु इतनी विशेषता है कि इनमें अवक्तव्यपद नहीं है । आदेशसे नारकियोंमें भुजगार और अल्पतरपदके उदीरकोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है । अवस्थित पदके उदीरकोंका अन्तरकाल नहीं है । इसीप्रकार सब नारकी, सब पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च और सब देवोंमें जानना चाहिए । मनुष्यत्रिकमें नारकियोंके समान भंग है । किन्तु इतनी विशेषता है कि इनमें अवक्तव्यपदके उदीरकोंका भंग ओघके समान है । मनुष्य अपर्याप्तकोंमें भुजगार, अल्पतर और अवस्थितपदके उदीरकोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है । इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए ।

विशेषार्थ—ओघप्ररूपणामें और मनुष्यत्रिकमें अवक्तव्यपदके उदीरकोंका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर उपशामकोंके जघन्य और उत्कृष्ट अन्तरको ध्यानमें रखकर कहा है । सब नारकी, सब पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च और सब देवोंमें भुजगार और अल्पतरपद कमसे कम एक समयके अन्तरसे और अधिकसे अधिक अन्तर्मुहूर्तके अन्तरसे नियमसे होते हैं । इसीसे इनमें इन पदोंके उदीरकोंका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त कहा है । मनुष्य अपर्याप्त यह सान्तर मार्गणा है । इसका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है । इसीसे इसमें सब पदोंके उदीरकोंका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण कहा है । शेष कथन सुगम है ।

§ २१७. भाव सर्वत्र औदयिक है । इसप्रकार इनका उच्चारणाके बलसे कथन करके अब

❀ अप्पाबहुअं ।

§ २१८. सुगममेदमहियारपरामरसवक्कं ।

❀ सव्वत्थोवा अवत्तव्वपवेसगा ।

§ २१९. किं कारणं ? उवसमसेढीए सव्वोवसमं कादूण परिवदमाणजीवेसु चेव तदुवलंभादो ।

❀ भुजगारपवेसगा अणंतगुणा ।

§ २२०. किं कारणं ? दुसमयसंचिदेइंदियजीवाणमेत्थ पहाणभावेणावलंबणादो ।

❀ अप्पदरपवेसगा विसेसाहिया ।

§ २२१. किं कारणं ? मिच्छत्तं पडिवज्जमाणसम्माइट्ठीणं सम्मत्तं पडिवज्जमाणमिच्छाइट्ठीणं च जहाकमं भुजगारप्पदरपरिणदाणं सत्थाणमिच्छाइट्ठीणं च सव्वत्थ भुजगारप्पदरपवेसगाणं समाणत्ते संते वि सम्मत्तमुप्पाएमाणाणादियमिच्छाइट्ठीहि सह दंसण-चारित्तमोहक्खवयजीवाणं भुजगारेण विणा अप्पदरमेव कुणमाणाणमेत्थाहियत्तदंसणादो ।

❀ अवट्ठिदपवेसगा असंखेज्जगुणा ।

§ २२२. किं कारणं ? अंतोमुहुत्तसंचिदेइंदियरासिस्स पहाणत्तादो ।

एवमोघो समत्तो ।

अल्पबहुत्वका कथन करनेके लिए आगेका प्रबन्ध लिखते हैं—

* अल्पबहुत्वका अधिकार है ।

§ २१८. अधिकारका परामर्श करानेवाला यह वचन सुगम है ।

* अवक्तव्यप्रवेशक जीव सबसे स्तोक हैं ।

§ २१९. क्योंकि उपशमश्रेणिमें सर्वोपशम करके गिरनेवाले जीवोंमें ही यह पद पाया जाता है ।

* उनसे भुजगारप्रवेशक जीव अनन्तगुणे हैं ।

§ २२०. क्योंकि दो समयके भीतर सञ्चित हुए एकेन्द्रिय जीवोंका यहाँ पर प्रधानभावसे अवलम्बन लिया है ।

* उनसे अल्पतरप्रवेशक जीव विशेष अधिक हैं ।

§ २२१ क्योंकि क्रमसे भुजगार और अल्पतरपदसे परिणत हुए मिथ्यात्वको प्राप्त होनेवाले सम्यग्दृष्टि और सम्यक्त्वको प्राप्त होनेवाले मिथ्यादृष्टि तथा भुजगार और अल्पतरपदमें प्रवेश करनेवाले स्वस्थान मिथ्यादृष्टि जीव यद्यपि सर्वत्र समान हैं तो भी सम्यक्त्वको उत्पन्न करनेवाले अनादि मिथ्यादृष्टि जीवोंके साथ भुजगारके बिना केवल अल्पतरपदको ही प्राप्त ऐसे दर्शनमोहनीय और चारित्रमोहनीय कर्मकी क्षपणा करनेवाले जीवोंकी यहाँ पर अधिकता देखी जाती है ।

* उनसे अवस्थितप्रवेशक जीव असंख्यातगुणे हैं ।

§ २२२. क्योंकि अन्तर्मुहूर्तके भीतर सञ्चित हुई एकेन्द्रिय जीवराशिकी प्रधानता है ।

इस प्रकार ओघप्ररूपणा समाप्त हुई ।

§ २२३. आदेसेण णेरइय० सव्वत्थोवा भुज०पवे० । अप्प० विसेसा० । अवट्ठि० असंखे०गुणा । एवं सव्वणेरइय०-तिरिक्ख-पंचिंदियतिरिक्खतिय-देवा भवणादि जाव अवराजिदा त्ति । पंचि०तिरिक्खअपज्ज० सव्वत्थोवा भुज०-अप्प०-पवे० । अवट्ठि० असंखेज्जगुणा । मणुसेसु सव्वत्थोवा अवत्त०उदीर० । भुज० असंखे०गुणा । अप्प० विसेसा० । अवट्ठि० असंखे०गुणा । एवं मणुसपज्ज०-मणुसिणी० । णवरि संखेज्जगुणं कायव्वा । एवं सव्वट्ठे । णवरि अवत्त० उदीर० णत्थि । एवं जाव० ।

एवं भुजगारो समत्तो ।

❀ पदणिक्खेव-वड्ढीओ कादव्वाओ ।

§ २२४. एदेण सुत्तेण समप्पियाणं पदणिक्खेव-वड्ढीणमुच्चारणावलंबणेण परूवणं कस्सामो । तं जहा—पदणिक्खेवे त्ति तत्थ इमाणि तिण्णि अणिओगद्दाराणि—समुक्कित्तणा सामित्तमप्पाबहुए त्ति । समुक्कित्तणा दुविहा—जहण्णा उक्कस्सा च । उक्कस्से पयदं । दुविहो णि०—ओघे० आदेसे० । ओघेण अत्थि उक्क० वड्ढी उक्क० हाणी उक्क० अवट्ठाणं । एवं चदुसु गदीसु । एवं जाव० । एवं जहण्णयं पि णेदव्वं ।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

§ २२३ आदेशमें नारकियोंमें भुजगारप्रवेशक जीव सबसे स्तोक हैं। उनसे अल्पतरप्रवेशक जीव विशेष अधिक हैं। उनसे अवस्थितप्रवेशक जीव असंख्यातगुणे हैं। इसीप्रकार सब नारकी, सामान्य तिर्यञ्च, पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिक, सामान्य देव और भवनवासियोंसे लेकर अपराजित तकके देवोंमें जानना चाहिए। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्त जीवोंमें भुजगार और अल्पतरप्रवेशक जीव सबसे स्तोक हैं। उनसे अवस्थितप्रवेशक जीव असंख्यातगुणे हैं। मनुष्योंमें अवक्तव्यउदीरक जीव सबसे स्तोक हैं। उनसे भुजगारउदीरक जीव असंख्यातगुणे हैं। उनसे अल्पतरउदीरक जीव विशेष अधिक हैं। उनसे अवस्थितउदीरक जीव असंख्यातगुणे हैं। इसीप्रकार मनुष्य पर्याप्त और मनुष्यिनियोंमें जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि असंख्यातगुणेके स्थानमें संख्यातगुणे करने चाहिए। इसीप्रकार सर्वार्थसिद्धिमें जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि इनमें अवक्तव्यउदीरक जीव नहीं हैं। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

इसप्रकार भुजगार समाप्त हुआ।

❀ पदनिक्षेप और वृद्धि करनी चाहिए।

§ २२४. इस सूत्रके आश्रयसे मुख्यताको प्राप्त हुए पदनिक्षेप और वृद्धिका उच्चारणाके अवलम्बन द्वारा प्ररूपणा करते हैं। यथा—पदनिक्षेपका प्रकरण है। उसमें ये तीन अनुयोगद्वार हैं—समुत्कीर्तना, स्वामित्व और अल्पबहुत्व। समुत्कीर्तना दो प्रकारकी है—जघन्य और उत्कृष्ट। उत्कृष्टका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे उत्कृष्ट वृद्धि, उत्कृष्ट हानि और उत्कृष्ट अवस्थान है। इसीप्रकार चारों गतियोंमें जानना चाहिए। तथा इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए। इसीप्रकार जघन्य भी ले जाना चाहिए।

§ २२५. सामित्तं दुविहं—जह० उक्क० । उक्कस्से पयदं । दुविहो णि०—ओघे० मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज आदेसे० । ओघेण उक्क० वड्ढी कस्स ? अण्णदरस्स जो एगमुदीरेमाणो मदो देवो जादो तदो अट्ठ उदीरेदि तस्स उक्क० वड्ढी । तस्सेव से काले उक्कस्समवट्ठाणं । उक्क० हाणी कस्स ? अण्णद० जो णव उदीरेमाणो संजमं पडिवण्णो तदो चत्तारि उदीरेदि तस्स उक्कस्सिया हाणी ।

§ २२६. आदेसेण णेरइय० उक्क० वड्ढी कस्स ? अण्णद० छ उदीरेमाणो जो दस उदीरेदि तस्स उक्क० वड्ढी । तस्सेव से काले उक्क० अवट्ठाणं । उक्क० हाणी कस्स ? अण्णद० जो णव उदीरेमाणो छ उदीरेदि तस्स उक्क० हाणी । एवं सव्व-णेरइय०-देवा० जाव० णवगेवज्जा त्ति । तिरिक्ख-पंचि०तिरिक्खतिए उक्क० वड्ढी कस्स ? अण्णद० जो पंच उदीरेमाणो दस उदीरेदि तस्स उक्क० वड्ढी । तस्सेव से काले उक्कस्समवट्ठाणं । उक्क० हाणी कस्स ? अण्णद० णव उदीरे० पंच उदीरेदि तस्स उक्क० हाणी । पंचिंदियतिरिक्खअपज्ज०-मणुसअपज्ज० उक्क० वड्ढी कस्स ? अण्णद० अट्ठ उदीरे० दस उदीरेदि तस्स उक्कस्सिया वड्ढी । उक्क० हाणी कस्स ? अण्णद० दस उदीरे० अट्ठ उदीरेदि तस्स उक्क० हाणी । एगदरत्थ अवट्ठाणं ।

§ २२७. मणुसतिए उक्क० वड्ढी कस्स ? अण्णद० जो चत्तारि उदीरे० दस

---

§ २२५ स्वामित्व दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट । उत्कृष्टका प्रकरण है । निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे उत्कृष्ट वृद्धि किसके होती है ? एक प्रकृतिकी उदीरणा करनेवाला जो अन्यतर जीव मरकर देव हुआ और आठ प्रकृतियोंकी उदीरणा करने लगा उसके उत्कृष्ट वृद्धि होती है । उसीके तदनन्तर समयमें उत्कृष्ट अवस्थान होता है । उत्कृष्ट हानि किसके होती है ? नौ प्रकृतियोंकी उदीरणा करनेवाला जो अन्यतर जीव संयमको प्राप्त हो चार प्रकृतियोंकी उदीरणा करता है उसके उत्कृष्ट हानि होती है ।

§ २२६. आदेशसे नारकियोंमें उत्कृष्ट वृद्धि किसके होती है । छहकी उदीरणा करनेवाला जो अन्यतर जीव दसकी उदीरणा करता है उसके उत्कृष्ट वृद्धि होती है । उसीके तदनन्तर समयमें उत्कृष्ट अवस्थान होता है । उत्कृष्ट हानि किसके होती है ? नौकी उदीरणा करनेवाला जो अन्यतर जीव छहकी उदीरणा करता है उसके उत्कृष्ट हानि होती है । इसीप्रकार सब नारकी, सामान्य देव और नौ ग्रैवेयक तकके देवोंमें जानना चाहिए । सामान्य तिर्यञ्च और पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकमें उत्कृष्ट वृद्धि किसके होती है ? पाँचकी उदीरणा करनेवाला जो अन्यतर जीव दसकी उदीरणा करता है उसके उत्कृष्ट वृद्धि होती है । उसीके तदनन्तर समयमें उत्कृष्ट अवस्थान होता है । उत्कृष्ट हानि किसके होती है ? नौकी उदीरणा करनेवाला जो अन्यतर जीव पाँचकी उदीरणा करता है उसके उत्कृष्ट हानि होती है । पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्त जीवोंमें उत्कृष्ट वृद्धि किसके होती है ? आठकी उदीरणा करनेवाला जो अन्यतर जीव दसकी उदीरणा करता है उसके उत्कृष्ट वृद्धि होती है । उत्कृष्ट हानि किसके होती है ? दसकी उदीरणा करनेवाला जो अन्यतर जीव आठकी उदीरणा करता है उसके उत्कृष्ट हानि होती है । किसी एक जगह उत्कृष्ट अवस्थान होता है ।

§ २२७. मनुष्यत्रिकमें उत्कृष्ट वृद्धि किसके होती है ? चारकी उदीरणा करनेवाला जो

उदीरेदि तस्स उक्क० वड्ढी । तस्सेव से काले उक्क० अवट्ठाणं । उक्क० हाणी कस्स ? अण्णद० णव उदीरे० चत्तारि उदीरेदि तस्स उक्क० हाणी । अणुद्दिसादि सव्वट्ठा त्ति उक्क० वड्ढी कस्स ? अण्णद० जो छ उदीरे० णव उदीरेदि तस्स उक्क० वड्ढी । उक्क० हाणी कस्स ? अण्णद० णव उदीरे० छ उदीरेदि तस्स उक्क० हाणी । एगदरत्थमवट्ठाणं । एवं जाव० ।

§ २२८. जहण्णे पयदं । दुविहो णि०—ओघे० आदेसे० । ओघेण जह० वड्ढी कस्स ? अण्णद० णव उदीरे० दस उदीरेदि तस्स जह० वड्ढी । जह० हाणी कस्स ? अण्णद० दस उदीरे० णव उदीरेदि तस्स जह० हाणी । एगदरत्थ अवट्ठाणं । एवं चदुसु गदीसु । णवरि अणुद्दिसादि सव्वट्ठा त्ति जह० वड्ढी कस्स० ? अण्णद० अट्ठ उदीरे० णव उदीरेदि तस्स जह० वड्ढी । जह० हाणी कस्स ? अण्णद० णव उदीरे० अट्ठ उदीरेदि तस्स जह० हाणी । एगदरत्थ अवट्ठाणं । एवं जाव० ।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

§ २२९. अप्पाबहुअं दुविहं—जह० उक्क० । उक्कस्से पयदं । दुविहो णि०—ओघे० आदेसे० । ओघेण सव्वत्थोवा उक्क० हाणी । वड्ढी अवट्ठाणं च दो वि सरिसाणि विसेसा० । एवं चदुसु गदीसु । णवरि पंचि०तिरिक्खअपज्ज०-मणुसअपज्ज०-

---

अन्यतर जीव दसकी उदीरणा करता है उसके उत्कृष्ट वृद्धि होती है। उसीके तदनन्तर समयमें उत्कृष्ट अवस्थान होता है। उत्कृष्ट हानि किसके होती है ? नौकी उदीरणा करनेवाला जो अन्यतर जीव चार की उदीरणा करता है उसके उत्कृष्ट हानि होती है। अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें उत्कृष्ट वृद्धि किसके होती है ? छहकी उदीरणा करनेवाला जो अन्यतर जीव नौकी उदीरणा करता है उसके उत्कृष्ट वृद्धि होती है। उत्कृष्ट हानि किसके होती है ? नौकी उदीरणा करनेवाला जो अन्यतर जीव छहकी उदीरणा करता है उसके उत्कृष्ट हानि होती है। किसी एक जगह उत्कृष्ट अवस्थान होता है। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणातक जानना चाहिए।

§ २२८. जघन्यका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे जघन्य वृद्धि किसके होती है ? नौकी उदीरणा करनेवाला जो अन्यतर जीव दसकी उदीरणा करता है उसके जघन्य वृद्धि होती है। जघन्य हानि किसके होती है ? दसकी उदीरणा करनेवाला जो अन्यतर जीव नौकी उदीरणा करता है उसके जघन्य हानि होती है। किसी एक जगह जघन्य अवस्थान होता है। इसीप्रकार चारों गतियोंमें जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें जघन्य वृद्धि किसके होती है ? आठकी उदीरणा करनेवाला जो अन्यतर जीव नौकी उदीरणा करता है उसके जघन्य वृद्धि होती है। जघन्य हानि किसके होती है ? नौकी उदीरणा करनेवाला जो अन्यतर जीव आठकी उदीरणा करता है उसके जघन्य हानि होती है। किसी एक जगह जघन्य अवस्थान होता है। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणातक जानना चाहिए।

§ २२९. अल्पबहुत्व दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट। उत्कृष्टका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे उत्कृष्ट हानि सबसे स्तोक है। उत्कृष्ट वृद्धि और अवस्थान दोनों समान होकर विशेष अधिक हैं। इसीप्रकार चारों गतियोंमें जानना

अणुदिसादि सव्वट्ठा त्ति उक्क० वड्ढी हाणी अवट्ठाणं च तिण्णि वि सरिसाणि। एवं जाव०।

§ २३०. जह० पयदं। दुविहो णि०—ओघे० आदेसे०। ओघेण जह० वड्ढी हाणी अवट्ठाणं च तिण्णि वि सरिसाणि। एवं चदुसु गदीसु। एवं जाव०।

एवं पदणिक्खेवो समत्तो।

§ २३१. वड्ढिउदीरणाए तत्थ इमाणि तेरस अणियोगद्दाराणि—समुक्कित्तणा जाव अप्पाबहुए त्ति। समुक्कित्तणाणु० दुविहो णि०—ओघे० आदेसे०। ओघेण अत्थि संखेज्जभागवड्ढी हाणी संखेज्जगुणवड्ढी हाणी अवट्ठि० अवत्त०। एवं मणुसतिए। आदेसेण णेरइय० अत्थि संखेज्जभागवड्ढि-हाणि-अवट्ठा०। एवं सव्वणेरइय०-पंचितिरि०अपज्ज०-मणुसअपज्ज०-सव्वदेवा त्ति। तिरिक्ख-पंचिंदियतिरिक्खतियम्मि अत्थि संखे०भागवड्ढी-हाणी संखे०गुणवड्ढी हाणी अवट्ठाण०[1]। एवं जाव०।

§ २३२. सामित्ताणु० दुविहो णि०—ओघे० आदेसे०। ओघेण संखे०भाग-वड्ढी हाणी संखे०गुणवड्ढी अवट्ठा० कस्स? अण्णद० सम्माइ० मिच्छाइ०। संखे०-गुणहाणी कस्स? अण्णद० सम्माइ०। अवत्त० भुजगारभंगो। एवं मणुसतिए।

चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त, मनुष्य अपर्याप्त और अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें उत्कृष्ट वृद्धि, हानि और अवस्थान तीनों ही समान हैं। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

§ २३०. जघन्यका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे जघन्य वृद्धि, हानि और अवस्थान तीनों ही समान हैं। इसीप्रकार चारों गतियोंमें जानना चाहिए। तथा इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

इसप्रकार पदनिक्षेप समाप्त हुआ।

§ २३१. वृद्धि उदीरणाका प्रकरण है। उसमें समुत्कीर्तनासे लेकर अल्पबहुत्व तक ये तेरह अनुयोगद्वार हैं। समुत्कीर्तनानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे संख्यातभागवृद्धि, संख्यातभागहानि, संख्यातगुणवृद्धि, संख्यातगुणहानि, अवस्थित और अवक्तव्य उदीरणा है। इसीप्रकार मनुष्यत्रिकमें जानना चाहिए। आदेशसे नारकियोंमें संख्यातभागवृद्धि, संख्यातभागहानि और अवस्थित उदीरणा है। इसीप्रकार सब नारकी, पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त, मनुष्य अपर्याप्त और सब देवोंमें जानना चाहिए। सामान्य तिर्यञ्च और पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकमें संख्यातभागवृद्धि, संख्यातभागहानि, संख्यातगुणवृद्धि और अवस्थान है। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

§ २३२ स्वामित्वानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे संख्यातभागवृद्धि, संख्यातभागहानि,, संख्यातगुणवृद्धि और अवस्थान किसके होते हैं? अन्यतर सम्यग्दृष्टि और मिथ्यादृष्टिके होते हैं। संख्यातगुणहानि किसके होती है? अन्यतर सम्यग्दृष्टिके होती है। अवक्तव्य उदीरणाका भंग भुजगारके समान है। इसी प्रकार मनुष्य-

---

१ आ० प्रतौ गुणवड्ढी हाणी अवट्ठाण० इति पाठः।

सव्वणिरय०-पंचिंदियतिरिक्खअपज्ज०-मणुसअपज्ज०-सव्वदेवा त्ति भुजगारभंगो। तिरि०-पंचिं०तिरिक्खतिए भुजगारभंगो। णवरि संखेज्जगुणवड्ढी कस्स ? अण्णद० मिच्छाइट्ठि०। एवं जाव०।

§ २३३. कालाणु० दुविहो णि०—ओघेण आदेसे०। ओघेण संखे०भागवड्ढी जह० एयस०। उक्क० चत्तारि समया। संखे०भागहाणी जह० एयस०, उक्क० तिण्णि समया। अवट्ठि० जह० एयस०, उक्क० अंतोमु०। संखे०गुणवड्ढी जह० एयस०, उक्क० बे समया। संखे०गुणहाणि-अवत्त० जहण्णुक्क० एयसमओ। एवं मणुसतिए। णवरि संखे०गुणवड्ढि० जहण्णु० एयस०। सव्वणेरइय०—पंचितिरि०-अपज्ज०-मणुसअपज्ज० सव्वदेवा त्ति भुजगारभंगो। तिरिक्ख-पंचि०तिरिक्खतिए भुजगारभंगो। णवरि संखे०गुणवड्ढि० जहण्णु० एयसमओ। एवं जाव०।

त्रिकमें जानना चाहिए। सब नारकी, पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त, मनुष्य अपर्याप्त और सब देवोंमें भुजगारके समान भंग है। सामान्य तिर्यञ्च और पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकमें भुजगारके समान भंग है। किन्तु इतनी विशेषता है कि संख्यात गुणवृद्धि किसके होती है ? अन्यतर मिथ्यादृष्टिके होती है। इसी प्रकार अनाहारक मार्गणातक जानना चाहिए।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

§ २३३. कालानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे संख्यातभागवृद्धिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल चार समय है। संख्यात भागहानिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल तीन समय है। अवस्थित उदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। संख्यातगुणवृद्धिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल दो समय है। संख्यातगुणहानि और अवक्तव्यउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। इसीप्रकार मनुष्यत्रिकमें जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि इनमें संख्यातगुणवृद्धिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। सब नारकी, पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त, मनुष्य अपर्याप्त और सब देवोंमें भुजगारके समान भंग है। सामान्य तिर्यञ्च और पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकमें भुजगारके समान भंग है। किन्तु इतनी विशेषता है कि संख्यातगुणवृद्धिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

विशेषार्थ—पहले भुजगारानुगममें भुजगार उदीरणाका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल चार समय, अल्पतरउदीरणाका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल तीन समय तथा अवस्थितपदका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त घटित करके बतला आये हैं। वही यहाँपर क्रमसे संख्यातभागवृद्धि, संख्यातभागहानि और अवस्थितउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल जान लेना चाहिए। जो उपशामक उतरते समय अन्यतम संज्वलनकी उदीरणा करता हुआ मर कर देव होने पर आठकी उदीरणा करने लगता है उसके संख्यातगुणवृद्धिका जघन्य काल एक समय प्राप्त होता है और जो उपशामक उतरते समय अन्यतम संज्वलनकी उदीरणा करता हुआ अन्यतम वेदके साथ दोकी उदीरणा करता है और तदनन्तर समयमें मरकर देव होनेपर आठकी उदीरणा करने लगता है उसके संख्यात गुणवृद्धिका उत्कृष्ट काल दो समय प्राप्त होता है। यही कारण है कि यहाँ पर संख्यात गुणवृद्धिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल दो समय कहा है। जो मिथ्यादृष्टि जीव नौ की

§ २३४. अंतराणु० दुविहो णिद्देसो—ओघेण आदेसे० । ओघेण संखे०भाग-वड्डि-हाणि-अवट्ठि०-अवत्त० उदीर० भुजगारभंगो । संखेज्जगुणवड्डि-हाणी० जह० एग० अंतो०, उक्क० उवड्ढपोग्गल० । सव्वणेर०-पंचि०तिरिक्खअप०-मणुसअप०-सव्वदेवा त्ति भुजगारभंगो । तिरिक्ख-पंचि०तिरिक्खतिए भुज०भंगो । णवरि तिरिक्खेसु संखेज्जगुणवड्डि० जह० पलिदो० असंखे०भागो, उक्क० उवड्ढपोग्गलपरियट्टं । पंचिंदियतिरिक्खतिए संखेज्जगुणवड्डी० णत्थि अंतरं । मणुसतिए भुज०भंगो । णवरि संखे०गुणवड्डि-हाणि-अवत्त० जह० अंतोमु०, उक्क० पुव्वकोडिपुधत्तं । एवं जाव० ।

उदीरणा करता हुआ अनन्तर समयमें संयत होकर चारकी उदीरणा करने लगता है उसके संख्यातगुणहानिका काल एक समय प्राप्त होनेसे यहाँ इसका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय कहा है। जो किसी भी प्रकृतिकी उदीरणा नहीं करनेवाला उपशान्तमोह जीव गिर कर दसवें गुणस्थानमें एककी उदीरणा करने लगता है उसके अवक्तव्य उदीरणाका काल एक समय मात्र प्राप्त होनेसे इसका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय कहा है। मनुष्यत्रिकमें यह ओघ-प्ररूपणा बन जाती है, इसलिए उनमें ओघके समान जाननेकी सूचना की है। मात्र संख्यातगुण वृद्धि उदीरणाका उत्कृष्ट काल ओघप्ररूपणामें दो गतियोंकी अपेक्षा घटित करके बतलाया गया है जो मनुष्यत्रिकमें सम्भव नहीं है, इसलिए इनमें उक्त पदका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय कहा है। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकमें पांचकी उदीरणा करनेवाला जो संयतासंयत जीव मिथ्यात्वमें जाकर दसकी उदीरणा करने लगता है उसके संख्यातगुणवृद्धिका काल मात्र एक समय प्राप्त होनेसे यहां पर इन तीनों प्रकारके तिर्यञ्चोंमें इस पदका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय कहा है। शेष कथन भुजगार उदीरणाके समान होनेसे उसे दृष्टिपथमें लाकर यहां घटित कर लेना चाहिए। पुनरुक्त दोषके भयसे यहां पर हमने उसका अलगसे निर्देश नहीं किया है।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

§ २३४. अन्तरानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे संख्यातभागवृद्धि, संख्यातभागहानि, अवस्थित और अवक्तव्यउदीरणाका भंग भुजगारउदीरणाके समान है। संख्यातगुणवृद्धि और संख्यातगुणहानिका जघन्य अन्तर क्रमसे एक समय और अन्तर्मुहूर्त है तथा दोनोंका उत्कृष्ट अन्तर उपार्ध पुद्गलपरिवर्तनप्रमाण है। सब नारकी, पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त, मनुष्य अपर्याप्त और सब देवोंमें भुजगारउदीरणाके समान भंग है। सामान्य तिर्यञ्च और पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकमें भुजगारउदीरणाके समान भंग है। किन्तु इतनी विशेषता है कि सामान्य तिर्यञ्चोंमें संख्यातगुणवृद्धिका जघन्य अन्तर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है और उत्कृष्ट अन्तर उपार्ध पुद्गलपरिवर्तनप्रमाण है। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकमें संख्यातगुणवृद्धिका अन्तरकाल नहीं है। मनुष्यत्रिकमें भुजगारउदीरणाके समान भंग है। किन्तु इतनी विशेषता है कि संख्यातगुणवृद्धि, संख्यातगुणहानि और अवक्तव्य उदीरणाका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर पूर्वकोटिपृथक्त्वप्रमाण है। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणातक जानना चाहिए।

विशेषार्थ—जो उपशान्तमोह जीव गिरते समय एककी उदीरणा करता हुआ अनन्तर समयमें दोकी उदीरणा एक समयके अन्तरसे मरकर देवोंमें उत्पन्न हो आठकी उदीरणा करने लगता है उसके संख्यातगुणवृद्धिका जघन्य अन्तर एक समय बन जाता है। तथा जो मिथ्या-

§ २३५. णाणाजीवेहि भंगविचयाणु० दुविहो णिद्देसो—ओघेण आदेसेण य। ओघेण संखे०भागवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० णिय० अत्थि, सेसपदाणि भयणिज्जाणि। भंगा २७। आदेसेण णेरइय० अवट्ठि० णिय० अत्थि, सेसपदा भयणिज्जा। भंगा ९। एवं सव्वणेरइय०-सव्वपंचिंदियतिरिक्ख-मणुसतिय-सव्वदेवा त्ति। णवरि भंगविसेसो जाणियव्वो। तिरिक्खेसु संखे०भागवड्ढी हाणी अवट्ठि० णिय० अत्थि, सिया एदे च संखे०गुणवड्ढिउदीरगो च, सिया एदे च संखेज्जगुणवड्ढिउदीरगा च ३। मणुस-

दृष्टि जीव नौकी उदीरणा करता हुआ संयत हो चारकी उदीरणा करके संख्यातगुणहानि करता है। पुनः वह अन्तर्मुहूर्त बाद मिथ्यात्वमें जाकर और अन्तर्मुहूर्तके भीतर संयत हो नौकी उदीरणाके बाद चारकी उदीरणा करने लगता है उसके संख्यातगुणहानिका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त बन जाता है। यही कारण है कि यहाँ पर ओघसे संख्यातगुणवृद्धिका जघन्य अन्तर एक समय और संख्यातगुणहानिका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त कहा है। संख्यातगुण-हानिका यह जघन्य अन्तर दो बार उपशमश्रेणिपर चढ़ानेसे भी प्राप्त किया जा सकता है। यथा कोई उपशामक अपूर्वकरण जीव चारकी उदीरणा करता हुआ अनिवृत्तिकरण हो दोकी उदीरणा द्वारा संख्यातगुणहानि करता है। पुनः वह अन्तर्मुहूर्तके भीतर सवेदभागमें दोकी उदीरणा करता हुआ अवेदभागमें नपुंसकवेदकी उदयव्युच्छित्तिकर एककी उदीरणा द्वारा संख्यात-गुणहानि करता है उसके संख्यातगुणहानिका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त प्राप्त होता है। पूर्वमें दिये गये उदाहरणकी अपेक्षा इस दूसरे प्रकारमें अन्तर कालका समय कम है, इसलिए यहाँ इसकी प्रधानता है। पिछला उदाहरण केवल अन्तरका प्रकार बतलानेके लिए दिया है। इन दोनों पदोंका उत्कृष्ट अन्तर उपार्ध पुद्गल परिवर्तन प्रमाण है यह स्पष्ट ही है। सामान्य तिर्यञ्चोंमें पाँचकी उदीरणा करनेवाला जो जीव दसकी उदीरणा करता है वह उपशमसम्यग्दृष्टि संयता-संयतसे च्युत होकर मिथ्यात्वको प्राप्त हुआ जीव ही हो सकता है। और ऐसे जीवकी यह अवस्था पुनः कमसे कम पल्यका असंख्यातवाँ भाग काल जाने पर और अधिकसे अधिक उपार्धपुद्गलपरिवर्तन प्रमाण काल जानेपर ही प्राप्त हो सकती है, इसलिए यहाँपर उक्त जीवोंमें संख्यातगुणवृद्धिका जघन्य अन्तर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण और उत्कृष्ट अन्तर उपार्ध पुद्गल परिवर्तनप्रमाण बतलाया है। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिककी कर्मभूमिकी अपेक्षा उत्कृष्ट कायस्थिति पूर्वकोटिपृथक्त्वप्रमाण ही है, अतः इनमें दो बार संख्यातगुणवृद्धिका प्राप्त होना सम्भव न होनेसे इनमें उक्त पदके अन्तरकालका निषेध किया है। मनुष्यत्रिकमें अन्तर्मुहूर्तके अन्तरसे दो बार उपशमश्रेणिपर चढ़ना और उतरना सम्भव है तथा पूर्वकोटिपृथक्त्वके अन्तर से भी यह सम्भव है इसलिए इनमें संख्यातगुणवृद्धि और संख्यातगुणहानिका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट अन्तर पूर्वकोटिपृथक्त्वप्रमाण कहा है। शेष कथन सुगम है।

§ २३५. नाना जीवोंकी अपेक्षा भंगविचयानुगमका आश्रय लेकर निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे संख्यातभागवृद्धि, संख्यातभागहानि और अवस्थितपदके उदीरक जीव नियमसे हैं। शेष पद भजनीय हैं। भंग २७ होते हैं। आदेशसे नारकियोंमें अवस्थितपदके उदीरक जीव नियमसे हैं। शेष पद भजनीय हैं। भंग नौ होते हैं। इसी प्रकार सब नारकी, सब पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च, मनुष्यत्रिक और सब देवोंमें जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि भंगविशेष जानने चाहिए। तिर्यञ्चोंमें संख्यातभागवृद्धि, संख्यातभागहानि और अवस्थितपदके उदीरक जीव नियमसे हैं। कदाचित् ये हैं और एक संख्यातगुणवृद्धिका उदीरक

अपज्ज० सव्वपदा भयणिज्जा । भंगा २६ । एवं जाव० ।

§ २३६. भागाभागाणु० दुविहो णि०-ओघे० आदेसे० । ओघेण संखे०भागवड्ढि-हाणि० सव्वजी० केव० ? असंखे०भागो । अवट्ठि० असंखेज्जा भागा । सेसमणंत-भंगो । एवं तिरिक्खा० । आदेसेण णेरइय० अवट्ठि० असंखेज्जा भागा । सेसमसंखे०-भागो । एवं सव्वणेरइय०-सव्वपंचि०तिरिक्ख-मणुस-मणुसअपज्ज०-देवा जाव अवराजिदा त्ति । मणुसपज्ज०-मणुसिणी-सव्वट्ठदेवा० अवट्ठि० संखेज्जा भागा । सेसपदा संखे०भागो । एवं जाव० ।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

§ २३७. परिमाणाणु० दुविहो णि०—ओघेण आदेसेण । ओघेण संखे०भागवड्ढि-हाणि अवट्ठि० केत्तिया ? अणंता । संखे०गुणवड्ढि के० ? असंखेज्जा । संखे०गुणहाणि-अवत्त० के० ? संखेज्जा । आदेसेण सव्वणेरइय०-पंचिंदियतिरिक्खअपज्ज०-मणुसअपज्ज०-सव्वदेवा भुजगारभंगो । तिरिक्खेसु सव्वपदा ओघं । पंचि०तिरिक्खतिए सव्वपदा केत्तिया ? असंखेज्जा । मणुसेसु संखे०भागवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० केत्ति० ? असंखेज्जा ।

है । कदाचित् ये हैं और नाना संख्यातगुणवृद्धिके उदीरक हैं । मनुष्य अपर्याप्तकोंमें सब पद भजनीय हैं । भंग २६ होते हैं । इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए ।

विशेषार्थ—पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकमें तीन पद भजनीय हैं, इसलिए ध्रुव भंगके साथ २७ भंग होते हैं । तथा मनुष्यत्रिकमें पाँच पद भजनीय हैं, इसलिए ध्रुव भंगके साथ २४३ भंग होते हैं । शेष कथन स्पष्ट ही है ।

§ २३६. भागाभागानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे संख्यातभागवृद्धि और संख्यातभागहानिके उदीरक जीव सब जीवोंके कितने भागप्रमाण हैं ? असंख्यातवें भागप्रमाण हैं । अवस्थितपदके उदीरक जीव असंख्यात बहुभागप्रमाण हैं । तथा शेष पदोंके उदीरक जीव अनन्तवें भागप्रमाण हैं । इसी प्रकार तिर्यञ्चोंमें जानना चाहिए । आदेशसे नारकियोंमें अवस्थित पदके उदीरक जीव असंख्यात बहुभागप्रमाण हैं । शेष पदोंके उदीरक जीव असंख्यातवें भागप्रमाण हैं । इसी प्रकार सब नारकी, सब पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च, सामान्य मनुष्य, मनुष्य अपर्याप्त, सामान्य देव और अपराजित विमानतकके देवोंमें जानना चाहिए । मनुष्य पर्याप्त, मनुष्यिनी और सर्वार्थसिद्धिके देवोंमें अवस्थितपदके उदीरक जीव संख्यात बहुभागप्रमाण हैं और शेष पदोंके उदीरक जीव संख्यातवें भागप्रमाण हैं । इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए ।

§ २३७. परिमाणानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे संख्यातभागवृद्धि, संख्यातभागहानि और अवस्थित पदके उदीरक जीव कितने हैं ? अनन्त हैं । संख्यातगुणवृद्धिके उदीरक जीव कितने हैं ? असंख्यात हैं । संख्यातगुणहानि और अवक्तव्य पदके उदीरक जीव कितने हैं ? संख्यात हैं । आदेशसे सब नारकी, पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त, मनुष्य अपर्याप्त और सब देवोंमें भुजगारके समान भंग है । तिर्यञ्चोंमें सब पदोंके उदीरकोंका भंग ओघके समान है । पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकमें सब पदोंके उदीरक जीव कितने हैं ? असंख्यात हैं । मनुष्योंमें संख्यातभागवृद्धि, संख्यातभागहानि और अवस्थित पदके उदीरक

सेसपदा के० संखेज्जा । मणुसपज्ज०-मणुसिणी-सव्वट्ठदेवा सव्वपदा के० ? संखेज्जा । एवं जाव० ।

§ २३८. खेत्ताणु० दुविहो णि०—ओघेण आदेसेण य । ओघेण संखेज्जभागवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० केव० खेत्ते ? सव्वलोगे । सेसपदा० लोग० असंखे०भागे । एवं तिरिक्खा० । सेसगदीसु सव्वपदा लोग० असंखे०भागे । एवं जाव० ।

§ २३९. पोसणाणु० दुविहो णि०—ओघेण आदेसे० । ओघेण संखेज्जभागवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० केव० खे० पोसि० । सव्वलोगो । सेसपदेहिं लोग० असंखे०भागो । एवं तिरिक्खा० । सव्वणेरइय०-पंचि०तिरिक्खअपज्ज०-मणुसअपज्ज०-सव्वदेवा० भुज०-भंगो । पंचिंदियतिरिक्खतिय३-मणुस-३ संखेज्जभागवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० लोग० असंखे०भागो, सव्वलोगो वा । सेसपदेहिं लोग० असंखे०भागो । एवं जाव० ।

जीव कितने हैं ? असंख्यात हैं । शेष पदोंके उदीरक जीव कितने हैं ? संख्यात हैं । मनुष्य पर्याप्त, मनुष्यिनी और सर्वार्थसिद्धिके देवोंमें सब पदोंके उदीरक जीव कितने हैं ? संख्यात हैं । इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए ।

§ २३८. क्षेत्रानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे संख्यातभागवृद्धि, संख्यातभागहानि और अवस्थितपदके उदीरकोंका कितना क्षेत्र है ? सर्वलोक क्षेत्र है । शेष पदोंके उदीरकोंका लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्र है । इसी प्रकार सामान्य तिर्यञ्चोंमें जानना चाहिए । शेष गतियोंमें सब पदोंके उदीरक जीवोंका क्षेत्र लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण है । इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए ।

विशेषार्थ—संख्यातभागवृद्धि, संख्यातभागहानि और अवस्थित उदीरणा मिथ्यात्व गुणस्थानमें बहुलतासे होती हैं । इन पदोंकी उदीरणा करनेवाले जीव भी अनन्त हैं, इसलिए इनकी अपेक्षा सर्वलोकप्रमाण क्षेत्र बन जानेसे वह तत्प्रमाण कहा है । किन्तु शेष पदोंका सम्बन्ध गुणस्थान प्रतिपन्न जीवोंसे आता है और ऐसे जीवोंका क्षेत्र लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण है, इसलिए वह तत्प्रमाण कहा है । सामान्य तिर्यञ्चोंमें अपने सम्भव पदोंकी अपेक्षा ओघप्ररूपणा बन जानेसे वह ओघके समान बतलाई है । तथा गतिसम्बन्धी शेष मार्गणाओंका क्षेत्र लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण होनेसे उनमें सम्भव सब पदोंके उदीरकोंका क्षेत्र तत्प्रमाण कहा है ।

§ २३९. स्पर्शनानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे संख्यातभागवृद्धि, संख्यातभागहानि और अवस्थितपदके उदीरकों ने कितने क्षेत्रका स्पर्शन किया है ? सर्वलोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है, शेष पदोंके उदीरकोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है । इसी प्रकार सामान्य तिर्यञ्चोंमें जानना चाहिए । सब नारकी, पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त, मनुष्य अपर्याप्त और सब देवोंमें भुजगार उदीरणाके समान भंग है । पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिक और मनुष्यत्रिकमें संख्यातभागवृद्धि, संख्यातभागहानि और अवस्थितपदके उदीरकोंने लोकके असंख्यातवें भाग और सर्वलोक प्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है । शेष पदोंके उदीरकोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है । इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए ।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

२४०. कालाणु० दुविहो णि०—ओघेण आदेसेण। ओघेण संखे०भागवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० केव० ? सव्वद्धा। संखे०गुणवड्ढि जह० एयस०, उक्क० आवलि० असंखे०भागो। संखे०गुणहाणि-अवत्त० जह० एगस०, उक्क० संखेज्जा समया। आदेसेण सव्वणेरइय०-पंचिं०तिरि०अपज्ज०-मणुसअपज्ज०-सव्वदेवा त्ति भुज०भंगो। तिरिक्खेसु सव्वपदाणमोघं। पंचिं०तिरिक्खतिए अवट्ठि० सव्वद्धा। सेसपदा० जह० एयसमओ, उक्क० आवलि० असंखे०भागो। मणुसेसु संखे०भागवड्ढि-हाणि जह० एयसमओ, उक्क० आवलि० असंखे०भागो। अवट्ठि० सव्वद्धा। संखे०गुणवड्ढि-हाणि-अवत्त० जह० एयस०, उक्क० संखे० समया। एवं मणुसपज्ज०-मणुसिणी०। णवरि

विशेषार्थ—ओघसे संख्यातभागवृद्धि, संख्यातभागहानि और अवस्थितपदके उदीरकोंका जब क्षेत्र ही सर्व लोकप्रमाण बतलाया है तब उन पदोंकी अपेक्षा स्पर्शन सर्वलोकप्रमाण होगा इसमें सन्देह नहीं। रहे शेष पद सो एक तो उनका सम्बन्ध गुणस्थानप्रतिपन्न जीवोंके साथ आता है। दूसरे ये पद यथासम्भव जो मिथ्यादृष्टि जीव संयमासंयम या संयमको प्राप्त होते हैं उनके होते हैं या जो उपशमश्रेणि पर चढ़ते या उतरते हैं या उपशमश्रेणिमें मरकर देव होते हैं उनके होते हैं। यतः ऐसे जीवोंका स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण होता है अतः इन पदोंकी अपेक्षा वह उक्तप्रमाण कहा है। सामान्य तिर्यञ्चोंमें यह स्पर्शन अपने सम्भव पदोंकी अपेक्षा इसी प्रकार बन जाता है, इसलिए वह ओघके समान कहा है। सब नारकी, पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त, मनुष्य अपर्याप्त और सब देवोंमें भुजगारउदीरणाके समान कहनेका कारण यह है कि इनमें सम्भव तीन पदोंका स्पर्शन भुजगार उदीरणामें जैसा भुजगार, अल्पतर और अवस्थित पदका कहा है वैसा यहाँ क्रमसे संख्यातभागवृद्धि, संख्यातभागहानि और अवस्थित पदका बन जाता है। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिक और मनुष्यत्रिकका वर्तमान स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और अतीत स्पर्शन सर्वलोकप्रमाण है जो संख्यातभागवृद्धि संख्यातभागहानि और अवस्थितपदकी अपेक्षा इनमें घटित हो जाता है, इसलिए इनमें इन पदोंकी अपेक्षा तो उक्त स्पर्शन कहा है और शेष पदोंकी अपेक्षा स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण है यह स्पष्ट ही है।

२४०. कालानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे संख्यातभागवृद्धि, संख्यातभागहानि और अवस्थितपदके उदीरकोंका काल सर्वदा है। संख्यातगुणवृद्धिके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है। संख्यातगुणहानि और अवक्तव्यपदके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल संख्यात समय है। आदेशसे सब नारकी, पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त, मनुष्य अपर्याप्त और सब देवोंमें भुजगारउदीरणाके समान भंग है। तिर्यञ्चोंमें सब पदोंका भंग ओघके समान है। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकमें अवस्थितपदके उदीरकोंका काल सर्वदा है। शेष पदोंके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है। मनुष्योंमें संख्यातभागवृद्धि और संख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है। अवस्थितपदके उदीरकोंका काल सर्वदा है। संख्यातगुणवृद्धि, संख्यातगुणहानि और अवक्तव्यपदके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल संख्यात समय है। इसी प्रकार मनुष्य पर्याप्त और मनुष्यिनियोंमें

संखे० समया। एवं जाव०।

§ २४१. अंतराणु० दुविहो णि०—ओघेण आदेसेण य। ओघेण संखेज्जभागवड्ढि-हा०-अवट्ठि० णत्थि अंतरं। संखे०गुणवड्ढि० जह० एयस०, उक्क० चोद्दस रादिंदियाणि। संखे०गुणहाणि० जह० एयस०, उक्क० पण्णारस रादिंदियाणि। अवत्त० जह० एयस०, उक्क० वासपुधत्तं। आदेसेण सव्वणेरइय-पंचिं०तिरि०अपज्ज०मणुस-अपज्ज०-सव्वदेवा त्ति भुज०भंगो। तिरिक्ख-पंचिं०तिरिक्खतिय० भुजगारभंगो। णवरि संखेज्जगुणवड्ढी० ओघं। मणुस३ भुज०भंगो। णवरि संखे०गुणवड्ढि-हाणि-अवत्त० ओघं। एवं जाव०।

जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि इनमें आवलिके असंख्यातवें भागके स्थानमें संख्यात समय करना चाहिए। इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

मार्गदर्शक : विशेषार्थ—[illegible]ख्यातभागवृद्धि, संख्यातभागहानि और अवस्थितपदकी उदीरणा करते हैं, इसलिए ओघसे इनका काल सर्वदा बन जानेसे वह उक्तप्रमाण कहा है। संख्यातगुणवृद्धि अधिकसे अधिक असंख्यात जीव करते हैं, इसलिए इस पदकी अपेक्षा जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण प्राप्त होनेसे वह तत्प्रमाण कहा है। संख्यातगुणहानि और अवक्तव्यपदकी उदीरणा अधिकसे अधिक संख्यात जीव करते हैं, इसलिए इनकी अपेक्षा जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल संख्यात समय कहा है। यह सामान्य न्याय है इसी प्रकार गतिमार्गणाके सब भेदोंमें उनका परिमाण और पद जानकर काल घटित कर लेना चाहिए। मात्र अवस्थित पदका उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त होनेसे उसका काल सर्वत्र सर्वदा बन जाता है इतना विशेष जानना चाहिए।

§ २४१. अन्तरानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे संख्यातभागवृद्धि, संख्यातभागहानि और अवस्थितपदके उदीरकोंका अन्तरकाल नहीं है। संख्यातगुणवृद्धिके उदीरकोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर चौदह दिन-रात है। संख्यातगुणहानिके उदीरकोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर पन्द्रह दिन-रात है। अवक्तव्यपदके उदीरकोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर वर्षपृथक्त्व है। आदेशसे सब नारकी, पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त, मनुष्य अपर्याप्त और सब देवोंमें भुजगार उदीरणाके समान भंग है। सामान्य तिर्यञ्च और पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकमें भुजगार उदीरणाके समान भंग है। किन्तु इतनी विशेषता है कि इनमें संख्यातगुणवृद्धिके उदीरकोंका अन्तर ओघके समान है। मनुष्यत्रिकमें भुजगार उदीरणाके समान भंग है। किन्तु इतनी विशेषता है कि इनमें संख्यातगुणवृद्धि, संख्यातगुणहानि और अवक्तव्यपदके उदीरकोंका अन्तरकाल ओघके समान है। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

विशेषार्थ—उपशम सम्यक्त्वके साथ जो संयतासंयत मिथ्यात्वमें आते हैं उनका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर चौदह दिन-रात है, क्योंकि आगमके अनुसार हानि होती है। और ऐसे जीवोंके संख्यातगुणवृद्धि उदीरणा सम्भव है, इसलिए यहाँ संख्यातगुणवृद्धि उदीरणाका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर चौदह दिन-रात कहा है। तथा जो मिथ्यादृष्टि उपशम सम्यक्त्वके साथ संयमको स्वीकार करते हैं उनका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर पन्द्रह दिन-रात होता है और ऐसे जीवोंके संख्यातगुणहानि उदीरणा

§ २४२. भावाणुगमेण सव्वत्थ ओदइओ भावो ।

§ २४३. अप्पाबहुआणु० दुविहो णि०—ओघे० आदेसे० । ओघेण सव्वत्थोवा अवत्त०उदीर० । संखे०गुणहाणिउदीर० संखे०गुणा । संखे०गुणवड्ढिउदी० असंखे०-गुणा । संखे०भागवड्ढिउदीर० अणंतगुणा । संखे०भागहाणिउदीर० विसेसाहिया । अवट्ठि०उदी० असंखे०गुणा । आदेसेण णेरइय० सव्वत्थोवा संखे०भागवड्ढिउदीर० । संखे०भागहा०उदीर० विसेसा० । अवट्ठि०उदीर० असंखे०गुणा । एवं सव्वणेरइय०-सव्वदेवा त्ति । णवरि सव्वट्ठे संखेज्जगुणं कायव्वं । तिरिक्खेसु सव्वत्थोवा संखे०गुण-वड्ढिउदीर० । संखे०भागवड्ढिउदी० अणंतगुणा। संखे०भागहाणिउदी० विसेसा०। अवट्ठि० असंखे०-गुणा । एवं पंचिं०तिरिक्खतिए । णवरि जम्मि अणंतगुणा तम्मि असंखे०गुणा । पंचिं०तिरि०अपज्ज०-मणुसअपज्ज० सव्वत्थोवा संखे०भागवड्ढि० हाणि० दो वि सरिसा । अवट्ठि०उदीर० असंखे०गुणा । मणुसेसु सव्वत्थोवा अवत्त०उदी० । संखे०गुणहाणि-उदीर० संखे०गुणा । संखेज्जगुणवड्ढिउदी० संखे०गुणा । संखे०भागवड्ढिउदीर० असंखे०-गुणा । हाणिउदी० विसेसा० । अवट्ठि०उदी० असंखे०गुणा । एवं मणुसपज्ज०-

होती है, इसलिए यहाँ पर संख्यातगुणहानि उदीरणाका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर पन्द्रह दिन-रात कहा है। शेष कथन सुगम है, क्योंकि उसका अनेक बार स्पष्टीकरण कर आये हैं।

§ २४२. भाव सर्वत्र औदयिक होता है।

§ २४३. अल्पबहुत्वानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे अवक्तव्यउदीरक जीव सबसे स्तोक हैं। उनसे संख्यातगुणहानिउदीरक जीव संख्यातगुणे हैं। उनसे संख्यातगुणवृद्धिउदीरक जीव असंख्यातगुणे हैं। उनसे संख्यातभागवृद्धि उदीरक जीव अनन्तगुणे हैं उनसे संख्यातभागहानिउदीरक जीव विशेष अधिक हैं। उनसे अवस्थित उदीरक जीव असंख्यातगुणे हैं। आदेशसे नारकियोंमें संख्यातभागवृद्धिउदीरक जीव सबसे स्तोक हैं। उनसे संख्यातभागहानिउदीरक जीव विशेष अधिक हैं। उनसे अवस्थित उदीरक जीव असंख्यातगुणे हैं। इसी प्रकार सब नारकी और सब देवोंमें जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि सर्वार्थसिद्धिमें असंख्यातगुणेके स्थानमें संख्यातगुणे करने चाहिए। तिर्यञ्चोंमें संख्यातगुणवृद्धिउदीरक जीव सबसे स्तोक हैं। उनसे संख्यातभागवृद्धि उदीरक जीव अनन्तगुणे हैं। उनसे संख्यातभागहानिउदीरक जीव विशेष अधिक हैं। उनसे अवस्थित उदीरक जीव असंख्यातगुणे हैं। इसी प्रकार पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकमें जानना चाहिए। किन्तु जहाँ पर अनन्तगुणे कहे हैं वहाँ असंख्यातगुणे करने चाहिए। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्तकोंमें संख्यातभागवृद्धि और संख्यातभागहानिके उदीरक दोनों प्रकारके जीव समान हैं। उनसे अवस्थित उदीरक जीव असंख्यातगुणे हैं। मनुष्योंमें अवक्तव्यउदीरक जीव सबसे स्तोक हैं। उनसे संख्यातगुणहानिउदीरक जीव संख्यातगुणे हैं। उनसे संख्यातगुणवृद्धिउदीरक जीव संख्यातगुणे हैं। उनसे संख्यातभागवृद्धि उदीरक जीव असंख्यातगुणे हैं। उनसे संख्यातभाग-हानि उदीरक जीव विशेष अधिक हैं। उनसे अवस्थित उदीरक जीव असंख्यातगुणे हैं। इसी प्रकार मनुष्य पर्याप्त और मनुष्यिनियोंमें जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि इनमें

मणुसिणी० । णवरि संखेज्जगुणं कायव्वं । एवं जाव० ।

एवं वड्ढी समत्ता । एवं पयडिट्ठाणउदीरणा समत्ता ।

तदो 'कदि आवलियं पवेसेदि' त्ति पदं समत्तं ।

एवं पयडिउदीरणा समत्ता ।

*** कदि च पविसंति कस्स आवलियं त्ति ।**

मार्गदर्शक आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

§ २४४. अहियारसंभालणसुत्तमेदं । एत्तो उवरि 'कदि च पविसंति कस्स आवलियमिदि बिदियो गाहासुत्तावयवो विहासियव्वो त्ति पयरणादो । णवरि एदम्मि सुत्तावयवे पयडिपवेसो पडिबद्धो; उदयाणुदयसरूवेणुदयावलियब्भंतरं पविसमाणपयडिमेत्तेणेत्थाहियारादो । सो वुण पयडिपवेसो दुविहो—मूलपयडिपवेसो उत्तरपयडिपवेसो चेदि । उत्तरपयडिपवेसो च दुविहो—एगेगुत्तरपयडिपवेसो पयडिट्ठाणपवेसो चेदि । तत्थ मूलपयडिपवेसो एगेगुत्तरपयडिपवेसो च सुगमो त्ति णेह सुत्ते विहासिदो । तदो पादेक्कं चउवीसमणिओगद्दारेहिं तेसिमेत्थ विहासा जाणिय कायव्वा । तदो पयडिट्ठाणपवेसे पयदं । तत्थ इमाणि सत्तारस अणियोगद्दाराणि—समुक्कित्तणा सादि० अणादि० जाव अप्पाबहुए त्ति भुज० पदणि० वड्ढीओ च ।

§ २४५. तत्थ समुक्कित्तणा दुविहा—ठाणसमुक्कित्तणा पयडिसमुक्कित्तणा चेदि ।

असंख्यातगुणेके स्थानमें संख्यातगुणे करने चाहिए । इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

इसप्रकार वृद्धि समाप्त हुई ।

इसप्रकार प्रकृतिस्थान उदीरणा समाप्त हुई ।

इसलिए 'कदि आवलियं पवेसेदि' इस पदका व्याख्यान समाप्त हुआ ।

इसप्रकार प्रकृतिउदीरणा समाप्त हुई ।

*** किस जीवके कितनी प्रकृतियाँ उदयावलिमें प्रवेश करती हैं ।**

§ २४४. अधिकारकी सम्हाल करनेवाला यह सूत्र है । अब पूर्वोक्त कथनके आगे गाथा सूत्रका 'कदि च पविसंति कस्स आवलियं' यह दूसरा पद प्रकृतमें प्रवृत्त होनेसे व्याख्यान करने योग्य है । इतनी विशेषता है कि इस सूत्रपदमें प्रकृतिप्रवेश अनुयोगद्वार प्रतिबद्ध है, क्योंकि उदय और अनुदयरूपसे उदयावलिमें प्रवेश करनेवाली प्रकृतिमात्रका यहाँ अधिकार है । वह प्रकृतिप्रवेश दो प्रकारका है—मूलप्रकृतिप्रवेश और उत्तर प्रकृतिप्रवेश । उत्तर प्रकृतिप्रवेश दो प्रकारका है—एकैक उत्तरप्रकृतिप्रवेश और प्रकृतिस्थानप्रवेश । उनमें मूलप्रकृतिप्रवेश और एकैक उत्तरप्रकृतिप्रवेश सुगम हैं, इसलिए इस सूत्रमें उनका व्याख्यान नहीं किया । इसलिए अलग अलग चौबीस अनुयोगद्वारोंका आश्रय लेकर यहां पर उनका व्याख्यान जानकर कर लेना चाहिए । अतएव प्रकृतिस्थानप्रवेश प्रकृत है । उसमें समुत्कीर्तना, सादि, और अनादिसे लेकर अल्पबहुत्व तक ये सत्रह अनुयोगद्वार तथा भुजगार, पदनिक्षेप और वृद्धि ये तीन अनुयोगद्वार हैं ।

§ २४५. उनमें समुत्कीर्तना दो प्रकारकी है—स्थानसमुत्कीर्तना और प्रकृतिसमुत्कीर्तना ।

संपहि तदुभयपरूवणट्ठमुवरिमसुत्तेणावसरो कीरदे—

❀ एत्थ पुव्वं गमणिज्जा ठाणसमुक्कित्तणा पयडिणिद्देसो च ।

§ २४६. एत्थ एदम्मि पयडिट्ठाणपवेसे पुव्वं पढममेव गमणिज्जा अणुमग्गियव्वा ठाणसमुक्कित्तणा पयडिणिद्देसो च । तत्थ ट्ठाणसमुक्कित्तणा णाम अट्ठावीसाए पयडिट्ठाणमादिं कादूण ओघादेसेहिं एत्तियाणि पयडिट्ठाणाणि उदयावलियं पविसमाणाणि अत्थि त्ति परूवणा । पयडिणिद्देसो णाम एदाओ पयडीओ घेत्तूणेदं पवेसट्ठाणमुप्पज्जइ त्ति णिरूवणा । एदेसिं च दोण्हमेयपबंधेण परूवणं कस्सामो त्ति जाणावणट्ठमुत्तरं पइण्णावक्कमाह—

❀ ताणि एक्कदो भणिस्संति ।

§ २४७. सुगमं ।

❀ अट्ठावीसं पयडीओ उदयावलियं पविसंति ।

§ २४८. अट्ठावीस-पयडिसमुदायप्पयमेगं पयडिट्ठाणमुदयावलियं पविसमाणमत्थि त्ति समुक्कित्तिदं होइ । एत्थ पयडिणिद्देसो जइ वि मुत्तकंठं ण परूविदो तो वि तण्णिद्देसो कओ चेवे त्ति दट्ठव्वो; अट्ठावीससंखाणिद्देसेणेव मोहपयडीणं णामणिद्देसस्स जाणाविदत्तादो ।

❀ सत्तावीसं पयडीओ उदयावलियं पविसंति सम्मत्ते उव्वेल्लिदे ।

§ २४९. अट्ठावीससंतकम्मियमिच्छाइट्ठिणा पुव्वुत्तट्ठाणादो सम्मत्ते उव्वेल्लिदे

अब इन दोनोंका कथन करनेके लिए आगेके सूत्रद्वारा अवसर करते हैं—

❀ यहाँ पर सर्व प्रथम स्थानसमुत्कीर्तना और प्रकृतिनिर्देश ज्ञातव्य है ।

§ २४६. यहां पर अर्थात् इस प्रकृतिस्थानप्रवेश अनुयोगद्वारमें 'पुव्वं' अर्थात् प्रथम ही स्थानसमुत्कीर्तना और प्रकृतिनिर्देश 'गमणिज्जा' अर्थात् अनुमार्गणा करने योग्य हैं । उनमेंसे अट्ठाईसप्रकृतिक स्थानसे लेकर ओघ और आदेशसे इतने प्रकृतिस्थान उदयावलिमें प्रविशमान हैं ऐसी प्ररूपणा करना स्थानसमुत्कीर्तना है । तथा इन प्रकृतियोंको ग्रहण कर यह प्रवेशस्थान उत्पन्न होता है ऐसी प्ररूपणा करना प्रकृतिनिर्देश है । इन दोनोंका एक प्रबन्धके द्वारा कथन करेंगे ऐसा ज्ञान करानेके लिए आगेका प्रतिज्ञावाक्य करते हैं—

❀ उन दोनोंको एक साथ कहेंगे ।

§ २४७. यह सूत्र सुगम है ।

❀ अट्ठाईस प्रकृतियाँ उदयावलिमें प्रवेश करती हैं ।

§ २४८. अट्ठाईस प्रकृतिसमुदायका एक प्रकृतिस्थान उदयावलिमें प्रविशमान है यह इस सूत्र द्वारा कहा गया है । इस सूत्रमें यद्यपि मुक्तकण्ठ होकर प्रकृतियोंका निर्देश नहीं किया गया है तो भी उसका निर्देश किया ही है ऐसा जानना चाहिए, क्योंकि अट्ठाईस संख्याका निर्देश करनेसे ही मोहनीयकी प्रकृतियोंका नामनिर्देश जता दिया है ।

❀ सम्यक्त्वकी उद्वेलना करने पर सत्ताईस प्रकृतियाँ उदयावलिमें प्रवेश करती हैं ।

§ २४९. अट्ठाईस सत्कर्मिक मिथ्यादृष्टिके द्वारा पूर्वोक्त स्थानमेंसे सम्यक्त्वकी उद्वेलना

सत्तावीसपयडिसमुदायप्पयमण्णं पवेसट्ठाणमुप्पज्जदि त्ति समुक्कित्तिदं होइ। एत्थ वि वदिरेगमुहेण पयडिणिद्देसो कओ त्ति दट्ठव्वो।

❀ छव्वीसं पयडीओ उदयावलियं पविसंति सम्मत्त-सम्मामिच्छत्तेसु उव्वेल्लिदेसु।

§ २५०. पुव्वुत्तअट्ठावीसपवेसट्ठाणादो सम्मत्त-सम्मामिच्छत्तेसु जहाकममुव्वेल्लिदेसु छव्वीसाए पवेसट्ठाणमुप्पज्जदि त्ति भणिदं होइ। ण केवलमुव्वेल्लिदसम्मत्त-सम्मामिच्छत्तस्सेव, किंतु अणादियमिच्छाइट्ठिणो वि छव्वीसाए पवेसट्ठाणमत्थि त्ति घेत्तव्वं। अट्ठावीस-सत्तावीसाणमण्णदरसंतकम्मियमिच्छाइट्ठिणा वा उवसमसम्मत्ताहिमुहेणंतरं कादूण सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणमावलियमेत्तपढमट्ठिदीए गलिदाए छव्वीसपवेसट्ठाणमुवलब्भइ। उवसमसम्माइट्ठिणा पणुवीसपवेसगेण मिच्छत्त-सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणमण्णदरे ओकड्डिदे सासणसम्माइट्ठिणा वा मिच्छत्ते पडिवण्णे एयसमयं छव्वीसाए पवेसट्ठाणमुवलब्भइ। णवरि सुत्ते सम्मत्त-सम्मामिच्छत्तेसु उव्वेल्लिदेसु त्ति णिद्देसो उदाहरणमेत्तो, तेणेदेसिं पि पयाराणं संगहो कायव्वो।

❀ पणुवीसं पयडीओ उदयावलियं पविसंति दंसणतियं मोत्तूण।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

§ २५१. कसाय-णोकसायपयडीणं उदयावलियपवेसस्स कत्थ वि समुवलंभादो।

करने पर सत्ताईस प्रकृतिसमुदायात्मक अन्य प्रवेशस्थान उत्पन्न होता है ऐसा इस सूत्रद्वारा कहा गया है। यहाँ पर भी व्यतिरेकमुखसे प्रकृतिनिर्देश किया है ऐसा जानना चाहिए।

❀ सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी उद्वेलना करने पर छब्बीस प्रकृतियाँ उदयावलिमें प्रवेश करती हैं।

§ २५०. पूर्वोक्त अट्ठाईस प्रकृतिक प्रवेशस्थानमेंसे सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी क्रमसे उद्वेलना कर देने पर छब्बीस प्रकृतिक प्रवेशस्थान उत्पन्न होता है यह उक्त कथनका तात्पर्य है। जिसने सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी उद्वेलना की है केवल ऐसे जीवके ही नहीं किन्तु अनादि मिथ्यादृष्टिके भी छब्बीसप्रकृतिक प्रवेशस्थान होता है ऐसा यहाँ ग्रहण करना चाहिए। अथवा अट्ठाईसप्रकृतिक और सत्ताईसप्रकृतिक इनमेंसे अन्यतर सत्कर्मवाले उपशमसम्यक्त्वके अभिमुख हुए मिथ्यादृष्टिके द्वारा अन्तरकरण करके सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी आवलि प्रमाण प्रथम स्थितिके गला देने पर छब्बीसप्रकृतिक प्रवेशस्थान प्राप्त होता है। पच्चीस प्रकृतियोंके प्रवेशक उपशमसम्यग्दृष्टि द्वारा मिथ्यात्व सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्व इनमेंसे किसी एक प्रकृतिका अपकर्षण करने पर अथवा सासादनसम्यग्दृष्टिके मिथ्यात्वको प्राप्त होने पर एक समय तक छब्बीस प्रकृतिक प्रवेशस्थान उपलब्ध होता है। किन्तु इतनी विशेषता है कि सूत्रमें 'सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी उद्वेलना करने पर' यह वचन उदाहरणमात्र है, इसलिए इन प्रकारोंका भी संग्रह करना चाहिए।

❀ दर्शनमोहनीयत्रिकको छोड़कर पचीस प्रकृतियाँ उदयावलिमें प्रवेश करती हैं।

§ २५१. क्योंकि कषाय और नोकषायोंकी प्रकृतियोंका उदयावलिमें प्रवेश कहीं पर भी

तं कस्स होइ त्ति आसंकाए उत्तरसुत्तमाह—

❀ अणंताणुबंधीणमविसंजुत्तस्स उवसंतदंसणमोहणीयस्स ।

§ २५२. किं कारणं ? उवसंतदंसणमोहणीयम्मि दंसणतियं मोत्तूण पणुवीस-चरित्तमोहपयडीणमुदयावलियपवेसस्स णिप्पडिबंधमुवलंभादो । एत्थाणंताणुबंधीण-मविसंजुत्तस्से त्ति विसेसणं विसंजोइदाणंताणुबंधिचउक्कम्मि पणुवीसपवेसट्ठाणासंभव-पदुप्पायणफलं; उवसमसम्माइट्ठिणा अणंताणुबंधीसु विसंजोइदेसु इगिवीसपवेसट्ठाणु-प्पत्तिदंसणादो ।

❀ णत्थि अण्णस्स कस्स वि ।

§ २५३. एत्तो अण्णस्स कस्स वि एदं पवेसट्ठाणं णत्थि । कुदो ? अविसंजोइदाणं-ताणुबंधिचउक्कमुवसमसम्माइट्ठिं मोत्तूणण्णत्थ पणुवीसपवेसट्ठाणासंभवादो ।

❀ चउवीसं पयडीओ उदयावलियं पविसंति अणंताणुबंधिणो वज्ज ।

§ २५४. चउवीससंतकम्मियवेदयसम्माइट्ठि-सम्मामिच्छाइट्ठीसु तदुवलंभादो । विसंजोयणापुव्वसंजोगपढमसमए वट्टमाणमिच्छाइट्ठिम्मि वि एदस्स पवेसट्ठाणस्स संभवो दट्ठव्वो ।

❀ तेवीसं पयडीओ उदयावलियं पविसंति मिच्छत्ते खविदे ।

उपलब्ध होता है । यह स्थान किसके होता है ऐसी आशंका होनेपर आगेका सूत्र कहते हैं—

※ यह स्थान जिसने अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी विसंयोजना नहीं की है किन्तु दर्शनमोहनीयका उपशम किया है ऐसे उपशमसम्यग्दृष्टिके होता है ।

§ २५२. क्योंकि जिसने दर्शनमोहनीयकी उपशमना की है ऐसे जीवके तीन दर्शन-मोहनीयको छोड़कर चारित्रमोहनीयकी पच्चीस प्रकृतियोंका उदयावलिमें प्रवेश बिना रुकावटके उपलब्ध होता है । यहाँ पर 'जिसने अनन्तानुबन्धियोंकी विसंयोजना नहीं की है' यह विशेषण जिसने अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी विसंयोजना की है उसके पच्चीस प्रकृतिक प्रवेश-स्थान असम्भव है यह निष्कर्ष फलित करनेके लिए दिया है, क्योंकि उपशमसम्यग्दृष्टिके द्वारा अनन्तानुबन्धियोंकी विसंयोजना कर देने पर इक्कीस प्रकृतिक प्रवेशस्थानकी उत्पत्ति देखी जाती है ।

※ यह स्थान अन्य किसीके नहीं होता ।

§ २५३. उक्त जीवको छोड़कर अन्य किसी जीवके यह प्रवेशस्थान नहीं होता, क्योंकि जिसने अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी विसंयोजना नहीं की है ऐसे उपशमसम्यग्दृष्टिको छोड़कर अन्यत्र पच्चीसप्रकृतिक प्रवेशस्थान असम्भव है ।

※ अनन्तानुबन्धियोंको छोड़कर चौबीस प्रकृतियाँ उदयावलिमें प्रवेश करती हैं ।

§ २५४. क्योंकि चौबीस प्रकृतियोंकी सत्तावाले वेदकसम्यग्दृष्टि और सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंके यह स्थान उपलब्ध होता है । विसंयोजनापूर्वक संयोगके प्रथम समयमें विद्यमान मिथ्यादृष्टि जीवके भी इस प्रवेशस्थानकी सम्भावना जाननी चाहिए ।

※ मिथ्यात्वका क्षय होनेपर तेईस प्रकृतियाँ उदयावलिमें प्रवेश करती हैं ।

§ २५५. तेणेव चउवीसपवेसगेण वेदगसम्माइट्ठिणा दंसणमोहक्खवणाए अब्भुट्ठिय मिच्छत्ते खविदे इगिवीसकसाय-सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणि त्ति एदाओ तेवीसं पयडीओ उदयावलियं पविसंति; तत्थ पयारंतरासंभवादो।

ॐ बावीसं पयडीओ उदयावलियं पविसंति सम्मामिच्छत्ते खविदे।

§ २५६. तेणेव तेवीसपवेसगेण तत्तो अंतोमुहुत्तं गंतूण सम्मामिच्छत्ते खविदे सम्मत्तेण सह एक्कवीसचरित्तमोहपयडीणमुदयावलियपवेसस्स सुव्वत्तमुवलंभादो। एसो एको पयारो सुत्तयारेण णिद्दिट्ठो त्ति पयारंतरेण वि एदस्स संभवविसयो अणुमग्गियव्वो, अणंताणुबंधिणो विसंजोइय इगिवीसपवेसयभावेणावट्ठिदस्स उवसमसम्माइट्ठिस्स मिच्छत्त-वेदयसम्मत्त-सम्मामिच्छत्त-सासणसम्मत्ताणमण्णदरगुणपडिवत्तिपढमसमए पयदट्ठाणसंभवणियमदंसणादो।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

§ २५५. चौबीस प्रकृतियोंके प्रवेशक उसी वेदकसम्यग्दृष्टिके द्वारा दर्शनमोहनीयकी क्षपणाके लिए उद्यत होकर मिथ्यात्वका क्षय कर देनेपर इक्कीस कषाय, सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्व ये तेईस प्रकृतियाँ उदयावलिमें प्रवेश करती हैं, क्योंकि वहाँ पर अन्य प्रकार सम्भव नहीं है।

※ सम्यग्मिथ्यात्वका क्षय होने पर बाईस प्रकृतियाँ उदयावलिमें प्रवेश करती हैं।

§ २५६. तेईस प्रकृतियोंके प्रवेशक उसी जीवके द्वारा वहाँसे अन्तर्मुहूर्त बिताकर सम्यग्मिथ्यात्वका क्षय करने पर सम्यक्त्वके साथ चारित्रमोहनीयकी इकीस प्रकृतियोंका उदयावलिमें प्रवेश सुव्यक्त उपलब्ध होता है। सूत्रकारने यह एक प्रकार निर्दिष्ट किया है, इसलिए प्रकारान्तर से भी २२ प्रकृतियोंका विषयभूत स्थान सम्भव है यह जान लेना चाहिए, क्योंकि अनन्तानुबन्धियोंकी विसंयोजना कर इकीस प्रकृतियोंके प्रवेशकभावसे अवस्थित उपशमसम्यग्दृष्टि जीवके मिथ्यात्व, वेदकसम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व और सासादनसम्यक्त्व इनमेंसे किसी एक गुणस्थान को प्राप्त होनेके प्रथम समयमें प्रकृत स्थानके सम्भव होनेका नियम देखा जाता है।

विशेषार्थ—जिस उपशमसम्यग्दृष्टिने अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी विसंयोजना की है वह जब मिथ्यात्वप्रकृतिकी अपकर्षण द्वारा उदीरणा करके मिथ्यात्वभावका अनुभव करता है तब उसके प्रथम समयमें अनन्तानुबन्धीचतुष्कका बन्ध भी होता है और अप्रत्याख्यानावरण आदि रूप द्रव्यको अनन्तानुबन्धीरूपसे संक्रमित कर उसका उदयावलिके बाहर निक्षेप भी करता है। किन्तु उस समय अनन्तानुबन्धीचतुष्कका उदयावलिमें प्रवेश नहीं होता, इसलिए ऐसा मिथ्यादृष्टि जीव प्रथम समयमें बाईस प्रकृतियोंका ही उदयावलिमें प्रवेशक होता है, क्योंकि उस समय उसके चारित्रमोहनीयकी इकीस और एक मिथ्यात्व ऐसी बाईस प्रकृतियोंका प्रवेश देखा जाता है। यही उपशमसम्यग्दृष्टि जीव यदि वेदकसम्यक्त्वको प्राप्त होता है तो उसके प्रथम समयमें चारित्रमोहनीयकी इक्कीस और एक सम्यक्त्व इसप्रकार बाईस प्रकृतियोंका उदयावलिमें प्रवेश देखा जाता है। यही जीव यदि सम्यग्मिथ्यात्वको प्राप्त होता है तो उसके प्रथम समयमें चारित्रमोहनीयकी इकीस और एक सम्यग्मिथ्यात्व इसप्रकार बाईस प्रकृतियोंका उदयावलिमें प्रवेश देखा जाता है। यही जीव यदि सासादनगुणस्थानको प्राप्त होता है तो उसके प्रथम समयमें अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी किसी एक प्रकृतिके साथ चारित्रमोहनीयकी बाईस प्रकृतियोंका उदया-

❀ एकवीसं पयडीओ उदयावलियं पविसंति दंसणमोहणीए खविदे ।

§ २५७. पुव्वुत्तबावीसपवेसयदंसणमोहक्खवएण सम्मत्ते खविदे इगिवीसचरित्त-मोहपयडीणं चेव तत्थ पवेसदंसणादो । एत्थ वि विसंजोइदाणंताणुबंधिचउक्कमुवसम-सम्माइट्ठिमस्सिऊण पयारंतरेण वि पयदट्ठाणसंभवो समत्थणिज्जो ।

❀ एदाणि ट्ठाणाणि असंजदपाओग्गाणि ।

:- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

§ २५८. एदाणि अणंतरणिद्दिट्ठाणि अट्ठावीसादिपवेसट्ठाणाणि असंजदपाओ-ग्गाणि, असंजदपडिबद्धाणि त्ति वुत्तं होइ । ण एत्थासंजदाणं चेव पाओग्गाणि असंजद-पाओग्गाणि त्ति अवहारणं कायव्वं, सत्तावीसवज्जाणमेदेसिं संजदेसु वि संभवोवलंभादो । किंतु एसो उवरिमाणमेयंतसंजदपाओग्गत्तपदंसणट्ठमेदेसिमसंजदपाओग्गत्तं परूविदं । ण च उवसमसेढीए कालं कादूण देवेसुप्पण्णपढमसमए केसिं चि वि ट्ठाणाणमुवरि-माणमसंजदपाओग्गत्तसंभवमस्सिदूण पच्चवट्ठाणं कायव्वं, तेसिं सुत्ते विवक्खाभावादो,

---

वलिमें प्रवेश देखा जाता है, क्योंकि जिस समय ऐसा जीव सासादनसम्यग्दृष्टि हुआ है उस समय अनन्तानुबन्धीचतुष्कमेंसे जिस प्रकृतिकी उदीरणा हुई है उसके सिवा शेष तीन प्रकृतियों का संक्रम होकर उदयावलिके बाहर ही निक्षेप होता है। इसप्रकार सूत्रोक्त प्रकारके सिवा अन्य कितने प्रकारसे बाईस प्रकृतिक प्रवेशस्थान सम्भव हैं इसका विचार किया ।

❀ दर्शनमोहनीयके क्षय होने पर इक्कीस प्रकृतियाँ उदयावलिमें प्रवेश करती हैं ।

§ २५७. पूर्वोक्त बाईस प्रकृतियोंके प्रवेशक दर्शनमोहनीयके क्षपक जीवके द्वारा सम्यक्त्वका क्षय कर देने पर चारित्रमोहनीयकी इक्कीस प्रकृतियोंका ही वहाँ प्रवेश देखा जाता है । यहाँ पर भी जिसने अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी विसंयोजना की है ऐसे उपशमसम्यग्दृष्टिका आश्रय लेकर प्रकारान्तरसे भी प्रकृत स्थानकी सम्भावनाका समर्थन करना चाहिए ।

विशेषार्थ—सूत्रमें जो इक्कीस प्रकृतियोंके प्रवेशकका प्रकार बतलाया है वह तो स्पष्ट ही है। दूसरा प्रकार यह सम्भव है कि जो उपशमसम्यग्दृष्टि जीव अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी विसंयोजना कर लेता है उसके दर्शनमोहनीयकी तीन और अनन्तानुबन्धीचतुष्क इन सात प्रकृतियोंके सिवाय इक्कीस प्रकृतियोंका उदयावलिमें प्रवेश देखा जाता है । यद्यपि यहाँ प्रकृतियोंके प्रवेशकी अपेक्षा कोई अन्तर नहीं है, क्योंकि क्षायिकसम्यग्दृष्टिके जिन इक्कीस प्रकृतियोंका उदयावलिमें प्रवेश होता है उन्हीं प्रकृतियोंका पूर्वोक्त उपशमसम्यग्दृष्टि जीवके भी प्रवेश होता है। परन्तु स्वामित्वभेद अवश्य है। मात्र इसलिए इसे प्रकारान्तर कहा है ।

❀ ये स्थान असंयतप्रायोग्य हैं ।

§ २५८. जो ये अट्ठाईस प्रकृतिक आदि प्रवेशस्थान पूर्वमें कहे हैं वे असंयतप्रायोग्य हैं । वे असंयतोंसे सम्बन्ध रखते हैं यह उक्त कथनका तात्पर्य है। परन्तु यहाँ पर असंयतप्रायोग्य पदका अर्थ असंयतोंके ही योग्य है ऐसा अवधारणपरक नहीं करना चाहिए, क्योंकि सत्ताईस प्रकृतिक प्रवेशस्थानको छोड़कर शेष स्थान संयतोंमें भी सम्भवरूपसे उपलब्ध होते हैं । किन्तु इससे आगेके प्रवेशस्थान एकान्तसे संयतोंके योग्य ही होते हैं यह दिखलानेके लिए पूर्वोक्त स्थानोंको असंयतोंके योग्य कहा है । उपशमश्रेणिमें मरकर देवोंमें उत्पन्न हुए जीवोंके प्रथम समयमें आगेके कितने ही स्थान असंयतोंके योग्य सम्भव हैं, अतः इसका आश्रय लेकर वे भी

केण वि णएण तेसिं पि संजदपाओग्गत्तदंसणादो च। एवमसंजदपाओग्गाणं ट्ठाणाणमेत्थेव वोच्छेदं कादूण संपहि संजदपाओग्गाणमेत्तो परूवणं कुणमाणो पइण्णावक्कमुत्तरं भणइ—

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

*** एत्तो उवसामगपाओग्गाणि ताणि भणिस्सामो।**

§ २५९. एत्तो उवरि संजदपाओग्गाणं ट्ठाणाणं परूवणे कीरमाणे तत्थ ताव उवसामगपाओग्गाणि जाणि पवेसट्ठाणाणि ताणि भणिस्सामो त्ति पइण्णावक्कमेदं, उवसामग-खवगपाओग्गत्तेण दुविहा विहत्ताणं तेसिं जुगवं वोत्तुमसत्तीए कमावलंबणादो।

*** उवसामणादो परिवदंतेण तिविहो लोहो ओकड्डिदो। तत्थ लोभसंजलणमुदए दिण्णं, दुविहो लोहो उदयावलियबाहिरे णिक्खित्तो। ताधे एक्का पयडी पविसदि।**

§ २६०. उवसमसेढीए सव्वोवसमं कादूण तत्तो परिवदमाणएण सुहुमसांपराइयपढमसमयम्मि जाधे तिविहो लोहो विदियट्ठिदीदो ओकड्डिय जहारिहं णिसित्तो ताधे एक्का पयडी पविसदि, तत्थ लोभसंजलणस्स एक्कस्सेव उदयावलियब्भंतरपवेसदंसणादो।

*** से काले तिण्णि पयडीओ पविसंति।**

§ २६१. पुव्वमुदयावलियबाहिरे णिसित्तस्स दुविहस्स लोहस्स तदणंतरसमए

असंयतोंके योग्य हैं ऐसा निश्चय नहीं करना चाहिए, क्योंकि उन स्थानोंकी सूत्रमें विवक्षा नहीं की है और किसी नयकी अपेक्षा वे भी संयतोंके योग्य देखे जाते हैं। इसप्रकार असंयतोंके योग्य स्थानोंका यहीं पर विच्छेद करके अब संयतोंके योग्य प्रवेशस्थानोंका आगे व्याख्यान करते हुए आगेका प्रतिज्ञावाक्य कहते हैं—

* आगे उपशामकोंके योग्य जो प्रवेशस्थान हैं उनका कथन करेंगे।

§ २५९. इससे आगे संयतोंके योग्य स्थानोंका कथन करते हुए उसमें सर्व प्रथम उपशामकोंके योग्य जो प्रवेशस्थान हैं उनका कथन करेंगे इसप्रकार यह प्रतिज्ञावाक्य है, क्योंकि उपशामक और क्षपकोंके योग्यरूपसे दो भागोंमें बटे हुए उन प्रवेशस्थानोंकी एक साथ कहनेकी शक्ति न होनेसे यहाँ पर क्रमका अवलम्बन लिया है।

* उपशामनासे गिरते हुए जीवने तीन प्रकारके लोभका अपकर्षण किया। उनमेंसे लोभसंज्वलनको उदयमें दिया और दो प्रकारके लोभका उदयावलिके बाहर निक्षेप किया। तब एक प्रकृति प्रवेश करती है।

§ २६०. उपशमश्रेणिमें सर्वोपशम करके वहांसे गिरनेवाले जीवने सूक्ष्मसाम्परायके प्रथम समयमें जब तीन प्रकारके लोभका द्वितीय स्थितिमेंसे अपकर्षणकर यथायोग्य निक्षेप किया तब एक प्रकृति प्रवेश करती है, क्योंकि वहां पर एक लोभसंज्वलनका ही उदयावलिमें प्रवेश देखा जाता है।

* तदनन्तर तीन प्रकृतियाँ प्रवेश करती हैं।

§ २६१. क्योंकि पूर्व समयमें उदयावलिके बाहर निक्षिप्त हुए दो प्रकारके लोभका तद-

उदयावलियब्भंतरपवेसेण तिण्हं पवेसस्स परिप्फुडमुवलंभादो ।

❀ तदो अंतोमुहुत्तेण तिविहा माया ओकड्डिदा । तत्थ मायासंजलणमुदए दिण्णं, दुविहमाया उदयावलियबाहिरे णिक्खित्ता । ताधे चत्तारि पयडीओ पविसंति ।

❀ से काले छप्पयडीओ पविसंति ।

❀ तदो अंतोमुहुत्तेण तिविहो माणो ओकड्डिदो । तत्थ माणसंजलणमुदए दिण्णं, दुविहो माणो उदयावलियबाहिरे णिक्खित्तो । ताधे सत्त पयडीओ पविसंति ।

❀ से काले णव पयडीओ पविसंति ।

❀ तदो अंतोमुहुत्तेण तिविहो कोहो ओकड्डिदो । तत्थ कोहसंजलणमुदए दिण्णं, दुविहो कोहो उदयावलियबाहिरे णिक्खित्तो । ताधे दस पयडीओ पविसंति ।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

❀ से काले बारस पयडीओ पविसंति ।

❀ तदो अंतोमुहुत्तेण पुरिसवेद-छण्णोकसायवेदणीयाणि ओकड्डिदाणि । तत्थ पुरिसवेदो उदए दिण्णो, छण्णोकसायवेदणीयाणि उदया-

---

नन्तर समयमें उदयावलिके भीतर प्रवेश हो जानेसे तीन प्रकृतियोंका प्रवेश स्पष्टरूपसे उपलब्ध होता है ।

❀ तदनन्तर अन्तर्मुहूर्त बाद तीन प्रकारकी मायाका अपकर्षण किया । उनमेंसे मायासंज्वलनको उदयमें दिया और दो प्रकारकी मायाका उदयावलिके बाहर निक्षेप किया । तब चार प्रकृतियाँ प्रवेश करती हैं ।

❀ तदनन्तर समयमें छह प्रकृतियाँ प्रवेश करती हैं ।

❀ तदनन्तर अन्तर्मुहूर्त बाद तीन प्रकारके मानका अपकर्षण किया । उनमेंसे मानसंज्वलनको उदयमें दिया और दो प्रकारके मानका उदयावलिके बाहर निक्षेप किया । तब सात प्रकृतियाँ प्रवेश करती हैं ।

❀ तदनन्तर समयमें नौ प्रकृतियाँ प्रवेश करती हैं ।

❀ तदनन्तर अन्तर्मुहूर्त बाद तीन प्रकारके क्रोधोंका अपकर्षण किया । उनमेंसे क्रोधसंज्वलनको उदयमें दिया और दो प्रकारके क्रोधोंका उदयावलिके बाहर निक्षेप किया । तब दस प्रकृतियाँ प्रवेश करती हैं ।

❀ तदनन्तर समयमें बारह प्रकृतियाँ प्रवेश करती हैं ।

❀ तदनन्तर अन्तर्मुहूर्त बाद पुरुषवेद और छह नोकषाय वेदनीयका अपकर्षण किया । उनमेंसे पुरुषवेदको उदयमें दिया और छह नोकषायवेदनीयका उदयावलिके

वलियबाहिरे णिक्खित्ताणि । ताधे तेरस पयडीओ पविसंति ।

❀ से काले एगूणवीसं पयडीओ पविसंति ।

§ २६२. एदाणि सुत्ताणि सुगमाणि ।

❀ तदो अंतोमुहुत्तेण इत्थिवेदमोकड्डिऊण उदयावलियबाहिरे णिक्खिवदि ।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

§ २६३. कुदो ? पुरिसवेदोदएण चडिदत्तादो । ण च सोदएण विणा उदयादिणिक्खेवसंभवो; विप्पडिसेहादो ।

❀ से काले वीसं पयडीओ पविसंति ।

§ २६४. कुदो ? उदयावलियबाहिरे णिक्खित्तस्स इत्थिवेदस्स ताधे उदयावलियब्भंतरपवेसदंसणादो ।

❀ ताव जाव अंतरं ण विणस्सदि त्ति ।

§ २६५. एत्तो पाए जाव अंतरं ण विणस्सदि ताव एदं चेव पवेसट्ठाणमवट्ठिदं दट्ठव्वमिदि वुत्तं होइ ।

❀ अंतरे विणासिज्जमाणे णवुंसयवेदमोकड्डिदूण उदयावलियबाहिरे णिक्खिवदि ।

❀ से काले एक्कावीसं पयडीओ पविसंति ।

बाहर निक्षेप किया । तब तेरह प्रकृतियाँ प्रवेश करती हैं ।

* तदनन्तर समयमें उन्नीस प्रकृतियाँ प्रवेश करती हैं ।

§ २६२. ये सूत्र सुगम हैं ।

* तदनन्तर अन्तर्मुहूर्त बाद स्त्रीवेदका अपकर्षण करके उदयावलिके बाहर निक्षेप करता है ।

§ २६३. क्योंकि यह पुरुषवेदके उदयसे चढ़ा है और स्वोदयके विना उदय समयसे लेकर निक्षेप होना सम्भव नहीं है, क्योंकि इसका निषेध है ।

* तदनन्तर समयमें बीस प्रकृतियाँ प्रवेश करती हैं ।

§ २६४. क्योंकि उदयावलिके बाहर निक्षिप्त हुए स्त्रीवेदका तब उदयावलिके भीतर प्रवेश देखा जाता है ।

* यह स्थान तब तक रहता है जब तक अन्तरका नाश नहीं होता ।

§ २६५. इससे आगे जब तक अन्तरका नाश नहीं होता तब तक इस प्रवेशस्थानको अवस्थित जानना चाहिए यह उक्त कथनका तात्पर्य है ।

* अन्तरका नाश करने पर नपुंसकवेदको अपकर्षित कर उदयावलिके बाहर निक्षेप करता है ।

* तदनन्तर समयमें इक्कीस प्रकृतियाँ प्रवेश करती हैं ।

§ २६६. णवुंसयवेदे ओकड्डिदे तक्काले चेवांतरविणासो होइ । तदणंतरसमए णवुंसयवेदेण सह एक्कवीसं पयडीओ उदयावलियं पविसंति त्ति भणिदं होइ ।

❀ एत्तो पाए जइ खीणदंसणमोहणीयो एदाओ एक्कवीसं पयडीओ पविसंति जाव अक्खवग-अणुवसामगो ताव ।

§ २६७. एत्थ जइ खीणदंसणमोहणीयो त्ति वयणमक्खीणदंसणमोहणीयम्मि विणट्ठंतरम्मि अंतोमुहुत्तादो उवरि पयारंतरसंभवपदुप्पायणट्ठं । अक्खवगाणुवसामग-विसेसणं खवगोवसामगपज्जाएण परिणदम्मि तम्मि पुणो वि अंतरकरणादिवसेण इगिवीसपवेसट्ठाणविणासो होइ त्ति जाणावणट्ठं । तदो उवसामणादो परिवदिदो खइय-सम्माइट्ठी हेट्ठा णिवदिय पमत्तापमत्तसंजद-संजदासंजद-असंजदसम्माइट्ठिगुणट्ठाणेसु जेत्तियं कालमच्छइ तेत्तियं कालमिगिवीसपवेसट्ठाणमविणट्ठं होदूण पुणो खवगोवसम-सेढिमारोहणे विणस्सदि त्ति एसो एदस्स भावत्थो । संपहि उवसंतदंसणमोहणीय-मस्सिऊण एत्तो हेट्ठा अण्णाणि वि पवेसट्ठाणाणि समुप्पज्जंति त्ति जाणावेंतुमुत्तरसुत्त-पबंधमाह—

❀ एदस्स चेव कसायोवसामणादो परिवदमाणयस्स ।

§ २६८. एदस्स चेव कसायोवसामणादो परिवदमाणयस्स उवसंतदंसणमोह-णीयस्स किं चि णाणत्तमत्थि तमिदाणिं वत्तइस्सामो त्ति एवं पदसंबंधो कायव्वो । जइ

§ २६६. नपुंसकवेदका अपकर्षण होने पर उसी समय अन्तरका विनाश होता है । पुनः तदनन्तर समयमें नपुंसकवेदके साथ इक्कीस प्रकृतियाँ उदयावलिमें प्रवेश करती हैं यह उक्त कथनका तात्पर्य है ।

❀ इसके आगे यदि वह क्षीणदर्शनमोहनीय है तो ये इक्कीस प्रकृतियाँ तब तक प्रवेश करती हैं जब तक वह अक्षपक और अनुपशामक रहता है ।

§ २६७. यहाँ पर अक्षीणदर्शनमोहनीयके अन्तरका नाश होने पर अन्तर्मुहूर्तके बाद प्रकारान्तर सम्भव है इस बातका कथन करनेके लिए 'यदि क्षीणदर्शनमोहनीय है' यह वचन दिया है । क्षपक और उपशामक पर्यायसे परिणत उस जीवके फिर भी अन्तरकरण आदिके वशसे इक्कीस प्रकृतियोंका प्रवेशस्थान नष्ट होता है इस बातका ज्ञान करानेके लिए 'अक्षपक अनुपशामक' विशेषण दिया है । इसलिए उपशामनासे गिरा हुआ क्षायिकसम्यग्दृष्टि जीव नीचे गिर कर प्रमत्तसंयत, अप्रमत्तसंयत, संयतासंयत और असंयतसम्यग्दृष्टि गुणस्थानोंमें जितने काल रहता है उतने कालतक इक्कीस प्रकृतियोंका प्रवेशस्थान नष्ट न होकर पुनः क्षपक-श्रेणि और उपशमश्रेणि पर आरोहण करने पर नष्ट होता है यह इस सूत्रका भावार्थ है । अब उपशान्तदर्शनमोहनीय जीवका आश्रय कर इससे नीचे अन्य भी प्रवेशस्थान उत्पन्न होते हैं इस बातका ज्ञान करानेके लिए आगेके सूत्रप्रबन्धको कहते हैं—

❀ कषायोंकी उपशामनासे गिरनेवाले इसी जीवके ।

§ २६८. जिसने दर्शनमोहनीयका उपशामना की है ऐसे कषायोंकी उपशामनासे गिरनेवाले इसी जीवके कुछ विभिन्नता है उसे इस समय बतलावेंगे इसप्रकार इस विधिसे पदसम्बन्ध

वि एत्थ उवसंतदंसणमोहणीयस्से त्ति सुत्ते ण वुत्तं तो वि पारिसेसियण्णाएण तदुव-लंभो दट्ठव्वो।

*** जाधे अंतरं विणट्ठं तत्तो पाए एकवीसं पयडीओ पविसंति जाव सम्मत्तमुदीरेंतो सम्मत्तमुदए देदि, सम्मामिच्छत्तं मिच्छत्तं च आवलियबाहिरे णिक्खिवदि। ताधे बावीसं पयडीओ पविसंति।**

§ २६९. अंतरविणासाणंतरमेव समुवलद्धसरूवस्स इगिवीस-पवेसट्ठाणस्स ताव अवट्ठाणं होइ जाव उवसंतसम्मत्तकालचरिमसमयो त्ति। तत्तो परमुवसमसम्मत्तद्धाक्खएण सम्मत्तमुदीरेमाणेण सम्मत्ते उदए दिण्णे मिच्छत्त-सम्मामिच्छत्तेसु च आवलियबाहिरे णिक्खित्तेसु तक्काले बावीसपवेसट्ठाणमुप्पत्ती जायदि त्ति। ण केवलं सम्मत्तमुदीरेमाणस्स एस कमो, किंतु मिच्छत्तं सम्मामिच्छत्तं वा उदीरे-माणस्स वि एदेणेव कमेण बावीसपवेसट्ठाणुप्पत्ती वत्तव्वा, सुत्तस्सेदस्स देसामासयत्तादो।

§ २७०. संपहि तस्सेव विदियसमए अविवक्खियदोदंसणमोहपयडिपवेसेण चदुवीसपवेसट्ठाणुप्पत्ती होदि त्ति परूवणट्ठमाह—

करना चाहिए। यद्यपि यहाँ पर सूत्रमें 'उपशान्तदर्शनमोहनीयके' यह वचन नहीं कहा है तो भी परिशेषन्यायसे उसका सद्भाव जान लेना चाहिए।

* जब अन्तर विनष्ट हो जाता है, वहाँ से लेकर इक्कीस प्रकृतियाँ तब तक प्रवेश करती हैं जब तक सम्यक्त्वकी उदीरणा करके सम्यक्त्वको उदयमें देता है और सम्यग्मिथ्यात्व तथा मिथ्यात्वको उदयावलिके बाहर निक्षेप करता है, तब बाईस प्रकृतियाँ प्रवेश करती हैं।

§ २६९. तात्पर्य यह है कि अन्तरका विनाश होनेके बाद ही समुपलब्धस्वरूप इक्कीस प्रकृतिक प्रवेशस्थानका तब तक अवस्थान रहता है जब तक उपशमसम्यक्त्वके कालका अन्तिम समय प्राप्त होता है। आगे उपशमसम्यक्त्वके कालका नाश होनेसे सम्यक्त्वकी उदीरणा करते हुए सम्यक्त्वको उदयमें देनेपर तथा मिथ्यात्व और सम्यग्मिथ्यात्वका आवलिके बाहर निक्षेप करने पर उस समय बाईस प्रकृतियोंके प्रवेशस्थानकी उत्पत्ति होती है। केवल सम्यक्त्वकी उदीरणा करनेवालेका ही यह क्रम नहीं है किन्तु मिथ्यात्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी उदीरणा करनेवालेके भी इसी क्रमसे बाईस प्रकृतियोंके प्रवेशस्थानकी उत्पत्ति कहनी चाहिए, क्योंकि यह सूत्र देशामर्षक है।

विशेषार्थ—उपशमसम्यग्दृष्टि जीव अपने कालको समाप्त कर वेदकसम्यग्दृष्टि, मिथ्यादृष्टि और सम्यग्मिथ्यादृष्टि इनमेंसे कोई भी हो सकता है। जब जो होगा तब उस गुण-स्थानके अनुरूप मिथ्यात्व आदि तीनमेंसे किसी एक प्रकृतिकी उदीरणा होगी और अन्य दोका उदयावलिके बाहर निक्षेप होगा। यहाँ दर्शनमोहनीयकी तीन प्रकृतियोंमेंसे सम्यक्त्वकी अपेक्षा यह कथन किया है।

§ २७०. अब उसी जीवके दूसरे समयमें अविवक्षित दर्शनमोहनीयकी दो प्रकृतियोंका प्रवेश होनेसे चौबीस प्रकृतियोंके प्रवेशस्थानकी उत्पत्ति होती है इस बातका कथन करनेके लिए कहते हैं—

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

❀ से काले चउवीसं पयडीओ पविसंति ।

§ २७१. सुगमं । जइ वि पुव्वमसंजदपाओग्गट्ठाणपरूवणाए इगिवीस-बावीस-चउवीसपवेसट्ठाणाणं समुक्कित्तणा कया तेण उवसामगपडिवादसंबंधेण पुणो वि पयारंतरेणेदेसिमुवण्णासो कओ त्ति ण पुणरुत्तदोसो ।

❀ जइ सो कसायउवसामणादो परिवदिदो दंसणमोहणीयउवसंतद्धाए अचरिमेसु समएसु आसाणं गच्छइ तदो आसाणगमणादो से काले पणुवीसं पयडीओ पविसंति ।

§ २७२. एदस्स सुत्तस्सत्थो वुच्चदे—कसायोवसामणादो परिवदिदस्स दंसणमोहणीयउवसंतद्धा अंतोमुहुत्ती सेसा अत्थि, तिस्से छावलियावसेसाए प्पहुडि जाव तदद्धाचरिमसमयो त्ति ताव सासणगुणेण परिणमेदुं संभवो । तत्थ चरिमसमए सासणभावं परिणममाणस्स अण्णा परूवणा भविस्सदि त्ति तं मोत्तूण दुचरिमादिहेट्ठिमसमएसु हेट्ठिमभावं पडिवज्जमाणस्स ताव पवेसट्ठाणगवेसणमेदेण सुत्तेण कीरदे । तं जहा—कसायोवसामणादो परिवदिदो उवसंतदंसणमोहणीयो दंसणमोहउवसंतद्धाए दुचरिमादिहेट्ठिमसमएसु जइ आसाणं गच्छइ तदो तस्स सासणभावं पडिवण्णस्स पढमसमए अणंताणुबंधीणमण्णदरस्स पवेसेण बावीसपवेसट्ठाणं होइ । कुदो तत्थाणं-

---

❀ तदनन्तर समयमें चौबीस प्रकृतियाँ प्रवेश करती हैं—

§ २७१. यह सूत्र सुगम है । यद्यपि पहले असंयत जीवोंके योग्य स्थानोंकी प्ररूपणा करते समय इक्कीस, बाईस और चौबीस प्रकृतिक प्रवेशस्थानोंकी समुत्कीर्तना कर आये हैं तो भी उपशामक जीवके प्रतिपातके सम्बन्धसे फिर प्रकारान्तरसे इनका उपन्यास किया है, इसलिए पुनरुक्त दोष नहीं है ।

❀ यदि वह कषायोंकी उपशामनासे गिरता हुआ दर्शनमोहनीयके उपशामनाकालके अचरम (चरम समयसे पूर्व) समयोंमें सासादन गुणस्थानको प्राप्त होता है तो उसके सासादन गुणस्थानमें जानेके एक समय बाद पच्चीस प्रकृतियां प्रवेश करती हैं ।

§ २७२. इस सूत्रका अर्थ कहते हैं—कषायोपशामनासे गिरे हुए जीवके दर्शनमोहनीयके उपशामनाका काल अन्तर्मुहूर्त शेष बचता है । उसमेंसे जब छह आवलि काल शेष रहे वहाँसे लेकर उपशामना कालके अन्तिम समय तक सासादन गुणरूपसे परिणमन करना सम्भव है । उसमेंसे अन्तिम समयमें सासादनभावको प्राप्त होनेवाले जीवकी अन्य प्ररूपणा होगी, इसलिए उसे छोड़कर द्विचरम आदि अधस्तन समयोंमें अधस्तन भावको प्राप्त होनेवाले जीवके सर्व प्रथम प्रवेशस्थानकी गवेषणा इस सूत्र द्वारा करते हैं । यथा—कषायोपशामनासे गिरता हुआ उपशान्त दर्शनमोहनीय जीव दर्शनमोहके उपशामनाके कालके अन्तर्गत द्विचरम आदि अधस्तन समयोंमें यदि सासादनगुणस्थानको प्राप्त होता है तो सासादनभावको प्राप्त होनेवाले उसके प्रथम समयमें अनन्तानुबन्धियोंमेंसे किसी एक प्रकृतिका प्रवेश होनेसे बाईस प्रकृतियोंका प्रवेशस्थान होता है ।

ताणुबंधीणमण्णदरपवेसणियमो ? ण, सासणगुणस्स तदुदयाविणाभावित्तादो। कधं पुव्वमसंतसरूवाणंताणुबंधिकसायस्स तत्थुदयसंभवो ? ण, परिणामपाहम्मेण सेसकसायदव्वस्स तक्कालमेव तदायारेण परिणामिय उदयदंसणादो। तदो आसाणगमणादो से काले पणुवीसं पयडीओ पविसंति। किं कारणं ? उदयावलियबाहिरट्ठिदतिविहाणंताणुबंधीणं तम्मि समए उदयावलियब्भंतरपवेसदंसणादो।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

❀ जाधे मिच्छत्तमुदीरेदि ताधे छव्वीसं पयडीओ पविसंति।

§ २७३. कमेण तेणेव मिच्छत्ते उदीरिज्जमाणे मिच्छत्तेण सह छव्वीसं पयडीणमुदयावलियपवेसस्स परिप्फुडमुवलंभादो। णवरि पढमसमयमिच्छाइट्ठी मिच्छत्तमुदीरेमाणो दंसणतियमोकड्डिऊण मिच्छत्तमुदयादि णिक्खिवदि। सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणि उदयावलियबाहिरे णिक्खिवदि त्ति घेत्तव्वं। अदो चेव से काले तेसिमुदयावलियपवेसो अवस्संभावि त्ति पदुप्पायणट्ठमाह—

❀ तदो से काले अट्ठावीसं पयडीओ पविसंति।

§ २७४. गयत्थमेदं सुत्तं। एवं ताव दुचरिमादिसमएसु सासणभावं पडिवज्जमाणस्स जहाकमं बावीस-पणुवीस-छव्वीस-अट्ठावीसपवेसट्ठाणाणि होंति त्ति समुक्कित्तिय

शंका—वहाँ अनन्तानुबन्धियोंकी किसी एक प्रकृतिके प्रवेशका नियम क्यों है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि सासादनगुण उसके उदयका अविनाभावी है।

शंका—पूर्वमें सत्तासे रहित अनन्तानुबन्धीकषायका वहां पर उदय कैसे सम्भव है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि परिणामोंके माहात्म्यवश शेष कषायोंका द्रव्य उसी समय उस रूपसे परिणमकर उसका उदय देखा जाता है।

इसलिए सासादनमें जानेके बाद अनन्तर समयमें पच्चीस प्रकृतियां प्रवेश करती हैं, क्योंकि उदयावलिके बाहर स्थित तीन प्रकारकी अनन्तानुबन्धियोंका उस समयमें उदयावलिके भीतर प्रवेश देखा जाता है।

❀ जिस समय मिथ्यात्वकी उदीरणा करता है उस समय छब्बीस प्रकृतियाँ प्रवेश करती हैं।

§ २७३. क्योंकि उसी जीवके द्वारा क्रमसे मिथ्यात्वकी उदीरणा करने पर मिथ्यात्वके साथ छब्बीस प्रकृतियोंका उदयावलिमें प्रवेश स्पष्ट उपलब्ध होता है। किन्तु इतनी विशेषता है कि प्रथम समयवर्ती मिथ्यादृष्टि जीव मिथ्यात्वकी उदीरणा करता हुआ तीन दर्शनमोहनीयका अपकर्षण कर मिथ्यात्वका उदय समयसे लेकर निक्षेप करता है तथा सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका उदयावलिके बाहर निक्षेप करता है ऐसा यहाँ ग्रहण करना चाहिए। और इसी लिए तदनन्तर समयमें उनका उदयावलिमें प्रवेश अवश्यंभावी है इस बातका कथन करनेके लिए कहते हैं—

❀ इसके बाद तदनन्तर समयमें अट्ठाईस प्रकृतियाँ प्रवेश करती हैं।

§ २७४. यह सूत्र गतार्थ है। इस प्रकार सर्व प्रथम द्विचरम आदि समयोंमें सासादनभावको प्राप्त होनेवाले जीवके क्रमसे बाईस, पच्चीस, छब्बीस और अट्ठाईस प्रकृतियोंके प्रवेश

चरिमसमए दंसणमोहउवसंतद्धाए आसाणं पडिवज्जमाणस्स किंचि णाणत्तमत्थि त्ति तप्पदुप्पायणट्ठमाह—

※ अह सो कसायउवसामणादो परिवदिदो दंसणमोहणीयस्स उवसंतद्धाए चरिमसमए आसाणं गच्छइ से काले मिच्छत्तमोकड्डमाणयस्स छव्वीसं पयडीओ पविसंति।

§ २७५. अह जइ सो चेव कसायउवसामणादो परिवदिदो उवसमसम्मत्तद्धा-चरिमसमए सासणगुणं पडिवज्जइ तो तस्स तम्मि समए पुव्वुत्तेणेव कमेण बावीस-पवेसट्ठाणं होदूण से काले मिच्छत्तमोकड्डमाणस्स पणुवीसपवेसट्ठाणमहोदूण मिच्छत्तेण सह तिण्हमणंताणुबंधीणमक्कमपवेसेण छव्वीसं पयडीओ उदयावलियं पविसंति त्ति एसो एत्थतणो विसेसो।

※ तदो से काले अट्ठावीसं पयडीओ पविसंति।

§ २७६. सुगममेदं।

※ एदे वियप्पा कसायउवसामणादो परिवदमाणगादो।

§ २७७. एदे अणंतरणिद्दिट्ठा वियप्पा कसायोवसामणादो परिवदमाणमस्सिऊण परूविदा त्ति पयदत्थोवसंहारवक्कमेदं। णवरि अण्णे वि वियप्पा एत्थ संभवंति तेसिं

स्थान होते हैं ऐसी समुत्कीर्तना करके अब दर्शनमोहके उपशान्तकालके अन्तिम समयमें सासादन गुणको प्राप्त होनेवाले जीवके कुछ भेद है इस बातका ज्ञान करानेके लिए कहते हैं—

※ यदि वह कषायोपशामनासे गिरता हुआ दर्शनमोहनीयके उपशामनके कालके अन्तिम समयमें सासादन गुणस्थानको प्राप्त होता है तो तदनन्तर समयमें मिथ्यात्वका अपकर्षण करनेवाले उसके छब्बीस प्रकृतियाँ प्रवेश करती हैं।

§ २७५ यदि वही जीव कषायोपशामनासे गिरता हुआ उपशमसम्यक्त्वके कालके अन्तिम समयमें सासादनगुणको प्राप्त होता है तो उसके उस समयमें पूर्वोक्त क्रमसे ही बाईस प्रकृतियोंका प्रवेशस्थान होकर अनन्तर समयमें मिथ्यात्वका अपकर्षण करते हुए पच्चीस प्रकृतियोंका प्रवेशस्थान न होकर मिथ्यात्वके साथ तीन अनन्तानुबन्धियोंका युगपत् प्रवेश होनेके कारण छब्बीस प्रकृतियाँ उदयावलिमें प्रवेश करती हैं यह यहाँ पर विशेष है।

※ इसके बाद तदनन्तर समयमें अट्ठाईस प्रकृतियाँ प्रवेश करती हैं।

§ २७६. यह सूत्र सुगम है।

विशेषार्थ—इस मिथ्यादृष्टि जीवके प्रथम समयमें सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका अपकर्षण होकर उदयावलिके बाहर निक्षेप होता है और दूसरे समयमें उन सहित अट्ठाईस प्रकृतियाँ उदयावलिमें प्रवेश करती हैं यह इस सूत्रका भाव है।

※ ये विकल्प कषायोपशामनासे गिरनेवाले जीवकी अपेक्षा होते हैं।

§ २७७. ये पूर्वमें कहे गये विकल्प कषायोपशामनासे गिरनेवाले जीवका आश्रय लेकर कहे गये हैं इस प्रकार यह प्रकृत अर्थका उपसंहार वचन है। किन्तु इतनी विशेषता है कि

परूवणं कस्सामो । तं जहा—उवसामणादो परिवदमाणगो तिविहं लोभमोकड्डिय तिण्हं पवेसगो होदूण ट्ठिदो कालं कादूण देवेसुप्पण्णो तस्स पढमसमए पुरिसवेद-हस्स-रदीओ धुवा होदूण भय-दुगुंछाहिं सह अट्ठ पयडीओ पविसंति । तहा छप्पवेसगेण कालं कादूण देवेसुप्पण्णपढमसमए वट्टमाणएण पुव्वं व पुरिसवेद-हस्स-रदि-भय-दुगुंछासु अक्कमेण पवेसिदासु एक्कारसपवेसट्ठाणमुप्पज्जदि । पुणो णव पवेसगस्स कालं कादूण देवेसुप्पण्णपढमसमए अणंतरणिद्दिट्ठपंचपयडीसु पविट्ठासु चोद्दस पवेसट्ठाणं होइ । तहा तिविहं कोहमोकड्डियूण ट्ठिदबारसपवेसगेण कालं कादूण देवेसुप्पण्णपढमसमए भय-दुगुंछाहिं विणा हस्स-रदि-पुरिसवेदेसु पवेसिदेसु पण्णारस पवेसट्ठाणं होइ । तेणेव बारसपवेसगेण कालं करिय देवेसुप्पण्णपढमसमए हस्स-रदि-पुरिसवेदेसु भय-दुगुंछाणमण्णदरेण सह पवेसिदेसु सोलसपवेसट्ठाणमुप्पज्जदि । अध तेणेव बारसण्हमुवरि पुरिसवेद-हस्स-रदि-भय-दुगुंछा त्ति एदाओ पंच पयडीओ जुगवं पवेसिदाओ तो तस्स पढमसमयदेवस्स सत्तारसपवेसट्ठाणं होइ । एवमेदाणि अट्ठेक्कारस-चोद्दस-पण्णारस सोलस-सत्तारसपवेसट्ठाणाणि देवेसुप्पण्णपढमसमए चेव लब्भंति । एदाणि च सुत्तयारेण ण परूविदाणि, सत्थाणसमुक्कित्तणाए चेव सुत्ते विवक्खियत्तादो ।

*** एत्तो खवगादो मग्गियव्वा कदि पवेसट्ठाणाणि त्ति ।**

यहाँ पर अन्य विकल्प भी सम्भव हैं, अतः उनका कथन करते हैं । यथा—उपशामनासे गिरनेवाला जो जीव तीन प्रकारके लोभका अपकर्षण करके तीनका प्रवेशक होकर स्थित है वह मरकर देवोंमें उत्पन्न हुआ, उसके प्रथम समयमें पुरुषवेद, हास्य और रति ध्रुव होकर भय और जुगुप्साके साथ आठ प्रकृतियाँ प्रवेश करती हैं । तथा छह प्रकृतियोंके प्रवेशके साथ मरकर देवोंमें उत्पन्न होनेके प्रथम समयमें विद्यमान जीवके द्वारा पूर्ववत् पुरुषवेद, हास्य, रति, भय और जुगुप्साका युगपत् प्रवेश कराने पर ग्यारह प्रकृतियोंका प्रवेशस्थान उत्पन्न होता है । पुनः नौ प्रकृतियोंके प्रवेशक जीवके मरकर देवोंमें उत्पन्न होनेके प्रथम समयमें पूर्वमें कही गई पाँच प्रकृतियोंका प्रवेश होने पर चौदह प्रकृतियोंका प्रवेशस्थान होता है । तथा तीन प्रकारके क्रोधका अपकर्षण कर बारह प्रकृतियोंके प्रवेशक हुए जीवके द्वारा मरकर देवोंमें उत्पन्न होनेपर भय और जुगुप्साके बिना हास्य, रति और पुरुषवेदका प्रवेश होनेपर पन्द्रह प्रकृतियोंका प्रवेशस्थान होता है । उसी बारह प्रकृतियोंके प्रवेशक जीवके द्वारा मरकर देवोंमें उत्पन्न होनेके प्रथम समयमें भय और जुगुप्सामेंसे किसी एकके साथ हास्य, रति और पुरुषवेदके प्रवेश करने पर सोलह प्रकृतियोंका प्रवेशस्थान उत्पन्न होता है । और यदि उसी जीवने बारह प्रकृतियोंके ऊपर पुरुषवेद, हास्य, रति, भय और जुगुप्सा इन पाँच प्रकृतियोंका एकसाथ प्रवेश कराया तो उस प्रथम समयवर्ती देवके सत्रह प्रकृतियोंका प्रवेशस्थान होता है । इस प्रकार ये आठ, ग्यारह, चौदह, पन्द्रह, सोलह और सत्रह प्रकृतियोंके प्रवेशस्थान देवोंमें उत्पन्न होनेके प्रथम समयमें ही प्राप्त होते हैं । किन्तु ये सूत्रकारने नहीं कहे हैं, क्योंकि सूत्रमें स्वस्थान समुत्कीर्तनाकी ही विवक्षा रही है ।

* आगे क्षपकके आश्रयसे कितने प्रवेशस्थान होते हैं इसकी मार्गणा करनी चाहिए ।

§ २७८. उवसामगपाओग्गपवेसट्ठाणपरूवणाणंतरमेत्तो खवगादो पवेसट्ठाण-समुक्कित्तणा अणुमग्गियव्वा कदि तत्थ पवेसट्ठाणाणि होंति त्ति जाणावणट्ठं—

❀ तं जहा।

❀ **दंसणमोहणीए खविदे एक्कावीसं पयडीओ पविसंति।**

§ २७९. जइ वि एसो अत्थो पुव्वमसंजदपाओग्गट्ठाणपरूवणावसरे परूविदो तो वि ण पुणरुत्तदोसो, पुव्वुत्तस्सेवत्थस्साणुवादं कादूण एत्तो अपुव्वत्थपरूवणं कस्सामो त्ति जाणावणट्ठमेदस्स सुत्तस्सावयारादो।

❀ **अट्ठकसाएसु खविदेसु तेरसपयडीओ पविसंति** सुविधिसागर जी महाराज

§ २८०. पुव्वुत्तइगिवीसपवेसगेण खवगसेढिमारूढेण अणियट्टिगुणट्ठाणं पविसिय अट्ठकसाएसु खविदेसु तत्तो प्पहुडि जाव अंतरकरणं ण समप्पइ ताव चदुसंजलण-णवणोकसायसण्णिदाओ तेरस पयडीओ तस्स खवगस्स उदयावलियं पविसंति त्ति समुक्किाित्तिदं होइ।

❀ **अंतरे कदे दो पयडीओ पविसंति।**

§ २८१. तं जहा—अंतरं करेमाणो पुरिसवेद-कोहसंजलणाणमंतोमुहुत्तमेत्तिं पढमट्ठिदिं ठवेदि। सेसकसाय-णोकसायाणमुदयावलियवज्जं सव्वमंतरमागाएदि। एवमंतरं करेमाणेण जाधे अंतरं समाणिदं ताधे पुरिसवेद-कोधसंजलणाणमंतोमुहुत्तमेत्ती

§ २७८. उपशामकके योग्य प्रवेशस्थानोंकी प्ररूपणा करनेके बाद आगे क्षपकके आश्रयसे वहाँ कितने प्रवेशस्थान होते हैं इसका ज्ञान करानेके लिए प्रवेशस्थान समुत्कीर्तनाका विचार करना चाहिए।

* यथा—

* दर्शनमोहनीयका क्षय होनेपर इकीस प्रकृतियाँ प्रवेश करती हैं।

§ २७९. यद्यपि यह अर्थ पहले असंयत प्रायोग्य स्थानोंके कथनके समय कह आये हैं तो भी पुनरुक्त दोष नहीं है, क्योंकि पूर्वोक्त अर्थका ही अनुवाद करके आगे अपूर्व अर्थका कथन करेंगे इस बातका ज्ञान करानेके लिए इस सूत्रका अवतार हुआ है।

* **आठ कषायोंका क्षय होनेपर तेरह प्रकृतियाँ प्रवेश करती हैं।**

§ २८०. क्षपकश्रेणि पर चढ़े हुए पूर्वोक्त इक्कीस प्रकृतियोंके प्रवेशक जीवके द्वारा अनिवृत्तिगुणस्थानमें प्रवेश करके आठ कषायोंका क्षय कर देने पर वहाँसे लेकर जब तक अन्तरकरण समाप्त नहीं होता है तब तक चार संज्वलन और नौ नोकषाय संज्ञावाली तेरह प्रकृतियाँ उस क्षपकके उदयावलिमें प्रवेश करती हैं यह इस सूत्र द्वारा कहा गया है।

* **अन्तर करनेपर दो प्रकृतियाँ प्रवेश करती हैं।**

§ २८१. यथा—अन्तर करनेवाला क्षपक जीव पुरुषवेद और क्रोधसंज्वलनकी अन्तर्मुहूर्तमात्र प्रथम स्थिति स्थापित करता है। शेष कषायों और नोकषायोंकी उदयावलिको छोड़कर शेष सब स्थिति अन्तरको प्राप्त हो जाती है। इस प्रकार अन्तरको करनेवाला जब अन्तरको

पढमट्ठिदी चिट्ठदि, सेसाणमेक्कारसपयडीणमुदयावलियब्भंतरे समयूणावलियमेत्तगोवुच्छा सेसा। पुणो तेसु अधट्ठिदीए णिरवसेसं गालिदेसु ताधे दो चेव पयडीओ उदयावलियं पविसंति, पुरिसवेद-कोहसंजलणे मोत्तूणण्णेसिं पढमट्ठिदीए असंभवादो।

❀ पुरिसवेदे खविदे एक्का पयडी पविसदि।

§ २८२. तेणेव दोण्हं पवेसगेण खवगेण जहाकमं णवुंस-इत्थिवेदे खविय तत्तो अंतोमुहुत्तं गंतूण पुरिसवेदपढमट्ठिदिचरिमसमए छण्णोकसाएहिं सह पुरिसवेद-चिराणसंतकम्मे खविदे तदो पहुडि एक्का चेव पयडी पविसदि, तत्थ कोहसंजलणं मोत्तूण अण्णेसिं पढमट्ठिदीए अणुवलंभादो। णवरि पढमट्ठिदीए सह पुरिसवेदचिराण-संतकम्मे खविदे पुरिसवेदो खविदो चेवे त्ति सुत्ते विवक्खियं; बिदियट्ठिदिसमवट्ठिदणवक-बंधस्स पहाणत्ताभावादो। एसो अत्थो उवरिमसुत्तेसु वि वक्खाणेयव्वो।

❀ कोधे खविदे माणो पविसदि।

❀ माणे खविदे माया पविसदि।

❀ मायाए खविदाए लोभो पविसदि।

❀ लोभे खविदे अपवेसगो।

§ २८३. एदाणि सुत्ताणि सुगमाणि। णवरि कोहपढमट्ठिदीए आवलियमेत्त-

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

समाप्त करता है तब पुरुषवेद और क्रोधसंज्वलनकी अन्तर्मुहूर्त मात्र प्रथम स्थिति स्थित रहती है, शेष ग्यारह प्रकृतियोंकी एक समय कम आवलि मात्र गोपुच्छा शेष रहती है। पुनः अधः-स्थितिके द्वारा उनको पूरी तरहसे गला देनेपर तब दो प्रकृतियाँ ही उदयावलिमें प्रवेश करती हैं, क्योंकि पुरुषवेद और क्रोधसंज्वलनको छोड़कर अन्य प्रकृतियोंकी प्रथम स्थिति वहाँ सम्भव नहीं है।

※ पुरुषवेदका क्षय होनेपर एक प्रकृति प्रवेश करती है।

§ २८२. दो प्रकृतियोंके प्रवेशक उसी क्षपक जीवके द्वारा क्रमसे नपुंसकवेद और स्त्रीवेदका क्षय करके उसके बाद अन्तर्मुहूर्त जाकर पुरुषवेदकी प्रथम स्थितिके अन्तिम समयमें छह नोकषायोंके साथ पुरुषवेदके प्राचीन सत्कर्मका क्षय कर देने पर उसके आगे एक प्रकृति ही प्रवेश करती है, क्योंकि वहाँ पर क्रोधसंज्वलनको छोड़कर अन्य प्रकृतियोंकी प्रथम स्थिति नहीं पाई जाती। किन्तु इतनी विशेषता है कि प्रथम स्थितिके साथ पुरुषवेदके प्राचीन सत्कर्मका क्षय होनेपर पुरुषवेदका क्षय कर ही दिया यह सूत्रमें विवक्षित है, क्योंकि द्वितीय स्थितिमें अवस्थित नवकबन्धकी प्रधानता नहीं है यह अर्थ आगेके सूत्रोंमें भी कहना चाहिए।

※ क्रोधका क्षय करने पर मान प्रवेश करता है।

※ मानका क्षय करने पर माया प्रवेश करती है।

※ मायाका क्षय करने पर लोभ प्रवेश करता है।

※ लोभका क्षय करने पर अप्रवेशक होता है।

§ २८३. ये सूत्र सुगम हैं। किन्तु इतनी विशेषता है कि क्रोधसंज्वलनकी प्रथम स्थिति

सेसाए माणसंजलणमोकड्डिय पढमट्ठिदिं करेदि। तत्थुच्छिट्ठावलियमेत्तकालं दोण्हं पवेसगो होदूण तदो एक्किस्से पवेसगो होदि त्ति घेत्तव्वं। एवं सेससंजलणेसु वि वत्तव्वं। लोभे खविदे पुण ण किंचि कम्मं पविसदि, विवक्खियमोहणीयकम्मस्स तत्तो परमसंभवादो। एवमेक्किस्से पवेसट्ठाणस्स चत्तारि भंगा। दोण्हं पवेसगस्स पण्णारस भंगा। सेसाणि पि पवेसट्ठाणाणं जहासंभवं भंगपमाणाणुगमो कायव्वो।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

एवमोघेण ट्ठाणसमुक्कित्तणा समत्ता

§ २८४. संपहि एत्थेव णिण्णयजणणट्ठमादेसपरूवणट्ठमुच्चारणं वत्तइस्सामो। तं जहा—समुक्कित्तणाणु० दुविहो णि०—ओघे० आदेसे०। ओघेण अत्थि २८, २७, २६, २५, २४, २३, २२, २१, २०, १९, १३, १२, १०, ९, ७, ६, ४, ३, २, १ पवेसगो त्ति। एवं मणुसतिए। आदेसेण णेरइय० अत्थि २८, २७, २६, २५, २४, २२, २१ पवेस०। एवं सव्वणेरइय-तिरिक्ख-पंचिंदियतिरिक्खतिय-देवा भवणादि जाव णवगेवज्जा त्ति। पंचिंदियतिरिक्खअपज्ज०-मणुसअपज्ज० अत्थि २८, २७, २६ पवेसगा। अणुद्दिसादि सव्वट्ठा त्ति अत्थि २८, २४, २२, २१ पवेसगा। एवं जाव।

आवलिमात्र शेष रहने पर मानसंज्वलनका अपकर्षण कर प्रथम स्थिति करता है। वहाँ पर उच्छिष्टावलिमात्र काल तक दोनोंका प्रवेशक होकर अनन्तर एकका प्रवेशक होता है ऐसा यहाँ पर ग्रहण करना चाहिए। इसी प्रकार शेष संज्वलनोंमें भी कहना चाहिए। परन्तु लोभका क्षय होने पर कोई कर्म प्रवेश नहीं करता, क्योंकि विवक्षित मोहकर्म उसके आगे नहीं है। इस प्रकार एक प्रकृतिके प्रवेशस्थानके चार भंग हैं। दो प्रकृतियोंके प्रवेशस्थानके पन्द्रह भंग हैं। शेष प्रवेशस्थानोंके भी भंगोंके प्रमाणका अनुगम करना चाहिए।

इस प्रकार ओघसे स्थानसमुत्कीर्तना समाप्त हुई।

§ २८४. अब यहीं पर निर्णय उत्पन्न करनेके अभिप्रायसे आदेश प्ररूपणा करनेके लिए उच्चारणाको बतलाते हैं। यथा—समुत्कीर्तनानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे २८, २७, २६, २५, २४, २३, २२, २१, २०, १९, १३, १२, १०, ९, ७, ६, ४, ३, २ और १ इन प्रकृतिस्थानोंके प्रवेशक जीव हैं। इसी प्रकार मनुष्यत्रिकमें जानना चाहिए। आदेशसे नारकियोंमें २८, २७, २६, २५, २४, २२ और २१ प्रकृतिस्थानोंके प्रवेशक जीव हैं। इसी प्रकार सब नारकी, सामान्य तिर्यञ्च, पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिक, सामान्य देव और भवनवासियोंसे लेकर नौ ग्रैवेयक तकके देवोंमें जानना चाहिए। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्तकोंमें २८, २७ और २६ प्रकृतिस्थानोंके प्रवेशक जीव हैं। अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धितकके देवोंमें २८, २४, २२ और २१ प्रकृतिस्थानोंके प्रवेशक जीव हैं। इसी प्रकार अनाहारक मार्गणातक जानना चाहिए।

विशेषार्थ—कषायोपशामनासे च्युत होनेपर चूर्णिसूत्रोंमें जिन प्रवेशस्थानोंका निर्देश किया है अन्य स्थानोंके साथ वे ही यहाँ ओघप्ररूपणामें परिगणित किये गये हैं। कषायोपशामनासे च्युत हुए जीवकी अपेक्षा जो अन्य प्रकारसे ८, ११, १४, १५, १६ और १७ प्रकृतिक प्रवेशस्थान जयधवला टीकामें बतलाये हैं उन्हें यहाँ परिगणित नहीं किया है। शेष कथन सुगम है।

§ २८५. सादि०-अणादि०-धुव०-अद्धुवाणु० दुविहो णि०—ओघे० आदेसे०। ओघेण छव्वीसंपवे० किं सादि० ४ ? सादि० अणादि० धुव० अद्धुवा वा। सेसट्ठाणाणि सादि-अद्धुवाणि। आदेसेण सव्वगदीसु सव्वट्ठाणाणि सादि-अद्धुवाणि। एवं जाव०।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

❀ एवमणुमाणिय सामित्तं णेदव्वं।

§ २८६. एवमणंतरपरूविदं समुक्कित्तणाणुगममणुमाणिय णिबंधणं कादूण सामित्तं णेदव्वं। कुदो ? इमाणि ट्ठाणाणि असंजदपाओग्गाणि इमाणि च संजदपाओग्गाणि, तत्थ वि असंजदपाओग्गेसु इमाणि सम्माइट्ठिपाओग्गाणि इमाणि च मिच्छाइट्ठिपाओग्गाणि, संजदपाओग्गेसु वि एदाणि उवसामगपाओग्गाणि एदाणि च खवगपाओग्गाणि त्ति एवंविहविसेसस्स समुक्कित्तणाए सवित्थरमुवणिबद्धत्तादो। संपहि एदेण सुत्तेण समप्पिदत्थस्स परूवणमुच्चारणाबलेण वत्तइस्सामो। तं जहा—

§ २८७. सामित्ताणु० दुविहो णि०—ओघे० आदेसे०। ओघेण २८, २६, २४, २२ पवेसट्ठाणाणि कस्स ? अण्णद० सम्माइट्ठि० मिच्छाइट्ठि० सम्मामिच्छा-

---

§ २८५. सादि, अनादि, ध्रुव और अध्रुवानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे २६ प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव क्या सादि हैं, क्या अनादि हैं, क्या ध्रुव हैं या क्या अध्रुव हैं ? सादि, अनादि, ध्रुव और अध्रुव हैं। शेष स्थान सादि और अध्रुव हैं। आदेशसे सब गतियोंमें सब स्थान सादि और अध्रुव हैं। इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

विशेषार्थ—२६ प्रकृतिक प्रवेशस्थान जीवोंके अनादि कालसे तब तक पाया जाता है जब तक प्रथमोपशम सम्यक्त्वकी प्राप्ति नहीं होती, इसलिए तो यह अनादि है। उसके बाद पुनः इसकी प्राप्ति सम्यक्त्वसे च्युत हुए मिथ्यादृष्टिके सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी उद्वेलना होने पर ही होती है, इसलिए वह सादि है। तथा अभव्योंके वह ध्रुव है और भव्योंके अध्रुव है। इस प्रकार २६ प्रकृतिक प्रवेशस्थान सादि आदिके भेदसे चारों प्रकारका बन जाता है। किन्तु शेष स्थानोंकी प्राप्ति जीवोंके गुणस्थान प्रतिपन्न होनेके बाद ही बनती है, इसलिए वे सादि और अध्रुव हैं। गतिसम्बन्धी सब मार्गणाएँ कादाचित्क हैं, इसलिए उनमें सब स्थान सादि और अध्रुव हैं यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

* इस प्रकार अनुमान कर स्वामित्वको जान लेना चाहिए।

§ २८६. इस प्रकार पूर्वमें कही गई समुत्कीर्तनाको अनुमान कर अर्थात् उसे हेतु बनाकर स्वामित्वको जान लेना चाहिए, क्योंकि ये स्थान असंयतप्रायोग्य हैं और ये स्थान संयतप्रायोग्य हैं। उसमें भी असंयतप्रायोग्य स्थानोंमें ये सम्यग्दृष्टिप्रायोग्य हैं और ये मिथ्यादृष्टिप्रायोग्य हैं। संयतप्रायोग्योंमें भी ये उपशामकप्रायोग्य हैं और ये क्षपकप्रायोग्य हैं इस प्रकारकी जो विशेषता है उसको विस्तारके साथ समुत्कीर्तनामें उपनिबद्ध कर दिया है। अब इस सूत्रके द्वारा सूचित होनेवाले अर्थका कथन उच्चारणाके बलसे करते हैं। यथा—

§ २८७. स्वामित्वानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे २८, २६, २४ और २२ प्रकृतिक प्रवेशस्थान किसके होते हैं ? अन्यतर सम्यग्दृष्टि, मिथ्यादृष्टि

इट्ठि० । णवरि बावीस संतिणसम्माइट्ठिस्स वि अत्थि । २७ पवेस० कस्स ? अण्णद० मिच्छाइट्ठिस्स । २५ पवेस० कस्स ? अण्णद० सम्माइट्ठि० सासणसम्मा० । तेवीस० इगिवीसप्पहुडि जाव एक्किस्से पवेस० कस्स ? अण्णद० सम्माइट्ठि० । एवं मणुस-तिए । आदेसेण णेरइय० २८, २७, २६, २५, २४, २२, २१ ओघं । एवं सव्वणेरइय-तिरिक्ख-पंचिंदियतिरिक्खतिय-देवा भवणादि जाव णवगेवज्जा त्ति । पंचिंदियतिरिक्खअपज्ज०-मणुसअपज्ज०-अणुदिसादि सव्वट्ठा त्ति सव्वट्ठाणाणि कस्स ? अण्णद० । एवं जाव० ।

❀ एयजीवेण कालो ।

§ २८८. अहियारसंभालणवक्कमेदं । तस्स दुविहो णिद्देसो ओघादेसभेदेण । तत्थोघपरूवणट्ठमाह—

❀ एक्किस्से दोण्हं तिण्हं छण्हं णवण्हं बारसण्हं तेरसण्हं एगूणवीसण्हं वीसण्हं पयडीणं पवेसगो केवचिरं कालादो होइ ?

§ २८९. सुगमं ।

❀ जहण्णेण एयसमओ ।

§ २९०. तं जहा—एक्किस्से पवे० ताव वुच्चदे । उवसमसेढीदो ओदरमाणगो

और सम्यग्मिथ्यादृष्टिके होते हैं। किन्तु इतनी विशेषता है कि बाईसप्रकृतिक प्रवेशस्थान सासादनसम्यग्दृष्टिके भी होता है। २७ प्रकृतिक प्रवेशस्थान किसके होता है ? अन्यतर मिथ्यादृष्टिके होता है। २५ प्रकृतिक प्रवेशस्थान किसके होता है ? अन्यतर सम्यग्दृष्टि और सासादनसम्यग्दृष्टिके होता है। २३ और २१ से लेकर १ प्रकृतिक प्रवेशस्थान तक सब स्थान किसके होते हैं ? अन्यतर सम्यग्दृष्टिके होते हैं। इसी प्रकार मनुष्यत्रिकमें जानना चाहिए। आदेशसे नारकियोंमें २८, २७, २६, २५, २४, २२ और २१ प्रकृतिक प्रवेशस्थानोंका स्वामित्व ओघके समान है। इसी प्रकार सब नारकी, सामान्य तिर्यञ्च, पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिक, सामान्य देव और भवनवासियोंसे लेकर नौ ग्रैवेयकतकके देवोंमें जानना चाहिए। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त, मनुष्य अपर्याप्त और अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धितकके देवोंमें यथासम्भव सब प्रवेशस्थान किसके होते हैं ? अन्यतरके होते हैं। इसी प्रकार अनाहारक मार्गणातक जानना चाहिए।

❀ एक जीवकी अपेक्षा कालका अधिकार है।

§ २८८. अधिकारकी सम्हाल करनेवाला यह वाक्य है। उसका निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। उनमेंसे ओघका कथन करनेके लिए कहते हैं—

❀ एक, दो, तीन, छह, नौ, बारह, तेरह, उन्नीस और बीस प्रकृतियोंके प्रवेशक जीवका कितना काल है।

§ २८९. यह सूत्र सुगम है।

❀ जघन्य काल एक समय है।

§ २९०. यथा—सर्व प्रथम एक प्रकृतिके प्रवेशकका कहते हैं—उपशमश्रेणिसे उतरनेवाला

लोहसंजलणमोकड्डिय एगसमयमेक्किस्से पवेसगो होदूण से काले तिण्हं पवेसगो जादो। अथवा उवसमसेढिं चढमाणगो पुरिसवेदपढमट्ठिदिं गालिय एगसमयमेक्किस्से पवेसगो होदूण से काले कालं कादूण देवेसुप्पण्णो, लद्धो एयसमयमेत्तो एक्किस्से पवेसगस्स जहण्णकालो।

§ २९१. संपहि दोण्हं पवेस० वुच्चदे। तं कथं ? उवसमसेढिं चढमाणो अंतरकरणं समाणिय तदो समयूणावलियमेत्तकालं ओलाविय दोण्हं पवे० जादो। से काले कालगदो देवेसुप्पज्जिय पज्जायंतरं गदो लद्धो दोण्हं पवेस० जह० एयसमयो। एवं माण-माया-लोभेसु ओकड्डिदेसु वि पयदजहण्णकालसंभवो समयाविरोहेणाणुगंतव्वो।

§ २९२. तिण्हं पवेस० वुच्चदे— तिविहं लोभमोकड्डिय एयसमयं तिण्हं पवेसगो होदूण से काले कालगदो देवेसुप्पज्जिय अण्णं पवेसट्ठाणं पडिवण्णो लद्धो एगसमयमेत्तो तिण्हं पवेसगस्स जहण्णकालो। एवं छण्हं पवेसगस्स वि जहण्णकालो परूवेयव्वो। णवरि तिविहं मायमोकड्डिय एगसमयं छण्हं पवेसगो होदूण कालगदो त्ति वत्तव्वं। एवं चेव णवण्हं बारसण्हं पि जहण्णकालपरूवणा कायव्वा। णवरि जहाकमं तिविहं माणं तिविहं च कोहमोकड्डिऊण से काले कालगदो त्ति वत्तव्वं। एवं तेरसण्हं। णवरि पुरिसवेदमोकड्डिय एगसमयं तेरसपवेसगो होदूण से काले एगूणवीसपवेसट्ठाणं

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

जीव लोभसंज्वलनका अपकर्षण कर एक प्रकृतिका प्रवेशक हो तदनन्तर समयमें तीन प्रकृतियोंका प्रवेशक हो गया। अथवा उपशमश्रेणि पर चढ़नेवाला जीव पुरुषवेदकी प्रथम स्थितिको गलाकर एक समय तक एक प्रकृतिका प्रवेशक हो तदनन्तर समयमें मरकर देवोंमें उत्पन्न हुआ। इस प्रकार एक प्रकृतिके प्रवेशकका जघन्य काल एक समयमात्र प्राप्त हुआ।

§ २९१. अब दो प्रकृतियोंके प्रवेशकका जघन्य काल कहते हैं। वह कैसे ? उपशमश्रेणि पर चढ़नेवाला जीव अन्तरकरणको समाप्त कर अनन्तर एक समय कम एक आवलि कालको बिताकर दो प्रकृतियोंका प्रवेशक हो गया। फिर तदनन्तर समयमें मरकर और देवोंमें उत्पन्न हो पर्यायान्तर (स्थानान्तर) को प्राप्त हुआ। इस प्रकार दो प्रकृतियोंके प्रवेशकका जघन्य काल एक समय प्राप्त हो गया। इसी प्रकार मान, माया और लोभका अपकर्षण करने पर भी प्रकृत जघन्य कालका सम्भव समयके अविरोधपूर्वक जान लेना चाहिए।

§ २९२. अब तीन प्रकृतियोंके प्रवेशकका कहते हैं—तीन लोभोंका अपकर्षण कर एक समय तक तीन प्रकृतियोंका प्रवेशक हो तथा मर कर देवोंमें उत्पन्न हो अन्य प्रवेशस्थानको प्राप्त हो गया। इस प्रकार तीन प्रकृतियोंके प्रवेशकका जघन्य काल एक समय प्राप्त हो गया। इसी प्रकार छह प्रकृतियोंके प्रवेशकका भी जघन्य काल एक समय कहना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि तीन प्रकारकी मायाका अपकर्षण कर एक समय तक छह प्रकृतियोंका प्रवेशक हो मरा ऐसा कहना चाहिए। तथा इसी प्रकार नौ और बारह प्रकृतियोंके प्रवेशकके भी जघन्य कालका कथन करना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि क्रमसे तीन प्रकारके मान और तीन प्रकारके क्रोधका अपकर्षण कर तदनन्तर समयमें मरा ऐसा कहना चाहिए। इसी प्रकार तेरह प्रकृतियोंके प्रवेशकका भी जघन्य काल कहना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि पुरुषवेदका अपकर्षण कर एक समय तक तेरह प्रकृतियोंका प्रवेशक हो तदनन्तर समयमें उन्नीस प्रकृतियों

पडिवण्णो त्ति वत्तव्वं। एगूणवीस-वीसपवेसगाणं पि अप्पणो पयडीओ ओकड्डिऊण सकाले चेव कालं कादूण देवेसुप्पण्णो त्ति वत्तव्वं।

❀ उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं।

§ २९३. तं जहा—एकिस्से पवे० ताव उच्चदे। इत्थिवेदलोहसंजलणाणमुदएण खवगसेढिं चढिदो अवगदवेदपढमसमयप्पहुडि जाव सुहुमसांपराइयचरिमसमयो त्ति ताव एकिस्से पवेसगो होइ। एसो एकिस्से पवेसगस्स उक्कस्सकालो। दोण्हं पवेसगस्स वि खवगसेढीए चेव उक्कस्सकालो घेत्तव्वो, पुरिसवेदोदएण खवगसेढिमारूढस्स अंतरकरणं कादूण समऊणावलियमेत्तकाले गदे तदो प्पहुडि जाव पुरिसवेदपढमट्ठिदिचरिमसमयो ताव दोण्हं पवेसगत्तदंसणादो। तिण्हं पवेसगस्स तिविहं लोभमोकड्डिय हेट्ठा ओदरमाणगो उवसामगो जाव तिविहं मायं ण ओकड्डदि ताव एसो उक्कस्सकालो घेत्तव्वो। एवं सेसाणं पि वत्तव्वं। णवरि तेरसण्हं पवे० खवगसेढीए अट्ठकसाएसु खविदेसु जाव अंतरकरणं कादूण दोण्हं पवेसगो ण होइ ताव एसो कालो घेत्तव्वो।

❀ चदुण्हं सत्तण्हं दसण्हं पयडीणं पवेसगो केवचिरं कालादो होइ ?

§ २९४. सुगमं।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

❀ जहण्णुक्कस्सेण एयसमओ।

के प्रवेशस्थानको प्राप्त हुआ ऐसा कहना चाहिए। उन्नीस और बीस प्रकृतियोंके प्रवेशकोंके भी अपनी अपनी प्रकृतियोंका अपकर्षण कर उसी समय मरकर देवोंमें उत्पन्न हो गया ऐसा कहना चाहिए।

* उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है।

§ २९३. यथा—एक प्रकृतिके प्रवेशकका सर्व प्रथम कहते हैं—जो जीव स्त्रीवेद और लोभसंज्वलनके उदयसे क्षपकश्रेणिपर चढ़ा है वह अपगतवेदके प्रथम समयसे लेकर सूक्ष्मसाम्पराय गुणस्थानके अन्तिम समय तक एक प्रकृतिका प्रवेशक होता है। यह एक प्रकृतिके प्रवेशकका उत्कृष्ट काल है। दो प्रकृतियोंके प्रवेशकका भी उत्कृष्ट काल क्षपकश्रेणिमें प्राप्त करना चाहिए, क्योंकि पुरुषवेदके उदयसे क्षपकश्रेणिपर चढ़े हुए जीवके अन्तरकरण करके एक समय कम एक आवलि मात्र काल जाने पर वहाँसे लेकर पुरुषवेदकी प्रथम स्थितिके अन्तिम समय तक दो प्रकृतियोंका प्रवेश देखा जाता है। तीन प्रकारके लोभका अपकर्षण कर उतरता हुआ उपशामक जीव जब तक तीन प्रकारकी मायाका अपकर्षण नहीं करता तब तक तीन प्रकृतियोंके प्रवेशकका यह उत्कृष्ट काल होता है ऐसा ग्रहण करना चाहिए। इसी प्रकार शेष प्रवेशस्थानोंका भी उत्कृष्ट काल कहना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि तेरह प्रकृतियोंके प्रवेशकके, क्षपकश्रेणिमें आठ कषायोंका क्षय कर जब तक अन्तरकरण कर दो प्रकृतियोंका प्रवेशक नहीं होता तब तकका काल लेना चाहिए।

* चार, सात और दस प्रकृतियोंके प्रवेशकका कितना काल है ?

§ २९४. यह सूत्र सुगम है।

* जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है।

§ २९५. तं जहा—तिण्हं छण्हं णवण्हं पवेसगेण जहाकमं माय-माण-कोह-संजलणेसु ओकड्डिदेसु पयदट्ठाणाणमेयसमयमेत्तो कालो होइ, तत्तो उवरिमसमएसु जहाकमं छण्हं णवण्हं बारसण्हं च णियमेण पवेसदंसणादो ।

❀ पंच-अट्ठ-एक्कारस-चोद्दसादि जाव अट्ठारसा त्ति एदाणि सुण्णट्ठाणाणि ।

§ २९६. कुदो ? पंचट्ठारसपवेसट्ठाणाणं सव्वत्थ सव्वकालमणुवलंभादो । सेसाणं च सत्थाणविवक्खाए संभवाणुवलंभादो । तदो एदेसिं जहण्णुक्कस्सकालपरिक्खा णत्थि त्ति एसो एत्थ भावत्थो ।

आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

❀ एक्कवीसाए पयडीणं पवेसगो केवचिरं कालादो होदि ?

§ २९७. सुगमं ।

❀ जहण्णेण अंतोमुहुत्तं ।

§ २९८. तं कधं ? चउवीसपवेसगेण वेदगसम्माइट्ठिणा दंसणमोहणीयं खविय इगिवीसपवेसगभावमुवगएण सव्वजहण्णंतोमुहुत्तमेत्तकालेण खवणाए अब्भुट्ठिय अट्ठकसाएसु खविदेसु णिरुद्धपवेसट्ठाणविणासेण तेरसपवेसट्ठाणमुप्पज्जइ । अहवा उवसमसम्माइट्ठिणो अणंताणुबंधिचउक्कं विसंजोइय सव्वजहण्णंतोमुहुत्तमेत्तकालमिगिवीसपवेसगभावेणच्छिय छावलियावसेसे सासणं पडिवज्जिय बावीसपवेसगत्तमुवगयस्स एसो

---

§ २९५. यथा—तीन, छह और नौ प्रकृतियोंके प्रवेशक जीवके द्वारा क्रमसे माया, मान और क्रोधसंज्वलनोंके अपकर्षित करने पर उसके प्रकृत स्थानोंका एक समयमात्र जघन्य काल होता है, क्योंकि उनसे उपरिम समयोंमें क्रमसे छह, नौ और बारह प्रकृतियोंका नियमसे प्रवेश देखा जाता है ।

* पाँच, आठ, ग्यारह और चौदहसे लेकर अठारह प्रकृतियों तकके ये शून्य-स्थान हैं ।

§ २९६. क्योंकि पाँच और अठारह प्रकृतियोंके प्रवेशस्थान सर्वत्र सर्वदा उपलब्ध नहीं होते । तथा शेष स्थान स्वस्थान विवक्षामें सम्भव नहीं हैं । इसलिए इन स्थानोंके जघन्य और उत्कृष्ट कालकी परीक्षा नहीं है यह इस सूत्रका भावार्थ है ।

* इक्कीस प्रकृतियोंके प्रवेशकका कितना काल है ?

§ २९७. यह सूत्र सुगम है ।

* जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है ।

§ २९८. वह कैसे ? क्योंकि चौबीस प्रकृतियोंका प्रवेशक कोई वेदकसम्यग्दृष्टि जीव दर्शनमोहनीयका क्षयकर इक्कीस प्रकृतियोंके प्रवेशकभावको प्राप्त हो सबसे जघन्य अन्तर्मुहूर्त कालके द्वारा क्षपणाके लिए उद्यत हो तथा आठ कषायोंका क्षयकर विवक्षित प्रवेशस्थानके विनाश द्वारा तेरहप्रकृतिक प्रवेशस्थान उत्पन्न होता है । अथवा जो उपशमसम्यग्दृष्टि जीव अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी विसंयोजना कर और सबसे जघन्य अन्तर्मुहूर्त काल तक इक्कीस प्रकृतियोंके प्रवेशकभावसे रहकर छह आवलि काल शेष रहने पर सासादन गुणस्थानको प्राप्त

जहण्णकालो वत्तव्वो ।

❀ उक्कस्सेण तेत्तीसं सागरोवमाणि सादिरेयाणि ।

§ २९९. तं जहा—एको देवो णेरइओ वा चउवीससंतकम्मिओ पुव्वकोडाउएसु मणुस्सेसु उववण्णो । गब्भादिअट्ठवस्साणमंतोमुहुत्तब्भहियाणमुवरि दंसणमोहणीयं खविय एकवीसपवेसगो होदूण पुव्वकोडिं जीविय कालं कादूण तेत्तीससागरोवमिएसु देवेसुववज्जिय तत्तो चुदो पुव्वकोडाउअमणुसेसुववज्जिय अंतोमुहुत्तसेसे संसारे खवगसेढिमारूढो अट्ठकसाए खविय तेरसण्हं पवेसगो जादो । एवमंतोमुहुत्तब्भहियअट्ठवस्सेहिं परिहीणदोपुव्वकोडीहिं सादिरेयाणि तेत्तीसं सागरोवमाणि एकवीसपवेसगस्स उक्कस्सकालो होइ ।

❀ बावीसाए पणुवीसाए पयडीणं पवेसगो केवचिरं कालादो होदि ?

§ ३००. सुगमं ।

❀ जहण्णेण एयसमओ ।

§ ३०१. बावीसपवेसगस्स ताव उच्चदे । अणंताणुबंधि० विसंजोएदूण ट्ठिदउवसमसम्माइट्ठी इगिवीसपवेसगो सासणसम्मत्तं मिच्छत्तं सम्मामिच्छत्तं वेदगसम्मत्ताणि वा पडिवण्णो, पढमसमए बावीसपवेसगो होदूण पुणो विदियसमए जहाकमं पणुवीसाए अट्ठावीसाए चदुवीसाए पवेसगो जादो, लद्धो बावीसपवेसगस्स

हो बाईस प्रकृतियोंका प्रवेशक हो गया उसके यह जघन्य काल कहना चाहिए।

※ उत्कृष्ट काल साधिक तेतीस सागर है ।

§ २९९. यथा—एक देव या नारकी चौबीस प्रकृतियोंकी सत्तावाला पूर्वकोटिकी आयुवाले मनुष्योंमें उत्पन्न हुआ। वह गर्भसे लेकर आठ वर्ष और अन्तर्मुहूर्तके बाद दर्शनमोहनीय का क्षय कर इक्कीस प्रकृतियोंका प्रवेशक हो तथा पूर्वकोटि काल तक जीवित रहकर मरा और तेतीस सागरकी आयुवाले देवोंमें उत्पन्न हो पुनः वहाँसे च्युत हो तथा पूर्वकोटिकी आयुवाले मनुष्योंमें उत्पन्न हो संसारमें रहनेका अन्तर्मुहूर्त काल शेष रहनेपर क्षपकश्रेणि पर चढ़कर तथा आठ कषायोंका क्षय कर तेरह प्रकृतियोंका प्रवेशक हो गया। इस प्रकार सान्तर्मुहूर्त आठ वर्ष कम दो पूर्वकोटि अधिक तेतीस सागर प्रमाण इक्कीस प्रकृतियोंके प्रवेशकका उत्कृष्ट काल होता है।

※ बाईस और पच्चीस प्रकृतियोंके प्रवेशकका कितना काल है ?

§ ३००. यह सूत्र सुगम है।

※ जघन्य काल एक समय है ।

§ ३०१. सर्वप्रथम बाईस प्रकृतियोंके प्रवेशकका कहते हैं—अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी विसंयोजना कर इक्कीस प्रकृतियोंका प्रवेशक हो स्थित हुआ उपशमसम्यग्दृष्टि जीव सासादन सम्यक्त्व, मिथ्यात्व, सम्यग्मिथ्यात्व या वेदकसम्यक्त्वको प्राप्त करके प्रथम समयमें बाईस प्रकृतियोंका प्रवेशक हो फिर दूसरे समयमें क्रमसे पच्चीस, अट्ठाईस और चौबीस प्रकृतियोंका प्रवेशक हो गया। इस प्रकार बाईस प्रकृतियोंके प्रवेशकका जघन्य काल एक समय प्राप्त हुआ।

जहण्णकालो एयसमयमेत्तो । संपहि पणुवीसपवे० उच्चदे—विसंजोइदाणंताणुबंधिचउक्केण उवसमसम्माइट्ठिणा उवसमसम्मत्तद्धादुचरिमसमए सासणभावे पडिवण्णो तस्स पढमसमए अणंताणुबंधीणमण्णदरपवेसेण बावीसपवेसट्ठाणं होदूण से काले उदयावलियबाहिरट्ठिदसेसाणंताणुबंधितियस्स उदयावलियपवेसेण पणुवीसट्ठाणं जादं । एवमेगसमयं पणुवीसपवेसट्ठाणं होदूण तदणंतरसमए मिच्छत्तं पडिवण्णस्स छव्वीसं पवेसट्ठाणुप्पत्तीए णिरुद्धं पवेसट्ठाणं विणट्ठं होइ ।

❀ उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं ।

§ ३०२. तं जहा—सम्मामिच्छत्तं खविय जाव सम्मत्तं ण खवेइ ताव बावीसपवेसगस्स अंतोमुहुत्तमेत्तो उक्कस्सकालो होइ । पणुवीसपवेसट्ठाणस्स वि अणंताणुबंधीहिं अविसंजुत्तउवसमसम्माइट्ठिकालो सव्वो चेव होइ ।

❀ तेवीसाए पयडीणं पवेसगो केवचिरं कालादो होदि ?

§ ३०३. सुगमं ।

❀ जहण्णुक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं ।

§ ३०४. तं जहा—सम्मामिच्छत्तक्खवणकालो सव्वो चेव तेवीसपवेसगकालो होइ।

❀ चउवीसाए पयडीणं पवेसगो केवचिरं कालादो होदि ?

अब पच्चीस प्रकृतियोंके प्रवेशकका कहते हैं—जिसने अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी विसंयोजना की है ऐसा उपशमसम्यग्दृष्टि जीव उपशमसम्यक्त्वके कालके द्विचरम समयमें सासादनभावको प्राप्त हुआ। उसके प्रथम समयमें अनन्तानुबन्धियोंमेंसे किसी एक प्रकृतिका प्रवेश होनेसे बाईस प्रकृतियोंका प्रवेशस्थान होकर तदनन्तर समयमें उदयावलिके बाहर स्थित शेष अनन्तानुबन्धीचतुष्कके उदयावलिमें प्रवेश करनेसे पच्चीस प्रकृतियोंका प्रवेशस्थान हो गया। इस प्रकार एक समय तक पच्चीस प्रकृतियोंका प्रवेशस्थान होकर तदनन्तर समयमें मिथ्यात्वको प्राप्त हुए उसके छब्बीस प्रकृतियोंके प्रवेशस्थानकी उत्पत्ति होनेसे विवक्षित प्रवेशस्थान विनष्ट होता है।

* उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है।

§ ३०२. यथा—सम्यग्मिथ्यात्वका क्षय करके जब तक सम्यक्त्वप्रकृतिका क्षय नहीं करता है तब तक बाईस प्रकृतियोंके प्रवेशकका उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त होता है। तथा जिसने अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी विसंयोजना नहीं की है ऐसे उपशमसम्यग्दृष्टिका सब काल पच्चीस प्रकृतियोंके प्रवेशकका उत्कृष्ट काल होता है।

* तेईस प्रकृतियोंके प्रवेशकका कितना काल है ?

§ ३०३. यह सूत्र सुगम है।

* जघन्य और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है।

§ ३०४. यथा—सम्यग्मिथ्यात्वका समस्त क्षपणाकाल तेईस प्रकृतियोंके प्रवेशकका काल होता है।

* चौबीस प्रकृतियोंके प्रवेशकका कितना काल है ?

§ ३०५. सुगमं।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

❀ जहण्णेण अंतोमुहुत्तं।

§ ३०६. तं कथं ? अट्ठावीससंतकम्मियवेदयसम्माइट्ठी अणंताणुबंधिचउक्कं विसंजोइय चउवीसपवेसगो होदूण तदो सव्वजहण्णंतोमुहुत्तेण मिच्छत्तं गदो तस्स विदियसमए चउवीसपवेसट्ठाणं फिट्टिदूणट्ठावीसपवेसट्ठाणं जादं,लद्धो पयद जहण्णकालो।

❀ उक्कस्सेण बेछावट्ठिसागरोवमाणि देसूणाणि।

§ ३०७. तं जहा—एगो मिच्छाइट्ठी उवसमसम्मत्तं घेत्तूण तक्कालब्भंतरे चेव चउवीससंतकम्मिओ जादो वेदगसम्मत्तं पडिवण्णविदियसमयप्पहुडि चउवीसपवेसगो होदूण बेछावट्ठिसागरोवमाणि परिभमिय तदवसाणे दंसणमोहक्खवणाए अब्भुट्ठिदो मिच्छत्तं खविय तेवीसपवेसगो जादो। एवं समयाहियसम्मामिच्छत्त-सम्मत्तक्खवण-कालेणूणबेछावट्ठिसागरोवममेत्तो पयदुक्कस्सकालो होदि। बेछावट्ठीणमवसाणे मिच्छत्तं णेदूण पयदकालो किण्ण परूविदो ? ण मिच्छत्तं गच्छमाणस्स सव्वजहण्णंतोमुहुत्तस्स वि सम्मामिच्छत्त-सम्मत्तक्खवणकालादो बहुत्तेण तहाकादुमसत्तीदो।

❀ छव्वीसाए पयडीणं पवेसगो केवचिरं कालादो होदि ?

§ ३०८. सुगमं।

---

§ ३०५. यह सूत्र सुगम है।

❀ जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है।

§ ३०६. वह कैसे ? क्योंकि अट्ठाईस प्रकृतियोंकी सत्तावाला जो वेदकसम्यग्दृष्टि जीव अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी विसंयोजनाकर चौबीस प्रकृतियोंका प्रवेशक हो अनन्तर सबसे जघन्य अन्तर्मुहूर्त कालके द्वारा मिथ्यात्वमें गया उसके दूसरे समयमें चौबीस प्रकृतियोंका प्रवेशस्थान नष्ट होकर अट्ठाईस प्रकृतियोंका प्रवेशस्थान उत्पन्न हो गया। इस प्रकार प्रकृत जघन्य काल उपलब्ध हुआ।

❀ उत्कृष्ट काल कुछ कम दो छ्यासठ सागरोपम है।

§ ३०७. यथा—एक मिथ्यादृष्टि जीव उपशमसम्यक्त्वको ग्रहण कर उसके कालके भीतर ही चौबीस कर्मोंकी सत्तावाला हो गया। पुनः वेदकसम्यक्त्वको प्राप्त करनेके द्वितीय समयसे लेकर चौबीस प्रकृतियोंका प्रवेशक हो कुछ कम दो छ्यासठ सागर काल तक परिभ्रमण कर उसके अन्तमें दर्शनमोहकी क्षपणाके लिए उद्यत हुआ और मिथ्यात्वका क्षय कर तेईस प्रकृतियोंका प्रवेशक हो गया। इस प्रकार एक समय अधिक सम्यग्मिथ्यात्व और सम्यक्त्वके क्षपणा कालसे कम दो छ्यासठ सागर कालप्रमाण प्रकृत उत्कृष्ट काल होता है।

शंका—दो छ्यासठ सागर कालके अन्तमें मिथ्यात्वमें ले जाकर प्रकृत कालका कथन क्यों नहीं किया ?

समाधान—नहीं, क्योंकि मिथ्यात्वमें जानेवाले जीवका सबसे जघन्य अन्तर्मुहूर्त काल भी सम्यग्मिथ्यात्व और सम्यक्त्वके क्षपणाकालसे बहुत होनेके कारण वैसा करनेमें अशक्ति है।

❀ छब्बीस प्रकृतियोंके प्रवेशकका कितना काल है ?

§ ३०८. यह सूत्र सुगम है।

❀ तिण्णि भंगा।

§ ३०९. कुदो ? अणादियअपज्जवसिदादीणं तिण्हं भंगाणमेत्थ णिब्बाह-मुवलंभादो।

❀ तत्थ जो सो सादिओ सपज्जवसिदो तस्स जहण्णेण एयसमओ।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

§ ३१०. कुदो ? अट्ठावीससंतकम्मियउवसमसम्माइट्ठिणा मिच्छत्त-सम्मामिच्छत्त-वेदगसम्मत्ताणमण्णदरगुणे पडिवण्णे सासणसम्माइट्ठिणा वा मिच्छत्ते पडिवण्णे एगसमयं तदुवलंभसंभवादो।

❀ उक्कस्सेण उवड्ढपोग्गलपरियट्टं।

§ ३११. कुदो ? अद्धपोग्गलपरियट्टादिसमए पढमसम्मत्तमुप्पाइय सव्वजहण्णंतोमुहुत्तकालमच्छिय मिच्छत्तं गंतूण सव्वलहुं सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणि उव्वेल्लिय छव्वीसपवेसगभावेणद्धपोग्गलपरियट्टं परिभमिय अंतोमुहुत्ते सेसे संसारे सम्मत्तं पडिवण्णस्स देसूणद्धपोग्गलपरियट्टमेत्तपयडुक्कस्सकालोवलंभादो।

❀ सत्तावीसाए पयडीणं पवेसगो केवचिरं कालादो होदि ?

§ ३१२. सुगमं।

❀ जहण्णेण एयसमओ।

§ ३१३. तं जहा—सम्मत्तमुव्वेल्लमाणमिच्छाइट्ठी सम्मत्ताहिमुहो होदूण अंतरं करेमाणो अंतरदुचरिमफालीए सह सम्मत्तचरिमुव्वेल्लणफालिं घत्तिय तक्काले सम्मत्तस्स

---

* इस कालके तीन भंग हैं।

§ ३०९. क्योंकि अनादि-अनन्त आदि तीन भंग यहाँ पर निर्बाधरूपसे उपलब्ध होते हैं।

* उनमें जो सादि-सान्त भंग है उसका जघन्य काल एक समय है।

§ ३१०. क्योंकि अट्ठाईस प्रकृतियोंकी सत्तावाले उपशमसम्यग्दृष्टिके मिथ्यात्व, सम्यग्मिथ्यात्व और वेदकसम्यक्त्व इनमेंसे किसी एक गुणस्थानको प्राप्त होने पर अथवा सासादनसम्यग्दृष्टिके मिथ्यात्वको प्राप्त होने पर एक समय तक उक्त कालकी उपलब्धि होती है।

* उत्कृष्ट काल उपार्ध पुद्गल परिवर्तनप्रमाण है।

§ ३११. क्योंकि अर्ध पुद्गल परिवर्तन नामक कालके प्रथम समयमें प्रथम सम्यक्त्वको उत्पन्न कर और सबसे जघन्य अन्तर्मुहूर्त कालतक रहकर, मिथ्यात्वमें जाकर अति लघुकालके भीतर सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी उद्वेलना कर फिर छब्बीस प्रकृतियोंके प्रवेशकभावसे कुछ कम अर्धपुद्गल परिवर्तन नामक कालतक परिभ्रमणकर संसारमें अन्तर्मुहूर्त काल शेष रहनेपर सम्यक्त्वको प्राप्त हुए उसके कुछ कम अर्धपुद्गलपरिवर्तन प्रमाण उत्कृष्ट काल उपलब्ध होता है।

* सत्ताईस प्रकृतियोंके प्रवेशकका कितना काल है ?

§ ३१२. यह सूत्र सुगम है।

* जघन्य काल एक समय है।

§ ३१३. यथा—सम्यक्त्वकी उद्वेलना करनेवाला कोई मिथ्यादृष्टि जीव सम्यक्त्वके अभिमुख होकर अन्तर करता हुआ अन्तरकी द्विचरम फालिके साथ सम्यक्त्वकी चरम

समयूणावलियमेत्तट्ठिदीओ परिसेसिय से काले मिच्छत्त-सम्मामिच्छत्ताणमंतरचरिम-फालिं पादिय सम्मामिच्छत्तस्स वि समयूणावलियमेत्तट्ठिदीओ ट्ठविय पुणो कमेण दोण्हं पि समयूणावलियमेत्तगोवुच्छे गालेमाणो पुव्वमेव सम्मत्तगोवुच्छाओ णिल्लेविय एयसमयं सत्तावीसपवेसगो जादो । तदणंतरसमए सम्मामिच्छत्तगोवुच्छं पि णिल्लेविय छव्वीसपवेसगो होदि । एवमेसो एयसमयमेत्तो सत्तावीसपवेसगस्स जहण्णकालो लद्धो होइ ।

❀ उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागो ।

§ ३१४. कुदो ? सम्मत्तमुव्वेल्लिय सत्तावीसपवेसस्सादिं कादूण पुणो जाव सम्मामिच्छत्तमुव्वेल्लेदि ताव एदस्स कालस्स पलिदोवमासंखेज्जभागपमाणस्स पयदु-क्कस्सकालत्तेण विवक्खियत्तादो ।

❀ अट्ठावीसं पयडीणं पवेसगो केवचिरं कालादो होदि ?

§ ३१५. सुगमं ।

❀ जहण्णेण अंतोमुहुत्तं ।

§ ३१६. तं जहा—मिच्छाइट्ठी उवसमसम्मत्तं घेत्तूण वेदगभावं पडिवज्जिय अट्ठावीसपवेसस्सादिं कादूण पुणो सव्वलहुमणंताणुबंधिचउक्कं विसंजोइय चउवीस-पवेसगो जादो, लद्धो पयदजहण्णकालो ।

उद्वेलनाफालिका घातकर उस समय सम्यक्त्वकी एक समय कम आवलिमात्र स्थितियोंको शेष रखकर तदनन्तर समयमें मिथ्यात्व और सम्यग्मिथ्यात्वके अन्तरकी अन्तिम फालिका पतन कर सम्यग्मिथ्यात्वकी भी एक समय कम आवलिमात्र स्थितियोंको स्थापितकर पुनः क्रमसे दोनोंकी ही एक समय कम आवलिमात्र गोपुच्छाओंको गलाता हुआ पहले ही सम्यक्त्वकी गोपुच्छाको गलाकर एक समय तक सत्ताईस प्रकृतियोंका प्रवेशक हो गया। तथा तदनन्तर समयमें सम्यग्मिथ्यात्वकी गोपुच्छाको भी गलाकर छब्बीस प्रकृतियोंका प्रवेशक हुआ। इस प्रकार यह सत्ताईस प्रकृतियोंके प्रवेशकका जघन्य काल एक समय प्राप्त होता है।

※ उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है ।

§ ३१४. क्योंकि सम्यक्त्वकी उद्वेलना कर सत्ताईस प्रकृतियोंके प्रवेशका प्रारम्भ कर पुनः जब तक सम्यग्मिथ्यात्वकी उद्वेलना करता है तब तकका यह पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण काल प्रकृत उत्कृष्ट कालरूपसे विवक्षित है।

※ अट्ठाईस प्रकृतियोंके प्रवेशकका कितना काल है ?

§ ३१५. यह सूत्र सुगम है।

※ जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है ।

§ ३१६. यथा—कोई मिथ्यादृष्टि जीव उपशमसम्यक्त्वको ग्रहणकर पुनः वेदकभावको प्राप्त हो अट्ठाईस प्रकृतियोंके प्रवेशका प्रारम्भ कर पुनः अति शीघ्र अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी विसंयोजना कर चौबीस प्रकृतियोंका प्रवेशक हो गया। प्रकृत जघन्य काल प्राप्त हुआ।

* उक्कस्सेण बेछावट्ठिसागरोवमाणि सादिरेयाणि।

§ ३१७. एत्थ तीहिं पलिदोवमस्सासंखेज्जभागेहिं सादिरेयत्तं दट्ठव्वं।

एवमोघेण कालाणुगमो समत्तो।

§ ३१८. संपहि एदेण सूचिदादेसपरूवणट्ठमुच्चारणं वत्तइस्सामो। तं जहा—आदेसेण णेरइय० २८ २६ जह० एयसमओ, उक्क० तेत्तीसं सागरोवमाणि संपुण्णाणि। २७ २५ २२ ओघं। २४ जह० अंतोमुहुत्तं, उक्क० तेत्तीसं सागरो० देसूणाणि। २१ जह० अंतोमु०, उक्क० सागरोवमं देसूणं। एवं सत्तसु पुढवीसु। णवरि सगट्ठिदी। विदियादि जाव सत्तमा त्ति २२ जहण्णुक्क० एयस०। २१ जहण्णुक्क० अंतोमु०।

* उत्कृष्ट काल साधिक दो छयासठ सागरप्रमाण है।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

§ ३१७. यहाँ पर तीन बार पल्यके असंख्यातवें भागोंसे साधिकपना जानना चाहिए।

इस प्रकार ओघसे कालानुगम समाप्त हुआ।

§ ३१८. अब इससे सूचित हुए आदेशका कथन करनेके लिए उच्चारणाको बतलाते हैं। यथा—आदेशसे नारकियोंमें २८ और २६ प्रकृतियोंके प्रवेशकका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल पूरा तेतीस सागर है। २७, २५ और २२ प्रकृतियोंके प्रवेशकका काल ओघके समान है। २४ प्रकृतियोंके प्रवेशकका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट काल कुछ कम तेतीस सागर है। २१ प्रकृतियोंके प्रवेशकका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट काल कुछ कम एक सागर है। इसी प्रकार सातों पृथिवियोंमें जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि अपनी अपनी स्थिति कहनी चाहिए। दूसरीसे लेकर सातवीं तक प्रत्येक पृथिवीमें २२ प्रकृतियोंके प्रवेशकका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है तथा २१ प्रकृतियोंके प्रवेशकका जघन्य और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है।

विशेषार्थ—२८ प्रकृतियोंकी सत्तावाले जीवको नरकमें उत्पन्न करावे। फिर अन्तर्मुहूर्तमें उसे वेदकसम्यक्त्व ग्रहण करा कर अन्तमें अन्तर्मुहूर्त काल रहने पर मिथ्यात्वमें ले जावे। ऐसा करनेसे २८ प्रकृतियोंके प्रवेशकका उत्कृष्ट काल तेतीस सागर बन जाता है। २८ प्रकृतियोंकी सत्तावाले जीवको नरकमें उत्पन्न करावे। फिर अन्तर्मुहूर्तमें वेदकसम्यक्त्व पूर्वक अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी विसंयोजना करा कर जीवनके अन्तमें अन्तर्मुहूर्त काल रहने पर मिथ्यात्वमें ले जावे। ऐसा करनेसे २४ प्रकृतियोंके प्रवेशकका उत्कृष्ट काल कुछ कम तेतीस सागर प्राप्त होता है। नरकमें उपशमसम्यक्त्वके साथ अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजना करानेसे इक्कीस प्रकृतियोंके प्रवेशकका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त प्राप्त होता है। तथा क्षायिक सम्यग्दृष्टिको नरकमें उत्पन्न करानेसे इक्कीस प्रकृतियोंके प्रवेशकका उत्कृष्ट काल कुछ कम एक सागर प्राप्त होता है। सामान्य नारकियोंकी अपेक्षा शेष कालका खुलासा सुगम है। प्रथमादि नरकोंमें अन्य सब काल इसी प्रकार बन जाता है। मात्र एक तो जहाँ जो उत्कृष्ट स्थिति है उसे जान कर २८, २६ और २४ प्रकृतियोंके प्रवेशकका उत्कृष्ट काल कहना चाहिए। दूसरे २२ और २१ प्रकृतियोंके प्रवेशकका सामान्यसे नरकमें जो काल कहा है वह पहले नरकमें ही घटित होता है, इसलिए द्वितीयादि

§ ३१९. तिरिक्खेसु २८ जह० एयस०, उक्क० तिण्णि पलिदो० सादिरेयाणि पलिदो० असंखे०भागेण। २७ २५ २२ ओघं। २६ जह० एयस०, उक्क० अणंतकालमसंखेज्जा पोग्गलपरियट्टा। २४ जह० अंतोमु०, उक्क० तिण्णि पलिदो० देसूणाणि। २१ जह० अंतोमु०, उक्क० तिण्णि पलिदो० संपुण्णाणि। एवं पंचिंदियतिरिक्खतिए। णवरि २८ २६ जह० एयस०, उक्क० तिण्णि पलिदो० पुव्वकोडिपुधत्तेणब्भहियाणि। जोणिणि० २२ २१ बिदियपुढविभंगो। पंचिं०-तिरि०अपज्ज०-मणुसअपज्ज० २८ २७ २६ जह० एयसमओ, उक्क० अंतोमु०।

नरकोंमें उसे अलगसे जान लेना चाहिए। जिसका निर्देश मूलमें किया ही है। बात यह है कि द्वितीयादि नरकोंमें सम्यक्त्वकी क्षपणा सम्भव नहीं है, इसलिए वहाँ बाईस प्रकृतियोंके प्रवेशकका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय ही बनता है। तथा द्वितीयादि नरकोंमें क्षायिकसम्यग्दृष्टिकी उत्पत्ति सम्भव नहीं है, इसलिए वहाँ इक्कीस प्रकृतियोंके प्रवेशकका जघन्य और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त ही बनता है।

§ ३१९. तिर्यञ्चोंमें २८ प्रकृतियोंके प्रवेशकका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तीन पल्य है। २७, २५ और २२ प्रकृतियोंके प्रवेशकका काल ओघके समान है। २६ प्रकृतियोंके प्रवेशकका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अनन्त काल है जो असंख्यात पुद्गलपरिवर्तनप्रमाण है। २४ प्रकृतियोंके प्रवेशकका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट काल कुछ कम तीन पल्य है। २१ प्रकृतियोंके प्रवेशकका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट काल पूरे तीन पल्य है। इसी प्रकार पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकमें जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि इनमें २८ और २६ प्रकृतियोंके प्रवेशकका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल पूर्वकोटिपृथक्त्व अधिक तीन पल्य है। योनिनी तिर्यञ्चोंमें २२ और २१ प्रकृतियोंके प्रवेशकका काल दूसरी पृथिवीके समान है। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्तकोंमें २८, २७ और २६ प्रकृतियोंके प्रवेशकका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है।

विशेषार्थ—तिर्यञ्चोंमें उपशमसम्यक्त्वपूर्वक सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी सत्ता उत्पन्न कराकर तथा तिर्यञ्च पर्यायमें रखते हुए उक्त प्रकृतियोंकी उद्वेलनाद्वारा सत्ता नाश होनेके पूर्व ही तीन पल्यकी आयुवाले तिर्यञ्चोंमें उत्पन्न करा कर तथा अतिशीघ्र वेदकसम्यक्त्वको उत्पन्न कराकर उसके साथ जीवन भर रखनेसे २८ प्रकृतियोंके प्रवेशकका उत्कृष्ट काल पल्यका असंख्यातवां भाग अधिक तीन पल्य बन जानेसे उक्त प्रमाण कहा है। तिर्यञ्च पर्यायमें रहनेका उत्कृष्ट काल अनन्त काल है और इतने काल तक वह जीव २६ प्रकृतियोंका प्रवेशक बना रहे यह सम्भव है, इसलिए इनमें २६ प्रकृतियोंके प्रवेशकका उत्कृष्ट काल अनन्त काल कहा है। अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजना कर वेदकसम्यक्त्वके साथ तिर्यञ्च पर्यायमें निरन्तर रहनेका उत्कृष्ट काल कुछ कम तीन पल्य ही बनता है, इसलिए इनमें २४ प्रकृतियोंके प्रवेशकका उत्कृष्ट काल कुछ कम तीन पल्य कहा है। जो क्षायिकसम्यग्दृष्टि मनुष्य मरकर तिर्यञ्चोंमें उत्पन्न होते हैं वे उत्तम भोगभूमिमें ही उत्पन्न होते हैं और उत्तम भोगभूमिमें एक जीवकी उत्कृष्ट आयु तीन पल्य है, इसलिए यहाँ २१ प्रकृतियोंके प्रवेशकका उत्कृष्ट काल तीन पल्य कहा है। सामान्य तिर्यञ्चोंमें यह जो काल घटित करके बतलाया है वह पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकमें कुछ विशेषताको लिए हुए ही प्राप्त होता है। वह यह है कि पञ्चेन्द्रियतिर्यञ्चत्रिककी कायस्थिति पूर्व

§ ३२०. मणुसतिए २८ २७ २६ २५ २४ पंचिंदियतिरिक्खभंगो । २१ जह० एयस०, उक्क० तिण्णि पलिदो० पुव्वकोडितिभागेण सादिरेयाणि । सेसमोघं । णवरि मणुसिणी० २१ जह० एयस०, उक्क० पुव्वकोडी देसूणा ।

§ ३२१. देवेसु २८ जह० एयस०, उक्क० तेत्तीसं सागरोवमाणि । २७ २५ २२ ओघं । २६ जह० एयस०, उक्क० एकत्तीसं सागरो० । २४ २१ जह० अंतोमु०, उक्क०

कोटि पृथक्त्व अधिक तीन पल्य ही है, अतः इनमें २८ और २६ प्रकृतियोंके प्रवेशकका उत्कृष्ट काल पूर्वकोटिपृथक्त्व अधिक तीन पल्य प्राप्त होनेसे वह उक्तप्रमाण कहा है । तथा योनिनी तिर्यञ्चोंमें न तो सम्यक्त्व प्रकृतिकी क्षपणा सम्भव है और न क्षायिक सम्यग्दृष्टि जीव ही मरकर उत्पन्न होते हैं, अतः इनमें २२ और २१ प्रकृतियोंके प्रवेशकका काल दूसरी पृथिवीके समान घटित होनेसे इसका भंग दूसरी पृथिवीके समान जाननेकी सूचना की है । यह सम्भव है कि सम्यक्त्वकी उद्वेलना करनेवाला कोई जीव जब उसकी उद्वेलनामें एक समय बाकी रहे तब वह पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्तकोंमें उत्पन्न हो । यह भी सम्भव है कि जब सम्यग्मिथ्यात्वकी उद्वेलनामें एक समय शेष रहे तब वह उक्त जीवोंमें उत्पन्न हो और यह भी सम्भव है कि जब उक्त जीवोंकी पर्यायमें एक [illegible] हो जावे । ऐसा करनेसे उक्त जीवोंमें २८, २७ और २६ प्रकृतियोंके प्रवेशकका जघन्य काल एक समय बन जानेसे वह उक्तप्रमाण कहा है । तथा एक जीवकी अपेक्षा उक्त जीवोंकी उत्कृष्ट स्थिति अन्तर्मुहूर्त है और इतने काल तक इनमें उक्त पद बने रहें इसमें कोई बाधा नहीं आती, इसलिए इनमें उक्त पदोंका उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त कहा है । शेष कथन स्पष्ट है, क्योंकि उसका खुलासा ओघप्ररूपणाके समय मूलमें ही कर दिया है, इसलिए वहाँ देखकर यहाँ उसकी संगति बिठा लेनी चाहिए ।

§ ३२०. मनुष्यत्रिकमें २८, २७, २६, २५ और २४ प्रकृतियोंके प्रवेशकका पञ्चेन्द्रियतिर्यञ्चोंके समान भंग है । २१ प्रकृतियोंके प्रवेशकका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल पूर्वकोटिका त्रिभाग अधिक तीन पल्य है । शेष भंग ओघके समान है । किन्तु इतनी विशेषता है कि मनुष्यिनियोंमें २१ प्रकृतियोंके प्रवेशकका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल कुछ कम एक पूर्वकोटिप्रमाण है ।

विशेषार्थ—जिस पूर्वकोटिकी आयुवाले मनुष्यने त्रिभाग शेष रहने पर आयुबन्धके बाद क्षायिक सम्यक्त्व उत्पन्न किया है और जो मरकर तीन पल्यकी आयुवाले मनुष्योंमें उत्पन्न हुआ है उसके २१ प्रकृतियोंके प्रवेशकका उत्कृष्ट काल प्राप्त होनेसे वह पूर्वकोटिका त्रिभाग अधिक तीन पल्य कहा है । तथा जो मनुष्य उपशमश्रेणीसे उतरते समय २१ प्रकृतियोंका प्रवेशक होकर और दूसरे समयमें मरकर देवोंमें उत्पन्न होता है उस मनुष्यके २१ प्रकृतियोंके प्रवेशकका जघन्य काल एक समय बन जानेसे वह उक्त प्रमाण कहा है । यह तो हम पहले ही बतला आये हैं कि क्षायिक सम्यग्दृष्टि जीव मरकर मनुष्यिनियोंमें नहीं उत्पन्न होता । हाँ मनुष्यिनी क्षायिक सम्यक्त्वको उत्पन्न कर सकती हैं, अतः मनुष्यत्रिकमेंसे शेष दोमें २१ प्रकृतियोंके प्रवेशकका पूर्वोक्त काल कहा है और मनुष्यिनीमें कुछ कम पूर्वकोटि कहा है । शेष कथन सुगम है ।

§ ३२१. देवोंमें २८ प्रकृतियोंके प्रवेशकका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल तेतीस सागर है । २७, २५ और २२ प्रकृतियोंके प्रवेशकका काल ओघके समान है । २६

तेत्तीसं सागरो० । एवं भवणादि जाव णवगेवज्जा त्ति । णवरि सगट्ठिदी । भवण०-वाणवें०-जोदिसि० २२ २१ विदियपुढविभंगो । अणुद्दिसादि सव्वट्ठा त्ति २८ २४ २१ जह० अंतोमु०, उक्क० सगट्ठिदी० । २२ जह० एयस०, उक्क० अंतोमुहुत्तं । एवं जाव० ।

❀ अंतरमणुचिंतियूण णेदव्वं ।

§ ३२२. एदेण सूचिदत्थस्स परूवणमुच्चारणादो कस्सामो । तं जहा—अंतराणु० दुविहो णि०—ओघेण आदेसेण य । ओघेण २८ २५ २४ २२ २० १९ १३ १२ १० ९ ७ ६ ४ ३ २ १ पवेसमंतरं जह० अंतोमु०, उक्क० उवड्ढपोग्गलपरियट्टं । २७

प्रकृतियोंके प्रवेशकका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल इकतीस सागर है । २४, और २१ प्रकृतियोंके प्रवेशकका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट काल तेतीस सागर है । इसी प्रकार भवनवासियोंसे लेकर नौ ग्रैवेयक तकके देवोंमें जानना चाहिए । किन्तु इतनी विशेषता है कि अपनी अपनी स्थिति कहनी चाहिए । भवनवासी, व्यन्तर और ज्योतिषी देवोंमें २२ और २१ प्रकृतियोंके प्रवेशकका काल दूसरी पृथिवीके समान है । अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें २८, २४ और २१ प्रकृतियोंके प्रवेशकका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट काल अपनी अपनी स्थितिप्रमाण है । २२ प्रकृतियोंके प्रवेशकका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है । इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए ।

विशेषार्थ—जिसने अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजना नहीं की है ऐसा वेदकसम्यग्दृष्टि जीव देवोंकी उत्कृष्ट आयु लेकर उत्पन्न होकर अन्त तक वह उसी प्रकार बना रहे यह सम्भव है, इसलिए सामान्य देवोंमें २८ प्रकृतियोंके प्रवेशकका उत्कृष्ट काल तेतीस सागर कहा है । मिथ्यादृष्टि देव नौवें ग्रैवेयक तक ही पाये जाते हैं, इसलिए इनमें २६ प्रकृतियोंके प्रवेशकका उत्कृष्ट काल इकतीस सागर कहा है । किन्तु ये ऐसे देव लेने चाहिए जो सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी सत्तासे रहित होते हैं । जिसने अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजना की है ऐसा वेदकसम्यग्दृष्टि जीव और क्षायिकसम्यग्दृष्टि जीव देवोंकी उत्कृष्ट आयु लेकर उनमें उत्पन्न हो यह भी सम्भव है, इसलिए सामान्य देवोंमें २४ और २१ प्रकृतियोंके प्रवेशक । उत्कृष्ट काल तेतीस सागर कहा है । नौ ग्रैवेयक तकके देवोंमें यह प्ररूपणा बन जाती है, इसलिए उनमें सामन्य देवोंके सामान जाननेकी सूचना की है । परन्तु इसके दो अपवाद हैं । एक तो इन देवोंकी आयु पृथक् पृथक् है, इसलिए इस विशेषताको ध्यानमें रखकर उक्त पदोंका काल कहना चाहिए । दूसरे भवनत्रिकमें सम्यग्दृष्टि जीव मरकर उत्पन्न नहीं होते, इसलिए इनमें २२ और २१ प्रकृतियोंके प्रवेशकका काल दूसरी पृथिवीके समान प्राप्त होनेसे उसके समान घटित कर लेना चाहिए । तथा इतनी विशेषता और जाननी चाहिए कि इनमें २४ प्रकृतियोंके प्रवेशकका उत्कृष्ट काल कुछ कम अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण ही बनता है । कारण स्पष्ट है । अनुदिशादिकमें २८, २४, २२ और २१ प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव ही उपलब्ध होते हैं, इसलिए इनमें इन पदोंके प्रवेशकोंकी अपेक्षा काल कहा है । शेष कथन सुगम है ।

❀ अन्तरको विचार कर जानना चाहिए ।

§ ३२२. इससे सूचित होनेवाले अर्थका कथन उच्चारणाके अनुसार करते हैं । यथा—अन्तरानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे २८, २५, २४, २२, २०, १९, १३, १२, १०, ९, ७, ६, ४, ३, २, और १ प्रकृतियोंके प्रवेशकका जघन्य अन्तर

जह० पलिदो० असंखे०भागो। २१ जह० बेसमया, उक्क० दोण्हं पि उवड्डपोग्गल०। २६ जह० अंतोमु०, उक्क० बेछावट्ठिसागरो० सादिरेयाणि। २३ णत्थि अंतरं।

अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर उपार्ध पुद्गलपरिवर्तनप्रमाण है। २७ प्रकृतियोंके प्रवेशकका जघन्य अन्तर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है, २१ प्रकृतियोंके प्रवेशकका जघन्य अन्तर दो समय है और दोनोंका उत्कृष्ट अन्तर उपार्धपुद्गलपरिवर्तन प्रमाण है। २६ प्रकृतियोंके प्रवेशकोंका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक दो छयासठ सागरप्रमाण है। २३ प्रकृतियोंके प्रवेशकका अन्तरकाल नहीं है।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

विशेषार्थ—कोई २८ प्रकृतियोंका प्रवेशक वेदकसम्यग्दृष्टि जीव अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी विसंयोजना करके अन्तर्मुहूर्तमें मिथ्यात्वमें जाकर पुनः २८ प्रकृतियोंका प्रवेशक हो गया। इस प्रकार २८ प्रकृतियोंके प्रवेशकका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त प्राप्त होता है। कोई जीव उपशम सम्यग्दृष्टि होकर २५ प्रकृतियोंका प्रवेशक हुआ। फिर अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजनाके द्वारा २१ प्रकृतियोंका प्रवेशक हो अन्तरको प्राप्त होगया। उपशम सम्यक्त्वके कालमें ६ आवली शेष रहने पर सासादनको प्राप्त हो दूसरे समयमें पुनः २५ का प्रवेशक होगया, उसके २५ प्रकृतियोंके प्रवेशकका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त प्राप्त होता है। जो अन्तर्मुहूर्तके अन्तरसे दो बार वेदकसम्यग्दृष्टि हो अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजना करता है उसके २४ प्रकृतियोंके प्रवेशकका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त प्राप्त होता है। जो अनन्तानुबन्धीका वियोजक उपशमसम्यग्दृष्टि जीव सासादनमें जाकर प्रथम समयमें २२ प्रकृतियोंका प्रवेशक होता है। पुनः मिथ्यात्वमें जाकर व अतिशीघ्र वेदकसम्यक्त्व पूर्वक मिथ्यात्व व सम्यग्मिथ्यात्वको क्षपणाकर २२ प्रकृतियोंका प्रवेशक होता है उसके २२ प्रकृतियोंके प्रवेशकका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त प्राप्त होता है। आगे २०, १९, १३, १२, १०, ९, ७, ६, ५, ३, २ और १ प्रकृतियोंके प्रवेशकका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त दो बार उपशमश्रेणि पर चढ़ाकर और उतार कर प्राप्त होता है। यह उक्त स्थानोंके जघन्य अन्तरका विचार है। इन स्थानोंका उत्कृष्ट अन्तर उपार्ध पुद्गल परिवर्तनप्रमाण इन स्थानोंको अर्ध पुद्गल परिवर्तनके प्रारम्भमें और अन्तमें प्राप्त करानेसे घटित हो जाता है। मात्र यह अन्तर प्राप्त कराते समय जहाँ जो विशेषता हो उसे जानकर कहना चाहिए। २७ प्रकृतियोंका प्रवेशस्थान सम्यग्मिथ्यात्वकी उद्वेलना करानेसे प्राप्त होता है और इसकी उद्वेलनामें पल्यका असंख्यातवाँ भागप्रमाण काल लगता है, अतः यह क्रिया दो बार उपशमसम्यक्त्वसे गिरा कर करानी चाहिए। ऐसा करनेसे इस स्थानका जघन्य अन्तर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण प्राप्त हो जाता है। कोई द्वितीयोपशम जीव पुरुषवेदके उदयसे उपशमश्रेणि पर चढ़ा। अन्तरकरणके बाद वह नपुंसकवेदका उपशम कर २१ के स्थानमें २० प्रकृतियोंका प्रवेशक हुआ और उसी समय मर कर तथा देव हो देव होनेके प्रथम समयमें नपुंसकवेदका अपकर्षणाकर उसका उदयावलिके बाहर निक्षेप किया तथा दूसरे समयमें पुनः वह २१ प्रकृतियों प्रवेशक हो गया। इस प्रकार २१ प्रकृतियोंके प्रवेशकका जघन्य अन्तर दो समय प्राप्त होता है। अन्य वेदोंके उदयसे भी यह अन्तर प्राप्त किया जा सकता है सो जानकर कथन कर लेना चाहिए। यह २७ और २१ प्रकृतियोंके प्रवेशकका जघन्य अन्तर है। इनका उत्कृष्ट अन्तर उपार्धपुद्गल-परिवर्तन प्रमाण होता है जो इन स्थानोंका उक्त कालके आदिमें और अन्तमें अधिकारी बनानेसे प्राप्त होता है। जो २६ प्रकृतियोंकी सत्तावाला जीव उपशमसम्यक्त्वको प्राप्त कर अनन्तानुबन्धी की विसंयोजना करता है। पुनः जब सम्यक्त्वके कालमें एक समय शेष रहने पर सासादनमें जाकर दूसरे समयमें मिथ्यात्वमें प्रवेश करता हुआ २६ प्रकृतियोंका प्रवेशक होता है उसके

§ ३२३. आदेसेण णेरइय० २८ २६ २५ २४ जह० अंतोमु०, २७ २२ २१ जह० पलिदो० असंखे०भागो; उक्क० सव्वेसिं पि तेत्तीसं सागरो० देसू०। एवं सव्वणेर०। णवरि सगट्ठिदी देसू०।

§ ३२४. तिरिक्खेसु २८ २५ २४ जह० अंतोमु०, २७ २२ २१ जह० पलिदो० असंखे०भागो, उक्क० सव्वेसिमुवड्ढपोग्गल०। २६ जह० अंतोमु०, उक्क० तिण्णि पलिदो० सादिरेयाणि। एवं पंचिंदियतिरिक्खतिए। णवरि सव्वपदाणमुक्क०

---

२६ प्रकृतियोंके प्रवेशकका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त उपलब्ध होता है। तथा जो छब्बीस प्रकृतियोंकी सत्तावाला उपशम सम्यक्त्व पूर्वक वेदक सम्यग्दृष्टि हो और यथाविधि अन्तर्मुहूर्त कम दो छयासठ सागर काल तक बीचमें सम्यग्मिथ्यात्वको प्राप्त हो वेदकसम्यक्त्वके साथ रह कर मिथ्यात्वमें जाकर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण कालके द्वारा सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी उद्वेलना कर २६ प्रकृतियोंका प्रवेशक हो जाता है उसके २६ प्रकृतियोंके प्रवेशकका उत्कृष्ट अन्तर साधिक दो छयासठ सागर प्राप्त होता है। तेईस प्रकृतियोंका प्रवेशक जीव क्षपणाके समय प्राप्त होता है, इसलिए इसका अन्तरकाल नहीं बनता। इस प्रकार ओघसे किस प्रवेशस्थानका क्या अन्तर काल है इसका विचार किया।

§ ३२३. आदेशसे नारकियोंमें २८, २६, २५ और २४ प्रकृतियोंके प्रवेशकका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। २७, २२ और २१ प्रकृतियोंके प्रवेशकका जघन्य अन्तर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है और सबका उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तेतीस सागर है। इसी प्रकार सब नारकियोंमें जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि कुछ कम अपनी अपनी स्थिति कहनी चाहिए।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

विशेषार्थ—२८, २६, २५ और २४ प्रकृतियोंके प्रवेशकका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त तथा २७ प्रकृतियोंके प्रवेशकका जघन्य अन्तर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण जिस प्रकार ओघप्ररूपणामें स्पष्ट करके बतला आये हैं उसी प्रकार यहाँ पर भी जान लेना चाहिए। जो पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण अन्तरसे दो बार उपशम सम्यक्त्वके साथ अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजना पूर्वक सम्यक्त्वके साथ २१ प्रकृतियोंका प्रवेशक और सम्यक्त्वसे च्युत हो सासादनमें आकर २२ प्रकृतियोंका प्रवेशक होता है उसके २२ और २१ प्रकृतियोंके प्रवेशकका अन्तर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण प्राप्त होनेसे इन स्थानोंका जघन्य अन्तर उक्त कालप्रमाण कहा है। ओघसे नरकमें जो सब प्रवेशस्थानोंका उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तेतीस सागर कहा है सो यह प्रारम्भमें और अन्तमें उस उस स्थानके प्राप्त करानेसे ही प्राप्त होता है। प्रथमादि नरकोंमें उक्त सब प्रवेशस्थानोंका जघन्य अन्तर तो सामान्य नारकियोंके समान ही है। मात्र उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थितिको ध्यानमें रख कर घटित करना चाहिए। विशेष वक्तव्य न होनेसे यहाँ उसका अलग अलग स्पष्टीकरण नहीं किया है।

§ ३२४. तिर्यञ्चोंमें २८, २५ और २४ प्रकृतियोंके प्रवेशकका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है, २७, २२ और २१ प्रकृतियोंके प्रवेशकका जघन्य अन्तर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है तथा इन सब स्थानोंके प्रवेशकका उत्कृष्ट अन्तर उपार्ध पुद्गल परिवर्तनप्रमाण है। २६ प्रकृतियोंके प्रवेशकका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक तीन पल्य है। इसी प्रकार पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकमें जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि सब पदोंका उत्कृष्ट अन्तर

तिण्णि पलिदो० पुव्वकोडिपुधत्तेणब्भहियाणि । पंचि०तिरि०अपज्ज०-मणुसअपज्ज० २८ २७ २६ णत्थि अंतरं ।

§ ३२५. मणुसतिए २८ २६ २५ २४ २२ २१ जह० अंतोमु०, २७ जह० पलिदो० असंखे०भागो, उक्क० सव्वेसिं तिण्णि पलिदो० पुव्वकोडिपुध० । २३ णत्थि अंतरं । २० १९ १३ १२ १० ९ ७ ६ ४ ३ २ १ जह० अंतोमुहुत्तं, उक्क० पुव्वकोडिपुध० ।

पूर्वकोटिपृथक्त्व अधिक तीन पल्य है । पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्त जीवोंमें २८, २७ और २६ प्रकृतियोंके प्रवेशकका अन्तरकाल नहीं है ।

विशेषार्थ—यहाँ पर सर्वत्र जघन्य अन्तर सब पदोंके प्रवेशकका जिस प्रकार नरकमें घटित कर बतला आये हैं उसीप्रकार घटित कर लेना चाहिए । मात्र उत्कृष्ट अन्तर प्राप्त करते समय अधिकसे अधिक कितने अन्तरसे ये प्रवेशस्थान सम्भव हैं इस विशेषताको जानकर मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज उत्कृष्ट अन्तर प्राप्त करना चाहिए । यथा—२८, २७, २५, २४, २२ और २१ प्रकृतिक प्रवेशस्थान उपार्ध पुद्गल परिवर्तनप्रमाण अन्तरसे प्राप्त किये जा सकते हैं, क्योंकि ये प्रवेशस्थान सम्यक्त्व पूर्वक होते हैं और सम्यक्त्वका उत्कृष्ट अन्तर अर्धपुद्गल परिवर्तन प्रमाण है । मात्र २६ प्रकृतियोंके प्रवेशस्थानका उत्कृष्ट अन्तर साधिक तीन पल्य ही बनता है, क्योंकि जो २६ प्रकृतियोंकी सत्तावाला तिर्यञ्च उपशम सम्यक्त्वको प्राप्त कर क्रमसे यथायोग्य अविवक्षित स्थानोंका प्रवेशक हो जाता है वह अधिकसे अधिक साधिक तीन पल्य काल तक ही अन्य अविवक्षित पदोंके साथ तिर्यञ्च पर्यायमें रह सकता है । उसके बाद या तो तिर्यञ्च पर्याय बदल जाती है या वह पुनः २६ प्रकृतियोंका प्रवेशक हो जाता है । चूं कि यहाँ २६ प्रकृतियोंके प्रवेशकका तिर्यञ्च पर्याय रहते हुए उत्कृष्ट अन्तर प्राप्त करना है, इसलिए २६ प्रकृतियोंकी सत्तावाला ऐसा तिर्यञ्च जीव लो जो उपशम सम्यक्त्वको प्राप्त कर मिथ्यात्वमें जावे और वहाँ सम्यक्त्व तथा सम्यग्मिथ्यात्वकी उद्वेलना करता हुआ वेदक कालके भीतर तीन पल्यकी आयुवाले तिर्यञ्चोंमें उत्पन्न हो । फिर सम्यग्दृष्टि हो, जब इस आयुमें पल्यका असंख्यातवाँ भाग काल शेष रहे तब मिथ्यात्वमें जाकर उक्त दोनों प्रकृतियोंकी उद्वेलना कर पुनः छब्बीस प्रकृतियोंका प्रवेशक हो जावे । पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिककी उत्कृष्ट कायस्थिति पूर्वकोटि पृथक्त्व अधिक तीन पल्य है, इसलिए इनमें सब प्रवेशस्थानोंका उत्कृष्ट अन्तर उक्त काल प्रमाण कहा है । जघन्य अन्तरका स्पष्टीकरण पूर्ववत् ही है । पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्त जीवोंमें २८, २७ और २६ प्रकृतियोंके प्रवेशस्थान इन पर्यायोंके रहते हुए दो बार नहीं प्राप्त होते, इसलिए इनमें उक्त प्रवेशस्थानोंके अन्तर कालका निषेध किया है ।

§ ३२५. मनुष्यत्रिकमें २८, २६, २५, २४, २२ और २१ प्रकृतियोंके प्रवेशकका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है, २७ प्रकृतियोंके प्रवेशकका जघन्य अन्तर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है और सब स्थानोंके प्रवेशकका उत्कृष्ट अन्तर पूर्वकोटिपृथक्त्व अधिक तीन पल्य है । २३ प्रकृतियोंके प्रवेशकका अन्तरकाल नहीं है । २० १९, १३, १२, १०, ९, ७, ६, ४, ३, २ और १ प्रकृतियोंके प्रवेशकका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर पूर्वकोटि पृथक्त्व प्रमाण है ।

विशेषार्थ—ओघप्ररूपणामें सब स्थानोंका जो जघन्य अन्तर घटित करके बतलाया है वह यहाँ पर भी उसी प्रकार घटित कर लेना चाहिए । मात्र यहाँ २१ प्रकृतियोंके प्रवेशकका

§ ३२६. देवेसु० २८ २६ २५ २४ जह० अंतोमु०, २७ २२ २१ जह० पलिदो० असंखे०भागो, उक० सव्वेसिमेकत्तीसं सागरो० देसूणाणि । एवं भवणादि जाव णवगेवज्जा ति । णवरि सगट्ठिदी देसूणा । अणुद्दिसादि सव्वट्ठा त्ति २८ २४ २२ २१ णत्थि अंतरं । एवं जाव० ।

❀ णाणाजीवेहि भंगविचयो ।

§ ३२७. सुगममेदमहियारपरामरसवकं ।

❀ अट्ठावीस-सत्तावीस-छन्वीस-चदुवीस-एक्कवीसाए पयडीओ णियमा पविसंति ।

जघन्य अन्तर दो समय दो पर्यायोंकी अपेक्षा घटित होता है जो यहाँ सम्भव नहीं है, इसलिए यहाँ इस प्रवेशस्थानका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त प्राप्त करनेका प्रकार यह है कि पहले उपशम सम्यक्त्व पूर्वक अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजना करा कर २१ प्रकृतियोंका प्रवेशक बनावे । फिर वेदकसम्यक्त्वपूर्वक क्षायिक सम्यक्त्व उत्पन्न कराके पुनः २१ प्रकृतियोंका प्रवेशक बनावे । अन्तर्मुहूर्तके भीतर यह किया करानेसे इस प्रवेशस्थानका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त आ जाता है । सब प्रवेशस्थानोंका उत्कृष्ट अन्तर प्राप्त करते समय यह विशेषता ध्यानमें रखनी चाहिए कि भोगभूमिमें उपशमश्रेणिका प्राप्त होना सम्भव नहीं है, इसलिए २० आदि जो प्रवेशस्थान उपशम-श्रेणिसे सम्बन्ध रखते हैं उनका उत्कृष्ट अन्तर पूर्वकोटिपृथक्त्वप्रमाण कहा है जो अपनी कर्म-भूमिसम्बन्धी कायस्थितिके प्रारम्भमें और अन्तमें दो बार उपशमश्रेणि पर आरोहण करानेसे प्राप्त होता है । शेष प्रवेशस्थानोंका उत्कृष्ट अन्तर पूर्वकोटिपृथक्त्व अधिक तीन पल्य है यह स्पष्ट ही है । २३ प्रकृतियोंके प्रवेशकका अन्तरकाल नहीं है यह स्पष्ट ही है ।

§ ३२६. देवोंमें २८, २६, २५ और २४ प्रकृतियोंके प्रवेशकका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है, २७, २२ और २१ प्रकृतियोंके प्रवेशकका जघन्य अन्तर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है, तथा सबका उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम इकतीस सागर है । इसी प्रकार भवनवासियोंसे लेकर नौ ग्रैवेयक तकके देवोंमें जानना चाहिए । किन्तु इतनी विशेषता है कि कुछ कम अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थिति कहनी चाहिए । अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें २८, २४, २२ और २१ प्रकृतियोंके प्रवेशकका अन्तरकाल नहीं है । इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा जानना चाहिए ।

विशेषार्थ—यहाँ सामान्य देवोंमें और नौ ग्रैवेयक तकके देवोंमें सब प्रवेशस्थानोंका यथायोग्य जघन्य अन्तर जिसप्रकार नरकमें घटित करके बतलाया है उसी प्रकार यहाँ भी घटित कर लेनेमें कोई बाधा नहीं है । मात्र सामान्य देवोंमें उत्कृष्ट अन्तर प्राप्त करते समय नौवें ग्रैवेयककी उत्कृष्ट आयु ही विवक्षित करनी चाहिए, क्योंकि गुणस्थान परिवर्तन वहीं तक सम्भव है । शेष कथन स्पष्ट ही है ।

❀ नाना जीवोंकी अपेक्षा भंगविचयका अधिकार है ।

§ ३२७. अधिकारका परामर्श करनेवाला यह वाक्य सुगम है ।

❀ अट्ठाईस, सत्ताईस, छब्बीस, चौबीस और इकीस प्रकृतियाँ उदयावलिमें नियमसे प्रवेश करती हैं ।

§ ३२८. कुदो ? णाणाजीवावेक्खाए एदेसिं पवेसट्ठाणाणं धुवभावेण सव्वकाल-
मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज
मवट्ठाणदंसणादो।

❀ सेसाणि ट्ठाणाणि भजियव्वाणि।

§ ३२९. कुदो ? पणुवीसादिसेसपवेसट्ठाणाणमद्धुवभावदंसणादो। एत्थ भंगपमाणमेदं १४३४८९०७। एवं मणुसतिए। आदेसेण णेरइय० २८ २७ २६ २४ २१ णिय० अत्थि। सेसपदाणि भयणिज्जाणि। भंगा ९। एवं पढमाए तिरिक्ख-पंचिंदियतिरिक्ख०२-देवा सोहम्मादि जाव णवगेवज्जा त्ति। बिदियादि सत्तमा त्ति २८ २७ २६ २४ णियमा अत्थि। सेसपदा भयणिज्जा। भंगा २७। एवं जोणिणि०-भवण०-वाणवें०-जोदिसियाणं। पंचि०तिरि०अपज्ज० २८ २७ २६ णियमा अत्थि। मणुसअपज्ज० सव्वपदा भयणिज्जा। भंगा २६। अणुदिसादि सव्वट्ठा त्ति २८ २४ २१ णियमा अत्थि। २२ पवे० भयणिज्जा। भंगा ३। एवं जाव०।

---

§ ३२८. क्योंकि नाना जीवोंकी अपेक्षा इन प्रवेशस्थानोंका ध्रुवरूपसे सर्वदा अवस्थान देखा जाता है।

※ शेष प्रवेशस्थान भजनीय हैं।

§ ३२९. क्योंकि पच्चीस प्रकृतिक आदि शेष प्रवेशस्थान अध्रुवरूप देखे जाते हैं। यहाँ पर भंगोंका प्रमाण यह है—१४३४८९०७। इसीप्रकार मनुष्यत्रिकमें जानना चाहिए। आदेशसे नारकियोंमें २८, २७, २६, २४ और २१ प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव नियमसे हैं। शेष पद भजनीय हैं। भंग ९ हैं। इसी प्रकार प्रथम पृथिवीके नारकी, सामान्य तिर्यञ्च, पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चद्विक सामान्य देव और सौधर्म कल्पसे लेकर नौ ग्रैवेयक तकके देवोंमें जानना चाहिए। दूसरीसे लेकर सातवीं तकके नारकियोंमें २८, २७, २६ और २४ प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव नियमसे हैं। शेष पद भजनीय हैं। भंग २७ हैं। इसीप्रकार योनिनी तिर्यञ्च, भवनवासी, व्यन्तर और ज्योतिषी देवोंमें जानना चाहिए। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंमें २८, २७ और २६ प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव नियमसे हैं। मनुष्य अपर्याप्तकोंमें सब पद भजनीय हैं। भंग २६ हैं। अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें २८, २४ और २१ प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव नियमसे हैं। २२ प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव भजनीय हैं। भंग तीन हैं। इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

विशेषार्थ—ओघसे पाँच प्रवेशस्थान ध्रुव हैं और पन्द्रह प्रवेशस्थान अध्रुव हैं। अतएव एक जीव और नाना जीवोंकी अपेक्षा पन्द्रह बार तीन संख्या रखकर गुणा करने पर कुल भंग १४३४८९०७ आते हैं। इनमें एक ध्रुव भंग भी सम्मिलित है। यथा—३×३×३×३×३×३×३×३×३×३×३×३×३×३×३=१४३४८९०७। इसी प्रकार आगे गति मार्गणाके भेदोंमें जहाँ जितने अध्रुव प्रवेशस्थान हैं उतनी बार तीन संख्या रखकर गुणा करनेसे उस उस मार्गणाके सब भंग प्राप्त कर लेने चाहिए। कोई विशेषता न होनेसे अलग अलग स्पष्टीकरण नहीं किया है। मात्र मनुष्य अपर्याप्तकोंमें २८, २७ और २६ ये तीन प्रवेशस्थान हैं जो अध्रुव हैं, इसलिए इनमें एक ध्रुव भंगको छोड़कर २६ भंग प्राप्त होते हैं।

§ ३३०. संपहि एत्थुद्देसे सुगमत्तादो चुण्णिसुत्तेणापरूविदाणं भागाभाग-परिमाण-खेत्त-पोसणाणं परूवणमुच्चारणावलंबणेण कस्सामो। तं जहा—भागाभागाणुगमेण दुविहो णिद्देसो—ओघेण आदेसेण य। ओघेण छव्वीसपवे० सव्वजी० केवडिओ भागो? अणंता भागा। सेसमणंतभागो। एवं तिरिक्खा०। आदेसेण णेरइय० २६ पवे० सव्वजी० केव० भागो? असंखेज्जा भागा। सेसप० असंखे०भागो। एवं सव्वणेरइय०-सव्वपंचिंदियतिरिक्ख-मणुस-मणुसअपज्ज०-देवा भवणादि जाव सहस्सार त्ति। मणुसपज्ज०-मणुसिणी० २८ पवे० के०? संखेज्जा भागा। सेसपदपवे० संखेज्जदिभागो। आणदादि णवगेवज्जा त्ति २८ संखेज्जा भागा। २६ २४ २१ संखेज्जदिभागो। २७ २५ २२ सव्वजी० असंखे०भागो। अणुद्दिसादि अवराजिदा त्ति २८ पवे० संखेज्जा भागा। २४ २१ संखे०भागो। २२ असंखे०भागो। एवं सव्वट्ठे। णवरि संखेज्जं कादव्वं। एवं जाव०।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

§ ३३१. परिमाणाणु० दुविहो णिद्देसो—ओघेण आदेसेण य। ओघेण २६ पवे० केत्ति०? अणंता। २८ २७ २४ २२ २१ पवे० केत्ति०? असंखेज्जा। सेससव्वपदा संखेज्जा। आदेसेण णेरइय० सव्वपदा केत्ति०? असंखेज्जा। एवं

---

§ ३३०. अब इस स्थानपर सुगम होनेसे चूर्णिसूत्रकारके द्वारा नहीं कहे गये भागाभाग, परिमाण, क्षेत्र और स्पर्शनकी प्ररूपणा उच्चारणाका अवलम्बन लेकर करते हैं। यथा—भागाभागानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे छब्बीस प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव सब जीवोंके कितने भागप्रमाण हैं? अनन्त बहुभागप्रमाण हैं। शेष पदोंके प्रवेशक जीव अनन्तवें भागप्रमाण हैं। इसी प्रकार सामान्य तिर्यञ्चोंमें जानना चाहिए। आदेशसे नारकियोंमें २६ प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव सब जीवोंके कितने भागप्रमाण हैं? असंख्यात बहुभाग प्रमाण हैं। शेष पदोंके प्रवेशक जीव असंख्यातवें भागप्रमाण हैं? इसी प्रकार सब नारकी, सब पंचेन्द्रिय तिर्यञ्च, सामान्य मनुष्य, मनुष्य अपर्याप्त, सामान्य देव और भवनवासियोंसे लेकर सहस्रार कल्पतकके देवोंमें जानना चाहिए। मनुष्य पर्याप्त और मनुष्यिनियोंमें २८ प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव कितने हैं? संख्यात बहुभागप्रमाण हैं। शेष पदोंके प्रवेशक जीव संख्यातवें भागप्रमाण हैं। आनत कल्पसे लेकर नौ ग्रैवेयक तकके देवोंमें २८ प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव संख्यात बहुभाग प्रमाण हैं। २६, २४ और २१ प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव संख्यातवें भागप्रमाण हैं। २७, २५ और २२ प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव सब जीवोंके असंख्यातवें भागप्रमाण हैं। अनुदिशसे लेकर अपराजित तकके देवोंमें २८ प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव संख्यात बहुभागप्रमाण हैं। २४ और २१ प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव संख्यातवें भागप्रमाण हैं तथा २२ प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव असंख्यातवें भागप्रमाण हैं। इसीप्रकार सर्वार्थसिद्धिमें जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि असंख्यातवें भागके स्थानमें संख्यातवें भाग करना चाहिए। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

§ ३३१. परिमाणानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे २६ प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव कितने हैं? अनन्त हैं। २८, २७, २४, २२ और २१ प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव कितने हैं? असंख्यात हैं। शेष सब पदोंके प्रवेशक जीव संख्यात हैं। आदेशसे

सव्वणेरइय०-सव्वपंचिंदियतिरिक्ख-मणुसअपज्ज०-देवा भवणादि जाव णवगेवज्जा त्ति। तिरिक्खेसु सव्वपदाणमोघं। मणुसेसु २८ २७ २६ केत्ति० ? असंखेज्जा। सेसपदा संखेज्जा। मणुसपज्ज०-मणुसिणी०-सव्वट्ठदेवेसु सव्वपदा संखेज्जा। अणुदिसादि मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज केत्ति० ? असंखेज्जा। २२ पवे० के० ? संखेज्जा। एवं जाव०।

§ ३३२. खेत्ताणु० दुविहो णि०—ओघेण आदेसेण य। ओघेण छव्वीसपवे० केवडि खेत्ते ? सव्वलोगे। सेसपदाणि लोग० असंखे०भागे। एवं तिरिक्खा०। सेसदीसु सव्वपदा लोग० असंखे०भागे। एवं जाव०।

§ ३३३. पोसणाणु० दुविहो णि०—ओघेण आदेसेण य। ओघेण छव्वीसपदे० सव्वलोगो। २८ २७ लोग० असंखे०भागो अट्ठचोदस० देसूणा सव्वलोगो वा। २५ पवे० लोग० असंखे०भागो अट्ठ-बारहचोद्दस०। २४ २२ २१ लोग०

नारकियोंमें सब पदोंके प्रवेशक जीव कितने हैं ? असंख्यात हैं। इसीप्रकार सब नारकी, सब पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च, मनुष्य अपर्याप्त, सामान्य देव और भवनवासियोंसे लेकर नौ ग्रैवेयक तकके देवोंमें जानना चाहिए। तिर्यञ्चोंमें सब पदोंके प्रवेशक जीवोंका परिमाण ओघके समान है। मनुष्योंमें २८, २७ और २६ प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव कितने हैं ? असंख्यात हैं। शेष पदोंके प्रवेशक जीव संख्यात हैं। मनुष्य पर्याप्त, मनुष्यिनी और सर्वार्थसिद्धिके देवोंमें सब पदोंके प्रवेशक जीव संख्यात हैं। अनुदिशसे लेकर अपराजित तकके देवोंमें २८, २४ और २१ प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव कितने हैं ? असंख्यात हैं। २२ प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव कितने हैं ? संख्यात हैं। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

§ ३३२. क्षेत्रानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे छब्बीस प्रकृतियोंके प्रवेशक जीवोंका कितना क्षेत्र है ? सर्व लोक क्षेत्र है। शेष पदोंके प्रवेशक जीवोंका क्षेत्र लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण है। इसीप्रकार तिर्यञ्चोंमें जानना चाहिए। शेष गतियोंमें सब पदोंके प्रवेशक जीवोंका क्षेत्र लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण है। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

विशेषार्थ—यद्यपि २६ प्रकृतिक प्रवेशस्थान सम्यग्दर्शनके होनेपर भी होता है, परन्तु सम्यग्दर्शन होनेके पूर्व सब जीव छब्बीस प्रकृतियोंके प्रवेशक ही होते हैं और वे अनन्त हैं, इसलिए उनका क्षेत्र सर्व लोक कहा है। किन्तु शेष स्थानोंके प्रवेशक जीव सम्यग्दर्शन होनेके बाद यथा योग्य गुणस्थानके प्राप्त होनेपर ही होते हैं, अतः उनका सर्व लोक क्षेत्र नहीं बन सकता, इसलिए उनका लोकका असंख्यातवां भागप्रमाण क्षेत्र कहा है। अपने सम्भव पदोंकी अपेक्षा यह क्षेत्र सामान्य तिर्यञ्चोंमें बन जाता है, इसलिए उनकी प्ररूपणा ओघके समान जाननेकी सूचना की है। तथा गतिमार्गणाके शेष भेदोंका क्षेत्र ही लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण है, इसलिए उनमें सम्भव सब पदोंके प्रवेशकोंका क्षेत्र लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण कहा है।

§ ३३३. स्पर्शनानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे छब्बीस प्रकृतियोंके प्रवेशकोंने सर्व लोकप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। २८ और २७ प्रकृतियोंके प्रवेशकोंने लोकके असंख्यातवें भाग, त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ भाग और सर्व लोकप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। २५ प्रकृतियोंके प्रवेशकोंने लोकके असंख्यातवें भाग

असंखे०भागो अट्ठचोद्दस० । सेसपदे० लोग असंखे०भागो ।

§ ३३५. आदेसेण णेरइय० २८ २७ २६ पवे० लोग० असंखे०भागो छ चोद्दस० देसूणा। २५ लोग० असंखे०भागो पंचचोद्दस० । सेसं खेत्तं । एवं विदियादि जाव सत्तमा त्ति । णवरि सगपोसणं । सत्तमाए २५ पवे० खेत्तं । पढमाए खेत्तं ।

और त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ और बारह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। २४, २२ और २१ प्रकृतियोंके प्रवेशकोंने लोकके असंख्यातवें भाग और त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। शेष पदोंके प्रवेशकोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है।

विशेषार्थ—ओघसे छब्बीस प्रकृतियोंके प्रवेशकोंका जब क्षेत्र ही सर्व लोक प्रमाण कहा है तब इनका स्पर्शन सर्व लोकप्रमाण होना सुनिश्चित है। जो सम्यक्त्वसे च्युत होकर सम्यक्त्वकी उद्वेलना होनेके पूर्व तक मिथ्यात्वके साथ रहते हैं या अनन्तानुबन्धीके अवियोजक वेदकसम्यग्दृष्टि होते हैं वे ही २८ प्रकृतियोंके प्रवेशक होते हैं। तथा जो २८ प्रकृतियोंके प्रवेशक होते हैं, तथा जो २८ प्रकृतियोंकी सत्तावाले जीव सम्यक्त्व प्रकृतिकी उद्वेलना कर लेते हैं वे २७ प्रकृतियोंके प्रवेशक होते हैं, इसलिए इनका वर्तमान स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण, विहारवत्स्वस्थान आदिकी अपेक्षा अतीत स्पर्शन त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे आठ भागप्रमाण और मारणान्तिक समुद्घात तथा उपपादपदकी अपेक्षा अतीत स्पर्शन सर्व लोकप्रमाण प्राप्त होना सम्भव है। यही समझकर इन दो पदोंके प्रवेशकोंका उक्त स्पर्शन कहा है। यह सामान्य कथन है। वैसे अनन्तानुबन्धी चतुष्कके अविसंयोजक २८ प्रकृतियोंके प्रवेशक सम्यग्दृष्टि जीवोंका स्पर्शन सर्वलोक प्रमाण नहीं बनता है इतना विशेष जानना चाहिए। २५ प्रकृतियोंके प्रवेशकोंमें सासादन जीवोंकी मुख्यता है और इनका स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भाग तथा त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ और कुछ कम बारह भागप्रमाण बतलाया है, इस लिए यहाँ पर उक्त पदके प्रवेशकोंका यह स्पर्शन कहा है। २४, २२ और २१ प्रकृतियोंके प्रवेशकोंमें सम्यग्दृष्टि जीवोंकी मुख्यता है। और इनका स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भाग तथा त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ भागप्रमाण कहा है। यही कारण है कि यहाँ पर उक्त पदोंके प्रवेशकोंका यह स्पर्शन कहा है। शेष पदोंके प्रवेशकोंका सम्बन्ध उपशमश्रेणि और क्षपकश्रेणिसे है और ऐसे जीवोंका स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण बतलाया है। यही कारण है कि इन पदोंके प्रवेशकोंका यह स्पर्शन कहा है।

परमपूज्य आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

§ ३३५. आदेशसे नारकियोंमें २८, २७ और २६ प्रकृतियोंके प्रवेशकोंने लोकके असंख्यातवें भाग और त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम छह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। २५ प्रकृतियोंके प्रवेशकोंने लोकके असंख्यातवें भाग और त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम पाँच भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। शेष पदोंके प्रवेशकोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। इसी प्रकार दूसरी पृथिवीसे लेकर सातवीं पृथिवी तकके नारकियोंमें जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि अपना स्पर्शन कहना चाहिए। सातवीं पृथिवीमें २५ प्रकृतियोंके प्रवेशकोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। पहली पृथिवीमें सब पदोंकी अपेक्षा स्पर्शन क्षेत्रके समान है।

विशेषार्थ—सामान्यसे नारकियोंमें २८, २७ और २६ प्रकृतियोंके प्रवेशक मिथ्यादृष्टि जीवोंके मारणान्तिक समुद्घात और उपपादके समय भी सम्भव हैं, इसलिए इनकी अपेक्षा वर्तमान स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भाग और अतीत स्पर्शन त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम छह भागप्रमाण कहा है। छठवें नरक तकके सासादन जीव ही मरकर अन्य गतिमें उत्पन्न

§ ३३५. तिरिक्खेसु २८ २७ लोग० असंखे०भागो सव्वलोगो वा। २६ पवे० सव्वलोगो। २५ लोग० असंखे०भागो सत्तचोद्द० दे०। २४ लो० असंखे०भागो छचोद्दस० देसूणा। सेसं लोग० असंखे०भागो। एवं पंचि०तिरिक्खतिए। णवरि २६ लोग० असंखे०भागो सव्वलोगो वा। पंचि०तिरिक्खअपज्ज०-मणुसअपज्ज० सव्वपदा० लो० असंखेज्जदिभागो सव्वलोगो वा। मणुसतिए २८ २७ २६ २५ पंचिंदियतिरिक्खभंगो। सेसपद० खेत्तं।

आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

होते हैं और २५ प्रकृतियोंके प्रवेशकोंमें सासादन जीवोंकी मुख्यता है। यही कारण है कि इनकी अपेक्षा वर्तमान स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भाग और त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे पाँच भागप्रमाण कहा है। यहाँ शेष पदोंके प्रवेशकोंमें सम्यग्दृष्टि जीवोंकी मुख्यता है, इसलिए इनके प्रवेशकोंका लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण स्पर्शन कहा है। दूसरीसे लेकर सातवीं पृथिवी तकके नारकियोंमें अन्य सब कथन सामान्य नारकियोंके समान ही है। मात्र दो बातोंकी विशेषता है। प्रथम तो यह कि अतीत स्पर्शन कहते समय अपना अपना स्पर्शन कहना चाहिए। दूसरे सातवीं पृथिवीके नारकी मिथ्यात्वके साथ ही मरण करते हैं ऐसा एकान्त नियम है, इसलिए उनमें २५ प्रकृतियोंके प्रवेशकोंका स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण ही प्राप्त होता है। तथा पहली पृथिवीके नारकियोंका स्पर्शन ही क्षेत्रके समान है, इसलिए इनमें सब पदोंके प्रवेशकोंके स्पर्शनको क्षेत्रके समान जाननेकी सूचना की है।

§ ३३५. तिर्यञ्चोंमें २८ और २७ प्रकृतियोंके प्रवेशकोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और सर्वलोक प्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। २६ प्रकृतियोंके प्रवेशकोंने सर्व लोकप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। २५ प्रकृतियोंके प्रवेशकोंने लोकके असंख्यातवें भाग और त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम सात भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। २४ प्रकृतियोंके प्रवेशकोंने लोकके असंख्यातवें भाग और त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम छह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। शेष पदोंके प्रवेशकोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। इसी प्रकार पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकमें जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि इनमें २६ प्रकृतियोंके प्रवेशकोंने लोकके असंख्यातवें भाग और सर्व लोकप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। पंचेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्तकोंमें सब पदोंके प्रवेशकोंने लोकके असंख्यातवें भाग और सर्व लोकप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। मनुष्यत्रिकमें २८, २७, २६ और २५ प्रकृतियोंके प्रवेशकोंका स्पर्शन पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चोंके समान है। शेष पदोंके प्रवेशकोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है।

विशेषार्थ—तिर्यंचोंमें २८ प्रकृतियोंके प्रवेशकोंमें २८ प्रकृतियोंकी सत्तावाले सादि मिथ्यादृष्टि और अनन्तानुबन्धीके अवियोजक वेदक सम्यग्दृष्टियोंकी मुख्यता है। २७ प्रकृतियोंके प्रवेशक सम्यक्त्वकी उद्वेलना कर स्थित हुए मिथ्यादृष्टि हैं और ऐसे तिर्यंचोंका वर्तमान स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भाग और अतीत स्पर्शन सर्व लोक प्रमाण सम्भव होनेसे उक्त पदोंके प्रवेशकोंका यह स्पर्शन कहा है। परन्तु अनन्तानुबन्धी चतुष्कके अवियोजक वेदकसम्यग्दृष्टियोंका स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम छह भाग प्रमाण ही समझना चाहिए। यहाँ पर २८ प्रकृतियोंके प्रवेशक कौन जीव हैं यह दिखलानेके लिए उक्त जीवोंका संग्रह किया है। २६ प्रकृतियोंके प्रवेशक सामान्य तिर्यंचोंका

§ ३३६. देवेसु २८ २७ २६ २५ लोगस्स असंखे०भागो अट्ठ-णवचोद्दस० देसूणा। २४ २२ २१ लोग० असंखे०भागो अट्ठचोद्दस० देसूणा। एवं सोहम्मी-साण०। एवं चेव सव्वदेवेसु। णवरि सगपोसणं पदविसेसो च जाणियव्वो। एवं जाव०।

ॐ णाणाजीवेहि कालो अंतरं च अणुचिंतिऊण णेदव्वं।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

§ ३३७. एदस्स दव्वट्ठियणयमस्सिऊण पयट्टस्स सुत्तस्स पज्जवट्ठियपरूवणा वित्थररुइसत्ताणुग्गहट्ठमुच्चारणाबलेण कीरदे। तं जहा—कालाणु० दुविहो णि०—ओघेण आदेसेण य। ओघेण २८ २७ २६ २४ २१ सव्वद्धा। २५ जह०

सर्व लोकप्रमाण स्पर्शन है यह स्पष्ट ही है। सम्यग्दृष्टि तिर्यञ्चोंका वर्तमान स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भाग और अतीत स्पर्शन त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम छह भागप्रमाण बतलाया है। यही कारण है कि यहाँ २४ प्रकृतियोंके प्रवेशकोंका उक्त क्षेत्रप्रमाण स्पर्शन कहा है। इनमें शेष पदोंके प्रवेशकोंका स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण है यह स्पष्ट ही है। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकमें अपने सब पदोंकी अपेक्षा यह स्पर्शन बन जाता है। मात्र इनका वर्तमान स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण प्राप्त होनेसे इनमें २६ प्रकृतियोंके प्रवेशकोंका लोकके असंख्यातवें भाग और सर्व लोकप्रमाण स्पर्शन कहा है। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्तकोंका जो स्पर्शन है वह स्पर्शन उनमें सम्भव पदोंके प्रवेशकोंका बननेमें कोई प्रत्यवाय नहीं है, इसलिए उनमें सम्भव पदोंके प्रवेशकोंका स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भाग और सर्व लोकप्रमाण कहा है। इसी प्रकार मनुष्यत्रिकमें जो स्पर्शन कहा है वह घटित कर लेना चाहिए।

§ ३३६. देवोंमें २८, २७, २६ और २५ प्रकृतियोंके प्रवेशकोंने लोकके असंख्यातवें भाग और त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ और कुछ कम नौ भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। २४, २२ और २१ प्रकृतियोंके प्रवेशकोंने लोकके असंख्यातवें भाग और त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। इसी प्रकार सौधर्म और ऐशान कल्पके देवोंमें जानना चाहिए। तथा इसी प्रकार सब देवोंमें जानना चाहिए, किन्तु सर्वत्र अपना अपना स्पर्शन और पदविशेष जान कर कथन करना चाहिए। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

विशेषार्थ—देवोंमें २८, २७, २६ और २५ प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव मारणान्तिक पद और उपपादपदके समय भी सम्भव हैं, इसलिए इनमें सामान्य देवोंका जो स्पर्शन सम्भव है वह बन जानेसे वह उक्त प्रमाण कहा है। तथा शेष पदोंके प्रवेशकोंमें सम्यग्दृष्टियोंकी मुख्यता है, इसलिए उन पदोंके प्रवेशकोंका स्पर्शन सम्यग्दृष्टियोंकी मुख्यतासे कहा है। सौधर्म और ऐशानकल्पके देवोंमें यह स्पर्शन बन जानेसे उसे सामान्य देवोंके समान जाननेकी सूचना की है। शेष देवोंमें पूर्वोक्त विशेषताके साथ अपना अपना स्पर्शन जानकर उसे घटित कर लेना चाहिए। विशेष वक्तव्य न होनेसे वह पृथक् पृथक् नहीं बतलाया है।

* नाना जीवोंकी अपेक्षा काल और अन्तरका विचारकर घटितकर लेना चाहिए।

§ ३३७. द्रव्यार्थिकनयका आश्रय कर प्रवृत्त हुए इस सूत्रकी पर्यायार्थिक प्ररूपणा विस्तार रुचिवाले जीवोंका अनुग्रह करनेके लिए उच्चारणाके बलसे करते हैं। यथा—कालानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे २८, २७, २६, २४ और २१ प्रकृतियोंके प्रवेशकोंका काल सर्वदा है। २५ प्रकृतियोंके प्रवेशकोंका जघन्य काल एक समय

एयसमओ, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो। २३ जहण्णु० अंतोमु०। २२ २० १९ १३ १२ ९ ६ ३ २ १ जह० एगसमओ, उक्क० अंतोमु०। १० ७ ४ जह०एगस०, उक्क० संखेज्जा समया।

§ ३३८. आदेसेण णेरइय० सव्वपदा० सव्वद्धा। णवरि २५ पवे० ओघं। २२ जह० एयस०, उक्क० अंतोमु०। एवं पढमाए। तिरिक्ख-पंचिं०तिरि०दुग०-देवा सोहम्मादि जाव णवगेवज्जा त्ति विदियादि जाव सत्तमा त्ति एवं चेव। णवरि

है और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। २३ प्रकृतियोंके प्रवेशकोंका जघन्य और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। २२, २०, १९, १३, १२, ९, ६, ३, २ और १ प्रकृतियोंके प्रवेशकोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। १०, ७, और ४ प्रकृतियोंके प्रवेशकोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल संख्यात समय है।

विशेषार्थ—२८, २७, २६, २४ और २१ प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव सर्वदा पाये जाते हैं, इसलिए इनकी अपेक्षा सर्वदा काल कहा है। कारण स्पष्ट है। २५ प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज सासादन सम्यग्दृष्टि होते हैं और उनका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। यही कारण है कि यहाँ पर इस पदके प्रवेशकोंका उक्त काल कहा है। २३ प्रकृतियोंके प्रवेशक जिन्होंने सम्यग्मिथ्यात्वकी क्षपणा कर ली है वे होते हैं और ऐसे जीव लगातार अन्तर्मुहूर्त काल तक ही पाये जाते हैं, क्योंकि मिथ्यात्वकी क्षपणाके बाद सम्यग्मिथ्यात्वकी क्षपणामें अन्तर्मुहूर्त काल लगता है। अब यदि नाना जीव भी क्रमसे अनुटित परम्पराके साथ सम्यक्त्वकी क्षपणा करें तो वे संख्यात होनेसे उनके कालका जोड़ अन्तर्मुहूर्त ही होगा। यही कारण है कि यहांपर २३ प्रकृतियोंके प्रवेशकोंका जघन्य और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त कहा है। २२, २०, १९, १३, १२, ९, ६, ३, २ और १ प्रकृतियोंके प्रवेशकोंकी पूर्वमें जो समुत्कीर्तना बतलाई है और उस आधारसे जो स्वामित्व कहा है उसे देखते हुए इन पदोंके प्रवेशकोंका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त बननेमें कोई बाधा नहीं आती, इसलिए इन पदोंके प्रवेशकोंका उक्त काल कहा है। तीन प्रकारके लोभमें मायासंज्वलनका प्रवेश कराने पर चार, तीन प्रकारकी मायाके ऊपर मानसंज्वलनका प्रवेश कराने पर सात और तीन प्रकारके मानके ऊपर क्रोध संज्वलनका प्रवेश कराने पर १० प्रकृतियोंका प्रवेशक होता है। चूंकि इन प्रवेशस्थानोंका एक जीवकी अपेक्षा जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अब यदि अनुटित सन्तानके साथ नाना जीव इन प्रवेशस्थानोंको प्राप्त हों तो उस सब कालका जोड़ संख्यात समय ही होगा और एक समय तक इन प्रवेशस्थानोंको प्राप्त कर दूसरे समयमें सन्तान भंग हो जाय तो इन प्रवेशस्थानोंका एक समय काल प्राप्त होगा। यही सब समझकर यहाँ पर इन पदोंके प्रवेशकोंका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल संख्यात समय कहा है।

§ ३३८. आदेशसे नारकियोंमें सब पदोंके प्रवेशकोंका काल सर्वदा है। किन्तु इतनी विशेषता है कि २५ प्रकृतियोंके प्रवेशकोंका काल ओघके समान है। तथा २२ प्रकृतियोंके प्रवेशकोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। इसी प्रकार पहली पृथिवीके नारकी, सामान्य तिर्यञ्च, पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चद्विक, सामान्य देव और सौधर्मकल्पसे लेकर नौ ग्रैवेयक तकके देवोंमें जानना चाहिए। दूसरी पृथिवीसे लेकर सातवीं पृथिवी तकके नारकियोंमें इसी प्रकार जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि २२ प्रकृतियोंके प्रवेशकोंका

२२ जह० एयस०, उक्क० आवलि० असंखे०भागो। २१ जह० अंतोमु०, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो। एवं जोणिणी०-भवण०-वाण०-जोदिसियाणं। पंचि०-तिरिक्खअपज्ज० सव्वपदा सव्वद्धा। मणुसतिए ओघं। णवरि २५ जह० एयसमओ, उक्क० अंतोमु०। मणुसअपज्ज० २८ २७ २६ जह० एयस०, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो। अणुदिसादि सव्वट्ठा त्ति २८ २४ २१ सव्वद्धा। २२ जह० एयस०, उक्क० अंतोमु०। एवं जाव०।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है। २१ प्रकृतियोंके प्रवेशकोंका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। इसी प्रकार योनिनी तिर्यञ्च, भवनवासी, व्यन्तर और ज्योतिषी देवोंमें जानना चाहिए। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंमें सब पदोंके प्रवेशकोंका काल सर्वदा है। मनुष्यत्रिकमें ओघके समान भंग है। किन्तु इतनी विशेषता है कि इनमें २५ प्रकृतियोंके प्रवेशकोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। मनुष्य अपर्याप्तकोंमें २८, २७, और २६ प्रकृतियोंके प्रवेशकोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धितकके देवोंमें २८, २४ और २१ प्रकृतियोंके प्रवेशकोंका काल सर्वदा है। २२ प्रकृतियोंके प्रवेशकोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

विशेषार्थ—अनन्तानुबन्धीका वियोजक जो उपशमसम्यग्दृष्टि जीव सासादनमें जाता है वह प्रथम समयमें २२ प्रकृतियोंका प्रवेशक होता है और यदि वह द्वितीयादि समयमें सासादनमें रहता है तो २५ प्रकृतियोंका प्रवेशक हो जाता है। तथा जो उपशमसम्यग्दृष्टि अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजना किये बिना सासादनमें जाता है वह जितने काल तक सासादनमें रहता है उतने काल तक पच्चीस प्रकृतियोंका ही प्रवेशक होता है। एक समय तक रहता है तो उतने काल तक २५ प्रकृतियोंका प्रवेशक होता है और छह आवलिकाल तक रहता है तो उतने काल तक पच्चीस प्रकृतियोंका प्रवेशक होता है। अब यदि त्रुटित सन्तानकी अपेक्षा इस कालका विचार करते हैं तो वह कमसे कम एक समय प्राप्त होता है और अत्रुटित सन्तानकी अपेक्षा इसका विचार करते हैं तो वह पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण प्राप्त होता है। यही कारण है कि यहाँ पर नारकियोंमें इस पदके प्रवेशकोंका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण कहा है। २२ प्रकृतियोंके प्रवेशकोंका जघन्य काल एक समय है यह तो हमने पूर्वमें बतलाया ही है। किन्तु इस पदके प्रवेशकोंका उत्कृष्ट काल उन जीवोंके होता है जो सम्यक्त्वकी क्षपणा कर रहे हैं। अन्यथा वह काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण ही प्राप्त होता है। यही कारण है कि सामान्य नारकियोंमें और प्रथम पृथिवीके नारकियोंमें २२ प्रकृतियोंके प्रवेशकोंका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त कहा है। तथा द्वितीयादि पृथिवियोंके नारकियोंमें इस पदके प्रवेशकोंका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण कहा है। तिर्यञ्चद्विक और सौधर्म कल्पसे लेकर नौ ग्रैवेयक तकके देवोंमें तो सामान्य नारकियोंके समान ही काल बन जाता है, क्योंकि इनमें कृतकृत्यवेदक सम्यग्दृष्टि जीवोंकी उत्पत्ति सम्भव है। किन्तु योनिनी तिर्यञ्च और भवनत्रिकमें दूसरी पृथिवीके समान काल बनता है, क्योंकि इनमें कृतकृत्यवेदक सम्यग्दृष्टियोंकी उत्पत्ति नहीं होती। उक्त सब मार्गणाओंमें कालका शेष कथन समान है। मनुष्यत्रिकमें संख्यात जीव ही पच्चीस प्रकृतियोंके प्रवेशक होते हैं। इसलिए इनमें इस पदके प्रवेशकोंका जघन्य काल एक

§ ३३९. अंतराणु० दुविहो णि०--ओघेण आदेसेण य। ओघेण २८ २७ २६ २४ २१ णत्थि अंतरं। २५ जह० एगस०, उक्क० सत्त रादिंदियाणि। २२ पवे० जह० एयसमओ, उक्क० चउवीसमहोरत्ते सादिरेगे। २३ १३ २ १ जह० एगस०, उक्क० छमासा। २० १९ १२ १० ९ ७ ६ ४ ३ जह० एगसमओ, उक्क० वासपुधत्तं।

§ ३४०. आदेसेण णेरइय० २८ २७ २६ २४ २१ णत्थि अंतरं। २५ २२ ओघं। एवं पढमाए तिरिक्ख-पंचिं०तिरि०२-देवा सोहम्मादि णवगेवज्जा त्ति।

समय और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त कहा है। मनुष्य अपर्याप्त सान्तर मार्गणा है, इसलिए इसमें सब पदोंका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण प्राप्त होनेसे वह उक्तप्रमाण कहा है। नौअनुदिश आदिमें जिस कृतकृत्यवेदक सम्यग्दृष्टिको २१ प्रकृतियोंके प्रवेशक होनेमें एक समय काल शेष है ऐसे एक जीव तथा नाना जीव भी उत्पन्न हो सकते हैं और कृतकृत्यवेदक सम्यग्दृष्टि जीव लगातार भी उत्पन्न होते हैं जो अनुदित सन्तान रूपसे अन्तर्मुहूर्त काल तक बाईस प्रकृतियोंके प्रवेशक बने रहते हैं। यही कारण है कि इनमें इस पदके प्रवेशकोंका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त कहा है। शेष कथन सुगम है।

§ ३३९. अन्तरानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है--ओघ और आदेश। ओघसे २८, २७, २६, २४ और २१ प्रकृतियोंके प्रवेशकोंका अन्तरकाल नहीं है। २५ प्रकृतियोंके प्रवेशकोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर सात दिन रात है। २२ प्रकृतियोंके प्रवेशकोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक चौबीस दिन-रात है। २३, १३, २ और १ प्रकृतियोंके प्रवेशकोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर छह महीना है। २०, १९, १२, १०, ९, ७, ६, ४ और ३ प्रकृतियोंके प्रवेशकोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर वर्षपृथक्त्वप्रमाण है।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

विशेषार्थ—२८, २७, २६, २४ और २१ प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव निरन्तर उपलब्ध होते हैं, इसलिए इनके अन्तरकालका निषेध किया है। २५ प्रकृतियोंके प्रवेशक अनन्तानुबन्धी चतुष्कके अवियोजक उपशमसम्यग्दृष्टि जीव भी होते हैं और इनका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर सात दिन रात होनेसे यह उक्तप्रमाण कहा है। अनन्तानुबन्धी चतुष्कका वियोजक जो उपशम सम्यग्दृष्टि जीव मिथ्यात्वमें जाता है वह प्रथम समयमें २२ प्रकृतियोंका प्रवेशक होता है, यतः ऐसे जीवोंका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर साधिक चौबीस दिन-रात होता है, इसलिए यहाँ पर इस पदके प्रवेशकोंका उक्त अन्तरकाल कहा है। दर्शनमोहनीय और चारित्रमोहनीयकी क्षपणाका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर छह महीना है, इसलिए यहां पर २३, १३, २ और १ प्रकृतियोंके प्रवेशकोंका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर छह महीना कहा है, क्योंकि २३ प्रकृतिक प्रवेशस्थान दर्शनमोहनीयकी क्षपणाके समय ही होता है और शेष तीन स्थान चारित्रमोहनीयकी क्षपणाके समय नियमसे पाये जाते हैं। शेष प्रवेशस्थान उपशमश्रेणिमें होते हैं, इसलिए उसके जघन्य और उत्कृष्ट अन्तरको ध्यानमें रख कर उन प्रवेशस्थानोंका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर वर्षपृथक्त्वप्रमाण कहा है।

§ ३४०. आदेशसे नारकियोंमें २८, २७, २६, २४ और २१ प्रकृतियोंके प्रवेशकोंका अन्तरकाल नहीं है। २५ और २२ प्रकृतियोंके प्रवेशकोंका अन्तरकाल ओघके समान है। इसी प्रकार पहली पृथिवीके नारकी, सामान्य तिर्यञ्च, पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चद्विक, सामान्य देव

एवं चेव विदियादि सत्तमा त्ति । णवरि २१ जह० एयस०, उक्क० चउवीसमहोरत्ते सादिरेगे । एवं जोणिणी-भवण०-वाण०-जोदिसि० । पंचिंदियतिरिक्खअपज्ज० सव्व-पदाणं णत्थि अंतरं णिरंतरं । मणुसतिए ओघं । णवरि मणुसिणी० जम्मि छम्मासं, तम्मि वासपुधत्तं । मणुसअपज्ज० सव्वपद०वे० जह० एयस०, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो । अणुद्दिसादि सव्वट्ठा त्ति २८ २४ २१ णत्थि अंतरं । २२ जह० एयस०, उक्क० वासपुधत्तं । सव्वट्ठे पलिदो० संखे०भागो । एवं जाव० ।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

और सौधर्म कल्पसे लेकर नौ ग्रैवेयक तकके देवोंमें जानना चाहिए। दूसरी पृथिवीसे लेकर सातवीं पृथिवी तक इसी प्रकार जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि २१ प्रकृतियोंके प्रवेशकोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक चौबीस दिन-रात है। इसी प्रकार योनिनी तिर्यञ्च, भवनवासी, व्यन्तर और ज्योतिषी देवोंमें जानना चाहिए। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंमें सब पदोंके प्रवेशकोंका अन्तर नहीं है, निरन्तर हैं। मनुष्यत्रिकमें ओघके समान भंग है। किन्तु इतनी विशेषता है कि मनुष्यिनियोंमें जहां छह माह कहा है वहां वर्षपृथक्त्व कहना चाहिए। मनुष्य अपर्याप्तकोंमें सब पदोंके प्रवेशकोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें २८, २४ और २१ प्रकृतियोंके प्रवेशकोंका अन्तर काल नहीं है। २२ प्रकृतियोंके प्रवेशकोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर वर्षपृथक्त्वप्रमाण है तथा सर्वार्थसिद्धिमें उत्कृष्ट अन्तर पल्यके संख्यातवें भाग प्रमाण है। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

विशेषार्थ—नारकियोंमें २८, २ , २६, २४ और इक्कीस प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव सर्वदा पाये जाते हैं, इसलिए उनके अन्तर कालका निषेध किया है। २५ और २२ प्रकृतियोंके प्रवेशकोंका अन्तरकाल जैसा ओघप्ररूपणामें घटित करके बतलाया है वैसा यहां भी बन जाता है। पहली पृथिवीके नारकी, सामान्य तिर्यञ्च, पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च द्विक, सामान्य देव और सौधर्म कल्पसे लेकर नौ ग्रैवेयक तकके देवोंमें यह प्ररूपणा बन जाती है, इसलिए उनमें सामान्य नारकियोंके समान जाननेकी सूचना की है। द्वितीयादि पृथिवियोंके नारकी, योनिनी तिर्यञ्च और भवनत्रिकमें और सब प्ररूपणा तो सामान्य नारकियोंके समान बन जाती है। मात्र इनमें क्षायिक सम्यग्दृष्टि जीव उत्पन्न नहीं होते हैं, इसलिए अनन्तानुबन्धीचतुष्कके विसंयोजक उपशमसम्यग्दृष्टियोंकी अपेक्षा २१ प्रकृतियोंके प्रवेशकोंके अन्तरकालका कथन किया है जो जघन्य एक समय और उत्कृष्ट २४ दिन-रात प्राप्त होता है। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंमें सम्भव सब पदोंका अन्तरकाल नहीं है यह स्पष्ट ही है। मनुष्यत्रिकमें ओघके समान है यह भी स्पष्ट है। मनुष्यिनियोंमें क्षपणाका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर वर्षपृथक्त्वप्रमाण है, इसलिए इनमें २३, १३, २ और १ प्रकृतियोंके प्रवेशकोंका उक्त अन्तर बतलानेके लिए यह सूचना की है कि इनमें जहां छह माह अन्तर कहा है वहां वर्षपृथक्त्व जानना चाहिए। मनुष्यअपर्याप्त सान्तर मार्गणा है। इसका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है, इसलिए यहां सब पदोंके प्रवेशकोंका उक्त अन्तर कहा है। नौ अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धितकके देवोंमें २८, २४ और २१ प्रकृतियोंके प्रवेशकोंका अन्तरकाल नहीं है यह स्पष्ट है। साथ ही इनमें कृतकृत्यवेदक सम्यग्दृष्टि जीव कमसे कम एक समयके अन्तरसे और अधिकसे अधिक वर्षपृथक्त्वके अन्तरसे उत्पन्न होते हैं, इसलिए इनमें २२ प्रकृतियोंके प्रवेशकोंका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर वर्षपृथक्त्व प्रमाण कहा है। मात्र सर्वार्थसिद्धिमें उत्कृष्ट अन्तर पल्यके संख्यातवें भागप्रमाण है।

§ ३४१. भावो सव्वत्थ ओदइओ भावो ।

❀ अप्पाबहुअं ।

§ ३४२. सुगममेदमहियारसंभालणसुत्तं ।

❀ चउण्हं सत्तण्हं दसण्हं पयडीणं पवेसगा तुल्ला थोवा ।

§ ३४३. कुदो ? एयसमयसंचिदत्तादो । तं जहा—तिण्हं लोभाणमुवरि माया-संजलणे पवेसिदे एयसमयं चदुण्हं पवेसगो होइ । तिण्हं मायाणमुवरि माणसंजलणं पवेसिय एगसमयं सत्तण्हं पवेसगो होइ । तिण्हं माणाणमुवरि कोहसंजलणं पवेसय-माणो एयसमयं चेव दसण्हं पवेसगो होदि त्ति एदेण कारणेण एदेसिं तिण्हं पि पवेसट्ठाणाणं सामिणो जीवा अण्णोण्णेण सरिसा होदूण उवरि भणिस्समाणासेसपदे-सेहिंतो थोवा जादा ।

❀ तिण्हं पवेसगा संखेज्जगुणा ।

§ ३४४. किं कारणं ? संचयकालबहुत्तादो । तं जहा—तिविहं लोभमोकड्डि-ऊण ट्ठिदसुहुमसांपराइयकाले पुणो अणियट्टिअद्धाए संखे०भागे च संचिदो जीवरासी तिण्हं पवेसगो होदि । तेण पुव्विल्लादो एगसमयसंचयादो एसो अंतोमुहुत्तसंचओ संखेज्जगुणो त्ति णत्थि संदेहो ।

❀ छण्हं पवेसगा विसेसाहिया ।

§ ३४१. भाव सर्वत्र औदयिक है ।

❀ अल्पबहुत्वका अधिकार है ।

§ ३४२. अधिकारकी सम्हाल करनेवाला यह सूत्र सुगम है ।

❀ चार, सात और दस प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव परस्पर तुल्य होकर सबसे स्तोक हैं ।

§ ३४३. क्योंकि इनका एक समयमें संचय होता है । यथा—तीन लोभोंके ऊपर माया-संज्वलनका प्रवेश होने पर एक समय तक चार प्रकृतियोंका प्रवेशक होता है । तीन प्रकारकी मायाके ऊपर मान संज्वलनका प्रवेश कर एक समय तक सात प्रकृतियोंका प्रवेशक होता है । तीन मानोंके ऊपर क्रोधसंज्वलनका प्रवेश करता हुआ एक समय तक ही दस प्रकृतियोंका प्रवेशक होता है । इस कारणसे इन तीनों ही प्रवेशस्थानोंके स्वामी जीव परस्पर समान होते हुए आगे कहे जानेवाले समस्त प्रवेशस्थानोंके स्वामियोंकी अपेक्षा स्तोक हुए ।

❀ उनसे तीन प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव संख्यातगुणे हैं ।

§ ३४४. क्योंकि इनका सञ्चयकाल बहुत है । यथा—तीन लोभोंका अपकर्षण कर सूक्ष्मसाम्परायके कालमें स्थित होकर पुनः अनिवृत्तिकरणके कालके संख्यातवें भागप्रमाण कालमें सञ्चित हुई जीव राशि तीन प्रकृतियोंकी प्रवेशक होती है । इसलिए पूर्वके प्रवेशस्थानोंमें एक समयमें हुए सञ्चयसे यह अन्तर्मुहूर्त कालके भीतर हुआ सञ्चय संख्यातगुणा है इसमें सन्देह नहीं है ।

❀ उनसे छह प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव विशेष अधिक हैं ।

§ ३४५. केण कारणेण ? विसेसाहियकालब्भंतरसंचिदत्तादो। णेदमसिद्धं, ओदरमाणयस्स लोभवेदगकालादो तस्सेव मायावेदगकालो विसेसाहियो त्ति परमागमचक्खूणं सुप्पसिद्धत्तादो।

❀ णवण्हं पवेसगा विसेसाहिया।

§ ३४६. कुदो ? मायावेदगकालादो विसेसाहियमाणवेदगकालम्मि संचिदजीवरासिस्स गहणादो।

❀ बारसण्हं पवेसगा विसेसाहिया।

§ ३४७. किं कारणं ? पुव्विल्लसंचयकालादो विसेसाहियकोहवेदगकालम्मि अवगदवेदपडिबद्धम्मि संचिदजीवरासिस्स गहणादो।

❀ एगूणवीसाए पवेसगा विसेसाहिया।

§ ३४८. किं कारणं ? पुरिसवेद-छण्णोकसाए ओकड्डिय पुणो जाव इत्थिवेदं ण ओकड्डदि ताव एदम्मि काले पुव्विल्लसंचयकालादो विसेसाहियम्मि संचिदजीवरासिस्स विवक्खियत्तादो।

❀ वीसाए पवेसगा विसेसाहिया।

§ ३४९. कुदो इत्थिवेदमोकड्डिय पुणो जाव णवुंसयवेदं ण ओकड्डदि ताव एदम्मि काले पुव्विल्लसंचयकालादो विसेसाहियम्मि संचिदजीवाणमिह ग्गहणादो।

---

§ ३४५. क्योंकि, ये विशेष अधिक कालके भीतर सञ्चित हुए हैं। यह असिद्ध भी नहीं है, क्योंकि उतरनेवाले जीवके लोभवेदक कालसे उसीका मायावेदक काल विशेष अधिक है यह बात परमागमरूप चक्षुवालोंके लिए सुप्रसिद्ध है।

※ उनसे नौ प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव विशेष अधिक हैं।

§ ३४६. क्योंकि यहाँ पर मायावेदक कालसे विशेष अधिक मानवेदक कालमें सञ्चित हुई जीवराशिका ग्रहण किया है।

※ उनसे बारह प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव विशेष अधिक हैं।

§ ३४७. क्योंकि पूर्वके सञ्चयकालसे विशेष अधिक अपगतवेदसे सम्बन्धित क्रोधवेदक कालमें सञ्चित हुई जीवराशिका ग्रहण किया है।

※ उनसे उन्नीस प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव विशेष अधिक हैं।

§ ३४८. क्योंकि पुरुषवेद और छह नोकषायोंका अपकर्षण कर पुनः जब तक स्त्रीवेदका अपकर्षण नहीं करता तब तक, जो कि पूर्वके सञ्चय कालसे विशेष अधिक है ऐसे इस कालमें सञ्चित हुई जीवराशि यहाँ पर विवक्षित है।

※ उनसे बीस प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव विशेष अधिक हैं।

§ ३४९. क्योंकि स्त्रीवेदका अपकर्षण कर जब तक नपुंसकवेदका अपकर्षण नहीं करता है तब तक पूर्वके सञ्चयकालसे विशेष अधिक इस सञ्चयकालमें सञ्चित हुए जीवोंका यहां पर ग्रहण किया है।

❀ दोण्हं पवेसगा संखेज्जगुणा ।

§ ३५०. केण कारणेण ? पुरिसवेदोदएण खवगसेढिमारूढस्स अंतरकरणादो समयूणावलियाए गदाए तदो प्पहुडि जाव पुरिसवेदपढमट्ठिदिचरिमसमयो त्ति ताव एदम्मि कालविसेसे पयदसंचयावलंबणादो। जइ वि उवसमसेढीए चेव पयदसंचयो अवलंबिज्जदे तो वि पुव्विल्लादो एदस्स संचयकालमाहप्पेण संखेज्जगुणत्तं ण विरुज्झदे।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

❀ एक्किस्से पवेसगा संखेज्जगुणा ।

§ ३५१. कुदो ? पुव्विल्लादो एदस्स संचयकालमाहप्पदंसणादो। तं जहा—दोण्हं पवेसगकालो णाम पुरिसवेदपढमट्ठिदीए णवुंसयवेद-इत्थिवेद-छण्णोकसायक्खवणद्धामेत्तो। एक्किस्से पवेसगकालो पुण पुरिसवेदपढमट्ठिदीए गालिदाए तत्तो प्पहुडि अस्सकण्णकरणकालो किट्टीकरणकालो कोधतिण्णिसंगहकिट्टिवेदगकालो माणवेदगकालो मायावेदगकालो लोभवेदकालो त्ति एदासिं छण्हमद्धाणं समुदायमेत्तो। एसो च पुव्विल्लसंचयकालादो किंचूणदुगुणमेत्तो। तदो किंचूणदुगुणकालब्भंतरसंचिदत्तादो एसो रासी पुव्विल्लादो संखेज्जगुणो त्ति सिद्धं। इत्थिणवुंसयवेदाणमण्णदरोदएण खवगसेढिमारूढस्स सादिरेयतिगुणमेत्तो पयदसंचयकालो किण्णावलंबिज्जदे ? पुरिसवेदोदयं मोत्तूण सेसवेदोदएण चढमाणजीवाणं बहुत्तासंभवादो।

---

*उनसे दो प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव संख्यातगुणे हैं।

§ ३५०. क्योंकि पुरुषवेदके उदयसे क्षपकश्रेणिपर आरूढ़ हुए जीवके अन्तरकरणसे लेकर एक समय कम एक आवलिकाल जानेपर वहाँसे लेकर पुरुषवेदकी प्रथम स्थितिके अन्तिम समयके प्राप्त होने तक इस कालके भीतर हुए प्रकृत सञ्चयका अवलम्बन लिया गया है। यद्यपि उपशमश्रेणिकी अपेक्षा ही प्रकृत सञ्चयका अवलम्बन लिया जा सकता है तो भी पूर्वसे यह सञ्चयकाल बड़ा है, इसलिए इसमें संख्यातगुणी जीवराशिके प्राप्त होनेमें कोई विरोध नहीं आता।

* उनसे एक प्रकृतिके प्रवेशक जीव संख्यातगुणे हैं।

§ ३५१. क्योंकि पूर्वके सञ्चयकालसे यह सञ्चयकाल बड़ा देखा जाता है। यथा—दो प्रकृतियोंका प्रवेशकाल पुरुषवेदकी प्रथम स्थितिके रहते हुए नपुंसकवेद, स्त्रीवेद और छह नोकषायोंका क्षपणाकालमात्र है। परन्तु एक प्रकृतिका प्रवेशकाल पुरुषवेदकी प्रथम स्थितिके गल जानेपर वहाँसे लेकर अश्वकर्णकरणकाल, कृष्टिकरणकाल, क्रोधकी तीन संग्रहकृष्टिवेदककाल, मानवेदककाल, मायावेदककाल, और लोभवेदककाल इसप्रकार इन छह कालोंके समुदायप्रमाण है। और यह पहलेके सञ्चयकालसे कुछ कम दूना है, इसलिए कुछ कम दूने कालके भीतर सञ्चित होनेके कारण यह राशि पूर्वकी राशिसे संख्यातगुणी है यह सिद्ध हुआ।

शंका—स्त्रीवेद और नपुंसकवेदमेंसे किसी एक वेदके उदयसे क्षपकश्रेणी पर चढ़े हुएकी अपेक्षा साधिक तिगुणे प्रकृत सञ्चयकालका अवलम्बन क्यों नहीं लिया जाता ?

समाधान—नहीं, क्योंकि पुरुषवेदको छोड़कर शेष वेदोंके उदयसे चढ़े हुए जीवोंका बहुत होना असम्भव है।

❀ तेरसण्हं पवेसगा संखेज्जगुणा ।

§ ३५२. किं कारणं ? अट्ठकसाएसु खविदेसु तत्तो प्पहुडि जाव अंतरकरणं समाणिय समयूणावलियमेत्तो कालो गच्छदि त्ति ताव एदम्मि काले पुव्विल्लकालादो संखेज्जगुणे तेरसपवेसगाणं संचयावलंबणादो ।

❀ तेवीसाए पवेसगा संखेज्जगुणा ।

§ ३५३. कुदो ? दंसणमोहक्खवणाए अब्भुट्ठिदेण मिच्छत्ते खविदे तत्तो प्पहुडि जाव सम्मामिच्छत्तक्खवणाचरिमसमयो त्ति ताव एदम्मि काले पुव्विल्लकालादो संखेज्ज-गुणे संचिदजीवाणं गहणादो ।

❀ बावीसाए पवेसगा असंखेज्जगुणा ।

§ ३५४. कुदो ? पलिदोवमस्सासंखेज्जभागपमाणत्तादो ।

❀ पणुवीसाए पवेसगा असंखेज्जगुणा ।

§ ३५५. कुदो ? अणंताणुबंधिविसंजोयणाविरहिदाणमुवसमसम्माइट्ठीणं सासण-सम्माइट्ठीणं च अंतोमुहुत्तसंचिदाणमिह ग्गहणादो ।

❀ सत्तावीसाए पवेसगा असंखेज्जगुणा ।

§ ३५६. कुदो ? सम्मत्ते उव्वेल्लिदे पुणो पलिदोवमासंखेज्जभागपमाणसम्मामि-च्छत्तुव्वेल्लणाकालब्भंतरे पयदसंचयावलंबणादो ।

❀ एक्कवीसाए पवेसगा असंखेज्जगुणा ।

✱ उनसे तेरह प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव संख्यातगुणे हैं ।

§ ३५२. क्योंकि आठ कषायोंका क्षय करने पर वहाँसे लेकर अन्तरकरणको समाप्त कर एक समय कम आवलिमात्र काल जाने तक पहलेके कालसे संख्यातगुणे इस कालके भीतर तेरह प्रकृतियोंके प्रवेशकोंके सञ्चयका अवलम्बन लिया है ।

✱ उनसे तेईस प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव संख्यातगुणे हैं ।

§ ३५३. क्योंकि दर्शनमोहनीयकी क्षपणाके लिए उद्यत हुए जीवके द्वारा मिथ्यात्वका क्षय कर देने पर वहाँसे लेकर सम्यग्मिथ्यात्वकी क्षपणाके अन्तिम समय तक पहलेके कालसे संख्यातगुणे इस कालके भीतर सञ्चित हुए जीवोंका यहाँ पर ग्रहण किया है ।

✱ उनसे बाईस प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव असंख्यातगुणे हैं ।

§ ३५४. क्योंकि ये जीव पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण हैं ।

✱ उनसे पच्चीस प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव असंख्यातगुणे हैं ।

§ ३५५. क्योंकि अन्तर्मुहूर्त कालके भीतर सञ्चित हुए अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी विसंयोजनासे रहित उपशमसम्यग्दृष्टि और सासादन सम्यग्दृष्टि जीवोंका यहाँ पर ग्रहण किया है ।

✱ उनसे सत्ताईस प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव असंख्यातगुणे हैं ।

§ ३५६. क्योंकि सम्यक्त्वकी उद्वेलना कर लेने पर पुनः पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण सम्यग्मिथ्यात्वके उद्वेलनाकालके भीतर हुए प्रकृत सञ्चयका अवलम्बन लिया गया है ।

§ ३५७. किं कारणं ? सोहम्मीसाणेसु वेसागरोवममेत्तकालब्भंतरसंचिदाणं खइयसम्माइट्ठिजीवाणमिह पहाणभावेण विवक्खियत्तादो ।

आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

*** चउवीसाए पवेसगा असंखेज्जगुणा ।**

§ ३५८. कुदो ? चउवीससंतकम्मियवेदयसम्माइट्ठिरासिस्स गहणादो ।

*** अट्ठावीसाए पवेसगा असंखेज्जगुणा ।**

§ ३५९. किं कारणं ? अट्ठावीससंतकम्मियवेदगसम्माइट्ठिरासिस्स पहाणभावेण विवक्खियत्तादो ।

*** छव्वीसाए पवेसगा अणंतगुणा ।**

§ ३६०. कुदो ? किंचूणसव्वजीवरासिपमाणत्तादो ।

एवमोघेणप्पाबहुअं समत्तं ।

§ ३६१. संपहि आदेसपरूवणट्ठमुच्चारणं वत्तइस्सामो । तं जहा—आदेसेण णेरइय० सव्वत्थोवा २२ पवे० । २५ पवेस० असंखेज्जगुणा । २७ पवे० असंखेज्जगुणा । २१ पवे० असंखेज्जगुणा । २४ पवे० असंखेज्जगुणा । २८ पवे० असंखेज्जगुणा । २६ पवे० असंखेज्जगुणा । एवं पढमाए पंचिंदियतिरिक्ख०२-देवा सोहम्मादि सहस्सार त्ति ।

---

* उनसे इक्कीस प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव असंख्यातगुणे हैं ।

§ ३५७. क्योंकि सौधर्म और ऐशानकल्पमें दो सागरप्रमाण कालके भीतर सञ्चित हुए क्षायिकसम्यग्दृष्टि जीवोंकी यहां पर प्रधानभावसे विवक्षा की गई है ।

* उनसे चौबीस प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव असंख्यातगुणे हैं ।

§ ३५८. क्योंकि चौबीस प्रकृतियोंकी सत्तावाले वेदकसम्यग्दृष्टियोंका यहां पर ग्रहण किया गया है ।

* उनसे अट्ठाईस प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव असंख्यातगुणे हैं ।

§ ३५९. क्योंकि अट्ठाईस प्रकृतियोंकी सत्तावाली वेदकसम्यग्दृष्टि जीवराशि प्रधानभावसे यहां पर विवक्षित है ।

* उनसे छब्बीस प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव अनन्तगुणे हैं ।

§ ३६०. क्योंकि ये कुछ कम सब जीव राशिप्रमाण हैं ,

इस प्रकार ओघसे अल्पबहुत्व समाप्त हुआ

§ ३६१. अब आदेशका कथन करनेके लिए उच्चारणाको बतलाते हैं । यथा—आदेशसे नारकियोंमें २२ प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव सबसे स्तोक हैं । उनसे २५ प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव असंख्यातगुणे हैं । उनसे २७ प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव असंख्यातगुणे हैं । उनसे २१ प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव असंख्यातगुणे हैं । उनसे २४ प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव असंख्यातगुणे हैं । उनसे २८ प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव असंख्यातगुणे हैं । उनसे २६ प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव असंख्यातगुणे हैं । इसी प्रकार पहली पृथिवीके नारकी, पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चद्विक, सामान्य देव और सौधर्म कल्पसे लेकर सहस्रारकल्प तकके देवोंमें जानना चाहिए ।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

§ ३६२. बिदियादि सत्तमा त्ति सव्वत्थोवा २२ पवे० । २१ पवे० असंखेज्ज-गुणा । २५ पवे० असंखेज्जगुणा । २७ पवे० असंखेज्जगुणा । २४ पवे० असंखेज्ज-गुणा । २८ पवे० असंखेज्जगुणा । २६ पवे० असंखेज्जगुणा । तिरिक्खाणं णारय-भंगो । णवरि २६ पवे० अणंतगुणा । जोणिणी० बिदियपुढवीभंगो । एवं भवण०-वाणवें०-जोदिसि० । पंचिं०तिरिक्खअपज्ज०-मणुसअपज्ज० सव्वत्थोवा २७ पवे० । २८ पवे० असंखेज्जगुणा । २६ पवे० असंखेज्जगुणा ।

§ ३६३. मणुस्सेसु सव्वत्थोवा ४ ७ १० पवेसगा सरिसा । ३ पवेसगा संखेज्ज-गुणा । ६ पवेसगा विसेसाहिया । ९ पवे० विसेसा० । १२ पवे० विसेसा० । १९ पवे० विसे० । २० पवे० विसेसा० । २ पवे० संखेज्जगुणा । १ पवे० संखेज्जगुणा । १३ पवे० संखेज्जगुणा । २३ पवे० संखेज्जगुणा । २२ पवे० संखेज्जगुणा । २५ पवे० संखेज्जगुणा । २१ पवे० संखेज्जगुणा । २४ पवे० संखेज्जगुणा । २७ पवे० असं-खेज्जगुणा । २८ पवे० असंखेज्जगुणा । २६ पवे० असंखेज्जगुणा । एवं मणुसपज्ज०-मणुसिणी० । णवरि संखेज्जगुणं कादव्वं ।

§ ३६२. दूसरी पृथिवीसे लेकर सातवीं पृथिवी तकके नारकियोंमें २२ प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव सबसे स्तोक हैं। उनसे २१ प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव असंख्यातगुणे हैं। उनसे पच्चीस प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव असंख्यातगुणे हैं। उनसे २७ प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव असंख्यातगुणे हैं। उनसे २४ प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव असंख्यातगुणे हैं। उनसे २८ प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव असंख्यातगुणे हैं। उनसे २६ प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव असंख्यातगुणे हैं। तिर्यञ्चोंमें सामान्य नारकियोंके समान भंग है। किन्तु इतनी विशेषता है कि २६ प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव अनन्तगुणे हैं। योनिनी तिर्यञ्चोंमें दूसरी पृथिवीके समान भंग है। इसी प्रकार भवनवासी, व्यन्तर और ज्योतिषी देवोंमें जानना चाहिए। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्तकोंमें २७ प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव सबसे स्तोक हैं। उनसे २८ प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव असंख्यातगुणे हैं। उनसे २६ प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव असंख्यातगुणे हैं।

§ ३६३ मनुष्योंमें ४, ७ और १० प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव परस्पर समान हो कर सबसे स्तोक हैं। उनसे ३ प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव संख्यातगुणे हैं। उनसे ६ प्रकृतियों प्रवेशक जीव विशेष अधिक हैं। उनसे ९ प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव विशेष अधिक हैं। उनसे १२ प्रकृकितियोंके प्रवेशक जीव विशेष अधिक हैं। उनसे १९ प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव विशेष अधिक हैं। उनसे २० प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव विशेष अधिक हैं। उनसे २ प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव संख्यातगुणे हैं। उनसे १ प्रकृतिके प्रवेशक जीव संख्यातगुणे हैं। उनसे १३ प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव संख्यातगुणे हैं। उनसे २३ प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव संख्यातगुणे हैं। उनसे २२ प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव संख्यातगुणे हैं। उनसे २५ प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव संख्यातगुणे हैं। उनसे २१ प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव संख्यातगुणे हैं। उनसे २४ प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव संख्यातगुणे हैं। उनसे २७ प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव असंख्यातगुणे हैं। उनसे २८ प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव असंख्यातगुणे हैं। उनसे २६ प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव असंख्यात-गुणे हैं। इसी प्रकार मनुष्य पर्याप्त और मनुष्यिनियोंमें जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि असंख्यातगुणेके स्थानमें संख्यातगुणा करना चाहिए।

§ ३६४. आणदादि जाव णवगेवज्जा त्ति सव्वत्थोवा २२ पवे०। २५ पवे० असंखेज्जगुणा। २७ पवेसगा असंखेज्जगुणा। २६ पवेसगा असंखेज्जगुणा। २१ पवेसगा असंखेज्जगुणा। २४ पवेसगा संखेज्जगुणा[1]। २८ पवे० संखेज्जगुणा[2]। अणुद्दिसादि सव्वट्ठा त्ति सव्वत्थोवा २२ पवे०। २१ पवे० असंखेज्जगुणा। २४ पवे० संखेज्जगुणा[3]। २८ पवे० संखेज्जगुणा[4]। णवरि सव्वट्ठे संखेज्जगुणं कायव्वं। एवं जाव०।

एवमप्पाबहुए समत्ते पयडिट्ठाणपवेसस्स सत्तारस अणियोगद्दाराणि समत्ताणि

§ ३६५. संपहि एत्थेव भुजगारादिपरूवणट्ठमुवरिमं सुत्तकलावमाह—

❀ भुजगारो कायव्वो।

❀ पदणिक्खेवो कायव्वो।

❀ वड्ढी वि कायव्वा।

§ ३६६. तं जहा— भुजगारपवेसगे त्ति तत्थ इमाणि तेरस अणियोगद्दाराणि समुक्कित्तणा जाव अप्पाबहुए त्ति। समुक्कित्तणाणु० दुविहो णि०—ओघेण आदेसेण य। ओघेण अत्थि भुजगारप०-अप्पद०-अवट्ठि०-अवत्त०पवेसगा। एवं मणुस-

श्री सुविधिसागर जी महाराज

§ ३६४. आनत कल्पसे लेकर नौ ग्रैवेयक तकके देवोंमें २२ प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव सबसे स्तोक हैं। उनसे २५ प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव असंख्यातगुणे हैं। उनसे २७ प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव असंख्यातगुणे हैं। उनसे २६ प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव असंख्यातगुणे हैं। उनसे २१ प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव असंख्यातगुणे हैं। उनसे २४ प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव संख्यातगुणे हैं। उनसे २८ प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव संख्यातगुणे हैं। अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धितकके देवोंमें २२ प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव सबसे स्तोक हैं। उनसे २१ प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव असंख्यातगुणे हैं। उनसे २४ प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव संख्यातगुणे हैं। उनसे २८ प्रकृतियोंके प्रवेशक जीव संख्यातगुणे हैं। किन्तु इतनी विशेषता है कि सर्वार्थसिद्धिमें असंख्यातगुणेके स्थानमें संख्यातगुणा करना चाहिए। इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

इस प्रकार अल्पबहुत्वके समाप्त होनेपर प्रकृतिस्थान प्रवेशकके सत्रह अनुयोगद्वार समाप्त हुए।

§ ३६५. अब यहाँ पर भुजगारादिका कथन करनेके लिए आगेके सूत्रकलापको कहते हैं—

* भुजगार करना चाहिए।

* पदनिक्षेप करना चाहिए।

* वृद्धि करनी चाहिए।

§ ३६६. यथा—भुजगारप्रवेशकका अधिकार है। उसमें समुत्कीर्तनासे लेकर अल्पबहुत्व तक ये तेरह अनुयोगद्वार होते हैं। समुत्कीर्तनानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे भुजगार, अल्पतर, अवस्थित और अवक्तव्यप्रवेशक जीव हैं।

१. ता० प्रतौ असंखेज्जगुणा इति पाठः। २. ता० प्रतौ असंखेज्जगुणा इति पाठः।
३. ता० प्रतौ असंखेज्जगुणा इति पाठः। ४. ता० प्रतौ असंखेज्जगुणा इति पाठः।

तिए। आदेसेण णेरइय० अत्थि भुज०--अप्प०--अवट्ठि०पवे०। एवं सव्वणेरइय० तिरिक्ख०-पंचिंदियतिरिक्खतिय३--सव्वदेवा त्ति। पंचिं०तिरि०अपज्ज०-मणुसअपज्ज० अत्थि अप्प०-अवट्ठि०पवे०। एवं जाव०।

§ ३६७. सामित्ताणु० दुविहो णि०—ओघेण आदेसे०। ओघेण भुज०--अप्प०--अवट्ठि०पवेसगो को होदि? अण्ण० सम्मादि० मिच्छाइट्ठी वा। अवत्त०-पवेसगो को होदि? अण्ण० मणुसो वा मणुसिणी वा उवसामगो परिवदमाणगो देवो वा पढमसमयपवेसगो। एवं मणुसतिए। णवरि पढमसमयदेवो त्ति ण भाणियव्वं। एवं सव्वणेरइय०-सव्वतिरिक्ख-सव्वदेवा त्ति। णवरि अवत्त० णत्थि। णवरि पंचिं०-तिरिक्खअपज्ज०--मणुसअपज्ज० अप्प०-अवट्ठि० कस्स? अण्णद०। अणुदिसादि सव्वट्ठा त्ति भुज०--अप्प०—अवट्ठि० कस्स? अण्णद०। एवं जाव०

§ ३६८. कालाणुगमेण दुविहो णिद्देसो—ओघेण आदेसेण। ओघेण भुज० जह० एयस०, उक० चत्तारि समया। तं कधं? अणंताणुबंधी विसंजोएदूण ट्ठिदउवसमसम्माइट्ठी उवसमसम्मत्तद्धाए वे समया अत्थि त्ति सासणभावं पडिवण्णो तस्स पढमसमए बावीस-

---

इसी प्रकार मनुष्यत्रिकमें जानना चाहिए। आदेशसे नारकियोंमें भुजगार, अल्पतर और अवस्थित प्रवेशक जीव हैं। इसी प्रकार सब नारकी, सामान्य तिर्यञ्च, पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च-त्रिक और सब देवोंमें जानना चाहिए। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्त जीवोंमें अल्पतर और अवस्थितप्रवेशक जीव हैं। इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

§ ३६७. स्वामित्वानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे भुजगार, अल्पतर और अवस्थित प्रवेशक कौन होता है? अन्यतर सम्यग्दृष्टि और मिथ्यादृष्टि होता है। अवक्तव्य प्रवेशक कौन होता है? उपशमश्रेणिसे गिरनेवाला मनुष्य या मनुष्यिनी अथवा प्रथम समयमें प्रवेश करनेवाला देव होता है। मनुष्यत्रिकमें इसीप्रकार जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि 'प्रथम समयमें प्रवेश करनेवाला देव' ऐसा नहीं कहना चाहिए। इसीप्रकार सब नारकी, सब तिर्यञ्च और सब देवोंमें जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि इनमें अवक्तव्यप्रवेशक नहीं है। तथा इतनी और विशेषता है कि पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्तकोंमें अल्पतर और अवस्थित पद किसके होता है? अन्यतरके होता है। अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें भुजगार, अल्पतर और अवस्थितपद किसके होते हैं? अन्यतरके होते हैं? इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

§ ३६८. कालानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे भुजगार प्रवेशकका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल चार समय है।

शंका—वह कैसे?

समाधान—अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी विसंयोजना करनेवाला उपशमसम्यग्दृष्टि जीव उपशमसम्यक्त्वके कालमें दो समय शेष रहने पर सासादनभावको प्राप्त हुआ। उसके प्रथम समयमें बाईस प्रकृतिकस्थान होकर एक भुजगार समय प्राप्त हुआ। उसी जीवके दूसरे

ट्ठाणं होदूण एगो भुजगारसमयो, तस्सेव विदियसमए पणुवीसपवेसट्ठाणुप्पत्तीए विदियो भुजगारसमयो, से काले मिच्छत्तं पडिवण्णस्स छव्वीसपवेसट्ठाणसंभवेण तदियो, पुणो तदणंतरसमए अट्ठावीसपवेसट्ठाणपडिबद्धो चउत्थो समयो त्ति एवं भुजगारस्स चत्तारि समया भवंति। अप्प०--अवत्त० जहण्णुक० एयस०। अथवा अप्प० उक्क० बे समया। तं कथं? सम्मत्तमुव्वेल्लेमाणो वेदगपाओग्गकालं बोलाविय सम्मत्ताहिमुहो होदूणंतरं करेमाणो अंतरदुचरिमफालीए सह सम्मत्तुव्वेल्लणाचरिमफालिं णिवादिय से काले अंतरकरणं समाणिय कमेण सम्मत्तसमयूणावलियमेत्तट्ठिदीओ गालिय एयसमयमप्पदरपवेसगो जादो, तम्मि समए सत्तावीसपवेसुवलंभादो। पुणो से काले सम्मामिच्छत्तपढमट्ठिदिं णिल्लेविय छव्वीसपवेसगो जादो। एसो विदियो अप्पदरसमयो। एवं बे समया। अवट्ठि० तिण्णि भंगा। तत्थ जो सो सादिओ सपज्जवसिदो तस्स जह० एयसमओ, उक्क० उवड्ढपोग्गलपरियट्टं।

समयमें पच्चीस प्रकृतिक प्रवेशस्थानकी उत्पत्ति होनेसे दूसरा भुजगार समय हुआ। पुनः तदनन्तर समयमें मिथ्यात्वको प्राप्त हुए उसके छब्बीस प्रकृतिक प्रवेशस्थान सम्भव होनेसे तीसरा भुजगार समय हुआ। पुनः तदनन्तर समयमें अट्ठाईस प्रकृतिक प्रवेशस्थानसे सम्बन्ध रखनेवाला चौथा भुजगारसमय हुआ। इस प्रकार भुजगारके चार समय होते हैं।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

अल्पतर और अवक्तव्य प्रवेशकका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अथवा अल्पतरप्रवेशकका उत्कृष्ट काल दो समय है।

शंका—वह कैसे ?

समाधान—सम्यक्त्वकी उद्वेलना करनेवाला जीव वेदक प्रायोग्य कालको बिताकर और सम्यक्त्वके अभिमुख होकर अन्तर करता हुआ अन्तरकी द्विचरम फालिके साथ सम्यक्त्वकी उद्वेलना सम्बन्धी अन्तिम फालिका पातकर तथा तदनन्तर समयमें अन्तरकरणको पूराकर क्रमसे सम्यक्त्वकी एक समय कम आवलिप्रमाण स्थितियोंको गलाकर एक समय तक अल्पतर प्रवेशक हुआ, क्योंकि उस समय सत्ताईस प्रकृतियोंका प्रवेश देखा जाता है। पुनः तदनन्तर समयमें सम्यग्मिथ्यात्वकी प्रथम स्थितिका अभाव कर छब्बीस प्रकृतियोंका प्रवेशक हो गया। यह दूसरा अल्पतर समय है। इसतरह अल्पतर प्रवेशकके दो समय प्राप्त हुए।

अवस्थित प्रवेशकके तीन भंग हैं। उनमें जो सादि-सान्त भंग है उसका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल उपार्ध पुद्गल परिवर्तनप्रमाण है।

विशेषार्थ—यहां ओघसे भुजगार और अल्पतर प्रवेशकके उत्कृष्ट कालका निर्णय टीकाकारने स्वयं किया है। इनके जघन्य कालका विचार सुगम है। उदाहरणार्थ १९ प्रकृतियोंका प्रवेशक जो उपशमश्रेणिसे गिरनेवाला जीव जब स्त्रीवेदका अपकर्षण कर २० प्रकृतियोंका प्रवेशक होता है तब उसके भुजगार प्रवेशकका जघन्य काल एक समय देखा जाता है। तथा अट्ठाईस प्रकृतियोंका प्रवेशक जो मिथ्यादृष्टि जीव सम्यक्त्वकी उद्वेलना कर दूसरे समयमें सत्ताईस प्रकृतियोंका प्रवेशक होता है उसके अल्पतर प्रवेशकका जघन्य काल एक समय देखा जाता है। अवक्तव्यपद एक समय तक ही होता है, इसलिए इसका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है यह स्पष्ट ही है। तथा जो उपशम सम्यक्त्वके सन्मुख हो सम्यक्त्वको प्राप्त करनेके दो समय पूर्व सम्यक्त्वकी उद्वेलना करके प्रथम समयमें २८से २७

§ ३६९. आदेसेण णेरइय० भुज० जह० एयस०, उक्क० चत्तारि समया। अप्प० जहण्णुक्क० एयसमओ, अथवा उक्क० बे समया। अवट्ठि० जह० एयस०, उक्क० तेत्तीसं सागरोवमाणि। एवं सत्तसु पुढवीसु। णवरि सगट्ठिदी। तिरिक्खेसु भुज०-अप्प० णारयभंगो। अवट्ठि० जह० एयस०, उक्क० अणंतकालमसंखेज्जा पोग्गलपरियट्टा। एवं पंचिंदियतिरिक्खतिए। णवरि अवट्ठि० जह० एयस०, उक्क० तिण्णि पलिदो० पुव्वकोडिपुधत्तेणब्भहियाणि। एवं मणुसतिए। णवरि अवत्त० ओघं। पंचिं०तिरिक्खअपज्ज०-मणु०अपज्ज० अप्प० जहण्णुक्क० एयसमओ। अवट्ठि० जह० एयस०, उक्क० अंतोमु०। देवाणं णारयभंगो। एवं भवणादि जाव णवगेवज्जा त्ति। णवरि सगट्ठिदी। अणुद्दिसादि सव्वट्ठा त्ति भुज० जह० एयस०, उक्क० बे समया। अप्प० जहण्णुक्क० एयस०। अवट्ठि० जह० एयस०, उक्क० सगट्ठिदी। एवं जाव०।

प्रकृतियोंका प्रवेशक होकर दूसरे समयमें अवस्थित पदका प्रवेशक होता है उसके अवस्थित पदके प्रवेशकका जघन्य काल एक समय प्राप्त होता है और जो जीव अर्धपुद्गल परिवर्तनकाल-प्रथम समयमें उपशम सम्यक्त्वको उत्पन्न कर क्रमसे अतिशीघ्र मिथ्यात्वमें जाकर और अति स्वल्प उद्वेलनाकालके द्वारा सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी उद्वेलना कर २६ प्रकृतियोंका प्रवेशक हो कुछ कम अर्धपुद्गल परिवर्तनकाल तक इसी पदका प्रवेशक बना रहता है। पुनः संसारमें रहनेका अन्तर्मुहूर्त काल शेष रहने पर उपशमसम्यक्त्वको प्राप्त कर जो इस पदका विघटन करता है उसके अन्तर्मुहूर्त अधिक पल्यका असंख्यातवाँ भागप्रमाण काल कम उपार्ध पुद्गलपरिवर्तनप्रमाण अवस्थित पदका उत्कृष्ट काल देखा जाता है।

§ ३६९. आदेशसे नारकियोंमें भुजगारप्रवेशकका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल चार समय है। अल्पतरप्रवेशकका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अथवा उत्कृष्ट काल दो समय है। अवस्थित प्रवेशकका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल तेतीस सागर है। इसी प्रकार सातों पृथिवियोंमें जानना चाहिए। किन्तु अपनी अपनी स्थिति कहनी चाहिए। तिर्यञ्चोंमें भुजगार और अल्पतर प्रवेशकका भंग नारकियोंके समान है। अवस्थितप्रवेशकका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अनन्त काल है जो असंख्यात पुद्गल परिवर्तनप्रमाण है। इसी प्रकार पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकमें जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि अवस्थितप्रवेशकका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल पूर्वकोटि पृथक्त्व अधिक तीन पल्य है। इसी प्रकार मनुष्योंमें जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि इनमें अवक्तव्यप्रवेशकका काल ओघके समान है। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्तकोंमें अल्पतरप्रवेशकका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अवस्थितप्रवेशकका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। देवोंमें नारकियोंके समान भंग है। इसी प्रकार भवनवासियोंसे लेकर नौ ग्रैवेयक तकके देवोंमें जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि अवस्थितप्रवेशकका उत्कृष्ट काल कहते समय अपनी अपनी स्थिति कहनी चाहिए। अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धिमें भुजगारप्रवेशकका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल दो समय है। अल्पतरप्रवेशकका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अवस्थितप्रवेशकका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अपनी स्थितिप्रमाण है। इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

§ २७०. अंतराणु० दुविहो णि०—ओघेण आदेसेण य। ओघेण भुज०-अप्प० जह० एयस० अंतोमु०, अथवा अप्पदरस्स वि एगसमओ। एसो अत्थो उवरि वि जहासंभवं जोजेयव्वो। उक्क० उवड्ढपोग्गलपरियट्टं। अवट्ठि० जह० एगस०, उक्क० अंतोमु०, अवत्त० जह० अंतोमु०, उक्क० उवड्ढपो०परियट्टं।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

विशेषार्थ—अन्य सब गतियोंमें जहाँ जितना उसका कायस्थिति या भवस्थितिकी अपेक्षा उत्कृष्ट काल है उतने काल तक उसे २६ प्रकृतियोंका प्रवेशक बनाये रखनेसे उस गतिमें अवस्थितप्रवेशकका उत्कृष्ट काल आ जाता है। मात्र पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्तकोंमें २८, २७, और २६ इनमेंसे किसी भी पदकी अपेक्षा अवस्थितप्रवेशकका उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त प्राप्त किया जा सकता है। कारण स्पष्ट है। तथा नौ अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें २८, २४ और २१ प्रकृतियोंके प्रवेशककी अपेक्षा अपनी अपनी स्थितिप्रमाण अवस्थितप्रवेशकका उत्कृष्ट काल प्राप्त करना चाहिए। इन पदोंकी अपेक्षा अवस्थितप्रवेशकका उत्कृष्ट काल सौधर्मादिकल्पोंमें भी प्राप्त किया जा सकता है इतना यहाँ विशेष समझना चाहिए। शेष कथन सुगम है। किन्तु इस सम्बन्धमें कुछ विशेष वक्तव्य है। जो इस प्रकार है—पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्तकोंमें जो जीव अपनी पर्यायके उपान्त्य समयमें उद्वेलना कर २७ या २६ प्रकृतियोंका प्रवेशक होता है मात्र उसीके अवस्थित पदका जघन्य काल एक समय कहना चाहिए। इसी प्रकार जो अनुदिशादिकका उपशम सम्यग्दृष्टि देव वेदक सम्यक्त्वको प्राप्त हो प्रथम समयमें २१से २२ प्रकृतियोंका प्रवेशक होता है और दूसरे समयमें २४ प्रवेशस्थानको प्राप्त करता है उसके भुजगारप्रवेशकका उत्कृष्ट काल दो समय कहना चाहिए। इनमें अवस्थित पदका जघन्य काल एक समय स्पष्ट ही है जो उपशमश्रेणिसे मर कर देव होने पर प्राप्त होता है।

§ २७०. अन्तरानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे भुजगार और अल्पतरप्रवेशकका जघन्य अन्तर एक समय और अन्तर्मुहूर्त है। अथवा अल्पतरप्रवेशकका भी जघन्य अन्तर एक समय है। इस अर्थकी आगे भी यथासम्भव योजना करनी चाहिए। तथा उत्कृष्ट अन्तर उपार्ध पुद्गल परिवर्तनप्रमाण है। अवस्थितप्रवेशकका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अवक्तव्यप्रवेशकका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर उपार्ध पुद्गल परिवर्तनप्रमाण है।

विशेषार्थ—अनन्तानुबन्धीका वियोजक कोई उपशम सम्यग्दृष्टि जीव उपशम सम्यक्त्वके कालमें तीन समय शेष रहने पर सासादनभावको प्राप्त हो २२ प्रकृतियोंका प्रवेशक हुआ। तथा दूसरे समयमें शेष अनन्तानुबन्धीत्रिकके उदयावलिमें प्रवेश करने पर २५ प्रकृतियोंका प्रवेशक हुआ। इसके बाद वह तीसरे समयमें पच्चीस प्रकृतियोंका ही प्रवेशक बना रहा और तदनन्तर समयमें मिथ्यात्वमें जाकर वह २६ प्रकृतियोंका प्रवेशक हो गया। इस प्रकार भुजगार प्रवेशकका जघन्य अन्तर एक समय प्राप्त हुआ। कोई छब्बीस प्रकृतियोंका प्रवेशक मिथ्यादृष्टि जीव उपशम सम्यक्त्वको प्राप्त कर पच्चीस प्रकृतियोंका प्रवेशक हुआ, उसके बाद वह अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी विसंयोजना कर इक्कीस प्रकृतियोंका प्रवेशक हो गया इस प्रकार अल्पतर प्रवेशकका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त प्राप्त हुआ। अल्पतर प्रवेशकका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त उपशमश्रेणि और क्षपणामें भी प्राप्त किया जा सकता है सो जान कर घटित कर लेना चाहिए। ओघ प्ररूपणामें यद्यपि इसकी मुख्यता है। फिर भी चारों

§ ३७१. आदेसेण णेरइय० भुज०-अप्प० जह० एयस० अंतोमु०, उक्क० तेत्तीसं सागरो० देसूणाणि । अवट्ठि० जह० एयस०, उक्क० चत्तारि समया । एवं सव्वणेरइय० । णवरि सगट्ठिदी देसूणा । तिरिक्खेसु भुज०–अप्प० ओघं । अवट्ठि० णारयभंगो । एवं पंचि०तिरिक्खतिए । णवरि सगट्ठिदी देसूणा । पंचि०तिरि०-अपज्ज०-मणुसअपज्ज० अप्प० णत्थि अंतरं । अवट्ठि० जहण्णु० एयस० । मणुसतिए पंचि०तिरिक्खभंगो । णवरि अवट्ठि० जह० एयस०, उक्क० अंतोमु० । अवत्त० जह० अंतोमु०, उक्क० पुव्वकोडिपुध० ।

गतियोंमें अल्पतर पदके जघन्य अन्तरका प्रकार बतलानेके लिए हमने प्रथम उदाहरण लिपिबद्ध किया है । अथवा अल्पतर पदका जघन्य अन्तर एक समय जो टीकामें कहा है वह जो उपशम सम्यक्त्वको प्राप्त करनेके दो समय पूर्व सम्यक्त्वकी उद्वेलना कर लेता है उसकी अपेक्षा प्राप्त होता है। [illegible] उपार्ध पुद्गलपरिवर्तनप्रमाण है यह स्पष्ट ही है। जो अवस्थितप्रवेशक जीव एक समय तक भुजगार या अल्पतरप्रवेशक हो एक समयके अन्तरसे पुनः अवस्थितप्रवेशक हो जाता है उसके अवस्थितप्रवेशकका जघन्य अन्तर एक समय प्राप्त होता है । तथा जो एक प्रकृतिक प्रवेशक सर्वोपशामना करके अन्तर्मुहूर्त तक अप्रवेशक बना रहता है। पुनः उपशमश्रेणिसे उतरते हुए प्रथम समयमें अवक्तव्यप्रवेशक हो और दूसरे समयमें भुजगार प्रवेशक हो अवस्थितप्रवेशक हो जाता है उसके अवस्थितप्रवेशकका उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त प्राप्त होता है। अन्तर्मुहूर्तके अन्तरसे दो बार उपशमश्रेणि पर चढ़ानेसे अवक्तव्य प्रवेशकका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त प्राप्त होता है और उपार्धपुद्गलपरिवर्तनके अन्तरसे चढ़ाने पर उत्कृष्ट अन्तर उपार्धपुद्गलपरिवर्तनप्रमाण प्राप्त होता है। यह ओघकी अपेक्षा सब पदोंके अन्तरकालका खुलासा है। आदेशसे अपनी अपनी विशेषताको समझ कर इसे घटित करना चाहिए। जो विशेष वक्तव्य होगा मात्र उतनेका निर्देश करेंगे ।

§ ३७१. आदेशसे नारकियोंमें भुजगार अल्पतरप्रवेशकोंका जघन्य अन्तर एक समय और अन्तर्मुहूर्त है और दोनोंका उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तेतीस सागर है। अवस्थितप्रवेशकका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर चार समय है। इसी प्रकार सब नारकियोंमें जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि कुछ कम अपनी अपनी स्थितिप्रमाण है। तिर्यञ्चोंमें भुजगार और अल्पतरप्रवेशकका अन्तरकाल ओघके समान है। अवस्थित प्रवेशकका अन्तरकाल नारकियोंके समान है। इसी प्रकार पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकमें जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि कुछ कम अपनी-अपनी स्थिति कहनी चाहिए। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्तकोंमें अल्पतरप्रवेशकका अन्तरकाल नहीं है। अवस्थितप्रवेशकका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर एक समय है। मनुष्यत्रिकमें पंचेन्द्रिय तिर्यञ्चोंके समान भंग है। किन्तु इतनी विशेषता है कि अवस्थितप्रवेशकका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अवक्तव्यप्रवेशकका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर पूर्वकोटि पृथक्त्वप्रमाण है।

विशेषार्थ—नारकियोंमें अवस्थितप्रवेशकका उत्कृष्ट काल तेतीस सागर बतला आये हैं, इसलिए यहाँ भुजगार और अल्पतरप्रवेशकका उक्त कालप्रमाण उत्कृष्ट अन्तर बन जाता है। तथा इनमें पहले भुजगारप्रवेशकका उत्कृष्ट काल चार समय बतला आये हैं, इसलिए

§ २७२. देवेसु भुज०-अप्प० जह० एयस० अंतोमु०, उक्क० एकत्तीसं सागरो० देसूणाणि। अवट्ठि० जह० एयस०, उक्क० चत्तारि समया। एवं भवणादि जाव णवगेवज्जा त्ति। णवरि सगट्ठिदी देसूणा। अणुदिसादि सव्वट्ठा त्ति भुज० जहण्णु० अंतोमु०। अप्प० णत्थि अंतरं। अवट्ठि० जह० एयस०, उक्क० बे समया। एवं जाव०।

यहाँ अवस्थितप्रवेशकका उत्कृष्ट अन्तर चार समय बन जाता है। सब नारकियोंमें यह अन्तर काल इसी प्रकार घटित कर लेना चाहिए। मात्र प्रत्येक नरककी अलग-अलग भवस्थिति होनेसे उसे ध्यानमें रख कर भुजगार और अल्पतरप्रवेशकका उत्कृष्ट अन्तर कहना चाहिए। तिर्यञ्चोंमें कायस्थिति अनन्त काल है। इसलिए इनमें भुजगार और अल्पतरप्रवेशकका उत्कृष्ट अन्तर उपार्ध पुद्गल परिवर्तनप्रमाण घटित होनेमें कोई बाधा नहीं आती। यही कारण है कि इनमें उक्त दोनों पदोंकी अपेक्षा अन्तर कालको ओघके समान जाननेकी सूचना की है। तथा अवस्थितप्रवेशकका अन्तरकाल नारकियोंके समान बन जानेसे उनके समान जाननेकी सूचना की है। यही बात पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकमें जाननी चाहिए। मात्र इनकी कायस्थिति पूर्वकोटि[illegible] तीन पल्य है, इसलिए इनमें भुजगार और अल्पतरप्रवेशकका उत्कृष्ट अन्तर अपनी कायस्थितिप्रमाण जाननेकी सूचना की है। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्तकोंमें अपनी-अपनी कायस्थितिके भीतर दो बार अल्पतरपद सम्भव नहीं है, इसलिए इनके अन्तरकालका निषेध किया है। किन्तु जिसके इनकी कायस्थितिके भीतर सम्यक्त्व या सम्यग्मिथ्यात्वकी उद्वेलना होकर एक समय तक अल्पतर पद होता है उसके अवस्थित प्रवेशकका अन्तरकाल एक समय देखा जाता है, इसलिए इनमें अवस्थितप्रवेशकका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर एक समय कहा है। मनुष्यत्रिकमें अन्य सब भंग पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चोंके समान है यह तो स्पष्ट ही है। मात्र इनमें उपशमश्रेणिकी प्राप्ति सम्भव होनेसे अवस्थित प्रवेशकका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त तथा अवक्तव्य प्रवेशकका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट अन्तर पूर्वकोटि पृथक्त्वप्रमाण बन जानेसे उसे अलगसे कहा है।

पुस्तक : अधिकारी श्री ... सागर जी महाराज

§ २७२. देवोंमें भुजगार और अल्पतरप्रवेशकका जघन्य अन्तर एक समय और अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम इकतीस सागर है। अवस्थितप्रवेशकका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर चार समय है। इसी प्रकार भवनवासियोंसे लेकर नौ ग्रैवेयकों तकके देवोंमें जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि कुछ कम अपनी अपनी स्थिति कहनी चाहिए। अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें भुजगारप्रवेशकका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अल्पतरप्रवेशकका अन्तरकाल नहीं है। अवस्थित प्रवेशकका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर दो समय है। इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

विशेषार्थ— देवोंमें जो २८ प्रकृतियोंके प्रवेशक मिथ्यादृष्टि हैं उनकी अपेक्षा ही भुजगार और अल्पतरप्रवेशकका उत्कृष्ट अन्तर प्राप्त हो सकता है, इसलिए यह तत्प्रमाण कहा है। मात्र भवनवासी आदि नौ ग्रैवेयक तकके देवोंमें भवस्थिति अलग-अलग है, इसलिए उस उस निकायके देवोंमें अपनी अपनी भवस्थितिको ध्यानमें रख कर भुजगार और अल्पतर प्रवेशकका उत्कृष्ट अन्तर लाना चाहिए। अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें जो

§ ३७३. णाणाजीवेहि भंगविचयाणुगमेण दुविहो णिद्देसो—ओघेण आदेसेण य। ओघेण अवट्ठि० सव्वजीव० णिय० अत्थि, सेसपदा भयणिज्जा। एवं चदुसु गदीसु। णवरि पंचि०तिरिक्खअपज्ज० अवट्ठि णिय० अत्थि, सिया एदे च अप्प० विहत्तिओ च, सिया एदे च अप्पदरविहत्तिया च। मणुसअपज्ज० अप्प०-अवट्ठि० भयणिज्जा। एवं जाव०।

§ ३७४. भागाभागाणु० दुविहो णि०—ओघेण आदेसेण य। ओघेण अवट्ठि० सव्वजी० के०? अणंता भागा। सेसमणंतभागो। एवं तिरिक्खा०। आदेसेण णेरइय० अवट्ठि० सव्वजी० असंखेज्जा भागा। सेसमसंखे०भागो। एवं सव्वणेरय०—सव्वपंचिंदियतिरिक्ख-मणुस-मणुसअपज्ज०-देव-भवणादि जाव अवराजिदा त्ति। मणुसपज्ज०-मणुसिणी०-सव्व० अवट्ठि० संखेज्जा भागा। सेसं संखे०भागो। एवं जाव०

§ ३७५. परिमाणाणु० दुविहो णि०—ओघेण आदेसे०। ओघेण भुज०-अप्प०

उपशान्तकषायसे मरकर प्रथम समयमें ६ का प्रवेशक और दूसरे समयमें २१ का प्रवेशक होकर भुजगार हो गया अतः अन्तर्मुहूर्त पश्चात् उसने वेदकसम्यक्त्व प्राप्त करते समय प्रथम समयमें २२ प्रकृतिक प्रवेशस्थान और दूसरे समयमें २४ प्रकृतिक प्रवेशस्थान प्राप्त किया। इस प्रकार इन देवोंमें भुजगारप्रवेशकका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त प्राप्त होनेसे वह तत्प्रमाण कहा है। अल्पतरका अन्तर नहीं है, क्योंकि यहाँ पर या तो २२ से २१ वालेके या २८ से २४ वालेके एक बार अल्पतर होता है। पहले इनमें भुजगारप्रवेशकका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल दो समय बतला आये हैं, इसलिए उसे ध्यानमें रख कर यहाँ पर अवस्थितप्रवेशकका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर दो समय कहा है। शेष कथन सुगम है।

§ ३७३. नाना जीवोंकी अपेक्षा भंगविचयानुगमसे निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे अवस्थितप्रवेशक सब जीव नियमसे हैं। शेष पद भजनीय हैं। इसप्रकार चारों गतियोंमें जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त जीवोंमें अवस्थितप्रवेशक जीव नियमसे हैं। कदाचित् ये हैं और एक अल्पतरप्रवेशक जीव है। कदाचित् ये हैं और नाना अल्पतरप्रवेशक जीव हैं। मनुष्य अपर्याप्तकोंमें अल्पतर और अवस्थितप्रवेशक जीव भजनीय हैं। इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

§ ३७४. भागाभागानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे अवस्थितप्रवेशक जीव सब जीवोंके कितने भागप्रमाण हैं। अनन्त बहुभागप्रमाण हैं। शेष पदोंके प्रवेशक जीव अनन्तवें भागप्रमाण हैं। इसीप्रकार तिर्यञ्चोंमें जानना चाहिए। आदेशसे नारकियोंमें अवस्थितप्रवेशक जीव सब जीवोंके असंख्यात बहुतभागप्रमाण हैं। शेष पदोंके प्रवेशक जीव असंख्यातवें भागप्रमाण हैं। इसी प्रकार सब नारकी, सब पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च, सामान्य मनुष्य, मनुष्य अपर्याप्त, सामान्य देव और अपराजित विमान तकके देवोंमें जानना चाहिए। मनुष्य पर्याप्त, मनुष्यिनी और सर्वार्थसिद्धिके देवोंमें अवस्थितप्रवेशक जीव सब जीवोंके संख्यात बहुभागप्रमाण हैं। शेष पदोंके प्रवेशक जीव संख्यातवें भागप्रमाण हैं। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

§ ३७५ परिमाणानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे

के० ? असंखेज्जा । अवट्ठि० केत्ति० ? अणंता । अवत्त० केत्ति० ? संखेज्जा । एवं तिरिक्खा० । णवरि अवत्त० णत्थि । सव्वणिरय०-सव्वपंचि०तिरिक्ख-मणुसअपज्ज०-देवा भवणादि जाव णवगेवज्जा त्ति सव्वपदा असंखेज्जा । मणुसेसु अप्प०-अवट्ठि० केत्ति० ? असंखेज्जा । भुज०-अवत्त० केत्ति० ? संखेज्जा । मणुसपज्ज०-मणुसिणी०-सव्वट्ठ० सव्वपदा संखेज्जा । अणुद्दिसादि अवराइदा त्ति अप्प०-अवट्ठि० केत्ति० । असंखेज्जा । भुज० केत्ति० ? संखेज्जा । एवं जाव० ।

आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

§ ३७६. खेत्ताणु० दुविहो णि०—ओघेण आदेसे० । ओघेण अवट्ठि० केवडि० खेत्ते ? सव्वलोगे । सेसपदा० लोग० असंखे०भागे । एवं तिरिक्खा० । सेसगदीसु सव्वपदा० लोग० असंखे०भागे । एवं जाव० ।

§ ३७७. फोसणाणु० दुविहो णि०—ओघेण आदेसे० । ओघेण भुज० लोग० असंखे०भागो अट्ठ-बारहचोद्दस० देसूणा । अप्प० लोग० असंखे०भागो अट्ठचोद्दस०

भुजगार और अल्पतरप्रवेशक जीव कितने हैं ? असंख्यात हैं । अवस्थितप्रवेशक जीव कितने हैं ? अनन्त हैं । अवक्तव्यप्रवेशक जीव कितने हैं ? संख्यात हैं । इसी प्रकार तिर्यञ्चोंमें जानना चाहिए । किन्तु इतनी विशेषता है कि इनमें अवक्तव्यप्रवेशक जीव नहीं हैं । सब नारकी, सब पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च, मनुष्य अपर्याप्त, सामान्य देव और भवनवासियोंसे लेकर नौ ग्रैवेयक तकके देवोंमें सब पदोंके प्रवेशक जीव असंख्यात हैं । मनुष्योंमें अल्पतर और अवस्थितप्रवेशक जीव कितने हैं ? असंख्यात हैं । भुजगार और अवक्तव्यप्रवेशक जीव कितने हैं ? संख्यात हैं । मनुष्य पर्याप्त, मनुष्यिनी और सर्वार्थसिद्धिके देवोंमें सब पदोंके प्रवेशक जीव संख्यात हैं । अनुदिशसे लेकर अपराजित तकके देवोंमें अल्पतर और अवस्थितप्रवेशक जीव कितने हैं ? असंख्यात हैं । भुजगारप्रवेशक जीव कितने हैं ? संख्यात हैं । इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए ।

§ ३७६. क्षेत्रानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे अवस्थितप्रवेशक जीवोंका कितना क्षेत्र है ? सर्व लोकप्रमाण क्षेत्र है । शेष पदोंके प्रवेशक जीवोंका लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्र है । इसीप्रकार सामान्य तिर्यञ्चोंमें जानना चाहिए । शेष गतियोंमें सब पदोंके प्रवेशक जीवोंका लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्र है । इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए ।

विशेषार्थ—ओघसे अवस्थितप्रवेशकोंमें २६ प्रकृतियोंके प्रवेशकोंकी मुख्यता है और इनका क्षेत्र सर्व लोकप्रमाण पहले बतला आये हैं, इसलिए यहाँ पर अवस्थितप्रवेशकोंका क्षेत्र सर्व लोकप्रमाण कहा है । शेष पदोंके प्रवेशकोंका क्षेत्र लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण है यह स्पष्ट ही है । यह प्ररूपणा सामान्य तिर्यञ्चोंमें बन जाती है, इसलिए उनमें ओघके समान जाननेकी सूचना की है । शेष मार्गणाओंका क्षेत्र लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण होनेसे उनमें सब पदोंके प्रवेशकोंका लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्र कहा है ।

§ ३७७. स्पर्शनानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे भुजगारप्रवेशक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण तथा त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ और कुछ कम बारह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है । अल्पतरप्रवेशक

दे० सव्वलोगो वा। अवट्ठि० सव्वलोगो। अवत्त० लोग० असंखे०भागो।

§ ३७८. आदेसेण णेरइय० अप्प०-अवट्ठि० लोग० असंखेज्ज० छचोद्दस०। भुज० लोग० असंखे०भागो पंचचोद्द० देसूणा। पढमाए खेत्तं। बिदियादि सत्तमा त्ति सव्वपदाणं सगपोसणं। णवरि सत्तमाए भुज० खेत्तभंगो। तिरिक्खेसु भुज० लोग० असंखे०-भागो सत्तचोद्दस० देसूणा। अप्प० लोग० असंखे०भागो सव्वलोगो वा। अवट्ठि० सव्वलोगो। एवं पंचिंदियतिरिक्खतिय०। णवरि अवट्ठि० लोग० असंखे०भागो सव्वलोगो वा। पंचिं०तिरि०अपज्ज०-मणुसअपज्ज० अप्प०अवट्ठि० लोग० असंखे०भागो

जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण, त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ भागप्रमाण और सर्वलोक प्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अवस्थितप्रवेशकोंने सर्व लोकप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अवक्तव्यप्रवेशकोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया।

विशेषार्थ—जो गुणस्थान प्रतिपन्न जीव यथायोग्य अधस्तन गुणस्थानोंको प्राप्त होते हैं उनके भुजगारपद होता है ऐसे जीव सम्यग्दृष्टि और सासादनसम्यग्दृष्टि गुणस्थानोंको भी प्राप्त होते हैं, यही देख कर यहाँ पर ओघसे भुजगारप्रवेशकोंका स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ और कुछ कम बारह भागप्रमाण कहा है। जो जीव मिथ्यात्वादि गुणस्थानोंसे ऊपरके गुणस्थानोंमें जाते हैं वे तो अल्पतरप्रवेशक होते ही हैं। साथ ही जो मिथ्यादृष्टि सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी उद्वेलना करते हैं वे भी अल्पतरप्रवेशक होते हैं। यही मात्र इनमें सासादन जीव नहीं होते। यही देख कर यहाँ अल्पतरप्रवेशकोंका लोकके असंख्यातवें भाग, त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ भाग और सर्वलोक प्रमाण क्षेत्र कहा है। इतना अवश्य है कि यहाँ पर सर्व लोकप्रमाण स्पर्शन उन जीवोंके कहना चाहिए जो २८ प्रकृतियोंमेंसे सम्यक्त्वकी उद्वेलना होने पर २७ प्रकृतियोंमें और २७ प्रकृतियोंमेंसे सम्यग्मिथ्यात्वकी उद्वेलना होने पर २६ प्रकृतियोंमें प्रवेश कर अल्पतरप्रवेशक होते हैं। अवस्थितप्रवेशकोंका स्पर्शन सर्व लोकप्रमाण तथा अवक्तव्यप्रवेशकोंका स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण है वह स्पष्ट ही है। इसी प्रकार आगेके स्थानोंमें स्पर्शनका विचार कर लेना चाहिए। विशेष वक्तव्य न होनेसे हम पृथक् पृथक् खुलासा नहीं करेंगे।

§ ३७८. आदेशसे नारकियोंमें अल्पतर और अवस्थितप्रवेशकोंने लोकके असंख्यातवें भाग और त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम छह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। भुजगारप्रवेशकोंने लोकके असंख्यातवें भाग और त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम पाँच भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। पहली पृथिवीका क्षेत्रके समान स्पर्शन है। दूसरीसे लेकर सातवीं पृथिवी तकके नारकियोंमें सब पदोंकी अपेक्षा अपना अपना स्पर्शन जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि सप्तम पृथिवीमें भुजगारका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। तिर्यञ्चोंमें भुजगारप्रवेशकोंने लोकके असंख्यातवें भाग और त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम सात भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अल्पतरप्रवेशकोंने लोकके असंख्यातवें भाग और सर्व लोकप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अवस्थितप्रवेशकोंने सर्व लोकप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। इसीप्रकार पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकमें जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि इनमें अवस्थितप्रवेशकोंने लोकके असंख्यातवें भाग और सर्व लोकप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्तकोंमें अल्पतर और अवस्थित

सव्वलोगो वा । मणुसतिए पंचिंदियतिरिक्खभंगो । णवरि अवत्त० खेत्तं । देवा० भवणादि जाव अच्चुदा त्ति सव्वपदाणं सगफोसणं । उवरि खेत्तं । एवं० जाव० ।

§ ३७९. कालाणु० दुविहो णि०—ओघेण आदेसे० । ओघेण भुज०-अप्प० जह० एयस०, उक्क० आवलि० असंखे०भागो । अवट्ठि० सव्वद्धा । अवत्त० जह० एयस०, उक्क० संखेज्जा समया । एवं सव्वणेरइय-तिरिक्ख-पंचिंदियतिरिक्खतिय-देवा भवणादि जाव णवगेवज्जा त्ति । णवरि अवत्त० णत्थि । पंचि०तिरिक्खअपज्ज० अप्प०-अवट्ठि० ओघं ।

§ ३८०. मणुसेसु भुज०-अवत्त० जह० एयस०, उक्क० संखेज्जा समया । अप्प०अवट्ठि० ओघं । एवमणुदिसादि जाव अवराजिदा त्ति । णवरि अवत्त० णत्थि । मणुसपज्ज०-मणुसिणी-सव्वट्ठ० अवट्ठि० [illegible] जह० एयस०, उक्क०

प्रवेशकोंने लोकके असंख्यातवें भाग और सर्व लोकप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है । मनुष्यत्रिकमें पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चोंके समान भंग है । किन्तु इतनी विशेषता है कि अवक्तव्यप्रवेशकोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है । सामान्य देव और भवनवासियोंसे लेकर अच्युत कल्प तकके देवोंमें सब पदोंकी अपेक्षा अपना अपना स्पर्शन जानना चाहिए । ऊपरके देवोंमें क्षेत्रके समान स्पर्शन है । इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए ।

§ ३७९. कालानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे भुजगार और अल्पतरप्रवेशकोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है । अवस्थितप्रवेशकोंका काल सर्वदा है । अवक्तव्यप्रवेशकोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल संख्यात समय है । इसीप्रकार सब नारकी, सामान्य तिर्यञ्च, पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिक और भवनवासियोंसे लेकर नौ ग्रैवेयक तकके देवोंमें जानना चाहिए । किन्तु इतनी विशेषता है कि इनमें अवक्तव्यपद नहीं है । पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंमें अल्पतर और अवस्थितप्रवेशकोंका काल ओघके समान है ।

विशेषार्थ—ओघसे भुजगारपद और अल्पतरपद एक समयतक हो और दूसरे समयमें न हो यह सम्भव है । तथा नाना जीव यदि निरन्तर इन पदोंको करें तो उस कालका योग आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण ही होगा, इसलिए ओघसे भुजगार और अल्पतर प्रवेशकोंका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण कहा है । अवस्थितप्रवेशकोंका काल सर्वदा है यह स्पष्ट ही है । अवक्तव्यप्रवेशक उपशमश्रेणिसे गिरनेवाले जीव होते हैं, इसलिए इनके प्रवेशकोंका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल संख्यात समय कहा है । यहाँ कही गई मार्गणाओंमें यह काल बन जाता है, इसलिए उनमें ओघके समान जाननेकी सूचना की है । मात्र इनमें उपशमश्रेणिकी प्राप्ति सम्भव न होनेसे अवक्तव्यपदका निषेध किया है ।

§ ३८०. मनुष्योंमें भुजगार और अवक्तव्यप्रवेशकोंका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल संख्यात समय है । अल्पतर और अवस्थितप्रवेशकोंका काल ओघके समान है । इसीप्रकार अनुदिशसे लेकर अपराजित विमान तकके देवोंमें जानना चाहिए । किन्तु इतनी विशेषता है कि इनमें अवक्तव्यपद नहीं है । मनुष्यपर्याप्त, मनुष्यिनी और सर्वार्थसिद्धिके देवोंमें अवस्थितप्रवेशकोंका काल सर्वदा है । शेष पदोंके प्रवेशकोंका जघन्य काल एक समय

संखेज्जा समया। मणुसअपज्ज० अप्प० ओघं। अवट्ठि० जह० एगस०, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो। एवं जाव०।

§ ३८१. अंतराणु० दुविहो णि०—ओघेण आदेसेण य। ओघेण भुज०-अप्प० जह० एयस०, उक्क० सत्त रादिंदियाणि। अवट्ठि० णत्थि अंतरं। अवत्त० जह० एयस०, उक्क० वासपुधत्तं। एवं मणुसतिए। एवं सव्वणिरय-तिरिक्ख-पंचिं०तिरिक्खतिय-देवा भवणादि जाव णवगेवज्जा त्ति। णवरि अवत्त० णत्थि।

§ ३८२. पंचिंदियतिरिक्खअपज्ज० अप्प० जह० एयस०, उक्क० चउवीस-महोरत्ते सादिरेगे। अवट्ठि० णत्थि अंतरं। मणुसअपज्ज० अप्प०-अवट्ठि० जह० एयस०, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो। अणुद्दिसादि सव्वट्ठा त्ति अवट्ठि० णत्थि अंतरं। भुज०-अप्प० जह० एयसमओ, उक्क० वासपुधत्तं। सव्वट्ठे पलिदो० असंखे०-

---

है और उत्कृष्ट काल संख्यात समय है। मनुष्य अपर्याप्तकोंमें अल्पतरप्रवेशकोंका काल ओघके समान है। अवस्थितप्रवेशकोंका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

विशेषार्थ—सामान्य मनुष्योंमें अनुत्कृष्ट [illegible] मनुष्यत्रिकमें ही होते हैं, इसलिए इनकी अपेक्षा जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल संख्यात समय कहा है। शेष पद अपर्याप्त मनुष्योंमें भी सम्भव हैं, इसलिए इनमें उनका काल ओघके समान बन जानेसे वह तत्प्रमाण कहा है। शेष कथन सुगम है।

§ ३८१. अन्तरानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे भुजगार और अल्पतरप्रवेशकोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर सात दिन-रात है। अवस्थितप्रवेशकोंका अन्तर काल नहीं है। अवक्तव्यप्रवेशकोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर वर्षपृथक्त्वप्रमाण है। इसी प्रकार मनुष्यत्रिकमें जानना चाहिए। तथा इसीप्रकार सब नारकी, सामान्य तिर्यञ्च, पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिक सामान्य देव और भवनवासियोंसे लेकर नौ ग्रैवेयक तकके देवोंमें जानना चाहिए। मात्र इतनी विशेषता है कि इनमें अवक्तव्यपद नहीं है।

विशेषार्थ—यहाँ विशेष वक्तव्य इतना ही है कि उपशमसम्यक्त्वका उत्कृष्ट अन्तर सात दिन-रात बतलाया है। और उपशमसम्यक्त्वके अभावमें भुजगार तथा अल्पतरपद सम्भव नहीं, इसलिए यहाँ पर ओघसे और उल्लिखित मार्गणाओंमें उक्त पदोंका उत्कृष्ट अन्तर सात दिन-रात कहा है। यद्यपि क्षपणाके कालमें अल्पतरपद होते हैं पर उसकी अपेक्षा उत्कृष्ट अन्तर छह महीनासे कम नहीं है, इसलिए वह प्रकृतमें उपयोगी नहीं।

§ ३८२. पञ्चेन्द्रियतिर्यञ्चअपर्याप्त जीवोंमें अल्पतरप्रवेशकोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक चौबीस दिन-रात है। अवस्थितप्रवेशकोंका अन्तरकाल नहीं है। मनुष्य अपर्याप्तकोंमें अल्पतर और अवस्थितप्रवेशकोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें अवस्थितप्रवेशकोंका अन्तरकाल नहीं है। भुजगार और अल्पतरप्रवेशकोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर वर्षपृथक्त्वप्रमाण है। सर्वार्थसिद्धिमें उत्कृष्ट अन्तर

भागो। एवं जाव०।

§ ३८३. भावो सव्वत्थ ओदइओ भावो।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

§ ३८४. अप्पाबहुआणु० दुविहो णि०—ओघेण आदेसे०। ओघेण सव्वत्थोवा अवत्त०। अप्प० असंखे०गुणा। भुज०पवे० विसेसा०। अवट्ठि० अणंतगुणा।

§ ३८५. आदेसेण णेरइय० सव्वत्थोवा अप्प०पवे०। भुज०पवे० विसेसा०। अवट्ठि०पवे० असंखे०गुणा। एवं सव्वणिरय०-पंचिंदियतिरिक्खतिय३-देवा भवणादि जाव णवगेवज्जा त्ति। पंचिंदियतिरिक्खअपज्ज०-मणुसअपज्ज० सव्वत्थोवा अप्प०-पवे०। अवट्ठि०पवे० असंखे०गुणा।

§ ३८६. तिरिक्खेसु सव्वत्थोवा अप्प०पवे०। भुज०पवे० विसेसा०। अवट्ठि०-पवे० अणंतगुणा। मणुसेसु सव्वत्थोवा अवत्त०पवे०। भुज०पवे० संखे०गुणा। अप्प०-पवे० असंखे०गुणा। अवट्ठि०पवे० असंखे०गुणा। एवं मणुसपज्ज०-मणुसिणी०। णवरि संखेज्जगुणं कायव्वं। अणुद्दिसादि सव्वट्ठा त्ति सव्वत्थोवा भुज०पवे०। अप्प०-पवे० असंखे०गुणा। अवट्ठि०पवे० असंखे०गुणा। णवरि सव्वट्ठे संखेज्जगुणं कायव्वं। एवं जाव०।

पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

§ ३८३. भाव सर्वत्र औदयिक भाव है।

§ ३८४. अल्पबहुत्वानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे अवक्तव्यप्रवेशक जीव सबसे स्तोक हैं। उनसे अल्पतरप्रवेशक जीव असंख्यातगुणे हैं। उनसे भुजगारप्रवेशक जीव विशेष अधिक हैं। उनसे अवस्थितप्रवेशक जीव अनन्तगुणे हैं।

§ ३८५. आदेशसे नारकियोंमें अल्पतरप्रवेशक जीव सबसे स्तोक हैं। उनसे भुजगारप्रवेशक जीव विशेष अधिक हैं। उनसे अवस्थितप्रवेशक जीव असंख्यातगुणे हैं। इसीप्रकार सब नारकी, पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिक, सामान्य देव तथा भवनत्रिकसे लेकर नौ ग्रैवेयकतकके देवोंमें जानना चाहिए। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्तकोंमें अल्पतरप्रवेशक जीव सबसे स्तोक हैं। उनसे अवस्थितप्रवेशक जीव असंख्यातगुणे हैं।

§ ३८६. तिर्यञ्चोंमें अल्पतरप्रवेशक जीव सबसे स्तोक हैं। उनसे भुजगारप्रवेशक जीव विशेष अधिक हैं। उनसे अवस्थितप्रवेशक जीव अनन्तगुणे हैं। मनुष्योंमें अवक्तव्यप्रवेशक जीव सबसे स्तोक हैं। उनसे भुजगारप्रवेशक जीव संख्यातगुणे हैं। उनसे अल्पतरप्रवेशक जीव असंख्यातगुणे हैं। उनसे अवस्थितप्रवेशक जीव असंख्यातगुणे हैं। इसीप्रकार मनुष्य पर्याप्त और मनुष्यिनियोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनमें असंख्यातगुणेके स्थानमें संख्यातगुणा करना चाहिए। अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धितकके देवोंमें भुजगारप्रवेशक जीव सबसे स्तोक हैं। उनसे अल्पतरप्रवेशक जीव असंख्यातगुणे हैं। उनसे अवस्थितप्रवेशक जीव असंख्यातगुणे हैं। इतनी विशेषता है कि सर्वार्थसिद्धिमें असंख्यातगुणेके स्थानमें संख्यातगुणा करना चाहिए। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

§ ३८७. पदणिक्खेवे तत्थ इमाणि तिण्णि अणिओगद्दाराणि— समुक्कित्तणा० सामित्तमप्पाबहुअं च। समु० दुविहा—जह० उक्क०। उक्कस्से पयदं। दुविहो णि०—ओघेण आदेसे०। ओघेण अत्थि उक्क० वड्ढी हाणी अवट्ठाणं च। एवं चदुगदीसु। णवरि पंचिंदियतिरिक्खअपज्ज०-मणुसअपज्ज० अत्थि उक्क० हाणी अवट्ठाणं च। एवं जाव०। एवं जहण्णयं पि णेदव्वं।

§ ३८८. सामित्ताणु० दुविहो णि०—जह० उक्क०। उक्क० पयदं। दुविहो णि०—ओघेण आदेसेण य। ओघेण उक्क० वड्ढी कस्स? अण्णद० उवसमसेढिमारुहमाणो अंतरकरणं कादूण मदो देवो जादो तदो छप्पवेसिय इगिवीसपवेसगो जादो, तस्स विदियसमयदेवस्स उक्क० वड्ढी। उक्क० हाणी कस्स? अण्णद० उवसमसेढिमारुहमाणो एक्कावीसंपय०पवेसगो अंतरे कदे समयूणावलियमेत्तं गंतूण दोण्हं पवेसगो जादो, तस्स उक्क० हाणी। तस्सेव से काले उक्क० समवट्ठाणं।

§ ३८९. आदेसेण णेर० उक्क० वड्ढी कस्स? अण्णद० जो चउवीसं पवेसमाणो अट्ठावीसं पवेसेदि तस्स उक्क० वड्ढी। उक्क० हाणी कस्स? अण्णद० अट्ठावीसं पवेसेमाणेण अणंताणुबंधिचउक्के णासिदे तस्स उक्क० हाणी। एगदरत्थावट्ठाणं। एवं सव्वणेरइय०-तिरिक्ख०-पंचिंदियतिरिक्खतिय ३–देवा भवणादि जाव णवगेवज्जा त्ति।

---

§ ३८७. पदनिक्षेपका अधिकार है। उसमें ये तीन अधिकार हैं—समुत्कीर्तना, स्वामित्व और अल्पबहुत्व। समुत्कीर्तना दो प्रकारकी है—जघन्य और उत्कृष्ट। उत्कृष्टका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघकी अपेक्षा उत्कृष्ट वृद्धि, हानि और अवस्थान है। इसी प्रकार चारों गतियोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्तकोंमें उत्कृष्ट हानि और अवस्थान है। इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए। तथा इसी प्रकार जघन्य भी जानना चाहिए।

§ ३८८. स्वामित्वानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट। उत्कृष्टका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे उत्कृष्ट वृद्धिका स्वामी कौन है? जो अन्यतर उपशमश्रेणिपर आरोहण करनेवाला अन्तरकरण करके मरा और देव हो गया। उसके बाद छह प्रकृतियोंका प्रवेशक यह इक्कीस प्रकृतियोंका प्रवेशक हो गया। ऐसा वह द्वितीय समयवर्ती देव उत्कृष्ट वृद्धिका स्वामी है। उत्कृष्ट हानिका स्वामी कौन है? अन्यतर जो उपशमश्रेणिपर आरोहण करनेवाला इक्कीस प्रकृतियोंका प्रवेशक अन्तर करनेपर एक समय कम आवलिमात्र जाकर दोका प्रवेशक हो गया वह उत्कृष्ट हानिका स्वामी है। तथा वही अनन्तर समयमें उत्कृष्ट अवस्थानका स्वामी है।

§ ३८९. आदेशसे नारकियोंमें उत्कृष्ट वृद्धिका स्वामी कौन है? अन्यतर जो चौबीस प्रकृतियोंका प्रवेशक अट्ठाईस प्रकृतियोंका प्रवेशक होता है वह उत्कृष्ट वृद्धिका स्वामी है। उत्कृष्ट हानिका स्वामी कौन है? अन्यतर जो अट्ठाईस प्रकृतियोंका प्रवेशक है वह अनन्तानुबन्धीचतुष्कका नाश होनेपर उत्कृष्ट हानिका स्वामी है। इनमेंसे किसी एक स्थानमें उत्कृष्ट अवस्थानका स्वामी है। इसी प्रकार सब नारकी, सामान्य तिर्यञ्च, पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिक, सामान्य देव

अथवा आदेसे० णेरइय० उक्क० वड्ढी कस्स ? अण्णद० जो बावीसं पवेसेमाणो उवसमसम्मा० अट्ठावीसं पवेसेदि, तस्स उक्क० वड्ढी । तस्सेव से काले उक्क० अवट्ठाणं । एवं जाव० णवगेवज्जा त्ति अपज्जत्तवज्जं । पंचि०तिरि०अपज्ज०-मणुसअपज्ज० उक्क० हाणी कस्स ? अण्णद० जो अट्ठावीसं पवेसेमाणो सत्तावीसं पवेसेदि तस्स उक्क० हाणी । तस्सेव से काले उक्क० अवट्ठाणं ।

§ ३९०. मणुसतिए उक्क० वड्ढी कस्स ? अण्णद० उवसमसेढीदो ओदरमाणो बारस पवेसिय पुणो सत्तणोकसायाणं पवेसगो जादो, तस्स उक्क० वड्ढी । उक्क० हाणी अवट्ठाणं च ओघं । देवेसु उक्क० वड्ढी ओघं । तस्सेव से काले उक्क० अवट्ठाणं । उक्क० हाणी कस्स ? अण्णद० अट्ठावीसं पवेसेमाणो चउवीसपवे० जादो तस्स उक्क० हाणी । एवमणुदिसादि जाव सव्वट्ठा त्ति । एवं जाव० ।

§ ३९१. जह० पयदं । दुविहो णि०—ओघेण आदेसे० । ओघेण जह० वड्ढी कस्स ? अण्णद० पणुवीसं पवेसेमाणो छव्वीसपवेसगो जादो तस्स जह० वड्ढी । जह० हाणी कस्स ? अण्णद० अट्ठावीसं पवेसेमाणो सत्तावीसपवेसगो जादो तस्स जह० हाणी । तस्सेव से काले जह० अवट्ठाणं । एवं चदुगदीसु । णवरि पंचि०-तिरिक्खअपज्ज०-मणुसअपज्ज० जह० वड्ढी णत्थि । अणुदिसादि सव्वट्ठा त्ति जह०

आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

और भवनवासियोंसे लेकर नौ ग्रैवेयक तकके देवोंमें जानना चाहिए। अथवा आदेशसे नारकियोंमें उत्कृष्ट वृद्धिका स्वामी कौन है ? अन्यतर जो बाईस प्रकृतियोंका प्रवेशक उपशमसम्यग्दृष्टि जीव अट्ठाईस प्रकृतियोंका प्रवेशक होता है वह उत्कृष्ट वृद्धिका स्वामी है। वही अनन्तर समयमें उत्कृष्ट अवस्थानका स्वामी है। इसी प्रकार अपर्याप्तकोंको छोड़कर नौ ग्रैवेयक तक जानना चाहिए। पंचेन्द्रिय तिर्यंच अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्तकोंमें उत्कृष्ट हानिका स्वामी कौन है ? अन्यतर जो अट्ठाईस प्रकृतियोंका प्रवेशक जीव सत्ताईस प्रकृतियोंका प्रवेशक होता है वह उत्कृष्ट हानिका स्वामी है। तथा वही अनन्तर समयमें उत्कृष्ट अवस्थानका स्वामी है।

§ ३९०. मनुष्यत्रिकमें उत्कृष्ट वृद्धिका स्वामी कौन है ? अन्यतर उपशमश्रेणिसे उतरनेवाला जो बारह प्रकृतियोंका प्रवेश कर पुनः सात नोकषायोंका प्रवेशक हो गया वह उत्कृष्ट वृद्धिका स्वामी है। उत्कृष्ट हानि और उत्कृष्ट अवस्थानका स्वामित्व ओघके समान है। देवोंमें उत्कृष्ट वृद्धिका स्वामी ओघके समान है। तथा वही अनन्तर समयमें उत्कृष्ट अवस्थानका स्वामी है। उत्कृष्ट हानिका स्वामी कौन है ? अन्यतर जो अट्ठाईस प्रकृतियोंका प्रवेशक चौबीस प्रकृतियोंका प्रवेशक हो गया वह उत्कृष्ट हानिका स्वामी है। इसी प्रकार अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तक जानना चाहिए। इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक ले जाना चाहिए।

§ ३९१. जघन्यका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे जघन्य वृद्धिका स्वामी कौन है ? अन्यतर जो पच्चीस प्रकृतियोंका प्रवेशक छब्बीस प्रकृतियोंका प्रवेशक हो गया वह जघन्य वृद्धिका स्वामी है। जघन्य हानिका स्वामी कौन है ? अन्यतर जो अट्ठाईस प्रकृतियोंका प्रवेशक सत्ताईस प्रकृतियोंका प्रवेशक हो गया वह जघन्य हानिका स्वामी है। तथा वही अनन्तर समयमें जघन्य अवस्थानका स्वामी है। इसी प्रकार चारों गतियोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि पंचेन्द्रिय तिर्यंच अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्तकोंमें

वड्ढी कस्स ? अण्णद० एक्कावीसं पवेसेमाणो सम्मत्तं पवेसेदि तस्स जह० वड्ढी। जह० हाणी कस्स ? अण्णद० बावीसं पवेसेमाणेण सम्मत्तं खविदे तस्स जह० हाणी। तस्सेव से काले जह० अवट्ठाणं। एवं जाव०।

§ ३९२. अप्पाबहुअं दुविहं—जह० उक्क०। उक्कस्से पयदं। दुविहो णि०—ओघेण सव्वत्थोवा उक्क० वड्ढी। हाणी अवट्ठाणं च दो वि सरिसाणि विसे०। आदेसे० णेरइय० उक्कस्सवड्ढि-हाणि-अवट्ठाणाणि तिण्णि वि सरिसाणि। अथवा सव्वत्थो० उक्क० हाणी। उक्क० वड्ढी अवट्ठाणं च दो वि सरिसाणि विसेसा०। एवं सव्वणेरइय०-सव्वतिरिक्ख-देवा भवणादि जाव णवगेवज्जा त्ति। णवरि पंचि०तिरिक्खअपज्ज०-मणुसअपज्ज० उक्क० हाणी अवट्ठाणं च दो वि सरिसाणि। मणुसतिए सव्वत्थो० उक्क० वड्ढी। हाणी अवट्ठाणं च दो वि सरिसाणि संखेज्ज-गुणाणि। देवेसु सव्वत्थो० उक्क० हाणी। वड्ढी अवट्ठाणं च दो वि सरिसाणि संखे०-गुणाणि। एवमणुद्दिसादि सव्वट्ठा त्ति। एवं जाव०।

§ ३९३. जह० पयदं। दुविहो णिद्देसो—ओघेण आदेसे०। ओघेण जह० वड्ढी हाणी अवट्ठाणं च तिण्णि वि सरिसाणि। एवं चदुगदीसु। णवरि पंचि०

जघन्य वृद्धि नहीं है। अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें जघन्य वृद्धिका स्वामी कौन है ? अन्यतर जो इक्कीस प्रकृतियोंका प्रवेशक सम्यक्त्वका प्रवेशक होता है वह जघन्य वृद्धिका स्वामी है। जघन्य हानिका स्वामी कौन है ? अन्यतर जो बाईस प्रकृतियोंका प्रवेशक सम्यक्त्व प्रकृतिका क्षय करता है वह जघन्य हानिका स्वामी है। वहीं अनन्तर समयमें जघन्य अवस्थान का स्वामी है। इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक ले जाना चाहिए।

§ ३९२. अल्पबहुत्व दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट। उत्कृष्टका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे उत्कृष्ट वृद्धिके प्रवेशक सबसे स्तोक हैं। उत्कृष्ट हानि और अवस्थानके स्वामी दोनों ही परस्पर समान होकर विशेष अधिक हैं। आदेशसे नारकियोंमें उत्कृष्ट वृद्धि, हानि और अवस्थानके प्रवेशक तीनों ही समान हैं। अथवा उत्कृष्ट हानिके प्रवेशक सबसे स्तोक हैं। उत्कृष्ट वृद्धि और अवस्थानके प्रवेशक दोनों ही परस्पर समान होकर विशेष अधिक हैं। इसी प्रकार सब नारकी, सब तिर्यंच, सामान्य देव और भवनवासियोंसे लेकर नौ ग्रैवेयक तकके देवोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि पंचेन्द्रिय तिर्यंच अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्तकोंमें उत्कृष्ट हानि और अवस्थानके प्रवेशक दोनों ही समान हैं। मनुष्यत्रिकमें उत्कृष्ट वृद्धिके प्रवेशक सबसे स्तोक हैं। उनसे उत्कृष्ट हानि और अवस्थानके प्रवेशक दोनों ही परस्पर समान होकर संख्यातगुणे हैं। देवोंमें उत्कृष्ट हानिके प्रवेशक सबसे स्तोक हैं। उत्कृष्ट वृद्धि और अवस्थानके प्रवेशक दोनों ही परस्पर समान होकर संख्यातगुणे हैं। इसी प्रकार अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धिके देवों तक जानना चाहिए। इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक ले जाना चाहिए।

§ ३९३. जघन्यका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे जघन्य वृद्धि, हानि और अवस्थानके तीनों ही प्रवेशक परस्पर समान हैं। इसी प्रकार चारों गतियोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि पंचेन्द्रिय तिर्यंच अपर्याप्त और मनुष्य

तिरिक्खअपज्ज०-मणुसअपज्ज० जह० हाणी अवट्ठा० दो वि सरिसाणि । एवं जाव० ।

§ ३९४. वड्ढिपवेसगो त्ति तत्थ इमाणि तेरस अणियोगद्दाराणि—समुक्कित्तणा जाव अप्पाबहुए त्ति । समुक्कित्तणा० दुविहो णि०—ओघेण आदेसे० । ओघेण अत्थि संखे०भागवड्ढि-हाणि-संखे०गुणवड्ढि-हाणी-अवट्ठि०-अवत्त०पवेसगा । एवं मणुसतिए ।

§ ३९५. आदे० णेरइय० अत्थि संखे०भागवड्ढिहाणि-अवट्ठि०पवे० । एवं सव्वणिरय०-तिरिक्ख-पंचिं०तिरिक्खतिय ३-भवणादि जाव णवगेवज्जा त्ति । पंचिं०-तिरि०अपज्ज०-मणुसअपज्ज० अत्थि संखे०भागहा०-अवट्ठि० । देवेसु अत्थि संखे०भाग-वड्ढि-हाणि-संखे०गुणवड्ढि-अवट्ठि०पवे० । एवमणुदिसादि जाव सव्वट्ठा त्ति । एवं जाव० ।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

§ ३९६. सामित्ताणु० दुविहो णि०—ओघेण आदेसे० । ओघेण संखे०भाग-वड्ढि-हाणि-अवट्ठि० कस्स ? अण्णद० सम्माइट्ठि० मिच्छाइट्ठि० । संखे०गुणवड्ढि-हाणिए० कस्स ? अण्णद० सम्माइट्ठि० । अवत्त० भुजगारभंगो । एवं मणुसतिए । सव्वणेरइय-सव्वतिरिक्ख-मणुसअपज्ज०-भवणादि जाव णवगेवज्जा त्ति भुजगारभंगो । णवरि संखेज्जभागवड्ढि-हाणि-अवट्ठिदालावेण णेदव्वं । देवाणमोघं । णवरि संखे०गुण-

---

अपर्याप्तकोंमें जघन्य हानि और अवस्थानके प्रवेशक दोनों ही समान हैं । इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक ले जाना चाहिए ।

§ ३९४. वृद्धिप्रवेशकका अधिकार है । उसमें ये तेरह अनुयोगद्वार हैं—समुत्कीर्तनासे लेकर अल्पबहुत्व तक । समुत्कीर्तनाके अनुसार निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे संख्यात भागवृद्धि, संख्यात भागहानि, संख्यात गुणवृद्धि, संख्यात गुणहानि, अवस्थित और अवक्तव्य पदके प्रवेशक हैं । इसी प्रकार मनुष्यत्रिकमें जानना चाहिए ।

§ ३९५. आदेशसे नारकियोंमें संख्यात भागवृद्धि, संख्यात भागहानि और अवस्थित पदके प्रवेशक हैं । इसी प्रकार सब नारकी, सामान्य तिर्यञ्च, पंचेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिक और भवनवासियोंसे लेकर नौ ग्रैवेयक तकके देवोंमें जानना चाहिए । पंचेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्तकोंमें संख्यात भागहानि और अवस्थित पदके प्रवेशक हैं । देवोंमें संख्यात भागवृद्धि, संख्यात भागहानि, संख्यात गुणवृद्धि और अवस्थित पदके प्रवेशक हैं । इसी प्रकार अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें जानना चाहिए । इसीप्रकार अनाहारक मार्गणातक ले जाना चाहिए ।

§ ३९६. स्वामित्वानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे संख्यात भागवृद्धि, संख्यातभागहानि और अवस्थित पदका स्वामी कौन है ? अन्यतर सम्यग्दृष्टि और मिथ्यादृष्टि स्वामी है । संख्यातगुणवृद्धि और संख्यात गुणहानिका स्वामी कौन है ? अन्यतर सम्यग्दृष्टि स्वामी है । अवक्तव्य पदका भङ्ग भुजगारके समान है । इसी प्रकार मनुष्यत्रिकमें जानना चाहिए । सब नारकी, सब तिर्यञ्च, मनुष्य अपर्याप्त और भवनवासियोंसे लेकर नौ ग्रैवेयक तकके देवोंमें भुजगारके समान भंग है । इतनी विशेषता है कि इनमें संख्यात भागवृद्धि, संख्यात भागहानि और अवस्थित पदके आलापके साथ स्वामित्व ले जाना चाहिए । देवोंमें ओघके समान भंग है । इतनी विशेषता है कि इनमें संख्यातगुणहानि और अवक्तव्य पद

हाणि-अवत्त० णत्थि । अणुदिसादि सव्वट्ठा त्ति सव्वपदाणि कस्स ? अण्णद० एवं जाव० ।

§ ३९७. कालाणु० दुविहो णि०—ओघेण आदेसे० । ओघेण संखेज्जभागवड्ढि० जह० एयस०, उक्क० चत्तारि समया । संखे०भागहाणि-संखेज्जगुणहाणि-अवत्त० जहण्णु० एयस० । अथवा संखे०भागहाणि० उक्क० बे समया । संखे०गुणवड्ढि० जह० एयसमओ, उक्क० तिण्णि समया । अवट्ठि० भुज०भंगो ।

§ ३९८. आदेसेण सव्वणेरइय०-सव्वतिरिक्ख-मणुसअपज्ज० भवणादि जाव णवगेवज्जा त्ति भुजगारभंगो । मणुसतिए संखे०भागवड्ढि० जह० एयस०, उक्क० चत्तारि समया । संखे०भागहाणि-संखे०गुणवड्ढि-हाणि-अवत्त० जह० उक्क० एयस० । संखे०भागहा० उक्क० बेसमया वा । अवट्ठि० भुज०भंगो । देवाणं णारयभंगो । णवरि संखे०गुणवड्ढि० जह० उक्क० एयस० । अणुदिसादि सव्वट्ठा त्ति संखे०भागवड्ढि० जह० एयस०, उक्क० बेसमया । संखे०भागहा० संखे०गुणवड्ढि० जह० उक्क० एयस० ।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

नहीं हैं । अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें सब पदोंका स्वामी कौन है ? अन्यतर जीव स्वामी है । इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक ले जाना चाहिए ।

§ ३९७. कालानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे संख्यातभागवृद्धिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल चार समय है । संख्यात भागहानि, संख्यात गुणहानि और अवक्तव्य पदका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है । अथवा संख्यात भागहानिका उत्कृष्ट काल दो समय है । संख्यात गुणवृद्धिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल तीन समय है । अवस्थित पदका भंग भुजगारके समान है ।

विशेषार्थ—पहले भुजगारका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल चार समय बतला आये हैं उसी प्रकार यहाँ संख्यात भागवृद्धिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल चार समय घटित कर लेना चाहिए । पहले अल्पतर और अवक्तव्य पदका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय बतला आये हैं उसी प्रकार यहाँ संख्यातभागहानि, संख्यातगुणहानि और अवक्तव्यका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय घटित कर लेना चाहिए । वहाँ प्रकारान्तरसे अल्पतर पदका उत्कृष्ट काल दो समय बतला आये हैं वहीं यहाँ संख्यात भागहानिका उत्कृष्ट काल दो समय जानना चाहिए । शेष कथन सुगम है ।

§ ३९८. आदेशसे सब नारकी, सब तिर्यञ्च, मनुष्य अपर्याप्त और भवनवासियोंसे लेकर नौ ग्रैवेयक तकके देवोंमें भुजगारके समान भंग है । मनुष्यत्रिकमें संख्यातभागवृद्धिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल चार समय है । संख्यातभागहानि, संख्यातगुणवृद्धि, संख्यातगुणहानि और अवक्तव्य पदका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है । अथवा संख्यातभागहानिका उत्कृष्ट काल दो समय है । अवस्थित पदका भंग भुजगारके समान है । देवोंमें नारकियोंके समान भंग है । इतनी विशेषता है कि संख्यातगुणवृद्धिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है । अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धितकके देवोंमें संख्यात भागवृद्धिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल दो समय है । संख्यात भागहानि और संख्यात

अवट्ठिदं जह० एयसमओ, उक्क० सगट्ठिदी। एवं जाव०।

§ ३९९. अंतराणु दुविहो णि०—ओघेण आदेसे०। ओघेण संखे०भागवड्ढि-संखे०गुणवड्ढि० जह० एयस० संखे०भागहा०-संखे०गुणहा०-अवत्त० जह० अंतोमु०। अथवा संखे०भागहा० जह० एयस०। उक्क० सव्वेसिमुवड्ढपो० परियट्टं। अवट्ठि० जह० एयस०, उक्क० अंतोमु०।

§ ४००. आदेसेण सव्वणिरय०-सव्वतिरिक्ख-मणुसअपज्ज० भवणादि जाव णवगेवज्जा त्ति भुज०भंगो। मणुसतिए भुज०भंगो। णवरि संखे०गुणवड्ढि-हाणि-अवत्त० जह० अंतोमु०, उक्क० पुव्वकोडिपुधत्तं। देवगदिदेवा अणुद्दिसादि सव्वट्ठा त्ति भुज०भंगो। णवरि संखेगुणवड्ढि० णत्थि अंतरं। एवं जाव०।

§ ४०१. णाणाजीवेहि भंगविचयाणु० दुविहो णि०—ओघेण आदेसे०। ओघेण अवट्ठि० णियम० अत्थि। सेसपदा भयणिज्जा। भंगा २४३। एवं चदुगदीसु। णवरि भंगा जाणिय वत्तव्वा। मणुसअपज्ज० सव्वपदा भयणिज्जा। भंगा ८। एवं जाव०।

§ ४०२. भागाभागाणु० दुविहो णि०—ओघेण आदेसे०। ओघेण अवट्ठि० सव्वजी० केव० ? अणंता भागा। सेसमणंतभागो। एवं तिरिक्खा०। सव्वणेर०-

---

गुणवृद्धिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अवस्थित पदका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अपनी स्थितिप्रमाण है। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

§ ३९९. अन्तरानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे संख्यातभागवृद्धि और संख्यात गुणवृद्धिका जघन्य अन्तर एक समय है, संख्यात भागहानि, संख्यातगुणहानि और अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है अथवा संख्यात भागहानि-का जघन्य अन्तर एक समय है और सबका उत्कृष्ट अन्तर उपार्ध पुद्गल परिवर्तनप्रमाण है। अवस्थित पदका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है।

§ ४००. आदेशसे सब नारकी, सब तिर्यंच, मनुष्य अपर्याप्त और भवनवासियोंसे लेकर नौ ग्रैवेयक तकके देवोंमें भुजगारके समान भंग है। मनुष्यत्रिकमें भुजगारके समान भंग है। इतनी विशेषता है कि संख्यातगुणवृद्धि, संख्यातगुणहानि और अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर पूर्वकोटिपृथक्त्वप्रमाण है। देवगतिमें सामान्य देव तथा अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें भुजगारके समान भंग है। इतनी विशेषता है कि संख्यातगुणवृद्धिका अन्तरकाल नहीं है। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणातक जानना चाहिए।

§ ४०१. नाना जीवोंका अवलम्बन लेकर भंगविचयानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे अवस्थित पद नियमसे है, शेष पद भजनीय हैं। भंग २४३ हैं। इसीप्रकार चारों गतियोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि भंग जानकर कहने चाहिए। मनुष्य अपर्याप्तकोंमें सब पद भजनीय हैं। भंग आठ हैं। इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

§ ४०२. भागाभागानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे अवस्थित पदवाले जीव सब जीवोंके कितने भागप्रमाण हैं ? अनन्त बहुभागप्रमाण हैं।

सव्वपंचि०तिरिक्ख-मणुस-मणुसअपज्ज०-देवा भवणादि जाव अवराजिदा त्ति अवट्ठि० असंखेज्जा भागा। सेसमसंखे०भागो। मणुसपज्ज०-मणुसिणि०-सव्वट्ठदेवेसु अवट्ठि० संखेज्जा भागा। सेसं संखे०भागो। एवं जाव०।

§ ४०३. परिमाणाणु० दुविहो णि०—ओघेण आदेसे०। ओघेण संखे०भाग-वड्ढि-हाणि० केत्ति०? असंखेज्जा। अवट्ठि० केत्ति०? अणंता। संखे०गुणवड्ढि-हाणि-अवत्त० केत्ति०? संखेज्जा। सव्वणिर०-सव्वतिरिक्ख-मणुसअपज्ज०-भवणादि जाव णवगेवज्जा त्ति भुज०भंगो। मणुसेसु संखे०भागहा०-अवट्ठि० केत्ति०? असंखेज्जा। सेसपदा संखेज्जा। मणुसपज्ज०-मणुसिणी०सव्वट्ठदेवेसु सव्वपदा संखेज्जा। देवगदिदेवा अणुद्दिसादि अवराजिदा त्ति भुज०भंगो। णवरि संखे०गुण-वड्ढि० केत्ति०? संखेज्जा। एवं जाव०।

§ ४०४. खेत्ताणु० दुविहो णि०—ओघेण आदेसेण य। ओघेण अवट्ठि० सव्वलोगे। सेसपदा लोग० असंखे०भागे। एवं तिरिक्खा०। सेसगदीसु सव्वपदा लोग० असंखे०। एवं जाव०।

शेष पदवाले जीव सब जीवोंके अनन्तवें भागप्रमाण हैं। इसीप्रकार तिर्यञ्चोंमें जानना चाहिए। सब नारकी, सब पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च, सामान्य मनुष्य, मनुष्य अपर्याप्त, सामान्य देव और भवनवासियोंसे लेकर अपराजित कल्पतकके देवोंमें अवस्थित पदवाले जीव असंख्यात बहुभाग प्रमाण हैं तथा शेष पदवाले जीव असंख्यातवें भागप्रमाण हैं। मनुष्य पर्याप्त, मनुष्यिनी और सर्वार्थसिद्धिके देवोंमें अवस्थित पदवाले जीव संख्यात बहुभागप्रमाण हैं तथा शेष पदवाले जीव संख्यातवें भागप्रमाण हैं। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणातक जानना चाहिए।

§ ४०३. परिमाणानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे संख्यातभागवृद्धि और संख्यातभागहानि पदवाले जीव कितने हैं? असंख्यात हैं। अवस्थित पदवाले जीव कितने हैं? अनन्त हैं। संख्यातगुणवृद्धि, संख्यातगुणहानि और अवक्तव्य पदवाले जीव कितने हैं? संख्यात हैं। सब नारकी, सब तिर्यञ्च, मनुष्य अपर्याप्त और भवन-वासियोंसे लेकर नौ ग्रैवेयक तकके देवोंका भंग भुजगारके समान है। मनुष्योंमें संख्यात भागहानि और अवस्थित पदवाले जीव कितने हैं? असंख्यात हैं। शेष पदवाले जीव संख्यात हैं। मनुष्य पर्याप्त, मनुष्यिनी और सर्वार्थसिद्धिके देवोंमें सब पदवाले जीव कितने हैं? संख्यात हैं। देवगतिमें देव और नौ अनुदिशसे लेकर अपराजित तकके देवोंमें भंग भुजगारके समान है। इतनी विशेषता है कि संख्यात गुणवृद्धि पदवाले जीव कितने हैं? संख्यात हैं। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणातक जानना चाहिए।

§ ४०४. क्षेत्रानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे अवस्थित पदवाले जीवोंका कितना क्षेत्र है? सर्व लोक क्षेत्र है। शेष पदवाले जीवोंका क्षेत्र लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण है। इसीप्रकार तिर्यञ्चोंमें जानना चाहिए। शेष गतियोंमें सब पदवाले जीवोंका क्षेत्र लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण है। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

§ ४०५. पोसणाणु० दुविहो णि०—ओघे० आदेसे०। ओघेण संखे०भागवड्ढि० लोग० असंखे०भागो अट्ठ-बारहचोद्दस० देसूणा। संखेज्जभागहाणि० लोग० असंखे०भागो अट्ठचोद्दस० देसूणा सव्वलोगो वा। अवट्ठि० सव्वलोगो। सेसपदा लोग० असंखे०भागो। सव्वणिरय०-सव्वतिरिक्ख०-मणुसअपज्ज० भवणादि जाव णवगेवज्जा त्ति भुज०भंगो। मणुसतिए भुज०भंगो। णवरि संखे०गुणवड्ढि-हाणि० लोग० असंखे०भागो। देवगदिदेवा अणुद्दिसादि सव्वट्ठा त्ति भुज०भंगो। णवरि संखे०गुणवड्ढि० लोग० असंखे०भागो। एवं जाव०।

§ ४०६. कालाणु० दुविहो णि०—ओघेण आदेसे०। ओघे० संखे०भागवड्ढि-हाणि० जह० एयस०, उक्क० आवलि० असंखे०भागो। अवट्ठि० सव्वद्धा। सेसपद० जह० एयस०, उक्क० संखेज्जा समया। सव्वणिरय०-सव्वतिरिक्ख०-मणुसअपज्ज० भवणादि जाव णवगेवज्जा त्ति भुज०भंगो। मणुसतिए भुज०भंगो। णवरि संखे०गुणवड्ढि-हाणि० जह० एयस०, उक्क० संखेज्जा समया। देवगदिदेवा अणुदिसादि सव्वट्ठा त्ति भुज०भंगो। णवरि संखे०गुणवड्ढि० जह० एयस०, उक्क० संखेज्जा समया।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

§ ४०५. स्पर्शनानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे संख्यातभागवृद्धि पदवाले जीवोंने कितने क्षेत्रका स्पर्शन किया है? लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण तथा त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ और बारह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। संख्यात भागहानि पदवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण तथा त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ भागप्रमाण और सर्व लोकप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अवस्थित पदवाले जीवोंने सर्व लोकप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। शेष पदवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। सब नारकी, सब तिर्यञ्च, मनुष्य अपर्याप्त और भवनवासियोंसे लेकर नौ ग्रैवेयक तकके देवोंमें भुजगारके समान भंग है। मनुष्यत्रिकमें भुजगारके समान भंग है। इतनी विशेषता है कि संख्यातगुणवृद्धि और संख्यातगुणहानि पदवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। देवगतिमें सामान्य देव और अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धितकके देवोंमें भुजगारके समान भंग है। इतनी विशेषता है कि संख्यात गुणवृद्धि पदवाले देवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

§ ४०६. कालानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे संख्यातभागवृद्धि और संख्यातभागहानि पदका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है। अवस्थित पदका काल सर्वदा है। शेष पदोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल संख्यात समय है। सब नारकी, सब तिर्यञ्च, मनुष्य अपर्याप्त और भवनवासियोंसे लेकर नौ ग्रैवेयक तकके देवोंमें भुजगारके समान भंग है। मनुष्यत्रिकमें भुजगारके समान भंग है। इतनी विशेषता है कि संख्यात गुणवृद्धि और संख्यात गुणहानि पदका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल संख्यात समय है। देवगतिमें सामान्य देव तथा अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें भुजगारके समान भंग है। इतनी विशेषता है कि संख्यात गुणवृद्धि पदका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल संख्यात

एवं जाव० ।

§ ४०७. अंतराणु० दुविहो णि०—ओघेण आदेसे० । ओघेण संखेज्जभाग-वड्ढि०-हाणि० जह० एयस०, उक्क० सत्तरादिंदियाणि । अवट्ठिदाणि णत्थि अंतरं । संखे०गुणवड्ढि०-अवत्त० जह० एयस०, उक्क० वासपुधत्तं । संखे०गुणहाणि० जह० एयस०, उक्क० छम्मासा । एवं मणुसतिए । णवरि मणुसिणी० संखे०गुणहाणि० जह० एयसमओ, उक्क० वासपुधत्तं । सव्वणेरइय०-सव्वतिरिक्ख०-मणुसअपज्ज० भवणादि जाव णवगेवज्जा त्ति भुज०भंगो । देवगइदेवा अणुद्दिसादि सव्वट्ठा त्ति भुज०-भंगो । णवरि संखे०गुणवड्ढि० जह० एयस०, उक्क० वासपुधत्तं । णवरि सव्वट्ठे पलिदो० संख०भागो । एवं जाव० ।

§ ४०८. भावाणुगमेण सव्वत्थ ओदइओ भावो ।

§ ४०९. अप्पाबहुगाणु० दुविहो णि०—ओघेण आदेसे० । ओघेण सव्वत्थो० अवत्त०पवे० । संखे०गुणवड्ढिपवे० संखे०गुणा । संखे०गुणहाणिपवे० विसेसा० । संखे०भागहाणि० असंखे०गुणा । संखे०भागवड्ढि० विसेसा० । अवट्ठि० अणंतगुणा ।

§ ४१०. आदेसेण णेरइय० सव्वत्थो० संखे०भागहा० । संखे०भागवड्ढि०

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

समय है । इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए ।

§ ४०७. अन्तरानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे संख्यात भागवृद्धि और संख्यात भागहानिका जघन्य अन्तर काल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर सात दिन-रात है । अवस्थित पदका अन्तरकाल नहीं है । संख्यात गुणवृद्धि और अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर वर्षपृथक्त्वप्रमाण है । संख्यात गुणहानिपदका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर छह महीना है । इसीप्रकार मनुष्यत्रिकमें जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि मनुष्यिनियोंमें संख्यात गुणहानिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर वर्षपृथक्त्वप्रमाण है । सब नारकी, सब तिर्यञ्च मनुष्य अपर्याप्त और भवनवासियोंसे लेकर नौ ग्रैवेयकतकके देवोंमें भुजगारके समान भंग है । देवगतिमें सामान्य देव तथा अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें भुजगारके समान भंग है । इतनी विशेषता है कि संख्यात गुणवृद्धिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर वर्षपृथक्त्वप्रमाण है । इतनी विशेषता और है कि सर्वार्थसिद्धिमें पल्यके संख्यातवें भागप्रमाण है । इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए ।

§ ४०८. भावानुगमकी अपेक्षा सर्वत्र औदयिक भाव है ।

§ ४०९. अल्पबहुत्वानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे अवक्तव्य पदके प्रवेशक जीव सबसे स्तोक हैं । उनसे संख्यात गुणवृद्धि पदके प्रवेशक जीव संख्यातगुणे हैं । उनसे संख्यात गुणहानि पदके प्रवेशक जीव विशेष अधिक हैं । उनसे संख्यात भागहानि पदके प्रवेशक जीव असंख्यातगुणे हैं । उनसे संख्यात भागवृद्धि पदके प्रवेशक जीव विशेष अधिक हैं । उनसे अवस्थित पदके प्रवेशक जीव अनन्तगुणे हैं ।

§ ४१०. आदेशसे नारकियोंमें संख्यात भागहानि पदके प्रवेशक जीव सबसे थोड़े हैं ।

विसे०। अवट्ठि० असंखे०गुणा। एवं सव्वणेरइय०-पंचिंदियतिरिक्खतिय३-भवणादि जाव णवगेवज्जा त्ति। तिरिक्खेसु सव्वत्थो० संखे०भागहाणि०। संखे०भागवड्ढि० विसेसा०। अवट्ठि०पवे० अणंतगुणा। पंचिं०तिरिक्खअपज्ज०-मणुसअपज्ज० सव्वत्थो० संखे०भागहाणिपवे०। अवट्ठि०पवे० असंखे०गुणा।

§ ४११. मणुसेसु सव्वत्थो० अवत्त०पवे०। संखे०गुणवड्ढिपवे० संखे०गुणा। संखे०गुणहाणिपवे० विसेसा०। संखे०भागवड्ढिपवे० संखेज्जगुणा। संखे०भागहाणिपवे० असंखे०गुणा। अवट्ठि०पवे० असंखे०गुणा। एवं मणुसपज्ज०-मणुसिणी०। णवरि संखेज्जगुणं कादव्वं।

§ ४१२. देवेसु सव्वत्थो० संखे०गुणवड्ढिपवे०। संखे०भागहाणिपवे० असंखे०-गुणा। संखे०भागवड्ढिपवे० विसेसा०। अवट्ठि०पवे० असंखे०गुणा। अणुदिसादि सव्वट्ठा त्ति सव्वत्थोवा संखे०गुणवड्ढिपवे०। संखे०भागवड्ढिपवे० विसेसा०। संखे०-भागहा०पवे० असंखे०गुणा। अवट्ठि०पवे० असंखे०गुणा। णवरि सव्वट्ठे संखेज्जगुणं कायव्वं। एवं जाव०।

एवमेदेसु भुजगारादिअणियोगद्दारेसु विहासिदेसु तदो 'कदि च पविस्संति कस्स आवलियं' त्ति पदं समत्तं।

उनसे संख्यात भागवृद्धि पदके प्रवेशक जीव विशेष अधिक हैं। उनसे अवस्थित पदके प्रवेशक जीव असंख्यातगुणे हैं। इसीप्रकार सब नारकी, पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिक तथा भवनवासियोंसे लेकर नौ ग्रैवेयक तकके देवोंमें जानना चाहिए। तिर्यञ्चोंमें संख्यात भागहानि पदके प्रवेशक जीव सबसे स्तोक हैं। उनसे संख्यात भागवृद्धि पदके प्रवेशक जीव विशेष अधिक हैं। उनसे अवस्थित पदके प्रवेशक जीव अनन्तगुणे हैं। पंचेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्तकोंमें संख्यात भागहानि पदके प्रवेशक जीव सबसे स्तोक हैं। उनसे अवस्थित पदके प्रवेशक जीव असंख्यातगुणे हैं।

§ ४११. मनुष्योंमें अवक्तव्य पदके प्रवेशक जीव सबसे स्तोक हैं। उनसे संख्यात गुणवृद्धि पदके प्रवेशक जीव संख्यातगुणे हैं। उनसे संख्यात गुणहानि पदके प्रवेशक जीव विशेष अधिक हैं। उनसे संख्यात भागवृद्धि पदके प्रवेशक जीव संख्यातगुणे हैं। उनसे संख्यात भागहानि पदके प्रवेशक जीव असंख्यातगुणे हैं। उनसे अवस्थित पदके प्रवेशक जीव असंख्यातगुणे हैं। इसीप्रकार मनुष्य पर्याप्त और मनुष्यिनियोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि संख्यातगुणा करना चाहिए।

§ ४१२. देवोंमें संख्यात गुणवृद्धि पदके प्रवेशक जीव सबसे स्तोक हैं। उनसे संख्यात भागहानि पदके प्रवेशक जीव असंख्यातगुणे हैं। उनसे संख्यात भागवृद्धि पदके प्रवेशक जीव विशेष अधिक हैं। उनसे अवस्थित पदके प्रवेशक जीव असंख्यातगुणे हैं। अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें संख्यात गुणवृद्धि पदके प्रवेशक जीव सबसे स्तोक हैं। उनसे संख्यात भागवृद्धि पदके प्रवेशक जीव विशेष अधिक हैं। उनसे संख्यात भागहानि पदके प्रवेशक जीव असंख्यातगुणे हैं। उनसे अवस्थित पदके प्रवेशक जीव असंख्यातगुणे हैं। इतनी विशेषता है कि सर्वार्थसिद्धिमें संख्यातगुणा करना चाहिए। इस प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

इस प्रकार इन भुजगार आदि अनुयोगद्वारोंका व्याख्यान करने पर 'कदि च पविस्संति कस्स आवलियं' इस पदका व्याख्यान समाप्त हुआ।

❀ 'खेत्त-भव-काल-पोग्गल-ट्ठिदिविवागोदयखयो दु' त्ति एदस्स विहासा।

§ ४१३. एत्तो एदस्स गाहापच्छिमद्धस्स पत्तावसरा परूवणा कायव्वा त्ति पइण्णावक्कमेदं। संपहि एदस्स गाहापच्छद्धस्स समुदायत्थे अणवगये तव्विसया विहासा पयट्टदि त्ति तप्परूवणट्ठमुत्तरसुत्तमाह—

❀ कम्मोदयो खेत्त-भव-काल-पोग्गल ट्ठिदिविवागोदयक्खओ भवदि।

§ ४१४. कम्मेण उदयो कम्मोदयो। अपक्कपाचणाए विणा जहाकालजणिदो कम्माणं ट्ठिदिक्खएण जो विवागो सो कम्मोदयो त्ति भण्णदे। सो पुण खेत्त-भव-काल-पोग्गलट्ठिदिविवागोदयखयो त्ति एदस्स गाहापच्छद्धस्स समुदायत्थो भवदि। कुदो? खेत्त-भव-काल-पोग्गले अस्सिऊण जो ट्ठिदिक्खयो उदिण्णफलकम्मक्खंध-परिसडणलक्खणो सोदयो त्ति सुत्तत्थावलंबणादो। तदो कम्मोदओ 'दु' सद्देण सूचिदा-सेसविसेसपरूवणो [illegible] गाहापच्छिमद्धे [illegible] विहासियव्वो त्ति एसो एदस्स चुण्णिसुत्तस्स भावत्थो। सो च कम्मोदयो पयडि-ट्ठिदि-अणुभाग-पदेस-विसयत्तेण चउव्विहो। तत्थेह ताव पयडिउदएण पयदं, पयडिउदीरणाणंतरमेदस्स परूवणाजोगत्तादो। जइ एवं, कम्मोदयस्स अत्थविहासा किमट्ठमेत्थ सुत्तयारेण ण

❀ 'क्षेत्र, भव, काल और पुद्गलको निमित्त कर स्थितिविपाकसे उदयक्षय होता है' इसका विशेष व्याख्यान करना चाहिए।

§ ४१३. आगे इस गाथाके उत्तरार्धका अवसर प्राप्त कथन करना चाहिए इस प्रकार यह प्रतिज्ञावाक्य है। अब इस गाथाके उत्तरार्धका समुदायार्थ अवगत होने पर तद्विषयक विशेष व्याख्यान प्रवृत्त होता है, इसलिए उसका कथन करनेके लिए आगेका सूत्र कहते हैं—

❀ कर्मोंका उदय क्षेत्र, भव, काल और पुद्गलको निमित्त कर स्थितिविपाकसे उदयक्षयरूप होता है।

§ ४१४. कर्मरूपसे उदयका नाम कर्मोदय है। अपक्वपाचनके बिना कर्मोंका स्थितिक्षयसे जो यथा कालजनित विपाक होता है वह कर्मोदय कहा जाता है। परन्तु वह 'क्षेत्र, भव, काल और पुद्गलको निमित्त कर स्थितिविपाकसे उदयक्षयरूप है।' इस प्रकार गाथाके इस उत्तरार्धका समुदायार्थ है, क्योंकि क्षेत्र, भव, काल और पुद्गलका आश्रय कर उदीर्ण फल कर्म स्कन्धका परिशातन लक्षण जो स्थितिक्षय होता है वह उदय है, इस प्रकार सूत्रके अर्थका अवलम्बन लिया है। इसलिए गाथाके अन्तमें आये हुए 'तु' शब्दसे सूचित अशेष विशेषोंका कथन करनेरूप जो कर्मोदय गाथाके इस उत्तरार्धमें लीन है उसका इस समय व्याख्यान करना चाहिए इसप्रकार यह इस चूर्णिसूत्रका भावार्थ है। वह कर्मोदय प्रकृति, स्थिति, अनुभाग और प्रदेशको विषय करनेवाला होनेसे चार प्रकारका है। उनमेंसे यहाँ पर प्रकृति उदय प्रकृत है, क्योंकि प्रकृति उदीरणाके बाद यह प्ररूपणायोग्य है।

शंका—यदि ऐसा है तो यहाँ पर सूत्रकारने कर्मोदयकी अर्थविभाषा क्यों नहीं की?

कीरदि त्ति णासंकणिज्जं, उदीरणादो चेव कम्मोदयस्स वि गयत्थत्तादो। ण च उदयादो उदीरणा एयंतेण पुधभूदा अत्थि, उदयविसेसस्सेव उदीरणाववएसादो। तदो उदीरणाए परूविदाए एसो वि परूविदो चेव। जो च थोवयरो विसेसो एत्थ वि वक्खाणकारएहिं वक्खाणेयव्वो त्ति एदेणाहिप्पाएण कम्मोदयो एत्थ सुत्तयारेण ण वित्थारिदो। अत्थसमप्पणामेत्तं चेव कयं, तदो एदं चेव देसामासयवयणमस्सिदूण कम्मोदयो एत्थ विहासियव्वो। एवं कम्मोदए विहासिए पढमगाहाए अत्थो समत्तो होइ।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

❀ को कदमाए ट्ठिदीए पवेसगो त्ति पदस्स ट्ठिदिउदीरणा कायव्वा।

§ ४१५. पयडिउदीरणाणंतरमेत्तो ट्ठिदिउदीरणा कायव्वा, पत्तावसरत्तादो। सा पुण ट्ठिदिउदीरणा बिदियगाहाए पढमपादे णिबद्धा त्ति जाणावणट्ठमेदं सुत्तमोइण्णं 'को कदमाए ट्ठिदीए पवेसगो त्ति।'

§ ४१६. एदस्स पदस्स अत्थो ट्ठिदिउदीरणाए त्ति तदो एदं बीजपदं ट्ठिदिउदीरणासामित्तविसयपुच्छामुहेण पयट्टमस्सिऊण ट्ठिदिउदीरणा विहासियव्वा त्ति एसो एदस्स भावत्थो। सा च ट्ठिदिउदीरणा मूलुत्तरपयडिविसयभेदेण दुविहा होदि त्ति जाणावणट्ठमुत्तरसुत्तमाह—

समाधान—ऐसी आशंका नहीं करनी चाहिए, क्योंकि उदीरणासे ही कर्मोदयके अर्थका भी ज्ञान हो जाता है।

यदि कहा जाय कि उदयसे उदीरणा एकान्तसे पृथग्भूत है सो भी बात नहीं है, क्योंकि उदयविशेषकी ही उदीरणा संज्ञा है। इसलिए उदीरणाका कथन करने पर उदयका भी कथन हो ही गया। और जो थोड़ी-सी विशेषता है सो उसका यहाँ पर भी व्याख्यानकारोंको व्याख्यान करना चाहिए इसप्रकार इस अभिप्रायसे कर्मोदयके व्याख्यानका यहां पर सूत्रकारने विस्तार नहीं किया, अर्थका समर्पणमात्र किया। इसलिए इसी देशामर्षक वचनका आश्रय कर कर्मोदयका यहाँ पर व्याख्यान करना चाहिए। इसप्रकार कर्मोदयका व्याख्यान करने पर प्रथम गाथाका अर्थ समाप्त होता है।

❀ 'कौन जीव किस स्थितिमें प्रवेशक है' इस पदका आश्रय लेकर स्थिति उदीरणा करनी चाहिए।

§ ४१५. प्रकृति उदीरणाके बाद आगे स्थितिउदीरणा करनी चाहिए, क्योंकि वह अवसर प्राप्त है। परन्तु वह स्थिति उदीरणा दूसरी गाथाके प्रथम पादमें निबद्ध है, यह बतलानेके लिए यह सूत्र अवतीर्ण हुआ है—कौन किस स्थितिमें प्रवेशक है।

§ ४१६. इस पदका अर्थ स्थितिउदीरणासे सम्बन्ध रखता है, इसलिए स्थितिउदीरणाके स्वामित्वविषयक पृच्छाके द्वारा प्रवृत्त हुए इस बीजपदका आश्रय कर स्थितिउदीरणाका व्याख्यान करना चाहिए। यह इसका भावार्थ है। और वह स्थितिउदीरणा मूलप्रकृति और उत्तरप्रकृतिरूप विषयके भेदसे दो प्रकारकी है यह ज्ञान करानेके लिए आगेका सूत्र कहते हैं—

*** एत्थ ट्ठिदिउदीरणा दुविहा— मूलपयडिट्ठिदिउदीरणा उत्तरपयडिट्ठिदिउदीरणा च ।**

§ ४१७. एत्थ एदम्मि ट्ठिदिउदीरणापरूवणावसरे मूलपयडिट्ठिदिउदीरणा उत्तरपयडिट्ठिदिउदीरणा चेदि दुविहा ट्ठिदिउदीरणा होइ, तदुभयवदिरेगेण ट्ठिदिउदीरणाए पयारंतरासंभवादो । एवं दुवियप्पाए ट्ठिदिउदीरणाए अणियोगद्दारेहिं विणा परूवणा ण संभवदि त्ति तव्विसयाणमणियोगद्दाराणमुवण्णासो कीरदे ।

*** तत्थ इमाणि अणियोगद्दाराणि । तं जहा—पमाणाणुगमो सामित्तं कालो अंतरं णाणाजीवेहि भंगविचयो कालो अंतरं सण्णियासो अप्पाबहुअं भुजगारो पदणिक्खेवो वड्ढी ट्ठाणाणि च ।**

§ ४१८. एत्थ सुगमत्तादो अणुवइट्ठाणं सव्व-णोसव्व-उक्कस्साणुक्कस्स-जहण्णाजहण्ण-सादिअणादि-धुव-अद्धुवाणियोगद्दाराणमद्धाच्छेदाणंतरणिद्दसारिहाणं भागाभाग-परिमाण-खेत्त-पोसणाणं च भंगविचयाणंतरणिद्देसजोग्गाणं भावाणुगमस्स च संगहो कायव्वो । ण च एदेसिमणियोगद्दाराणं गाहासुत्ते णिबंधणं णत्थि त्ति आसंकणिज्जं, 'संतर-णिरंतरं वा०' इच्चेदेण गाहापच्छद्धेण सूचिदत्तादो । तदो मूलपयडिट्ठिदिउदीरणाए सण्णियासेण विणा तेवीसमणियोगद्दाराणि भुजगार-पदणिक्खेव-वड्ढि-ट्ठाणाणि च उत्तरपयडिट्ठिदिउदीरणाए पुण सण्णियासेण सह चउवीसमणियोगद्दाराणि संपुण्णाणि

*** यहाँ स्थितिउदीरणा दो प्रकारकी है—मूलप्रकृति स्थितिउदीरणा और उत्तरप्रकृति स्थितिउदीरणा ।**

§ ४१७. यहाँ इस स्थितिउदीरणाके कथनके अवसर पर मूलप्रकृति स्थितिउदीरणा और उत्तरप्रकृति स्थितिउदीरणा यह दो प्रकारकी ही स्थितिउदीरणा है, क्योंकि इन दोनोंसे भिन्न स्थितिउदीरणाका प्रकारान्तर असम्भव है । इसप्रकार दो प्रकारकी स्थितिउदीरणाका अनुयोगद्वारोंके बिना कथन सम्भव नहीं है, इसलिए तद्विषयक अनुयोगद्वारोंका उपन्यास करते हैं—

*** उसमें ये अनुयोगद्वार हैं । यथा—प्रमाणानुगम, स्वामित्व, काल, अन्तर, नाना जीवोंकी अपेक्षा भंगविचय, काल, अन्तर, सन्निकर्ष, अल्पबहुत्व, भुजगार, पदनिक्षेप, वृद्धि और स्थान ।**

§ ४१८. यहाँ पर सुगम होनेसे नहीं कहे गये तथा अद्धाच्छेदके अनन्तर निर्देश योग्य ऐसे सर्व, नोसर्व, उत्कृष्ट, अनुत्कृष्ट, जघन्य, अजघन्य, सादि, अनादि, ध्रुव, और अध्रुव अनुयोगद्वारोंका तथा भंगविचयके बाद निर्देश योग्य भागाभाग, परिमाण, क्षेत्र और स्पर्शन अनुयोगद्वारोंका तथा भावानुगमका संग्रह करना चाहिए । इन अनुयोगद्वारोंका गाथासूत्रमें संग्रह नहीं है ऐसी आशंका करना ठीक नहीं है, क्योंकि 'संतर-णिरंतरं वा' इसप्रकार इस गाथाके उत्तरार्धके द्वारा इनका सूचन हुआ है । इसलिए मूलप्रकृति स्थितिउदीरणामें सन्निकर्षके बिना तेईस अनुयोगद्वार तथा भुजगार, पदनिक्षेप, वृद्धि और स्थान ये अनुयोगद्वार होते हैं तथा उत्तरप्रकृति स्थितिउदीरणामें तो सन्निकर्षके साथ पूरे चौबीस अनुयोगद्वार तथा भुजगार,

भुजगार-पदणिक्खेव-वड्ढि-ट्ठाणाणि चेदि एदेसिमत्थस्स सुत्तसूचिदत्तादो ।

⊛ एदेसु अणियोगद्दारेसु विहासिदेसु 'को कदमाए ट्ठिदीए पवेसगो' त्ति पदं समत्तं ।

§ ४१९. संपहि मंदबुद्धिजणाणुग्गहट्ठमेदेण समप्पिदत्थपरूवणमुच्चारणाइरियो-वएसबलेण पयासइस्सामो । तं जहा—ट्ठिदिउदीरणा दुविहा—मूलपयडिट्ठिदिउदीरणा उत्तरपयडिट्ठिदिउदीरणा च । मूलपयडिट्ठिदिउदीरणाए ताव पयदं । तत्थ इमाणि तेवीसमणियोगद्दाराणि णादव्वाणि भवंति पमाणाणुगमो जाव अप्पाबहुए त्ति भुज० पदणि० वड्ढिट्ठाणाणि च ।

§ ४२०. तत्थ पमाणाणु० दुविहं—जह० उक्क० । उक्क० पयदं । दुविहो णिद्देसो—ओघेण आदेसेण य । ओघेण मोह० उक्क० ट्ठिदिउदीरणा सत्तरिसागरोवम-कोडाकोडीओ दोहिं आवलियाहिं ऊणाओ । एवं चदुगदीसु । णवरि पंचिंदियतिरिक्ख-अपज्ज०-मणुसअपज्ज० मोह० उक्क० ट्ठिदिउदीरणा सत्तरिसागरो०कोडाकोडीओ अंतोमुहुत्तूणाओ । आणदादि सव्वट्ठा त्ति मोह० उक्क० ट्ठिदिउदी० अंतोकोडाकोडीओ । एवं जाव० ।

पदनिक्षेप, वृद्धि और स्थान ये अनुयोगद्वार होते हैं यह इस सूत्रका भावार्थ है ।

* इन अनुयोगद्वारोंका व्याख्यान करने पर 'कौन किस स्थितिमें प्रवेशक है' यह पद समाप्त हुआ ।

§ ४१९. अब मन्दबुद्धि जनोंके अनुग्रहके लिए इसके द्वारा समर्पित अर्थका कथन उच्चारणाचार्यके उपदेशके बलसे प्रकाशित करेंगे । यथा—स्थितिउदीरणा दो प्रकारकी है मूलप्रकृति स्थितिउदीरणा और उत्तरप्रकृति स्थितिउदीरणा । सर्व प्रथम मूलप्रकृतिस्थितिउदीरणा प्रकृत है । उसमें ये तेईस अनुयोगद्वार ज्ञातव्य हैं—प्रमाणानुगमसे लेकर अल्पबहुत्व तक तथा भुजगार, पदनिक्षेप, वृद्धि और स्थान ।

§ ४२०. उसमेंसे प्रमाणानुगम दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट । उत्कृष्टका प्रकरण है । निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणा दो आवलि कम सत्तर कोड़ाकोड़ी सागरोपम होती है । इसीप्रकार चारों गतियोंमें जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्तकोंमें मोहनीय की उत्कृष्ट स्थितिउदीरणा अन्तर्मुहूर्तकम सत्तर कोड़ाकोड़ी सागरोपम होती है । आनत कल्पसे लेकर सर्वार्थसिद्धितकके देवोंमें मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणा अन्तःकोड़ाकोड़ी प्रमाण होती है । इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए ।

विशेषार्थ—मोहनीयका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध होने पर बन्धावलिके बाद उदयावलिसे उपरितन निषेकोंकी उदीरणा होनेपर वह दो आवलि कम सत्तर कोड़ाकोड़ी सागरोपम प्राप्त होती है । शेष कथन सुगम है ।

§ ४२१. जहण्णए पयदं। दुविहो णि०—ओघेण आदेसे०। ओघेण मोह० जह० ट्ठिदिउदीरणा एया ट्ठिदी समयाहियावलियकालट्ठिदिया। एवं मणुसतिए। आदेसेण णेरइय० मोह० जह० ट्ठिदिउदीरणा सागरोवमसहस्सस्स सत्तसत्तभागा पलिदो० संखेभागेण ऊणिया। एवं पढमपुढवि०-देवा भवण०-वाणवेंतर०। सेस-मग्गणासु ट्ठिदिविहत्तिभंगो। णवरि उदीरणालावो कायव्वो।

§ ४२२. सव्वउदीरणा-णोसव्वउदीरणाणु० दुविहो णि०—ओघेण आदेसे०। ओघेण सव्वाओ ट्ठिदीओ उदीरेमाणस्स सव्वट्ठिदिउदीरणा। तदूणं णोसव्वट्ठिदि-उदीरणा। एवं जाव०।

§ ४२३. उक्क०ट्ठिदिउदी०-अणुक्क०ट्ठिदिउदीरणाणु० दुविहो णि०—ओघेण आदेसेण य। ओघेण सव्वुक्कस्सियं ट्ठिदिमुदीरेमाणस्स उक्क० ट्ठिदिउदी०। तदूणमणुक्क०-ट्ठिदिउदीरणा। एवं जाव०।

---

§ ४२१. जघन्यका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मोहनीयकी जघन्य स्थितिउदीरणा एक समय अधिक एक आवलि काल स्थितिवाली एक स्थिति है। इसीप्रकार मनुष्यत्रिकमें जानना चाहिए। आदेशसे नारकियोंमें मोहनीयकी जघन्य स्थितिउदीरणा एक हजार सागरके सात भागोंमेंसे पल्यका संख्यातवाँ भाग कम सात भाग-प्रमाण है। इसी प्रकार प्रथम पृथिवी, सामान्य देव, भवनवासी और व्यन्तर देवोंमें जानना चाहिए। शेष मार्गणाओंमें स्थितिविभक्तिके समान भंग है। इतनी विशेषता है कि स्थितिसत्त्वके स्थानमें स्थितिउदीरणा कहनी चाहिए।

विशेषार्थ—यहाँ पर सामान्यसे मोहनीयकी जघन्य स्थिति उदीरणा एक समय अधिक एक आवलि काल स्थितिवाली एक स्थिति कही है सो क्षपक सूक्ष्मसांपरायिकके संज्वलन सूक्ष्म लोभकी जब अधस्तन स्थिति एक समय अधिक एक आवलिप्रमाण शेष रहती है तब यह जघन्य स्थितिउदीरणा प्राप्त होती है। मनुष्यत्रिकमें ओघ प्ररूपणा अविकल बन जानेसे उसे ओघके समान जाननेकी सूचना की है। सामान्य नारकी, प्रथम पृथिवीके नारकी, सामान्य देव, भवनवासी और व्यन्तरोंमें असंज्ञी पञ्चेन्द्रिय पर्याप्त जीव मरकर उत्पन्न हो सकते हैं, इसलिए इन मार्गणाओंमें असंज्ञी पञ्चेन्द्रिय पर्याप्त जीवोंके मोहनीय सम्बन्धी जघन्य स्थितिसत्त्वको ध्यानमें रखकर जघन्य स्थितिउदीरणाका प्रमाण कहा है। प्रमाणका उल्लेख मूलमें किया ही है। शेष कथन स्पष्ट है।

§ ४२२. सर्वउदीरणा और नोसर्वउदीरणानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे सब स्थितियोंकी उदीरणा करनेवालेके सर्वस्थितिउदीरणा होती है और उससे न्यून स्थितियोंकी उदीरणा करनेवालेके नोसर्वस्थितिउदीरणा होती है। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

§ ४२३. उत्कृष्ट स्थितिउदीरणा और अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे सर्वोत्कृष्ट स्थितिकी उदीरणा करनेवालेके उत्कृष्ट स्थितिउदीरणा होती है और उससे न्यून स्थितिकी उदीरणा करनेवालेके अनुत्कृष्ट स्थिति-उदीरणा होती है। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

§ ४२४. जह०उदीर०-अजह०ट्ठिदि०-उदीरणाणु० दुविहो णि०—ओघेण आदेसे०। ओघेण सव्वजहण्णयट्ठिदिमुदीरेमाणयस्स जह० ट्ठिदिउदीरणा। तदो उवरिमजह०ट्ठिदिउदीरणा। एवं जाव०।

§ ४२५. सादि०-अणादि०-धुव०-अद्धुवाणु० दुविहो णि०—ओघेण आदेसे०। ओघेण मोह० उक्क० अणुक्क० जह० किं सादि० ४? सादि-अद्धुवा। अजह०ट्ठिदि-उदीर० किं सादि० ४? सादि० अणादि० धुवा अद्धुवा वा। सेसगदीसु उक्क० अणुक्क० जह० अजह० सादि-अद्धुवा। एवं जाव०।

§ ४२६. सामित्ताणुगमं दुविहं—जह० उक्क०। उक्कस्से पयदं। दुविहो णि०—ओघेण आदेसे०। ओघेण मोह० उक्क०ट्ठिदिउदी० कस्स? अण्णद० उक्कस्सट्ठिदिं बंधिदूणावलियादीदस्स। एवं चदुसु गदीसु। णवरि पंचि०तिरिक्खअपज्ज०-मणुस-

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

§ ४२४. जघन्य स्थितिउदीरणा और अजघन्य स्थितिउदीरणानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे सबसे जघन्य स्थितिकी उदीरणा करनेवाले जीवके जघन्य स्थितिउदीरणा होती है। उससे ऊपर अजघन्य स्थितिउदीरणा होती है। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

§ ४२५. सादि, अनादि, ध्रुव और अध्रुवानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मोहनीयकी उत्कृष्ट, अनुत्कृष्ट और जघन्य स्थितिउदीरणा क्या सादि है, अनादि है, ध्रुव है या अध्रुव है? सादि और अध्रुव है। अजघन्य स्थितिउदीरणा क्या सादि है, अनादि है, ध्रुव है या अध्रुव है? सादि, अनादि, ध्रुव और अध्रुव है। शेष गतियोंमें उत्कृष्ट, अनुत्कृष्ट, जघन्य और अजघन्य स्थितिउदीरणा सादि और अध्रुव है। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

विशेषार्थ—उत्कृष्ट स्थितिउदीरणा पुनः पुनः प्राप्त हो सकती है, इसलिए उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणामें अनादि और ध्रुव ये दो विकल्प नहीं बन सकते। यही कारण है कि इन दोनों प्रकारकी उदीरणाओंको सादि और अध्रुव कहा है। जघन्य स्थितिउदीरणा उपशामक या क्षपकके होती है, इसलिए इसे भी सादि और अध्रुव कहा है। किन्तु इसके पूर्व अजघन्य स्थितिउदीरणा अनादि है, उपशामकके जघन्य स्थितिउदीरणाके बाद सादि है, तथा भव्योंमें अध्रुव और अभव्योंमें ध्रुव है, इसलिए इसे चारों प्रकारकी कहा है। यह ओघप्ररूपणा है। गति मार्गणाके उत्तर भेद कादाचित्क हैं, इसलिए उनमें चारों प्रकारकी स्थितिउदीरणा सादि और अध्रुव कही है। शेष मार्गणाओंमें इसीप्रकार जहाँ जिस प्रकार सम्भव हो घटित कर लेना चाहिए।

§ ४२६. स्वामित्वानुगम दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट। उत्कृष्टका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका स्वामी कौन है? उत्कृष्ट स्थिति बाँधनेके बाद जिसे एक आवलि काल गया है ऐसा अन्यतर जीव मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका स्वामी है। इसीप्रकार चारों गतियोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्तकोंमें मोह-

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

अपज्ज० मोह० उक्क०ट्ठिदिउदी० कस्स ? अण्णद० मणुसो वा मणुसिणी वा पंचिं०-तिरिक्खजोणिओ वा उक्कस्सट्ठिदिं बंधिदूण अंतोमुहुत्तट्ठिदिघादमकाऊण अपज्ज० उववण्णो तस्स पढमसमयउववण्णल्लयस्स। आणदादि णवगेवज्जा त्ति मोह० उक्क० ट्ठिदि०उदीर० कस्स ? अण्णद० दव्वलिंगिणो तप्पाओग्गुक्कस्सट्ठिदिसं० पढमसमय-उववण्णल्लयस्स। अणुदिसादि सव्वट्ठा त्ति मोह० उक्क०ट्ठिदिउदी० कस्स ? अण्णद० जो संजदो तप्पाओग्गउक्क०ट्ठिदिसं० पढमसमयउववण्णो तस्स उक्क०ट्ठिदिउदीरणा। एवं जाव।

§ ४२७. जह० पयदं। दुविहो णि०—ओघेण आदेसे०। ओघेण मोह० जह० ट्ठिदिउदी० कस्स ? अण्णद० उवसामगस्स वा खवगस्स वा समयाहियावलिय-उदीरेमाणस्स। एवं मणुसतिए।

§ ४२८. आदेसेण णेरइय० मोह० जह० ट्ठिदि०उदी० कस्स ? अण्णद० असण्णिपच्छायदद्दुसमयाहियावलियउववण्णल्लयस्स। एवं पढमाए देवा भवण०-वाणवें०। विदियादि जाव छट्ठि त्ति मोह० जह०ट्ठिदिउदी० कस्स ? अण्णद० दीहाए आउट्ठिदीए उववज्जिऊण अंतोमुहुत्तेण सम्मत्तं पडिवज्जिय अणंताणु०चउक्कं० विसंजो-

---

नीयकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका स्वामी कौन है ? जो मनुष्य, मनुष्यिनी या पञ्चेन्द्रिय तिर्यंच योनिवाला अन्यतर जीव उत्कृष्ट स्थिति बाँधकर स्थितिघात किये बिना अन्तर्मुहूर्तमें अपर्याप्तकोंमें उत्पन्न हुआ वह जीव उत्पन्न होनेके प्रथम समयमें मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका स्वामी है। आनत कल्पसे लेकर नौ ग्रैवेयक तकके देवोंमें मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका स्वामी कौन है ? तत्प्रायोग्य उत्कृष्ट स्थिति सत्कर्मवाला अन्यतर जो द्रव्यलिंगी मरकर उक्त देवोंमें उत्पन्न हुआ वह उत्पन्न होनेके प्रथम समयमें मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका स्वामी है। अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थिति उदीरणाका स्वामी कौन है ? तत्प्रायोग्य उत्कृष्ट स्थितिसत्कर्मवाला जो अन्यतर संयत मरकर उक्त देवोंमें उत्पन्न हुआ, वह उत्पन्न होनेके प्रथम समयमें मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका स्वामी है। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

§ ४२७. जघन्यका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मोहनीयकी जघन्य स्थितिउदीरणाका स्वामी कौन है ? उपशामक या क्षपक जो अन्यतर जीव एक समय अधिक आवलिप्रमाण स्थितिके रहनेपर उदीरणा कर रहा है वह मोहनीयकी जघन्य स्थितिउदीरणाका स्वामी है। इसीप्रकार मनुष्यत्रिकमें जानना चाहिए।

§ ४२८. आदेशसे मोहनीयकी जघन्य स्थितिउदीरणाका स्वामी कौन है ? अन्यतर जो असंज्ञी मरकर नरकमें उत्पन्न हुआ है और जिसे वहाँ उत्पन्न हुए दो समय अधिक एक आवलि हो गया है वह मोहनीयकी जघन्य स्थितिउदीरणाका स्वामी है। इसीप्रकार प्रथम पृथिवीके नारकी, सामान्य देव, भवनवासी और व्यन्तर देवोंमें जानना चाहिए। दूसरीसे लेकर छठी पृथिवी तकके नारकियोंमें मोहनीयकी जघन्य स्थितिउदीरणाका स्वामी कौन है ? अन्यतर जो दीर्घ आयुस्थितिके साथ उत्पन्न होकर, अन्तर्मुहूर्तमें सम्यक्त्वको प्राप्त होकर और

एदूण तत्थ य भवट्ठिदिमणुपालिय चरिमसमयणिप्पिदमाणयस्स । एवं जोदिसि० । सत्तमाए एवं चेव । णवरि तत्थ भवट्ठिदिमणुपालेऊण थोवावसेसे जीविदव्वए त्ति मिच्छत्तं गदो जाव सक्कं ताव संतकम्मस्स हेट्ठा बंधिऊण समट्ठिदिं वा बंधिऊण संतकम्मं वोलेदूण वा आवलियादीदस्स तस्स जह० ट्ठिदिउदीरणा ।

§ ४२९. तिरिक्खेसु मोह० जह०ट्ठिदिउदी० कस्स ? अण्णद० बादरेइंदियस्स मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज हदसमुप्पत्तियस्स जाव सक्कं ताव संतकम्मस्स हेट्ठा बंधिऊण समट्ठिदिं वा बंधिदूण संतकम्मं वोलेदूण वा आवलियादीदस्स तस्स जह० ट्ठिदिउदीर० । सव्वपंचिंदियतिरिक्ख-मणुसअपज्ज० मोह० जहण्णट्ठिदिउदी० कस्स ? अण्णद० बादरेइंदियपच्छा० हदसमुप्पत्ति० आवलियउववण्णो तस्स जह० ट्ठिदिउदी० । सोहम्मादि जाव सव्वट्ठे त्ति मोह० जह० ट्ठिदिउदीर० कस्स ? अण्णद० खइयसम्माइट्ठि० उवसमसेढिपच्छाय० दीहाए आउट्ठिदीए उववज्जिऊण चरिमसमयणिप्पिदमाणयस्स तस्स जह० ट्ठिदिउदी० । एवं जाव० ।

§ ४३०. कालाणुगमं दुविहं—जह० उक्क० । उक्कस्से पयदं । दुविहो णि०—ओघेण आदेसेण य । ओघेण मोह० उक्क०ट्ठिदिउदीर० जह० एयसमओ, उक्क०

अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी विसंयोजना करके उसी अवस्थामें भवस्थितिका पालन कर जब अन्तिम समयमें वहाँसे निकलनेवाला होता है तब मोहनीयकी जघन्य स्थितिउदीरणाका स्वामी है। इसीप्रकार ज्योतिषी देवोंमें स्वामित्व है। सातवीं पृथिवीमें इसीप्रकार है। इतनी विशेषता है कि वहाँ भवस्थितिका पालन कर जीवितव्यके स्तोक शेष रहनेपर मिथ्यात्वको प्राप्त हुआ और जब तक शक्य है तब तक सत्कर्मसे कम या समान स्थितिका बन्ध कर सत्कर्मको बिताते हुए जब एक आवलि काल चला जाता है तब वह जघन्य स्थितिउदीरणाका स्वामी है।

§ ४२९. तिर्यञ्चोंमें मोहनीयकी जघन्य स्थितिउदीरणाका स्वामी कौन है ? जो हतसमुत्पत्तिक अन्यतर बादर एकेन्द्रिय जीव जब तक शक्य है तब तक सत्कर्मसे कम या समान स्थितिको बाँधकर सत्कर्मको बिताते हुए जब एक आवलि काल चला जाता है तब वह मोहनीयकी जघन्य स्थितिउदीरणाका स्वामी है। सब पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चों और मनुष्य अपर्याप्तकोंमें मोहनीयकी जघन्य स्थितिउदीरणाका स्वामी कौन है ? जिस हतसमुत्पत्तिक जीवको बादर एकेन्द्रियोंमेंसे आकर यहाँ उत्पन्न हुए एक आवलि हुआ है वह अन्यतर जीव मोहनीयकी जघन्य स्थितिउदीरणाका स्वामी है। सौधर्म कल्पसे लेकर सर्वार्थसिद्धितकके देवोंमें मोहनीयकी जघन्य स्थितिउदीरणाका स्वामी कौन है ? अन्यतर जो क्षायिकसम्यग्दृष्टि जीव उपशमश्रेणिसे आकर दीर्घ आयुस्थितिवाले देवोंमें उत्पन्न होकर जब वहाँसे निकलनेके अन्तिम समयमें स्थित होता है तब वह मोहनीयकी जघन्य स्थितिउदीरणाका स्वामी है। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

§ ४३०. कालानुगम दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट। उत्कृष्टका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका

अंतोमु० । अणुक्क० जह० अंतोमु०, उक्क० अणंतकालमसंखेज्जा पोग्गलपरियट्टा । एवं तिरिक्खाणं । णवरि अणुक्क० जह० एयस० ।

§ ४३१. आदेसेण णेरइय० उक्क० ट्ठिदिउदीर० जह० एयसमओ, उक्क० अंतोमु० । अणुक्क० जह० एयस०, उक्क० तेत्तीसं सागरोवमाणि । एवं सव्वणेरइय० पंचिंदियतिरिक्खतिय ३-मणुसतिय-देवा भवणादि जाव सहस्सार त्ति । णवरि सगट्ठिदी ।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

§ ४३२. पंचिंदियतिरिक्खअपज्ज०-मणुसअपज्ज० मोह० उक्क० ट्ठिदि० उदीरणा जह० उक्क० एयस० । अणुक्क० जह० खुद्दाभवग्गहणं समऊणं, उक्क० अंतोमु० ।

जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है । अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अनन्त काल है जो असंख्यात पुद्गल परिवर्तनप्रमाण है । इसी प्रकार तिर्यञ्चोंमें है। इतनी विशेषता है कि इनमें अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है ।

विशेषार्थ—मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिका जघन्य बन्धकाल एक समय और उत्कृष्ट बन्धकाल अन्तर्मुहूर्त होनेसे इसकी उदीरणाका यह काल बन जानेसे उत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त कहा है । उत्कृष्ट स्थितिबन्धके बाद पुनः उसका बन्ध कमसे कम अन्तर्मुहूर्तके पहले नहीं होता और ऐसा जीव यदि एकेन्द्रियोंमें मरकर उत्पन्न हो जाता है और सबसे अधिक काल तक वहाँ तथा यथायोग्य असंज्ञियोंमें रहकर पुनः संज्ञी पर्याप्त होता है तो अधिकसे अधिक अनन्त काल बाद ही वहाँ उत्पन्न होता है । यही कारण है कि ओघसे मोहनीयकी अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट अनन्त काल कहा है । तिर्यञ्चोंमें यह ओघप्ररूपणा बन जाती है, इसलिए उनमें ओघके समान जाननेकी सूचना की है । मात्र तिर्यञ्चोंमें ऐसा जीव भी आकर उत्पन्न हो सकता है जो अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणा एक समय तक करके उत्कृष्ट स्थितिउदीरणा करने लगे । यही कारण है कि इनमें अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय कहा है ।

§ ४३१. आदेशसे नारकियोंमें उत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है । अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल तेतीस सागर है । इसीप्रकार सब नारकी, पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिक, मनुष्यत्रिक, सामान्य देव और भवनवासियोंसे लेकर सहस्रार कल्प तकके देवोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि अपनी-अपनी स्थिति कहनी चाहिए ।

विशेषार्थ—पूर्वमें जिस प्रकार सामान्य तिर्यञ्चोंमें स्पष्टीकरण किया है उस प्रकार यहाँ कर लेना चाहिए । यहाँ सर्वत्र जो अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका उत्कृष्ट काल अपनी अपनी स्थितिप्रमाण कहा है सो उस उस गतिमें यथायोग्य सम्यक्त्व और मिथ्यात्व परिणामके साथ इसप्रकार रखे जिससे उस उस गतिमें उत्कृष्ट स्थितिबन्ध तथा तदनुसार उत्कृष्ट स्थितिउदीरणा न प्राप्त हो ।

§ ४३२. पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्तकोंमें मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है । अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय कम क्षुल्लकभवग्रहणप्रमाण और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है । आनत कल्पसे

आणदादि सव्वट्ठा त्ति मोह० उक्क०ट्ठिदि०उदी० जहण्णुक्क० एयस० । अणुक्क० जह० जहण्णट्ठिदी समयूणा, उक्क० उक्कस्सट्ठिदी । एवं जाव० ।

§ ४३३. जहण्णए पयदं । दुविहो णि०—ओघेण आदेसेण य । ओघेण मोह० जह०ट्ठिदिउदी० जह० उक्क० एयस० । अजह० तिण्णि भंगा । जो सो सादिओ सपज्जवसिदो जह० अंतोमु०, उक्क० उवड्ढपोग्गलपरियट्टं ।

§ ४३४. आदेसेण णेरइय० मोह० जह०ट्ठिदिउदी० जहण्णुक्क० एयस० । अज० जह० आवलिया समयाहिया, उक्क० तेत्तीसं सागरोवमाणि । एवं पढमाए देवा भवण०-वाणवेंतर० । णवरि सगट्ठिदी ।

लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है । अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय कम जघन्य स्थिति-प्रमाण और उत्कृष्ट काल उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण है । इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए ।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

विशेषार्थ—पूर्वोक्त दोनों लब्ध्यपर्याप्त जीवोंमें अपने स्वामित्वके अनुसार मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणा एक समय तक ही प्राप्त होती है, इसलिए इनमें इसका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय कहा है । तथा इस एक समयको क्षुल्लकभवके कालमेंसे कम कर देने पर इनमें मोहनीयकी अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय कम क्षुल्लक भवप्रमाण प्राप्त होता है, इसलिए इनमें मोहनीयकी अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य काल उक्त कालप्रमाण कहा है । तथा इनमें मोहनीयकी अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त प्रमाण है यह स्पष्ट ही है । इसीप्रकार आनतादि देवोंमें स्वामित्वका विचार कर कालप्ररूपणा समझ लेनी चाहिए । विशेष वक्तव्य न होनेसे अलगसे स्पष्टीकरण नहीं किया है ।

§ ४३३. जघन्यका प्रकरण है । निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे मोहनीयकी जघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है । अजघन्य स्थितिउदीरणाके तीन भंग हैं । उनमें जो वह सादिसपर्यवसित भंग है उसका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट काल उपार्ध पुद्गल परिवर्तनप्रमाण है ।

विशेषार्थ—अपने स्वामित्वके अनुसार जघन्य स्थितिउदीरणा एक समय तक होती है, इसलिए इसका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय कहा है । किन्तु किसी जीवके अर्ध-पुद्गलपरावर्तके प्रारम्भमें और अन्तमें यथायोग्य जघन्य स्थितिउदीरणा हो और मध्यमें अजघन्य स्थितिउदीरणा होती रहे तथा किसी जीवके अन्तर्मुहूर्त काल तक ही यह हो यह भी सम्भव है, इसलिए ओघसे अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट काल उपार्ध पुद्गलपरावर्तप्रमाण कहा है ।

§ ४३४. आदेशसे नारकियोंमें मोहनीयकी जघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है । अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय अधिक एक आवलि और उत्कृष्ट काल तेतीस सागर है । इसीप्रकार प्रथम पृथिवीके नारकी, सामान्य देव, भवनवासी और व्यन्तर देवोंमें जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि अपनी-अपनी स्थिति कहनी चाहिए ।

§ ४३५. बिदियादि छट्टि त्ति मोह० जह०ट्ठिदिउदी० जहण्णुक्क० एयस० । अज० जहण्णुक्कस्सट्ठिदी । एवं जोदिसियादि जाव सव्वट्ठा त्ति । सत्तमाए मोह० जह०ट्ठिदिउदी० जह० एयस०, उक्क० अंतोमु० । अज० जह० अंतोमु०, उक्क० तेत्तीसं सागरो० ।

§ ४३६. तिरिक्खेसु मोह० जह०ट्ठिदिउदी० जह० एयस०, उक्क० अंतोमु० । अज० जह० एयस०, उक्क० असंखेज्जा लोगा । पंचिंदियतिरिक्खतिए मोह० जह०-ट्ठिदिउदी० जहण्णुक्क० एयस० । अजह० जह० आवलिया समयूणा, उक्क०

विशेषार्थ— नारकियोंमें मोहनीयकी जघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय जैसे पूर्वमें घटित करके बतला आये हैं उसी प्रकार यहाँ और आगे घटित कर लेना चाहिए। विशेषता न होनेसे उसका अलगसे खुलासा नहीं करेंगे। नरकमें अपने स्वामित्वके अनुसार जघन्य स्थिति उदीरणा यहाँ उत्पन्न होनेके बाद एक आवली और एक समय जानेपर द्वितीय समयमें ही प्राप्त होती है। इससे पूर्व अजघन्य स्थितिउदीरणा होती रहती है, इसलिए इनमें अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय अधिक एक आवलि कहा है। शेष कथन सुगम है। मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

§ ४३५. दूसरी पृथिवीसे लेकर छठी पृथिवी तकके नारकियोंमें मोहनीयकी जघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य काल जघन्य स्थितिप्रमाण और उत्कृष्ट काल उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण है। इसीप्रकार ज्योतिषियोंसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें जानना चाहिए। सातवीं पृथिवीमें मोहनीयकी जघन्य स्थिति-उदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। अजघन्य स्थिति-उदीरणाका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट काल तेतीस सागर है।

विशेषार्थ—दूसरे नरकसे लेकर छठे नरक तक जघन्य स्थितिउदीरणा अपने-अपने स्वामित्वके अनुसार भवके अन्तिम समयमें प्राप्त होती है। अतः इनमें जघन्य स्थितिउदीरणा-का जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय कहा है। तथा जो उक्त नारकी उक्त प्रकारसे जघन्य स्थितिउदीरणा नहीं करते उनके सर्वदा अजघन्य स्थितिउदीरणा बन जानेसे इस अपेक्षा अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य काल जघन्य स्थितिप्रमाण और उत्कृष्ट काल उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण कहा है। ज्योतिषी देवोंसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें यह काल अपने स्वामित्वके अनुसार उक्त पद्धतिसे बन जाता है, अतः इनमें द्वितीयादि नरकोंके समान कालके जाननेकी सूचना की है। सातवें नरकमें अपने स्वामित्वके अनुसार जघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त बन जाता है, इसलिए इनमें यह काल उक्त प्रमाण कहा है। तथा इनमें अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त जघन्य स्थितिउदीरणाके बाद प्राप्त होनेवाला लिया है। उत्कृष्ट काल उत्कृष्ट भवस्थितिप्रमाण होता है यह स्पष्ट ही है।

§ ४३६. तिर्यञ्चोंमें मोहनीयकी जघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल असंख्यात लोकप्रमाण है। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकमें मोहनीयकी जघन्य स्थिति-उदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य काल

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

सगट्ठिदी । एवं पंचिंदियतिरिक्खअपज्ज०-मणुसअपज्ज० । णवरि अजह० उक्क० अंतोमु० । मणुसतिए मोह० जह०ट्ठिदिउदी० जहण्णुक्क० एयसमओ । अज० जह० एयसमओ, उक्क० सगट्ठिदी । एवं जाव० ।

§ ४३७. अंतरं दुविहं—जह० उक्क० । उक्कस्से पयदं । दुविहो णिद्देसो—ओघेण आदेसेण य । ओघेण मोह० उक्क०ट्ठिदिउदी० जह० अंतोमु०, उक्क० अणंतकालमसंखेज्जा पोग्गलपरियट्टा । अणुक्क० जह० एयस०, उक्क० अंतोमु० । एवं तिरिक्खेसु ।

§ ४३८. आदेसेण णेरइय० मोह० उक्क०ट्ठिदिउदी० जह० अंतोमुहुत्तं, उक्क० तेत्तीसं सागरो० देसूणाणि । अणुक्क० ओघं । एवं सव्वणेरइय० । णवरि सगट्ठिदी

एक समय कम एक आवलि है और उत्कृष्ट काल अपनी स्थितिप्रमाण है। इसीप्रकार पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्तकोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनमें अजघन्य स्थितिउदीरणाका उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। मनुष्यत्रिकमें मोहनीयकी जघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अपनी स्थितिप्रमाण है। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

विशेषार्थ—पूर्वमें जो खुलासा कर आये हैं उसे ध्यानमें रखकर तथा अपने-अपने स्वामित्वको लक्ष्यमें रखकर उक्त विषयका स्पष्टीकरण हो जाता है, इसलिए यहाँ अलगसे खुलासा नहीं किया।

§ ४३७. अन्तर दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट। उत्कृष्टका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर अनन्त काल है जो असंख्यात पुद्गल परिवर्तनप्रमाण है। अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। इसीप्रकार तिर्यञ्चोंमें है।

विशेषार्थ—मोहनीयका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध होकर पुनः उसका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध कमसे कम अन्तर्मुहूर्तके पहले नहीं होता तथा संज्ञी पञ्चेन्द्रिय पर्याप्त पर्यायका उत्कृष्ट अन्तर अनन्त काल है। यही कारण है कि यहाँ मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट अन्तर अनन्त काल कहा है। मोहनीयका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध एक समय तक हो यह भी नियम है और अन्तर्मुहूर्त काल तक हो यह भी नियम है। इसीसे यहां अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त कहा है। सामान्य तिर्यञ्चोंमें यह ओघप्ररूपणा अविकल घटित हो जानेसे उनमें ओघके समान जाननेकी सूचना की है।

§ ४३८. आदेशसे नारकियोंमें मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तेतीस सागर है। अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका अन्तरकाल ओघके समान है। इसीप्रकार सब नारकियोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है

देसूणा। पंचिंदियतिरिक्खतिय-मणुसतिए मोह० उक्क०ट्ठिदिउदी० जह० अंतोमु०, उक्क० पुव्वकोडिपुधत्तं। अणुक्क० ओघं। पंचि०तिरि०अपज्ज०-मणुसअपज्ज० आणदादि सव्वट्ठा त्ति मोह० उक्क०ट्ठिदिउदी० अणुक्क०ट्ठिदिउदी० णत्थि अंतरं। देवेसु मोह० उक्क०ट्ठिदिउदी० जह० अंतोमु०, उक्क० अट्ठारस सागरो० सादिरेयाणि। अणुक्क० ओघं। एवं भवणादि जाव सहस्सार त्ति। णवरि सगट्ठिदी। एवं जाव०।

§ ४३९. जहण्णे पयदं। दुविहो णि०—ओघेण आदेसे०। ओघेण मोह० जह०ट्ठिदिउदी० जह० अंतोमु०, उक्क० उवड्ढपो०परियट्टं। अजह० जह० एयस०, उक्क० अंतोमु०।

§ ४४०. आदेसेण णेरइय० मोह० जह०ट्ठिदिउदी० णत्थि अंतरं। अज०

कि कुछ कम अपनी-अपनी स्थिति कहनी चाहिए। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिक और मनुष्यत्रिकमें मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर अन्तमुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर पूर्वकोटिपृथक्त्वप्रमाण है। अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका अन्तरकाल ओघके समान है। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त, मनुष्य अपर्याप्त और आनत कल्पसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें उत्कृष्ट स्थितिउदीरणा और अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका अन्तरकाल नहीं है। देवोंमें मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर अन्तमुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक अठारह सागर है। अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका अन्तरकाल ओघके समान है। इसीप्रकार भवनवासियोंसे लेकर सहस्रारकल्प तकके देवोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि अपनी-अपनी स्थिति कहनी चाहिए। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक अन्तरकाल घटित कर जान लेना चाहिए।

विशेषार्थ—तिर्यञ्च अपर्याप्त, मनुष्य अपर्याप्त और आनत कल्पसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें उत्कृष्ट स्थितिउदीरणा अपने-अपने स्वामित्वके अनुसार मात्र भवके प्रथम समयमें प्राप्त होती है, इसलिए इनमें मोहनीयकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाके अन्तरकालका निषेध किया है। शेष कथन सुगम है।

§ ४४९. जघन्य प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मोहनीयकी जघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर अन्तमुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर उपार्ध पुद्गलपरिवर्तनप्रमाण है। अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तमुहूर्त है।

विशेषार्थ—उपशामकका जघन्य अन्तर अन्तमुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर उपार्ध पुद्गलपरिवर्तनप्रमाण है। यही कारण है कि यहां मोहनीयकी जघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर अन्तमुहूर्त और उत्कृष्ट अन्तर उपार्ध पुद्गलपरिवर्तनप्रमाण कहा है। तथा जो उपशामक जघन्य स्थितिउदीरणा करके दूसरे समयमें मरकर देव हो जाता है उसके मोहनीयकी अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर एक समय प्राप्त होता है और उपशामकके मोहनीयकी अजघन्य स्थितिउदीरणाका उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तमुहूर्त है, इसलिए यहां मोहनीयकी अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर अन्तमुहूर्त कहा है।

§ ४४०. आदेशसे नारकियोंमें मोहनीयकी जघन्य स्थितिउदीरणाका अन्तरकाल नहीं

जहण्णुक्क० एगसमओ । एवं पढमाए सव्वपंचिंदियतिरिक्खमणुसअपज्ज०-देवा भवण०-वाणवेंतरा त्ति । बिदियादि छट्ठि त्ति मोह० जह०-अजह०ट्ठिदि०उदीर० णत्थि अंतरं । एवं जोदिसियादि जाव सव्वट्ठा त्ति । सत्तमाए मोह० जह०ट्ठिदिउदी० णत्थि अंतरं । अजह० जह० एयसमओ, उक्क० अंतोमु० । तिरिक्खेसु मोह० जह०ट्ठिदि-उदीर० जह० अंतोमु०, उक्क० असंखेज्जा लोगा । अज० जह० एयस०, उक्क० अंतोमु० । मणुसतिए मोह० जह०ट्ठिदि०उदी० जह० अंतोमुहुत्तं, उक्क० पुव्वकोडि-पुध० । अज० जह० एयस०, उक्क० अंतोमु० । एवं जाव० ।

§ ४४१. णाणाजीवभंगविचयाणुगमं दुविहं—जह० उक्क० । उक्कस्से पयदं । दुविहो णि०—ओघेण आदेसे० । ओघेण उदीरगेसु पय० । अणुदीरगेसु अव्ववहारो । एदेण अट्ठपदेण उक्कस्सियाए ट्ठिदीए सव्वे अणुदीरगा, सिया अणुदीरगा च उदीरगो च, सिया अणुदीरगा च उदीरगा च । अणुक्कस्सट्ठिदीए सिया सव्वे उदीरगा, सिया उदीरगा च अणुदीरगो च, सिया उदीरगा च अणुदीरगा च । एवं चदुसु गदीसु ।

है । अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तरकाल एक समय है । इसीप्रकार प्रथम पृथिवी, सब पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च, मनुष्य अपर्याप्त, सामान्य देव, भवनवासी और व्यन्तर देवोंमें जानना चाहिए । दूसरी पृथिवीसे लेकर छठी पृथिवी तकके नारकियोंमें मोहनीयकी जघन्य और अजघन्य स्थितिउदीरणाका अन्तरकाल नहीं है । इसीप्रकार ज्योतिषियोंसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें जानना चाहिए । सातवीं पृथिवीमें मोहनीयकी जघन्य स्थितिउदीरणा-का अन्तरकाल नहीं है । अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त है । तिर्यञ्चोंमें मोहनीयकी जघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर असंख्यात लोकप्रमाण है । अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है । मनुष्यत्रिकमें मोहनीयकी जघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट अन्तर पूर्वकोटि-पृथक्त्वप्रमाण है । अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है । इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए ।

विशेषार्थ—यहाँ प्रतिपादित सभी मार्गणाओंमें स्वामित्वको जानकर अन्तरकाल घटित कर लेना चाहिए । सुगम होनेसे विशेष स्पष्टीकरण नहीं किया ।

§ ४४१. नाना जीवोंकी अपेक्षा भंगविचयानुगम दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट । उत्कृष्टका प्रकरण है । निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे उदीरकोंका प्रकरण है, अनुदीरक व्यवहार योग्य नहीं हैं । इस अर्थपदके अनुसार उत्कृष्ट स्थितिके कदाचित् सब अनुदीरक हैं, कदाचित् नाना जीव अनुदीरक हैं और एक जीव उदीरक है, कदाचित् नाना जीव अनुदीरक हैं और नाना जीव उदीरक हैं । अनुत्कृष्ट स्थितिके कदाचित् सब जीव उदीरक हैं, कदाचित् नाना जीव उदीरक हैं और एक जीव अनुदीरक है, कदाचित् नाना जीव उदीरक हैं और नाना जीव अनुदीरक हैं । इसीप्रकार चारों गतियोंमें जानना चाहिए । इतनी विशेषता है

णवरि मणुसअपज्ज० मोह० उक्क०-अणुक्क०ट्ठिदिउदीर० अट्ठ भंगा । एवं जाव० ।

§ ४४२. जह० पयदं । दुविहो णि०—ओघेण आदेसे० । ओघेण तं चेव अट्ठपदं कादूण मोह० जह०-अजह०ट्ठिदिउदीरगाणं तिण्णि भंगा । एवं चदुसु गदीसु । णवरि तिरिक्खेसु जह०-अजह०ट्ठिदिउदीरगा णिय० अत्थि । मणुसअपज्ज० जह०-अजह० अट्ठभंगा । एवं जाव० ।

§ ४४३. भागाभागाणु० दुविहं—जह० उक्क० । उक्कस्से पयदं । दुविहो णि०—ओघेण आदेसेण य । ओघेण मोह० उक्क०ट्ठिदिउदी० सव्वजी० केव० ? अणंत-भागो । अणुक्क० अणंता भागा । एवं तिरिक्खेसु । आदेसेण णेरइ० मोह० उक्क०-ट्ठिदिउदी० असंखे०भागो । अणुक्क० असंखेज्जा भागा । एवं सव्वणेरइय०-सव्व-पंचिंदियतिरिक्ख-मणुस-मणुसअपज्ज०-देवा जाव अवराइदा त्ति । मणुसपज्ज०-मणुसिणी-सव्वट्ठदेवेसु उक्कस्सट्ठिदिउदी० संखे०भागो । अणुक्क० संखेज्जा भागा । एवं जाव० ।

§ ४४४. जह० पयदं । दुविहो णि०—ओघेण आदेसेण य । ओघेण मोह० जह०ट्ठिदिउदीर० सव्वजी० केव०भागो ? अणंतभागो । अजह० अणंता भागा ।

कि मनुष्य अपर्याप्तकोंमें मोहनीयकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंके आठ भंग हैं । इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए ।

§ ४४२. जघन्यका प्रकरण है । निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे उसी अर्थपदको करके मोहनीयकी जघन्य और अजघन्य स्थितिके उदीरकोंके तीन भंग जानने चाहिए । इसीप्रकार चारों गतियोंमें जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि तिर्यञ्चोंमें जघन्य और अजघन्य स्थितिके उदीरक जीव नियमसे हैं । मनुष्य अपर्याप्तकोंमें मोहनीयकी जघन्य और अजघन्य स्थितिके उदीरकोंके आठ भंग हैं । इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए ।

§ ४४३. भागाभागानुगम दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट । उत्कृष्टका प्रकरण है । निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिके उदीरक जीव सब जीवोंके कितने भागप्रमाण हैं ? अनन्तवें भागप्रमाण हैं । अनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरक जीव अनन्त बहुभागप्रमाण हैं । इसीप्रकार तिर्यञ्चोंमें जानना चाहिए । आदेशसे नारकियोंमें मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिके उदीरक जीव सब जीवोंके असंख्यातवें भागप्रमाण हैं तथा अनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरक जीव सब जीवोंके असंख्यात बहुभागप्रमाण है । इसीप्रकार सब नारकी, सब पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च, सामान्य मनुष्य, मनुष्य अपर्याप्त, सामान्य देव और अपराजित कल्प तकके देवोंमें जानना चाहिए । मनुष्य पर्याप्त, मनुष्यिनी और सर्वार्थसिद्धिके देवोंमें उत्कृष्ट स्थितिके उदीरक जीव सब जीवोंके संख्यातवें भागप्रमाण हैं और अनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरक जीव सब जीवोंके संख्यात बहुभागप्रमाण हैं । इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए ।

§ ४४४. जघन्यका प्रकरण है । निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे मोहनीयकी जघन्य स्थितिके उदीरक जीव सब जीवोंके कितने भागप्रमाण हैं ? अनन्तवें

आदेसेण णेर० मोह० जह०ट्ठिदिउदी० असंखे०भागो । अजह० असंखेज्जा भागा । एवं सव्वणेरइय०-सव्वतिरिक्ख-मणुस-मणुसअपज्ज०-देवा जाव अवराजिदा त्ति । मणुसपज्ज०-मणुसिणी०-सव्वट्ठदेवा जह०ट्ठिदिउदीर० संखे०भागो । अज० संखेज्जा भागा । एवं जाव० ।

§ ४४५. परिमाणं दुविहं—जह० उक्क० । उक्कस्से पयदं । दुविहो णि०—ओघेण आदेसेण य । ओघेण मोह० उक्क०ट्ठिदिउदी० केत्तिया ? असंखेज्जा । अणुक्क० ट्ठिदिउदी० केत्ति० ? अणंता० । एवं तिरिक्खा० । आदेसे० णेरइय० मोह० उक्क०-अणुक्क० ट्ठिदिउदी० केत्ति० ? असंखेज्जा । एवं सव्वणेरइय०-सव्वपंचिंदियतिरिक्ख-मणुसअपज्ज०-देवा भवणादि जाव सहस्सार त्ति । मणुसेसु मोह० उक्क०ट्ठिदिउदी० केत्ति० ? संखेज्जा । अणुक्क० ट्ठिदि०उदीर० केत्ति० ? असंखेज्जा । एवमाणदादि जाव अवराजिदा त्ति । मणुसपज्ज०-मणुसिणी०-सव्वट्ठदेवेसु उक्क० अणुक्क०ट्ठिदिउदीर० केत्ति० ? संखेज्जा । एवं जाव० ।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

§ ४४६. जह० पय० । दुवि० णिद्देसो—ओघेण आदे० । ओघे० मोह० जह०ट्ठिदिउदी० केत्ति० ? संखेज्जा । अजह०-ट्ठिदिउदी० केत्ति० । अणंता । आदे०

भागप्रमाण हैं, अजघन्य स्थितिके उदीरक जीव सब जीवोंके अनन्त बहुभागप्रमाण हैं। आदेशसे नारकियोंमें मोहनीयकी जघन्य स्थितिके उदीरक जीव सब जीवोंके असंख्यातवें भागप्रमाण हैं, अजघन्य स्थितिके उदीरक जीव सब जीवोंके असंख्यात बहुभागप्रमाण हैं। इसीप्रकार सब नारकी, सब तिर्यञ्च, सामान्य मनुष्य, मनुष्य अपर्याप्त और सामान्य देवोंसे लेकर अपराजित विमान तकके देवोंमें जानना चाहिए। मनुष्य पर्याप्त, मनुष्यिनी और सर्वार्थसिद्धिके देवोंमें जघन्य स्थितिके उदीरक जीव सब जीवोंके संख्यातवें भागप्रमाण हैं तथा अजघन्य स्थितिके उदीरक जीव सब जीवोंके संख्यात बहुभागप्रमाण हैं। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

§ ४४५. परिमाण दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट। उत्कृष्टका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिके उदीरक जीव कितने हैं? असंख्यात हैं। अनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरक जीव कितने हैं? अनन्त हैं। इसीप्रकार सामान्य तिर्यञ्चोंमें जानना चाहिए। आदेशसे नारकियोंमें मोहनीयकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरक जीव कितने हैं? असंख्यात हैं? इसीप्रकार सब नारकी, सब पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च, मनुष्य अपर्याप्त, सामान्य देव और भवनवासियोंसे लेकर सहस्रार कल्प तकके देवोंमें जानना चाहिए। मनुष्योंमें उत्कृष्ट स्थितिके उदीरक जीव कितने हैं? संख्यात हैं। अनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरक जीव कितने हैं? असंख्यात हैं। इसीप्रकार आनत कल्पसे लेकर अपराजित विमान तकके देवोंमें जानना चाहिए। मनुष्य पर्याप्त, मनुष्यिनी और सर्वार्थसिद्धिके देवोंमें उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरक जीव कितने हैं? संख्यात हैं। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

§ ४४६. जघन्यका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मोहनीयकी जघन्य स्थितिके उदीरक जीव कितने हैं? संख्यात हैं। अजघन्य स्थितिके उदीरक

णेर० मोह० जह०-अजह० ट्ठिदिउदीर० केत्ति० ? असंखेज्जा। एवं पढमाए सत्तमाए सव्वपंचि०तिरिक्ख-मणुसअप०-देवा भवण०-वाणवें०। बिदियादि छट्ठि त्ति मोह० जह०ट्ठिदिउदी० केत्ति० संखेज्जा। अजह० केत्ति० असंखेज्जा। एवं मणुस-

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

जोदिसियादि जाव अवराजिदा त्ति। तिरिक्खेसु मोह० जह०-अजह० केत्ति० ? अणंता। मणुसपज्ज०-मणुसिणी०-सव्वट्ठदेवा मोह० जह०-अजह०ट्ठिदिउदी० केत्ति० ? संखेज्जा। एवं जाव०।

४४७. खेत्ताणु० दुविहो—जह० उक्क०। उक्क० पयदं। दुविहो णि०—ओघेण आदेसे०। ओघेण मोह० उक्क०ट्ठिदिउदीर० केवडि खेत्ते ? लोगस्स असंखे०भागे। अणुक्क० केव० खेत्ते ? सव्वलोगे। एवं तिरिक्खा०। आदेसेण सेसगदीसु मोह० उक्क०-अणुक्क० ट्ठिदीउदी० लोग० असंखे०भागे। एवं जाव०।

४४८. जह० पयदं। दुविहो णि०—ओघेण आदेसेण य। ओघेण मोह० जह०ट्ठिदिउदीर० लोग० असंखे०भागे। अज० सव्वलोगे। तिरिक्खेसु मोह० जह०-ट्ठिदिउदी० लोग० संखे०भागे। अज० सव्वलोगे। सेसगदीसु जह०-अजह० लोग०

जीव कितने हैं ? अनन्त हैं। आदेशसे नारकियोंमें मोहनीयकी जघन्य और अजघन्य स्थितिके उदीरक जीव कितने हैं ? असंख्यात हैं। इस प्रकार प्रथम पृथिवी और सातवीं पृथिवीके नारकी तथा सब पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च, मनुष्य अपर्याप्त, सामान्य देव, भवनवासी और व्यन्तर देवोंमें जानना चाहिए। दूसरी पृथिवीसे लेकर छठी पृथिवी तकके नारकियोंमें मोहनीयकी जघन्य स्थितिके उदीरक जीव कितने हैं ? संख्यात हैं। अजघन्य स्थितिके उदीरक जीव कितने हैं ? असंख्यात हैं। इसीप्रकार सामान्य मनुष्य तथा ज्योतिषियोंसे लेकर अपराजित विमान तकके देवोंमें जानना चाहिए। तिर्यञ्चोंमें मोहनीयकी जघन्य और अजघन्य स्थितिके उदीरक जीव कितने हैं ? अनन्त हैं। मनुष्य पर्याप्त, मनुष्यिनी और सर्वार्थसिद्धिके देवोंमें मोहनीयकी जघन्य और अजघन्य स्थितिके उदीरक जीव कितने हैं ? संख्यात हैं। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

§ ४४७. क्षेत्रानुगम दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट। उत्कृष्टका प्रकरण है। उसकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिके उदीरक जीवोंका कितना क्षेत्र है ? लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्र है। अनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरक जीवोंका कितना क्षेत्र है ? सर्व लोक क्षेत्र है। इसीप्रकार सामान्य तिर्यञ्चोंमें जानना चाहिए। आदेशसे शेष गतियोंमें मोहनीयकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंका कितना क्षेत्र है ? लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्र है। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

§ ४४८. जघन्यका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मोहनीयकी जघन्य स्थितिके उदीरकोंका कितना क्षेत्र है ? लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्र है और अजघन्य स्थितिके उदीरकोंका सर्वलोक क्षेत्र है। तिर्यञ्चोंमें मोहनीयकी जघन्य स्थितिके उदीरकोंका लोकके संख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्र है और अजघन्य स्थितिके उदीरकोंका सर्व लोक क्षेत्र है। शेष गतियोंमें मोहनीयकी जघन्य और अजघन्य स्थितिके उदीरकोंका

असंखे०भागो । एवं जाव० ।

§ ४४९. पोसणं दुविहं—जह० उक्क० । उक्कस्से पयदं । दुविहो णि०—ओघेण आदेसे० । ओघेण मोह० उक्क०ट्ठिदिउदी० लोग० असंखे०भागो अट्ठ-तेरह-चोद्दस० । अणुक्क० सव्वलोगो ।

§ ४५०. आदेसेण णेरइय० मोह० उक्क०-अणुक्क०ट्ठिदिउदी० लोग० असंखे०-भागो छचोद्दस० । एवं विदियादि सत्तमा त्ति । णवरि सगपोसणं । पढमाए खेत्तं । तिरिक्खेसु मोह० उक्क०ट्ठिदिउदीर० लोग० असंखे०भागो छचोद्दस० । अणुक्क० सव्वलोगो । पंचिंदियतिरिक्खतिए मोह० उक्क०ट्ठिदिउदी० लोग० असंखे०भागो छचोद्दस० देसूणा । अणुक्क० ट्ठिदिउदीर० लोग० असंखे०भागो सव्वलोगो वा ।

लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्र है । इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए ।

विशेषार्थ—तिर्यञ्चोंमें मोहनीयकी जघन्य स्थितिके उदीरक वे हतसमुत्पत्तिक बादर एकेन्द्रिय जीव होते हैं जो सत्कर्मसे कम या सम स्थितिको बाँधकर एक आवलिके बाद उसकी उदीरणा करते हैं । यही कारण है कि यहाँ इनका क्षेत्र लोकके संख्यातवें भागप्रमाण कहा है । शेष क्षेत्र सम्बन्धी सब कथन सुगम है ।

मार्गदर्शक आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

§ ४४९. स्पर्शन दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट । उत्कृष्टका प्रकरण है । निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्रका तथा त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ और तेरह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है । अनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंने सर्व लोकप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है ।

विशेषार्थ—यहाँ त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ भागप्रमाण स्पर्शन विहारवत्स्वस्थानकी अपेक्षा और कुछ कम तेरह भागप्रमाण स्पर्शन मारणान्तिक समुद्घातकी अपेक्षा कहा है । शेष कथन सुगम है ।

§ ४५०. आदेशसे नारकियोंमें मोहनीयकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंने लोकके असंख्यातवें भाग तथा त्रसनालीके चौदह भागोंमें से कुछ कम छह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है । इसीप्रकार दूसरीसे लेकर सातवीं पृथिवी तकके नारकियोंमें जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि अपना अपना स्पर्शन कहना चाहिए । प्रथम पृथिवीमें क्षेत्रके समान स्पर्शन है । तिर्यञ्चोंमें मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंने लोकके असंख्यातवें भाग और त्रसनालीके चौदह भागोंमें से कुछ कम छह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है तथा अनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंने सर्व लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है ? पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकमें मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंने लोकके असंख्यातवें भाग और त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम छह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है तथा अनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंने लोकके असंख्यातवें भाग और सर्व लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है ।

विशेषार्थ—यहाँ सामान्य तिर्यञ्चों और पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकमें मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंका त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम छह भागप्रमाण स्पर्शन मारणान्तिक

§ ४५१. पंचिं०तिरि०अपज्ज०-सव्वमणुस० मोह० उक्क०ट्ठिदिउदी० लोग० असंखे०भागो। अणुक्क० लोग० असंखे०भागो सव्वलोगो वा।

§ ४५२. देवेसु मोह० उक्क०-अणुक्क०ट्ठिदिउदीर० लोग० असंखे०भागो अट्ठ-णवचोद्दस देसूणा। एवं सोहम्मीसाणे। भवण०-वाण०-जोदिसि० मोह० उक्क०-अणुक्क०ट्ठिदिउदीर० लोग० असंखे०भागो अद्धुट्ठा वा अट्ठ-णवचोद्दस०। सणक्कुमारादि सहस्सारे त्ति मोह० उक्क०-अणुक्क०ट्ठिदि०उदीर० लोग० असंखे०भागो अट्ठचोद्द० दे०। आणदादि अच्चुदा त्ति मोह० उक्क०ट्ठिदिउदी० लोग० असंखे०भागो। अणुक्क० लोग० असंखे०भागो छचोद्दस०। उवरि खेत्तं। एवं जाव०।

§ ४५३. जह० पयदं। दुविहो णि०—ओघेण आदेसे०। ओघेण मोह०

समुद्घातकी मुख्यतासे बतलाया है, क्योंकि ऐसे जीवोंका नीचे सातवीं पृथिवीतकके नारकियोंमें मारणान्तिक समुद्घात करना बन जाता है। शेष कथन सुगम है।

§ ४५१. पंचेन्द्रिय तिर्यंच अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्तकोंमें मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है तथा अनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंने लोकके असंख्यातवें भाग और सर्व लोकप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है।

विशेषार्थ—जो मनुष्य, मनुष्यिनी या पंचेन्द्रिय तिर्यंच उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध कर और उसका घात किये बिना अन्तर्मुहूर्तमें उक्त दोनों प्रकारके जीवोंमें मरकर उत्पन्न होते हैं उन्हींके मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिकी उदीरणा होती है। अतः ऐसे जीवोंका स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण है अतः इनमें यह स्पर्शन उक्तप्रमाण कहा है। शेष कथन सुगम है।

§ ४५२. देवोंमें मोहनीयकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंने लोकके असंख्यातवें भाग और त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ तथा कुछ कम नौ भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। इसीप्रकार सौधर्म और ऐशान कल्पमें जानना चाहिए। भवनवासी, व्यन्तर और ज्योतिषी देवोंमें मोहनीयकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंने लोकके असंख्यातवें भाग तथा त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम साढ़े तीन भाग तथा कुछ कम आठ और नौ भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। सनत्कुमारसे सहस्रार कल्प तकके देवोंमें मोहनीयकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंने लोकके असंख्यातवें भाग तथा त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। आनतसे लेकर अच्युत कल्पतकके देवोंमें मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है तथा अनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंने लोकके असंख्यातवें भाग और त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम छह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। आगेके देवोंमें स्पर्शन क्षेत्रके समान है। इसप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

विशेषार्थ—यहाँ अपनी-अपनी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिकी उदीरणाके स्वामित्वका विचार कर स्पर्शन घटित कर लेना चाहिए। सामान्य और अवान्तर देवोंका जो स्पर्शन बतलाया है उससे यहाँ कोई विशेषता नहीं है। इसलिए इसका स्पष्टीकरण नहीं किया।

§ ४५३. जघन्यका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे

जह०ट्ठिदिउदीर० लोग० असंखे०भागो । अज० सव्वलोगो । आदेसे० णेरइय० मोह० जह०ट्ठिदिउदी० लोग० असंखे०भागो । अज० लोग० असंखे०भागो छचोद्दस० देसूणा । एवं विदियादि सत्तमा त्ति । णवरि सगपोसणं । पढमाए खेत्तं ।

§ ४५४. तिरिक्खेसु मोह० जह०ट्ठिदिउदी० लोग० संखे०भागो । अज० सव्वलोगो । सव्वपंचिंदियतिरिक्ख-सव्वमणुस्सेसु मोह० जह० लोग० असंखे०भागो । अज० लोग० असंखे०भागो सव्वलोगो वा । देवा जाव सहस्सार त्ति जह०ट्ठिदिउदीर० लोग० असंखे०भागो । अजह० सगपोसणं । आणदादि अच्चुदा त्ति जह० लोग० असंखे०भागो । अजह० लोग० असंखे०भागो छचोद्दस० देसूणा । उवरि खेत्तं । एवं जाव० ।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

§ ४५५. कालाणु० दुविहं—जह० उक्क० । उक्कस्से पयदं । दुविहो णि०—ओघेण आदेसे० । ओघेण मोह० उक्क०ट्ठिदिउदी० जह० एयसमओ, उक्क० पलिदो०

मोहनीयकी जघन्य स्थितिके उदीरकोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है तथा अजघन्य स्थितिके उदीरकोंने सर्व लोकका स्पर्शन किया है। आदेशसे नारकियोंमें मोहनीयकी जघन्य स्थितिके उदीरकोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है तथा अजघन्य स्थितिके उदीरकोंने लोकके असंख्यातवें भाग और त्रसनालीके चौदह भागोंमें से कुछ कम छह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। इसीप्रकार दूसरीसे लेकर सातवीं पृथिवी तकके नारकियोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि अपना-अपना स्पर्शन कहना चाहिए। पहली पृथिवीमें क्षेत्रके समान स्पर्शन है।

§ ४५४. तिर्यञ्चोंमें मोहनीयकी जघन्य स्थितिके उदीरकोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है तथा अजघन्य स्थितिके उदीरकोंने सर्व लोकका स्पर्शन किया है। सब पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च और सब मनुष्योंमें मोहनीयकी जघन्य स्थितिके उदीरकोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है तथा अजघन्य स्थितिके उदीरकोंने लोकके असंख्यातवें भाग और सर्व लोकप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। सामान्य देव और सहस्रार कल्पतकके देवोंमें मोहनीयकी जघन्य स्थितिके उदीरकोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है तथा अजघन्य स्थितिके उदीरकोंका अपना-अपना स्पर्शन है। आनतसे लेकर अच्युत कल्प तकके देवोंमें मोहनीयकी जघन्य स्थितिके उदीरकोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है तथा अजघन्य स्थितिके उदीरकोंने लोकके असंख्यातवें भाग तथा त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम छह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। ऊपरके देवोंमें स्पर्शन क्षेत्रके समान है। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

विशेषार्थ—स्वामित्व और अपने-अपने स्पर्शनका विचार कर यह स्पर्शन घटित कर लेना चाहिए।

§ ४५५. कालानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट। उत्कृष्टका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है।

असंखे०भागो । अणुक० सव्वद्धा । एवं सव्वणेरइय०-तिरिक्खपंचिंदियतिरिक्खतिय-देवा भवणादि जाव सहस्सार त्ति ।

§ ४५६. पंचिं०तिरि०अपज्ज० मोह० उक्क०ट्ठिदिउदीर० जह० एयस०, उक्क० आवलि० असंखे०भागो । अणुक्क० सव्वद्धा । एवं मणुसअपज्ज० । णवरि अणुक्क० जह० खुद्दाभवग्गहणं समयूणं, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो ।

§ ४५७. मणुसतिए मोह० उक्क०ट्ठिदिउदी० जह० एयस०, उक्क० अंतोमु० । अणुक्क० सव्वद्धा । आणदादि सव्वट्ठा त्ति मोह० उक्कस्स-ट्ठिदिउदी० जह० एयस०, उक्क० संखेज्जा समया । अणुक्क० सव्वद्धा । एवं जाव० ।

अनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंका काल सर्वदा है । इसीप्रकार सब नारकी, सामान्य तिर्यंच, पंचेन्द्रिय तिर्यंचत्रिक, सामान्य देव और भवनवासियोंसे लेकर सहस्रार कल्प तकके देवोंमें जानना चाहिए ।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

विशेषार्थ—मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंका एक जीवकी अपेक्षा जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त बतला आये हैं । अब यदि नाना जीव मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिकी उदीरणा एक समय तक करें और द्वितीयादि समयमें न करें तो यह भी सम्भव है और सन्तानमें भंग पड़े बिना लगातार करते रहें तो यह काल पल्यके असंख्यातवें भाग-प्रमाणसे अधिक नहीं हो सकता । इसी बातका विचार कर यहाँ मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिकी उदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल उक्तप्रमाण कहा है । शेष कथन सुगम है ।

§ ४५६. पचेन्द्रिय तिर्यंच अपर्याप्तकोंमें मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है । अनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंका काल सर्वदा है । इसीप्रकार मनुष्य अपर्याप्तकोंमें जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि इनमें अनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय कम क्षुल्लक भवग्रहण-प्रमाण है और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है ।

विशेषार्थ—उक्त जीवोंमें एक जीवकी अपेक्षा मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय बतला आये हैं । यही कारण है कि यहाँ नाना जीवोंकी अपेक्षा मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण कहा है । शेष कथन सुगम है ।

§ ४५७. मनुष्यत्रिकमें मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है । अनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंका काल सर्वदा है । आनत कल्पसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल संख्यात समय है । अनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंका काल सर्वदा है । इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए ।

विशेषार्थ—यहाँ सामान्य मनुष्योंमें शेष दो प्रकारके मनुष्योंकी मुख्यता है, इसलिए इनमें मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिकी उदीरणा यदि नाना जीव लगातार करते रहें तो भी उस कालका योग अन्तर्मुहूर्त ही होगा । यही कारण है कि यहाँ इनमें उत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंका उत्कृष्ट

§ ४५८. जह० पयदं । दुविहो णिद्देसो—ओघेण आदेसेण य । ओघेण मोह० जह०ट्ठिदि० जह० एयस०, उक्क० संखेज्जा समया । अज० सव्वद्धा । एवं विदियादि छट्ठि त्ति मणुसतिए ओणदिसियादि सव्वट्ठा त्ति ।

§ ४५९. आदेसेण णेरइय० मोह० जह०ट्ठिदिउदीर० जह० एयस०, उक्क० आवलि० असंखे०भागो । अज० सव्वद्धा । एवं पढमाए सव्वपंचिंदियतिरिक्ख-देवा० भवण०-वाणवें० । सत्तमाए मोह० जह०ट्ठिदिउदी० जह० एयस०, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो[1] । अज० सव्वद्धा । तिरिक्खेसु मोह० जह०-अज० सव्वद्धा । मणुस-अपज्ज० मोह० जह०ट्ठिदिउदी० जह० एयस०, उक्क० आवलि० असंखे०भागो । अज० जह० आवलिया समयूणा, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो । एवं जाव० ।

काल अन्तर्मुहूर्त कहा है। अपने-अपने स्वामित्वके अनुसार आनतादि कल्पोंमें भवके प्रथम समयमें ही मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिकी उदीरणा बनती है। अब यदि ऐसी उदीरणा करनेवाले नाना जीव लगातार इन कल्पों और कल्पातीतोंमें उत्पन्न हों तो संख्यात समय तक ही यह क्रम चल सकता है। यही कारण है कि इनमें मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंका उत्कृष्ट काल संख्यात समय कहा है। शेष कथन सुगम है।

§ ४५८. जघन्यका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मोहनीयकी जघन्य स्थितिके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल संख्यात समय है। अजघन्य स्थितिके उदीरकोंका काल सर्वदा है। इसीप्रकार दूसरीसे लेकर छठी पृथिवी तकके नारकी, मनुष्यत्रिक और ज्योतिषियोंसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें जानना चाहिए।

विशेषार्थ—स्वामित्वको ध्यानमें लेने पर स्पष्ट हो जाता है कि मोहनीयकी जघन्य स्थितिकी उदीरणा नाना जीवोंकी अपेक्षा लगातार संख्यात समय तक ही हो सकती है। यही कारण है कि यहाँ मोहनीयकी जघन्य स्थितिके उदीरकोंका उत्कृष्ट काल संख्यात समय कहा है। शेष कथन सुगम है। आगे भी सुगम होनेसे अलग-अलग खुलासा नहीं करेंगे।

§ ४५९. आदेशसे नारकियोंमें मोहनीयकी जघन्य स्थितिके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है। अजघन्य स्थितिके उदीरकोंका काल सर्वदा है। इसीप्रकार प्रथम पृथिवीके नारकी, सब पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च, सामान्य देव भवनवासी और व्यन्तर देवोंमें जानना चाहिए। सातवीं पृथिवीमें मोहनीयकी जघन्य स्थितिके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। अजघन्य स्थितिके उदीरकोंका काल सर्वदा है। तिर्यञ्चोंमें मोहनीयकी जघन्य और अजघन्य स्थितिके उदीरकोंका काल सर्वदा है। मनुष्य अपर्याप्तकोंमें मोहनीयकी जघन्य स्थितिके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है। अजघन्य स्थितिके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय कम एक आवलिप्रमाण है और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

1. आ०प्रतौ आवलि० असंखे०भागो इति पाठः ।

§ ४६०. अंतरं दुविहं—जह० उक्क० । उकस्से पयदं । दुविहो णि०—ओघे० आदेसे० । ओघेण मोह० उक्क०ट्ठिदिउदी० अंतरं जह० एयसमओ, उक्क० अंगुलस्स असंखे०भागो । अणुक्क० णत्थि अंतरं । एवं चदुसु गदीसु । णवरि मणुसअपज्ज० मोह० अणुक्क० जह० एयस० उक्क० पलिदो० असंखे०भागो । एवं जाव० ।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

§ ४६१. जह० पयदं । दुविहो णि०—ओघेण आदेसे० । ओघेण मोह० जह०ट्ठिदिउदी० अंतरं जह० एयसमओ, उक्क० छम्मासा । अज० णत्थि अंतरं । एवं मणुसतिए । णवरि मणुसिणी० वासपुधत्तं ।

४६२. आदेसेण णेरइय० मोह० जह०ट्ठिदिउदी० जह० एयस०, उक्क० अंगुलस्स असंखे०भागो । अज० णत्थि अंतरं । एवं सव्वणेरइय०-सव्वपंचिंदियतिरिक्ख-सव्व-देवा त्ति । तिरिक्खेसु मोह० जह०-अज० णत्थि अंतरं । मणुसअपज्ज० मोह०

---

§ ४६०. अन्तर दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट । उत्कृष्टका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अंगुलके असंख्यातवें भागप्रमाण है । अनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंका अन्तरकाल नहीं है । इसीप्रकार चारों गतियोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि मनुष्य अपर्याप्तकोंमें मोहनीयकी अनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है । इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए ।

विशेषार्थ—मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिकी उदीरणा कोई भी जीव न करे तो अंगुलके असंख्यातवें भाग काल तक वह नहीं होती, इसके बाद उसके उदीरक एक या नाना जीव अवश्य होते हैं । यही कारण है कि यहाँ नाना जीवोंकी अपेक्षा उसका उत्कृष्ट अन्तर काल अंगुलके असंख्यातवें भागप्रमाण बतलाया है । शेष कथन सुगम है ।

§ ४६१. जघन्यका प्रकरण है । निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे मोहनीयकी जघन्य स्थितिके उदीरकोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर छह माह है । अजघन्य स्थितिके उदीरकोंका अन्तरकाल नहीं है । इसीप्रकार मनुष्यत्रिकमें जानना चाहिए । किन्तु इतनी विशेषता है कि मनुष्यिनियोंमें जघन्य स्थितिके उदीरकोंका उत्कृष्ट अन्तर वर्षपृथक्त्वप्रमाण है ।

विशेषार्थ—मनुष्यिनियोंका उपशम और क्षपक श्रेणिपर आरोहणका उत्कृष्ट अन्तर वर्षपृथक्त्व प्रमाण है इसलिए इनमें मोहनीयकी जघन्य स्थितिके उदीरकोंका उत्कृष्ट अन्तर उक्त कालप्रमाण कहा है । शेष कथन सुगम है ।

§ ४६२. आदेशसे नारकियोंमें मोहनीयकी जघन्य स्थितिके उदीरकोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अंगुलके असंख्यातवें भागप्रमाण है । अजघन्य स्थितिके उदीरकोंका अन्तरकाल नहीं है । इसीप्रकार सब नारकी, सब पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च और सब देवोंमें जानना चाहिए । तिर्यञ्चोंमें मोहनीयकी जघन्य और अजघन्य स्थितिके उदीरकोंका अन्तरकाल नहीं है । मनुष्य अपर्याप्तकोंमें मोहनीयकी जघन्य स्थितिके उदीरकोंका जघन्य

जह०ट्ठिदिउदी० जह० एयसमओ, उक्क० अंगुलस्स असंखे०भागो । अज० जह० एयस०, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो । एवं जाव० ।

§ ४६३. भावो उक्क०-अणुक्क० जह० अजह० सव्वत्थ ओदइओ भावो ।

आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

§ ४६४. अप्पाबहुअं दुविहं—जह० उक्क० । उक्कस्से पयदं । दुविहो णि०—ओघेण आदेसे० । ओघेण सव्वत्थोवा मोह० उक्क०ट्ठिदिउदी० । अणुक्क०ट्ठिदिउदी० अणंतगुणा । एवं तिरिक्खा० । आदे० णेर० मोह० सव्वत्थोवा उक्क०ट्ठिदिउदी०, अणुक्क०ट्ठिदिउदी० असंखेज्जगुणा । एवं सव्वणेरइय०-सव्वपंचिंदियतिरिक्ख-मणुस-मणुसअपज्ज०-देवा अवराजिदा त्ति । मणुसपज्ज०-मणुसिणी०-सव्वट्ठदेवा सव्वत्थो० मोह० उक्क०ट्ठिदिउदी०, अणुक्क०ट्ठिदिउदी० संखे०गुणा । एवं जाव० ।

§ ४६५. जह० पयदं । दुविहो णि०—ओघेण आदेसे० । ओघेण सव्वत्थो० मोह० जह०ट्ठिदिउदी०, अज०ट्ठिदिउदी० अणंतगुणा । आदेसे० णेरइय० सव्वत्थो० मोह० जह०ट्ठिदिउदी०, अज०ट्ठिदिउदीर० असंखे०गुणा । एवं सव्वणेरइय०-सव्व-

---

अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अंगुलके असंख्यातवें भागप्रमाण है । अजघन्य स्थितिके उदीरकोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है ।

विशेषार्थ—मनुष्य अपर्याप्त यह सान्तर मार्गणा है । आगममें इसका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण बतलाया है । उसे ध्यानमें रखकर यहाँ मोहनीयकी अजघन्य स्थितिके उदीरकोंका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण कहा है । शेष कथन सुगम है ।

§ ४६३. भाव—मोहनीयकी उत्कृष्ट, अनुत्कृष्ट, जघन्य और अजघन्य स्थितिके उदीरकोंका सर्वत्र औदयिक भाव है ।

§ ४६४. अल्पबहुत्व दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट । उत्कृष्टका प्रकरण है । निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिके उदीरक जीव सबसे स्तोक हैं । उनसे अनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरक जीव अनन्तगुणे हैं । इसीप्रकार तिर्यञ्चोंमें जानना चाहिए । आदेशसे नारकियोंमें मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिके उदीरक जीव सबसे स्तोक हैं । उनसे अनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरक जीव असंख्यातगुणे हैं । इसीप्रकार सब नारकी, सब पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च, सामान्य मनुष्य, मनुष्य अपर्याप्त और सामान्य देवोंसे लेकर अपराजित-विमान तकके देवोंमें जानना चाहिए । मनुष्य पर्याप्त, मनुष्यिनी और सर्वार्थसिद्धिके देवोंमें मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिके उदीरक जीव सबसे स्तोक हैं । उनसे अनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरक जीव संख्यातगुणे हैं । इसीप्रकार अनाहारक मार्गणातक जानना चाहिए ।

§ ४६५. जघन्यका प्रकरण है । निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे मोहनीयकी जघन्य स्थितिके उदीरक जीव सबसे स्तोक हैं । उनसे अजघन्य स्थितिके उदीरक जीव अनन्तगुणे हैं । आदेशसे नारकियोंमें मोहनीयकी जघन्य स्थितिके उदीरक जीव सबसे स्तोक हैं । उनसे अजघन्य स्थितिके उदीरक जीव असंख्यातगुणे हैं । इसीप्रकार सब नारकी,

तिरिक्ख-मणुस-मणुसअपज्ज०-देवा जाव अवराइदा त्ति । मणुसपज्ज०-मणुसिणी०-सव्वट्ठदेवा० सव्वत्थोवा मोह० जह०ट्ठिदिउदी०, अज० ट्ठिदिउदीर० संखे०गुणा । एवं जाव० ।

§ ४६६. भुजगारट्ठिदिउदीरणाए तत्थ इमाणि तेरस अणियोगद्दाराणि—समुक्कित्तणा जाव अप्पाबहुए त्ति । समुक्कित्तणाणु० दुविहो णि०—ओघेण आदेसे० । ओघेण मोह० अत्थि भुज०-अप्प०-अवट्ठि०-अवत्त०ट्ठिदिउदीरगा । एवं मणुसतिए । आदेसेण णेरइय० मोह० अत्थि भुज०-अप्प०-अवट्ठि०ट्ठिदिउदी० । एवं सव्वणेरइय०-सव्वतिरिक्ख-मणुसअपज्ज०-देवा जाव सहस्सार त्ति । आणदादि सव्वट्ठा त्ति मोह० अत्थि अप्पदर०उदीर० । एवं जाव० ।

§ ४६७. सामित्ताणु० दुविहो णिद्देसो—ओघेण आदेसे० । ओघेण भुज० अवट्ठि० कस्स ? अण्णद० मिच्छाइट्ठि० । णवरि सेढिविवक्खाए भुज० सम्माइट्ठिस्स वि लब्भइ । एदमेत्थ ण विवक्खियं । अप्प० कस्स ? अण्णद० सम्माइट्ठि० मिच्छाइट्ठि० । अवत्त० कस्स ? अण्णद० जो उवसामगो परिवदमाणगो मणुसो देवो वा पढमसमयउदीरगो । एवं मणुसतिए । णवरि देवो त्ति ण भाणिदव्वो । एवं सव्व-

---

सब तिर्यञ्च, सामान्य मनुष्य, मनुष्य अपर्याप्त और सामान्य देवोंसे लेकर अपराजित विमान तकके देवोंमें जानना चाहिए । मनुष्य पर्याप्त, मनुष्यिनी और सर्वार्थसिद्धिके देवोंमें मोहनीयकी जघन्य स्थितिके उदीरक जीव सबसे स्तोक हैं । उनसे अजघन्य स्थितिके उदीरक जीव संख्यातगुणे हैं । इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए ।

§ ४६६. भुजगार स्थिति उदीरणामें वहाँ ये तेरह अनुयोगद्वार हैं—समुत्कीर्तनासे लेकर अल्पबहुत्व तक । समुत्कीर्तनानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे मोहनीयकी भुजगार, अल्पतर, अवस्थित और अवक्तव्य स्थितिके उदीरक जीव हैं । इसीप्रकार मनुष्यत्रिकमें जानना चाहिए । आदेशसे नारकियोंमें मोहनीयकी भुजगार, अल्पतर और अवस्थित स्थितिके उदीरक जीव हैं । इसीप्रकार सब नारकी, सब तिर्यञ्च, मनुष्य अपर्याप्त और सामान्य देवोंसे लेकर सहस्रार कल्प तकके देवोंमें जानना चाहिए । आनत कल्पसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें मोहनीयकी अल्पतर स्थितिके उदीरक जीव हैं । इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए ।

§ ४६७. स्वामित्वकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे भुजगार और अवस्थित स्थितिकी उदीरणा किसके होती है ? अन्यतर मिथ्यादृष्टिके होती है । इतनी विशेषता है कि श्रेणिकी विवक्षामें भुजगार स्थितिकी उदीरणा सम्यग्दृष्टिके भी प्राप्त होती है । किन्तु इसकी यहाँ विवक्षा नहीं है । अल्पतर स्थितिकी उदीरणा किसके होती है ? अन्यतर सम्यग्दृष्टि और मिथ्यादृष्टिके होती है । अवक्तव्य स्थितिकी उदीरणा किसके होती है ? जो गिरनेवाला अन्यतर उपशामक मनुष्य या (मरण होनेपर) देव प्रथम समयमें मोहनीयकी स्थितिका उदीरक है उसके मोहनीयकी अवक्तव्य स्थितिकी उदीरणा होती है । इसीप्रकार मनुष्यत्रिकमें कहना चाहिए । इतनी विशेषता है कि इनमें देव पदका आलाप

णेरइय-तिरिक्ख-पंचिंदियतिरिक्खतिय०-देवा जाव सहस्सार त्ति। णवरि अवत्त० णत्थि। पंचि०तिरि०अपज्ज०-मणुसअपज्ज० सव्वपदाणि कस्स ? अण्णद०। आणदादि सव्वट्ठा त्ति मोह० अप्प० कस्स ? अण्णदरस्स। एवं जाव०।

§ ४६८. कालाणु० दुविहो णि०—ओघेण आदेसे०। ओघेण मोह० भुज० जह० एयस०, उक्क० चत्तारि समया। अप्प० जह० एयस०, उक्क० तेवट्ठिसागरोवम-सदं तिण्णि पलिदो० सादि०। अवट्ठि० जह० एयस०, उक्क० अंतोमु०। अवत्त० जह० उक्क० एयसमओ।

§ ४६९. आदेसेण णेरइय० मोह० भुज० जह० एयस०, उक्क० तिण्णि समया। अप्प० जह० एयस०, उक्क० तेत्तीसं सागरो० देसूणाणि। अवट्ठि० ओघं। एवं पढमाए। णवरि सागरोवमं देसूणं।

नहीं करना चाहिए। इसीप्रकार सब नारकी, सामान्य तिर्यञ्च, पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिक और सामान्य देवोंसे लेकर सहस्रार तकके देवोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनमें अवक्तव्य पद नहीं है। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्तकोंमें सब पद किसके होते हैं ? अन्यतरके होते हैं। आनत कल्पसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें मोहनीयकी अल्पतरस्थितिकी उदीरणा किसके होती है ? अन्यतरके होती है। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

§ ४६८. कालानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मोहनीयकी भुजगारस्थितिके उदीरकका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल चार समय है। अल्पतर स्थितिके उदीरकका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त और तीन पल्य अधिक एक सौ त्रेसठ सागर है। अवस्थित स्थितिके उदीरकका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। अवक्तव्यस्थितिके उदीरकका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है।

विशेषार्थ—स्थितिविभक्ति पु० भाग ३ पृ० ९८ में भुजगार आदि तीन पदोंका स्थिति-सत्त्वकी अपेक्षा जैसा खुलासा किया है उसी प्रकार यहाँ उदीरणाकी अपेक्षा खुलासा कर लेना चाहिए। इतना विशेष है कि यह काल उदीरणाकी अपेक्षा जैसे घटित हो वैसे आलापके साथ कहना चाहिए। अवक्तव्य स्थितिउदीरणा उपशमश्रेणिसे गिरते समय सूक्ष्मसांपराय गुणस्थानके प्रथम समयमें या मरण कर देव होनेके प्रथम समयमें ही होती है, इसलिए इसका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय कहा।

§ ४६९. आदेशसे नारकियोंमें मोहनीयकी भुजगारस्थितिके उदीरकका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल तीन समय है। अल्पतरस्थितिके उदीरकका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल कुछ कम तेतीस सागर है। अवस्थितस्थितिके उदीरकका काल ओघके समान है। इसीप्रकार प्रथम पृथिवीमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि यहाँ अल्पतरस्थितिके उदीरकका उत्कृष्ट काल कुछ कम एक सागर है।

विशेषार्थ—नरकमें असंज्ञी जीवोंकी मरकर उत्पत्ति सम्भव है, इस अपेक्षासे यहाँ पर भुजगारस्थितिकी उदीरणाके तीन समय ही बन सकते हैं। यही कारण है कि नारकियोंमें

§ ४७०. विदियादि सत्तमा त्ति भुज० जह० एयस०, उक्क० बे समया। अप्प० जह० एयस०, उक्क० सगट्ठिदी देसूणा। अवट्ठि० ओघं।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

§ ४७१. तिरिक्खेसु भुज०-अवट्ठि० ओघं। अप्प० जह० एयस०, उक्क० तिण्णि पलिदो० सादिरेयाणि। एवं पंचिंदियतिरिक्खतिए। पंचि०तिरिक्खअपज्ज०-मणुसअपज्ज० भुज० जह० एयस०, उक्क० चत्तारि समया। अप्प०-अवट्ठि० जह० एयस०, उक्क० अंतोमु०।

§ ४७२. मणुसतिए भुज० जह० एयस०, उक्क० चत्तारि समया। अप्प० जह० एगस०, उक्क० तिण्णि पलिदो० पुव्वकोडितिभागेण सादिरेयाणि। णवरि मणुसिणी० अंतोमुहुत्तेण सादिरेगे। अवट्ठि०-अवत्त० ओघं।

§ ४७३. देवेसु भुज० जह० एयस०, उक्क०, तिण्णि समया। अप्प० जह० एगस०, उक्क० तेत्तीसं सागरोवमं। अवट्ठि० ओघं। एवं भवण०-वाणवेंत०। णवरि

भुजगारस्थितिके उदीरकका उत्कृष्ट काल तीन समय कहा है। यहाँ अद्धाक्षय, शरीर ग्रहण और संक्लेशक्षयसे भुजगारके तीन समय प्राप्त कर भुजगार स्थितिउदीरणाके तीन समय प्राप्त करने चाहिए। शेष कथन सुगम है।

§ ४७०. दूसरीसे लेकर सातवीं पृथिवी तकके नारकियोंमें भुजगारस्थितिके उदीरकका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल दो समय है। अल्पतरस्थितिके उदीरकका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल कुछ कम अपनी-अपनी स्थितिप्रमाण है। अवस्थित-स्थितिके उदीरकका काल ओघके समान है।

विशेषार्थ—इन नरकोंमें असंज्ञी जीव मरकर नहीं उत्पन्न होते, इसलिए इनमें अद्धाक्षय और संक्लेशक्षयसे ही भुजगारस्थिति उदीरकके दो समय प्राप्त होते हैं। शेष कथन सुगम है।

§ ४७१. तिर्यञ्चोंमें भुजगार और अवस्थितस्थितिके उदीरकका काल ओघके समान है। अल्पतरस्थितिके उदीरकका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल साधिक तीन पल्य है। इसीप्रकार पञ्चेन्द्रिय तिर्यंचत्रिकमें जानना चाहिए। पंचेन्द्रिय तिर्यंच अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्तकोंमें भुजगारस्थितिके उदीरकका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल चार समय है। अल्पतर और अवस्थितस्थितिके उदीरकका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है।

§ ४७२. मनुष्यत्रिकमें भुजगारस्थितिके उदीरकका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल चार समय है। अल्पतरस्थितिके उदीरकका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल पूर्वकोटिका त्रिभाग अधिक तीन पल्य है। इतनी विशेषता है कि मनुष्यिनीमें यह काल अन्तर्मुहूर्त अधिक तीन पल्य है। अवस्थित और अवक्तव्यस्थितिके उदीरकका काल ओघके समान है।

§ ४७३. देवोंमें भुजगारस्थितिके उदीरकका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल तीन समय है। अल्पतरस्थितिके उदीरकका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल तेतीस सागर है। अवस्थितस्थितिके उदीरकका काल ओघके समान है। इसीप्रकार भवनवासी और

सगट्ठिदी। जोदिसियादि सहस्सारे त्ति एवं चेव। णवरि भुज० जह० एयस०, उक्क० वेसमया। आणदादि सव्वट्ठा त्ति मोह० अप्प० जह० उक्क० जहण्णुक्कस्सट्ठिदी। एवं जाव०।

§ ४७४. अंतराणु० दुविहो णि०—ओघेण आदेसे०। ओघेण मोह० भुज०-अवट्ठि० जह० एयस०, उक्क० तेवट्ठिसागरोवमसदं तिण्णि पलिदोवमं सादिरेयं। अप्प० जह० एयस०, उक्क० अंतोमु०। अवत्त० जह० अंतोमु०, उक्क० उवड्ढ-पोग्गलपरियट्टं।

§ ४७५. आदेसेण णेरइय० भुज०-अवट्ठि० जह० एगस०, उक्क० तेत्तीसं सागरोवमं देसूणं। अप्प० ओघं। एवं सव्वणेरइय०। णवरि सगट्ठिदी देसूणा। तिरिक्खेसु भुज०-अवट्ठि० जह० एयस०, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो। अप्प०

व्यन्तर देवोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि अपनी-अपनी स्थिति कहनी चाहिए। ज्योतिषियोंसे लेकर सहस्रार कल्पतकके देवोंमें इसीप्रकार जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनमें भुजगारस्थितिके उदीरकका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल दो समय है। आनत कल्पसे लेकर सर्वार्थसिद्धितकके देवोंमें मोहनीयकी अल्पतरस्थितिके उदीरकका जघन्य और उत्कृष्ट काल अपनी-अपनी जघन्य और उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण है। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

विशेषार्थ—कालका प्रारम्भमें ओघसे और कतिपयगति मार्गणाके भेदोंकी अपेक्षा जो स्पष्टीकरण किया है उसे ध्यानमें लेनेपर शेष गतिमार्गणाके भेदोंमें स्पष्टीकरण करनेमें कठिनाई नहीं जाती, इसलिए अलगसे स्पष्टीकरण नहीं किया है।

§ ४७४. अन्तरानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मोहनीयकी भुजगार और अवस्थितस्थितिके उदीरकका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक तीन पल्य अधिक एक सौ त्रेसठ सागर है। अल्पतरस्थितिके उदीरकका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अवक्तव्यस्थितिके उदीरकका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर उपार्ध पुद्गलपरिवर्तनप्रमाण है।

विशेषार्थ—पहले अल्पतरस्थितिके उदीरकका उत्कृष्ट काल साधिक तीन पल्य अधिक एक सौ त्रेसठ सागर बतला आये हैं। वही यहाँ भुजगार और अवस्थितस्थितिके उदीरकका उत्कृष्ट अन्तरकाल प्राप्त होता है, इसलिए यह तत्प्रमाण कहा है। शेष कथन सुगम है।

§ ४७५. आदेशसे नारकियोंमें भुजगार और अवस्थितस्थितिके उदीरकका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल कुछ कम तेतीस सागर है। अल्पतरस्थितिके उदीरकका अन्तरकाल ओघके समान है। इसीप्रकार सब नारकियोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि कुछ कम अपनी-अपनी स्थिति कहनी चाहिए। तिर्यञ्चोंमें भुजगार और अवस्थितस्थितिके उदीरकका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। अल्पतरस्थितिके उदीरकका अन्तरकाल ओघके समान

ओघं । पंचिंदियतिरिक्खतिए भुज०-अवट्ठि० जह० एयसमओ, उक्क० पुव्वकोडिपुधत्तं । पंचिंदियतिरिक्खअपज्ज०-मणुसअपज्ज० भुज०-अप्प०-अवट्ठि० जह० एयस०, उक्क० अंतोमु० ।

§ ४७६. मणुसतिए भुज०-अवट्ठि जह० एयस०, उक्क० पुव्वकोडी देसूणा । अवत्त० जह० अंतोमु०, उक्क० पुव्वकोडिपुधत्तं । अप्प० ओघं० ।

§ ४७७. देवेसु भुज०-अवट्ठि० जह० एगस०, उक्क० अट्ठारससागरोवमं सादिरेयं । अप्प० ओघं । एवं भवणादि जाव सहस्सार त्ति । णवरि सगट्ठिदी देसूणा । आणदादि सव्वट्ठा त्ति अप्प० णत्थि अंतरं । एवं जाव० ।

§ ४७८. णाणाजीवभंगविचयाणु० दुविहो णि०—ओघेण आदेसे० । ओघेण मोह० भुज०-अप्प०-अवट्ठि० णिय० अत्थि, सिया एदे च अवत्तगो च, सिया एदे

है । पंचेन्द्रिय तिर्यंचत्रिकमें भुजगार और अवस्थितस्थितिके उदीरकका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल पूर्वकोटिपृथक्त्वप्रमाण है । पञ्चेन्द्रिय तिर्यंच अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्तकोंमें भुजगार, अल्पतर और अवस्थितस्थितिके उदीरकका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त है ।

विशेषार्थ—सामान्य तिर्यंचोंमें एकेन्द्रिय जीव भी सम्मिलित हैं और उनमें अल्पतर स्थितिकी उदीरणाका उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण प्राप्त होता है । उसे ख्यालमें रखकर ही यहाँ सामान्य तिर्यंचोंमें भुजगार और अवस्थितस्थितिके उदीरकका उत्कृष्ट अन्तरकाल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण कहा है । शेष कथन सुगम है ।

§ ४७६. मनुष्यत्रिकमें भुजगार और अवस्थितस्थितिके उदीरकका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल कुछ कम एक पूर्वकोटिप्रमाण है । अवक्तव्यस्थितिके उदीरकका जघन्य अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तरकाल पूर्वकोटिपृथक्त्वप्रमाण है । अल्पतरस्थितिके उदीरकका अन्तरकाल ओघके समान है ।

विशेषार्थ—जो मनुष्य आठ वर्ष अन्तर्मुहूर्त होनेपर सम्यक्त्व उत्पन्न कर भवके अन्तर्मुहूर्त पूर्व तक सम्यग्दृष्टि रहकर मिथ्यादृष्टि हो जाता है उसीके भुजगार और अवस्थितस्थितिके उदीरकका उत्कृष्ट अन्तरकाल कुछ कम एक पूर्वकोटि बनता है । इसी तथ्यको ध्यानमें रखकर मनुष्यत्रिकमें यह अन्तरकाल उक्त कालप्रमाण कहा है । शेष कथन सुगम है ।

§ ४७७. देवोंमें भुजगार और अवस्थितस्थितिके उदीरकका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल साधिक अठारह सागर है । अल्पतर स्थितिके उदीरकका अन्तरकाल ओघके समान है । इसीप्रकार भवनवासियोंसे लेकर सहस्रार कल्पतकके देवोंमें जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि अपनी-अपनी स्थिति कहनी चाहिए । आनतकल्पसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें अल्पतर स्थितिके उदीरकका अन्तरकाल नहीं है । इसीप्रकार अनाहारक मार्गणातक जाना चाहिए ।

§ ४७८. नाना जीवोंकी अपेक्षा भंगविचयानुगमसे निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे मोहनीयकी भुजगार, अल्पतर और अवस्थितस्थितिके उदीरक जीव नियमसे

च अवत्तगा च। आदेसेण णेरइय० अप्प०-अवट्ठि० णियमा अत्थि, सिया एदे च भुजगारओ च, सिया एदे च भुजगारगा च। एवं सव्वणेरइय०-सव्वपंचिंदियतिरिक्ख-देवा जाव सहस्सार त्ति। तिरिक्खेसु भुज०-अप्प०-अवट्ठि० णिय० अत्थि। मणुसतिए अप्प०-अवट्ठि० णिय० अत्थि। सेसपदा भयणिज्जा। मणुसअपज्ज० सव्वपदा भयणिज्जा। आणदादि सव्वट्ठा त्ति अप्प० णिय० अत्थि। एवं जाव०।

§ ४७९. भागाभागाणु० दुविहो णि०—ओघेण आदेसे०। ओघेण अवत्त०-उदीर० सव्वजी० केव० ? अणंतभागो। भुज० असंखे०भागो। अवट्ठि० संखे०भागो। अप्प० संखेज्जा भागा। एवं सव्वणेरइय०-सव्वतिरिक्ख०-मणुसअपज्ज०-देवा जाव सहस्सार त्ति। णवरि अवत्त० णत्थि। मणुसेसु अवट्ठि० संखे०भागो। अप्प० संखेज्जा भागा। सेसपदा असंखे०भागो। मणुसपज्ज०-मणुसिणी० अप्प० संखेज्जा भागा। सेसपदा संखे०भागो। आणदादि सव्वट्ठा त्ति णत्थि भागाभागो। एवं जाव०।

§ ४८०. परिमाणाणु० दुविहो णि०—ओघेण आदेसे०। ओघेण मोह०

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

हैं, कदाचित् ये नाना जीव हैं और एक अवक्तव्यस्थितिका उदीरक जीव है, कदाचित् ये नाना जीव हैं और नाना अवक्तव्यस्थितिके उदीरक जीव हैं। आदेशसे नारकियोंमें अल्पतर और अवस्थितस्थितिके उदीरक जीव नियमसे हैं, कदाचित् ये नाना जीव हैं और एक भुजगारस्थितिका उदीरक जीव है, कदाचित् ये नाना जीव हैं और नाना भुजगारस्थितिके उदीरक जीव हैं। इसी प्रकार सभी नारकी, सब पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च, सामान्य देव और सहस्रार कल्पतकके देवोंमें जानना चाहिए। तिर्यञ्चोंमें भुजगार, अल्पतर और अवस्थितस्थितिके उदीरक जीव नियमसे हैं। मनुष्यत्रिकमें अल्पतर और अवस्थितस्थितिके उदीरक जीव नियमसे हैं। शेष पद भजनीय हैं। मनुष्य अपर्याप्तकोंमें सब पद भजनीय हैं। आनत कल्पसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें अल्पतरस्थितिके उदीरक जीव नियमसे हैं। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

§ ४७९. भागाभागानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे अवक्तव्यस्थितिके उदीरक जीव सब जीवोंके कितने भागप्रमाण हैं ? अनन्तवें भागप्रमाण हैं। भुजगारस्थितिके उदीरक जीव असंख्यातवें भागप्रमाण हैं। अवस्थितस्थितिके उदीरक जीव संख्यातवें भागप्रमाण है और अल्पतरस्थितिके उदीरक जीव संख्यात बहुभागप्रमाण हैं। इसीप्रकार सब नारकी, सब तिर्यञ्च, मनुष्य अपर्याप्त और सामान्य देवोंसे लेकर सहस्रार कल्पतकके देवोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनमें अवक्तव्य पद नहीं है। मनुष्योंमें अवस्थितस्थितिके उदीरक जीव सब जीवोंके संख्यातवें भागप्रमाण हैं। अल्पतर स्थितिके उदीरक जीव संख्यात बहुभागप्रमाण हैं। शेष पदोंके उदीरक जीव असंख्यातवें भागप्रमाण हैं। मनुष्य पर्याप्त और मनुष्यिनियोंमें अल्पतर स्थितिके उदीरक जीव संख्यात बहुभागप्रमाण है और शेष पदोंके उदीरक जीव संख्यातवें भागप्रमाण हैं। आनत कल्पसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें भागाभाग नहीं है। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

§ ४८०. परिमाणानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे

भुज०-अप्प०-अवट्ठि० केत्तिया ? अणंता । अवत्त० केत्ति० ? संखेज्जा । एवं तिरिक्खेसु । णवरि अवत्त० णत्थि । आदेसेण णेरइय० सव्वपदा केत्ति० ? असंखेज्जा । परमपूज्य आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज एवं सव्वणेरइय०-सव्वपंचिं०तिरिक्ख-मणुसअपज्ज०-देवा भवणादि जाव सहस्सार त्ति । मणुसेसु अवत्त० केत्ति० ? संखेज्जा । सेसपदा केत्ति० ? असंखेज्जा । मणुसपज्ज०-मणुसिणी० सव्वपदा केत्ति० ? संखेज्जा । आणदादि सव्वट्ठा त्ति अप्प० केत्ति० ? असंखेज्जा । णवरि सव्वट्ठे संखेज्जा । एवं जाव० ।

§ ४८१. खेत्ताणु० दुविहो णि०—ओघेण आदेसे० । ओघेण मोह० तिण्णि पदा केव० ? सव्वलोगे । अवत्त० लोग० असंखे०भागे । एवं तिरिक्खा० । णवरि अवत्त० णत्थि । सेसगदीसु सव्वपदा लोग० असंखे०भागे । एवं जाव० ।

§ ४८२. पोसणाणु० दुविहो णि०—ओघेण आदेसे० । ओघेण मोह० तिण्णिपदेहिं सव्वलोगो पोस० । अवत्त० लोग० असंखे०भागो । एवं तिरिक्खा० । णवरि अवत्त० णत्थि ।

§ ४८३. आदेसे णेरइय० सव्वपद० लोग० असंखेज्जदिभागो छचोद्दस०

मोहनीयकी भुजगार, अल्पतर और अवस्थितस्थितिके उदीरक जीव कितने हैं ? अनन्त हैं। अवक्तव्यस्थितिके उदीरक जीव कितने हैं ? संख्यात हैं । इसीप्रकार तिर्यञ्चोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनमें अवक्तव्यपद नहीं है । आदेशसे नारकियोंमें सब पदोंके उदीरक जीव कितने हैं ? असंख्यात हैं । इसीप्रकार सब नारकी, सब पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च, मनुष्य अपर्याप्त, सामान्य देव और भवनवासियोंसे लेकर सहस्रार कल्पतकके देवोंमें जानना चाहिए। मनुष्योंमें अवक्तव्यस्थितिके उदीरक जीव कितने हैं ? संख्यात हैं ? शेष पदोंके उदीरक जीव कितने हैं ? असंख्यात हैं । मनुष्य पर्याप्त और मनुष्यिनियोंमें सब पदोंके उदीरक जीव कितने हैं ? संख्यात हैं । आनतकल्पसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें अल्पतरस्थितिके उदीरक जीव कितने हैं ? असंख्यात हैं । इतनी विशेषता है कि सर्वार्थसिद्धिमें संख्यात हैं । इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए ।

§ ४८१. क्षेत्रानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे मोहनीयके तीन पदोंके उदीरक जीवोंका कितना क्षेत्र है ? सर्व लोक क्षेत्र है । अवक्तव्यपदके उदीरक जीवोंका क्षेत्र लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण है । इसीप्रकार सामान्य तिर्यञ्चोंमें जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि इनमें अवक्तव्यपद नहीं है । शेष गतियोंमें सब पदोंके उदीरक जीवोंका क्षेत्र लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण है । इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए ।

§ ४८२. स्पर्शनानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे मोहनीयके तीन पदोंके उदीरक जीवोंने सर्व लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है । अवक्तव्यपदके उदीरक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है । इसीप्रकार सामान्य तिर्यञ्चोंमें जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि इनमें अवक्तव्यपद नहीं है ।

§ ४८३. आदेशसे नारकियोंमें सब पदोंके उदीरक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग

१. ता०प्रतौ असंखेज्जा इति पाठः । २. आ०-ता०प्रत्योः असंखेज्जा इति पाठः ।

देसूणा। एवं विदियादि सत्तमा त्ति। णवरि सगपोसणं। पढमाए खेत्तं। सव्व-पंचिंदियतिरिक्ख-सव्वमणुस सव्वपद० लोग० असंखे०भागो सव्वलोगो वा। णवरि मणुसतिए अवत्त० लोग० असंखे०भागो। देवेसु मोह० तिण्णिपद० लोग० असंखे०-भागो अट्ठ-णवचोद्दस० देसूणा। एवं सव्वदेवाणं। णवरि सगपदाणं सगपोसणं णेदव्वं। एवं जाव०।

§ ४८४. कालाणु० दुविहो णि०—ओघेण आदेसेण य। ओघेण मोह० भुज०-अप्प०-अवट्ठि० सव्वद्धा। अवत्त० जह० एयस०, उक्क० संखेज्जा समया। आदेसेण णेरइय० भुज० जह० एयस०, उक्क० आवलि० असंखे०भागो। अप्प०-अवट्ठि० सव्वद्धा। एवं सव्वणेरइय०-सव्वपंचिंदियतिरिक्ख-देवा जाव सहस्सार त्ति।

§ ४८५. तिरिक्खेसु सव्वपदा सव्वद्धा। मणुसेसु णारयभंगो। णवरि अवत्त० ओघं। मणुसपज्ज०-मणुसिणी० अप्प०-अवट्ठि० सव्वद्धा। भुज०-अवत्त० जह० एयस०, उक्क० संखेज्जा समया। मणुसअपज्ज० भुज० जह० एयस०, उक्क० आवलि०

और त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम छह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। इसीप्रकार दूसरीसे लेकर सातवीं पृथिवी तकके नारकियोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि अपना-अपना स्पर्शन द्वितीयादि पृथिवियोंके कहना चाहिए। प्रथम पृथिवीके नारकियोंमें स्पर्शन क्षेत्रके समान है। सब पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च और सब मनुष्योंमें सब पदोंके उदीरक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग और सर्व लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। इतनी विशेषता है कि मनुष्यत्रिकमें अवक्तव्यपदके उदीरक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। देवोंमें मोहनीयके तीन पदोंके उदीरक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग और त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ और नौ भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। इसीप्रकार सब देवोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि अपने-अपने पदोंका अपना-अपना स्पर्शन ले आना चाहिए। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

§ ४८४. कालानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मोहनीयकी भुजगार, अल्पतर और अवस्थितस्थितिके उदीरकोंका काल सर्वदा है। अवक्तव्य-स्थितिके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल संख्यात समय है। आदेशसे नारकियोंमें भुजगारस्थितिके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है। अल्पतर और अवस्थितस्थितिके उदीरकोंका काल सर्वदा है। इसीप्रकार सब नारकी, सब पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च, सामान्य देव और सहस्रार कल्पतकके देवोंमें जानना चाहिए।

§ ४८५. तिर्यञ्चोंमें सब पदोंके उदीरकोंका काल सर्वदा है। मनुष्योंमें नारकियोंके समान भंग है। इतनी विशेषता है कि इनमें अवक्तव्यपदके उदीरकोंका काल ओघके समान है। मनुष्य पर्याप्त और मनुष्यिनियोंमें अल्पतर और अवस्थितस्थितिके उदीरकोंका काल सर्वदा है। भुजगार और अवक्तव्यस्थितिके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल संख्यात समय है। मनुष्य अपर्याप्तकोंमें भुजगारस्थितिके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय

असंखे०भागो। अप्प०-अवट्ठि० जह० एगस०, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो। आणदादि सव्वट्ठा त्ति अप्प० सव्वद्धा। एवं जाव०।

§ ४८६. अंतराणु० दुविहो णि०—ओघेण आदेसे०। ओघेण तिण्हं पदाणं णत्थि अंतरं। अवत्त० जह० एयस०, उक्क० वासपुधत्तं। एवं तिरिक्खेसु। णवरि अवत्त० णत्थि। आदेसेण णेरइय० भुज० जह० एयस०, उक्क० अंतोमु०। अप्प०-अवट्ठि० णत्थि अंतरं। एवं सव्वणेरइय० सव्वपंचिंदियतिरिक्ख-देवा जाव सहस्सार त्ति। मणुसतिए णारयभंगो। णवरि अवत्त० ओघं। मणुसअपज्ज० सव्वपदा जह० एयस०, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो। आणदादि सव्वट्ठा त्ति अप्प० णत्थि अंतरं। एवं जाव०।

§ ४८७. भावाणुगमेण सव्वत्थ ओदइयो भावो।

§ ४८८. अप्पाबहुआणु० दुविहो णि०—ओघेण आदेसे०। ओघेण सव्वत्थो० अवत्त०। भुज० अणंतगुणा। अवट्ठि० असंखे०गुणा। अप्प० संखे०गुणा।

§ ४८९. आदेसेण णेरइय० सव्वत्थो० भुज०। अवट्ठि० असंखे०गुणा।

और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है। अल्पतर और अवस्थितस्थितिके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। आनतकल्पसे लेकर सर्वार्थसिद्धितकके देवोंमें अल्पतरस्थितिके उदीरकोंका काल सर्वदा है। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जाना चाहिए।

§ ४८६. अन्तरानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे तीन पदोंके उदीरकोंका अन्तरकाल नहीं है। अवक्तव्यस्थितिके उदीरकोंका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल वर्षपृथक्त्व है। इसीप्रकार तिर्यञ्चोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनमें अवक्तव्यपद नहीं है। आदेशसे नारकियोंमें भुजगारस्थितिके उदीरकोंका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त है। अल्पतर और अवस्थित स्थितिके उदीरकोंका अन्तरकाल नहीं है। इसीप्रकार सब नारकी, सब पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च और सामान्य देवोंसे लेकर सहस्रार कल्पतकके देवोंमें जानना चाहिए। मनुष्यत्रिकमें नारकियोंके समान भंग है। इतनी विशेषता है कि इनमें अवक्तव्यपदका भंग ओघके समान है। मनुष्य अपर्याप्तकोंमें सब पदोंके उदीरकोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। आनतकल्पसे लेकर सर्वार्थसिद्धितकके देवोंमें अल्पतरस्थितिके उदीरकोंका अन्तरकाल नहीं है। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

§ ४८७. भावानुगमकी अपेक्षा सर्वत्र औदयिक भाव है।

§ ४८८. अल्पबहुत्वानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे अवक्तव्यस्थितिके उदीरक जीव सबसे स्तोक हैं। उनसे भुजगारस्थितिके उदीरक जीव अनन्तगुणे हैं। उनसे अवस्थितस्थितिके उदीरक जीव असंख्यातगुणे हैं। उनसे अल्पतर-स्थितिके उदीरक जीव संख्यातगुणे हैं।

§ ४८९. आदेशसे नारकियोंमें भुजगारस्थितिके उदीरक जीव सबसे स्तोक हैं। उनसे

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

अप्प० संखे०गुणा । एवं सव्वणेरइय०-सव्वतिरिक्ख-मणुसअपज्ज०-देवा जाव सहस्सार त्ति । मणुसेसु सव्वत्थो० अवत्त०ट्ठिदिउदी० । भुज० असंखे०गुणा । अवट्ठि० असंखे०गुणा । अप्प० संखे०गुणा । एवं मणुसपज्ज०-मणुसिणी० । णवरि संखे०गुणं कायव्वं । आणदादि सव्वट्ठा त्ति णत्थि अप्पाबहुअं । एवं जाव० ।

§ ४९०. पदणिक्खेवे त्ति तत्थ इमाणि तिण्णि अणिओगद्दाराणि—समुक्कित्तणा सामित्तं अप्पाबहुअं चेदि । समुक्कि० दुविहं—जह० उक्क० । उक्कस्से पयदं । दुविहो णि०—ओघेण आदेसेण य । ओघेण मोह० अत्थि उक्क०वड्ढि-हाणि०-अवट्ठा० । एवं चदुगदीसु । णवरि आणदादि सव्वट्ठा त्ति अत्थि उक्क०हाणी । एवं जाव० ।

§ ४९१. एवं जहण्णयं पि णेदव्वं ।

§ ४९२. सामित्तं दुविहं—जह० उक्क० । उक्कस्से पयदं । दुविहो णि०—ओघेण आदेसेण य । ओघेण मोह० उक्क०वड्ढी कस्स ? अण्णद० तप्पाओग्गजहण्णट्ठिदिमुदीरेमाणो उक्कस्सट्ठिदिं पबद्धो तस्स आवलियादीदस्स तस्स उक्क०वड्ढी । तस्सेव से काले उक्क० अवट्ठाणं । उक्क०हाणी कस्स ? अण्णद० उक्कस्सट्ठिदिमुदीरेमाणो

अवस्थितस्थितिके उदीरक जीव असंख्यातगुणे हैं । उनसे अल्पतरस्थितिके उदीरक जीव संख्यातगुणे हैं । इसीप्रकार सब नारकी, सब तिर्यञ्च, मनुष्य अपर्याप्त, और सामान्य देवोंसे लेकर सहस्रार कल्पतकके देवोंमें जानना चाहिए । मनुष्योंमें अवक्तव्यस्थितिके उदीरक जीव सबसे स्तोक हैं । उनसे भुजगारस्थितिके उदीरक जीव असंख्यातगुणे हैं । उनसे अवस्थित स्थितिके उदीरक जीव असंख्यातगुणे हैं । उनसे अल्पतरस्थितिके उदीरक जीव संख्यातगुणे हैं । इसीप्रकार मनुष्य पर्याप्त और मनुष्यिनियोंमें जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि इनमें असंख्यातगुणेके स्थानमें संख्यातगुणा करना चाहिए । आनतकल्पसे लेकर सर्वार्थसिद्धितकके देवोंमें अल्पबहुत्व नहीं है । इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए ।

§ ४९०. पदनिक्षेपका अधिकार है । उसमें ये तीन अनुयोगद्वार हैं—समुत्कीर्तना, स्वामित्व और अल्पबहुत्व । समुत्कीर्तनाकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट । उत्कृष्टका प्रकरण है । निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे मोहनीयकी उत्कृष्ट वृद्धि, हानि और अवस्थान है । इसीप्रकार चारों गतियोंमें जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि आनतकल्पसे लेकर सर्वार्थसिद्धितकके देवोंमें उत्कृष्ट हानि है । इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए ।

§ ४९१. इसीप्रकार जघन्य पदनिक्षेपका भी जानना चाहिए ।

§ ४९२. स्वामित्व दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट । उत्कृष्टका प्रकरण है । निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे मोहनीयकी उत्कृष्ट वृद्धि किसके होती है ? तत्प्रायोग्य जघन्य स्थितिकी उदीरणा करनेवाला अन्यतर जो उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करता है, एक आवलिके बाद उसके उत्कृष्ट वृद्धि होती है । उसीके अनन्तर समयमें उत्कृष्ट अवस्थान होता है । उत्कृष्ट हानि किसके होती है ? उत्कृष्ट स्थितिकी उदीरणा करनेवाला जो अन्यतर

उक्कस्सयं ट्ठिदिखंडयं हणदि, तस्स उक्क०हाणी। एवं चदुगदीसु। णवरि पंचि०तिरि-क्खअपज्ज०-मणुसअपज्ज० उक्क०वड्ढी कस्स? अण्णद० तप्पाओग्गजहण्णट्ठिदिमुदीरे-माणो तप्पाओग्गउक्कस्सट्ठिदिं पबद्धो तस्स आवलियादीदस्स उक्क०वड्ढी। तस्सेव से काले उक्क० अवट्ठा०। उक्क०हाणी कस्स? अण्ण० तिरिक्खो वा मणुसो उक्कस्सट्ठिदि-मुदीरेमाणो उक्कस्सयं ट्ठिदिखंडयं पादयमाणो अपज्जत्तएसु उववण्णो तस्स पढमे ट्ठिदि-खंडये हदे तस्स उक्क०हाणी०। आणदादि णवगेवज्जा त्ति उक्क०हाणी कस्स? अण्णद० तप्पाओग्गुक्कस्सट्ठिदिमुदीरेमाणो पढमसम्मत्ताहिमुहो जादो तेण पढमे ट्ठिदि-खंडए हदे तस्स उक्क०हाणी०। अणुद्दिसादि सव्वट्ठा त्ति उक्क०हाणी कस्स? अण्णद० वेदयसम्माइट्ठिस्स अणंताणुबंधी विसंजोएतस्स पढमे ट्ठिदिखंडए हदे तस्स उक्क०हाणी। एवं जाव०।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

§ ४९३. जह० पयदं। दुविहो णि०—ओघेण आदेसेण य। ओघेण मोह० जह०वड्ढी कस्स? अण्णद० जो समयूणमुक्कस्सट्ठिदिमुदीरेमाणो उक्कस्सट्ठिदिमुदीरेदि तस्स जह०वड्ढी। जह०हाणी कस्स? अण्णद० जो उक्कस्सट्ठिदिमुदीरेमाणो समयूण-ट्ठिदिमुदीरेदि तस्स जह०हाणी। एगदरत्थावट्ठाणं। एवं चदुगदीसु। णवरि आणदादि

जीव उत्कृष्ट स्थितिकाण्डकका हनन करता है उसके उत्कृष्ट हानि होती है। इसीप्रकार चारों गतियोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्तकोंमें उत्कृष्ट वृद्धि किसके होती है? तत्प्रायोग्य जघन्य स्थितिकी उदीरणा करनेवाला अन्यतर जो जीव तत्प्रायोग्य उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करता है, एक आवलिके बाद उसके उत्कृष्ट वृद्धि होती है। उसीके अनन्तर समयमें उत्कृष्ट अवस्थान होता है। उत्कृष्ट हानि किसके होती है? उत्कृष्ट स्थितिकी उदीरणा करनेवाला जो अन्यतर तिर्यञ्च या मनुष्य उत्कृष्ट स्थिति-काण्डकका घात करता हुआ अपर्याप्तकोंमें उत्पन्न हुआ, उसके प्रथम स्थितिकाण्डकका घात करने पर उत्कृष्ट हानि होती है। आनतकल्पसे लेकर नौ ग्रैवेयक तकके देवोंमें उत्कृष्ट हानि किसके होती है? जो तत्प्रायोग्य उत्कृष्ट स्थितिकी उदीरणा करनेवाला अन्यतर जीव प्रथम सम्यक्त्वके अभिमुख है उसके प्रथम स्थितिकाण्डकके घात करने पर उत्कृष्ट हानि होती है। अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें उत्कृष्ट हानि किसके होती है? अन्यतर जो वेदकसम्यग्दृष्टि जीव अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी विसंयोजना कर रहा है उसके प्रथम स्थितिकाण्डकके घात करने पर उत्कृष्ट हानि होती है। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

§ ४९३. जघन्यका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मोहनीयकी जघन्य वृद्धि किसके होती है? अन्यतर जो एक समय कम उत्कृष्ट स्थितिकी उदीरणा करनेवाला उत्कृष्ट स्थितिकी उदीरणा करता है उसके जघन्य वृद्धि होती है। जघन्य हानि किसके होती? अन्यतर जो उत्कृष्ट स्थितिकी उदीरणा करनेवाला एक समय कम स्थितिकी उदीरणा करता है उसके जघन्य हानि होती है। इनमेंसे किसी एक जगह जघन्य अवस्थान होता है। इसीप्रकार चारों गतियोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि आनतकल्पसे

सव्वट्ठा त्ति जह०हाणी कस्स ? अण्णद० अधट्ठिदिं गालेमाणस्स तस्स जह०हाणी । एवं जाव० ।

§ ४९४. अप्पाबहुअं दुविहं—जह० उक्क० । उक्कस्से पयदं । दुविहो णि० ओघेण आदेसे० । ओघेण सव्वत्थो० उक्क०हाणी । वड्ढी अवट्ठाणं च विसेसा० । एवं चदुगदीसु । णवरि पंचिंतिरिक्खअपज्ज०-मणुसअपज्ज० सव्वत्थो० उक्क०वड्ढी अवट्ठाणं च । हाणी संखे०गुणा । आणदादि सव्वट्ठा त्ति णत्थि अप्पाबहुअं । एवं जाव० ।

§ ४९५. जह० पयदं । दुविहो णि०—ओघेण आदेसे० । ओघेण मोह० जह०वड्ढि-हाणि-अवट्ठाणाणि सारिसाणि । एवं चदुगदीसु । णवरि आणदादि सव्वट्ठा त्ति णत्थि अप्पाबहुअं । एवं जाव० ।

§ ४९६. वड्ढिउदीरणे त्ति तत्थ इमाणि तेरस अणियोगद्दाराणि—समुक्कित्तणा जाव अप्पाबहुए त्ति । समुक्कित्तणाणु० दुविहो णि०—ओघेण आदेसेण य । ओघेण मोह० अत्थि असंखे०भागवड्ढि-हाणी संखे०भागवड्ढि-हाणी संखे०गुणवड्ढि-हाणी असंखे०गुणवड्ढि-हाणी अवट्ठि० अवत्त० । आदेसेण णेरइय० अत्थि तिण्णिवड्ढि-हाणी-अवट्ठि० । एवं सव्वणेर०-सव्वतिरिक्ख०-मणुसअपज्ज०-देवा जाव सहस्सार त्ति ।

लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें जघन्य हानि किसके होती है ? अधःस्थितिकी गालना करनेवाला जो अन्यतर जीव है उसके जघन्य हानि होती है । इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए ।

§ ४९४. अल्पबहुत्व दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट । उत्कृष्टका प्रकरण है । निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे उत्कृष्ट हानि सबसे स्तोक है । उत्कृष्ट वृद्धि और अवस्थान विशेष अधिक है । इसीप्रकार चारों गतियोंमें जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि पञ्चेन्द्रिय तिर्यंच अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्तकोंमें उत्कृष्ट वृद्धि और अवस्थान सबसे स्तोक है । उससे उत्कृष्ट हानि संख्यातगुणी है । आनत कल्पसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें अल्पबहुत्व नहीं है । इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए ।

§ ४९५. जघन्यका प्रकरण है । निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे मोहनीयकी जघन्य वृद्धि, हानि और अवस्थान समान हैं । इसीप्रकार चारों गतियोंमें जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि आनतकल्पसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें अल्पबहुत्व नहीं है । इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए ।

§ ४९६. वृद्धि उदीरणाका प्रकरण है । उसमें ये तेरह अनुयोगद्वार हैं—समुत्कीर्तनासे लेकर अल्पबहुत्व तक । समुत्कीर्तनाका निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे मोहनीयकी असंख्यात भागवृद्धि-हानि, संख्यात भागवृद्धि-हानि, संख्यात गुणवृद्धि-हानि, असंख्यात गुणवृद्धि-हानि, अवस्थान और अवक्तव्यपद है । आदेशसे नारकियोंमें तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थान पद है । इसप्रकार सब नारकी, सब तिर्यंच, मनुष्य अपर्याप्त और सामान्य

मणुसतिए ओघं। आणदादि सव्वट्ठा त्ति अत्थि असंखे०भागहाणी संखे०भागहाणी। एवं जाव०।

§ ४९७. सामित्ताणु० दुविहो णिद्दे०—ओघेण आदेसे०। ओघेण मोह० तिण्णिवड्ढि०-अवट्ठि कस्स? अण्णद० मिच्छाइट्ठिस्स। तिण्णिहाणि० कस्स? अण्णद० सम्माइट्ठि० मिच्छाइट्ठि०। असंखे०गुणवड्ढि-हाणि० कस्स? अण्णद० सम्माइट्ठि०। अवत्त० भुज०भंगो। एवं मणुसतिए।

§ ४९८. आदेसेण णेरइय० तिण्णिवड्ढि-हाणी-अवट्ठि० ओघं। एवं सव्वणेरइय०-तिरिक्ख-पंचिंदियतिरिक्खतिय-देवा भवणादि जाव सहस्सार त्ति। पंचिं०-तिरिक्खअपज्ज०-मणुसअपज्ज० तिण्णिवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० कस्स? अण्णद०। आणदादि णवगेवज्जा त्ति असंखे०भागहाणि-संखे०भागहाणि० कस्स? अण्णद० सम्माइट्ठि० मिच्छाइट्ठिस्स वा। अणुदिसादि सव्वट्ठा त्ति असंखे०भागहा०-संखे०-भागहा० कस्स? अण्णदरस्स। एवं जाव०।

§ ४९९. कालाणु० दुविहो णि०—ओघेण आदेसे य। ओघेण तिण्णिवड्ढी केवचिरं०? जह० एयस०, उक्क० बेसमया। असंखे०भागहा० जह० एयस०, उक्क० तेवट्ठिसागरोवमसदं पलिदो० असंखे०भागेण सादिरे०। संखे०भागहाणि०-संखे०-

---

देवोंसे लेकर सहस्रार कल्पतकके देवोंमें जानना चाहिए। मनुष्यत्रिकमें ओघके समान भंग है। आनत कल्पसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें असंख्यात भागहानि और संख्यात भागहानि है। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

§ ४९७. स्वामित्वानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मोहनीयकी तीन वृद्धि और अवस्थान किसके होते हैं? अन्यतर मिथ्यादृष्टिके होते हैं। तीन हानि किसके होती हैं? अन्यतर सम्यग्दृष्टि और मिथ्यादृष्टिके होती हैं। असंख्यात गुणवृद्धि और हानि किसके होती हैं? अन्यतर सम्यग्दृष्टिके होती हैं। अवक्तव्यपदका भंग भुजगारके समान है। इसीप्रकार मनुष्यत्रिकमें जानना चाहिए।

§ ४९८. आदेशसे नारकियोंमें तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थानका भंग ओघके समान है। इसीप्रकार सब नारकी, सामान्य तिर्यञ्च, पंचेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिक, सामान्य देव और भवनवासियोंसे लेकर सहस्रार तकके देवोंमें जानना चाहिए। पंचेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्तकोंमें तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थान किसके होते हैं? अन्यतरके होते हैं। आनतकल्पसे लेकर नौ ग्रैवेयक तकके देवोंमें असंख्यात भागहानि और संख्यात भागहानि किसके होती हैं? अन्यतर सम्यग्दृष्टि या मिथ्यादृष्टिके होती हैं। अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धितकके देवोंमें असंख्यात भागहानि और संख्यात भागहानि किसके होती है? अन्यतरके होती हैं। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

§ ४९९. कालानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे तीन वृद्धियोंका कितना काल है? जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल दो समय है। असंख्यात भागहानिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक

गुणहाणि०-असंखेज्जगुणवड्ढि०हाणि-अवत्त० जहण्णुक्क० एगस० । अवट्ठि० जह० एगस०, उक्क० अंतोमु० ।

§ ५००. आदेसेण णेरइय० असंखे० भागवड्ढि० जह० एगस०, उक्क० बे-समया । असंखे०भागहाणि० जह० एयस०, उक्क० तेत्तीसंसागरो० देसूणाणि । दोवड्ढि-हाणि० जह०-उक्क० एयसमओ । अवट्ठि० ओघं । एवं सव्वणेरइय० । णवरि सगट्ठिदी देसूणा ।

एक सौ त्रेसठ सागर है। संख्यात भागहानि, संख्यात गुणहानि, असंख्यात गुणवृद्धि, असंख्यात गुणहानि और अवक्तव्यका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अवस्थितका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है।

विशेषार्थ—असंख्यात भागवृद्धि, संख्यात भागवृद्धि और संख्यात गुणवृद्धिका अद्धाक्षय या संक्लेशक्षयसे एक समय प्राप्त कर उसी रूपमें उसकी उदीरणा होनेपर इनके उदीरकका जघन्य काल एक समय कहा है। तथा जो जीव पहले समयमें अद्धाक्षयसे और दूसरे समयमें संक्लेशक्षयसे असंख्यातवें भागप्रमाण स्थितिको बढ़ाकर बाँधता है तथा क्रमसे उसी रूपमें उनकी उदीरणा करता है तब असंख्यात भागवृद्धिका उत्कृष्ट काल दो समय प्राप्त होनेसे वह तत्प्रमाण कहा है। तथा जब कोई द्वीन्द्रिय जीव एक समय तक संक्लेशक्षयसे संख्यातवें भागप्रमाण स्थितिको बढ़ाकर बाँधता है और दूसरे समयमें मरकर तथा त्रीन्द्रियोंमें उत्पन्न होकर पूर्वस्थितिसे संख्यातवें भाग अधिक त्रीन्द्रियके योग्य स्थितिको बढ़ाकर बाँधता है और क्रमसे उसी रूपमें उनकी उदीरणा करता है तब संख्यात भागवृद्धिका उत्कृष्ट काल दो समय प्राप्त होनेसे वह तत्प्रमाण कहा है। तथा जो एकेन्द्रिय जीव एक मोड़ा लेकर संज्ञियोंमें उत्पन्न होता है उसके पहले समयमें असंज्ञीके योग्य और दूसरे समयमें संज्ञीके योग्य स्थितिबन्ध होता है। इसप्रकार इस जीवके संख्यात गुणवृद्धिके दो समय प्राप्त कर क्रमसे उसी रूपमें उनकी उदीरणा करनेपर संख्यात गुणवृद्धिका उत्कृष्ट काल दो समय कहा है। असंख्यात भागहानिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक १६३ सागर स्पष्ट ही है। इसका विशेष खुलासा स्थितिविभक्ति भाग ३ पृ० १४२ से जान लेना चाहिए। शेष हानि और वृद्धियों तथा अवक्तव्यपदका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है यह स्पष्ट ही है। अवस्थित उदीरणा कमसे कम एक समयतक और अधिकसे अधिक अन्तर्मुहूर्त काल तक हो यह सम्भव है, इसलिए इसका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त कहा है।

§ ५००. आदेशसे नारकियोंमें असंख्यात भागवृद्धिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल दो समय है। असंख्यात भागहानिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल कुछ कम तेतीस सागर है। दो वृद्धियों और दो हानियोंका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अवस्थितका भंग ओघके समान है। इसीप्रकार सब नारकियोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि कुछ कम अपनी-अपनी स्थिति कहनी चाहिए।

विशेषार्थ—यहाँ अद्धाक्षय और संक्लेशक्षयसे असंख्यात भागवृद्धिके दो समय प्राप्त होना सम्भव है, इसलिए इसका उत्कृष्ट काल दो समय कहा है। शेष कथन सुगम है। इसी प्रकार विचारकर आगे भी कालको घटित कर लेना चाहिए।

§ ५०१. तिरिक्खेसु तिण्णिवड्ढि-दोहाणि-अवट्ठि० ओघं। असंखे०भागहा० जह० एयस०, उक्क० तिण्णिपलिदो० सादिरेयाणि। एवं पंचिंदियतिरिक्खतिए। णवरि संखे०भागवड्ढि० जहण्णुक्क० एयस०। पंचिं०तिरि०अपज्ज०-मणुसअपज्ज० असंखे०भागवड्ढि०-संखे०गुणवड्ढि० जह० एयस०, उक्क० बेसमया। असंखे०भागहाणि-अवट्ठि० जह० एयस०, उक्क० अंतोमु०। संखे०भागवड्ढि-दोहाणि० जहण्णुक्क० एयस०। मणुसतिए पंचिंदियतिरिक्खभंगो। णवरि असंखे०गुणवड्ढि-हाणि-अवत्त० जह०-उक्क० एयस०।

§ ५०२. देवेसु असंखे०भागहा० जह० एयसमओ, उक्क० तेत्तीसं सागरोवमा०। सेसपदाणं णारयभंगो। एवं भवणादि जाव सहस्सार त्ति। णवरि सगट्ठिदी। आणदादि सव्वट्ठा त्ति। असंखे०भागहा० जह० अंतोमुहुत्तं, उक्क०सगट्ठिदी। संखे०-भागहाणि० जहण्णु० एयस०। एवं जाव०।

---

§ ५०१. तिर्यञ्चोंमें तीन वृद्धियों, दो हानियों और अवस्थितपदका भंग ओघके समान है। असंख्यात भागहानिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल साधिक तीन पल्य है। इसीप्रकार पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनमें संख्यात भागवृद्धिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्तकोंमें असंख्यात भागवृद्धि और संख्यात गुणवृद्धिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल दो समय है। असंख्यात भागहानि और अवस्थितका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। संख्यात भागवृद्धि और दो हानियोंका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। मनुष्यत्रिकमें पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चके समान भंग है। इतनी विशेषता है कि असंख्यात गुणवृद्धि, असंख्यात गुणहानि और अवक्तव्यका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है।

§ ५०२. देवोंमें असंख्यात भागहानिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल तेतीस सागर है। शेष पदोंका भंग नारकियोंके समान है। इसीप्रकार भवनवासियोंसे लेकर सहस्रार कल्पतकके देवोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि अपनी-अपनी स्थिति कहनी चाहिए। आनतकल्पसे लेकर सर्वार्थसिद्धितकके देवोंमें असंख्यात भागहानिका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट काल अपनी स्थितिप्रमाण है। संख्यात भागहानिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

विशेषार्थ—जो आनतादिका देव वहाँ उत्पन्न होनेके अन्तर्मुहूर्तमें अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजना करता है उसके प्रारम्भसे लेकर उसके पूर्व असंख्यात भागहानि होती रहती है, इसलिए यहाँ इसका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त कहा है। नौवें ग्रैवेयक तकके देव वहाँ उत्पन्न होनेके प्रथम समयसे लेकर अन्तर्मुहूर्तमें प्रथमोपशम सम्यक्त्वको भी प्राप्त करते हैं, इसलिए इस अपेक्षासे इनमें असंख्यात भागहानिका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त बन जाता है। इन आनतादि सब देवोंमें विसंयोजनाके समय संख्यात भागहानि होती है तथा नौ ग्रैवेयक तकके इन देवोंमें प्रथम सम्यक्त्वकी उत्पत्तिके समय भी संख्यात भागहानि होती है। यतः इसका काल एक समय है, अतः इसका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय कहा। शेष कथन सुगम है।

§ ५०३. अंतराणु० दुविहो णि०—ओघेण आदेसेण य । ओघेण असंखेज्ज-भागवड्डि-अवट्टि० जह० एगस०, उक्क० तेवट्ठिसागरोवमसदं तिण्णि पलिदो० सादिरेयाणि । असंखे०भागहा० जह० एगस०, उक्क० अंतोमु० । दोवड्डि-हाणि० जह० एगस० अंतोमु०, उक्क० अणंतकालमसंखेज्जा पोग्गलपरियट्टा । असंखे०गुणवड्डि-हा०-अवत्त० जह० अंतोमु०, उक्क० उवड्ढपोग्गलपरियट्टं । आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

§ ५०४. आदेसेण णेरइय० असंखे०भागवड्डि-अवट्ठि० जह० एयस०, दोवड्डी-हाणि जह० अंतो०, उक्क० तेतीसं सागरो० देसू० । असंखे०भागहा० ओघं । एवं सव्वणेर० । णवरि सगट्ठिदी देसू० ।

§ ५०५. तिरिक्खेसु असंखे०भागवड्डि-अवट्ठि० जह० एयस०, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो । असंखे०भागहा० जह० एयस०, उक्क० अंतोमु० । दोवड्डि-हाणि० जह० एगस०, अंतोमु० उक्क० अणंतकालमसंखे० । पंचिंदियतिरिक्खतिए असंखे०-भागवड्डि-संखे०गुणवड्डि० अवट्ठि० जह० एयस०, संखे०भागवड्डि०-संखे०गुणहाणि०

§ ५०३. अन्तरानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे असंख्यात भागवृद्धि और अवस्थितपदका जघन्य अन्तर काल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल साधिक तीन पल्य अधिक १६३ सागर है । असंख्यात भागहानिका जघन्य अन्तर काल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त है । दो वृद्धियों और दो हानियोंका जघन्य अन्तरकाल क्रमसे एक समय तथा अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट अन्तरकाल अनन्त काल है जो असंख्यात पुद्गल परिवर्तनप्रमाण है । असंख्यात गुणवृद्धि, असंख्यात गुणहानि और अवक्तव्यका जघन्य अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तरकाल उपार्ध पुद्गल परिवर्तन-प्रमाण है ।

विशेषार्थ—स्वामित्व और कालको ध्यानमें रखकर अन्तरकालका स्पष्टीकरण सुगम है, इसलिए अलगसे खुलासा नहीं किया । आगे भी यही समझना । दिशाका ज्ञान करनेके लिए स्थितिविभक्ति भाग तीन पृ० १५० आदिके विशेषार्थ देखो । इतना अवश्य है कि यहाँ उदीरणाकी अपेक्षा यह अन्तरकाल घटित करना चाहिए ।

§ ५०४. आदेशसे नारकियोंमें असंख्यात भागवृद्धि और अवस्थितका जघन्य अन्तर काल एक समय है, दो वृद्धियों और दो हानियोंका जघन्य अन्तर काल अन्तर्मुहूर्त है तथा सबका उत्कृष्ट अन्तरकाल कुछ कम तेतीस सागर है । असंख्यात भागहानिका भंग ओघके समान है । इसीप्रकार सब नारकियोंमें जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि कुछ कम अपनी-अपनी स्थिति कहनी चाहिए ।

§ ५०५ तिर्यञ्चोंमें असंख्यात भागवृद्धि और अवस्थितका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है । असंख्यात भागहानिका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त है । दो वृद्धियों और दो हानियोंका जघन्य अन्तरकाल क्रमसे एक समय और अन्तर्मुहूर्त है तथा उत्कृष्ट अन्तरकाल अनन्त काल है जो असंख्यात पुद्गल परिवर्तनप्रमाण है । पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकमें असंख्यात भागवृद्धि, संख्यात गुणवृद्धि और अवस्थितपदका जघन्य अन्तरकाल एक समय है, संख्यात

जह० अंतोमु०, उक्क० पुव्वकोडिपुधत्तं । असंखे०भागहा० जह० एगस०, उक्क० अंतोमु० । संखे०भागहा० जह० अंतोमु०, उक्क० तिण्णि पलिदो० सादिरेयाणि । पंचि०तिरि०अपज्ज०-मणुसअपज्ज० असंखे०भागवड्ढि-हाणि-संखे०गुणवड्ढि-अवट्ठि० जह० एगस०, उक्क० अंतोमु० । संखे०भागवड्ढि-हाणि-संखे०गुणहाणि० जह० उक्क० अंतोमु० ।

§ ५०६. मणुसतिए असंखे०भागवड्ढि-संखे०गुणवड्ढि-अवट्ठि० जह० एगस०, संखे०भागवड्ढि-संखे०गुणहाणि० जह० अंतोमु०, उक्क० सव्वेसिं पुव्वकोडी देसूणा । असंखे०भागहा० जह० एयस०, उक्क० अंतोमु० । संखे०भागहाणि० जह० अंतोमु०, उक्क० तिण्णि पलिदो० सादिरेयाणि । असंखे०गुणवड्ढि-हाणि-अवत्त० जह० अंतोमु०, उक्क० पुव्वकोडिपुधत्तं ।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

§ ५०७. देवेसु असंखे०भागवड्ढि-अवट्ठि० जह० एयस०, दोवड्ढि-संखे०गुणहाणि० जह० अंतोमु०, उक्क० अट्ठारस सागरो० सादिरेयाणि । असंखे०भागहा० ओघं । संखे०भागहाणि० जह० अंतोमु०, उक्क० एक्कत्तीसं सागरो० देसूणाणि । एवं भवणादि जाव सहस्सार त्ति । णवरि सगट्ठिदी देसूणा । आणदादि णवगेवज्जा त्ति

भागवृद्धि और संख्यात गुणहानिका जघन्य अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त है तथा सबका उत्कृष्ट अन्तरकाल पूर्वकोटिपृथक्त्वप्रमाण है। असंख्यात भागहानिका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त है। संख्यात भागहानिका जघन्य अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तरकाल साधिक तीन पल्य है। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्तकोंमें असंख्यात भागवृद्धि, असंख्यात भागहानि, संख्यात गुणवृद्धि और अवस्थित-पदका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त है। संख्यात भागवृद्धि, संख्यात भागहानि और संख्यात गुणहानिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त है।

§ ५०६. मनुष्यत्रिकमें असंख्यात भागवृद्धि संख्यात गुणवृद्धि और अवस्थितका जघन्य अन्तरकाल एक समय है, संख्यात भागवृद्धि और संख्यात गुणहानिका जघन्य अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त है तथा सबका उत्कृष्ट अन्तरकाल कुछ कम एक पूर्वकोटि है। असंख्यात भाग-हानिका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त है। संख्यात भागहानिका जघन्य अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तरकाल साधिक तीन पल्य है। असंख्यात गुणवृद्धि, असंख्यात गुणहानि और अवक्तव्यका जघन्य अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तरकाल पूर्वकोटिपृथक्त्वप्रमाण है।

§ ५०७. देवोंमें असंख्यात भागवृद्धि और अवस्थितपदका जघन्य अन्तरकाल एक समय है, दो वृद्धियों और संख्यात गुणहानिका जघन्य अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त है तथा सबका उत्कृष्ट अन्तरकाल साधिक अठारह सागर है। असंख्यात भागहानिका अन्तरकाल ओघके समान है। संख्यात भागहानिका जघन्य अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तरकाल कुछ कम इकतीस सागर है। इसीप्रकार भवनवासियोंसे लेकर सहस्रार कल्पतकके देवोंमें जानना चाहिए।

असंखे०भागहा० जह० उक्क० एयसमओ । संखे०भागहा० जह० अंतोमु०, उक्क० सगट्ठिदी देसूणा । अणुदिसादि सव्वट्ठा त्ति असंखे०भागहा० जहण्णु० एयसमओ । संखे०भागहा० जहण्णुक्क० अंतोमु० । एवं जाव० ।

§ ५०८. णाणाजीवभंगविचयाणु० दुविहो णि०—ओघेण आदेसे० । ओघेण असंखे०भागवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० णिय० अत्थि । सेसपदा भयणिज्जा । एवं तिरिक्खेसु । आदेसेण णेरइय० असंखे०भागहा०-अवट्ठि० णिय० अत्थि । सेसपदा भयणिज्जा । एवं तिरिक्खेसु । आदेसेण णेरइय० असंखे०भागहा०-अवट्ठि० णिय० अत्थि । सेसपदा भयणिज्जा । एवं सव्वणेरइय०-सव्वपंचिंदियतिरिक्ख-मणुसतिय-देवा जाव सहस्सार त्ति । मणुसअपज्ज० सव्वपदा भयणिज्जा । आणदादि सव्वट्ठा त्ति असंखे०भागहा० णिय० अत्थि, सिया एदे च संखे०भागहाणिगो च, सिया एदे च संखे०भागहाणिगा च । एवं जाव० ।

§ ५०९. भागाभागाणु० दुविहो णि०—ओघेण आदेसे० । ओघेण असंखे०-भागहाणि० संखेज्जा भागा । अवट्ठि० संखे०भागो । असंखे०भागवड्ढि० असंखे०भागो । सेसपदा अणंतभागो । सेसमग्गणासु विहत्ती व कायव्वो । णवरि मणुस्सेसु असंखे०-

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

इतनी विशेषता है कि कुछ कम अपनी स्थिति कहना चाहिए। आनतकल्पसे लेकर नौ ग्रैवेयक तकके देवोंमें असंख्यात भागहानिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तरकाल एक समय है। संख्यात भागहानिका जघन्य अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तरकाल कुछ कम अपनी स्थितिप्रमाण है। अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धितकके देवोंमें असंख्यात भागहानिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तरकाल एक समय है। संख्यात भागहानिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त है। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

§ ५०८. नाना जीवोंका आश्रय कर भंगविचयानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे असंख्यात भागवृद्धि, असंख्यात भागहानि और अवस्थितपद नियमसे हैं, शेष पद भजनीय हैं। इसी प्रकार तिर्यञ्चोंमें जानना चाहिए। आदेशसे नारकियोंमें असंख्यात भागहानि और अवस्थितपद नियमसे हैं, शेष पद भजनीय हैं। इसीप्रकार सब नारकी, सब पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च मनुष्यत्रिक और सामान्य देवोंसे लेकर सहस्रारकल्प तकके देवोंमें जानना चाहिए। मनुष्य अपर्याप्तकोंमें सब पद भजनीय हैं। आनतकल्पसे लेकर सर्वार्थसिद्धितकके देवोंमें असंख्यात भागहानि स्थितिके उदीरक जीव नियमसे हैं, कदाचित् ये नाना जीव हैं और एक संख्यातभागहानि स्थितिका उदीरक जीव है, कदाचित् ये नाना जीव हैं और नाना संख्यात भागहानि स्थितिके उदीरक जीव हैं। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

§ ५०९. भागाभागानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे असंख्यात भागहानि स्थितिके उदीरक जीव संख्यात बहुभागप्रमाण हैं। अवस्थित स्थितिके उदीरक जीव संख्यातवें भागप्रमाण हैं। असंख्यात भागवृद्धि स्थितिके उदीरक जीव असंख्यातवें भागप्रमाण हैं। शेष पदोंके उदीरक जीव अनन्तवें भागप्रमाण हैं। शेष मार्गणाओंमें

गुणवड्ढि-हाणि-अवत्त० असंखे०भागो । मणुसपज०-मणुसिणी० असंखे०भागहा० संखेज्जा भागा । सेसपदा संखे०भागो । एवं जाव० ।

§ ५१०. परिमाणाणु० दुविहो० णि०—ओघेण आदेसेण य । ओघेण असंखे०-भागवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० केत्ति० ? अणंता । दोवड्ढि-हाणि० असंखेज्जा । असंखे०गुणवड्ढि-हाणि०-अवत्त० संखेज्जा । सेसमग्गणासु विहत्तिभंगो । णवरि मणुसतिए असंखे०गुणवड्ढि-हाणि-अवत्त० संखेज्जा । एवं जाव० ।

§ ५११. खेत्ताणु० दुविहो णि०—ओघेण आदेसेण य । ओघेण असंखे०-भागवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० सव्वलोगे । सेसपदा लोग० असंखे०भागे । एवं तिरिक्खा० । सेसगदीसु सव्वपदा लोग० असंखे०भागे । एवं जाव० ।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

§ ५१२. पोसणाणु० दुविहो णि०—ओघेण आदेसेण य । ओघेण असंखे०-भाग-वड्ढि-हाणि-अवट्ठि० सव्वलोगो । दोवड्ढि-हाणि० लोग० असंखे०भागो अट्ठचो० देसूणा । सेसपदा लोग० असंखे०भागो । सेसगइमग्गणासु विहत्तिभंगो । णवरि

स्थितिविभक्तिके समान भागाभाग करना चाहिए । इतनी विशेषता है कि मनुष्योंमें असंख्यात गुणवृद्धि, असंख्यात गुणहानि और अवक्तव्य स्थितिके उदीरक जीव असंख्यातवें भागप्रमाण हैं । मनुष्य पर्याप्त और मनुष्यिनियोंमें असंख्यात भागहानि स्थितिके उदीरक जीव संख्यात बहुभागप्रमाण हैं । शेष पदोंके उदीरक जीव संख्यातवें भागप्रमाण हैं । इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए ।

§ ५१०. परिमाणानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे असंख्यात भागवृद्धि, असंख्यात भागहानि और अवस्थितस्थितिके उदीरक जीव कितने हैं ? अनन्त हैं ? दो वृद्धि और दो हानिरूप स्थितियोंके उदीरक जीव असंख्यात हैं । असंख्यात गुणवृद्धि, असंख्यात गुणहानि और अवक्तव्य स्थितिके उदीरक जीव संख्यात हैं । शेष मार्गणाओंमें स्थितिविभक्तिके समान भंग है । इतनी विशेषता है कि मनुष्यत्रिकमें असंख्यात गुणवृद्धि, असंख्यात गुणहानि और अवक्तव्यस्थितिके उदीरक जीव संख्यात हैं । इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए ।

§ ५११. क्षेत्रानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे असंख्यात भागवृद्धि, असंख्यात भागहानि और अवस्थितस्थितिके उदीरक जीवोंका क्षेत्र सर्व लोक है । शेष पदोंके उदीरक जीवोंका क्षेत्र लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण है । इसीप्रकार तिर्यंचोंमें जानना चाहिए । शेष गतियोंमें सब पदोंके उदीरक जीवोंका क्षेत्र लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण है । इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए ।

§ ५१२. स्पर्शनानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे असंख्यात भागवृद्धि, असंख्यात भागहानि और अवस्थितस्थितिके उदीरक जीवोंने सर्व लोकका स्पर्शन किया है । दो वृद्धि और दो हानिरूप स्थितियोंके उदीरक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग और त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है । शेष पदोंके उदीरक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है । शेष गतिमार्गणाओंमें स्थितिविभक्तिके समान भंग है । इतनी विशेषता है कि मनुष्यत्रिकमें

मणुसतिए असंखे०गुणवड्डि-हाणि-अवत्त० लोग० असंखे०भागो । एवं जाव० ।

§ ५१३. कालाणु० दुविहो णि०—ओघेण आदेसेण य । ओघेण असंखे०-भागवड्डि-हाणि-अवड्डि० सव्वद्धा । दोवड्डि-हाणि० जह० एयस०, उक्क० आवलि० असंखे०भागो । असंखे०-गुणवड्डि-हाणि-अवत्त० जह० एयस०, उक्क० संखेज्जा समया । मणुसतिए असंखे०गुणवड्डि-हाणि-अवत्त० जह० एगसमओ, उक्क० संखे० समया । सेसपदा सेसमग्गणाओ च विहत्तिभंगो । एवं जाव० ।

§ ५१४. अंतराणु० दुविहो णि०—ओघेण आदेसे० । ओघेण विहत्तिभंगो । णवरि असंखे०गुणवड्डि-अवत्त० जह० एयस०, उक्क० वासपुधत्तं । मणुसतिए विहत्ति-भंगो । णवरि असंखे०गुणवड्डि-अवत्त० जह० एयस०, उक्क० वासपुधत्तं । सेसगइ-मग्गणासु विहत्तिभंगो । एवं जाव० ।

मार्गदर्शक - आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

§ ५१५. भावाणु० सव्वत्थ ओदइओ भावो ।

§ ५१६. अप्पाबहुआणु० दुविहो णि०—ओघेण आदेसे० । ओघेण सव्वत्थो०

असंख्यात गुणवृद्धि, असंख्यात गुणहानि और अवक्तव्यस्थितिके उदीरक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है । इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए ।

§ ५१३. कालानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे असंख्यात भागवृद्धि, असंख्यात भागहानि और अवस्थितस्थितिके उदीरक जीवोंका काल सर्वदा है । दो वृद्धि और दो हानिरूप स्थितियोंके उदीरक जीवोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है । असंख्यात गुणवृद्धि, असंख्यात गुणहानि और अवक्तव्यस्थितिके उदीरक जीवोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल संख्यात समय है । मनुष्यत्रिकमें असंख्यात गुणवृद्धि, असंख्यात गुणहानि और अवक्तव्यस्थितिके उदीरक जीवोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल संख्यात समय है । शेष पद और मार्गणाओंका भंग स्थितिविभक्तिके समान है । इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए ।

§ ५१४. अन्तरानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे स्थितिविभक्तिके समान भंग है । इतनी विशेषता है कि असंख्यात गुणवृद्धि और अवक्तव्य-स्थितिके उदीरक जीवोंका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल वर्षपृथक्त्व-प्रमाण है । मनुष्यत्रिकमें स्थितिविभक्तिके समान भंग है । इतनी विशेषता है कि असंख्यात गुणवृद्धि और अवक्तव्यस्थितिके उदीरक जीवोंका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल वर्षपृथक्त्वप्रमाण है । शेष गतिमार्गणाओंमें स्थितिविभक्तिके समान भंग है । इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए ।

§ ५१५. भावानुगमकी अपेक्षा सर्वत्र औदयिक भाव है ।

§ ५१६. अल्पबहुत्वानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश ।

अवत्त०उदीर० । असंखे०गुणवड्डिउदीर० संखे०गुणा । असंखे०गुणहाणिउदी० संखे०-गुणा । संखे०गुणहा० असंखेगुणा । संखे०भागहा० संखे०गुणा । संखे०गुणवड्डि० असंखे०गुणा । संखे०भागवड्डि० संखे०गुणा । असंखे०भागवड्डि० अणंतगुणा । अवड्डि० असंखे०गुणा । असंखे०भागहा० संखे०गुणा । सेसमग्गणासु विहत्तिभंगो । णवरि मणुसतिए सव्वत्थो० अवत्त० । असंखे०गुणवड्डि० संखे०गुणा । असंखे०-गुणहाणि० संखे०गुणा । सेसपदाणं विहत्तिभंगो। आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

एवं वड्डी समत्ता ।

§ ५१७. एत्थ ट्ठाणपरूवणे कीरमाणे ट्ठिदिसंकमभंगो ।

एवं मूलपयडिट्ठिदिउदीरणा समत्ता ।

§ ५१८. एत्तो उत्तरपयडिट्ठिदिउदीरणा । तत्थ इमाणि चउवीसमणिओग-द्दाराणि अद्धाच्छेदो जाव अप्पाबहुए त्ति भुजगार-पदणिक्खेव-वड्डिउदीरणा च । अद्धाछेदो दुविहो—जह० उक्क० । उक्कस्से पयदं । दुविहो णि०—ओघेण आदेसेण य । ओघेण मिच्छ० उक्कस्सिया ट्ठिदिउदीरणा सत्तरिसागरोवमकोडाकोडीओ दोहिं

ओघसे अवक्तव्यस्थितिके उदीरक जीव सबसे स्तोक हैं। उनसे असंख्यात गुणवृद्धिस्थितिके उदीरक जीव संख्यातगुणे हैं। उनसे असंख्यात गुणहानिस्थितिके उदीरक जीव संख्यातगुणे हैं। उनसे संख्यात गुणहानिस्थितिके उदीरक जीव असंख्यातगुणे हैं। उनसे संख्यात भागहानिस्थितिके उदीरक जीव संख्यातगुणे हैं। उनसे संख्यात गुणवृद्धिस्थितिके उदीरक जीव असंख्यातगुणे हैं। उनसे संख्यात भागवृद्धिस्थितिके उदीरक जीव संख्यातगुणे हैं। उनसे असंख्यात भागवृद्धिस्थितिके उदीरक जीव अनन्तगुणे हैं। उनसे अवस्थितस्थितिके उदीरक जीव असंख्यातगुणे हैं। उनसे असंख्यात भागहानिस्थितिके उदीरक जीव संख्यातगुणे हैं। शेष मार्गणाओंमें स्थितिविभक्तिके समान भंग है। इतनी विशेषता है कि मनुष्यत्रिकमें अवक्तव्यस्थितिके उदीरक जीव सबसे स्तोक हैं। उनसे असंख्यात गुणवृद्धिस्थितिके उदीरक जीव संख्यातगुणे हैं। उनसे असंख्यात गुणहानिस्थितिके उदीरक जीव संख्यातगुणे हैं। शेष पदोंका भंग स्थितिविभक्तिके समान है। इसप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

इसप्रकार वृद्धि समाप्त हुई।

§ ५१७. यहाँ पर स्थानप्ररूपणा करनेपर उसका भंग स्थितिसंक्रमके समान है।

इसप्रकार मूलप्रकृतिस्थितिउदीरणा समाप्त हुई।

§ ५१८. आगे उत्तरप्रकृतिस्थिति उदीरणाका प्रकरण है। उसमें ये चौबीस अनुयोगद्वार हैं—अद्धाच्छेदसे लेकर अल्पबहुत्व तक तथा भुजगार, पदनिक्षेप और वृद्धिउदीरणा। अद्धाच्छेद दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट। उत्कृष्टका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणा दो आवलि कम सत्तर

आवलियाहिं ऊणाओ। सम्म०-सम्मामि० उक्क० ट्ठिदिउदी० सत्तरिसागरोवमकोडाकोडीओ अंतोमुहुत्तूणाओ। सोलसक० उक्क० ट्ठिदिउदी० चत्तालीससागरो० कोडाकोडीओ दोहिं आवलियाहिं ऊणाओ। णवणोकसाय० उक्क० ट्ठिदिउदी० चत्तालीससागरो० कोडा० तीहिं आवलियाहिं ऊणाओ। एवं सव्वणेरइय०। णवरि इत्थिवेद-पुरिसवेद० उदीरणा णत्थि।

§ ५१९. तिरिक्ख-पंचिंदियतिरिक्खतिए ओघं। णवरि पज्ज० इत्थिवेद० उदी० णत्थि। जोणिणीसु पुरिस०-णवुंस० उदी० णत्थि। पंचितिरि०अपज्ज० मणुसअपज्ज० मिच्छ०सोलसक०-सत्तणोक० उक्क० ट्ठिदि०उदी० सत्तरि-चत्तालीससागरो०कोडा० अंतोमुहुत्तूणाओ। मणुसतिए पंचिंदियतिरिक्खतियभंगो। देवाणमोघं। णवरि णवुंस० उदीरणा णत्थि। एवं भवण०-वाणवें०-जोदिसि०-सोहम्मीसाणा त्ति। सणक्कुमारादि सहस्सारा त्ति एवं चेव। णवरि इत्थिवेद० उदी० णत्थि। आणदादि णवगेवज्जा त्ति छव्वीसं पयडीणं उक्क० ट्ठिदिउदीर० अंतोकोडाकोडी। अणुदिसादि सव्वट्ठा त्ति सम्म०-बारसक०-सत्तणोक० उक्क० ट्ठिदिउदीरणा अंतोकोडाकोडी। एवं जाव०।

§ ५२०. जहण्णाए पयदं। दुविहो णि०—ओघेण आदेसेण य। ओघेण

कोड़ाकोड़ी सागरप्रमाण है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणा अन्तर्मुहूर्त कम सत्तर कोड़ाकोड़ी सागर है। सोलह कषायकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणा दो आवलि कम चालीस कोड़ाकोड़ी सागर है। नौ नोकषायोंकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणा तीन आवलि कम चालीस कोड़ाकोड़ी सागर है। इसीप्रकार सब नारकियोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनमें स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी उदीरणा नहीं है।

§ ५१९. तिर्यञ्च और पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकमें ओघके समान भंग है। इतनी विशेषता है कि पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च पर्याप्तकोंमें स्त्रीवेदकी उदीरणा नहीं है। तथा पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च योनिनियोंमें पुरुषवेद और नपुंसकवेदकी उदीरणा नहीं है। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्तकोंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय और सात नोकषायोंकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणा अन्तर्मुहूर्त कम सत्तर और चालीस कोड़ाकोड़ी सागर है। मनुष्यत्रिकमें पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकके समान भंग है। देवोंमें ओघके समान भंग है। इतनी विशेषता है कि देवोंमें नपुंसकवेदकी उदीरणा नहीं है। इसीप्रकार भवनवासी, वानव्यन्तर, ज्योतिषी तथा सौधर्म और ऐशान कल्पके देवोंमें जानना चाहिए। सनत्कुमारसे लेकर सहस्रार कल्पतकके देवोंमें इसीप्रकार जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनमें स्त्रीवेदकी उदीरणा नहीं है। आनतकल्पसे लेकर नौ ग्रैवेयक तकके देवोंमें २६ प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणा अन्तःकोड़ाकोड़ीप्रमाण है। अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धितकके देवोंमें सम्यक्त्व, बारह कषाय और सात नोकषायोंकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणा अन्तःकोड़ाकोड़ीप्रमाण है। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

§ ५२०. जघन्यका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे

मिच्छ०-सम्म०-चदुसंजल०-तिण्णिवेद० जह० ट्ठिदिउदी० एया ट्ठिदी समयाहिया-वलियट्ठिदी। सम्मामि० जह० ट्ठिदिउदी० सागरोवमपुधत्तं। बारसक०-छण्णोक० जह० ट्ठिदिउदी० सागरोवमस्स चत्तारि सत्तभागा पलिदो० असंखे०भागेणूणा।

§ ५२१. आदेसेण णेरइय० मिच्छ०-सम्म०-सम्मामि० ओघं। सोलसक०-सत्तणोक० जह० ट्ठिदिउदी० सागरोवमसहस्सस्स चत्तारि सत्तभागा पलिदो० संखे०-भागेणूणा। एवं पढमाए। बिदियादि सत्तमा त्ति मिच्छ० ओघं। सम्म०-सम्मामि० जह० ट्ठिदिउदीर० सागरोवमपुधत्तं। सोलसक०-सत्तणोक० जह० ट्ठिदिउदी० अंतोकोडा०।

§ ५२२. तिरिक्खेसु मिच्छ०-सम्म०-सम्मामि० ओघं। सोलसक०-णवणोक० जह० ट्ठिदिउदी० सागरो० चत्तारि सत्तभागा पलिदो० असंखे०भागेण ऊणा। एवं पंचिंदियतिरिक्खतिए। णवरि पज्ज० इत्थिवेदो णत्थि। जोणिणी० पुरिस०-णवुंस० णत्थि। सम्म० सम्मामि०भंगो। पंचिंदियतिरिक्खअपज्ज०-मणुसअपज्ज० मिच्छ०-सोलसक०-सत्तणोक० जह० ट्ठिदिउदी० सागरोवम० सत्त सत्तभागा चत्तारि सत्तभागा पलिदोवमस्सासंखे०भागेण ऊणा।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

§ ५२३. मणुसतिए ओघं। णवरि पज्ज० इत्थिवे० णत्थि। मणुसिणी०

मिथ्यात्व, सम्यक्त्व, चार संज्वलन और तीन वेदकी जघन्य स्थितिउदीरणा एक समय अधिक एक आवलिप्रमाण स्थितिके रहनेपर एक स्थिति है। सम्यग्मिथ्यात्वकी जघन्य स्थितिउदीरणा सागरपृथक्त्वप्रमाण है। बारह कषाय और छह नोकषायकी जघन्य स्थितिउदीरणा एक सागरकी चार बटे सात भागप्रमाण है जो कि पल्यका असंख्यातवां भाग कम है।

§ ५२१. आदेशसे नारकियोंमें मिथ्यात्व, सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका भंग ओघके समान है। सोलह कषाय और सात नोकषायोंकी जघन्य स्थितिउदीरणा एक सागरकी चार बटे सात भागप्रमाण है जो कि पल्यका असंख्यातवाँ भाग कम है। इसीप्रकार प्रथम पृथिवीमें जानना चाहिए। दूसरीसे लेकर सातवीं पृथिवी तकके नारकियोंमें मिथ्यात्वका भंग ओघके समान है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी जघन्य स्थितिउदीरणा सागरपृथक्त्वप्रमाण है। सोलह कषाय और सात नोकषायोंकी जघन्य स्थितिउदीरणा अन्तःकोड़ाकोड़ी है।

§ ५२२. तिर्यञ्चोंमें मिथ्यात्व, सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका भंग ओघके समान है। सोलह कषाय और नौ नोकषायोंकी जघन्य स्थितिउदीरणा एक सागरकी चार बटे सात भाग-प्रमाण है जो कि पल्यका असंख्यातवाँ भाग कम है। इसीप्रकार पंचेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि पर्याप्तकोंमें स्त्रीवेदकी स्थितिउदीरणा नहीं है तथा योनिनी तिर्यञ्चोंमें पुरुषवेद और नपुंसकवेदकी स्थितिउदीरणा नहीं है। सम्यक्त्वका भंग सम्यग्मि-थ्यात्वके समान है। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्तकोंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय और सात नोकषायोंकी जघन्य स्थितिउदीरणा एक सागरकी क्रमसे पल्यका असंख्यातवाँ भाग कम सात बटे सात भागप्रमाण और पल्यका असंख्यातवाँ भाग कम चार बटे सात भागप्रमाण है।

§ ५२३. मनुष्यत्रिकमें ओघके समान है। इतनी विशेषता है कि पर्याप्तकोंमें स्त्रीवेदकी

पुरिस०-णवुंस० णत्थि। देवाणं णारयभंगो। णवरि णवुंस० णत्थि। एवं भवण०-वाणवें०। णवरि सम्म० सम्मामि०भंगो। जोदिसि० मिच्छ०-सम्म०-सम्मामि० विदियपुढविभंगो। सोलसक०-अट्ठणोक० जह० ट्ठिदिउदी० अंतोकोडाकोडी। एवं सोहम्मीसाणे। णवरि सम्म० ओघं। सणक्कुमारादि जाव णवगेवज्जा त्ति एवं चेव। णवरि इत्थिवेद० णत्थि उदीर०। अणुद्दिसादि सव्वट्ठा त्ति सम्म० ओघं। बारसक०-सत्तणोक० जह० ट्ठिदिउदी० अंतोकोडाकोडि त्ति। एवं जाव०।

§ ५२४. सव्वुदीर०-णोसव्वुदीर०-उक्क०-अणुक्क०-जह०-अजह०उदीर० मूलपयडिभंगो।

§ ५२५. सादि-अणादि०-धुव०-अद्धुवाणु० मिच्छ० उक्क०-अणुक्क०-जह० किं सादि०४? सादि-अद्धुवा। अज० किं सादि०४? सादी अणादी धुवा अद्धुवा वा। सेसपयडीणमुक्क० अणुक्क० जह० अजह० किं सादि०४? सादि-अद्धुवा। सेसगदीसु सव्वपय० उक्क० अणुक्क० जह० अजह० सादि-अद्धुवा०।

स्थितिउदीरणा नहीं है। मनुष्यिनियोंमें पुरुषवेद और नपुंसकवेदकी स्थितिउदीरणा नहीं है। देवोंमें नारकियोंके समान भंग है। इतनी विशेषता है कि इनमें नपुंसकवेदकी स्थितिउदीरणा नहीं है। इसीप्रकार भवनवासी और व्यन्तरोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनमें सम्यक्त्वका भंग सम्यग्मिथ्यात्वके समान है। ज्योतिषियोंमें मिथ्यात्व, सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका भंग दूसरी पृथिवीके समान है। सोलह कषाय और आठ नोकषायोंकी जघन्य स्थितिउदीरणा अन्तःकोड़ाकोड़ी है। इसीप्रकार सौधर्म और ऐशानकल्पमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि सम्यक्त्वका भंग ओघके समान है। इसीप्रकार सनत्कुमार कल्पसे लेकर नौवें ग्रैवेयक तकके देवोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनमें स्त्रीवेदकी उदीरणा नहीं है। अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धितकके देवोंमें सम्यक्त्वका भंग ओघके समान है। बारह कषाय और सात नोकषायोंकी जघन्य स्थितिउदीरणा अन्तःकोड़ाकोड़ीप्रमाण है। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

§ ५२४. सर्व स्थितिउदीरणा, नोसर्व स्थितिउदीरणा, उत्कृष्ट स्थितिउदीरणा, अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणा, जघन्य स्थितिउदीरणा और अजघन्य स्थितिउदीरणाका भंग मूलप्रकृतिके समान है।

§ ५२५. सादि, अनादि ध्रुव और अध्रुवानुगमकी अपेक्षा मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट, अनुत्कृष्ट और जघन्य स्थितिउदीरणा क्या सादि है, अनादि है, ध्रुव है या अध्रुव है? सादि और अध्रुव है। अजघन्य स्थितिउदीरणा क्या सादि है, अनादि है, ध्रुव है या अध्रुव है? सादि, अनादि ध्रुव और अध्रुव है। शेष प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट, अनुत्कृष्ट, जघन्य और अजघन्य स्थितिउदीरणा क्या सादि है, अनादि है, ध्रुव है या अध्रुव है? सादि और अध्रुव है। शेष गतियोंमें सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट, अनुत्कृष्ट, जघन्य और अजघन्य स्थितिउदीरणा सादि और अध्रुव है।

विशेषार्थ—ओघसे मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणा कादाचित्क है तथा इसकी जघन्य स्थितिउदीरणा ऐसे जीवके होती है जो उपशमसम्यक्त्वके सन्मुख होकर एक समय अधिक एक आवलिप्रमाण स्थितिके शेष रहनेपर आवलिकी उपरितनवर्ती प्रथम

§ ५२६. सामित्तं दुविहं—जह० उक्क० । उक्कस्से पयदं । दुविहो णि०—ओघेण आदेसेण य । ओघेण मिच्छत्त-सोलसक० उक्क० ट्ठिदिउदी० कस्स ? अण्णद० मिच्छाइट्ठि० उक्कस्सट्ठिदिं बंधिदूणावलियादीदस्स । णवणोक० उक्क० ट्ठिदिउदी० कस्स ? अण्णद० मिच्छाइट्ठि० उक्क०ट्ठिदिं पडिच्छिदूणावलियादीदस्स । सम्म० उक्क० ट्ठिदिउदी० कस्स० ? अण्णद० जो पुव्ववेदगो मिच्छत्त० उक्क०ट्ठिदिं बंधिऊण अंतोमु० ट्ठिदिघादमकादूण सम्मत्तं पडिवण्णो, तस्स बिदियसमयसम्माइट्ठिस्स । सम्मामि० उक्कस्सट्ठिदिउदी० कस्स ? अण्णद० स एव वेदयसम्माइट्ठी अंतोमुहुत्तमच्छिऊण पढमसमयसम्मामिच्छाइट्ठी जादो, तस्स उक्क० ट्ठिदिउदी० । एवं सव्वणेरइय०-तिरिक्ख-पंचि०तिरिक्खतिय-मणुसतिय-देवा जाव सहस्सार त्ति । णवरि अप्पप्पणो पयडीओ जाणिदव्वाओ ।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

§ ५२७. पंचि०तिरि०अपज्ज०-मणुसअपज्ज० मिच्छ०-सोलसक०-सत्तणोक० उक्क० ट्ठिदिउदी० कस्स ? अण्णद० मणुस्सस्स वा मणुसिणीए वा पंचि०तिरिक्ख-

---

स्थितिकी उदीरणा करता है, इसलिए ये तीनों स्थितिउदीरणा सादि और अध्रुव कही हैं। किन्तु अजघन्य स्थितिउदीरणा जघन्य स्थितिउदीरणाके पूर्व भी होती है और बादमें भी मिथ्यात्व गुणस्थानके प्राप्त होनेपर होती है, इसलिए इसे सादि आदि चारों प्रकारका कहा है। शेष प्रकृतियोंकी चारों प्रकारकी स्थितिउदीरणा अपने-अपने स्वामित्वके अनुसार कदाचित् ही होती हैं, इसलिए इन्हें सादि और अध्रुव कहा है। गतिमार्गणाके सब भेद सादि और अध्रुव हैं, इसलिए इनमें स्थितिउदीरणाके उत्कृष्टादि चारों भेदोंको सादि और अध्रुव कहा है। इसीप्रकार अन्य मार्गणाओंमें विचार कर घटित कर लेना चाहिए।

§ ५२६. स्वामित्व दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट। उत्कृष्टका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मिथ्यात्व और सोलह कषायकी उत्कृष्ट स्थिति-उदीरणा किसके होती है ? जिस अन्यतर मिथ्यादृष्टिको उत्कृष्ट स्थिति बाँधकर एक आवलि काल व्यतीत हुआ है उसके होती है। नौ नोकषायोंकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणा किसके होती है ? जिस मिथ्यादृष्टिको कषायकी उत्कृष्ट स्थितिका नौ नोकषायोंमें संक्रमण करनेके बाद एक आवलि काल गया है उसके होती है। सम्यक्त्वकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणा किसके होती है ? पूर्वमें वेदकसम्यक्त्व प्राप्त कर चुके हुए जिस मिथ्यादृष्टि जीवने मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट स्थिति बांधकर और स्थितिघात किये बिना अन्तर्मुहूर्तमें वेदकसम्यक्त्वको प्राप्त किया है उस द्वितीय समयवर्ती वेदकसम्यग्दृष्टिके सम्यक्त्वकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणा होती है। सम्यग्मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणा किसके होती है ? अन्यतर वही वेदकसम्यग्दृष्टि जीव अन्तर्मुहूर्त रहकर सम्यग्मिथ्यादृष्टि हो गया, प्रथम समयवर्ती उस सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवके उत्कृष्ट स्थितिउदीरणा होती है। इसीप्रकार सब नारकी, सामान्य तिर्यञ्च, पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिक, मनुष्यत्रिक और सामान्य देवोंसे लेकर सहस्रार कल्पतकके देवोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि अपनी-अपनी प्रकृतियां जानना चाहिए।

§ ५२७. पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्तकोंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय और सात नोकषायोंकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणा किसके होती है ? अन्यतर जो मनुष्य

जोणिणीयस्स वा उक्कस्सट्ठिदिं बंधिऊण अंतोमुहुत्तं ट्ठिदिघादमकादूण अपज्जत्तएसु उववण्णल्लयस्स तस्स पढमसमयउववण्णल्लयस्स उक्क० ट्ठिदिउदी० ।

§ ५२८. आणदादि णवगेवज्जा त्ति मिच्छ०-सोलसक०-सत्तणोक० उक्क० ट्ठिदिउदी० कस्स ? अण्णद० दव्वलिंगी तप्पाओग्गुक्कस्सट्ठिदिसंतकम्मिओ पढमसमय-उववण्णल्लगो तस्स । णवरि अरदि-सोग० अंतोमुहुत्तउववण्णल्लगो तस्स उक्क० ट्ठिदिउदी० । सम्म० उक्क० ट्ठिदिउदी० कस्स ? अण्णद० तप्पाओग्गुक्कस्सट्ठिदि-संतकम्मि० वेदयसम्माइट्ठि० पढमसमयउववण्णल्लयस्स । तस्सेव अंतोमुहुत्तेण सम्मामिच्छत्तं पडिवण्णस्स पढमसमयसम्मामिच्छाइट्ठिस्स सम्मामि० उक्क० ट्ठिदिउदी० । अणुद्दिसादि सव्वट्ठा त्ति सम्म०-बारसक०-सत्तणोक० उक्क० ट्ठिदिउदी० कस्स ? अण्णद० वेदयसम्माइट्ठी तप्पाओग्गउक्क०ट्ठिदिसंतकम्मि० पढमसमयउववण्णल्लगो तस्स उक्क० ट्ठिदिउदी० । णवरि अरदि-सोग० अंतोमुहुत्तोववण्णल्लयस्स । एवं जाव० ।

§ ५२९. जहण्णए पयदं । दुविहो णिद्देसो—ओघेण आदेसेण य । ओघेण मिच्छ० जह० ट्ठिदिउदी० कस्स ? अण्णद० मिच्छाइट्ठिस्स उवसमसम्मत्ताहिमुहस्स समयाहियावलियपढमट्ठिदिउदीरगस्स तस्स जह० ट्ठिदिउदी० । सम्म० जह० ट्ठिदि-

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

या मनुष्यिनी या पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च योनिवाला जीव उत्कृष्ट स्थिति बांधकर स्थितिघात किये बिना अन्तर्मुहूर्तमें उक्त अपर्याप्तकोंमें मरकर उत्पन्न हुआ है उसके वहाँ उत्पन्न होनेके प्रथम समयमें उक्त प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणा होती है ।

§ ५२८. आनत कल्पसे लेकर नौ ग्रैवेयक तकके देवोंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय और सात नोकषायोंकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणा किसके होती है ? अन्यतर तत्प्रायोग्य उत्कृष्ट स्थिति सत्कर्मवाला जो द्रव्यलिंगी मरकर उक्त देवोंमें उत्पन्न हुआ है उसके वहाँ उत्पन्न होनेके प्रथम समयमें उक्त प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणा होती है । इतनी विशेषता है कि जिसे वहाँ उत्पन्न हुए अन्तर्मुहूर्त हुआ है उसके अरति और शोककी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणा होती है । सम्यक्त्वकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणा किसके होती है ? तत्प्रायोग्य उत्कृष्ट स्थितिसत्कर्मवाला जो वेदकसम्यग्दृष्टि जीव मरकर वहाँ उत्पन्न हुआ है उसके वहाँ उत्पन्न होनेके प्रथम समयमें सम्यक्त्वकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणा होती है । उसीके अन्तर्मुहूर्तमें सम्यग्मिथ्यात्वको प्राप्त होने पर प्रथम समयवर्ती उस सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवके सम्यग्मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणा होती है । अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धितकके देवोंमें सम्यक्त्व, बारह कषाय और सात नोकषायोंकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणा किसके होती है ? तत्प्रायोग्य उत्कृष्ट स्थिति सत्कर्मवाला अन्यतर जो वेदकसम्यग्दृष्टि जीव मरकर उक्त देवोंमें उत्पन्न हुआ है उसके वहाँ उत्पन्न होनेके प्रथम समयमें उक्त प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणा होती है । इतनी विशेषता है कि जिस उक्त जीवको वहाँ उत्पन्न हुए अन्तर्मुहूर्त काल गया है उसके अरति और शोककी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणा होती है । इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए ।

§ ५२९. जघन्यका प्रकरण है । निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे मिथ्यात्वकी जघन्य स्थितिउदीरणा किसके होती है ? उपशमसम्यक्त्वके अभिमुख अन्यतर जो मिथ्यादृष्टि जीव मिथ्यात्वकी प्रथम स्थितिमें एक समय अधिक एक आवलि स्थिति शेष

उदी० कस्स ? अण्णद० दंसणमोहक्खवयस्स समयाहियावलियउदीरगस्स । सम्मामि० जह० ट्ठिदिउदी० कस्स ? अण्णद० जो मिच्छाइट्ठी वेदगपाओग्गजहण्णट्ठिदिसंतकम्मिओ सम्मामि० पडिवण्णो अंतोमुहुत्तं विगड्डं सम्मामिच्छत्तद्धमणुपालिय चरिमसमयसम्मामिच्छाइट्ठिस्स तस्स जह० ट्ठिदिउदी० । बारसक० जह० ट्ठिदिउदी० कस्स ? अण्णद० बादरेइंदियस्स हदसमुप्पत्तियस्स जावदि सक्कं ताव संतकम्मस्स हेट्ठा बंधिदूण समट्ठिदिं वा बंधिदूण संतकम्मं वोलेदूण वा आवलियादीदस्स । एवं भय-दुगुंछा० । णवरि बेआवलियादीदस्स तस्स जह० । हस्स-रदि-अरदि-सोग० जह० ट्ठिदिउदी० कस्स ? अण्णद० जो बादरेइंदियपच्छायदो हदसमुप्पत्तियो सण्णिपंचिंदियपज्जत्तएसु उववण्णो तस्स अंतोमुहुत्तुववण्णल्लयस्स जह० ट्ठिदिउदी० । तिण्हं वेदाणं जह० ट्ठिदिउदी० कस्स ? अण्णद० उवसामगो खवगो वा अप्पप्पणो वेदेण सेढिमारूढो समयाहियावलियं उदीरेमाणयस्स तस्स जह० । चदुसंज० जह० ट्ठिदिउदीर० कस्स ? अण्णद० उवसामगस्स वा खवगस्स वा अप्पप्पणो कसाएहिं सेढिमारूढस्स समयाहियावलियउदी० तस्स जह० ।

मार्गदर्शक – आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

रहनेपर प्रथम उपरितन) स्थितिकी उदीरणा करता है उसके जघन्य स्थितिउदीरणा होती है। सम्यक्त्वकी जघन्य स्थितिउदीरणा किसके होती है ? दर्शनमोहनीयकी क्षपणा करनेवाला जो अन्यतर कृतकृत्यवेदक सम्यग्दृष्टि जीव सम्यक्त्वकी एक समय अधिक एक आवलि स्थिति शेष रहनेपर उपरितन एक स्थितिकी उदीरणा करता है उसके जघन्य स्थितिउदीरणा होती है। सम्यग्मिथ्यात्वकी जघन्य स्थितिउदीरणा किसके होती है ? वेदकप्रायोग्य जघन्य स्थितिसत्कर्मवाले जिस अन्यतर मिथ्यादृष्टि जीवको सम्यग्मिथ्यात्वको प्राप्त हुए उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त काल गया है, सम्यग्मिथ्यात्वके कालका पालन करनेवाले उस सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवके अन्तिम समयमें उत्कृष्ट स्थितिउदीरणा होती है। बारह कषायकी जघन्य स्थितिउदीरणा किसके होती है ? हतसमुत्पत्तिक जिस अन्यतर बादर एकेन्द्रिय जीवने जबतक शक्य है तबतक सत्कर्मसे कम स्थितिका बन्ध किया है या समान स्थितिका बन्ध किया है, या सत्कर्मको बिताकर जिसे एक आवलि गया है उसके जघन्य स्थितिउदीरणा होती है। इसीप्रकार भय और जुगुप्साके विषयमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि जिसे दो आवलि काल गया है उसके भय और जुगुप्साकी जघन्य स्थितिउदीरणा होती है। हास्य, रति, अरति और शोककी जघन्य स्थितिउदीरणा किसके होती है ? जो अन्यतर हतसमुत्पत्तिक बादर एकेन्द्रियोंमेंसे आकर संज्ञी पञ्चेन्द्रियोंमें उत्पन्न हुआ है उसके वहाँ उत्पन्न होनेके अन्तर्मुहूर्तके अन्तमें उक्त प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिउदीरणा होती है। तीन वेदोंकी जघन्य स्थितिउदीरणा किसके होती है ? जो उपशामक या क्षपक अपने-अपने वेदसे श्रेणिपर आरूढ़ हुआ है, प्रथम स्थितिमें एक समय अधिक एक आवलि स्थितिके शेष रहनेपर उपरितन स्थितिकी उदीरणा करनेवाले उसके उक्त वेदोंकी जघन्य स्थितिउदीरणा होती है। चार संज्वलनकी जघन्य स्थितिउदीरणा किसके होती है ? जो उपशामक या क्षपक अपनी-अपनी कषायसे श्रेणिपर आरूढ़ हुआ है, प्रथम स्थितिमें एक समय अधिक एक आवलि स्थितिके शेष रहनेपर उपरितन स्थितिकी उदीरणा करनेवाले उसके चार संज्वलनकी जघन्य स्थितिउदीरणा होती है।

§ ५३०. आदेसे० णेरइय० मिच्छ०-सम्म०-सम्मामि० ओघं। सोलसक०-भय-दुगुंछ० जह० ट्ठिदिउदी० कस्स ? अण्णद० असण्णिपच्छायदहदसमुप्पत्तियस्स दुसमयाहियावलियउववण्णल्लयस्स तस्स जह०। पंचणोक० जह० ट्ठिदिउदी० कस्स ? अण्णद० असण्णिपच्छायदहदसमुप्पत्तियस्स अंतोमुहुत्तादीदस्स तस्स जह० ट्ठिदिउदी०। एवं पढमाए। विदियादि जाव सत्तमा त्ति ट्ठिदिसंकमभंगो। णवरि मिच्छ०-सम्मामि० पढमपुढविभंगो। सम्म० जह० ट्ठिदिउदी० कस्स ? अण्णद० वेदगसम्मत्तपाओग्गजह० ट्ठिदिसंतकम्मिओ सम्मत्तं पडिवण्णो तस्स पढमसमयवेदगसम्माइट्ठिस्स। अणंताणु०४ जह० ट्ठिदिउदी० कस्स ? अण्णद० दीहाउट्ठिदिएसु उववज्जिऊण अंतोमुहुत्तेण सम्मत्तं पडिवण्णो अणंताणु०चउक्कं विसंजोएदूण थोवावसेसे जीविदव्वए त्ति मिच्छत्तं गदो जाव सक्कं संतकम्मस्स हेट्ठा बंधिदूण समट्ठिदिं वा बंधिदूण संतकम्मं वा बोलेदूण आवलियादीदस्स तस्स जह०।

आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

§ ५३१. सव्वतिरिक्खेसु अप्पप्पणो ट्ठिदिसंकमभंगो। णवरि दंसणतिय-अणंताणु०४ ओघं। पंचिंदियतिरिक्खतिए अणंताणु०४ अपच्चक्खाणभंगो। णवरि जोणिणीसु सम्म० विदियपुढविभंगो। पंचि०तिरि०अपज्ज०-मणुसअपज्ज० जाओ

§ ५३०. आदेशसे नारकियोंमें मिथ्यात्व, सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका भंग ओघके समान है। सोलह कषाय, भय और जुगुप्साकी जघन्य स्थितिउदीरणा किसके होती है ? जिस हतसमुत्पत्तिक जीवको असंज्ञियोंमेंसे आकर दो समय अधिक एक आवलि काल गया है उसके जघन्य स्थितिउदीरणा होती है। पांच नोकषायोंकी जघन्य स्थितिउदीरणा किसके होती है ? जिस हतसमुत्पत्तिक जीवको असंज्ञियोंमेंसे आकर अन्तर्मुहूर्त काल अतीत हुआ है उसके जघन्य स्थितिउदीरणा होती है। इसीप्रकार प्रथम पृथिवीमें जानना चाहिए। दूसरीसे लेकर सातवीं पृथिवीतकके नारकियोंमें स्थितिसंक्रमके समान भंग है। इतनी विशेषता है कि इनमें मिथ्यात्व और सम्यग्मिथ्यात्वका भंग प्रथम पृथिवीके समान है। सम्यक्त्वकी जघन्य स्थितिउदीरणा किसके होती है ? वेदकसम्यक्त्वके योग्य जघन्य स्थितिसत्कर्मवाला जो अन्यतर जीव सम्यक्त्वको प्राप्त हुआ उस प्रथम समयवर्ती वेदकसम्यग्दृष्टि जीवके जघन्य स्थितिउदीरणा होती है। अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी जघन्य स्थितिउदीरणा किसके होती है ? जो अन्यतर दीर्घ आयुस्थितिवाले जीवोंमें उत्पन्न होकर अन्तर्मुहूर्तमें सम्यक्त्वको प्राप्त हुआ। फिर अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी विसंयोजना कर जीवितके थोड़ा शेष रहने पर मिथ्यात्वको प्राप्त हुआ और जबतक शक्य है तबतक सत्कर्मसे नीचे स्थितिका बन्ध कर या समान स्थितिका बन्ध कर या सत्कर्मको बिताकर एक आवलि अतीत हुए उस जीवके जघन्य स्थितिउदीरणा होती है।

§ ५३१. सब तिर्यञ्चोंमें अपने-अपने स्थितिसंक्रमके समान भंग है। इतनी विशेषता है कि दर्शनमोहनीयकी तीन और अनन्तानुबन्धीचतुष्कका भंग ओघके समान है। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकमें अनन्तानुबन्धीचतुष्कका भंग अप्रत्याख्यानके समान है। इतनी विशेषता है कि योनिनियोंमें सम्यक्त्वका भंग दूसरी पृथिवीके समान है। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त और

पयडीओ अत्थि तासिं ट्ठिदिसंकमभंगो। मणुसतिए जाओ पयडीओ अत्थि तासिमोघं। णवरि बारसक०-भय-दुगुंछ० जह० ट्ठिदिउदी० कस्स? अण्णद० बादरेइंदियपच्छायदहदसमुप्पत्तियस्स आवलियउववण्णल्लयस्स तस्स जह०। हस्स-रदि-अरदि-सोग० तस्सेव पज्जत्तएसु अंतोमुहुत्तुववण्णल्लयस्स।

§ ५३२. देवाणं णारयभंगो। णवरि इत्थिवे०-पुरिसवे०-हस्स-रइ-अरइ-सोग० असण्णिपच्छायदहदसमुप्पत्तियस्स अंतोमुहुत्तववण्णल्लयस्स। एवं भवण०-वाणवें०। णवरि सम्म० विदियपुढविभंगो। जोदिसि० विदियपुढविभंगो। णवरि णवुंसयं छंडेऊण इत्थिवेदे पुरिसवेदे भाणिदव्वं।

§ ५३३. सोहम्म० जाव सहस्सार त्ति दंसणतियमोघं। अणंताणु०४ विदियपुढविभंगो। बारसक०-सत्तणोक० जह० ट्ठिदिउदी० कस्स? अण्णद० जो खइयसम्माइट्ठी उवसमसेढिपच्छायदो दीहाए आउट्ठिदीए उववण्णो तस्स चरिमसमयणिप्पिदमाणयस्स जह० ट्ठिदिउदी०। णवरि सोहम्मीसाणे इत्थिवे० जह० ट्ठिदिउदी० कस्स? जो पणवण्णं पलिदोवमिएसु उववण्णो अंतोमु० सम्मत्तं पडिवण्णो। पुणो अणंताणु०-चउक्कं विसंजोएदूण चरिमसमयणिप्पिदमाणयस्स तस्स जह०। उवरि इत्थिवे०

मनुष्य अपर्याप्तकोंमें जो प्रकृतियाँ हैं उनका भंग स्थितिसंक्रमके समान है। मनुष्यत्रिकमें जो प्रकृतियाँ हैं उनका भंग ओघके समान है। इतनी विशेषता है कि बारह कषाय, भय और जुगुप्साकी जघन्य स्थितिउदीरणा किसके होती है? जिसे अन्यतर हतसमुत्पत्तिक बादर एकेन्द्रियोंमेंसे आकर उत्पन्न हुए एक आवलि काल हुआ है उसके जघन्य स्थितिउदीरणा होती है। तथा उसीके पर्याप्तकोंमें उत्पन्न हुए अन्तर्मुहूर्त होनेपर हास्य, रति, भय और जुगुप्साकी जघन्य स्थितिउदीरणा होती है।

§ ५३२. देवोंका भंग नारकियोंके समान है। इतनी विशेषता है कि स्त्रीवेद, पुरुषवेद, हास्य रति, अरति और शोककी जघन्य स्थितिउदीरणा जिसे हतसमुत्पत्तिक असंज्ञियोंमेंसे आकर उत्पन्न हुए अन्तर्मुहूर्त हुआ है उसके होती है। इसीप्रकार भवनवासी और व्यन्तर देवोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनमें सम्यक्त्वका भंग द्वितीय पृथिवीके समान है। ज्योतिषी देवोंमें दूसरी पृथिवीके समान भंग है। इतनी विशेषता है कि नपुंसकवेदको छोड़कर स्त्रीवेद और पुरुषवेद कहलाना चाहिए।

§ ५३३. सौधर्मकल्पसे लेकर सहस्रार कल्पतकके देवोंमें दर्शनमोहनीयकी तीन प्रकृतियोंका भंग ओघके समान है। अनन्तानुबन्धीचतुष्कका भंग दूसरी पृथिवीके समान है। बारह कषाय और सात नोकषायोंकी जघन्य स्थितिउदीरणा किसके होती है? जो अन्यतर क्षायिकसम्यग्दृष्टि जीव उपशमश्रेणिसे पीछे आकर दीर्घ आयुस्थितिवाले उक्त देवोंमें उत्पन्न हुआ उसके वहाँसे निकलते हुए अन्तिम समयमें जघन्य स्थितिउदीरणा होती है। इतनी विशेषता है कि सौधर्म और ऐशानकल्पमें स्त्रीवेदकी जघन्य स्थितिउदीरणा किसके होती है? जो पचवन पल्यवाले स्त्रीवेदियोंमें उत्पन्न हुआ, पुनः अन्तर्मुहूर्तमें सम्यक्त्वको प्राप्त हुआ, पुनः अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी विसंयोजना करके वहाँसे निकलनेके अन्तिम समयमें स्थित है उसके

णत्थि। आणदादि णवगेवज्जा त्ति सणक्कुमारभंगो। णवरि अणंताणु०४ जह० ट्ठिदिउदी० कस्स? अण्णद० जो वेदयसम्माइट्ठी चउवीससंतकम्मिओ उक्कस्साउ-ट्ठिदीए उववण्णो मिच्छत्तं गंतूण अणंताणु०४ संजोजित्ता चरिमसमयणिप्पिदमाण-यस्स तस्स जह० ट्ठिदिउदी०। अणुदिसादि सव्वट्ठा त्ति सम्म०-बारसक०-सत्तणोक० आणदभंगो। एवं जाव०।

§ ४३४. कालाणु० दुविहो णि०—जह० उक्क०। उक्कस्से पयदं। दुविहो णि०—ओघेण आदेसेण य। ओघेण मिच्छ० उक्क० ट्ठिदिउदी० जह० एगस०, उक्क० अंतोमु०। अणुक्क० जह० अंतोमुहुत्तं, उक्क० अणंतकालमसंखेज्जा पोग्गल-परियट्टा। सम्म० उक्क० ट्ठिदिउदी० जह० उक्क० एयस०। अणुक्क० जह० एयस०, उक्क० छावट्ठिसागरोवमाणि देसूणाणि। सम्मामि० उक्क० ट्ठिदिउदी० जह० उक्क० एयस०। अणुक्क० जह० उक्क० अंतोमु०। सोलसक०-भय-दुगुंछ० उक्क० अणुक्क० जह० एगसमओ, उक्क० अंतोमु०। इत्थिवेद-पुरिसवेद० उक्क० ट्ठिदिउदी० जह० एस०, उक्क० आवलिया०। अणुक्क० जह० एयस०, उक्क० पलिदोवमसद-पुधत्तं सागरोवमसदपुधत्तं। हस्स-रदि० उक्क० ट्ठिदिउदी० जह० एयस०, उक्क०

जघन्य स्थितिउदीरणा होती है। इन दोनों कल्पोंके ऊपर स्त्रीवेदकी उदीरणा नहीं है। आनत कल्पसे लेकर नौ ग्रैवेयक तकके देवोंमें सनत्कुमार कल्पके समान भंग है। इतनी विशेषता है कि अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी जघन्य स्थितिउदीरणा किसके होती है? जो अन्यतर चौबीस कर्मोंकी सत्तावाला वेदकसम्यग्दृष्टि जीव उत्कृष्ट आयुस्थितिवालोंमें उत्पन्न हो और मिथ्यात्वमें जाकर तथा अनन्तानुबन्धीचतुष्कका संयोजन कर वहांसे निकलनेके अन्तिम समयमें स्थित होता है उसके जघन्य स्थितिउदीरणा होती है। अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धितकके देवोंमें सम्यक्त्व, बारह कषाय और सात नोकषायोंका भंग आनतकल्पके समान है। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

§ ४३४. कालानुगम दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट। उत्कृष्टका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट काल अनन्त काल है जो असंख्यात पुद्गलपरिवर्तनप्रमाण है। सम्यक्त्वकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल कुछ कम छयासठ सागरप्रमाण है। सम्यग्मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। सोलह कषाय, भय और जुगुप्साकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल एक आवलि है। अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल क्रमसे सौ पृथक्त्व पल्यप्रमाण और सौ पृथक्त्व सागर-प्रमाण है। हास्य और रतिकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है और

आवलिया० । अणुक्क० जह० एयस०, उक्क० छम्मासं । अरदि-सोग०-णवुंस० उक्क० ट्ठिदिउदी० जह० एयस०, उक्क० अंतोमु० । अणुक्क० जह० एयस०, उक्क० तेत्तीसं सागरो० सादिरेयाणि । णवरि णवुंस० अणंतकालमसंखे०पो०परियट्ट० ।

उत्कृष्ट काल एक आवलि है। अनुत्कृष्ट स्थिति उदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल छह महीना है। अरति, शोक और नपुंसकवेदकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल साधिक तेतीस सागर है। इतनी विशेषता है कि नपुंसकवेदकी अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका उत्कृष्ट काल अनन्त काल है जो असंख्यात पुद्गलपरिवर्तनप्रमाण है।

विशेषार्थ—मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध कमसे कम एक समय तक और अधिकसे अधिक अन्तर्मुहूर्त तक होता है। इसीप्रकार इसकी अनुत्कृष्ट स्थितका बन्ध कमसे कम अन्तर्मुहूर्त तक और अधिकसे अधिक अनन्त काल तक होता है। इसीसे इसकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त तथा अनुत्कृष्ट स्थिति-उदीरणाका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट काल असंख्यात पुद्गलपरिवर्तनप्रमाण अनन्त काल कहा है। जो मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट स्थिति बाँधकर अन्तर्मुहूर्तमें स्थितिघात किये बिना वेदकसम्यग्दृष्टि हुआ है उसके संक्रमविधानसे दूसरे समयमें सम्यक्त्वकी उत्कृष्ट स्थिति-उदीरणा होती है, इसलिए इसकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय कहा है। तथा ऐसे जीवके प्रथम समयमें अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणा होती है इसलिए इसकी अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय कहा है और वेदकसम्यक्त्वका उत्कृष्ट काल कुछ कम छयासठ सागर है, इसलिए इसकी अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका उत्कृष्ट काल कुछ कम छयासठ सागर कहा है। सम्यग्मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणा अपने स्वामित्वके अनुसार सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थानके प्राप्त होनेके प्रथम समयमें होती है, इसलिए इसकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय कहा है। अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है यह स्पष्ट ही है। सोलह कषायकी उत्कृष्ट स्थितिका जघन्य बन्ध काल एक समय और उत्कृष्ट बन्ध काल अन्तर्मुहूर्त है, इसलिए तो इनकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त कहा है। भय, जुगुप्सा ये संक्रमसे उत्कृष्ट स्थितिवाली प्रकृतियां हैं, इसलिए इनकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल उक्त प्रमाण बन जानेसे यह भी उक्त प्रमाण कहा है। किन्तु सोलह कषाय तथा भय और जुगुप्साको उदय उदीरणाका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त होनेसे इनका अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त कहा है। यह जघन्य काल ऐसे कि किसी जीवने एक समय तक क्रोधकी अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणा की और दूसरे समयमें मानकी अनुत्कृष्ट स्थिति-उदीरणा करने लगा। इसीप्रकार भय और जुगुप्साका उक्त काल भी घटित कर लेना चाहिए। इनके निरन्तर उदय-उदीरणाका नियम भी नहीं है, इसलिए भी यह काल बन जाता है। कषायोंके उत्कृष्ट स्थितिबन्धके समय स्त्रीवेद और पुरुषवेदका बन्ध नहीं होता, इसलिए इनकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल एक आवलि बन जानेसे यह तत्प्रमाण कहा है। इसीप्रकार हास्य और रतिकी उत्कृष्ट उदीरणाका काल घटित कर

§ ५३५. आदेसेण णेरइय० मिच्छ०-णवुंस०-अरदि-सोग० उक्क० ट्ठिदिउदी० जह० एयस०, उक्क० अंतोमु० । अणुक्क० जह० एयस०, उक्क० तेत्तीसं सागरोवमाणि । सम्म० उक्क० ट्ठिदिउदी० जह० उक्क० एयस० । अणुक्क० जह० एयस०, उक्क० तेत्तीसं सागरोवमं देसूणं । सम्मामि०-सोलसक०-भय-दुगुंछा० ओघं । हस्स-रदि० उक्क० ट्ठिदिउदी० जह० एयस०, उक्क० आवलिया । अणुक्क० जह० एगस०, उक्क० अंतोमु० । एवं सत्तमाए । एवं पढमाए जाव छट्ठि त्ति । णवरि समट्ठिदी । अरदि-सोग० उक्क० अणुक्क० ट्ठिदिउदी० जह० एयस०, उक्क० अंतोमु० ।

लेना चाहिए । इन चारों प्रकृतियोंकी अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाके जघन्य और उत्कृष्ट कालका कथन सुगम है । मात्र स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाके जघन्य कालके कथनमें जो विशेषता है वह आगे [illegible] नपुंसकवेदकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल भय-जुगुप्साके समान घटित कर लेना चाहिए । अरति और शोककी अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय भी यथा सम्भव इसी प्रकार घटित कर लेना चाहिए । अरति और शोककी अनुत्कृष्ट उदीरणाका उत्कृष्ट काल जो साधिक तेतीस सागर बतलाया है उसका कारण यह है कि नरकमें गमनके पूर्व इनकी उदीरणा होने लगी और वहां तेतीस सागर कालतक इनकी उदीरणा होती रही । इसप्रकार यह काल बन जाता है । जो जीव नपुंसकवेदसे उपशमश्रेणिपर आरोहण कर उतरते समय एक समय तक नपुंसकवेदका उदीरक हुआ और दूसरे समयमें मरकर देव हो गया उसके नपुंसकवेदकी अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय प्राप्त होनेसे वह उक्त प्रमाण कहा है । इसीप्रकार स्त्रीवेदकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका एक समय जघन्य काल घटित कर लेना चाहिए । मात्र पुरुषवेदका भवके अन्तिम समयमें एक समयके लिए अनुत्कृष्ट स्थितिकी उदीरणा कराकर यह काल लाना चाहिए । नपुंसकवेद और स्त्रीवेदका यह काल इसप्रकार भी प्राप्त किया जा सकता है । एकेन्द्रियोंकी उत्कृष्ट कायस्थिति अनन्त काल है, इसलिए इसकी मुख्यतासे नपुंसकवेदकी अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका उत्कृष्ट काल तत्प्रमाण कहा है ।

§ ५३५. आदेशसे नारकियोंमें मिथ्यात्व, नपुंसकवेद, अरति और शोककी उत्कृष्ट स्थिति-उदीरणाका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है । अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणा-का जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल तेतीस सागर है । सम्यक्त्वकी उत्कृष्ट स्थिति-उदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है । अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल कुछ कम तेतीस सागर है । सम्यग्मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय और जुगुप्साका भंग ओघके समान है । हास्य और रतिकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल एक आवलि है । अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है । इसीप्रकार सातवीं पृथिवीमें जानना चाहिए । इसीप्रकार पहली पृथिवीसे लेकर छठी पृथिवी तकके नारकियोंमें जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि अपनी-अपनी स्थिति कहनी चाहिए । अरति और शोककी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है ।

§ ५३६. तिरिक्खेसु मिच्छ०-णवुंस० उक्क० ट्ठिदिउदी० जह० एयस०, उक्क० अंतोमु०। अणुक्क० जह० एयस०, उक्क० अणंतकालमसंखेज्जा पोग्गलपरियट्टा। सम्म० उक्क० ट्ठिदिउदी जह० उक्क० एयस०। अणुक्क० जह० एयस०, उक्क० तिण्णि पलिदो० देसूणाणि। सम्मामि०-सोलसक०-छण्णोक० पढमाए भंगो। इत्थिवे०-पुरिसवे० उक्क० ट्ठिदिउदी० ओघं। अणुक्क० जह० एयस०, उक्क० तिण्णि पलिदो० पुव्वकोडिपुधत्तं[1]। एवं पंचिंदियतिरिक्खतिए। णवरि मिच्छ० अणुक्क० जह० एयस०, उक्क० सगट्ठिदी। णवुंस० अणुक्क० जह० एयस०, उक्क० पुव्वकोडिपुधत्तं[3]। णवरि पज्ज० इत्थिवेद० उदी० णत्थि। जोणिणीसु पुरिस०-णवुंस उदी० णत्थि।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

विशेषार्थ—इनके स्वामित्वमें ओघसे कोई विशेषता नहीं है, इसलिए ओघप्ररूपणाके स्पष्टीकरणको ध्यानमें रखकर तथा यहाँकी भवस्थितिको ख्यालमें रखकर यहाँ स्पष्टीकरण कर लेना चाहिए। मात्र मिथ्यात्व और नपुंसकवेदकी अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणा भवके अन्तिम समयमें करानेपर इनकी अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय प्राप्त करना चाहिए। प्रथमादि छह पृथिवियोंमें अरति और शोककी उदय-उदीरणा अधिकसे अधिक अन्तर्मुहूर्त कालतक होती है, इसलिए यहां इनकी अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त कहा है। इसीप्रकार आगे भी कालको घटित कर लेना चाहिए। यदि कहीं कोई विशेषता होगी तो उसका अलगसे स्पष्टीकरण करेंगे।

§ ५३६. तिर्यञ्चोंमें मिथ्यात्व और नपुंसकवेदकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अनन्त काल है जो असंख्यात पुद्गलपरिवर्तनप्रमाण है। सम्यक्त्वकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल कुछ कम तीन पल्य है। सम्यग्मिथ्यात्व, सोलह कषाय और छह नोकषायोंका भंग प्रथम पृथिवीके समान है। स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका भंग ओघके समान है। अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल तीन पल्य अधिक पूर्वकोटिपृथक्त्वप्रमाण है। इसी-प्रकार पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनमें मिथ्यात्वकी अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अपनी-अपनी स्थितिप्रमाण है। नपुंसकवेदकी अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल पूर्वकोटिपृथक्त्वप्रमाण है। इतनी विशेषता है कि पर्याप्तकोंमें स्त्रीवेदकी उदीरणा नहीं है। तथा योनिनियोंमें पुरुषवेद और नपुंसकवेदकी उदीरणा नहीं है।

विशेषार्थ—भोगभूमिमें नपुंसकवेदी तिर्यञ्च और मनुष्य नहीं होते, अतः पंचेन्द्रिय तिर्यञ्च पर्याप्तकोंमें नपुंसकवेदकी अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका उत्कृष्ट काल मात्र पूर्वकोटिपृथक्त्व-प्रमाण कहा है। यह विशेषता आगे भी यथायोग्य जान लेनी चाहिए। शेष कथन स्पष्ट ही है।

---

१. ता०प्रतौ उक्क० पुव्वकोडिपुधत्तं इति पाठः।
२. ता०प्रतौ उक्क० णवुंस० इति पाठः।
३. ता०प्रतौ उक्क० तिण्णिपलिदो० पुव्वकोडिपुधत्तं इति पाठः।

§ ५३७. पंचि० तिरि० अपज०-मणुसअपज० मिच्छ०-णवुंस० उक्क० जहण्णुक्क० एयस० । अणुक्क० जह० खुद्दाभव० समऊणं, उक्क० अंतोमु० । सोलसक०-छण्णोक० उक्क० ट्ठिदिउदी० जह० उक्क० एयस० । अणुक्क० जह० एयस०, उक्क० अंतोमु० । मणुसतिए पंचिंदियतिरिक्खतियभंगो ।

§ ५३८. देवेसु मिच्छ० उक्क० ट्ठिदिउदी० जह० एयस०, उक्क० अंतोमु० । अणुक्क० जह० एयस०, उक्क० एक्कत्तीसं सागरो० । सम्म० उक्क० ट्ठिदिउदी० जह० उक्क० एयस० । अणुक्क० जह० एयस०, उक्क० तेत्तीसं सागरोवमाणि । सम्मामि०-सोलसक०-अरदि-सोग-भय-दुगुंछा० पढमपुढविभंगो । इत्थिवे० उक्क० जह० एयस०, उक्क० आवलिया० । अणुक्क० जह० एयस०, उक्क० पणवण्णपलिदो० । पुरिसवेद० उक्क० ओघं । अणुक्क० जह० एयस०, उक्क० तेत्तीसं सागरो० । हस्स-रदि० उक्क० ट्ठिदिउदी० ओघं । अणुक्क० जह० एयसमओ, उक्क० छम्मासा । एवं भवणादि जाव सहस्सार त्ति । णवरि सगट्ठिदी । हस्स-रदि० णारयभंगो । सहस्सारे हस्स-रदि० ओघं । भवण०-वाणवें-जोदिसि० इत्थिवे० उक्क० ओघं । अणुक्क० जह० एयस०, उक्क०

---

§ ५३७. पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्तकोंमें मिथ्यात्व और नपुंसकवेदकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अनुत्कृष्ट स्थिति-उदीरणाका जघन्य काल एक समय कम क्षुल्लक भवग्रहणप्रमाण है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। सोलह कषाय और छह नोकषायोंकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। मनुष्यत्रिकमें पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकके समान भंग है।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

§ ५३८. देवोंमें मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल इकतीस सागर है। सम्यक्त्वकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल तेतीस सागर है। सम्यग्मिथ्यात्व, सोलह कषाय, अरति, शोक, भय और जुगुप्साका भंग प्रथम पृथिवीके समान है। स्त्रीवेदकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल एक आवलि है। अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल पचवन पल्य है। पुरुषवेदकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका भंग ओघके समान है। अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल तेतीस सागर है। हास्य और रतिकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका भंग ओघके समान है। अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणा-का जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल छह महीना है। इसीप्रकार भवनवासियोंसे लेकर सहस्रार कल्पतक जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि अपनी-अपनी स्थिति कहनी चाहिए। तथा इसमें हास्य और रतिका भंग नारकियोंके समान है। सहस्रारमें हास्य और रतिका भंग ओघके समान है। भवनवासी, व्यन्तर और ज्योतिषी देवोंमें स्त्रीवेदकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका भंग ओघके समान है। अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय

तिण्णि पलिदोवमाणि पलिदोवमसादिरेयाणि पलिदोवमसादिरे० । सोहम्मीसाणे इत्थिवेद० देवोघं । उवरि इत्थिवे० णत्थि ।

§ ५३९. आणदादि णवगेवज्जा त्ति मिच्छ० उक्क० ट्ठिदिउदी० जह० उक्क० एयस० । अणु० जह० अंतोमु०, उक्क० सगट्ठिदी । सम्म० उक्क० ट्ठिदिउदी० जहण्णु० एयस० । अणुक्क० जह० एयसमओ, उक्क० सगट्ठिदी । सम्मामि० ओघं । सोलसक०-छण्णोक० उक्क० ट्ठिदिउदी० जहण्णुक्क० एयस० । अणुक्क० जह० एयस०, उक्क० अंतोमु० । पुरिसवेद० उक्क० ट्ठिदिउदी० जहण्णुक्क० एयस० । अणुक्क० जहण्णुक्क०-ट्ठिदी ।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

§ ५४०. अणुदिसादि सव्वट्ठा त्ति सम्म० उक्क० ट्ठिदिउदी० जह० उक्क० एयस० । अणुक्क० जह० एयस०, उक्क० सगट्ठिदी । बारसक०-छण्णोक० उक्क० ट्ठिदिउदी० जह० उक्क० एयस० । अणुक्क० जह० एयस०, उक्क० अंतोमु० । पुरिसवे० उक्क० ट्ठिदिउदी० जहण्णुक्क० एयस० । अणुक्क० जहण्णुक्क० जहण्णुक्कस्सट्ठिदी । एवं जाव० ।

है और उत्कृष्ट काल क्रमसे तीन पल्य, साधिक एक पल्य और साधिक एक पल्य है । सौधर्म और ऐशानकल्पमें स्त्रीवेदका भंग सामान्य देवोंके समान है । आगे स्त्रीवेदकी उदीरणा नहीं है ।

§ ५३९. आनतकल्पसे लेकर नौ ग्रैवेयकतकके देवोंमें मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट स्थिति-उदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है । अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट काल अपनी-अपनी स्थितिप्रमाण है । सम्यक्त्वकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है । अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अपनी-अपनी स्थितिप्रमाण है । सम्यग्मिथ्यात्वका भंग ओघके समान है । सोलह कषाय और छह नोकषायोंकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है । अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है । पुरुषवेदकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है । अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल अपनी-अपनी जघन्य और उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण है ।

§ ५४०. अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धितकके देवोंमें सम्यक्त्वकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है । अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अपनी-अपनी स्थितिप्रमाण है । बारह कषाय और छह नोकषायोंकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है । अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है । पुरुषवेदकी उत्कृष्ट स्थिति-उदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है । अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल अपनी-अपनी जघन्य और उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण है । इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए ।

§ ५४१. जह० पयदं। दुविहो णि०—ओघेण आदेसेण य। ओघेण मिच्छ० जह० ट्ठिदिउदी० जह० उक्क० एयस०। अज० तिण्णि भंगा। तत्थ जो सो सादिओ सपज्जवसिदो तस्स जह० अंतोमु०, उक्क० अद्धपोग्गलपरियट्टं देसूणं। सम्म० जह० ट्ठिदिउदी० जहण्णु० एयस०। अज० जह० अंतोमु०, उक्क० छावट्ठिसागरोवमाणि देसूणाणि। सम्मामि० जह० ट्ठिदिउदी० जह० उक्क० एयस०। अजह० जह० उक्क० अंतोमु०। बारसक०-भय-दुगुंछ० जह० अज० ट्ठिदिउदी० जह० एयसमओ, उक्क० अंतोमु०। चदुसंज० जह० ट्ठिदिउदी० जह० उक्क० एयस०। अज० जह० एयस०, उक्क० अंतोमुहुत्तं। इत्थिवे०-पुरिसवे०-णवुंस० जह० ट्ठिदिउदी० जह० उक्क० एयस०। अज० जह० एयस०, पुरिसवे० अंतोमु०। उक्क० पलिदोवमसदपुधत्तं सागरोवमसदपुधत्तं अणंतकालमसंखे० पोग्गलपरियट्टं। हस्स-रदि० जह० ट्ठिदिउदी० जह० उक्क० एयस०। अज० जह० एयस०, उक्क० छम्मासं। अरदि-सोग० जह० जह० उक्क० एयसमओ। अज० जह० एयस०, उक्क० तेत्तीसं सागरो० सादिरेयाणि।

§ ५४१. जघन्यका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मिथ्यात्वकी जघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अजघन्य स्थितिउदीरणाके तीन भंग हैं। उनमेंसे जो सादि-सपर्यवसित भंग है उसका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट काल कुछ कम अर्धपुद्गलपरिवर्तनप्रमाण है। सम्यक्त्वकी जघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट काल कुछ कम छयासठ सागर है। सम्यग्मिथ्यात्वकी जघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। बारह कषाय, भय और जुगुप्साकी जघन्य और अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। चार संज्वलनकी जघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। स्त्रीवेद, पुरुषवेद और नपुंसकवेदकी जघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है, पुरुषवेदका अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट काल क्रमसे सौ पल्यपृथक्त्व, सौ सागरपृथक्त्व तथा असंख्यात पुद्गलपरिवर्तनप्रमाण अनन्त काल है। हास्य और रतिकी जघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल छह महीना है। अरति और शोककी जघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल साधिक तेतीस सागर है।

विशेषार्थ—जो मिथ्यादृष्टि जीव उपशमसम्यक्त्वके अभिमुख हो एक समय अधिक एक आवलिप्रमाण प्रथम स्थितिके रहनेपर उपरितन एक स्थितिकी उदीरणा करता है उसके मिथ्यात्वकी जघन्य स्थितिउदीरणा मात्र एक समय तक प्राप्त होनेके कारण इसका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय कहा है। इसकी अजघन्य स्थितिउदीरणाके तीन भंग प्राप्त होते हैं—अनादि-अनन्त, अनादि-सान्त और सादि-सान्त। उनमेंसे सादि-सान्त भंगका जो जघन्य और

§ ५४२. आदेसेण णेरइय० मिच्छ०-णवुंस०-अरदि-सोग० जह० ट्ठिदिउदी० जह० उक्क० एयस० । अज० जह० अंतोमु०, अरदि-सोग० जह० एयसमओ, उक्क० तेत्तीसं सागरोवमाणि । सम्मत्त० जहण्णट्ठिदिउदी० जह० उक्क० एयस० । अज० जह० एयसमओ, उक्क० तेत्तीसं सागरो० देसूणाणि । सम्मामि० ओघं । सोलसक०-हस्स-रदि-भय-दुगुंछा० जह० ट्ठिदिउदी० जह० उक्क० एयसमओ । अज० जह० एयस०,

उत्कृष्ट काल मूलमें बतलाया है वह सुगम है, क्योंकि जो सम्यग्दृष्टि जीव मिथ्यात्वमें जाकर अन्तर्मुहूर्त कालतक मिथ्यादृष्टि बना रहकर पुनः सम्यग्दृष्टि हो जाता है उसके मिथ्यात्वकी अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त प्राप्त होता है और जो अर्धपुद्गलपरिवर्तन-प्रमाण कालके शेष रहने पर सम्यग्दृष्टि होकर पुनः अन्तर्मुहूर्तमें मिथ्यादृष्टि हो जाता है और मुक्ति लाभ करनेके कुछ काल पूर्व सम्यग्दृष्टि होता है उसके मिथ्यात्वकी अजघन्य स्थितिउदी-रणाका उत्कृष्ट काल कुछ कम अर्धपुद्गलपरिवर्तनप्रमाण प्राप्त होता है। सम्यक्त्वकी जघन्य स्थितिउदीरणा अपने स्वामित्वके अनुसार क्षायिक सम्यक्त्वको प्राप्त करते समय एक समय अधिक एक आवलिप्रमाण स्थितिके शेष रहनेपर एक समय तक उपरितन स्थितिकी होती है, इसलिए इसका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय कहा है। तथा वेदकसम्यक्त्वके जघन्य और उत्कृष्ट कालको ध्यानमें रखकर इसकी अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट काल कुछ कम छयासठ सागर कहा है। अपने स्वामित्वके अनुसार सम्यग्मि-थ्यात्वकी जघन्य स्थितिउदीरणा सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थानके अन्तिम समयमें प्राप्त होती है, इसलिए इसका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय कहा है। तथा इस गुणस्थानके जघन्य और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्तको ध्यानमें रखकर इसकी अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त कहा है। बारह कषाय, भय और जुगुप्साकी जघन्य स्थिति उदीरणाका जो स्वामित्व बतलाया है उसे ध्यानमें रखकर इनकी जघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल घटित कर लेना चाहिए। अजघन्य स्थितिउदीरणाका काल सुगम है। कालका निर्देश मूलमें किया ही है। चार संज्वलनोंकी जघन्य स्थिति दोनों श्रेणियोंमें विवक्षित कषायसे चढ़े हुए जीवके एक समयतक होती है, इसलिए इनकी जघन्य स्थिति-उदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय कहा है। इनकी अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है यह स्पष्ट ही है। इसीप्रकार आगे भी स्वामित्वका विचारकर काल घटित कर लेना चाहिए। सुगम होनेसे पृथक्-पृथक् स्पष्टी-करण नहीं किया। यही बात गतिमार्गणाके सब उत्तर भेदोंमें जाननी चाहिए। जहाँ कुछ विशेषता होगी उसका स्पष्टीकरण अलगसे करेंगे।

§ ५४२. आदेशसे नारकियोंमें मिथ्यात्व, नपुंसकवेद, अरति और शोककी जघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अजघन्य स्थितिउदीरणाका मिथ्यात्व और नपुंसकवेदकी अपेक्षा जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त, अरति और शोककी अपेक्षा जघन्य काल एक समय तथा सबका उत्कृष्ट काल तेतीस सागर है। सम्यक्त्वकी जघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल कुछ कम तेतीस सागर है। सम्यग्मिथ्यात्वका भंग ओघके समान है। सोलह कषाय, हास्य, रति, भय और जुगुप्साकी जघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट

१. ता०प्रतौ अंतोमु० । ......अरदि-सोग० इति पाठः ।

मार्गदर्शक आचार्य श्री विद्यासागर जी महाराज

अंतोमु० । एवं पढमाए। णवरि सगट्ठिदी । अरदि-सोग० जह० ट्ठिदिउदी० जह० उक्क० एयस० । अज० जह० एयस०, उक्क० अंतोमु० ।

§ ५४३. बिदियादि जाव छट्ठि त्ति मिच्छ० जह० ट्ठिदिउदी० जह० उक्क० एयस० । अज० जह० अंतोमु०, उक्क० सगट्ठिदी। सम्म० जह० जह० उक्क० एयसमओ। अज० जह० अंतोमु०, उक्क० सगट्ठिदी देसूणा। सम्मामि० ओघं। बारसक०-छण्णोक० जह० ट्ठिदिउदी० जह० उक्क० एयस० । अज० जह० एयस०, उक्क० अंतोमु० । अणंताणु०४ जह० अजह० ट्ठिदिउदी० जह० एयस०, उक्क० अंतोमु० । णवुंस० जह० ट्ठिदिउ० जह० उक्क० एयस० । अज० जहण्णुक्क० जहण्णुक्कस्सट्ठिदी भाणियव्वा ।

§ ५४४. सत्तमाए मिच्छत्त-णवुंस०-अरदि-सोग-सम्मामि०-हस्स-रदि० णिरयोघं। सम्म० जह० ट्ठिदिउदी० जह० उक्क० एयस० । अज० जह० अंतोमु०, उक्क०

काल एक समय है। अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। इसीप्रकार प्रथम पृथिवीमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि अपनी स्थिति कहनी चाहिए। अरति और शोककी जघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है।

विशेषार्थ—अरति और शोककी अजघन्य स्थितिउदीरणा प्रथमादि छह पृथिवियोंमें अधिक से अधिक अन्तर्मुहूर्त कालतक ही होती है। यही कारण है कि प्रथम पृथिवीमें उक्त प्रकृतियोंकी अजघन्य स्थितिउदीरणाका उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त कहा है।

§ ५४३. दूसरीसे लेकर छठी पृथिवी तकके नारकियोंमें मिथ्यात्वकी जघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट काल अपनी-अपनी स्थितिप्रमाण है। सम्यक्त्वकी जघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट काल कुछ कम अपनी-अपनी स्थितिप्रमाण है। सम्यग्मिथ्यात्वका भंग ओघके समान है। बारह कषाय और छह नोकषायोंकी जघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी जघन्य और अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। नपुंसकवेदकी जघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल अपनी-अपनी जघन्य और उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण कहना चाहिए।

विशेषार्थ—इन नारकियोंमें अनन्तानुबन्धीचतुष्कके स्वामित्वको ध्यानमें लेनेपर इनकी जघन्य स्थितिउदीरणाका उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त बन जाता है, इसलिए यह उक्त कालप्रमाण कहा है।

§ ५४४. सातवीं पृथिवीमें मिथ्यात्व, नपुंसकवेद, अरति, शोक, सम्यग्मिथ्यात्व, हास्य और रतिका भंग सामान्य नारकियोंके समान है। सम्यक्त्वकी जघन्य स्थितिउदीरणाका

तेत्तीसं सागरो० देसूणाणि । सोलसक०-भय-दुगुंछ० जह० अजह० ट्ठिदिउदी० जह० एयस०, उक्क० अंतोमु० ।

§ ५४५. तिरिक्खेसु मिच्छ०-णवुंस जह० ट्ठिदिउदी० जह० उक्क० एयस० । अज० जह० खुद्दाभव०, उक्क० अणंतकालमसंखे०पोग्गलपरियट्टा । सम्म० जह० ट्ठिदिउदी० जह० उक्क० एयस० । अज० जह० एयस०, उक्क० तिण्णि पलिदो० देसूणाणि । सम्मामि०-सोलसक०-भय-दुगुंछाणं सत्तमपुढविभंगो । इत्थिवे०-पुरिसवे० जह० ट्ठिदिउदी० जह० उक्क० एयस० । अज० जह० अंतोमु०, उक्क० तिण्णि पलिदो० पुव्वकोडिपुधत्तेणब्भहियाणि । हस्स-रदि-अरदि-सोग० जह० ट्ठिदिउदी० जह० उक्क० एयस० । अज० जह० एयस०, उक्क० अंतोमु० ।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

§ ५४६. पंचिंदियतिरिक्खतिय० मिच्छ० जह० ट्ठिदिउदी० जह० उक्क० एयस०, अज० जह० खुद्दाभव० अंतोमु०, इत्थिवेद०-पुरिसवे० जह० ट्ठिदिउदी० जह० उक्क० एयस०, अज० जह० अंतोमु०, उक्क० तिण्हं पि सगट्ठिदी । सम्म०-

---

जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है । अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट काल कुछ कम तेतीस सागर है । सोलह कषाय, भय और जुगुप्साकी जघन्य और अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है ।

विशेषार्थ—यहाँ सोलह कषाय, भय और जुगुप्साकी जघन्य और अजघन्य स्थिति-उदीरणाके जघन्य और उत्कृष्ट कालका खुलासा ओघको ध्यानमें रखकर लेना चाहिए ।

§ ५४५. तिर्यञ्चोंमें मिथ्यात्व और नपुंसकवेदकी जघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है । अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य काल क्षुल्लक भवग्रहणप्रमाण है और उत्कृष्ट काल अनन्तकाल है जो असंख्यात पुद्गलपरिवर्तनप्रमाण है । सम्यक्त्वकी जघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है । अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल कुछ कम तीन पल्यप्रमाण है । सम्यग्मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय और जुगुप्साका भंग सातवीं पृथिवीके समान है । स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी जघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है । अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट काल पूर्वकोटिपृथक्त्व अधिक तीन पल्य है । हास्य, रति, अरति और शोककी जघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है । अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है ।

विशेषार्थ—तिर्यञ्चोंमें कृतकृत्यवेदक सम्यग्दृष्टि जीव भी मरकर उत्पन्न होते हैं, इसलिए इनमें सम्यक्त्वकी अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय बन जाता है । इसीप्रकार सामान्यसे नारकियोंमें और प्रथम पृथिवीमें भी जान लेना चाहिए । आगे भी यह विशेषता यथायोग्य समझ लेनी चाहिए ।

§ ५४६. पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकमें मिथ्यात्वकी जघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है, अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य काल सामान्य पंचेन्द्रिय तिर्यञ्चोंमें क्षुल्लक भवग्रहणप्रमाण और शेष दोमें अन्तर्मुहूर्त है, स्त्रीवेद और और पुरुषवेदकी जघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है, अजघन्य

सम्मामि० तिरिक्खोघं । सोलसक०-छण्णोक० जह० ट्ठिदिउदी० जह० उक्क० एयस० । अज० जह० एयस०, उक्क० अंतोमु० । णवुंस० जह० ट्ठिदिउदी० जह० उक्क० एयस० । अज० जह० अंतोमुहुत्तं, उक्क० पुव्वकोडिपुधत्तं । णवरि पज्ज० इत्थिवे० णत्थि । जोणिणीसु पुरिसवे०-णवुंस० णत्थि । जोणिणी० सम्म० अज० जह० अंतोमु० ।

§ ५४७. पंचिं०तिरिक्खअपज्ज०-मणुसअपज्ज० मिच्छ० जह० ट्ठिदिउदी० जह० उक्क० एयस० । अज० जह० आवलिया समयूणा, उक्क० अंतोमु० । सोलसक०-छण्णोक० जह० ट्ठिदिउदी० जह० उक्क० एयस० । अज० जह० एयस०, उक्क० अंतोमुहुत्तं । णवुंस० जह० ट्ठिदिउदी० जह० उक्क० एयस० । अज० जह० उक्क० अंतोमु० ।

§ ५४८. मणुसतिय० पंचिंदियतिरिक्खभंगो । णवरि सम्म० अज० जह० अंतोमु० । तिण्णिवेद० अज० जह० एयस० । पज्ज० इत्थिवेदो णत्थि । सम्म०

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

स्थितिउदीरणाका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट काल मिथ्यात्व आदि तीनोंका ही अपनी-अपनी स्थितिप्रमाण है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका भंग सामान्य तिर्यञ्चोंके समान है। सोलह कषाय और छह नोकषायोंकी जघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। नपुंसकवेदकी जघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट काल पूर्वकोटिपृथक्त्वप्रमाण है। इतनी विशेषता है कि पंचेन्द्रिय तिर्यञ्च पर्याप्तकोंमें स्त्रीवेदकी उदीरणा नहीं है तथा योनिनियोंमें पुरुषवेद और नपुंसकवेदकी उदीरणा नहीं है। तथा योनिनी तिर्यञ्चोंमें सम्यक्त्वकी अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है।

विशेषार्थ—कृतकृत्यवेदक सम्यग्दृष्टि मनुष्य मरकर योनिनी तिर्यञ्चोंमें नहीं उत्पन्न होते, अतः इनमें सम्यक्त्वकी अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय न बन सकनेके कारण वह अन्तर्मुहूर्त कहा है जो वेदकसम्यक्त्वकी अपेक्षा बन जाता है।

§ ५४७. पञ्चेन्द्रिय तिर्यंच अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्तकोंमें मिथ्यात्वकी जघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय कम एक आवलि है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। सोलह कषाय और छह नोकषायोंकी जघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। नपुंसकवेदकी जघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है।

§ ५४८. मनुष्यत्रिकमें पंचेन्द्रिय तिर्यंचोंके समान भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि इनमें सम्यक्त्वकी अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है। तीनों वेदोंकी अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है। मनुष्य पर्याप्तकोंमें स्त्रीवेदकी उदीरणा नहीं है।

अज० जह० एयसमओ। मणुसिणीसु पुरिसवेद०-णवुंस० णत्थि।

§ ५४९. देवेसु मिच्छ० जह० ट्ठिदिउदी० जह० उक्क० एयस०। अज० जह० अंतोमु०, उक्क० एकत्तीसं सागरोवमं। सम्म०-पुरिसवे० जह० ट्ठिदिउ० जह० उक्क० एयस०। अज० जह० एयस०, पुरिसवे० अंतोमु०, उक्क० दोण्हं पि तेत्तीसं सागरोवमं। सम्मामि०-सोलसक०-छण्णोक० पढमपुढविभंगो। णवरि हस्स-रदि० जह० मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज ट्ठिदिउदी० जह० उक्क० एगसमओ। अज० जह० एयस०, उक्क० छम्मासं। इत्थिवे० जह० ट्ठिदिउदी० जह० उक्क० एगस०। अज० जह० अंतोमु०, उक्क० पणवण्णं पलिदोवमं०। एवं भवण-वाणवें०। णवरि सगट्ठिदी। सम्मत्त० अज० जह० अंतोमु०, उक्क० सगट्ठिदी देसूणा। इत्थिवे० अज० जह० अंतोमु०, उक्क० तिण्णि पलिदो० पलिदो० सादिरेयाणि। हस्स-रदि० जह० ट्ठिदिउदी० जह० उक्क० एयस०। अज० जह० एयसमओ, उक्क० अंतोमुहुत्तं।

तथा इनमें सम्यक्त्वकी अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है। मनुष्यिनियोंमें पुरुषवेद और नपुंसकवेदकी उदीरणा नहीं है।

विशेषार्थ—मनुष्योंमें क्षायिक सम्यक्त्वकी उत्पत्ति उक्त तीनों प्रकारके मनुष्योंमें हो सकती है। इसलिए क्षायिक सम्यक्त्वको उत्पन्न करनेवाली जो कृतकृत्यवेदक सम्यग्दृष्टि मनुष्यिनी मरकर उत्तम भोगभूमिमें उत्पन्न होती है वह भी मनुष्य पर्याप्तकोंमें ही उत्पन्न होती है। इसी बातको ध्यानमें रखकर यहाँ मनुष्य पर्याप्तकोंमें सम्यक्त्वकी अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय बन जानेसे वह तत्प्रमाण कहा है। शेष कथन सुगम है।

§ ५४९. देवोंमें मिथ्यात्वकी जघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट काल इकतीस सागर है। सम्यक्त्व और पुरुषवेदकी जघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है, पुरुषवेदका अन्तर्मुहूर्त है और दोनोंका उत्कृष्ट काल तेतीस सागर है। सम्यग्मिथ्यात्व, सोलह कषाय और छह नोकषायोंका भंग प्रथम पृथिवीके समान है। इतनी विशेषता है कि हास्य और रतिकी जघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल छह महीना है। स्त्रीवेदकी जघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट काल पचवन पल्य है। इसीप्रकार भवनवासी और व्यन्तरदेवोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि अपनी-अपनी स्थिति कहनी चाहिए। सम्यक्त्वकी अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट काल कुछ कम अपनी-अपनी स्थितिप्रमाण है। स्त्रीवेदकी अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट काल क्रमसे तीन पल्य और साधिक एक पल्य है। हास्य-रतिकी जघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है।

§ ४५०. जोदिसियादि जाव सहस्सार त्ति मिच्छ० जह० ट्ठिदिउदी० जह० उक्क० एयस० । अज० जह० अंतोमुहुत्तं, उक्क० सगट्ठिदी । सम्म० जह० ट्ठिदीउदी० जह० उक्क० एयस० । अजह० जह० एयस०, उक्क० सगट्ठिदी । सम्मामि०-सोलसक०-छण्णोक० बिदियपुढविभंगो । इत्थिवे० जह० ट्ठिदीउदी० जह० उक्क० एयस० । अज० जह० पलिदो० अट्ठभागो पलिदो० सादिरेयं, उक्क० पलिदो० सादिरेयं पणवण्णं पलिदोवमाणि । पुरिसवे० जह० ट्ठिदिउदी० जह० एयस०......। अज० जहण्णुक्क० जहण्णुक्कस्सट्ठिदीओ । णवरि जोदिसि० सम्म० अज० जह० अंतोमु०, उक्क० पलिदो० सादिरेयं । सहस्सारे हस्स-रदि ओघं । आणदादि णवगेवज्जा त्ति सणक्कुमारभंगो । णवरि सगट्ठिदी । अणंताणु०४ जह० ट्ठिदिउदी० जह० उक्क० एयसमओ । अज०

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

विशेषार्थ—सामान्यकी अपेक्षा देवोंमें भी कृतकृत्यवेदक सम्यक्त्वकी अपेक्षा सम्यक्त्वकी अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय बन जानेसे यह काल तत्प्रमाण कहा है । किन्तु भवनत्रिकमें सम्यग्दृष्टि जीव मरकर नहीं उत्पन्न होते, इसलिए इनमें सम्यक्त्वकी अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्तसे कम नहीं प्राप्त होनेसे यह अन्तर्मुहूर्त कहा है । पुरुषवेद और स्त्रीवेदकी जघन्य स्थितिउदीरणा जो हतसमुत्पत्तिक असंज्ञी जीव मरकर देवोंमें उत्पन्न होता है उसके उत्पन्न होनेके अन्तर्मुहूर्त होनेपर होती है, इसलिए सामान्य देवोंमें पुरुषवेद और स्त्रीवेदकी अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त कहा है । इसीप्रकार स्वामित्व और भवस्थिति आदिको जानकर अन्य सब प्रकृतियोंकी जघन्य और अजघन्य स्थितिउदीरणाका काल घटित कर लेना चाहिए ।

§ ४५०. ज्योतिषी देवोंसे लेकर सहस्रार कल्पतकके देवोंमें मिथ्यात्वकी जघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है । अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट काल अपनी-अपनी स्थितिप्रमाण है । सम्यक्त्वकी जघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है । अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अपनी-अपनी स्थितिप्रमाण है । सम्यग्मिथ्यात्व, सोलह कषाय और छह नोकषायोंका भंग दूसरी पृथिवीके समान है । स्त्रीवेदकी जघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है । अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य काल ज्योतिषियोंमें एक पल्यका आठवाँ भागप्रमाण और सौधर्म-ऐशानकल्पमें साधिक एक पल्यप्रमाण है तथा उत्कृष्ट काल ज्योतिषियोंमें साधिक एक पल्यप्रमाण और सौधर्म-ऐशानकल्पमें पचवन पल्यप्रमाण है । पुरुषवेदकी जघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है । अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल अपनी-अपनी जघन्य और उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण है । इतनी विशेषता है कि ज्योतिषियोंमें सम्यक्त्वकी अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट काल साधिक एक पल्य है । सहस्रार कल्पमें हास्य और रतिका भंग ओघके समान है । आनत कल्पसे लेकर नौ ग्रैवेयक तकके देवोंमें सनत्कुमारकल्पके समान भंग है । इतनी विशेषता है कि अपनी-अपनी स्थिति कहनी चाहिए । अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी जघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है । अजघन्य स्थितिउदीरणाका

1. आ०प्रतौ एयस० अज० इति पाठः ।

जह० एयस०, उक्क० अंतोमु० ।

§ ५५१. अणुद्दिसादि सव्वट्ठा त्ति सम्म० जह० ट्ठिदीउदी० जह० उक्क० एयस० । अज० जह० एयस०, उक्क० सगट्ठिदी । पुरिसवेद० जह० ट्ठिदिउदी० जह० उक्क० एयस० । अजह० जहण्णुक्क० जहण्णुक्कस्सट्ठिदी । बारसक०-छण्णोक० जह० ट्ठिदिउदी० जह० उक्क० एयस० । अज० जह० एयस०, उक्क० अंतोमु० । एवं जाव० ।

जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है ।

विशेषार्थ—ज्योतिषियोंमें सम्यग्दृष्टि जीव मरकर उत्पन्न नहीं होते, इसलिए इनमें सम्यक्त्वकी अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्तसे कम नहीं प्राप्त होता, इसलिए वह अन्तर्मुहूर्त कहा है । तथा ज्योतिषियोंकी उत्कृष्ट स्थिति साधिक एक पल्य है, इसे ध्यानमें रखकर इनमें सम्यक्त्वकी अजघन्य स्थितिउदीरणाका उत्कृष्ट काल तत्प्रमाण कहा है । किन्तु इसे कुछ कम ही जानना चाहिए । कारण स्पष्ट है । सहस्रार कल्पमें हास्य और रतिकी जघन्य और अजघन्य स्थितिउदीरणा ओघके समान बन जाती है इस बातको ध्यानमें रखकर इस कल्पमें हास्य और रतिका भंग ओघके समान कहा है । आनतकल्पसे लेकर नौ ग्रैवेयक तकके देवोंमें स्वामित्वके अनुसार सब प्रकृतियोंकी जघन्य और अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल सनत्कुमारकल्पके देवोंके समान बन जाता है । मात्र यहाँ अपनी-अपनी स्थिति जाननी चाहिए । साथ ही इनमें अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी जघन्य स्थितिउदीरणा अपने स्वामित्वके अनुसार भवके अन्तिम समयमें होती है, इसलिए इनमें अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी जघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय कहा है । इनमें अनन्तानुबन्धी-चतुष्ककी अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त स्पष्ट ही है । शेष कथन सुगम है । मात्र अपने-अपने स्वामित्वको जानकर काल घटित करना चाहिए ।

§ ५५१. अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धितकके देवोंमें सम्यक्त्वकी जघन्य स्थितिउदीरणा-का जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है । अजघन्य स्थितिउदीरणा जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अपनी-अपनी स्थितिप्रमाण है । पुरुषवेदकी जघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है । अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल अपनी-अपनी जघन्य और उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण है । बारह कषाय और छह नोकषायोंकी जघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है । अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है । इसीप्रकार अनाहारक मार्गणातक जानना चाहिए ।

विशेषार्थ—इन देवोंमें कृतकृत्यवेदकसम्यग्दृष्टि जीव भी उत्पन्न होता है, इसलिए इनमें सम्यक्त्वकी जघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय तथा अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय बन जानेसे वह उक्तप्रमाण कहा है । इनमें सम्यक्त्व-की अजघन्य स्थितिउदीरणाका उत्कृष्ट काल अपनी-अपनी उत्कृष्ट भवस्थितिप्रमाण है यह स्पष्ट ही है । अपने स्वामित्वके अनुसार इनमें पुरुषवेदकी जघन्य स्थितिउदीरणा भवके अन्तिम समयमें प्राप्त होती है, इसलिए इनमें पुरुषवेदकी जघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय कहा है । इनमें पुरुषवेदकी अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य

§ ५५२. अंतरं दुविहं—जह० उक्क० । उक्कस्से पयदं । दुविहो णि०—ओघेण आदेसेण य । ओघेण मिच्छ०-अणंताणु०४ उक्क० ट्ठिदीउदी० जह० अंतोमु०, उक्क० अणंतकालमसंखेज्जा पोग्गलपरियट्टा । अणुक्क० जह० एयस०, उक्क० वेछावट्ठिसागरो० देसूणाणि । सम्म०-सम्मामि० उक्क० अणुक्क० ट्ठिदिउदी० जह० अंतोमुहुत्तं, णवरि सम्म० अणुक्क० जह० एयस०, उक्क० उवड्ढपो०परियट्टं । अट्ठक० उक्क० ट्ठिदिउदी० जह० अंतोमु०, उक्क० अणंतकालमसंखे०पोग्गलपरियट्टं । अणुक्क० जह० एयसमओ, उक्क० पुव्वकोडी देसूणा । एवं चदुसंजल० । णवरि अणुक्क० जह० एयस०, उक्क० अंतोमु० । इत्थिवे०-पुरिसवे० उक्क० अणुक्क० ट्ठिदिउदी० जह० एयसमओ, उक्क० अणंतकालमसंखेज्जा पोग्गलपरियट्टा । एवं णवुंस० । णवरि अणुक्क० जह० एयस०, उक्क० सागरोवमसदपुधत्तं । एवं हस्स-रदीणं । णवरि अणुक्क० जह० एयसमओ, उक्क० तेत्तीसं सागरोवमं सादिरेयं । एवमरदि-सोग० । णवरि अणुक्क० जह० एयस०,

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

और उत्कृष्ट काल अपनी-अपनी जघन्य और उत्कृष्ट भवस्थितिप्रमाण है यह स्पष्ट ही है। इनमें बारह कषाय और छह नोकषायोंकी जघन्य स्थितिउदीरणा अपने स्वामित्वके अनुसार भवके अन्तिम समयमें ही प्राप्त होती है, इसलिए यहाँ इनकी जघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय कहा है। शेष कथन स्पष्ट ही है।

§ ५५२. अन्तर दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट। उत्कृष्टका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर काल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तरकाल अनन्त काल है जो असंख्यात पुद्गलपरिवर्तनप्रमाण है। अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल कुछ कम दो छयासठ सागरप्रमाण है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर काल अन्तर्मुहूर्त है। इतनी विशेषता है कि सम्यक्त्वकी अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तरकाल एक समय है तथा उत्कृष्ट अन्तरकाल उपार्ध पुद्गलपरिवर्तनप्रमाण है। आठ कषायोंकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तरकाल अनन्त काल है जो असंख्यात पुद्गलपरिवर्तनप्रमाण है। अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल कुछ कम एक पूर्वकोटिप्रमाण है। इसीप्रकार चार संज्वलनोंका जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनकी अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त है। स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल अनन्त काल है जो असंख्यात पुद्गलपरिवर्तनप्रमाण है। इसीप्रकार नपुंसकवेदके विषयमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इसकी अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल सौ सागर पृथक्त्वप्रमाण है। इसीप्रकार हास्य और रतिके विषयमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इसकी अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल साधिक तेतीस सागर है। इसीप्रकार अरति और शोकके विषयमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनकी अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल

उक्क० छम्मासा। एवं भय-दुगुंछाणं। णवरि अणुक्क० जह० एयस०, उक्क० अंतोमु०।

छह महीना है। इसीप्रकार भय और जुगुप्साके विषयमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनकी अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त है।

विशेषार्थ—मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धके योग्य उत्कृष्ट संक्लेश परिणाम जघन्यसे अन्तर्मुहूर्तके अन्तरसे और उत्कृष्टसे अनन्त कालके अन्तरसे होते हैं, क्योंकि संज्ञी पञ्चेन्द्रिय पर्याप्तका उत्कृष्ट अन्तरकाल अनन्त काल आगममें बतलाया है और ऐसे परिणाम उक्त जीवके ही होते हैं। यही कारण है कि यहाँ उक्त प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट अन्तरकाल अनन्त कालप्रमाण कहा है। यहाँ अनन्त कालसे असंख्यात पुद्गलपरिवर्तनप्रमाण कालका ग्रहण हुआ है। इसलिए उसके स्पष्टीकरणके रूपमें अनन्त कालको असंख्यात पुद्गलपरिवर्तनप्रमाण कहा है। उक्त प्रकृतियोंका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध कमसे कम एक समयतक ही होता है, इसलिए इन मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज प्रकृतियोंकी अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तरकाल एक समय बन जाता है। तथा जो सम्यग्दृष्टि जीव बीचमें अन्तर्मुहूर्त कालतक सम्यग्मिथ्यात्वको प्राप्त कर सम्यक्त्वके साथ कुछ कम दो छयासठ सागर कालतक रहकर पुनः मिथ्यादृष्टि हो जाता है उसके उक्त कालतक उक्त प्रकृतियोंकी उदीरणा नहीं होती, इसलिए इनकी अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका उत्कृष्ट अन्तरकाल कुछ कम दो छयासठ सागरप्रमाण कहा है। जो मिथ्यादृष्टि जीव मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध कर उसका स्थितिघात किये बिना वेदकसम्यग्दृष्टि बनता है उस वेदकसम्यग्दृष्टिके दूसरे समयमें सम्यक्त्वकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणा होती है तथा आगे अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणा होती है। तथा अन्तर्मुहूर्तमें उसीके कदाचित् मिश्रगुणस्थानको प्राप्त होनेपर उसके प्रथम समयमें सम्यग्मिथ्यात्व प्रकृतिकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणा होती है और आगे उसीकी अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणा होती है। इसके बाद अन्तर्मुहूर्तमें उसके मिथ्यादृष्टि हो जानेपर तथा उसी प्रकार पुनः अन्तर्मुहूर्तमें वही सब क्रिया करनेपर सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त प्राप्त होनेसे वह तत्प्रमाण कहा है। इतनी विशेषता है कि ऐसा जीव वेदकसम्यक्त्वको प्राप्त कर प्रथम समय और तृतीय आदि समयोंमें सम्यक्त्वकी अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणा करता है और दूसरे समयमें उसकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणा करता है, इसलिए इसकी अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तरकाल एक समय है। इनकी उक्त दोनों उदीरणाओंका उत्कृष्ट अन्तरकाल उपार्ध पुद्गलपरिवर्तनप्रमाण है यह स्पष्ट ही है। आठ कषायोंकी उदीरणा क्रमसे पाँचवें और छठे आदि गुणस्थानोंमें नहीं होती और पाँचवें तथा छठे आदि गुणस्थानोंका जुदा-जुदा उत्कृष्ट काल कुछ कम एक पूर्वकोटि है, इसलिए इनकी अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका उत्कृष्ट अन्तरकाल कुछ कम एक पूर्वकोटि कहा है। यहाँ ऐसा समझना चाहिए कि इनकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जो उत्कृष्ट अन्तरकाल बतलाया है वह इनकी अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका नहीं घटित होता, क्योंकि मिथ्यात्वमें इनकी अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणा उत्कृष्ट स्थितिउदीरणाके कालको छोड़कर यथासम्भव होती रहती है। चार संज्वलनकी उदीरणा उपशमश्रेणिमें उदीरणा व्युच्छित्तिके बाद पुनः उस स्थानके प्राप्त होनेतक मध्यकालमें नहीं होती। यदि ऐसा जीव एक समयतक अनुदीरक होकर दूसरे समयमें मरकर देव हो जाय तो एक समयके

§ ५५३. आदेसेण णेरइय० मिच्छ०-सम्मामि०-अणंताणु०४ उक० ट्ठिदिउदी० जह० अंतोमु०, अणुक० जह० एयस०, सम्मामि० उक० अणुक० जह० अंतोमु०, हस्स-रदि० उक० अणुक० जह० एयसं०, उक० सव्वेसिं तेत्तीसं सागरोवमाणि देसूणाणि। बारसक० उक० ट्ठिदिउदी० जह० अंतोमु०, उक० तेत्तीससागरो० देसूणाणि। अणुक० जह० एयस०, उक० अंतोमु०। एवं णवुंस०-अरदि-सोग-भय-दुगुंछा०। णवरि उक० ट्ठिदिउदी० जह० एयस०। एवं सत्तमाए। एवं पढमाए जाव छट्ठि त्ति। णवरि सगट्ठिदी देसूणा। हस्स-रदि० अणुक० जह० एयस०, उक० अंतोमु०।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

§ ५५४. तिरिक्खेसु[2] मिच्छ०-अणंताणु०४ ओघं। णवरि अणुक० जह०

अन्तरके बाद भी इनकी उदीरणा होने लगती है। यही कारण है कि यहाँ इनकी अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तरकाल एक समय और उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तमुहूर्त कहा है। शेष कथन सुगम है। नौ नोकषायोंकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है, इसलिए इनकी अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तरकाल एक समय कहा है। इन नौ नोकषायोंमें भय और जुगुप्साको छोड़कर शेष सात सप्रतिपक्ष प्रकृतियां हैं और इनका जघन्य बन्धकाल एक समय है, इसलिए इनकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तरकाल एक समय बन जानेसे वह उक्त कालप्रमाण कहा है। शेष कथन स्पष्ट ही है। आगे गति मार्गणाके सब भेदोंमें स्वामित्व और उक्त विशेषार्थ तथा अपनी-अपनी स्थिति आदिको ध्यानमें रखकर स्पष्टीकरण कर लेना चाहिए। यदि कहीं कोई विशेषता होगी तो उसका संकेत करेंगे।

§ ५५३. आदेशसे नारकियोंमें मिथ्यात्व, सम्यग्मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त है, अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर काल एक समय है, सम्यग्मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तरकाल अन्तमुहूर्त है, हास्य और रतिकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तरकाल एक समय है तथा उत्कृष्ट अन्तरकाल सबका कुछ कम तेतीस सागर है। बारह कषायकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तरकाल अन्तमुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तरकाल कुछ कम तेतीस सागर है। अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तमुहूर्त है। इसीप्रकार नपुंसकवेद, अरति, शोक, भय और जुगुप्साके सम्बन्धमें जान लेना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तरकाल एक समय है। इसीप्रकार सातवीं पृथिवीमें जान लेना चाहिए। इसीप्रकार प्रथम पृथिवीसे लेकर छठी पृथिवी तक जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि कुछ कम अपनी-अपनी स्थिति कहनी चाहिए। इन पृथिवियोंमें हास्य और रतिकी अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तमुहूर्त है।

§ ५५४. तिर्यञ्चोंमें मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धीचतुष्कका भंग ओघके समान है।

1. ता०प्रतौ हस्स-रदि० अणु० जह० एयस० इति पाठः।
2. ता०प्रतौ सगट्ठिदी देसूणा। उक० अंतोमु०। तिरिक्खेसु इति पाठः।

मार्गदर्शक आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

एयस०, उक्क० तिण्णि पलिदो० देसूणाणि। सम्म०-सम्मामि०-अपच्चक्खाण०४-इत्थिवे०-पुरिसवे० ओघं। अट्ठक० ओघं। णवरि अणुक्क० जह० एयस०, उक्क० अंतोमु०। णवुंसवे० ओघं। णवरि अणुक्क० जह० एयस०, उक्क० पुव्वकोडिपुधत्तं। छण्णोक० उक्क० ओघं। अणुक्क० जह० एयस०, उक्क० अंतोमु०। एवं पंचिंदियतिरिक्खतिय०। णवरि सव्वपयडी० उक्क० ट्ठिदिउदी० उक्क० पुव्वकोडिपुधत्तं। सम्म०-सम्मामि० अणुक्क० जह० एयस० अंतोमु०, उक्क० तिण्णि पलिदो० पुव्वकोडिपुध०। तिण्णिवेद० उक्क० अणुक्क० जह० एयस०, उक्क० पुव्वकोडिपुध०। पज्जत्त० इत्थिवे० णत्थि। जोणिणीसु पुरिसवे०-णवुंस० णत्थि। इत्थिवे० अणुक्क० जह० एयस०, उक्क० आवलिगा।

§ ५५५. पंचिंदियतिरिक्खअपज्ज०-मणुसअपज्ज० मिच्छ०-णवुंस० उक्क० अणुक्क० ट्ठिदिउदी० णत्थि अंतरं। सेसपयडी० उक्क० ट्ठिदिउदी० णत्थि अंतरं। अणुक्क० ट्ठिदिउदी० जहण्णुक्क० अंतोमु०।

इतनी विशेषता है कि अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल कुछ कम तीन पल्य है। सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व, अप्रत्याख्यानावरण चार, स्त्रीवेद और पुरुषवेदका भंग ओघके समान है। आठ कषायका भंग ओघके समान है। इतनी विशेषता है कि इनकी अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त है। नपुंसकवेदका भंग ओघके समान है। इतनी विशेषता है कि इसकी अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल पूर्वकोटिपृथक्त्वप्रमाण है। छह नोकषायोंकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका भंग ओघके समान है। अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त है। इसीप्रकार पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका उत्कृष्ट अन्तरकाल पूर्वकोटिपृथक्त्वप्रमाण है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तरकाल क्रमसे एक समय और अन्तर्मुहूर्त है तथा उत्कृष्ट अन्तरकाल पूर्वकोटिपृथक्त्व अधिक तीन पल्य है। तीन वेदोंकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल पूर्वकोटिपृथक्त्वप्रमाण है। पर्याप्तकोंमें स्त्रीवेदकी उदीरणा नहीं है तथा योनिनीतिर्यञ्चोंमें पुरुषवेद और नपुंसकवेदकी उदीरणा नहीं है। स्त्रीवेदकी अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल एक आवलिप्रमाण है।

विशेषार्थ—यहाँ योनिनीतिर्यञ्चोंमें स्त्रीवेदकी अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जो उत्कृष्ट अन्तरकाल एक आवलि बतलाया है उसे स्थितिविभक्ति भाग ३, पृ० ३२० को देखकर घटित कर लेना चाहिए। तथा इसीप्रकार अन्य विशेषता भी जाननी चाहिए।

§ ५५५. पंचेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्तकोंमें मिथ्यात्व और नपुंसकवेदकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका अन्तरकाल नहीं है। शेष प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थिति-उदीरणाका अन्तरकाल नहीं है। अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त है।

§ ४५६. मणुसतिए पंचिंदियतिरिक्खभंगो । णवरि मणुसिणी० इत्थिवेद० अणुक्क० जह० एयस०, उक्क० अंतोमु० ।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

§ ४५७. देवगदीए देवेसु मिच्छ०-सम्म०-अणंताणु०४-सम्मामि० उक्क० ट्ठिदिउदी० जह० अंतोमु०, उक्क० अट्ठारस सागरो० सादिरेयाणि । अणुक्क० जह० एयस०, सम्मामि० अणुक्क० जह० अंतोमु०, उक्क० सव्वेसिमेक्कत्तीसं सागरो० देसूणाणि । बारसक० उक्क० ट्ठिदिउदी० जह० अंतोमु०, उक्क० अट्ठारससागरो० सादिरेयाणि । अणुक्क० जह० एयस०, उक्क० अंतोमु० । एवं छण्णोक० । णवरि उक्क० जह० एयस०, अरदि-सोग० अणुक्क० जह० एयस०, उक्क० छम्मासं । इत्थिवे० उक्क० ट्ठिदिउदी० जह० एयस०, उक्क० पणवण्णं पलिदो० देसूणं । अणुक्क० जह० एयस०, उक्क० आवलिया । एवं पुरिसवे० । णवरि उक्क० ट्ठिदिउदी० जह० एयस०, उक्क० अट्ठारस सागरोवमाणि सादिरेयाणि । एवं भवणादि जाव सहस्सार त्ति । णवरि सगट्ठिदी भाणियव्वा । णवरि भवण०-वाणवें-जोदिसि०-सोहम्मीसाणेसु इत्थिवे० उक्क० ट्ठिदिउदी० जह० एयस०, उक्क० तिण्णि पलिदो० देसू-

§ ४५६. मनुष्यत्रिकमें पञ्चेन्द्रियतिर्यञ्चोंके समान भंग है। इतनी विशेषता है कि मनुष्यिनियोंमें स्त्रीवेदकी अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त है।

विशेषार्थ—उपशमश्रेणिकी अपेक्षा मनुष्यिनियोंमें स्त्रीवेदकी अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त बन जानेसे यह उक्त कालप्रमाण कहा है।

§ ४५७. देवगतिमें देवोंमें मिथ्यात्व, सम्यक्त्व, अनन्तानुबन्धीचतुष्क और सम्यग्मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तरकाल साधिक अठारह सागर है। अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तरकाल एक समय है, सम्यग्मिथ्यात्वकी अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त है और सबका उत्कृष्ट अन्तरकाल कुछ कम इकतीस सागर है। बारह कषायोंकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तरकाल साधिक अठारह सागर है। अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त है। इसीप्रकार छह नोकषायोंके विषयमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तरकाल एक समय है। अरति और शोककी अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल छह महीना है। स्त्रीवेदकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल कुछ कम पचवन पल्य है। अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल एक आवलि है। इसीप्रकार पुरुषवेदके विषयमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इसकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल साधिक अठारह सागर है। इसीप्रकार भवनवासियोंसे लेकर सहस्रार कल्पतकके देवोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि अपनी-अपनी स्थिति कहनी चाहिए। इतनी विशेषता है कि भवनवासी, व्यन्तर, ज्योतिषी तथा सौधर्म-ऐशानकल्पके देवोंमें स्त्रीवेदकी उत्कृष्ट स्थिति-

णाणि, पलिदो० सादिरे०, पलिदो० सादिरे०, पणवण्णं पलिदो० देसूणं । अणुक्क० जह० एयस०, उक्क० आवलिया । उवरि इत्थिवेद० अणुदीरगा । सव्वेसिमरदि-सोग० अणुक्क० जह० एयसमओ, उक्क० अंतोमु० । णवरि सहस्सारे अरदि-सोग० अणुक्क० जह० एयस०, उक्क० छम्मासा ।

§ ५५८. आणदादि उवरिमगेवज्जा त्ति सव्वपयडीणमुक्क० ट्ठिदिउदीरणा णत्थि अंतरं । मिच्छ०-सम्म०-सम्मामि०-अणंताणु०४ अणुक्क० जह० अंतोमु०, उक्क० सगट्ठिदी देसूणा । बारसक०-छण्णोक० अणुक्क० जह० उक्क० अंतोमु० । पुरिसवे० उक्क० अणुक्क० णत्थि अंतरं । अणुद्दिसादि सव्वट्ठा त्ति सम्म०-पुरिसवे० उक्क० अणुक्क० ट्ठिदिउदी० णत्थि अंतरं । बारसक०-छण्णोक० उक्क० ट्ठिदिउदी० णत्थि अंतरं । अणुक० जहण्णुक्क० अंतोमु० । एवं जाव० ।

§ ५५९. जह० पयदं । दुविहो णि०—ओघेण आदेसेण य । ओघेण मिच्छ० जह० ट्ठिदिउदी० जह० पलिदो० असंखे०भागो, उक्क० उवड्ढपोग्गलपरियट्टं । अजह० जह० अंतोमु०, उक्क० वेछावट्ठिसागरो० देसूणाणि । एवं सम्मामि० । णवरि अजह०

उदीरणाका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल क्रमसे कुछ कम तीन पल्य, साधिक एक पल्य, साधिक एक पल्य और कुछ कम पचवन पल्यप्रमाण है। अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल एक आवलि है। आगेके देव स्त्रीवेदके अनुदीरक हैं। सबमें अरति और शोककी अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त है। इतनी विशेषता है कि सहस्रार कल्पमें अरति और शोककी अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल छह महीना है।

§ ५५८. आनतकल्पसे लेकर उपरिम ग्रैवेयकतकके देवोंमें सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका अन्तरकाल नहीं है। मिथ्यात्व, सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तरकाल कुछ कम अपनी-अपनी स्थितिप्रमाण है। बारह कषाय और छह नोकषायोंकी अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त है। पुरुषवेदकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका अन्तरकाल नहीं है। अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धितकके देवोंमें सम्यक्त्व और पुरुषवेदकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका अन्तरकाल नहीं है। बारह कषाय और छह नोकषायोंकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका अन्तरकाल नहीं है। अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त है। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

§ ५५९. जघन्य प्रकृत है। निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मिथ्यात्वकी जघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तरकाल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है और उत्कृष्ट अन्तरकाल उपार्धपुद्गलपरिवर्तनप्रमाण है। अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तरकाल कुछ कम दो छयासठ सागरप्रमाण है। इसीप्रकार सम्यग्मिथ्यात्वके विषयमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इसकी अजघन्य

जह० अंतोमु०, उक्क० उवड्ढपोग्गलपरियट्टं । एवं सम्म० । णवरि जह० ट्ठिदिउदी० णत्थि अंतरं । अथवा सम्म० जह० ट्ठिदिउदी० जह० अंतोमु०, उक्क० उवड्ढ-पोग्गलपरियट्टं । अणंताणु०४ जह० ट्ठिदिउदी० जह० अंतोमु०, उक्क० असंखेज्जा लोगा । अजह० जह० एयस०, उक्क० बेछावट्ठिसागरो० देसूणाणि । एवमट्ठक० । णवरि अज० जह० एयस०, उक्क० पुव्वकोडी देसूणा । एवं भय-दुगुंछा० । णवरि अज० जह० एयस०, उक्क० अंतोमु० । चदुसंजल० जह० ट्ठिदिउदी० जह० अंतोमु०, उक्क० उवड्ढपोग्गलपरियट्टं । अज० जह० एयस०, उक्क० अंतोमु० । इत्थिवे०-पुरिसवे० जह० ट्ठिदिउदी० जह० अंतोमु०, उक्क० उवड्ढपोग्गलपरियट्टं । अज० जह० अंतोमु०, पुरिसवे० एयस०, उक्क० अणंतकालमसंखेज्जा पोग्गल-परियट्टा । एवं णवुंस० । णवरि अज० जह० अंतोमु०, उक्क० सागरोवमसदपुधत्तं । हस्स-रदि० जह० ट्ठिदिउदी० जह० पलिदो० असंखे०भागो, उक्क० अणंत-कालमसंखे० पोग्गलपरियट्टा । अज० जह० एयस०, उक्क० तेत्तीसं सागरो०

स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तरकाल उपार्धपुद्गलपरिवर्तन-प्रमाण है। इसीप्रकार सम्यक्त्वके विषयमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि जघन्य स्थितिउदीरणाका अन्तरकाल नहीं है। अथवा सम्यक्त्वकी जघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तरकाल उपार्धपुद्गलपरिवर्तनप्रमाण है। अनन्तानु-बन्धीचतुष्ककी जघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तरकाल असंख्यात लोकप्रमाण है। अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल कुछ कम दो छयासठ सागरप्रमाण है। इसीप्रकार आठ कषायोंके विषयमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल कुछ कम एक पूर्वकोटिप्रमाण है। इसीप्रकार भय और जुगुप्साके विषयमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त है। चार संज्वलनकी जघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तरकाल उपार्ध-पुद्गलपरिवर्तनप्रमाण है। अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त है। स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी जघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तरकाल उपार्धपुद्गलपरिवर्तनप्रमाण है। अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त है और पुरुषवेदका एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल दोनोंका अनन्तकाल है जो असंख्यात पुद्गलपरिवर्तनप्रमाण है। इसीप्रकार नपुंसकवेदके विषयमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तरकाल सौ सागर पृथक्त्वप्रमाण है। हास्य और रतिकी जघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तरकाल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है और उत्कृष्ट अन्तरकाल अनन्तकाल है जो असंख्यात पुद्गलपरिवर्तनप्रमाण है। अजघन्य स्थिति-उदीरणाका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल साधिक तेतीस सागर

सादिरेयाणि । एवमरदि-सोग० । णवरि अज० जह० एयस०, उक्क० छम्मासं ।

है । इसीप्रकार अरति और शोकके विषयमें जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल छह महीना है ।

विशेषार्थ—प्रथमोपशम सम्यक्त्वकी द्वितीय बार प्राप्ति कमसे कम पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण कालके अन्तरके पूर्व नहीं होती, इसीलिए मिथ्यात्वकी जघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तरकाल अपने स्वामित्वके अनुसार उक्त कालप्रमाण कहा है । इसकी जघन्य स्थिति-उदीरणाका उत्कृष्ट अन्तरकाल उपार्धपुद्गलपरिवर्तनप्रमाण है । मिथ्यात्व गुणस्थानके जघन्य और उत्कृष्ट अन्तरकालको ध्यानमें रखकर इसकी अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर-काल अन्तमुहूर्त और उत्कृष्ट अन्तरकाल कुछ कम दो छयासठ सागरप्रमाण कहा है । मिश्र गुणस्थानके अन्तरकालको ध्यानमें रखकर सम्यग्मिथ्यात्वकी अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तरकाल अन्तमुहूर्त और उत्कृष्ट अन्तरकाल उपार्धपुद्गलपरिवर्तनप्रमाण कहा है । सम्यक्त्वकी जघन्य स्थितिउदीरणा दर्शनमोहनीयकी क्षपणाके समय एक समय अधिक एक आवलिप्रमाण स्थितिके शेष रहने पर होती है, इसलिए इसके अन्तरकालका निषेध किया है । किन्तु द्वितीयोपशम सम्यक्त्वके अन्तरकालकी अपेक्षा इसका जघन्य अन्तरकाल अन्तमुहूर्त और उत्कृष्ट अन्तरकाल उपार्धपुद्गलपरिवर्तनप्रमाण कहा है । बादर एकेन्द्रियोंके अन्तरकाल-को ध्यानमें रखकर अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी जघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तरकाल कहा है । अन्तरकालका निर्देश मूलमें है ही । जघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है, इसलिए तो इसकी अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तरकाल एक समय कहा है तथा मिथ्यात्वके उत्कृष्ट अन्तरकालको ध्यानमें रखकर इसकी अजघन्य स्थिति उदीरणाका उत्कृष्ट अन्तरकाल कुछ कम दो छयासठ सागरप्रमाण कहा है । संयमासंयम और संयमका उत्कृष्ट काल कुछ कम एक पूर्वकोटि है । और इनके क्रमशः अप्रत्याख्यानावरण-चतुष्ककी तथा प्रत्याख्यानावरणचतुष्ककी उदीरणा नहीं होती, इसलिए इनकी अजघन्य स्थितिउदीरणाका उत्कृष्ट अन्तरकाल उक्त कालप्रमाण कहा है । चार संज्वलनकी उपशम-श्रेणिके जघन्य और उत्कृष्ट अन्तरकालको ध्यानमें रखकर जघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तरकाल अन्तमुहूर्त और उत्कृष्ट अन्तरकाल उपार्धपुद्गलपरिवर्तनप्रमाण कहा है । तथा उपशमश्रेणिमें चढ़ते समय अपनी-अपनी उदीरणाव्युच्छित्तिसे लेकर उतरते समय पुनः उदीरणा प्राप्त होनेके कालतक इसकी अनुदीरणा है । यह काल अन्तमुहूर्त है, इसलिए इसकी अजघन्य स्थितिउदीरणाका उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तमुहूर्त कहा है । भय और जुगुप्साका अन्य सब विचार आठ कषायके समान ही है । मात्र इनकी कमसे कम एक समय तक और अधिकसे अधिक अन्तर्मुहूर्त कालतक उदीरणा नहीं होती, क्योंकि ये सान्तर उदय प्रकृतियाँ हैं, इसलिए इनकी अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तरकाल एक समय और उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तमुहूर्त कहा है । उपशामक और क्षपकके अपने-अपने स्वामित्वके अनुसार ही स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी जघन्य स्थितिउदीरणा होती है, इसलिए उपशामककी अपेक्षा इनकी जघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तरकाल अन्तमुहूर्त प्राप्त होनेसे वह उक्त कालप्रमाण कहा है । स्पष्टीकरण सुगम है । उपशमश्रेणिमें स्त्रीवेदी मरकर देव होता है पर उसका वेद बदलकर पुरुषवेद हो जाता है, इसलिए तो इसकी अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर-काल अन्तमुहूर्त कहा है । मात्र पुरुषवेदका मरणकी अपेक्षा यह अन्तरकाल एक समय बन जाता है, इसलिए वह एक समय कहा है । इन दोनोंकी अजघन्य स्थितिउदीरणाका उत्कृष्ट

§ ५६०. आदेसेण णेरइय० मिच्छ०-सम्मामि० जह० ट्ठिदिउदी० जह० पलिदो० असंखे०भागो, अज० जह० अंतोमु०, उक्क० दोण्हं पि तेत्तीसं सागरो० देसूणाणि । एवं सम्म० । णवरि जह० णत्थि अंतरं । अणंताणु०४-हस्स-रदि० जह० ट्ठिदिउदी० णत्थि अंतरं । अज० जह० एयस०, उक्क० तेत्तीसं सागरो० देसूणाणि । बारसक०-अरदि-सोग०-भय-दुगुंछा० जह० ट्ठिदिउदी० णत्थि अंतरं । अजह० जह० एयस०, उक्क० अंतोमु० । णवुंस० जह० णत्थि अंतरं । अज० जह० उक्क० एयसमओ । एवं पढमाए । णवरि सगट्ठिदी देसूणा । हस्स-रदि० अज० जह० एगस०,

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

अन्तरकाल सुगम है। नपुंसकवेदकी अजघन्य स्थितिउदीरणाके जघन्य अन्तरकालका स्पष्टीकरण स्त्रीवेदके समान कर लेना चाहिए। सौ सागरपृथक्त्व कालतक नपुंसकवेदका उदय न हो यह सम्भव है, इसलिए इसकी अजघन्य स्थितिउदीरणाका उत्कृष्ट अन्तरकाल सौ सागरपृथक्त्वप्रमाण कहा है। हास्यादि चारकी जघन्य स्थितिउदीरणा अपने स्वामित्वको देखते हुए दूसरी बार वह कमसे कम पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण कालके पूर्व नहीं प्राप्त हो सकती है, इसलिए इनकी अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तरकाल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण कहा है। तथा जो बादर एकेन्द्रिय जीव हतसमुत्पत्तिक होकर संज्ञी पञ्चेन्द्रियोंमें उत्पन्न होनेके अन्तमुहूर्त बाद इनकी जघन्य स्थितिउदीरणा करता है वह पुनः इस अवस्थाको अधिकसे अधिक काल बाद यदि प्राप्त करे तो अनन्तकाल बाद ही प्राप्त कर सकता है, क्योंकि संज्ञी पञ्चेन्द्रियका उत्कृष्ट अन्तरकाल अनन्तकाल है, इसलिए इनकी अजघन्य स्थितिउदीरणाका उत्कृष्ट अन्तरकाल उक्त कालप्रमाण कहा है। इनकी अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तरकाल एक समय है यह तो स्पष्ट ही है। मात्र उत्कृष्ट अन्तरकाल जुदा-जुदा है। कारण कि हास्य-रतिका उत्कृष्ट अनुदीरणाकाल साधिक तेतीस सागर है और अरति-शोकका उत्कृष्ट अनुदीरणाकाल छह महीना है। यही कारण है कि हास्य-रतिकी अजघन्य स्थितिउदीरणाका उत्कृष्ट अन्तरकाल साधिक तेतीस सागर कहा है तथा अरति-शोककी अजघन्य स्थितिउदीरणाका उत्कृष्ट अन्तरकाल छह महीना कहा है। शेष कथन सुगम है। आगे गतिमार्गणाके भेदोंमें अपने-अपने स्वामित्वके अनुसार इसे समझकर अन्तरप्ररूपणा घटित कर लेनी चाहिए।

§ ५६०. आदेशसे नारकियोंमें मिथ्यात्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी जघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तरकाल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है, अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तरकाल अन्तमुहूर्त है और दोनोंका उत्कृष्ट अन्तरकाल कुछ कम तेतीस सागर है। इसीप्रकार सम्यक्त्वके सम्बन्धमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इसकी जघन्य स्थितिउदीरणाका अन्तरकाल नहीं है। अनन्तानुबन्धी चार, हास्य और रतिकी जघन्य स्थितिउदीरणाका अन्तरकाल नहीं है। अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल कुछ कम तेतीस सागर है। बारह कषाय, अरति, शोक, भय और जुगुप्साकी जघन्य स्थितिउदीरणाका अन्तरकाल नहीं है। अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तमुहूर्त है। नपुंसकवेदकी जघन्य स्थितिउदीरणाका अन्तरकाल नहीं है। अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तरकाल एक समय है। इसीप्रकार प्रथम पृथिवीमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि कुछ कम अपनी स्थिति कहनी चाहिए। हास्य और रतिकी अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य

उक्क० अंतोमु० ।

§ ५६१. विदियादि जाव छट्टि त्ति मिच्छ०-सम्म०-सम्मामि० जह० ट्ठिदीउदी० जह० पलिदो० असंखे०भागो, अज० जह० अंतोमु०, उक्क० दोण्हं पि सगट्ठिदी देसूणा। बारसक०-छण्णोक० जह० णत्थि अंतरं। अजह० जह० एयस०, उक्क० अंतोमु०। अणंताणु०४ जह० णत्थि अंतरं। अज० जह० एयस०, उक्क० सगट्ठिदी देसूणा। णवुंस० जह० अजह० ट्ठिदीउदी० णत्थि अंतरं। सत्तमाए णिरयोघं। णवरि सम्म० सम्मामिच्छत्तभंगो[२]।

§ ५६२. तिरिक्खेसु मिच्छ०-सम्म०-सम्मामि०-अणंताणु०४ ओघं। णवरि अणंताणु०४ अजह० जह० एयस०, मिच्छ० अजह० जह० अंतोमु०, उक्क० दोण्हं पि तिण्णि पलिदो० देसूणाणि। अपच्चक्खाण०४ ओघं। अट्ठक०-भय-दुगुंछा० जह० ट्ठिदिउदी० जह० अंतोमु०, उक्क० असंखेज्जा लोगा। अज० जह० एयस०, उक्क० अंतोमु०। इत्थिवे०-पुरिसवे० जह० ट्ठिदिउदी० जह० पलिदो० असंखे०भागो,

---

अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त है।

§ ५६१. दूसरीसे लेकर छठी पृथ्वीतकके नारकियोंमें मिथ्यात्व, सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी जघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तरकाल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है, अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त है और दोनोंका उत्कृष्ट अन्तरकाल कुछ कम अपनी-अपनी स्थितिप्रमाण है। बारह कषाय और छह नोकषायोंकी जघन्य स्थितिउदीरणाका अन्तरकाल नहीं है। अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त है। अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी जघन्य स्थितिउदीरणाका अन्तरकाल नहीं है। अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल कुछ कम अपनी स्थितिप्रमाण है। नपुंसकवेदकी जघन्य और अजघन्य स्थितिउदीरणाका अन्तरकाल नहीं है। सातवीं पृथिवीमें सामान्य नारकियोंके समान भंग है। इतनी विशेषता है कि सम्यक्त्वका भंग सम्यग्मिथ्यात्वके समान है।

§ ५६२. तिर्यञ्चोंमें मिथ्यात्व, सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धी चारका भंग ओघके समान है। इतनी विशेषता है कि अनन्तानुबन्धी चारकी अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तरकाल एक समय है, मिथ्यात्वकी अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त है और दोनोंका उत्कृष्ट अन्तरकाल कुछ कम तीन पल्य है। अप्रत्याख्यानावरणचतुष्कका भंग ओघके समान है। आठ कषाय, भय और जुगुप्साकी जघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तरकाल असंख्यात लोकप्रमाण है। अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त है। स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी जघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर-

---

१. ता०-आ०प्रत्योः जह० उक्क० इति पाठः।

२. ता०-आ०प्रत्योः णवरि सम्मामिच्छत्तभंगो इति पाठः।

उक्क० अणंतकालमसंखे० पो० । अज० जह० एयस०, उक्क० अणंतकालमसंखेज्जा पोग्गलपरियट्टा । एवं हस्स-रदि-अरदि-सोग० । णवरि अज० जह० एयस० उक्क० अंतोमु० । एवं णवुंस० । णवरि अज० जह० एयस०, उक्क० पुव्वकोडिपुधत्तं ।

§ ५६३. पंचिंदियतिरिक्खतिए मिच्छ० जह० ट्ठिदिउदी० जह० पलिदो० असंखे०भागो, उक्क० सगट्ठिदी देसूणा । अज० जह० अंतोमु०, उक्क० तिण्णि पलिदो० देसूणाणि । एवं सम्मामि०। णवरि अज० जह० अंतोमु०, उक्क० सगट्ठिदी । एवं सम्म० । णवरि जह० णत्थि अंतरं । अणंताणु०४ जह० ट्ठिदिउदी० णत्थि अंतरं । अज० जह० एयस०, उक्क० तिण्णि पलिदो० देसूणाणि । अपच्च-क्खाण०४ जह० णत्थि अंतरं । अज० जह० एयस०, उक्क० पुव्वकोडी देसूणा । अट्ठक०-छण्णोक० जह० ट्ठिदिउदी० णत्थि अंतरं । अज० जह० एयस०, उक्क० अंतोमु० । तिण्हं वेदाणं जह० ट्ठिदिउदी० णत्थि अंतरं । अज० जह० एयस०, उक्क० पुव्वकोडिपुधत्तं । णवरि पज्ज० इत्थिवे० णत्थि । जोणिणी० पुरिसवे०-

काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है और उत्कृष्ट अन्तरकाल अनन्तकाल है जो असंख्यात पुद्गलपरिवर्तनप्रमाण है। अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल अनन्त काल है जो असंख्यात पुद्गलपरिवर्तनप्रमाण है। इसीप्रकार हास्य, रति, अरति और शोकके विषयमें जान लेना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनकी अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर-काल अन्तर्मुहूर्त है। इसीप्रकार नपुंसकवेदके विषयमें जान लेना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनकी अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल पूर्वकोटिपृथक्त्वप्रमाण है।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

§ ५६३. पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकमें मिथ्यात्वकी जघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर-काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है और उत्कृष्ट अन्तरकाल कुछ कम अपनी स्थितिप्रमाण है। अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तरकाल कुछ कम तीन पल्य है। इसीप्रकार सम्यग्मिथ्यात्वके विषयमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तरकाल अपनी स्थितिप्रमाण है। इसीप्रकार सम्यक्त्वके विषयमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इसकी जघन्य स्थितिउदीरणाका अन्तरकाल नहीं है। अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी जघन्य स्थितिउदीरणाका अन्तरकाल नहीं है। अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल कुछ कम तीन पल्य है। अप्रत्याख्यानावरणचतुष्ककी जघन्य स्थितिउदीरणाका अन्तरकाल नहीं है। अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल कुछ कम एक पूर्वकोटि है। आठ कषाय और छह नोकषायकी जघन्य स्थितिउदीरणाका अन्तरकाल नहीं है। अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त है। तीन वेदोंकी जघन्य स्थिति-उदीरणाका अन्तरकाल नहीं है। अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल पूर्वकोटिपृथक्त्वप्रमाण है। इतनी विशेषता है कि पर्याप्तकोंमें

णवुंस० णत्थि। इत्थिवे० अज० जहण्णुक्क० एयस०। सम्म० सम्मामिच्छत्तभंगो।

§ ५६४. पंचिं०तिरिक्खअपज्ज०-मणुसअपज्ज० मिच्छ०-णवुंस० जह० णत्थि अंतरं। अज० जह० उक्क० एयस०। सोलसक०-छण्णोक० जह० णत्थि अंतरं। अज० जह० एयस०, उक्क० अंतोमु०।

§ ५६५. मणुसतिए मिच्छ०-सम्म०-सम्मामि०-अणंताणु०४-छण्णोक० पंचि०तिरिक्खभंगो। अथवा सम्म० जह० जह० अंतोमु०, उक्क० पुव्वकोडिपुधत्तं। अट्ठक० जह० णत्थि अंतरं। अज० जह० एयस०, उक्क० पुव्वकोडी देसूणा। चदुसंज० जह० जह० अंतोमु०, उक्क० पुव्वकोडिपुधत्तं। अज० जह० एयसमओ किट्टीवेदयस्स, उक्क० अंतोमु०। तिण्णिवेद० जह० अजह० जह० अंतोमु०, उक्क० पुव्वकोडिपुधत्तं। णवरि पज्ज० इत्थिवेद० णत्थि। मणुसिणी० पुरिस०-णवुंस० णत्थि। इत्थिवेद० अज० जह० उक्क० अंतोमु०।

§ ५६६. देवेसु मिच्छ०-सम्मामि० जह० ट्ठिदिउदी० जह० पलिदो० असंखे०-भागो। अज० जह० अंतोमुहुत्तं, उक्क० दोण्हं पि एक्कत्तीसं सागरो० देसूणाणि।

स्त्रीवेदकी उदीरणा नहीं है और योनिनीतिर्यञ्चोंमें पुरुषवेद और नपुंसकवेदकी उदीरणा नहीं है। स्त्रीवेदकी अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तरकाल एक समय है। सम्यक्त्वका भंग सम्यग्मिथ्यात्वके समान है।

§ ५६४. पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्तकोंमें मिथ्यात्व और नपुंसकवेदकी जघन्य स्थितिउदीरणाका अन्तरकाल नहीं है। अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तरकाल एक समय है। सोलह कषाय और छह नोकषायोंकी जघन्य स्थिति-उदीरणाका अन्तरकाल नहीं है। अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त है।

§ ५६५. मनुष्यत्रिकमें मिथ्यात्व, सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व, अनन्तानुबन्धी चार और छह नोकषायका भंग पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चोंके समान है। अथवा सम्यक्त्वकी जघन्य स्थिति-उदीरणाका जघन्य अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तरकाल पूर्वकोटिपृथक्त्वप्रमाण है। आठ कषायोंकी जघन्य स्थितिउदीरणाका अन्तरकाल नहीं है। अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल कुछ कम एक पूर्वकोटिप्रमाण है। चार संज्वलनोंकी जघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तरकाल पूर्वकोटिपृथक्त्वप्रमाण है। अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तरकाल कृष्टिवेदकके एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त है। तीन वेदोंकी जघन्य और अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तरकाल पूर्वकोटि-पृथक्त्वप्रमाण है। इतनी विशेषता है कि पर्याप्तकोंमें स्त्रीवेदकी उदीरणा नहीं है तथा मनुष्यिनियोंमें पुरुषवेद और नपुंसकवेदकी उदीरणा नहीं है। तथा स्त्रीवेदकी अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त है।

§ ५६६. देवोंमें मिथ्यात्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी जघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तरकाल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है, अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तरकाल

एवं सम्म० । णवरि जह० णत्थि अंतरं । अणंताणु०४ जह० णत्थि अंतरं । अज० जह० एयस०, उक्क० एकत्तीसं सागरो० देसूणाणि । बारसक०-छण्णोक० जह० णत्थि अंतरं । अजह० जह० एयस०, उक्क० अंतोमुहुत्तं । णवरि अरदि-सोग० अज० जह० एयस०, उक्क० छम्मासं । इत्थिवे०-पुरिस० जह० णत्थि अंतरं । अज० जहण्णुक्क० एयस० । एवं भवण०-वाणवें० । णवरि सगट्ठिदी । णवरि सम्म० सम्मामि०भंगो । अरदि-सोग० अज० जह० एयस०, उक्क० अंतोमु० ।

§ ५६७. जोदिसि० दंसणतिय-अणंताणु०४ वाणवेंतरभंगो । बारसक०-छण्णोक० जह० णत्थि अंतरं । अज० जहण्णुक्क० अंतोमु० । इत्थिवे०-पुरिसवे० जह० अजह० णत्थि अंतरं ।

§ ५६८. सोहम्मादि जाव णवगेवज्जा त्ति दंसणतिय-अणंताणु०४ देवोघं । णवरि सगट्ठिदी देसूणा । बारसक०-छण्णोक० जह० णत्थि अंतरं । अज० जह० उक्क० अंतोमु० । णवरि सहस्सारे अरदि-सोग० अज० जह० अंतोमु०, उक्क०

अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तरकाल दोनोंका कुछ कम इकतीस सागर है। इसीप्रकार सम्यक्त्वके विषयमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इसकी जघन्य स्थितिउदीरणाका अन्तरकाल नहीं है। अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी जघन्य स्थितिउदीरणाका अन्तरकाल नहीं है। अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल कुछ कम इकतीस सागर है। बारह कषाय और छह नोकषायोंकी जघन्य स्थितिउदीरणाका अन्तरकाल नहीं है। अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त है। इतनी विशेषता है कि अरति और शोककी अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल छह महीना है। स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी जघन्य स्थितिउदीरणाका अन्तरकाल नहीं है। अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तरकाल एक समय है। इसीप्रकार भवनवासी और व्यन्तर देवोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि अपनी-अपनी स्थिति कहनी चाहिए। इतनी और विशेषता है कि सम्यक्त्वका भंग सम्यग्मिथ्यात्वके समान है। अरति और शोककी अजघन्य स्थितिउदीरणा का जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त है।

§ ५६७. ज्योतिषी देवोंमें तीन दर्शनमोहनीय और अनन्तानुबन्धीचतुष्कका भंग व्यन्तर देवोंके समान है। बारह कषाय और छह नोकषायोंकी जघन्य स्थितिउदीरणाका अन्तरकाल नहीं है। अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त है। स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी जघन्य और अजघन्य स्थितिउदीरणाका अन्तरकाल नहीं है।

§ ५६८. सौधर्म कल्पसे लेकर नौ ग्रैवेयक तकके देवोंमें तीन दर्शनमोहनीय और अनन्तानुबन्धीचतुष्कका भंग सामान्य देवोंके समान है। इतनी विशेषता है कि कुछ कम अपनी-अपनी स्थिति कहनी चाहिए। बारह कषाय और छह नोकषायोंकी जघन्य स्थितिउदीरणाका अन्तरकाल नहीं है। अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त है। इतनी विशेषता है कि सहस्रार कल्पमें अरति और शोककी अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तरकाल छह महीना है। स्त्रीवेद

छम्मासं। इत्थिवेद-पुरिसवे० जह० अजह० णत्थि अंतरं। सोहम्मीसाण० इत्थिवे०-पुरिसवे० अत्थि। उवरि पुरिसवेदो चेव अत्थि। णवरि आणदादि णवगेवज्जा त्ति अणंताणु०४ अज० जह० अंतोमु०, उक्क० सगहिदी देसूणा।

§ ४६९. अणुद्दिसादि सव्वट्ठा त्ति सम्म०-पुरिसवे० जह० अज० णत्थि अंतरं। बारसक०-छण्णोकसाय० जह० णत्थि अंतरं। अज० जह० उक्क० अंतोमु०। एवं जाव०।

§ ५७०. सण्णियासो दुविहो—जह० उक्क०। उक्कस्से पयदं। दुविहो णि० ओघेण आदेसेण य। ओघेण मिच्छ० उक्क० हिदिमुदीरेंतो सोलसक० सिया उदीर० सिया अणुदीर०। जदि उदीर० उक्कस्सा वा अणुक्कस्सा वा। उक्कस्सादो अणुक्कस्सा समयूणमादिं कादूण जाव पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागेणूणा त्ति। इत्थिवेद०-पुरिसवे०-हस्स-रदि० सिया उदीर० सिया अणुदीर०। जदि उदीर० णियमा अणुक्कस्सा अंतोमुहुत्तूणमादिं कादूण जाव अंतोकोडाकोडि त्ति। णवुंस०-अरदि-सोग०-भय-दुगुंछा० सिया उदीर० सिया अणुदीर०। जदि उदीर० उक्कस्सा वा अणुक्कस्सा वा। उक्कस्सादो अणुक्कस्सा समयूणमादिं कादूण जाव वीसं सागरोवम-

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

और पुरुषवेदकी जघन्य और अजघन्य स्थितिउदीरणाका अन्तरकाल नहीं है। सौधर्म और ऐशानकल्पमें स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी उदीरणा दोनों हैं। आगे पुरुषवेदकी ही उदीरणा है। इतनी विशेषता है कि आनतकल्पसे लेकर नौ ग्रैवेयक तकके देवोंमें अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी अजघन्य स्थितिउदीरणा जघन्य अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तरकाल कुछ कम अपनी-अपनी स्थितिप्रमाण है।

§ ५६९. अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धितकके देवोंमें सम्यक्त्व और पुरुषवेदकी जघन्य और अजघन्य स्थितिउदीरणाका अन्तरकाल नहीं है। बारह कषाय और छह नोकषायोंकी जघन्य स्थितिउदीरणाका अन्तरकाल नहीं है। अजघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त है। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

§ ५७०. सन्निकर्ष दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट। उत्कृष्टका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिकी उदीरणा करनेवाला जीव सोलह कषायका कदाचित् उदीरक होता है और कदाचित् अनुदीरक होता है। यदि उदीरक होता है तो उत्कृष्ट या अनुत्कृष्ट स्थितिका उदीरक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका उदीरक होता है तो उत्कृष्टसे एक समय कमसे लेकर पल्यके असंख्यातवें भाग कम तक अनुत्कृष्ट स्थितिका उदीरक होता है। स्त्रीवेद, पुरुषवेद, हास्य, और रतिका कदाचित् उदीरक होता है और कदाचित् अनुदीरक होता है। यदि उदीरक होता है तो नियमसे अन्तर्मुहूर्त कम स्थितिसे लेकर अन्तःकोड़ाकोड़ीप्रमाण स्थिति तक अनुत्कृष्ट स्थितिका उदीरक होता है। नपुंसकवेद, अरति, शोक, भय, और जुगुप्साका कदाचित् उदीरक होता है और कदाचित् अनुदीरक होता है। यदि उदीरक होता है तो उत्कृष्ट या अनुत्कृष्ट स्थितिका उदीरक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका उदीरक होता है तो उत्कृष्टसे एक समय कमसे लेकर पल्यका

कोडाकोडीओ पलिदो० असंखे०भागेण ऊणाओ ।

§ ५७१. सम्म० उक्क० ट्ठिदिउदी० बारसक०-छण्णोक० सिया उदी० । जदि उदी० णियमा अणुक्कस्सा अंतोमुहुत्तूणमादिं कादूण जाव पलिदो० असंखे०भागेणूणा त्ति । एवं सम्मामि० ।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

§ ५७२. अणंताणु०-कोध० उक्क० ट्ठिदिउदी० मिच्छ० तिण्हं कोहाणं णियमा उदी०, उक्क० अणुक्क० । उक्कस्सादो अणुक्कस्सा समयूणमादिं कादूण जाव पलिदो० असंखे०भागेणूणा । णवणोक० जहा मिच्छत्तेण णीदं तहा णेदव्वं । एवं पण्णारस-कसाय० ।

§ ५७३. इत्थिवेद० उक्क० ट्ठिदिमुदी० मिच्छ० णिय० उदी० णिय० अणुक्कस्सा समयूणमादिं कादूण जाव पलिदो० असंखे०भागेणूणा त्ति । सोलसक० सिया उदी० । णिय० अणुक्क० समयूणमादिं कादूण जाव आवलियूणा त्ति । हस्स-रदि० सिया उदी० । जदि उदी० उक्क० अणुक्क० वा । उक्क० अणु० समयूणमादिं कादूण जाव अंतोकोडाकोडि त्ति । अरदि-सोग० सिया उदी० । जदि उदी० उक्क० अणुक्क० वा । उक्कस्सादो अणुकस्सा समयूणमादिं कादूण जाव वीसं सागरो० कोडाकोडीओ पलिदो०

असंख्यातवाँ भाग कम बीस कोड़ाकोड़ी सागरप्रमाण अनुत्कृष्ट स्थितिका उदीरक होता है ।

§ ५७१. सम्यक्त्वकी उत्कृष्ट स्थितिका उदीरक जीव बारह कषाय और छह नोकषायका कदाचित् उदीरक होता है । यदि उदीरक होता है तो नियमसे अन्तर्मुहूर्त कमसे लेकर पल्यके असंख्यातवें भाग कम तक अनुत्कृष्ट स्थितिका उदीरक होता है । इसीप्रकार सम्यग्मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिके उदीरकको विवक्षित कर सन्निकर्ष जानना चाहिए ।

§ ५७२. अनन्तानुबन्धी क्रोधकी उत्कृष्ट स्थितिका उदीरक जीव मिथ्यात्व और तीन क्रोधका नियमसे उदीरक होता है जो उत्कृष्ट या अनुत्कृष्ट स्थितिका उदीरक होता है । यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका उदीरक होता है तो उत्कृष्टकी अपेक्षा एक समय कमसे लेकर पल्यके असंख्यातवें भाग कम तककी अनुत्कृष्ट स्थितिका उदीरक होता है । नौ नोकषायोंका सन्निकर्ष जैसे मिथ्यात्वके साथ ले गये हैं वैसे ले जाना चाहिए । इसीप्रकार पन्द्रह कषायोंकी उत्कृष्ट स्थितिके उदीरककी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए ।

§ ५७३. स्त्रीवेदकी उत्कृष्ट स्थितिका उदीरक जीव मिथ्यात्वका नियमसे उदीरक होता है जो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा एक समय कमसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग कम तककी अनुत्कृष्ट स्थितिका उदीरक होता है । सोलह कषायोंका कदाचित् उदीरक होता है । यदि उदीरक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा एक समय कमसे लेकर एक आवलि कम तककी अनुत्कृष्ट स्थितिका उदीरक होता है । हास्य और रतिका कदाचित् उदीरक होता है । यदि उदीरक होता है तो उत्कृष्ट या अनुत्कृष्ट स्थितिका उदीरक होता है । यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका उदीरक होता है तो उत्कृष्टकी अपेक्षा एक समय कमसे लेकर अन्तःकोड़ाकोड़ी तककी अनुत्कृष्ट स्थितिका उदीरक होता है । अरति और शोकका कदाचित् उदीरक होता है । यदि उदीरक होता है तो उत्कृष्ट या अनुत्कृष्ट स्थितिका उदीरक होता है । यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका उदीरक होता है तो उत्कृष्टकी अपेक्षा एक समय कमसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग कम बीस कोड़ाकोड़ी

असंखे० भागेणूणाओ । भय-दुगुंछ० सिया उदी० । जदि उदी० णियमा उक्कस्सा । एवं पुरिसवेद० । एवं हस्स० । णवरि अरदि-सोग० णत्थि । इत्थिवे०-पुरिसवे० सिया उदी० । जदि उदीर० उक्क० अणुक्क० वा । उक्क० अणु० अंतोमुहुत्तूणमादिं कादूण जाव अंतोकोडाकोडि त्ति । णवुंस० सिया उदी० । जदि उदी० उक्क० अणुक्कस्सा वा । उक्कस्सादो अणुक्कस्सा समयूणमादिं कादूण जाव वीसं सागरोवम-कोडाकोडीओ पलिदो० असंखे०भागेणूणाओ । रदि० णियमा उक्कस्सा । एवं रदीए ।

§ ५७४. णवुंस० उक्क० ट्ठिदिमुदीरेंतो० मिच्छ० णिय० उदीर०, उक्क० अणुक्क० वा । उक्क० अणुक्क० समयूणमादिं कादूण जाव पलिदो० असंखे०भागेणूणा । सोलसक० सिया उदीर० । जदि उदीरे० उक्क० अणुक्क० वा । उक्कस्सादो अणुक्कस्सा समयूणमादिं कादूण जाव आवलियूणा त्ति । हस्स-रदि-अरदि-सोग-भय-दुगुंछा० जहा इत्थिवेदेण णीदं तहा णेदव्वं । एवमरदीए । णवरि हस्स-रदी० णत्थि । तिण्णि वेद०

सागरप्रमाण तककी अनुत्कृष्ट स्थितिका उदीरक होता है। भय और जुगुप्साका कदाचित् उदीरक होता है । यदि उदीरक होता है तो नियमसे उत्कृष्ट स्थितिका उदीरक होता है। इसीप्रकार पुरुषवेदकी उत्कृष्ट स्थितिके उदीरकको विवक्षित कर सन्निकर्ष जानना चाहिए। इसीप्रकार हास्यकी उत्कृष्ट स्थितिके उदीरक जीवको विवक्षित कर सन्निकर्ष जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इसके अरति और शोककी उदीरणा नहीं होती। वह स्त्रीवेद और पुरुषवेदका कदाचित् उदीरक होता है। यदि उदीरक होता है तो उत्कृष्ट या अनुत्कृष्ट स्थितिका उदीरक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका उदीरक होता है तो उत्कृष्टकी अपेक्षा अन्तर्मुहूर्त कमसे लेकर अन्तःकोडाकोडी सागर तककी अनुत्कृष्ट स्थितिका उदीरक होता है। नपुंसकवेदका कदाचित् उदीरक होता है। यदि उदीरक होता है तो उत्कृष्ट या अनुत्कृष्ट स्थितिका उदीरक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका उदीरक होता है तो उत्कृष्टकी अपेक्षा एक समय कमसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग कम बीस कोडाकोडी सागर तककी अनुत्कृष्ट स्थितिका उदीरक होता है। रतिकी नियमसे उत्कृष्ट स्थितिका उदीरक होता है। इसीप्रकार रतिकी उत्कृष्ट स्थितिकी उदीरणाको विवक्षित कर सन्निकर्ष जानना चाहिए।

§ ५७४. नपुंसकवेदकी उत्कृष्ट स्थितिका उदीरक जीव मिथ्यात्वका नियमसे उदीरक होता है जो उत्कृष्ट या अनुत्कृष्ट स्थितिका उदीरक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका उदीरक होता है तो उत्कृष्टकी अपेक्षा एक समय कमसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग कम तककी अनुत्कृष्ट स्थितिका उदीरक होता है। सोलह कषायका कदाचित् उदीरक होता है। यदि उदीरक होता है तो उत्कृष्ट या अनुत्कृष्ट स्थितिका उदीरक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका उदीरक होता है तो उत्कृष्टकी अपेक्षा एक समय कमसे लेकर एक आवलि कम तककी अनुत्कृष्ट स्थितिका उदीरक होता है। यहाँ हास्य, रति, अरति, शोक, भय और जुगुप्साका भंग जिस प्रकार स्त्रीवेदके साथ ले गये उस प्रकार ले जाना चाहिए। इसीप्रकार अरतिकी उत्कृष्ट स्थितिकी उदीरणाको विवक्षित कर सन्निकर्ष जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इसके हास्य और रतिकी उदीरणा नहीं है। इसके तीन वेदोंका भंग जिस प्रकार हास्य और रतिके साथ ले गये

जहा हस्स-रदीहिं तहा णेयव्वं । सोग० णिय० उदी०, णिय० उक्कस्सं । एवं सोग० ।

§ ५७५. भय० उक्क० ट्ठिदिमुदी० मिच्छ०-सोलसक०-हस्स-रदि-अरदि-सोग० णवुंस० भंगो । तिण्णिवेद० हस्सभंगो । दुगुंछं सिया उदी० । जदि उदी० णिय० उक्क० । एवं दुगुंछ० । एवं सव्वणेरइय० । णवरि णवुंस धुवं कादव्वं ।

§ ५७६. तिरिक्ख०-पंचिंदियतिरिक्खतिये ओघं । णवरि पज्ज० इत्थिवे० णत्थि । जोणिणीसु इत्थिवेदं धुवं कादव्वं । मणुसतिय० पंचि०तिरिक्खतियभंगो । देवाणमोघं । णवरि णवुंस० णत्थि । एवं भवण०-वाणवें०-जोदिसि०-सोहम्मीसाणा त्ति । एवं सणक्कुमारादि जाव सहस्सारे त्ति । णवरि पुरिसवे० धुवं कायव्वं ।

§ ५७७. पंचि०तिरि०अपज्ज० मिच्छ० उक्क० ट्ठिदिं उदी० सोलसक०-छण्णोक० सिया उदी० । जदि उदी० उक्क० अणुक्क० वा । उक्कस्सादो अणुक्कस्सा समयूणमादिं कादूण जाव पलिदो० असंखे०भागेणूणा त्ति । एवं णवुंस० । णवरि

उस प्रकार ले जाना चाहिए । यह शोकका नियमसे उदीरक होता है जो नियमसे उत्कृष्ट स्थितिका उदीरक होता है । इसीप्रकार शोककी उत्कृष्ट स्थितिकी उदीरणाको विवक्षित कर सन्निकर्ष जानना चाहिए ।

§ ५७५. भयकी उत्कृष्ट स्थितिके उदीरक जीवका मिथ्यात्व, सोलह कषाय, हास्य, रति, अरति और शोकके साथ सन्निकर्षका भंग नपुंसकवेदकी उत्कृष्ट स्थितिके उदीरक जीवको विवक्षित कर इन प्रकृतियोंके साथ कहे गये भंगके समान है । तीन वेदका भंग हास्य प्रकृतिकी उत्कृष्ट स्थितिके उदीरक जीवको विवक्षित कर इन प्रकृतियोंके साथ कहे गये भंगके समान है । यह जुगुप्साका कदाचित् उदीरक होता है । यदि उदीरक होता है तो नियमसे उत्कृष्ट स्थितिका उदीरक होता है । इसीप्रकार जुगुप्साकी उत्कृष्ट स्थितिकी उदीरणाको विवक्षित कर सन्निकर्ष कहना चाहिए । इसीप्रकार सब नारकियोंमें जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि इनमें नपुंसकवेदकी उदीरणाको ध्रुव करना चाहिए ।

§ ५७६. तिर्यञ्च और पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकमें ओघके समान भंग है । इतनी विशेषता है कि पर्याप्तकोंमें स्त्रीवेदकी उदीरणा नहीं है तथा योनिनियोंमें स्त्रीवेदकी उदीरणाको ध्रुव करना चाहिए । मनुष्यत्रिकमें पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकके समान भंग है । देवोंमें ओघके समान भंग है । इतनी विशेषता है कि इनमें नपुंसकवेदकी उदीरणा नहीं है । इसीप्रकार भवनवासी, व्यन्तर, ज्योतिषी तथा सौधर्म और ऐशानकल्पके देवोंमें जानना चाहिए । इसीप्रकार सनत्कुमारकल्पसे लेकर सहस्रारकल्प तकके देवोंमें जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि पुरुषवेदकी उदीरणाको ध्रुव करना चाहिए ।

§ ५७७. पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंमें मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिका उदीरक जीव सोलह कषाय और छह नोकषायोंका कदाचित् उदीरक होता है । यदि उदीरक होता है तो उत्कृष्ट या अनुत्कृष्ट स्थितिका उदीरक होता है । यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका उदीरक होता है तो उत्कृष्टकी अपेक्षा एक समय कम स्थितिसे लेकर पल्यके असंख्यातवें भाग कम तककी अनुत्कृष्ट स्थितिका उदीरक होता है । इसीप्रकार नपुंसकवेदकी अपेक्षा भंग जान लेना चाहिए ।

णिय० उदी० ।

§ ५७८. अणंताणु०कोध० उक्क० ट्ठिदिमुदीरें० तिण्हं कोधं णवुंस० णिय० उदी० णिय० उक्कस्सं । छण्णोक० सिया उदी० । जदि उदी० णियमा उक्कस्सं । मिच्छ० णिय० उदी० उक्क० अणुक्क० वा । उक्क० अणुक्क० समयूणमादिं कादूण जाव पलिदो० असंखे०भागेणूणा । एवं पण्णारसक० ।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

§ ५७९. हस्स० उक्क० ट्ठिदिमुदीरें० सोलसक०-भय-दुगुंछ० सिया उदीरें० । जदि उदी० णिय० उकस्सं । मिच्छ० अणंताणु०चउक्कभंगो । रदि-णवुंस० णिय० उदी० णिय० उक्क० । एवं रदीए । एवमरदि-सोगाणं ।

§ ५८०. भय-उक्क० ट्ठिदिमुदीरें० मिच्छ०-णवुंस० हस्सभंगो । सोलसक०-पंचणोक० सिया उदी० । जदि उदी०, णिय० उक्क० । एवं दुगुंछाए ।

§ ५८१. णवुंस० उक्क० ट्ठिदिमुदी० मिच्छत्त० हस्सभंगो । सोलसक०-छण्णोक० सिया उदी० । जदि उदी०, णिय० उक्क० । एवं मणुसअपज्ज० ।

इतनी विशेषता है कि वह इसका नियमसे उदीरक होता है ।

§ ५७८. अनन्तानुबन्धी क्रोधकी उत्कृष्ट स्थितिका उदीरक जीव तीन क्रोध और नपुंसकवेदका नियमसे उदीरक होता है जो नियमसे उत्कृष्ट स्थितिका उदीरक होता है। छह नोकषायोंका कदाचित् उदीरक होता है। यदि उदीरक होता है तो नियमसे उत्कृष्ट स्थितिका उदीरक होता है। मिथ्यात्वका नियमसे उदीरक होता है जो उत्कृष्ट या अनुत्कृष्ट स्थितिका उदीरक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका उदीरक होता है तो उत्कृष्टकी अपेक्षा एक समय कम स्थितिसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग कम तककी अनुत्कृष्ट स्थितिका उदीरक होता है। इसीप्रकार पन्द्रह कषायकी उत्कृष्ट स्थितिकी उदीरणाको मुख्य कर सन्निकर्ष जानना चाहिए।

§ ५७९. हास्यकी उत्कृष्ट स्थितिका उदीरक जीव सोलह कषाय, भय और जुगुप्साका कदाचित् उदीरक होता है। यदि उदीरक होता है तो नियमसे उत्कृष्ट स्थितिका उदीरक होता है। मिथ्यात्वका भंग अनन्तानुबन्धीचतुष्कके समान है। रति और नपुंसकवेदका नियमसे उदीरक होता है जो नियमसे उत्कृष्ट स्थितिका उदीरक होता है। इसीप्रकार रतिकी उत्कृष्ट स्थितिकी उदीरणाको मुख्य कर सन्निकर्ष जानना चाहिए। तथा इसीप्रकार अरति और शोककी उत्कृष्ट स्थितिको मुख्य कर सन्निकर्ष जानना चाहिए।

§ ५८०. भयकी उत्कृष्ट स्थितिके उदीरक जीवके मिथ्यात्व और नपुंसकवेदका भंग हास्यके समान है। सोलह कषाय और पाँच नोकषायका कदाचित् उदीरक है। यदि उदीरक है तो नियमसे उत्कृष्ट स्थितिका उदीरक है। इसीप्रकार जुगुप्साकी उत्कृष्ट स्थितिकी उदीरणाको मुख्य कर सन्निकर्ष जानना चाहिए।

§ ५८१. नपुंसकवेदकी उत्कृष्ट स्थितिके उदीरक जीवके मिथ्यात्वका भंग हास्यके समान है। सोलह कषाय और छह नोकषायकी उत्कृष्ट स्थितिका कदाचित् उदीरक है। यदि उदीरक है तो नियमसे उत्कृष्ट स्थितिका उदीरक है। इसीप्रकार मनुष्य अपर्याप्तकोंमें जानना चाहिए।

§ ५८२. आणदादि णवगेवज्जा त्ति मिच्छ० उक्क० ट्ठिदिमुदी० सोलसक०-भय-दुगुंछा सिया उदी०। जदि उदी०, णियमा उक्क०। हस्स-रदि-पुरिसवेद० णियमा उदीरेदि, णिय० उक्क०। एवं सम्म०। णवरि अणंताणु०चउक्कं णत्थि।

§ ५८३. सम्मामि० उक्क० ट्ठिदिमुदीर० बारसक०-छण्णोक० सिया उदीर०। जदि उदी०, णिय० अणुक्क० असंखे०भागहीणं। पुरिसवे० णिय० उदी०, णिय० अणुक्क० असंखे०भागही०।

§ ५८४. अणंताणु०कोध० उक्क० ट्ठिदिमुदी० मिच्छ०-तिण्णिकोध-हस्स-रदि-पुरिसवे० णिय० उदी०, णिय० उक्क०। भय-दुगुंछ० मिच्छत्तभंगो। एवं तिण्हं कसायाणं।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

§ ५८५. अपचक्खाण०कोध० उक्क० ट्ठिदिमुदी० मिच्छ०-सम्म०-अणंताणु०-कोध-भय-दुगुंछ० सिया उदी०। जदि उदी० णियमा उक्कस्सा। दोण्हं कोधाणं हस्स-रदि-पुरिसवे० णिय० उदी०, णिय० उक्क०। एवमेक्कारसक०।

§ ५८६. हस्सस्स उक्क० ट्ठिदिमुदी० मिच्छ०-सम्म०-सोलसक०-भय-दुगुंछ०

---

§ ५८२. आनतकल्पसे लेकर नौ ग्रैवेयक तकके देवोंमें मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिका उदीरक जीव सोलह कषाय, भय और जुगुप्साका कदाचित् उदीरक है। यदि उदीरक है तो नियमसे उत्कृष्ट स्थितिका उदीरक है। हास्य, रति और पुरुषवेदका नियमसे उदीरक है जो नियमसे उत्कृष्ट स्थितिका उदीरक है। इसीप्रकार सम्यक्त्वकी उत्कृष्ट स्थितिकी उदीरणाको मुख्य कर सन्निकर्ष जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इसके अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी उदीरणा नहीं है।

§ ५८३. सम्यग्मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिका उदीरक जीव बारह कषाय और छह नोकषायका कदाचित् उदीरक है। यदि उदीरक है तो नियमसे असंख्यातवें भागहीन अनुत्कृष्ट स्थितिका उदीरक है। पुरुषवेदका नियमसे उदीरक है जो नियमसे असंख्यातवें भागहीन अनुत्कृष्ट स्थितिका उदीरक है।

§ ५८४. अनन्तानुबन्धी क्रोधकी उत्कृष्ट स्थितिका उदीरक जीव मिथ्यात्व, तीन क्रोध, हास्य, रति और पुरुषवेदका नियमसे उदीरक है जो नियमसे उत्कृष्ट स्थितिका उदीरक है। इसके भय और जुगुप्साका भंग मिथ्यात्वके समान है। इसीप्रकार मान आदि तीन कषायोंकी उत्कृष्ट स्थितिकी उदीरणाको मुख्य कर सन्निकर्ष जानना चाहिए।

§ ५८५. अप्रत्याख्यानावरण क्रोधकी उत्कृष्ट स्थितिका उदीरक जीव मिथ्यात्व, सम्यक्त्व, अनन्तानुबन्धी क्रोध, भय और जुगुप्साका कदाचित् उदीरक है। यदि उदीरक है तो नियमसे उत्कृष्ट स्थितिका उदीरक है। दो क्रोध, हास्य, रति और पुरुषवेदका नियमसे उदीरक है जो नियमसे उत्कृष्ट स्थितिका उदीरक है। इसीप्रकार ग्यारह कषायकी उत्कृष्ट स्थितिकी उदीरणाको मुख्य कर सन्निकर्ष जानना चाहिए।

§ ५८६. हास्यकी उत्कृष्ट स्थितिका उदीरक जीव मिथ्यात्व, सम्यक्त्व, सोलह कषाय,

सिया उदी०। जदि उदी० णिय० उक्क०। रदि-पुरिसवे० णिय० उदी०, णिय० उक्कस्सं। एवं रदीए।

§ ५८७. अरदि० उक्क० ट्ठिदिमुदी० मिच्छ०-सम्म०-सोलसक०-भय-दुगु० सिया उदी०। जदि० उदी०, णिय० अणुक्क० असंखे०भागहीं०। पुरिसवे० णिय० उदी०, णिय० अणुक्क० असंखे०भागहीं०। सोगं णिय० उदी०, णिय० उक्क०। एवं सोग०।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

§ ५८८. भय० उक्क० ट्ठिदिमुदी० मिच्छ०-सम्म०-सोलसक०-हस्स-रदि-पुरिसवे० अपच्चक्खाणभंगो। दुगुंछा० सिया उदी०। जदि उदी०, णिय० उक्क०। एवं दुगुंछाए।

§ ५८९. पुरिसवेद० उक्क० ट्ठिदिमुदी० मिच्छ०-सम्म०-सोलसक०-भय-दुगुंछा० सिया उदी०। जदि उदी०, णिय० उक्कस्सं। हस्स-रदि० णिय० उदी०, णिय० उक्कस्सं।

§ ५९०. अणुद्दिसादि सव्वट्ठा त्ति सम्म० उक्क० ट्ठिदिमुदीरे० बारसक०-भय-दुगुंछा० सिया उदी०। जदि उदी० णिय० उक्क०। हस्स-रदि-पुरिसवे० णिय० उदी०, णिय० उक्कस्सं।

भय और जुगुप्साका कदाचित् उदीरक है। यदि उदीरक है तो नियमसे उत्कृष्ट स्थितिका उदीरक है। रति और पुरुषवेदका नियमसे उदीरक है जो नियमसे उत्कृष्ट स्थितिका उदीरक है। इसीप्रकार रतिकी उत्कृष्ट स्थितिकी उदीरणाको मुख्य कर सन्निकर्ष जानना चाहिए।

§ ५८७. अरतिकी उत्कृष्ट स्थितिका उदीरक जीव मिथ्यात्व, सम्यक्त्व, सोलह कषाय, भय और जुगुप्साका कदाचित् उदीरक है। यदि उदीरक है तो नियमसे असंख्यातवें भागहीन अनुत्कृष्ट स्थितिका उदीरक है। पुरुषवेदका नियमसे उदीरक है जो नियमसे असंख्यातवें भागहीन अनुत्कृष्ट स्थितिका उदीरक है। शोकका नियमसे उदीरक है जो नियमसे उत्कृष्ट स्थितिका उदीरक है। इसीप्रकार शोककी उत्कृष्ट स्थितिकी उदीरणाको मुख्य कर सन्निकर्ष जानना चाहिए।

§ ५८८. भयकी उत्कृष्ट स्थितिके उदीरक जीवके मिथ्यात्व, सम्यक्त्व, सोलह कषाय, हास्य, रति और पुरुषवेदका भंग अप्रत्याख्यानावरणके समान है। जुगुप्साका कदाचित् उदीरक है। यदि उदीरक है तो नियमसे उत्कृष्ट स्थितिका उदीरक है। इसीप्रकार जुगुप्साकी उत्कृष्ट स्थितिकी उदीरणाको मुख्य कर सन्निकर्ष जानना चाहिए।

§ ५८९. पुरुषवेदकी उत्कृष्ट स्थितिका उदीरक जीव मिथ्यात्व, सम्यक्त्व, सोलह कषाय, भय और जुगुप्साका कदाचित् उदीरक है। यदि उदीरक है तो नियमसे उत्कृष्ट स्थितिका उदीरक है। हास्य और रतिका नियमसे उदीरक है जो नियमसे उत्कृष्ट स्थितिका उदीरक है।

§ ५९०. अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें सम्यक्त्वकी उत्कृष्ट स्थितिका उदीरक जीव बारह कषाय, भय और जुगुप्साका कदाचित् उदीरक है। यदि उदीरक है तो नियमसे उत्कृष्ट स्थितिका उदीरक है। हास्य, रति और पुरुषवेदका नियमसे उदीरक है जो नियमसे उत्कृष्ट स्थितिका उदीरक है।

§ ४९१. अपच्चक्ख०कोह० उक्कस्स० ट्ठिदिमुदी० सम्म०-दोकोध-हस्स-रदि-पुरिसवेद० णिय० उदी०, णिय० उकस्सं। भय-दुगुंछा० सम्मत्तभंगो। एव-मेक्कारसक०।

§ ४९२. हस्सस्स उक० ट्ठिदिमुदी० सम्म०-रदि-पुरिसवेद० णिय० उदीर०, णिय० उकस्सं। बारसक०-भय-दुगुंछा० सम्मत्तभंगो। एवं रदीए।

§ ४९३. अरदि उक० ट्ठिदिमुदी० सम्म०-पुरिसवे० णिय० उदीर०, णिय० अणुक० असंखे०भागहीo। बारसक०-भय-दुगुंछा० सिया उदी०। जदि उदी० णिय० अणुक० असंखे०भागहीणा। सोगं णिय० उदी०, णिय० उकस्सं। एवं सोग०।

§ ४९४. भय० उक० ट्ठिदिमुदीरे० सम्म०-हस्स-रदि-पुरिसवे० णिय० उदी० णिय० उकस्सं। बारसक०-दुगुंछा० सिया० उदी०। जदि उदी०, णिय० उक०। एवं दुगुंछा०।

§ ४९५. पुरिस० उक० ट्ठिदिमुदी० सम्म०-हस्स-रदि० णिय० उदी०, णिय० उकस्सं०। बारसक०-भय-दुगुंछा० सिया उदी०। जदि० उदी०, णिय० उक०।

---

§ ४९१. अप्रत्याख्यानावरण क्रोधकी उत्कृष्ट स्थितिका उदीरक जीव सम्यक्त्व, दो क्रोध, हास्य, रति और पुरुषवेदका नियमसे उदीरक है जो नियमसे उत्कृष्ट स्थितिका उदीरक है। इसके भय और जुगुप्साका भंग सम्यक्त्वके समान है। इसीप्रकार ग्यारह कषायकी उत्कृष्ट स्थितिकी उदीरणाको मुख्य कर सन्निकर्ष जानना चाहिए।

§ ४९२. हास्यकी उत्कृष्ट स्थितिका उदीरक जीव सम्यक्त्व, रति और पुरुषवेदका नियमसे उदीरक है जो नियमसे उत्कृष्ट स्थितिका उदीरक है। इसके बारह कषाय, भय और जुगुप्साका भंग सम्यक्त्वके समान है। इसीप्रकार रतिकी उत्कृष्ट स्थितिकी उदीरणाको मुख्य कर सन्निकर्ष जानना चाहिए।

§ ४९३. अरतिकी उत्कृष्ट स्थितिका उदीरक जीव सम्यक्त्व और पुरुषवेदका नियमसे उदीरक है जो नियमसे असंख्यातवें भागहीन अनुत्कृष्ट स्थितिका उदीरक है। बारह कषाय, भय और जुगुप्साका कदाचित् उदीरक है। यदि उदीरक है तो नियमसे असंख्यातवें भागहीन अनुत्कृष्ट स्थितिका उदीरक है। शोकका नियमसे उदीरक है जो नियमसे उत्कृष्ट स्थितिका उदीरक है। इसीप्रकार शोककी उत्कृष्ट स्थितिकी उदीरणाको मुख्य कर सन्निकर्ष कहना चाहिए।

§ ४९४. भयकी उत्कृष्ट स्थितिका उदीरक जीव सम्यक्त्व, हास्य, रति और पुरुषवेदका नियमसे उदीरक है जो नियमसे उत्कृष्ट स्थितिका उदीरक है। बारह कषाय और जुगुप्साका कदाचित् उदीरक है। यदि उदीरक है तो नियमसे उत्कृष्ट स्थितिका उदीरक है। इसीप्रकार जुगुप्साकी उत्कृष्ट स्थितिकी उदीरणाको मुख्य कर सन्निकर्ष जानना चाहिए।

§ ४९५. पुरुषवेदकी उत्कृष्ट स्थितिका उदीरक जीव सम्यक्त्व, हास्य और रतिका नियमसे उदीरक है जो नियमसे उत्कृष्ट स्थितिका उदीरक है। बारह कषाय, भय और जुगुप्साका कदाचित् उदीरक है। यदि उदीरक है तो नियमसे उत्कृष्ट स्थितिका उदीरक है।

एवं जाव० ।

§ ५९६. जहण्णए पयदं । दुविहो णि०—ओघेण आदेसेण य । ओघेण मिच्छ० जह० ट्ठिदिउदी० बारसक०-छण्णोक० सिया उदी० । जदि उदी०, णिय० अजह० संखे०गुणब्भहियं । चदुसंजल०-तिण्णिवे० सिया उदी०, जदि उदी०, णिय० अज० असंखे०गुणब्भहियं । एवं सम्म०-सम्मामि० । णवरि अणंताणु० चउक्कं णत्थि ।

§ ५९७. अणंताणु०कोध० जह० ट्ठिदिउदी० मिच्छ०-कोधसंजल०-णवुंस० णिय० उदी० अज० असंखे०गुणब्भहियं । दोण्हं कोधाणं णिय० उदी०, जहण्णा वा अजहण्णा वा । जहण्णादो अजहण्णा समयुत्तरमादिं कादूण जाव पलिदो० असंखे०भागब्भहियं । हस्स-रदि-अरदि-सोग० सिया उदी० । जदि उदी०, णिय० अज० असंखे०भागब्भहियं । भय-दुगुंछा० सिया उदी० । जदि उदी०, जहण्णा अजहण्णा वा । जहण्णादो अजहण्णा समयुत्तरमादिं कादूण जाव आवलियब्भहियं । एवमेकारसक० ।

§ ५९८. कोहसंज० जह० ट्ठिदिउदी० सेसाणमणुदीरगो । एवं तिण्हं संजलणाणं ।

इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

§ ५९६. जघन्यका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मिथ्यात्वकी जघन्य स्थितिका उदीरक जीव बारह कषाय और छह नोकषायका कदाचित् उदीरक है। यदि उदीरक है तो नियमसे संख्यातगुणी अधिक अजघन्य स्थितिका उदीरक है। चार संज्वलन और तीन वेदका कदाचित् उदीरक है। यदि उदीरक है तो नियमसे असंख्यातगुणी अधिक अजघन्य स्थितिका उदीरक है। इसीप्रकार सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी जघन्य स्थितिकी उदीरणाको मुख्य कर सन्निकर्ष जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनके उदीरकके अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी उदीरणा नहीं है।

§ ५९७. अनन्तानुबन्धी क्रोधकी जघन्य स्थितिका उदीरक जीव मिथ्यात्व, क्रोधसंज्वलन और नपुंसकवेदका नियमसे उदीरक है जो नियमसे असंख्यातगुणी अधिक अजघन्य स्थितिका उदीरक है। दो क्रोधोंका नियमसे उदीरक है जो जघन्य या अजघन्य स्थितिका उदीरक है। यदि अजघन्य स्थितिका उदीरक है तो जघन्यकी अपेक्षा एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तककी अजघन्य स्थितिका उदीरक है। हास्य, रति, अरति और शोकका कदाचित् उदीरक है। यदि उदीरक है तो नियमसे असंख्यातवाँ भाग अधिक अजघन्य स्थितिका उदीरक है। भय और जुगुप्साका कदाचित् उदीरक है। यदि उदीरक है तो जघन्य या अजघन्य स्थितिका उदीरक है। यदि अजघन्य स्थितिका उदीरक है तो जघन्यकी अपेक्षा एक समय अधिक स्थितिसे लेकर एक आवलि अधिक तककी अजघन्य स्थितिका उदीरक है। इसीप्रकार ग्यारह कषायकी जघन्य स्थितिकी उदीरणाको मुख्य कर सन्निकर्ष जानना चाहिए।

§ ५९८. क्रोधसंज्वलनकी जघन्य स्थितिका उदीरक जीव शेष प्रकृतियोंका अनुदीरक

§ ५९९. इत्थिवे० जह० ट्ठिदिउदी० चदुसंज० सिया उदी०। जदि० उदी०, णिय० अज० असंखे०गुणब्भ०। एवं पुरिसवे०।

§ ६००. हस्सस्स जह० ट्ठिदिमुदी० मिच्छत्तं णिय० उदी०, णिय० अजह० असंखे०गुणब्भ०। बारसक०-भय-दुगुंछा० सिया उदी०। जदि उदी०, णिय० अजह० संखे०गुणब्भहियं। चदुसंजलण-तिण्णिवे० सिया उदी०। जदि उदी०, णिय० अजह० असंखे०गुणब्भ०। रदि० णिय० उदी०, णिय० जहण्णं। एवं रदीए। एवमरदि-सोग०।

§ ६०१. भय० जह० ट्ठिदिउदी० मिच्छ०-णवुंस० णिय० उदी०, णिय० अजहण्णा असंखे०गुणब्भ०। बारसक० सिया उदी०। जदि उदी०, जह० अजहण्णा वा। जहण्णादो अजहण्णा समयुत्तरमादिं कादूण जाव पलिदो० असंखे०भागब्भ०। चदुसंजल० सिया उदी०। जदि० उदी०, णिय० अजह० असंखे०गुणब्भ०। हस्स-रदि-अरदि-सोग० सिया उदी०। जदि उदी०, णिय० अज० असंखे०भागब्भ०। दुगुंछा० सिया उदी०। जदि० उदी०, णिय० जहण्णा। एवं दुगुंछाए।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

है। इसीप्रकार तीन संज्वलनकी जघन्य स्थितिउदीरणाको मुख्य कर सन्निकर्ष जानना चाहिए।

§ ५९९. स्त्रीवेदकी जघन्य स्थितिका उदीरक जीव चार संज्वलनोंका कदाचित् उदीरक है। यदि उदीरक है तो नियमसे असंख्यातगुणी अधिक अजघन्य स्थितिका उदीरक है। इसीप्रकार पुरुषवेदकी जघन्य स्थितिउदीरणाको मुख्य कर सन्निकर्ष जानना चाहिए।

§ ६००. हास्यकी जघन्य स्थितिका उदीरक जीव मिथ्यात्वका नियमसे उदीरक है जो नियमसे असंख्यातगुणी अधिक अजघन्य स्थितिका उदीरक है। बारह कषाय, भय और जुगुप्साका कदाचित् उदीरक है। यदि उदीरक है तो नियमसे संख्यातगुणी अधिक अजघन्य स्थितिका उदीरक है। चार संज्वलन और तीन वेदका कदाचित् उदीरक है। यदि उदीरक है तो नियमसे असंख्यातगुणी अधिक अजघन्य स्थितिका उदीरक है। रतिका नियमसे उदीरक है जो नियमसे जघन्य स्थितिका उदीरक है। इसीप्रकार रतिकी जघन्य स्थितिउदीरणाको मुख्य कर सन्निकर्ष जानना चाहिए। तथा इसीप्रकार अरति और शोककी जघन्य स्थिति-उदीरणाको मुख्य कर सन्निकर्ष जानना चाहिए।

§ ६०१. भयकी जघन्य स्थितिका उदीरक जीव मिथ्यात्व और नपुंसकवेदका नियमसे उदीरक है जो नियमसे असंख्यातगुणी अधिक अजघन्य स्थितिका उदीरक है। बारह कषायका कदाचित् उदीरक है। यदि उदीरक है तो जघन्य या अजघन्य स्थितिका उदीरक है। यदि अजघन्य स्थितिका उदीरक है तो जघन्यकी अपेक्षा एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तककी अजघन्य स्थितिका उदीरक है। चार संज्वलनका कदाचित् उदीरक है। यदि उदीरक है तो नियमसे असंख्यातगुणी अधिक अजघन्य स्थितिका उदीरक है। हास्य, रति, अरति और शोकका कदाचित् उदीरक है। यदि उदीरक है तो नियमसे असंख्यातवाँ भाग अधिक अजघन्य स्थितिका उदीरक है। जुगुप्साका कदाचित् उदीरक है। यदि उदीरक है तो नियमसे जघन्य स्थितिका उदीरक है। इसीप्रकार जुगुप्साकी जघन्य स्थिति-

१. आ०प्रतौ संखे०गुणब्भ० इति पाठः।

§ ६०२. आदेसेण णेरइय० मिच्छ० जह० ट्ठिदिउदी० सोलसक०-छण्णोक० सिया उदी० । जदि उदी०, णिय० अज० संखे०गुणब्भ० । णवुंस० णिय० उदी०, णिय० अजह० संखे०गुणब्भ० । एवं सम्म० । णवरि अणंताणु०४ णत्थि । एवं सम्मामि० ।

§ ६०३. अणंताणु०कोध० जह० ट्ठिदिउदी० मिच्छ० णिय० उदी०, णिय० अजह० असंखे०गुणब्भ० । तिण्हं कोधाणं जहण्णा वा अजहण्णा वा । जहण्णादो अजहण्णा समयुत्तरमादिं कादूण जाव पलिदो० असंखे०भागब्भ० । अरदि-सोग-णवुंस० णिय० उदी०, णिय० अजह० असंखे०भागब्भ० । भय-दुगुंछा० सिया उदी० । जदि उदी०, णिय० जहण्णा । एवं पण्णारसकसायाणमण्णमण्णस्स ।

§ ६०४. णवुंसयवेद० जह० ट्ठिदिउदी० मिच्छ० णिय० उदी०, णिय० अजह० असंखे०गुणब्भ० । सोलसक०-भय-दुगुंछा० सिया उदी० । जदि उदी०, णिय० अजह० संखे०गुणब्भ० । हस्स-रदि-अरदि-सोग० सिया उदी० । जदि उदी०, णिय० अजह० विट्ठाणपदिदा असंखे०भागब्भ० संखेज्जगुणब्भहियं वा ।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

उदीरणाको मुख्य कर सन्निकर्ष जानना चाहिए ।

§ ६०२. आदेशसे नारकियोंमें मिथ्यात्वकी जघन्य स्थितिका उदीरक जीव सोलह कषाय और छह नोकषायोंका कदाचित् उदीरक है । यदि उदीरक है तो नियमसे संख्यातगुणी अधिक अजघन्य स्थितिका उदीरक है । नपुंसकवेदका नियमसे उदीरक है जो नियमसे संख्यातगुणी अधिक अजघन्य स्थितिका उदीरक है । इसीप्रकार सम्यक्त्वकी जघन्य स्थितिकी उदीरणाको मुख्यकर सन्निकर्ष जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि इसके अनन्तानुबन्धी-चतुष्ककी उदीरणा नहीं होती । इसीप्रकार सम्यग्मिथ्यात्वकी जघन्य स्थितिकी उदीरणाको मुख्य कर सन्निकर्ष जानना चाहिए ।

§ ६०३. अनन्तानुबन्धी क्रोधकी जघन्य स्थितिका उदीरक जीव मिथ्यात्वका नियमसे उदीरक है जो नियमसे असंख्यातगुणी अधिक अजघन्य स्थितिका उदीरक है । तीन क्रोधोंकी जघन्य या अजघन्य स्थितिका उदीरक है । यदि अजघन्य स्थितिका उदीरक है तो जघन्यकी अपेक्षा एक समय अधिकसे लेकर पल्यके असंख्यातवें भाग अधिक तककी अजघन्य स्थितिका उदीरक है । अरति, शोक और नपुंसकवेदका नियमसे उदीरक है जो नियमसे असंख्यातवें भाग अधिक अजघन्य स्थितिका उदीरक है । भय और जुगुप्साका कदाचित् उदीरक है । यदि उदीरक है तो नियमसे जघन्य स्थितिका उदीरक है । इसीप्रकार पन्द्रह कषायकी जघन्य स्थितिउदीरणाको मुख्य कर परस्पर सन्निकर्ष कहना चाहिए ।

§ ६०४. नपुंसकवेदकी जघन्य स्थितिका उदीरक जीव मिथ्यात्वका नियमसे उदीरक है जो नियमसे असंख्यातगुणी अधिक अजघन्य स्थितिका उदीरक है । सोलह कषाय, भय और जुगुप्साका कदाचित् उदीरक है । यदि उदीरक है तो नियमसे संख्यातगुणी अधिक अजघन्य स्थितिका उदीरक है । हास्य, रति, अरति और शोकका कदाचित् उदीरक है । यदि उदीरक है तो नियमसे असंख्यातवें भाग अधिक या संख्यातगुणी अधिक इसप्रकार द्विस्थानपतित अजघन्य स्थितिका उदीरक है ।

§ ६०५. हस्सस्स जह० ट्ठिदिमुदी० मिच्छ०-सोलसक०-भय-दुगुंछ० णवुंसय-भंगो। णवुंस० णिय० उदी० णिय० अज० संखे०गुणब्भ०। रदि णिय० उदी० णिय० जहण्णा। एवं रदीए। एवमरदि-सोगाणं।

§ ६०६. भय० जह० ट्ठिदिउदी० सोलसक० सिया उदी०। जदि० उदी०, जहण्णा अजहण्णा वा। जहण्णादो अजहण्णा विट्ठाणपदिदा असंखे०भागब्भ० संखे०भागब्भ० वा। मिच्छ०-अरदि-सोग०-णवुंस० अणंताणु०बंधिभंगो। दुगुंछा० सिया उदी०। जदि उदी०, णिय० जहण्णा। एवं दुगुंछाए। एवं पढमाए पुढवीए णेदव्वं।

§ ६०७. विदियादि जाव छट्ठि त्ति मिच्छ०-सम्म०-सम्मामि० णिरयोघभंगो। अणंताणु०कोध० जह० ट्ठिदिउदी० मिच्छ० णिय० उदी० णिय० अज० असंखे०-गुणब्भ०। तिण्हं कोधाणं णवुंसय० णिय० उदी० णिय० अजह० असंखेज्जभागब्भ०। छण्णोक० सिया उदी०। जदि उदी०, णिय० अजह० असंखे०भागब्भ०। एवं तिण्हं कसायाणं।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

§ ६०८. अपच्चक्खाणकोध० जह० ट्ठिदिउदी० दोण्हं कोधाणं णवुंस० णिय०

---

§ ६०५. हास्यकी जघन्य स्थितिके उदीरक जीवके मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय और जुगुप्साका भंग नपुंसकवेदके समान है। नपुंसकवेदका नियमसे उदीरक है जो नियमसे संख्यातगुणी अधिक अजघन्य स्थितिका उदीरक है। रतिका नियमसे उदीरक है जो नियमसे जघन्य स्थितिका उदीरक है। इसीप्रकार रतिकी जघन्य स्थितिकी उदीरणाको मुख्य कर सन्निकर्ष जानना चाहिए। इसीप्रकार अरति और शोककी जघन्य स्थितिकी उदीरणाको मुख्य कर सन्निकर्ष जानना चाहिए।

§ ६०६. भयकी जघन्य स्थितिका उदीरक जीव सोलह कषायका कदाचित् उदीरक है। यदि उदीरक है तो जघन्य या अजघन्य स्थितिका उदीरक है। यदि अजघन्य स्थितिका उदीरक है तो जघन्यकी अपेक्षा असंख्यातवें भाग अधिक या संख्यातवें भाग अधिक द्विस्थानपतित अजघन्य स्थितिका उदीरक है। मिथ्यात्व, अरति, शोक और नपुंसकवेदका भंग अनन्तानुबन्धीके समान है। जुगुप्साका कदाचित् उदीरक है। यदि उदीरक है तो नियमसे जघन्य स्थितिका उदीरक है। इसीप्रकार जुगुप्साकी जघन्य स्थितिकी उदीरणाको मुख्य कर सन्निकर्ष जानना चाहिए। इसीप्रकार प्रथम पृथिवीमें सन्निकर्ष जानना चाहिए।

§ ६०७. दूसरीसे लेकर छठी पृथिवी तकके नारकियोंमें मिथ्यात्व, सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका भंग सामान्य नारकियोंके समान है। अनन्तानुबन्धी क्रोधकी जघन्य स्थितिका उदीरक जीव मिथ्यात्वका नियमसे उदीरक है जो नियमसे असंख्यातगुणी अधिक अजघन्य स्थितिका उदीरक है। तीन क्रोध और नपुंसकवेदका नियमसे उदीरक है जो नियमसे असंख्यातवें भाग अधिक अजघन्य स्थितिका उदीरक है। छह नोकषायोंका कदाचित् उदीरक है। यदि उदीरक है तो नियमसे असंख्यातवें भाग अधिक अजघन्य स्थितिका उदीरक है। इसीप्रकार तीन कषायोंकी जघन्य स्थितिउदीरणाको मुख्य कर सन्निकर्ष जानना चाहिए।

§ ६०८. अप्रत्याख्यान क्रोधकी जघन्य स्थितिका उदीरक जीव दो क्रोध और नपुंसकवेद-

उदी० णिय० जहण्णा। छण्णोक० सिया उदी०। जदि उदी०, णिय० जहण्णा। सम्म० णिय० उदी० णिय० अज० संखे०गुणब्भ०। एवमेक्कारसक०।

§ ६०९. हस्सस्स जह० ट्ठिदिउदी० बारसक०-भय-दुगुंछा० सिया उदी०। जदि उदी०, णिय० जहण्णा। रदि-णवुंस० णिय० उदी० णिय० जहण्णा। सम्मा० अपच्चक्खाणभंगो। एवं रदीए। एवमरदि-सोगाणं।

§ ६१०. भय० जह० ट्ठिदिमुदी० सम्मा०-णवुंस० हस्सभंगो। बारसक०-पंचणोक० सिया उदी०। जदि उदी०, णिय० जहण्णा। एवं दुगुंछाए।

§ ६११. णवुंस० जह० ट्ठिदिउदी० सम्म० हस्सभंगो। बारसक०-छण्णोक० सिया उदी०। जदि उदी०, णिय० जहण्णा।

§ ६१२. सत्तमाए मिच्छ०-सम्म०-सम्मामि० णिरयोघं। अणंताणु०कोध० जह० ट्ठिदिउदी० मिच्छ०-पण्णारसक०-सत्तणोक० णिरयोघं। णवरि भय-दुगुंछा० सिया उदी०। जदि उदी० जहण्णा वा अजहण्णा वा। जहण्णादो अजहण्णा

का नियमसे उदीरक है जो नियमसे जघन्य स्थितिका उदीरक है। छह नोकषायोंका कदाचित् उदीरक है। यदि उदीरक है तो नियमसे जघन्य स्थितिका उदीरक है। सम्यक्त्वका नियमसे उदीरक है जो नियमसे संख्यातगुणी अधिक अजघन्य स्थितिका उदीरक है। इसीप्रकार ग्यारह कषायोंकी जघन्य स्थितिउदीरणाको मुख्य कर सन्निकर्ष जानना चाहिए।

§ ६०९. हास्यकी जघन्य स्थितिका उदीरक जीव बारह कषाय, भय और जुगुप्साका कदाचित् उदीरक है। यदि उदीरक है तो नियमसे जघन्य स्थितिका उदीरक है। रति और नपुंसकवेदका नियमसे उदीरक है जो नियमसे जघन्य स्थितिका उदीरक है। सम्यक्त्वका भंग अप्रत्याख्यानके समान है। इसीप्रकार रतिकी जघन्य स्थितिउदीरणाको मुख्य कर सन्निकर्ष जानना चाहिए। इसीप्रकार अरति और शोककी जघन्य स्थितिउदीरणाको मुख्य कर सन्निकर्ष जानना चाहिए।

§ ६१०. भयकी जघन्य स्थितिके उदीरक जीवके सम्यक्त्व और नपुंसकवेदका भंग हास्यके समान है। वह बारह कषाय और पाँच नोकषायका कदाचित् उदीरक है। यदि उदीरक है तो नियमसे जघन्य स्थितिका उदीरक है। इसीप्रकार जुगुप्साकी जघन्य स्थिति-उदीरणाको मुख्य कर सन्निकर्ष जानना चाहिए।

§ ६११. नपुंसकवेदकी जघन्य स्थितिके उदीरक जीवके सम्यक्त्वका भंग हास्यके समान है। वह बारह कषाय और छह नोकषायका कदाचित् उदीरक है। यदि उदीरक है तो नियमसे जघन्य स्थितिका उदीरक है।

§ ६१२. सातवीं पृथिवीमें मिथ्यात्व, सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका भंग सामान्य नारकियोंके समान है। अनन्तानुबन्धी क्रोधकी जघन्य स्थितिके उदीरकके मिथ्यात्व, पन्द्रह कषाय और सात नोकषायका भंग सामान्य नारकियोंके समान है। इतनी विशेषता है कि भय और जुगुप्साका कदाचित् उदीरक है। यदि उदीरक है तो जघन्य या अजघन्य स्थितिका उदीरक है। यदि अजघन्य स्थितिका उदीरक है तो जघन्यकी अपेक्षा एक समय अधिकसे लेकर एक

समयुत्तरमादिं कादूण जाव आवलियब्भहिया। हस्स-रदि-अरदि-सोग० सिया उदी०। जदि उदी०, णिय० अजह० असंखे०भागब्भ०। एवं पण्णारसक०। णवुंसयवेद-हस्स रदि-अरदि-सोग० णिरयोघं। भय-दुगुंछा० णिरयोघं। णवरि सोलसक० सिया उदी०। जदि उदी०, जहण्णा वा अजहण्णा वा। जहण्णादो अजहण्णा तिट्ठाणपदिदा असंखे०भागब्भ० संखे०भागब्भ० संखे०गुणब्भहिया वा।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

§ ६१३. तिरिक्खेसु मिच्छ० जह० ट्ठिदिउदी० सोलसक०-णवणोक० सिया उदी०। जदि उदी०, णिय० अजह० संखे०गुणब्भ०। एवं सम्मामि०। णवरि अणंताणु०चउक्कं णत्थि। एवं सम्मत्तं। णवरि पुरिसवेदं धुवं कायव्वं। सोलसक० सत्तमाए भंगो।

§ ६१४. इत्थिवेद० जह० ट्ठिदिउदी० मिच्छ० णिय० उदी० णिय० अजह० असंखे०गुणब्भ०। सोलसक०-भय-दुगुंछा० सिया उदी०। जदि उदी०, णियमा अजह० संखेज्जगुणब्भ०। हस्स-रदि-अरदि-सोग० सिया उदी०। जदि उदी०, णिय० अजहण्णा संखे०गुणब्भहिया। एवं पुरिसवे०।

आवलि अधिक तककी अजघन्य स्थितिका उदीरक है। हास्य, रति, अरति और शोकका कदाचित् उदीरक है। यदि उदीरक है तो नियमसे असंख्यातवें भाग अधिक अजघन्य स्थितिका उदीरक है। इसीप्रकार पन्द्रह कषायकी जघन्य स्थितिउदीरणाको मुख्य कर सन्निकर्ष जानना चाहिए। नपुंसकवेद, हास्य, रति, अरति और शोककी जघन्य स्थितिउदीरणाको मुख्य कर सन्निकर्षका भंग सामान्य नारकियोंके समान है। भय और जुगुप्साकी जघन्य स्थितिउदीरणाको मुख्य कर सन्निकर्षका भंग सामान्य नारकियोंके समान है। इतनी विशेषता है कि सोलह कषायका कदाचित् उदीरक है। यदि उदीरक है तो जघन्य या अजघन्य स्थितिका उदीरक है। यदि अजघन्य स्थितिका उदीरक है तो जघन्यकी अपेक्षा असंख्यातवें भाग अधिक, संख्यातवें भाग अधिक या संख्यातगुणी अधिक त्रिस्थानपतित अजघन्य स्थितिका उदीरक है।

§ ६१३. तिर्यञ्चोंमें मिथ्यात्वकी जघन्य स्थितिका उदीरक जीव सोलह कषाय और नौ नोकषायोंका कदाचित् उदीरक है। यदि उदीरक है तो नियमसे संख्यातगुणी अधिक अजघन्य स्थितिका उदीरक है। इसीप्रकार सम्यग्मिथ्यात्वकी जघन्य स्थितिउदीरणाको मुख्य कर सन्निकर्ष जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इसके अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी उदीरणा नहीं है। इसीप्रकार सम्यक्त्वकी जघन्य स्थितिउदीरणाको मुख्य कर सन्निकर्ष जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इसके पुरुषवेदकी उदीरणाको ध्रुव करना चाहिए। सोलह कषायकी जघन्य स्थितिकी उदीरणाको मुख्य कर भंग सातवीं पृथिवीके समान जानना चाहिए।

§ ६१४. स्त्रीवेदकी जघन्य स्थितिका उदीरक जीव मिथ्यात्वका नियमसे उदीरक है जो नियमसे असंख्यातगुणी अधिक अजघन्य स्थितिका उदीरक है। सोलह कषाय, भय और जुगुप्साका कदाचित् उदीरक है। यदि उदीरक है तो नियमसे संख्यातगुणी अधिक अजघन्य स्थितिका उदीरक है। हास्य, रति, अरति और शोकका कदाचित् उदीरक है। यदि उदीरक है तो नियमसे संख्यातगुणी अधिक अजघन्य स्थितिका उदीरक है। इसीप्रकार पुरुषवेदकी जघन्य स्थितिउदीरणाको मुख्य कर सन्निकर्ष जानना चाहिए।

§ ६१५. हस्स० जह० ट्ठिदिउदी० मिच्छ० इत्थिवेदभंगो। सोलसक०-णवुंस०-भय-दुगुंछा० सिया उदी०। जदि उदी०, णिय० अजह० संखे०गुणब्भ०। इत्थिवे०-पुरिसवे० सिया उदी०। जदि उदी०, णिय० अजह० विट्ठाणपदिदा असंखे०भागब्भ० संखे०गुणब्भहिया वा। रदिं णियमा जहण्णा। एवं रदीए। एवमरदि-सोगाणं। भय-दुगुंछा० अणंताणु०भंगो। णवरि सोलसक० सिया उदी०। जदि उदी०, जह० अजह०। जह० अजहण्णा समयुत्तरमादिं कादूण जाव पलिदो० असंखे०-भागब्भ०। णवुंसवे० सत्तमपुढविभंगो।

§ ६१६. पंचिं०तिरिक्खतिये मिच्छ०-सम्म०-सम्मामि०-सत्तणोक० तिरिक्खोघं। अणंताणु०कोध० जह० ट्ठिदिउदी० मिच्छ० णिय० उदी० णिय० अजह० असंखे०गुणब्भ०। तिण्हं कोधाणं णिय० उदी०, जह० अजह०। जह० अजह० समयुत्तरमादिं कादूण जाव पलिदो० असंखे०भागब्भ०। भय-दुगुंछा० सिया उदी०। जदि उदी०, णिय० जहण्णा। सत्तणोक० सिया उदी०। जदि उदी०, णिय० अज० असंखे०भागब्भ०। एवं पण्णारसक०। भय-दुगुंछा० तिरिक्खोघं। णवरि सत्तणोक०

---

§ ६१५. हास्यकी जघन्य स्थितिके उदीरक जीवके मिथ्यात्वका भंग स्त्रीवेदके समान है। वह सोलह कषाय, नपुंसकवेद, भय और जुगुप्साका कदाचित् उदीरक है। यदि उदीरक है तो नियमसे संख्यातगुणी अधिक अजघन्य स्थितिका उदीरक है। स्त्रीवेद और पुरुषवेदका कदाचित् उदीरक है। यदि उदीरक है तो नियमसे असंख्यातवें भाग अधिक या संख्यातगुणी अधिक द्विस्थानपतित अजघन्य स्थितिका उदीरक है। रतिका नियमसे उदीरक है जो नियमसे जघन्य स्थितिका उदीरक है। इसीप्रकार रतिकी जघन्य स्थितिउदीरणाको मुख्य कर सन्निकर्ष जानना चाहिए। इसीप्रकार अरति और शोककी जघन्य स्थितिउदीरणाको मुख्य कर सन्निकर्ष जानना चाहिए। भय और जुगुप्साका भंग अनन्तानुबन्धीके समान है। इतनी विशेषता है कि वह सोलह कषायका कदाचित् उदीरक है। यदि उदीरक है तो जघन्य या अजघन्य स्थितिका उदीरक है। यदि अजघन्य स्थितिका उदीरक है तो जघन्यकी अपेक्षा एक समय अधिक स्थितिसे लेकर पल्यके असंख्यातवें भाग अधिक तककी अजघन्य स्थितिका उदीरक है। नपुंसकवेदका भंग सातवीं पृथिवीके समान है।

§ ६१६. पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकमें मिथ्यात्व, सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व और सात नोकषायका भंग सामान्य तिर्यञ्चोंके समान है। अनन्तानुबन्धी क्रोधकी जघन्य स्थितिका उदीरक जीव मिथ्यात्वका नियमसे उदीरक है जो नियमसे असंख्यातगुणी अधिक अजघन्य स्थितिका उदीरक है। वह तीन क्रोधका नियमसे उदीरक है जो नियमसे जघन्य या अजघन्य स्थितिका उदीरक है। यदि अजघन्य स्थितिका उदीरक है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा एक समय अधिक स्थितिसे लेकर पल्यके असंख्यातवें भाग अधिक तककी अजघन्य स्थितिका उदीरक है। भय और जुगुप्साका कदाचित् उदीरक है। यदि उदीरक है तो नियमसे जघन्य स्थितिका उदीरक है। सात नोकषायोंका कदाचित् उदीरक है। यदि उदीरक है तो नियमसे असंख्यातवें भाग अधिक अजघन्य स्थितिका उदीरक है। इसीप्रकार पन्द्रह कषायकी जघन्य स्थितिउदीरणाको मुख्य कर सन्निकर्ष जानना चाहिए। भय और जुगुप्साका भंग सामान्य

सिया उदी० । जदि उदी०, णिय० अजह० असंखे०भागब्भ० । णवरि पज्ज० इत्थिवेद० णत्थि । जोणिणीसु इत्थिवेदो धुवो कायव्वो ।

§ ६१७. पंचिंदियतिरिक्खअपज्ज०-मणुसअपज्ज० मिच्छ० जह० हिदिउदी० सोलसक०-भय-दुगुंछा० सिया उदी० । जदि उदी०, जहण्णा वा अजहण्णा वा । जह० अजह० समयुत्तरमादिं कादूण जाव पलिदो० असंखे०भागब्भ० । हस्स-रदि-अरदि-सोग० सिया उदी० । जदि उदी०, णिय० अजह० असंखे०भागब्भ० । एवं णवुंस० । णवरि णिय० उदी० ।

§ ६१८. अणंताणु०कोध० जह० हिदिउदी० मिच्छ०-तिण्हं कोधाणं णिय० उदी०, जह० अजह० । जह० अजह० समयुत्तरमादिं कादूण जाव पलिदो० असंखे०-भागब्भ० । भय-दुगुंछा० सिया उदी० । जदि उदी०, णिय० जहण्णा । चदुणोक०-णवुंस० मिच्छत्तभंगो । एवं पण्णारसक० ।

§ ६१९. हस्सस्स जह० हिदिउदी० मिच्छ०-णवुंस० णिय० उदी० णिय० अजह० संखे०गुणब्भ० । एवं सोलसक०-भय-दुगुंछा० । णवरि सिया उदी० । रदिं

तिर्यञ्चोंके समान है । इतनी विशेषता है कि वह सात नोकषायोंका कदाचित् उदीरक है । यदि उदीरक है तो नियमसे असंख्यातवें भाग अधिक अजघन्य स्थितिका उदीरक है । इतनी विशेषता है कि पर्याप्तकोंमें स्त्रीवेदकी उदीरणा नहीं है । योनिनियोंमें स्त्रीवेदकी उदीरणा ध्रुव करना चाहिए ।

§ ६१७. पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्तकोंमें मिथ्यात्वकी जघन्य स्थितिका उदीरक जीव सोलह कषाय, भय और जुगुप्साका कदाचित् उदीरक है । यदि उदीरक है तो जघन्य या अजघन्य स्थितिका उदीरक है । यदि अजघन्य स्थितिका उदीरक है तो जघन्यकी अपेक्षा एक समय अधिकसे लेकर पल्यके असंख्यातवें भाग अधिक तककी अजघन्य स्थितिका उदीरक है । हास्य, रति, अरति और शोकका कदाचित् उदीरक है । यदि उदीरक है तो नियमसे असंख्यातवें भाग अधिक अजघन्य स्थितिका उदीरक है । इसीप्रकार नपुंसकवेदकी अपेक्षा जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि इसका नियमसे उदीरक है ।

§ ६१८. अनन्तानुबन्धी क्रोधकी जघन्य स्थितिका उदीरक जीव मिथ्यात्व और तीन क्रोधोंकी नियमसे जघन्य या अजघन्य स्थितिका उदीरक है । यदि अजघन्य स्थितिका उदीरक है तो जघन्यकी अपेक्षा एक समय अधिकसे लेकर पल्यके असंख्यातवें भाग अधिक तककी अजघन्य स्थितिका उदीरक है । भय और जुगुप्साका कदाचित् उदीरक है । यदि उदीरक है तो नियमसे जघन्य स्थितिका उदीरक है । चार नोकषाय और नपुंसकवेदका भंग मिथ्यात्वके समान है । इसीप्रकार पन्द्रह कषायकी जघन्य स्थितिउदीरणाको मुख्य कर सन्निकर्ष कहना चाहिए ।

§ ६१९. हास्यकी जघन्य स्थितिका उदीरक जीव मिथ्यात्व और नपुंसकवेदका नियमसे उदीरक है जो नियमसे संख्यातवें भाग अधिक अजघन्य स्थितिका उदीरक है । इसीप्रकार सोलह कषाय, भय और जुगुप्साकी अपेक्षा कहना चाहिए । इतनी विशेषता है कि इनका कदाचित् उदीरक है । रतिका नियमसे उदीरक है जो नियमसे जघन्य स्थितिका उदीरक है ।

णिय० उदी० णिय० जहण्णा । एवं रदीए । एवमरदि-सोग० ।

§ ६२०. भयस्स जह० ट्ठिदिउदी० मिच्छ०-चदुणोक०-णवुंस० अणंताणुबंधी-भंगो । सोलसक० मिच्छत्तभंगो । दुगुंछा० सिया उदी० । जदि उदी०, णिय० जहण्णा । एवं दुगुंछाए ।

§ ६२१. णवुंस० जह० ट्ठिदिउ० मिच्छ०-सोलसक०-भय-दुगुंछा० हस्सभंगो । हस्स-रदि-अरदि-सोग० सिया० उदी० । जदि उदी०, णिय० अजह० विट्ठाणपदिदा असंखे०भागब्भ० संखे०गुणब्भ० वा ।

§ ६२२. मणुसतिए ओघं । णवरि बारसक०-छण्णोक०-पंचिं०तिरिक्खभंगो । पज्ज० इत्थिवे० णत्थि । मणुसिणीसु इत्थिवेदो धुवो कायव्वो ।

§ ६२३. देवेसु मिच्छ० जह० ट्ठिदिउ० सोलसक०-अट्ठणोक० सिया उदी० । जदि उदी०, णिय० अज० संखे०गुणा । एवं सम्मामि० । णवरि अणंताणु०४ णत्थि । सम्म० पंचिंदियतिरिक्खभंगो ।

§ ६२४. अणंताणु०कोध० जह० ट्ठिदिउदी० मिच्छ० णिय० उदी० णिय० अजह० संखे०गुणब्भ० । तिण्हं कोधाणं णिय० उदी०, जह० अजह० । जह० अजह०

इसीप्रकार रतिकी जघन्य स्थितिउदीरणाको मुख्य कर सन्निकर्ष कहना चाहिए। तथा इसी-प्रकार अरति और शोककी जघन्य स्थितिकी उदीरणाको मुख्य कर सन्निकर्ष कहना चाहिए।

§ ६२०. भयकी जघन्य स्थितिके उदीरक जीवके मिथ्यात्व, चार नोकषाय और नपुंसक-वेदका भंग अनन्तानुबन्धीके समान है। सोलह कषायका भंग मिथ्यात्वके समान है। जुगुप्सा-का कदाचित् उदीरक है यदि उदीरक है तो नियमसे जघन्य स्थितिका उदीरक है। इसीप्रकार जुगुप्साकी जघन्य स्थितिउदीरणाको मुख्य कर सन्निकर्ष जानना चाहिए।

§ ६२१. नपुंसकवेदकी जघन्य स्थितिके उदीरक जीवके मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय और जुगुप्साका भंग हास्यके समान है। हास्य, रति, अरति और शोकका कदाचित् उदीरक है। यदि उदीरक है तो नियमसे असंख्यातवें भाग अधिक या संख्यातगुणी अधिक अजघन्य स्थितिका उदीरक है।

§ ६२२. मनुष्यत्रिकमें ओघके समान भंग है। इतनी विशेषता है कि बारह कषाय और छह नोकषायका भंग पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चोंके समान है। पर्याप्तकोंमें स्त्रीवेदकी उदीरणा नहीं है और मनुष्यिनियोंमें स्त्रीवेदको ध्रुव करना चाहिए।

§ ६२३. देवोंमें मिथ्यात्वकी जघन्य स्थितिका उदीरक जीव सोलह कषाय और आठ नोकषायोंका कदाचित् उदीरक है। यदि उदीरक है तो नियमसे संख्यातगुणी अधिक अजघन्य स्थितिका उदीरक है। इसीप्रकार सम्यग्मिथ्यात्वकी जघन्य स्थितिउदीरणाको मुख्य कर जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इसके अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी उदीरणा नहीं है। सम्यक्त्वका भंग पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चोंके समान है।

§ ६२४. अनन्तानुबन्धी क्रोधकी जघन्य स्थितिका उदीरक जीव मिथ्यात्वका नियमसे उदीरक है जो नियमसे संख्यातगुणी अधिक अजघन्य स्थितिका उदीरक है। तीन क्रोधोंकी

समयुत्तरमादिं कादूण जाव पलिदो० असंखे०भागब्भ० । भय-दुगुंछा० सिया उदी० । जदि उदी०, णिय० जहण्णा । इत्थिवे०-पुरिसवे० सिया उदी० । जदि उदी०, णिय० अजह० असंखे०भागब्भ० । हस्स-रदि णिय० उदी० णिय० अजह० असंखे०-भागब्भ० । एवं पण्णारसक० ।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

§ ६२५. इत्थिवे० जह० ट्ठिदिउदी० मिच्छ० अणंताणु०भंगो । सोलसक०-भय-दुगुंछा०-चदुणोक० सिया उदी० । जदि उदी०, णिय० अजह० संखे०गुणब्भ० । एवं पुरिसवेद० ।

§ ६२६. हस्सस्स जह० ट्ठिदिउदी० मिच्छ०-सोलसक०-भय-दुगुंछा० इत्थिवेदभंगो । इत्थिवेद०-पुरिसवे० सिया उदी० । जदि० उदी०, णिय० अजह० बिट्ठाणपदिदा असंखे०भागब्भ० संखे०गुणब्भ० । रदि० णिय० उदी० णिय० जहण्णा । एवं रदीए । एवमरदि-सोग० ।

§ ६२७. भय० जह० ट्ठिदिउदी० मिच्छ०-इत्थिवेद०-पुरिसवे०-हस्स-रदि० अणंताणु०भंगो । सोलसक० सिया उदी० । जदि उदी०, जहण्णा वा अजह० वा ।

जघन्य या अजघन्य स्थितिका उदीरक है । यदि अजघन्य स्थितिका उदीरक है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा एक समय अधिकसे लेकर पल्यके असंख्यातवें भाग अधिक तककी अजघन्य स्थितिका उदीरक है । भय और जुगुप्साका कदाचित् उदीरक है । यदि उदीरक है तो नियमसे जघन्य स्थितिका उदीरक है । स्त्रीवेद और पुरुषवेदका कदाचित् उदीरक है । यदि उदीरक है तो नियमसे असंख्यातवें भाग अधिक अजघन्य स्थितिका उदीरक है । हास्य और रतिका नियमसे उदीरक है जो नियमसे असंख्यातवें भाग अधिक अजघन्य स्थितिका उदीरक है । इसीप्रकार पन्द्रह कषायकी जघन्य स्थितिउदीरणाको मुख्य कर सन्निकर्ष जानना चाहिए ।

§ ६२५. स्त्रीवेदकी जघन्य स्थितिके उदीरक जीवके मिथ्यात्वका भंग अनन्तानुबन्धीके समान है । सोलह कषाय, भय, जुगुप्सा और चार नोकषायका कदाचित् उदीरक है । यदि उदीरक है तो नियमसे संख्यातगुणी अधिक अजघन्य स्थितिका उदीरक है । इसीप्रकार पुरुषवेदकी जघन्य स्थितिउदीरणाको मुख्य कर सन्निकर्ष जानना चाहिए ।

§ ६२६. हास्यकी जघन्य स्थितिके उदीरक जीवके मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय और जुगुप्साका भंग स्त्रीवेदके समान है । स्त्रीवेद और पुरुषवेदका कदाचित् उदीरक है । यदि उदीरक है तो नियमसे असंख्यातवें भाग अधिक या संख्यातगुणी अधिक द्विस्थानपतित अजघन्य स्थितिका उदीरक है । रतिका नियमसे उदीरक है जो नियमसे जघन्य स्थितिका उदीरक है । इसीप्रकार रतिकी जघन्य स्थितिउदीरणाको मुख्य कर सन्निकर्ष जानना चाहिए तथा इसीप्रकार अरति और शोककी जघन्य स्थितिउदीरणाको मुख्य कर सन्निकर्ष जानना चाहिए ।

§ ६२७. भयकी जघन्य स्थितिके उदरीक जीवके मिथ्यात्व, स्त्रीवेद, पुरुषवेद, हास्य और अरतिका भंग अनन्तानुबन्धीके समान है । सोलह कषायका कदाचित् उदीरक है । यदि उदीरक है तो जघन्य या अजघन्य स्थितिका उदीरक है । यदि अजघन्य स्थितिका उदीरक है तो नियमसे

जहण्णादो अजहण्णा विट्ठाणपदिदा असंखे०भागब्भ० संखे०भागब्भहिया वा। दुगुंछा० सिया उदी०। जदि उदी०, णिय० जहण्णा। एवं दुगुंछा०।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

§ ६२८. एवं भवण०-वाणवें०। णवरि सम्म० सम्मामिच्छत्तभंगो।

§ ६२९. जोदिसि० मिच्छ०-सम्मत्त-सम्मामि०भवणवासियभंगो। अणंताणु०-कोध० जह० ट्ठिदिउदी० मिच्छ० णिय० उदी० णिय० अजह० असंखे०गुणब्भहियं। तिण्हं कोधाणं णिय० उदी० णिय० अजह० असंखे०भागब्भ०। अट्ठणोक० सिया उदी०। जदि उदी०, णिय० अज० असंखेज्जभागब्भ०। एवं तिण्हं कसायाणं।

§ ६३०. अपच्चक्खाणकोह० जह० ट्ठिदिउदी० दोण्हं कोधाणं णिय० उदी० णिय० जहण्णा। अट्ठणोक० सिया उदी०। जदि उदी०, णिय० जहण्णा। सम्म० णिय० उदी० णिय० अज० संखे०गुणब्भ०। एवमेक्कारसक०।

§ ६३१. हस्सस्स जह० ट्ठिदिउदी० बारसक०-भय-दुगुंछा०-इत्थिवे०-पुरिसवे० सिया उदी०। जदि उदी०, णिय० जहण्णा। सम्म० अपच्चक्खाणभंगो। रदि णिय० उदी० णिय० जहण्णा। एवं रदीए। एवमरदि-सोग०।

असंख्यातवें भाग अधिक या संख्यातवें भाग अधिक द्विस्थानपतित अजघन्य स्थितिका उदीरक है। जुगुप्साका कदाचित् उदीरक है। यदि उदीरक है तो नियमसे जघन्य स्थितिका उदीरक है। इसीप्रकार जुगुप्साकी जघन्य स्थितिउदीरणाको मुख्य कर सन्निकर्ष जानना चाहिए।

§ ६२८. इसीप्रकार भवनवासी और व्यन्तर देवोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनमें सम्यक्त्वका भंग सम्यग्मिथ्यात्वके समान है।

§ ६२९. ज्योतिषी देवोंमें मिथ्यात्व, सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका भंग भवनवासियोंके समान है। इनमें अनन्तानुबन्धी क्रोधकी जघन्य स्थितिका उदीरक जीव मिथ्यात्वका नियमसे उदीरक है जो नियमसे असंख्यातगुणी अधिक अजघन्य स्थितिका उदीरक है। तीन क्रोधोंका नियमसे उदीरक है जो नियमसे असंख्यातवें भाग अधिक अजघन्य स्थितिका उदीरक है। आठ नोकषायोंका कदाचित् उदीरक है। यदि उदीरक है तो नियमसे असंख्यातवें भाग अधिक अजघन्य स्थितिका उदीरक है। इसीप्रकार तीन कषायोंकी जघन्य स्थितिउदीरणाको मुख्य कर सन्निकर्ष जानना चाहिए।

§ ६३०. अप्रत्याख्यान क्रोधकी जघन्य स्थितिका उदीरक जीव दो क्रोधोंका नियमसे उदीरक है जो नियमसे जघन्य स्थितिका उदीरक है। आठ नोकषायोंका कदाचित् उदीरक है। यदि उदीरक है तो नियमसे जघन्य स्थितिका उदीरक है। सम्यक्त्वका नियमसे उदीरक है जो नियमसे संख्यातगुणी अधिक अजघन्य स्थितिका उदीरक है। इसीप्रकार ग्यारह कषायोंकी जघन्य स्थितिउदीरणाको मुख्य कर सन्निकर्ष जानना चाहिए।

§ ६३१. हास्यकी जघन्य स्थितिका उदीरक जीव बारह कषाय, भय, जुगुप्सा, स्त्रीवेद और पुरुषवेदका कदाचित् उदीरक है। यदि उदीरक है तो नियमसे जघन्य स्थितिका उदीरक है। इसके सम्यक्त्वका भंग अप्रत्याख्यानके समान है। रतिका नियमसे उदीरक है जो नियमसे जघन्य स्थितिका उदीरक है। इसीप्रकार रतिकी जघन्य स्थितिउदीरणाको मुख्य कर सन्निकर्ष

§ ६३२. भय० जह० ट्ठिदिउदी० बारसक०-सत्तणोक० सिया उदी०। जदि उदी०, णिय० जहण्णा। सम्मत्तं हस्सभंगो। एवं दुगुंछाए।

§ ६३३. इत्थिवे० जह० ट्ठिदिउदी० बारसक०-छण्णोक० सिया उदी०। जदि उदी०, णिय० जहण्णा। सम्म० हस्सभंगो। एवं पुरिसवे०।

§ ६३४. सोहम्मीसाणेसु मिच्छ०-सम्मामि० देवोघं। सम्म० जह० ट्ठिदिउदी० बारसक०-छण्णोक० सिया उदी०। जदि० उदी०, णिय० अजह० बिट्ठाणपदिदा संखे०भागब्भ० संखे०गुणब्भहिया वा। एवं पुरिसवे०। णवरि णिय० उदी०।

§ ६३५. अणंताणु०कोध० जह० ट्ठिदिउ० मिच्छ० णिय० उदी० णिय० अजह० असंखे०गुणब्भ०। तिण्हं कोधाणं पुरिसवे० णिय० उदी० णिय० अज० संखे०गुणब्भ०। छण्णोक० सिया उदी०। जदि उदी०, णिय० अजह० संखे०गुणब्भ०। एवं तिण्हं कसायाणं। – आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

§ ६३६. अपच्चक्खाणकोह० जह० ट्ठिदिउदी० दोण्हं कोधाणं पुरिसवे० णिय०

जानना चाहिए। इसीप्रकार अरति और शोककी जघन्य स्थितिउदीरणाको मुख्य कर सन्निकर्ष जानना चाहिए।

§ ६३२. भयकी जघन्य स्थितिका उदीरक जीव बारह कषाय और सात नोकषायका कदाचित् उदीरक है। यदि उदीरक है तो नियमसे जघन्य स्थितिका उदीरक है। इसके सम्यक्त्वका भंग हास्यके समान है। इसीप्रकार जुगुप्साकी जघन्य स्थितिउदीरणाको मुख्य कर सन्निकर्ष जानना चाहिए।

§ ६३३. स्त्रीवेदकी जघन्य स्थितिका उदीरक जीव बारह कषाय और छह नोकषायका कदाचित् उदीरक है। यदि उदीरक है तो नियमसे जघन्य स्थितिका उदीरक है। इसके सम्यक्त्वका भंग हास्यके समान है। इसीप्रकार पुरुषवेदकी जघन्य स्थितिउदीरणाको मुख्य कर सन्निकर्ष जानना चाहिए।

§ ६३४. सौधर्म और ऐशानकल्पमें मिथ्यात्व और सम्यग्मिथ्यात्वका भंग सामान्य देवोंके समान है। सम्यक्त्वकी जघन्य स्थितिका उदीरक जीव बारह कषाय और छह नोकषाय-का कदाचित् उदीरक है। यदि उदीरक है तो नियमसे संख्यातवें भाग अधिक या संख्यातगुणी अधिक द्विस्थानपतित अजघन्य स्थितिका उदीरक है। इसीप्रकार पुरुषवेदकी अपेक्षा जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इसका नियमसे उदीरक है।

§ ६३५. अनन्तानुबन्धी क्रोधकी जघन्य स्थितिका उदीरक जीव मिथ्यात्वका नियमसे उदीरक है जो नियमसे असंख्यातगुणी अधिक अजघन्य स्थितिका उदीरक है। तीन क्रोध और पुरुषवेदका नियमसे उदीरक है जो नियमसे संख्यातगुणी अधिक अजघन्य स्थितिका उदीरक है। छह नोकषायका कदाचित् उदीरक है। यदि उदीरक है तो नियमसे संख्यातगुणी अधिक अजघन्य स्थितिका उदीरक है। इसीप्रकार तीन कषायोंकी जघन्य स्थितिउदीरणाको मुख्य कर सन्निकर्ष जानना चाहिए।

§ ६३६. अप्रत्याख्यान क्रोधकी जघन्य स्थितिका उदीरक जीव दो क्रोध और पुरुषवेदका

उदी० णिय० जहण्णा। छण्णोक० सिया उदी०। जदि उदी०, णिय० जहण्णा। एवमेक्कारसक०।

§ ६३७. पुरिसवे० जह० ट्ठिदिउदी० बारसक०-छण्णोक० सिया उदी०। जदि उदी०, णिय० जहण्णा।

§ ६३८. इत्थिवे० जह० ट्ठिदिउदी० सम्म० णिय० उदी० णिय० अज० असंखे०गुणब्भ०। बारसक०-छण्णोक० सिया उदी०। जदि उदी०, णिय० अज० संखे०गुणब्भ०।

§ ६३९. हस्सस्स जह० ट्ठिदिउ० बारसक०-भय-दुगुंछा० सिया उदी०। जदि उदी०, णिय० जहण्णा। पुरिसवे०-रदि० णिय० उदी० णिय० जहण्णा। एवं रदीए। एवमरदि-सोग०।

§ ६४०. भय० जह० ट्ठिदिउदी० बारसक०-पंचणोक० सिया उदी०। जदि उदी०, णिय० जहण्णा। पुरिसवे० णिय० उदी० णिय० जहण्णा। एवं दुगुंछाए।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

§ ६४१. सणक्कुमारादि जाव णवगेवज्जा त्ति एवं चेव। णवरि इत्थिवेदो णत्थि। पुरिसवे० धुवो कायव्वो। अणुद्दिसादि जाव सव्वट्ठा त्ति सम्म०-बारसक०-

---

नियमसे उदीरक है जो नियमसे जघन्य स्थितिका उदीरक है। छह नोकषायोंका कदाचित् उदीरक है। यदि उदीरक है तो नियमसे जघन्य स्थितिका उदीरक है। इसीप्रकार ग्यारह कषायोंकी जघन्य स्थितिउदीरणाको मुख्य कर सन्निकर्ष जानना चाहिए।

§ ६३७. पुरुषवेदकी जघन्य स्थितिका उदीरक जीव बारह कषाय और छह नोकषायका कदाचित् उदीरक है। यदि उदीरक है तो नियमसे जघन्य स्थितिका उदीरक है।

§ ६३८. स्त्रीवेदकी जघन्य स्थितिका उदीरक जीव सम्यक्त्वका नियमसे उदीरक है जो नियमसे असंख्यातगुणी अधिक अजघन्य स्थितिका उदीरक है। बारह कषाय और छह नोकषायका कदाचित् उदीरक है। यदि उदीरक है तो नियमसे संख्यातगुणी अधिक अजघन्य स्थितिका उदीरक है।

§ ६३९. हास्यकी जघन्य स्थितिका उदीरक जीव बारह कषाय, भय और जुगुप्साका कदाचित् उदीरक है। यदि उदीरक है तो नियमसे जघन्य स्थितिका उदीरक है। पुरुषवेद और रतिका नियमसे उदीरक है जो नियमसे जघन्य स्थितिका उदीरक है। इसीप्रकार रतिकी जघन्य स्थितिउदीरणाको मुख्य कर सन्निकर्ष जानना चाहिए। तथा इसीप्रकार अरति और शोककी जघन्य स्थितिउदीरणाको मुख्य कर सन्निकर्ष जानना चाहिए।

§ ६४०. भयकी जघन्य स्थितिका उदीरक जीव बारह कषाय और पाँच नोकषायका कदाचित् उदीरक है। यदि उदीरक है तो नियमसे जघन्य स्थितिका उदीरक है। पुरुषवेदका नियमसे उदीरक है जो नियमसे जघन्य स्थितिका उदीरक है। इसीप्रकार जुगुप्साकी जघन्य स्थितिउदीरणाको मुख्य कर सन्निकर्ष जानना चाहिए।

§ ६४१. सनत्कुमारकल्पसे लेकर नौ ग्रैवेयक तकके देवोंमें इसीप्रकार सन्निकर्ष है। इतनी विशेषता है कि इनमें स्त्रीवेदकी उदीरणा नहीं है। पुरुषवेदको ध्रुव करना चाहिए।

सत्तणोक० णवगेवज्जभंगो । एवं जाव ।

§ ६४२. णाणाजीवेहि भंगविचओ दुविहो—जह० उक्क० । उक्कस्से पयदं । दुविहो णि०—ओघेण आदेसेण य । ओघेण सत्तावीसाए पयडी० उक्क०-अणुक्क० ट्ठिदिउदी० तिण्णि भंगा । सम्मामि० उक्क०-अणुक्क० ट्ठिदिउदी० अट्ठ भंगा ८ । सव्व-णेरइय-सव्वतिरिक्ख-सव्वमणुस-सव्वदेवा त्ति जाओ पयडीओ उदीरिज्जंति तासिमोघं । णवरि मणुसअपज्ज० चउवीसपय० उक्क०-अणुक्क० ट्ठिदिउदी० अट्ठ भंगा । एवं जाव० ।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

§ ६४३. जहण्णए पयदं । दुविहो णि०—ओघेण आदेसेण य । ओघेण मिच्छ०-सम्म०-चदुसंजल०-तिण्णिवे०-चदुणोक० जह० अजह० ट्ठिदिउदी० तिण्णि भंगा । सम्मामि० जह० अजह० ट्ठिदिउदी० अट्ठ भंगा । बारसक०-भय-दुगुंछा जह० अजह० ट्ठिदिउदी० णिय० अत्थि । सव्वणेरइय-सव्वपंचिंदियतिरिक्ख-सव्वमणुस-सव्वदेवा त्ति उक्कस्सभंगो ।

§ ६४४. तिरिक्खेसु सोलसक०-भय-दुगुंछा० जह० अजह० ट्ठिदिउदी० णिय० अत्थि । दंसणतिय-सत्तणोक० ओघं । एवं जाव० ।

§ ६४५. भागाभागाणु० दुविहो—जह० उक्क० । उक्कस्से पयदं । दुविहो

अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें सम्यक्त्व, बारह कषाय और सात नोकषायका भंग नौ ग्रैवेयकके समान है । इसीप्रकार अनाहारक मार्गणातक जानना चाहिए ।

§ ६४२. नाना जीवोंकी अपेक्षा भंगविचय दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट । उत्कृष्टका प्रकरण है । निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे सत्ताईस प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितियोंके उदीरक जीवोंके तीन भंग हैं । सम्यग्मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरक जीवोंके आठ भंग हैं । सब नारकी, सब तिर्यञ्च, सब मनुष्य और सब देव जिन प्रकृतियोंकी उदीरणा करते हैं उनका भंग ओघके समान है । इतनी विशेषता है कि मनुष्य अपर्याप्तकोंमें चौबीस प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरकोंके आठ भंग हैं । इसीप्रकार अनाहारक मार्गणातक जानना चाहिए ।

§ ६४३. जघन्यका प्रकरण है । निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे मिथ्यात्व, सम्यक्त्व, चार संज्वलन, तीन वेद और चार नोकषायके जघन्य और अजघन्य स्थितिके उदीरकोंके तीन भंग हैं । सम्यग्मिथ्यात्वकी जघन्य और अजघन्य स्थितिउदीरकोंके आठ भंग हैं । बारह कषाय, भय और जुगुप्साकी जघन्य और अजघन्य स्थितिके उदीरक जीव नियमसे हैं । सब नारकी, सब पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च, सब मनुष्य और सब देवोंमें उत्कृष्टके समान भंग है ।

§ ६४४. तिर्यञ्चोंमें सोलह कषाय, भय और जुगुप्साकी जघन्य और अजघन्य स्थितिके उदीरक जीव नियमसे हैं । तीन दर्शनमोहनीय और सात नोकषायका भंग ओघके समान है । इसीप्रकार अनाहारक मार्गणातक जानना चाहिए ।

§ ६४५. भागाभागानुगम दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट । उत्कृष्टका प्रकरण है ।

णि०—ओघेण आदेसेण य। ओघेण चउवीसाए पयडी० उक्कस्सट्ठिदिउदी० सव्वजी० केव० ? अणंतभागो। अणुक्क० अणंता भागा। सम्म०-सम्मामि०-इत्थिवे०-पुरिसवे० उक्क० ट्ठिदिउदी० सव्वजी० केव० ? असंखे०भागो। अणुक्क० ट्ठिदिउदी० असंखेज्जा भागा। एवं तिरिक्खा०।

§ ६४६. सव्वणेरइय-सव्वपंचिं०तिरिक्ख-मणुसअपज्ज०-देवगदिदेवा भवणादि जाव अवराजिदा त्ति सव्वपय० उक्क०ट्ठिदिउदी० सव्वजी० केव० ? असंखे०भागो। अणुक्क० असंखेज्जा भागा।

§ ६४७. मणुसेसु चउवीसपय० उक्क० ट्ठिदिउ० असंखे०भागो। अणुक्क०ट्ठिदिउदी० असंखेज्जा भागा। सम्म०-सम्मामि०-इत्थिवेद०-पुरिसवेद० उक्क० ट्ठिदिउदी० संखे०भागो। अणुक्क० संखेज्जा भागा। एवं मणुसपज्ज०। णवरि संखेज्जं कायव्वं। इत्थिवेदो णत्थि। एवं मणुसिणी०। णवरि पुरिसवे० णत्थि। सव्वट्ठे वीसं पय० उक्क०ट्ठिदिउदी० संखे०भागो। अणुक्क० संखेज्जा भागा। एवं जाव०।

§ ६४८. जहण्णए पयदं। दुविहो णि०—ओघेण आदेसेण य। ओघेण

निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे चौबीस प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिके उदीरक जीव सब जीवोंके कितने भागप्रमाण हैं ? अनन्तवें भागप्रमाण हैं। अनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरक जीव अनन्त बहुभागप्रमाण हैं। सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व, स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी उत्कृष्ट स्थितिके उदीरक जीव सब जीवोंके कितने भागप्रमाण हैं ? असंख्यातवें भागप्रमाण हैं। अनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरक जीव असंख्यात बहुभागप्रमाण हैं। इसीप्रकार तिर्यञ्चोंमें जानना चाहिए।

§ ६४६. सब नारकी, सब पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च, मनुष्य अपर्याप्त, देवगतिके देव और भवनवासियोंसे लेकर अपराजित कल्पतकके देवोंमें सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिके उदीरक जीव सब जीवोंके कितने भागप्रमाण हैं ? असंख्यातवें भागप्रमाण हैं। अनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरक जीव असंख्यात बहुभागप्रमाण हैं।

§ ६४७. मनुष्योंमें चौबीस प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिके उदीरक जीव असंख्यातवें भागप्रमाण हैं। अनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरक जीव असंख्यात बहुभागप्रमाण हैं। सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व, स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी उत्कृष्ट स्थितिके उदीरक जीव संख्यातवें भागप्रमाण हैं। अनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरक जीव संख्यात बहुभागप्रमाण हैं। इसीप्रकार मनुष्य पर्याप्तकोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि असंख्यातके स्थानमें संख्यात करना चाहिए। इनके स्त्रीवेदकी उदीरणा नहीं है। इसीप्रकार मनुष्यिनियोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनमें पुरुषवेद और स्त्रीवेदकी उदीरणा नहीं है। सर्वार्थसिद्धिमें बीस प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिके उदीरक जीव संख्यातवें भागप्रमाण हैं तथा अनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरक जीव संख्यात बहुभागप्रमाण हैं। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणातक जानना चाहिए।

§ ६४८. जघन्यका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे

मिच्छ०-चदुसंज०-णवुंस०-चदुणोक० जह० ट्ठिदिउ० सव्वजी० अणंतभागो। अज० अणंता भागा। सम्म०-सम्मामि०-इत्थिवे०-पुरिसवे०-बारसक०-भय-दुगुंछा० जह० असंखे०भागो। अजह० असंखेज्जा भागा। सव्वणेर०-सव्वपंचि०तिरिक्ख०-सव्वमणुस-सव्वदेवा त्ति उक्कस्सभंगो।

आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

§ ६४९. तिरिक्खेसु मिच्छ०-णवुंसय०-चदुणोक० जह० अणंतभागो। अजह० अणंता भागा। सम्म०-सम्मामि०-सोलसक०-इत्थिवेद-पुरिसवेद-भय-दुगुंछा० जह० असंखे०भागो। अजह० असंखेज्जा भागा। एवं जाव०।

§ ६५०. परिमाणं दुविहं—जह० उक्क०। उक्कस्से पयदं। दुविहो णि०—ओघेण आदेसेण य। ओघेण मिच्छ०-सोलसक०-सत्तणोक० उक्क० ट्ठिदिउदी० केत्तिया? असंखेज्जा। अणुक्क० केत्ति०? अणंता। सम्म०-सम्मामि०-इत्थिवे०-पुरिसवे० उक्क० अणुक्क० ट्ठिदिउदी० केत्ति०? असंखेज्जा।

§ ६५१. सव्वणेरइय-सव्वपंचिंदियतिरिक्ख-मणुसअपज्ज०-देवगदिदेवा भवणादि जाव सहस्सारे त्ति सव्वपयडी० उक्क० अणुक्क० केत्तिया? असंखेज्जा। मणुसेसु चउवीसं पयडीणं उक्क० ट्ठिदिउदी० संखेज्जा। अणुक्क० केत्ति०? असंखेज्जा।

मिथ्यात्व, चार संज्वलन, नपुंसकवेद और चार नोकषायकी जघन्य स्थितिके उदीरक जीव सब जीवोंके अनन्तवें भागप्रमाण हैं। अजघन्य स्थितिके उदीरक जीव अनन्त बहुभागप्रमाण हैं। सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व, स्त्रीवेद, पुरुषवेद, बारह कषाय, भय और जुगुप्साकी जघन्य स्थितिके उदीरक जीव असंख्यातवें भागप्रमाण हैं। अजघन्य स्थितिके उदीरक जीव असंख्यात बहुभागप्रमाण हैं। सब नारकी, सब पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च, सब मनुष्य और सब देवोंमें भंग उत्कृष्टके समान है।

§ ६४९. तिर्यञ्चोंमें मिथ्यात्व, नपुंसकवेद और चार नोकषायकी जघन्य स्थितिके उदीरक जीव अनन्तवें भागप्रमाण हैं। अजघन्य स्थितिके उदीरक जीव अनन्त बहुभागप्रमाण हैं। सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व, सोलह कषाय, स्त्रीवेद, पुरुषवेद, भय और जुगुप्साकी जघन्य स्थितिके उदीरक जीव असंख्यातवें भागप्रमाण हैं। अजघन्य स्थितिके उदीरक जीव असंख्यात बहुभागप्रमाण हैं। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणातक जानना चाहिए।

§ ६५०. परिमाण दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट। उत्कृष्टका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मिथ्यात्व, सोलह कषाय और सात नोकषायकी उत्कृष्ट स्थितिके उदीरक जीव कितने हैं? असंख्यात हैं। अनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरक जीव कितने हैं? अनन्त हैं। सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व, स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरक जीव कितने हैं? असंख्यात हैं।

§ ६५१. सब नारकी, सब पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च, मनुष्य अपर्याप्त, देवगतिके देव और भवनवासियोंसे लेकर सहस्रार कल्पतकके देवोंमें सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरक जीव कितने हैं? असंख्यात हैं। मनुष्योंमें चौबीस प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिके उदीरक जीव संख्यात हैं। अनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरक जीव कितने हैं? असंख्यात हैं। सम्यक्त्व,

सम्म०-सम्मामि०-इत्थि-पुरिस० उक्क० अणुक्क० केत्ति० ? संखेज्जा। मणुसपज्ज०-मणुसिणी-सव्वट्ठदेवेसु सव्वपय० उक्क० अणुक्क० केत्ति० ? संखेज्जा। आणदादि जाव अवराजिदा त्ति सव्वपय० उक्क० केत्ति० ? संखेज्जा। अणुक्क० केत्ति० ? असंखेज्जा। एवं जाव०।

§ ६५२. जहण्णए पयदं। दुविहो णि०—ओघेण आदेसेण य। ओघेण मिच्छ०-चदुणोक०, जह० ट्ठिदिउदी० केत्ति० ? असंखेज्जा। अजह० ट्ठिदिउदी० केत्ति० अणंता। णवुंस०-चदुसंजल० जह० ट्ठिदिउदी० केत्ति० ? संखेज्जा। अजह० केत्ति० ? अणंता। सम्म०-इत्थिवे०-पुरिसवे० जह० ट्ठिदिउदी० केत्तिया ? संखेज्जा। अजह० असंखेज्जा। सम्मामि० जह० अजह० केत्ति० ? असंखेज्जा। बारसक०-भय-दुगुंछा० जह० अजह० ट्ठिदिउदी० केत्ति० ? अणंता।

§ ६५३. आदेसेण णेरइय० सव्वपय० जह० अजह० केत्ति० ? असंखेज्जा। णवरि सम्म० जह० केत्ति० ? संखेज्जा। एवं पढमाए। विदियादि जाव छट्ठि त्ति दंसणतिय० जह० अजह० असंखेज्जा। सेसपयडी जह० केत्तिया ? संखेज्जा। अजह० के० ? असंखेज्जा। सत्तमाए सव्वपय० जह० अजह० असंखेज्जा।

सम्यग्मिथ्यात्व, स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरक जीव कितने हैं ? संख्यात हैं। मनुष्य पर्याप्त, मनुष्यिनी और सर्वार्थसिद्धिके देवोंमें सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरक जीव कितने हैं ? संख्यात हैं। आनतकल्पसे लेकर अपराजित विमानतकके देवोंमें सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिके उदीरक जीव कितने हैं ? असंख्यात हैं। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणातक जानना चाहिए।

§ ६५२. जघन्यका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मिथ्यात्व और चार नोकषायकी जघन्य स्थितिके उदीरक जीव कितने हैं ? असंख्यात हैं। अजघन्य स्थितिके उदीरक जीव कितने हैं ? अनन्त हैं। नपुंसकवेद और चार संज्वलनकी जघन्य स्थितिके उदीरक जीव कितने हैं ? संख्यात हैं। अजघन्य स्थितिके उदीरक जीव कितने हैं ? अनन्त हैं। सम्यक्त्व, स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी जघन्य स्थितिके उदीरक जीव कितने हैं ? संख्यात हैं। अजघन्य स्थितिके उदीरक जीव असंख्यात हैं। सम्यग्मिथ्यात्वकी जघन्य और अजघन्य स्थितिके उदीरक जीव कितने हैं ? असंख्यात हैं। बारह कषाय, भय और जुगुप्साकी जघन्य और अजघन्य स्थितिके उदीरक जीव कितने हैं ? अनन्त हैं।

§ ६५३. आदेशसे नारकियोंमें सब प्रकृतियोंकी जघन्य और अजघन्य स्थितिके उदीरक जीव कितने हैं ? असंख्यात हैं। इतनी विशेषता है कि सम्यक्त्वकी जघन्य स्थितिके उदीरक जीव कितने हैं ? संख्यात हैं। इसीप्रकार प्रथम पृथिवीमें जानना चाहिए। दूसरीसे लेकर छटी पृथिवी तकके नारकियोंमें तीन दर्शनमोहनीयकी जघन्य और अजघन्य स्थितिके उदीरक जीव असंख्यात हैं। शेष प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके उदीरक जीव कितने हैं ? संख्यात हैं। अजघन्य स्थितिके उदीरक जीव कितने हैं ? असंख्यात हैं। सातवीं पृथिवीके नारकियोंमें सब

---

१. आ०प्रतौ असंखेज्जा इति पाठः।

§ ६५४. तिरिक्खेसु सोलसक०-भय-दुगुंछा० जह० अजह० केत्ति० ? अणंता । मिच्छ०-णवुंस०-चदुणोक० जह० केत्ति० ? असंखेज्जा । अजह० केत्ति० ? अणंता । सम्म० ओघं । सम्मामि०-इत्थिवे०-पुरिसवे० जह० अजह० केत्ति० ? असंखेज्जा । पंचिंदियतिरिक्खतिय० सम्म० ओघं । सेसपयडी० जह० अजह० केत्ति० ? असंखेज्जा । णवरि पज्जत्त० इत्थिवे० णत्थि । जोणिणीसु पुरिस०-णवुंस० णत्थि । सम्म० सम्मामि०भंगो । पंचिंदितिरिक्खअपज्ज०-मणुसअपज्ज०-भवण०-वाणवें० सव्वपयडी० जह० अजह० संखेज्जा ।

§ ६५५. मणुसेसु मिच्छ०-णवुंस०-चदुसंज०-चदुणोक० जह० संखेज्जा । अज० केत्ति० ? असंखेज्जा । सम्म०-सम्मामि०-इत्थिवे०-पुरिसवे० जह० अजह० संखेज्जा । बारसक०-भय-दुगुंछा० जह० अजह० असंखेज्जा । मणुसपज्ज०-मणुसिणी-सव्वट्ठदेवेसु सव्वपय० जह० अजह० संखेज्जा ।

§ ६५६. देवेसु सम्म० ओघं । सेसपय० जह० अजह० केत्तिया ? असंखेज्जा । जोदिसियादि जाव णवगेवज्जा त्ति दंसणतियस्स देवोघं । सेसपय०

प्रकृतियोंकी जघन्य और अजघन्य स्थितिके उदीरक जीव असंख्यात हैं ।

§ ६५४. तिर्यञ्चोंमें सोलह कषाय, भय और जुगुप्साकी जघन्य और अजघन्य स्थितिके उदीरक जीव कितने हैं ? अनन्त हैं । मिथ्यात्व, नपुंसकवेद और चार नोकषायकी जघन्य स्थितिके उदीरक जीव कितने हैं ? असंख्यात हैं । अजघन्य स्थितिके उदीरक जीव कितने हैं ? अनन्त हैं । सम्यक्त्वका भंग ओघके समान है । सम्यग्मिथ्यात्व, स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी जघन्य और अजघन्य स्थितिके उदीरक जीव कितने हैं ? असंख्यात हैं । पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च-त्रिकमें सम्यक्त्वका भंग ओघके समान है । शेष प्रकृतियोंकी जघन्य और अजघन्य स्थितिके उदीरक जीव कितने हैं ? असंख्यात हैं । इतनी विशेषता है कि पर्याप्तकोंमें स्त्रीवेदकी उदीरणा नहीं है । तथा योनिनीतिर्यञ्चोंमें पुरुषवेद और नपुंसकवेदकी उदीरणा नहीं है । तथा इनमें सम्यक्त्वका भंग सम्यग्मिथ्यात्वके समान है । पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त, मनुष्य अपर्याप्त, भवनवासी और व्यन्तर देवोंमें सब प्रकृतियोंकी जघन्य और अजघन्य स्थितिके उदीरक जीव संख्यात हैं ।

§ ६५५. मनुष्योंमें मिथ्यात्व, नपुंसकवेद, चार संज्वलन और चार नोकषायकी जघन्य स्थितिके उदीरक जीव संख्यात हैं । अजघन्य स्थितिके उदीरक जीव कितने हैं ? असंख्यात हैं । सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व, स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी जघन्य और अजघन्य स्थितिके उदीरक जीव संख्यात हैं । बारह कषाय, भय और जुगुप्साकी जघन्य और अजघन्य स्थितिके उदीरक जीव असंख्यात हैं । मनुष्य पर्याप्त, मनुष्यिनी और सर्वार्थसिद्धिके देवोंमें सब प्रकृतियोंकी जघन्य और अजघन्य स्थितिके उदीरक जीव संख्यात हैं ।

§ ६५६. देवोंमें सम्यक्त्वका भंग ओघके समान है । शेष प्रकृतियोंकी जघन्य और अजघन्य स्थितिके उदीरक जीव कितने हैं ? असंख्यात हैं । ज्योतिषियोंसे लेकर नौ ग्रैवेयक तकके देवोंमें तीन दर्शनमोहनीयका भंग सामान्य देवोंके समान है । शेष प्रकृतियोंकी जघन्य

जह० केत्ति० ? संखेज्जा। अजह० केत्ति० असंखेज्जा। णवरि जोदिसि० सम्म० जह० अजह० ट्ठिदिउदी० केत्तिया ? असंखेज्जा। अणुदिसादि अवराजिदा त्ति सम्म०-बारसक०-सत्तणोक० जह० संखेज्जा। अजह० असंखेज्जा। एवं जाव०।

§ ६५७. खेत्तं दुविहं—जह० उक्क०। उक्कस्से पयदं। दुविहो णि०—ओघेण आदेसेण य। ओघेण मिच्छत्त-सोलसक०-सत्तणोक० उक्क० ट्ठिदिउदी० लोगस्स असंखे०भागे। अणुक० सव्वलोगे। सम्म०-सम्मामि०-इत्थिवे०-पुरिसवे० उक्क० अणुक्क० लोग० असं०भागे। एवं तिरिक्खा०। सेसगदीसु सव्वपय० उक्क० अणुक० लोग० असंखे०भागे। एवं जाव०।

§ ६५८. जहण्णए पयदं। दुविहो णि०—ओघेण आदेसेण य। ओघेण

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

स्थितिके उदीरक जीव कितने हैं ? संख्यात हैं। अजघन्य स्थितिके उदीरक जीव कितने हैं ? असंख्यात हैं। इतनी विशेषता है कि ज्योतिषियोंमें सम्यक्त्वकी जघन्य और अजघन्य स्थितिके उदीरक जीव कितने हैं ? असंख्यात हैं। अनुदिशसे लेकर अपराजित विमानतकके देवोंमें सम्यक्त्व, बारह कषाय और सात नोकषायकी जघन्य स्थितिके उदीरक जीव संख्यात हैं। अजघन्य स्थितिके उदीरक जीव असंख्यात हैं। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणातक जानना चाहिए।

§ ६५७. क्षेत्र दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट। उत्कृष्टका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मिथ्यात्व, सोलह कषाय और सात नोकषायोंकी उत्कृष्ट स्थितिके उदीरक जीवोंका क्षेत्र लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण है। अनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरक जीवोंका क्षेत्र सर्व लोकप्रमाण है। सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व, स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरक जीवोंका क्षेत्र लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण है। इसीप्रकार तिर्यञ्चोंमें जानना चाहिए। शेष गतियोंमें सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंका क्षेत्र लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण है। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणातक जानना चाहिए।

विशेषार्थ—जो संज्ञी पञ्चेन्द्रिय मिथ्यादृष्टि पर्याप्त जीव उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करते हैं वे ही अपने-अपने स्वामित्वके अनुसार मिथ्यात्वादि प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिकी उदीरणा करते हैं। यतः इनका क्षेत्र लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण है, अतः यह उक्तप्रमाण कहा है। इन प्रकृतियोंकी अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणा एकेन्द्रियादि जीवोंमें भी होती है और उनका क्षेत्र सर्व लोक है, अतः इनकी अनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंका क्षेत्र सर्व लोकप्रमाण कहा है। रहीं सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व, स्त्रीवेद और पुरुषवेद ये चार प्रकृतियाँ सो इनकी उदीरणा यथायोग्य पञ्चेन्द्रिय जीवोंमें ही सम्भव है, यतः इन जीवोंका क्षेत्र लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण है, अतः उक्त प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंका क्षेत्र लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण कहा है। शेष कथन सुगम है।

§ ६५८. जघन्यका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे

---

१. ता०-आ०प्रत्योः मिच्छत्त इति पाठः नास्ति।

ओघेण मिच्छ०-चदुसंज०-णवुंस०-चदुणोक० जह० ट्ठिदिउदी० लोग० असंखे०-भागे। अजह० सव्वलोगे। सम्म०-सम्मामि०-इत्थिवे०-पुरिसवे० जह० अजह० लोगस्स असंखे०। बारसक०-भय-दुगुं० जह० लोगस्स संखेज्जदिभागे[1]। अजह० सव्वलोगे।

§ ६५९. तिरिक्खेसु मिच्छ०-णवुंस०-चदुणोक० जह० लोगस्स असंखे०-भागे। अजह० सव्वलोगे०। सम्म०-सम्मामि०-इत्थिवे०-पुरिसवे० जह० अजह० लोग० असंखे०भागे। सोलसक०-भय-दुगुंछा० जह० लोग० संखे०भागे। अजह०

मिथ्यात्व, चार संज्वलन, नपुंसकवेद और चार नोकषायोंकी जघन्य स्थितिके उदीरकोंका क्षेत्र लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण है। अजघन्य स्थितिके उदीरकोंका क्षेत्र सर्व लोकप्रमाण है। सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व, स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी जघन्य और अजघन्य स्थितिके उदीरकोंका क्षेत्र लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण है। बारह कषाय, भय और जुगुप्साकी जघन्य स्थितिके उदीरकोंका क्षेत्र लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण है। अजघन्य स्थितिके उदीरकोंका क्षेत्र सर्व लोकप्रमाण है।

विशेषार्थ—मिथ्यात्वकी उपशमसम्यक्त्वके अभिमुख जीवके, चार संज्वलन और नपुंसकवेदकी गुणस्थान प्रतिपन्न जीवके तथा चार नोकषायोंकी जो हतसमुत्पत्तिक बादर एकेन्द्रिय जीव संज्ञी पञ्चेन्द्रियोंमें उत्पन्न होता है उसके यथास्थान अपने-अपने स्वामित्वके अनुसार जघन्य स्थितिउदीरणा होती है, यतः ऐसे जीवोंका क्षेत्र लोकके असंख्यातवें भाग-प्रमाण है, अतः उक्त प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके उदीरक जीवोंका क्षेत्र लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण कहा है। इनकी अजघन्य स्थितिके उदीरक जीवोंका क्षेत्र सर्व लोकप्रमाण है यह स्पष्ट ही है। सम्यक्त्व आदि चार प्रकृतियोंकी जघन्य और अजघन्य स्थितिकी उदीरणा अपने-अपने स्वामित्वके अनुसार पञ्चेन्द्रिय जीव ही करते हैं, यतः इनका क्षेत्र लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण है, अतः उक्त प्रकृतियोंकी जघन्य और अजघन्य स्थितिके उदीरकोंका क्षेत्र भी उक्तप्रमाण कहा है। बारह कषाय, भय और जुगुप्साकी जघन्य स्थितिउदीरणा बादर एकेन्द्रिय जीव करते हैं और इन जीवोंका क्षेत्र लोकके संख्यातवें भागप्रमाण है, अतः उक्त प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके उदीरकोंका क्षेत्र उक्तप्रमाण कहा है। इनकी अजघन्य स्थितिके उदीरकोंका क्षेत्र सर्व लोकप्रमाण है यह स्पष्ट ही है। इसीप्रकार गतिमार्गणाके सब भेदोंमें अपने-अपने स्वामित्वको जानकर क्षेत्र घटित कर लेना चाहिए। सुगम होनेसे यहाँ निर्देश नहीं कर रहे हैं।

§ ६५९. तिर्यञ्चोंमें मिथ्यात्व, नपुंसकवेद और चार नोकषायोंकी जघन्य स्थितिके उदीरक जीवोंका क्षेत्र लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण है। अजघन्य स्थितिके उदीरक जीवोंका क्षेत्र सर्व लोकप्रमाण है। सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व, स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी जघन्य और अजघन्य स्थितिके उदीरक जीवोंका क्षेत्र लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण है। सोलह कषाय, भय और जुगुप्साकी जघन्य स्थितिके उदीरक जीवोंका क्षेत्र लोकके संख्यातवें भागप्रमाण है। अजघन्य

1. आ०प्रतौ असंखेज्जदिभागे इति पाठः।

सव्वलोगे । सेसगदीसु सव्वपय० जह० अजह० लोग० असंखे०भागे । एवं जाव० ।

§ ६६०. पोसणं दुविहं—जह० उक्क० । उक्कस्से पयदं । दुविहो णि०—ओघेण आदेसेण य । ओघेण मिच्छ०-सोलसक०-छण्णोक० उक्क० ट्ठिदिउदी० लोग० असंखे०भागो अट्ठ-तेरहचोद्दस० । अणुक्क० सव्वलोगो । सम्म०-सम्मामि० उक्क० अणुक्क० लोग० असंखे०भागो अट्ठचोद्दस० । इत्थिवे०-पुरिसवे० उक्क० लोगस्स असंखे० अट्ठचोद्दस० । अणुक्क० लोग० असंखे०भागो अट्ठचो० सव्वलोगो वा । णवुंसय० उक्क० ट्ठिदिउदी० लोग० असंखे०भागो तेरहचोद्दस० । अणुक्क० सव्वलोगो ।

स्थितिके उदीरक जीवोंका क्षेत्र सर्व लोकप्रमाण है । शेष गतियोंमें सब प्रकृतियोंकी जघन्य और अजघन्य स्थितिके उदीरकोंका क्षेत्र लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण है । इसीप्रकार अनाहारक मार्गणातक जानना चाहिए ।

§ ६६०. स्पर्शन दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट । उत्कृष्टका प्रकरण है । उसकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे मिथ्यात्व सोलह, कषाय और छह नोकषायकी उत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्रका तथा त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ और कुछ कम तेरह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है । अनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंने सर्व लोकप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है । सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंने लोकके असंख्यातवें भाग और त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है । स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी उत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंने लोकके असंख्यातवें भाग और त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है । अनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंने लोकके असंख्यातवें भाग तथा त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ भाग और सर्व लोकप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है । नपुंसकवेदकी उत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंने लोकके असंख्यातवें भाग और त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम तेरह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है । अनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंने सर्व लोकप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है ।

विशेषार्थ—जो संज्ञी पञ्चेन्द्रिय पर्याप्त मिथ्यादृष्टि जीव मिथ्यात्व और सोलह कषायका उत्कृष्ट स्थिति बन्धकर एक आवलि काल बाद उक्त कर्मोंकी उदीरणा करते हैं उनके उक्त कर्मोंकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणा होती है । अतः ऐसे जीवोंका वर्तमान स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और अतीत स्पर्शन त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ और कुछ कम तेरह भागप्रमाण पाया जाता है, अतः उक्त प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंका स्पर्शन उक्तप्रमाण कहा है । इनकी अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरणा एकेन्द्रियादि जीव भी करते हैं और उनका स्पर्शन सर्व लोकप्रमाण है, अतः इनकी अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरकोंका स्पर्शन सर्व लोकप्रमाण कहा है । छह नोकषायोंकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंकी अपेक्षा भी स्पर्शन उक्त प्रकारसे घटित कर लेना चाहिए । स्वामित्व सम्बन्धी विशेषता स्वामित्व अनुयोगद्वारसे जान लेनी चाहिए । यतः वेदकसम्यग्दृष्टि और सम्यग्मिथ्यादृष्टिका वर्तमान स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और अतीत स्पर्शन त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ भागप्रमाण है, अतः सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिउदीरकोंका स्पर्शन उक्तप्रमाण कहा

§ ६६१. आदेसेण णेरइय० मिच्छ०-सोलसक०-सत्तणोक० उक्क० अणुक्क० लोग० असंखे०भागो छचोद्दस० । सम्म०-सम्मामि० उक्क० अणुक्क० खेत्तं । एवं बिदियादि सत्तमा त्ति । णवरि सगपोसणं कायव्वं । पढमाए खेत्तं ।

§ ६६२. तिरिक्खेसु मिच्छ०-सोलसक०-णवुंस०-अरदि-सोग०-भय-दुगुंछा० उक्क० ट्ठिदिउदी० लोग० असंखे०भागो छचोद्दस० । अणुक्क० सव्वलोगो । हस्स-रदि० उक्क० ट्ठिदिउदी० लोग० असंखे०भागो [1]अणुक० सव्वलोगो । एवमित्थिवे०-पुरिसवे० । णवरि अणुक्क० लोग० असंखे०भागो सव्वलोगो वा । सम्म० उक्क० ट्ठिदिउदी०

है । स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणा अपने स्वामित्वके अनुसार मनुष्य, तिर्यञ्च और देवगतिके जीव करते हैं । अतः इनका वर्तमान स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और अतीत स्पर्शन त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ आठ भागप्रमाण ही बनता है, अतः इनकी उत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंका उक्त प्रमाण स्पर्शन कहा है । किन्तु इन कर्मोंकी अनुत्कृष्ट स्थिति-उदीरणाकी अपेक्षा विचार किया जाता है तो उक्त स्पर्शनके साथ सर्व लोकप्रमाण स्पर्शन भी बन जाता है, अतः इन कर्मोंकी अनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंका स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भाग तथा त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ भाग और सर्व लोकप्रमाण कहा है । नपुंसकवेदकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणा अपने स्वामित्वके अनुसार यतः चारों गतिके जीव करते हैं, अतः इस प्रकृतिके उत्कृष्ट स्थितिउदीरकोंका वर्तमान स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और अतीत स्पर्शन त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे मध्यलोकसे नीचे छह और ऊपर सात इसप्रकार कुछ कम तेरह भागप्रमाण बननेसे वह उक्तप्रमाण कहा है । नपुंसकवेदकी अनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरक जीव सर्व लोकमें पाये जाते हैं, इसलिए वह सर्व लोकप्रमाण कहा है । आगे चारों गतियों और उनके अवान्तर भेदोंमें स्पर्शनका विचार अपने-अपने स्वामित्व और स्पर्शनको जान कर घटित कर लेना चाहिए । सुगम होनेसे उसका हमने अलगसे निर्देश नहीं किया है ।

§ ६६१. आदेशसे नारकियोंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय और सात नोकषायोंकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग और त्रसनालीके चौदह भागोंमें कुछ कम छह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है । सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है । इसीप्रकार दूसरी पृथिवीसे लेकर सातवीं पृथिवीतक जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि अपना-अपना स्पर्शन कहना चाहिए । पहिली पृथिवीमें क्षेत्रके समान भंग है ।

§ ६६२. तिर्यञ्चोंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय, नपुंसकवेद, अरति, शोक, भय और जुगुप्साकी उत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंने लोकके असंख्यातवें भाग और त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम छह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है । अनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंने सर्व लोकप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है । हास्य और रतिकी उत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है और अनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंने सर्व लोकप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है । इसीप्रकार स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी अपेक्षा स्पर्शन जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि इनकी अनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंने लोकके असंख्यातवें

1. ता०प्रतौ सव्वलोगो ।·······आदेसेण इति पाठः ।

खेत्तं । अणुक्क० लोग० असंखे०भागो छचोद्दस० । सम्मामि० खेत्तं । एवं पंचिंदियतिरिक्खतिए । णवरि जम्हि सव्वलोगो तम्हि लोग० असंखे०भागो सव्वलोगो वा । पज्जत्त० इत्थिवेदो णत्थि । जोणिणीसु पुरिसवे०-णवुंस० णत्थि । पंचिंदियतिरिक्खअपज्ज०-मणुसअपज्ज० सव्वपय० उक्क० ट्ठिदिउदी० लोग० असंखे०भागो । अणुक्क० लोग० असंखे०भागो सव्वलोगो वा ।

§ ६६३. मणुसतिए सम्म०-सम्मामि० खेत्तं । सेसपय० उक्क० खेत्तं । अणुक्क० लोग० असंखे०भागो सव्वलोगो वा ।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

§ ६६४. देवेसु मिच्छ०-सोलसक०-छण्णोक० उक्क० अणुक्क० ट्ठिदिउदी० लोग० असंखे०भागो अट्ठ-णवचोद्द० । सम्म०-सम्मामि० उक्क० अणुक्क० ट्ठिदिउदी० लोग० असंखे०भागो अट्ठचोद्द० । इत्थिवे०-पुरिसवे० उक्क० लोग० असंखे०भागो अट्ठचोद्दस० दे० । अणुक्क० लोग० असंखे०भागो अट्ठ-णवचोद्दस० दे० । एवं सोहम्मीसाणे । भवण०-वाणवें०-जोदिसि० एवं चेव । णवरि सगपोसणं ।

भागप्रमाण और सर्व लोकप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। सम्यक्त्वकी उत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। अनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंने लोकके असंख्यातवें भाग और त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम छह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। सम्यग्मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। इसीप्रकार पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि जहाँ सर्व लोक कहा है वहाँ लोकका असंख्यातवां भाग और सर्व लोक कहना चाहिए। पर्याप्तकोंमें स्त्रीवेदकी उदीरणा नहीं है तथा योनिनियोंमें पुरुषवेद और नपुंसकवेदकी उदीरणा नहीं है। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्तकोंमें सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। तथा अनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंने लोकके असंख्यातवें भाग और सर्व लोकप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है।

§ ६६३. मनुष्यत्रिकमें सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। शेष प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। अनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंने लोकके असंख्यातवें भाग और सर्व लोकप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है।

§ ६६४. देवोंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय और छह नोकषायोंकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंने लोकके असंख्यातवें भाग और त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ और नौ भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंने लोकके असंख्यातवें भाग और त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी उत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंने लोकके असंख्यातवें भाग और त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंने लोकके असंख्यातवें भाग और त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ और नौ भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। इसीप्रकार सौधर्म और ऐशानकल्पमें जानना चाहिए। भवनवासी, व्यन्तर और ज्योतिषी देवोंमें इसीप्रकार जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि अपना-अपना स्पर्शन कहना चाहिए।

§ ६६५. सणक्कुमारादि सहस्सार त्ति सव्वपयडी० उक्क० अणुक्क० ट्ठिदिउदी० लोग० असंखे०भागो अट्ठचोद्द०। आणदादि अच्चुदा त्ति सव्वपयडी० उक्क० ट्ठिदिउदी० खेत्तं। अणुक्क० लोग० असंखे०भागो छचोद्दस०। उवरि खेत्तं। एवं जाव०।

§ ६६६. जहण्णए पयदं। दुविहो णि०—ओघेण आदेसेण य। ओघेण मिच्छ०-चदुसंजल०-णवुंस०-चदुणोक० जह० अजह० खेत्तं। णवरि मिच्छ० जह० लोग० असंखे०भागो अट्ठचोद्दस०। बारसक०-भय-दुगुंछा० जह० लोगस्स संखे०भागो[1]। अजह० सव्वलोगो। सम्म० जह० खेत्तं। अजह० लोग० असंखे०भागो अट्ठचोद्दस०। सम्मामि० जह० अजह० लोग० असंखे०भागो अट्ठचोद्दस०। इत्थिवे०-पुरिसवे० जह० खेत्तं। अजह० लोग० असंखे०भागो अट्ठचोद्दस० दे० सव्वलोगो वा।

§ ६६५. सनत्कुमारकल्पसे लेकर सहस्रार कल्पतकके देवोंमें सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंने लोकके असंख्यातवें भाग और त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। आनतकल्पसे लेकर अच्युत कल्पतकके देवोंमें सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। अनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंने लोकके असंख्यातवें भाग और त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम छह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। ऊपर स्पर्शन क्षेत्रके समान है। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

§ ६६६. जघन्यका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मिथ्यात्व चार संज्वलन, नपुंसकवेद और चार नोकषायोंकी जघन्य और अजघन्य स्थितिके उदीरकोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। इतनी विशेषता है कि मिथ्यात्वकी जघन्य स्थितिके उदीरकोंने लोकके असंख्यातवें भाग और त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। बारह कषाय, भय और जुगुप्साकी जघन्य स्थितिके उदीरकोंने लोकके संख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अजघन्य स्थितिके उदीरकोंने सर्व लोकप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। सम्यक्त्वकी जघन्य स्थितिके उदीरकोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। अजघन्य स्थितिके उदीरकोंने लोकके असंख्यातवें भाग और त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। सम्यग्मिथ्यात्वकी जघन्य और अजघन्य स्थितिके उदीरकोंने लोकके असंख्यातवें भाग और त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी जघन्य स्थितिके उदीरकोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। अजघन्य स्थितिके उदीरकोंने लोकके असंख्यातवें भाग, त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ भाग और सर्व लोकप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है।

विशेषार्थ—चार संज्वलन और नपुंसकवेदकी जघन्य स्थितिउदीरणा उपशमश्रेणि या क्षपकश्रेणिमें अपने-अपने स्वामित्वके अनुसार होती है तथा हास्यादि चारकी जघन्य स्थितिउदीरणा अपने स्वामित्वके अनुसार संज्ञी पञ्चेन्द्रिय पर्याप्तकोंके होती है। यतः इनकी

1. आ०प्रतौ असंखे०भागो इति पाठः।

§ ६६७. आदेसेण णेरइय० मिच्छ०-सोलसक०-सत्तणोक० जह० अजह० लोग० असंखे०भागो छचोद्दस० । सम्म०-सम्मामि० जह० अजह० खेत्तं । एवं

जघन्य स्थितिके उदीरकोंका स्पर्शन मात्र लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण प्राप्त होता है। तथा इनकी अजघन्य स्थितिउदीरणा एकेन्द्रियादि जीवोंके भी होती है, इसलिए इनकी अजघन्य स्थितिके उदीरकोंका सर्व लोकप्रमाण स्पर्शन प्राप्त होता है। इनकी जघन्य और अजघन्य स्थितिके उदीरकोंका क्षेत्र भी क्रमसे लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और सर्व लोक है, अतः यहाँ इनकी जघन्य और अजघन्य स्थितिके उदीरकोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान कहा है। मिथ्यात्वकी अजघन्य स्थितिके उदीरकोंका स्पर्शन तो उनके क्षेत्रके समान सर्व लोक ही है। मात्र जघन्य स्थितिके उदीरकोंके स्पर्शनमें फरक है। बात यह है कि मिथ्यात्वकी जघन्य स्थितिउदीरणा उपशमसम्यक्त्वके सन्मुख हुआ जीव प्रथम स्थितिमें एक समय अधिक एक आवलिप्रमाण स्थितिके शेष रहनेपर करता है, यतः ऐसे जीवोंका अतीत स्पर्शन त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ भागप्रमाण प्राप्त होता है अतः मिथ्यात्वकी जघन्य स्थितिके उदीरकोंका वर्तमान स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और अतीत स्पर्शन त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ भागप्रमाण कहा है। बारह कषाय, भय और जुगुप्साकी जघन्य स्थितिउदीरणा अपने स्वामित्वके अनुसार बादर एकेन्द्रिय जीव करते हैं, यतः इनका स्पर्शन लोकके संख्यातवें भागप्रमाण है, अतः उक्त प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके उदीरकोंका स्पर्शन लोकके संख्यातवें भागप्रमाण कहा है। इनकी अजघन्य स्थितिके उदीरकोंका स्पर्शन सर्व लोकप्रमाण है यह स्पष्ट ही है। सम्यक्त्वकी जघन्य स्थितिउदीरणा दर्शनमोहनीयका क्षपक जीव सम्यक्त्वकी स्थितिके एक समय अधिक एक आवलि शेष रहनेपर करता है। यतः ऐसे जीवोंका स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण ही प्राप्त होता है, क्षेत्र भी इतना ही है, अतः इसे क्षेत्रके समान कहा है। वेदकसम्यग्दृष्टियोंके स्पर्शनको देखते हुए सम्यक्त्वकी अजघन्य स्थितिके उदीरकोंका वर्तमान स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और अतीत स्पर्शन त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ भागप्रमाण कहा है। सम्यग्मिथ्यात्वकी उदीरणा सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीव करते हैं, अतः उनके स्पर्शनके अनुसार सम्यग्मिथ्यात्वकी जघन्य और अजघन्य स्थितिके उदीरकोंका वर्तमान स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और अतीत स्पर्शन त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ भागप्रमाण कहा है। स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी जघन्य स्थितिउदीरणा उपशामक या क्षपकके यथासम्भव होती है। यतः ऐसे जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान ही होता है, अतः इनकी जघन्य स्थितिके उदीरकोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान कहा है। तथा इनकी अजघन्य स्थितिउदीरणा तिर्यञ्चादि तीन गतिमें भी सम्भव है। इसी तथ्यको ध्यानमें रखकर इनकी अजघन्य स्थितिके उदीरकोंका वर्तमान स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भाग और अतीत स्पर्शन त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ भाग और सर्व लोकप्रमाण कहा है। आगे चारों गतियोंमें और उनके अवान्तर भेदोंमें अपने-अपने स्वामित्वको और स्पर्शनको जानकर प्रकृतमें स्पर्शन घटित कर लेना चाहिए। कोई विशेष न होनेसे यहाँ उसका अलगसे निर्देश नहीं किया है।

§ ६६७. आदेशसे नारकियोंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय और सात नोकषायोंकी जघन्य और अजघन्य स्थितिके उदीरकोंने लोकके असंख्यातवें भाग और त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम छह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी जघन्य और अजघन्य स्थितिके उदीरकोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। इसीप्रकार दूसरी पृथिवीसे लेकर

बिदियादि जाव सत्तमा त्ति । णवरि सगपोसणं । पढमाए खेत्तं ।

§ ६६८. तिरिक्खेसु मिच्छ०-सोलसक०-सत्तणोक०-सम्मामि० जह० अजह० खेत्तं । इत्थिवे०-पुरिसवे० जह० खेत्तं । अजह० लोग० असंखे०भागो सव्वलोगो वा । सम्म० जह० खेत्तं । अजह० लोग० असंखे०भागो छचोद्दस० ।

§ ६६९. पंचिंदियतिरिक्खतिए सम्म०-सम्मामि० तिरिक्खोघं । सेसपय० जह० खेत्तं । अज० लोग० असंखे०भागो सव्वलोगो वा । पंचिंदियतिरिक्खअपज्ज०-मणुसअपज्ज० सव्वपयडी० जह० खेत्तं । अजह० लोग० असंखे०भागो सव्वलोगो वा । मणुसतिय० पंचिंदियतिरिक्खतियभंगो । णवरि सम्म० जह० अजह० लोग० असंखे०भागो ।

§ ६७०. देवेसु सोलसक०-अट्ठणोक० जह० खेत्तं । अजह० लोग० असंखे०-भागो अट्ठ-णवचोद्दस० । एवं मिच्छ० । णवरि जह० अट्ठचोद्दस० । सम्म० जह० खेत्तं । अजह० लोग० असंखे०भागो अट्ठचोद्दस० । सम्मामि० जह० अजह० लोग०

सातवीं पृथिवीतक जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि अपना-अपना स्पर्शन कहना चाहिए। पहली पृथिवीमें स्पर्शन क्षेत्रके समान है।

§ ६६८. तिर्यञ्चोंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय, सात नोकषाय और सम्यग्मिथ्यात्वकी जघन्य और अजघन्य स्थितिके उदीरकोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी जघन्य स्थितिके उदीरकोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। अजघन्य स्थितिके उदीरकोंने लोकके असंख्यातवें भाग और सर्व लोकप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। सम्यक्त्वकी जघन्य स्थितिके उदीरकोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। अजघन्य स्थितिके उदीरकोंने लोकके असंख्यातवें भाग और त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम छह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है।

§ ६६९. पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकमें सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वको जघन्य और अजघन्य स्थितिके उदीरकोंका भंग सामान्य तिर्यञ्चोंके समान है। शेष प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके उदीरकोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। अजघन्य स्थितिके उदीरकोंने लोकके असंख्यातवें भाग और सर्व लोकप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्तकोंमें सब प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके उदीरकोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। अजघन्य स्थितिके उदीरकोंने लोकके असंख्यातवें भाग और सर्व लोकप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। मनुष्यत्रिकमें पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकके समान भंग है। इतनी विशेषता है कि सम्यक्त्वकी जघन्य और अजघन्य स्थितिके उदीरकोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है।

§ ६७०. देवोंमें सोलह कषाय और आठ नोकषायोंकी जघन्य स्थितिके उदीरकोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। अजघन्य स्थितिके उदीरकोंने लोकके असंख्यातवें भाग तथा त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ और नौ भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। इसीप्रकार मिथ्यात्वकी अपेक्षा स्पर्शन जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इसकी जघन्य स्थितिके उदीरकोंने त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। सम्यक्त्वकी जघन्य स्थितिके उदीरकोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। अजघन्य स्थितिके उदीरकोंने लोकके

असंखे०भागो अट्ठचोद्दस० । एवं भवण०-वाणवें० । णवरि सगपोसणं । सम्म० सम्मामि०भंगो । जोदिसि० भवण०भंगो । णवरि अणंताणु०४ जह० अद्धुट्ठ-अट्ठ-चोद्दस० । अजह० लोग० असंखे०भागो अद्धुट्ठ-अट्ठ-णवचोद्दस० ।

§ ६७१. सोहम्मीसाणे देवोघं । णवरि अणंताणु०चउक्क० जह० अट्ठचोद्दस० देसूणा । अजह० अट्ठ-णवचोद्दस० देसूणा ।

§ ६७२. सणक्कुमारादि जाव सहस्सार त्ति मिच्छ०-सम्मामि०-अणंताणु०-चउक्क० जह० अज० लोग० असंखे०भागो अट्ठचोद्दस० देसूणा । सम्म०-बारसक०-सत्तणोक० जह० खेत्तं । अजह० लोग० असंखे०भागो अट्ठचोद्दस० ।

§ ६७३. आणदादि जाव अच्चुदा त्ति सम्म०-सोलसक०-सत्तणोक० जह० खेत्तं । अजह० लोग० असंखे०भागो छचोद्दस० । मिच्छ०-सम्मामि० जह० अजह०

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

असंख्यातवें भाग और त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। सम्यग्मिथ्यात्वकी जघन्य और अजघन्य स्थितिके उदीरकोंने लोकके असंख्यातवें भाग और त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। इसीप्रकार भवनवासी और व्यन्तर देवोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि अपना-अपना स्पर्शन कहना चाहिए। तथा इनमें सम्यक्त्वका भंग सम्यग्मिथ्यात्वके समान है। ज्योतिषी देवोंमें भवनवासियोंके समान भंग है। इतनी विशेषता है कि इनमें अनन्तानुबन्धी-चतुष्ककी जघन्य स्थितिके उदीरकोंने त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम साढ़े तीन भाग और आठ भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अजघन्य स्थितिके उदीरकोंने लोकके असंख्यातवें भाग, त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम साढ़े तीन भाग, आठ भाग और नौ भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है।

§ ६७१. सौधर्म और ऐशानकल्पमें सामान्य देवोंके समान भंग है। इतनी विशेषता है कि अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी जघन्य स्थितिके उदीरकोंने त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अजघन्य स्थितिके उदीरकोंने त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ भाग और नौ भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है।

§ ६७२. सनत्कुमार कल्पसे लेकर सहस्रार कल्पतकके देवोंमें मिथ्यात्व, सम्यग्मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी जघन्य और अजघन्य स्थितिके उदीरकोंने लोकके असंख्यातवें भाग और त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। सम्यक्त्व, बारह कषाय और सात नोकषायोंकी जघन्य स्थितिके उदीरकोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। अजघन्य स्थितिके उदीरकोंने लोकके असंख्यातवें भाग और त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है।

§ ६७३. आनतकल्पसे लेकर अच्युत कल्पतकके देवोंमें सम्यक्त्व, सोलह कषाय और सात नोकषायोंकी जघन्य स्थितिके उदीरकोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। अजघन्य स्थितिके उदीरकोंने लोकके असंख्यातवें भाग और त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम छह भाग-प्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। मिथ्यात्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी जघन्य और अजघन्य स्थितिके उदीरकोंने लोकके असंख्यातवें भाग और त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम छह

लोग० असंखे०भागो छचोद्दस० । उवरि खेत्तभंगो । एवं जाव० ।

§ ६७४. णाणाजीवेहि कालो दुविहो—जह० उक्क० । उक्कस्से पयदं । दुविहो णि०—ओघेण आदेसेण य । ओघेण छव्वीसं पयडीणं उक्क० जह० एगस०, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो । अणुक० सव्वद्धा । सम्म०-सम्मामि० उक्क० जह० एगसमओ, उक्क० आवलि० असंखे०भागो । अणुक० सव्वद्धा । णवरि सम्मामि० अणुक० जह० अंतोमु०, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो ।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

§ ६७५. सव्वणेरइय०-सव्वतिरिक्ख-देवा सहस्सारे त्ति जाओ पयडीओ उदीरिज्जंति तासिमोघं । णवरि पंचिंदियतिरिक्खअपज्ज० सव्वपय० उक्क० जह०

भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। ऊपर क्षेत्रके समान भंग है। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणातक जानना चाहिए।

§ ६७४. नाना जीवोंकी अपेक्षा काल दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट। उत्कृष्टका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे छब्बीस प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। अनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंका काल सर्वदा है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है। अनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंका काल सर्वदा है। इतनी विशेषता है कि सम्यग्मिथ्यात्वकी अनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है।

विशेषार्थ—पहले एक जीवकी अपेक्षा काल बतला आये हैं। उसमें सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंका जघन्य काल बतलाया है। वह यहाँ नाना जीवोंकी अपेक्षा भी बन जाता है, अतः उसका अलगसे खुलासा नहीं किया। अब रही उत्कृष्ट कालकी बात सो यदि नाना जीव अनुसन्तानरूपसे उक्त प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थिति उदीरणा करें तो छब्बीस प्रकृतियोंकी पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण कालतक और सम्यक्त्व-सम्यग्मिथ्यात्वकी आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण कालतक ही उत्कृष्ट स्थितिउदीरणा बनती है। यही कारण है कि यहाँ पर छब्बीस प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंका उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण तथा सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंका उत्कृष्ट आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण काल कहा है। अब रहा इनकी अनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंके कालका विचार सो सत्ताईस प्रकृतियोंकी निरन्तर उदीरणा सर्वदा सम्भव है, इसलिए सो इनकी अनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंका काल सर्वदा कहा है। अब रहा सम्यग्मिथ्यात्वकी अनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंके कालका विचार सो नाना जीवोंकी अपेक्षा सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थानका ही उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। यही कारण है कि यहाँ सम्यग्मिथ्यात्वकी अनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंका उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण कहा है। जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है यह स्पष्ट ही है।

§ ६७५. सब नारकी, सब तिर्यञ्च और सामान्य देवोंसे लेकर सहस्रार कल्पतकके देवोंमें जिन प्रकृतियोंकी उदीरणा होती है उनका काल ओघके समान है। इतनी विशेषता है

एयस०, उक्क० आवलि० असंखे०भागो । अणुक्क० सव्वद्धा ।

§ ६७६. मणुसतिए सम्म० उक्क० ट्ठिदिउदी० जह० एगस०, उक्क० संखेज्जा समया । अणुक्क० सव्वद्धा । एवं सम्मामि० । णवरि अणुक्क० जह० उक्क० अंतोमु० । सेसपय० उक्क० ट्ठिदिउदी० जह० एयस०, उक्क० अंतोमु० । अणुक्क० सव्वद्धा ।

§ ६७७. मणुसअपज्ज० सव्वपय० उक्क० ट्ठिदिउदी० जह० एयसमओ, उक्क० आवलि० असंखे०भागो । अणुक्क० जह० एयस०, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो । णवरि मिच्छ०-णवुंस० अणुक्क० जह० खुद्दाभवग्गहणं समयूणं, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो ।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

कि पंचेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंमें सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है। अनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंका काल सर्वदा है।

विशेषार्थ—पंचेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंका प्रमाण यद्यपि असंख्यात है, फिर भी इनमें सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणा मात्र एक समयप्रमाण बनती है, इसलिए अनुदत् सन्तानकी अपेक्षा नाना जीवोंके उक्त कालका योग आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण ही बनता है। यही कारण है कि इनमें सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंका उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण कहा है। शेष कथन सुगम है।

§ ६७६. मनुष्यत्रिकमें सम्यक्त्वकी उत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल संख्यात समय है। अनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंका काल सर्वदा है। इसीप्रकार सम्यग्मिथ्यात्व प्रकृतिकी अपेक्षा जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि सम्यग्मिथ्यात्वकी अनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंका जघन्य और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। शेष प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। अनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंका काल सर्वदा है।

विशेषार्थ—मनुष्यत्रिकका प्रमाण संख्यात है इस तथ्यको ध्यानमें रखकर यहाँ सम्यक्त्व प्रकृतिकी उत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंका उत्कृष्ट काल कहा है। शेष कथन सुगम है।

§ ६७७. मनुष्य अपर्याप्तकोंमें सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है। अनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। इतनी विशेषता है कि मिथ्यात्व और नपुंसकवेदकी अनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय कम क्षुल्लकभवग्रहणप्रमाण है और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है।

विशेषार्थ—मनुष्य अपर्याप्तकोंका प्रमाण यद्यपि असंख्यात है, फिर भी इनमें सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणाका उत्कृष्ट काल भी एक समयमात्र है। यदि अनुदत् सन्तान रूपसे ऐसे जीव इनमें उत्पन्न हों तो आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण काल तक ही वे उत्पन्न होंगे। यही कारण है कि इनमें सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंका उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण कहा है। शेष कथन सुगम है।

§ ६७८. आणदादि जाव णवगेवज्जा त्ति सव्वपय० उक्क० जह० एयस०, उक्क० संखेज्जा समया। अणुक्क० सव्वद्धा। णवरि सम्मामि० अणुक्क० जह० अंतोमु०, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो। अणुदिसादि सव्वट्ठा त्ति सव्वपय० उक्क० जह० एयस०, उक्क० संखेज्जा समया। अणुक्क० सव्वद्धा। एवं जाव

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

§ ६७९. जहण्णए पयदं। दुविहो णि०—ओघेण आदेसेण य। ओघेण मिच्छ०-चदुणोक० जह० ट्ठिदिउदी० जह० एयस०, उक्क० आवलि० असंखे०भागो,। अज० सव्वद्धा। एवं सम्मामि०। णवरि अजह० जह० अंतोमु०, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो। सम्म०-चदुसंजल०-तिण्णिवेद० जह० ट्ठिदिउदी० जह० एयस०, उक्क० संखेज्जा समया। अजह० सव्वद्धा। बारसक० भय-दुगुंछा० जह० अजह० सव्वद्धा।

§ ६७८. आनतकल्पसे लेकर नौ ग्रैवेयकतकके देवोंमें सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल संख्यात समय है। अनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंका काल सर्वदा है। इतनी विशेषता है कि सम्यग्मिथ्यात्वकी अनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धितकके देवोंमें सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल संख्यात समय है। अनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंका काल सर्वदा है। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणातक जानना चाहिए।

विशेषार्थ—नौ ग्रैवेयकसे लेकर उक्त सब देवोंमें मनुष्यत्रिक ही मरकर जन्म लेते हैं और उनका प्रमाण संख्यात है। यही कारण है कि इनमें अपनी-अपनी उदीरणा प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंका उत्कृष्ट काल संख्यात समय प्राप्त होनेसे वह उक्तप्रमाण कहा है। शेष कथन सुगम है।

§ ६७९. जघन्यका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मिथ्यात्व और चार नोकषायोंकी जघन्य स्थितिके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है। अजघन्य स्थितिके उदीरकोंका काल सर्वदा है। इसीप्रकार सम्यग्मिथ्यात्व प्रकृतिकी अपेक्षासे जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इसकी अजघन्य स्थितिके उदीरकोंका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। सम्यक्त्व, चार संज्वलन और तीन वेदकी जघन्य स्थितिके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल संख्यात समय है। अजघन्य स्थितिके उदीरकोंका काल सर्वदा है। बारह कषाय, भय और जुगुप्साकी जघन्य और अजघन्य स्थितिके उदीरकोंका काल सर्वदा है।

विशेषार्थ—मिथ्यात्व और चार नोकषायोंकी जघन्य स्थितिउदीरणाके स्वामित्वको ध्यानमें लेनेपर ऐसे नाना जीव लगातार यदि इनकी जघन्य स्थितिउदीरणा करें तो उस कालका योग आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण ही प्राप्त होता है। यही कारण है कि इनकी जघन्य स्थितिके उदीरकोंका उत्कृष्ट काल उक्तप्रमाण कहा है। इसीप्रकार सम्यग्मिथ्यात्व प्रकृतिके विषयमें जान लेना चाहिए। सम्यक्त्व, चार संज्वलन और तीन वेदोंकी जघन्य स्थितिउदीरणा करनेवाले जीव ही अधिक-से-अधिक संख्यात हो सकते हैं। यदि अनुदत्

§ ६८०. आदेसेण णेरइय० मिच्छ०-सोलसक०-सत्तणोक० जह० ट्ठिदिउदी० जह० एयस०, उक्क० आवलि० असंखे०भागो। अजह० सव्वद्धा। सम्म०-सम्मामि० ओघं। एवं पढमाए।

§ ६८१. बिदियादि जाव छट्ठि त्ति सम्म०-मिच्छ० जह० जह० एयस०, उक्क० आवलि० असंखे०भागो। अजह० सव्वद्धा। सम्मामि० ओघं। अणंताणु०४ जह० ट्ठिदिउदी० जह० एयस०, उक्क० अंतोमु०। अज० सव्वद्धा। बारसक०-सत्तणोक० जह० ट्ठिदिउदी० जह० एयस०, उक्क० संखेज्जा समया। अजह० सव्वद्धा। सत्तमाए सोलसक०-भय-दुगुंछा० जह० ट्ठिदिउदी० जह० एयस०, उक्क० पलिदो० असंखे०-भागो। अज० सव्वद्धा। सम्मा०-मिच्छ०-पंचणोक० जह० ट्ठिदीउदीर० जह० एयस०, उक्क० आवलि० असंखे०भागो। अज० सव्वद्धा। सम्मामि० ओघं।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

सन्तानकी अपेक्षा भी विचार किया जाय तो उस कालका योग भी संख्यात समय होगा। यही कारण है कि इन प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके उदीरकोंका उत्कृष्ट काल संख्यात समय कहा है। शेष कथन सुगम है।

§ ६८०. आदेशसे नारकियोंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय और सात नोकषायोंकी जघन्य स्थितिके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है। अजघन्य स्थितिके उदीरकोंका काल सर्वदा है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्व-का भंग ओघके समान है। इसीप्रकार प्रथम पृथिवीमें जानना चाहिए।

विशेषार्थ—सामान्यसे नारकियोंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय और सात नोकषायोंकी जघन्य स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। यदि नाना जीवोंकी अपेक्षा अनुटत् संतानकी अपेक्षा यह काल लिया जाय तो वह आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण ही होता है। यही कारण है कि यहाँ उक्त प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके उदीरकोंका उत्कृष्ट काल उक्तप्रमाण कहा है। शेष कथन सुगम है।

§ ६८१. दूसरी पृथिवीसे लेकर छटी पृथिवी तकके नारकियोंमें सम्यक्त्व और मिथ्यात्वकी जघन्य स्थितिके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल आवलि-के असंख्यातवें भागप्रमाण है। अजघन्य स्थितिके उदीरकोंका काल सर्वदा है। सम्यग्मिथ्यात्व-का भंग ओघके समान है। अनन्तानुबन्धी चारकी जघन्य स्थितिके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। अजघन्य स्थितिके उदीरकोंका काल सर्वदा है। बारह कषाय और सात नोकषायोंकी जघन्य स्थितिके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल संख्यात समय है। अजघन्य स्थितिके उदीरकोंका काल सर्वदा है। सातवीं पृथिवीमें सोलह कषाय, भय और जुगुप्साकी जघन्य स्थितिके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। अजघन्य स्थितिके उदीरकोंका काल सर्वदा है। सम्यक्त्व, मिथ्यात्व और पाँच नोकषायोंकी जघन्य स्थितिके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है। अजघन्य स्थितिके उदीरकोंका काल सर्वदा है। सम्यग्मिथ्यात्वका भंग ओघके समान है।

---

१. आ०प्रतौ उक्क० संखेज्जा समया पलिदो० इति पाठः।

§ ६८२. तिरिक्खेसु मिच्छ०-सत्तणोक० जह० ट्ठिदिउदी० जह० एयस०, उक्क० आवलि० असंखे०भागो। अजह० सव्वद्धा। सोलसक०-भय-दुगुंछा० जह० अजह० ट्ठिदिउदी० सव्वद्धा। सम्म०-सम्मामि० ओघं। पंचि०तिरिक्खतिय० दंसणतियमोघं। सेसपय० जह० जह० एयस०, उक्क० आवलि० असंखे०भागो। अजह० सव्वद्धा। णवरि जोणिणीसु सम्मत्त० मिच्छत्तभंगो। पंचि०तिरि०अपज्ज० सव्वपय० जह० ट्ठिदिउदी० जह० एयसमओ, उक्क० आवलि० असंखे०भागो। अजह० सव्वद्धा।

§ ६८३. मणुसेसु मिच्छ०-सम्म०-चदुसंजल०-सत्तणोक० जह० ट्ठिदिउदी० जह० एयस०, उक्क० असंखेज्जा समया। अजह० सव्वद्धा। बारसक०-भय-दुगुंछा० जह० ट्ठिदिउदी० जह० एयसमओ, उक्क० आवलि० असं०भागो। अजह० सव्वद्धा।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

सम्मामि० जह० जह० एयस०, उक्क० संखेज्जा समया। अज० जह० उक्क० अंतोमुहुत्तं। मणुसपज्ज०-मणुसिणी० सव्वपयडी० जह० ट्ठिदिउदी० जह० एगसमओ, उक्क० संखेज्जा समया। अजह० सव्वद्धा। णवरि सम्मामि० मणुसोघं। मणुस-

---

विशेषार्थ—इसके पूर्व जो स्पष्टीकरण किया है उसे और साथ ही अपने-अपने स्वामित्वको ध्यानमें लेनेपर सब प्रकृतियोंकी जघन्य और अजघन्य स्थितिउदीरणाका नाना जीवोंकी जो अपेक्षा काल कहा है वह समझमें आ जाता है, इसलिए यहाँ और आगे अलगसे खुलासा नहीं किया।

§ ६८२. तिर्यञ्चोंमें मिथ्यात्व और सात नोकषायोंकी जघन्य स्थितिके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है। अजघन्य स्थितिके उदीरकोंका काल सर्वदा है। सोलह कषाय, भय और जुगुप्साकी जघन्य और अजघन्य स्थितिके उदीरकोंका काल सर्वदा है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका भंग ओघके समान है। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकमें दर्शनमोहनीयत्रिकका भंग ओघके समान है। शेष प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है। अजघन्य स्थितिके उदीरकोंका काल सर्वदा है। इतनी विशेषता है कि योनिनियोंमें सम्यक्त्वका भंग मिथ्यात्वके समान है। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंमें सब प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है। अजघन्य स्थितिके उदीरकोंका काल सर्वदा है।

§ ६८३. मनुष्योंमें मिथ्यात्व, सम्यक्त्व, चार संज्वलन और सात नोकषायोंकी जघन्य स्थितिके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल असंख्यात समय है। अजघन्य स्थितिके उदीरकोंका काल सर्वदा है। बारह कषाय, भय और जुगुप्साकी जघन्य स्थितिके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है। अजघन्य स्थितिके उदीरकोंका काल सर्वदा है। सम्यग्मिथ्यात्वकी जघन्य स्थितिके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल संख्यात समय है। अजघन्य स्थितिके उदीरकोंका जघन्य और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। मनुष्य पर्याप्त और मनुष्यिनियोंमें सब प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

अपज्ज० मिच्छ०-णवुंस० जह० ट्ठिदिउदी० जह० एयस०, उक्क० आवलि० असंखे०भागो। अज० जह० आवलिया समयूणा, णवुंस० अंतोमुहुत्तं, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो। सोलसक०-छण्णोक० एवं चेव। णवरि अजह० ट्ठिदिउदी० जह० एयस०, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो।

§ ६८४. देवेसु दंसणतियमोघं। सेसपय० जह० ट्ठिदिउदी० जह० एयसमओ, उक्क० आवलि० असंखे०भागो। अजह० सव्वद्धा। एवं भवण०वाणवें०। णवरि सम्म० मिच्छत्तभंगो। जोदिसियादि जाव णवगेवज्जा त्ति दंसणतियमोघं। सेसपय० जह० ट्ठिदिउदी० जह० एयसमओ, उक्क० संखेज्जा समया। अजह० सव्वद्धा। णवरि अणंताणु०चउक्क० जह० ट्ठिदिउदी० जह० एयसमओ, उक्क० अंतोमु०। णवरि जोदिसि० सम्म० मिच्छत्तभंगो। आणदादि णवगेवज्जा त्ति अणंताणु०४ जह० ट्ठिदिउदी० जह० एयस०, उक्क० संखेज्जा समया। अजह० सव्वद्धा। अणुदिसादि सव्वट्ठा त्ति सव्वपय० जह० ट्ठिदिउदी० जह० एयस०, उक्क० संखेज्जा समया। अजह० सव्वद्धा। एवं जाव०।

संख्यात समय है। अजघन्य स्थितिके उदीरकोंका काल सर्वदा है। इतनी विशेषता है कि इनमें सम्यग्मिथ्यात्वका भंग सामान्य मनुष्योंके समान है। मनुष्य अपर्याप्तकोंमें मिथ्यात्व और नपुंसकवेदकी जघन्य स्थितिके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है। अजघन्य स्थितिके उदीरकोंका जघन्य काल मिथ्यात्वका एक समय कम एक आवलिप्रमाण है, नपुंसकवेदका अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। सोलह कषाय और छह नोकषायोंका इसीप्रकार है। इतनी विशेषता है कि अजघन्य स्थितिके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है।

§ ६८४. देवोंमें दर्शनमोहनीयत्रिकका भंग ओघके समान है। शेष प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है। अजघन्य स्थितिके उदीरकोंका काल सर्वदा है। इसीप्रकार भवनवासी और व्यन्तर देवोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनमें सम्यक्त्वका भंग मिथ्यात्वके समान है। ज्योतिषी देवोंसे लेकर नौ ग्रैवेयक तकके देवोंमें दर्शनमोहनीयत्रिकका भंग ओघके समान है। शेष प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल संख्यात समय है। अजघन्य स्थितिके उदीरकोंका काल सर्वदा है। इतनी विशेषता है कि अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी जघन्य स्थितिके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। इतनी विशेषता है कि ज्योतिषी देवोंमें सम्यक्त्वका भंग मिथ्यात्वके समान है। तथा आनतकल्पसे लेकर नौ ग्रैवेयक तकके देवोंमें अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी जघन्य स्थितिके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल संख्यात समय है। अजघन्य स्थितिके उदीरकोंका काल सर्वदा है। अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धितकके देवोंमें सब प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल संख्यात समय है। अजघन्य स्थितिके उदीरकोंका काल सर्वदा है। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणातक

§ ६८५. अंतरं दुविहं—जह० उक्क० । उक्कस्से पयदं । दुविहो णि०—ओघेण आदेसेण य । ओघेण सव्वपय० उक्क० ट्ठिदिउदी० जह० एयस०, उक्क० अंगुलस्स असंखे०भागो । अणुक्क० णत्थि अंतरं । णवरि सम्मामि० अणुक्क० जह० एयस०, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो । आदेसेण सव्वणेरइय०-सव्वतिरिक्ख-सव्वमणुस्स सव्वदेवा त्ति जाओ पयडीओ उदीरिज्जंति तासिमोघं । णवरि मणुस०अपज्ज० सव्वासिमणुक्क० जह० एयस०, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो । एवं जाव० ।

§ ६८६. जहण्णए पयदं । दुविहो णि०—ओघेण आदेसेण य । ओघेण मिच्छ० जह० ट्ठिदिउदी० जह० एयस०, उक्क० सत्त रादिंदियाणि । अजह० णत्थि अंतरं । सम्म०-लोभसंजल० जह० ट्ठिदिउदी० जह० एयस०, उक्क० छम्मासं ।

जानना चाहिए ।

§ ६८५. अन्तर दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट । उत्कृष्टका प्रकरण है । निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंका जघन्य अन्तर काल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर काल अंगुलके असंख्यातवें भागप्रमाण है । अनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंका अन्तरकाल नहीं है । इतनी विशेषता है कि सम्यग्मिथ्यात्व की अनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है । आदेशसे सब नारकी, सब तिर्यञ्च, सब मनुष्य और सब देवोंमें जिन प्रकृतियोंकी उदीरणा होती है उनका भंग ओघके समान है । इतनी विशेषता है कि मनुष्य अपर्याप्तकोंमें सब प्रकृतियोंकी अनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है । इसीप्रकार अनाहारक मार्गणातक जानना चाहिए ।

विशेषार्थ—नाना जीव यदि सम्यग्मिथ्यात्व प्रकृतिके सिवा शेष सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणा न करें तो कमसे कम एक समयतक और अधिकसे अधिक अंगुलके असंख्यातवें भागप्रमाण कालतक नहीं करते । यही कारण है कि यहाँ ओघसे उक्त सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंका जघन्य अन्तरकाल एक समय और उत्कृष्ट अन्तरकाल अंगुलके असंख्यातवें भागप्रमाण कहा है । मात्र सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थानका जघन्य अन्तरकाल एक समय और उत्कृष्ट अन्तरकाल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है । इसलिए सम्यग्मिथ्यात्व प्रकृतिकी अपेक्षा उक्त प्रकारसे अन्तरकालका निर्देश अलगसे किया है । चारों गतियोंमें यह अन्तरकाल बन जाता है, इसलिए उसे ओघके समान जाननेकी सूचना की है । मात्र मनुष्य अपर्याप्त यह सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थानके समान सान्तर मार्गणा है, इसलिए इस बातको ध्यानमें रखकर इनमें सब प्रकृतियोंकी अनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंका जघन्य अन्तरकाल एक समय और उत्कृष्ट अन्तरकाल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण कहा है ।

§ ६८६. जघन्यका प्रकरण है । निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे मिथ्यात्वकी जघन्य स्थितिके उदीरकोंका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल सात रात्रि-दिवस है । अजघन्य स्थितिके उदीरकोंका अन्तरकाल नहीं है । सम्यक्त्व और लोभसंज्वलनकी जघन्य स्थितिके उदीरकोंका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट

अजह० णत्थि अंतरं। सम्मामि० जह० ट्ठिदिउदी० जह० एगस०, उक्क० अंगुलस्स असंखे०भागो। अजह० जह० एगस०, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो। बारसक०-भय-दुगुंछा० जह० अजह० णत्थि अंतरं। तिण्णिसंजल०-पुरिसवेद० जह० ट्ठिदिउदी० जह० एगस०, उक्क० वासं सादिरेयं। अजह० णत्थि अंतरं। इत्थिवेद-णवुंस० जह० ट्ठिदिउदी० जह० एगसमओ, उक्क० वासपुधत्तं। अजह० णत्थि अंतरं। चदुणोक० जह० ट्ठिदिउदी० जह० एगसमओ, उक्क० अंगुलस्स असंखे०भागो। अजह० णत्थि अंतरं।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

अन्तरकाल छह महीना है। अजघन्य स्थितिके उदीरकोंका अन्तरकाल नहीं है। सम्यग्मिथ्यात्वकी जघन्य स्थितिके उदीरकोंका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल अंगुलके असंख्यातवें भागप्रमाण है। अजघन्य स्थितिके उदीरकोंका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। बारह कषाय, भय और जुगुप्साकी जघन्य और अजघन्य स्थितिके उदीरकोंका अन्तरकाल नहीं है। तीन संज्वलन और पुरुषवेदकी जघन्य स्थितिके उदीरकोंका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल साधिक एक वर्षप्रमाण है। अजघन्य स्थितिके उदीरकोंका अन्तरकाल नहीं है। स्त्रीवेद और नपुंसकवेदकी जघन्य स्थितिके उदीरकोंका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल वर्षपृथक्त्वप्रमाण है। अजघन्य स्थितिके उदीरकोंका अन्तरकाल नहीं है। चार नोकषायोंकी जघन्य स्थितिके उदीरकोंका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल अंगुलके असंख्यातवें भागप्रमाण है। अजघन्य स्थितिके उदीरकोंका अन्तरकाल नहीं है।

विशेषार्थ—उपशमसम्यक्त्वकी प्राप्तिका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल सात दिन-रात है। इसलिए यहाँ मिथ्यात्वकी जघन्य स्थितिके उदीरकोंका जघन्य अन्तरकाल एक समय और उत्कृष्ट अन्तरकाल सात दिन-रात कहा है। सम्यक्त्वकी क्षपणा और क्षपकश्रेणिका जघन्य अन्तरकाल एक समय और उत्कृष्ट अन्तरकाल छह महीना है, इसलिए यहाँ सम्यक्त्व और लोभसंज्वलनकी जघन्य स्थितिके उदीरकोंका जघन्य अन्तरकाल एक समय और उत्कृष्ट अन्तरकाल छह महीना कहा है। ऐसे जीव जो सम्यग्मिथ्यात्वकी जघन्य स्थितिकी उदीरणा करते हैं उनका जघन्य अन्तरकाल एक समय और उत्कृष्ट अन्तरकाल अंगुलके असंख्यातवें भागप्रमाण बन जाता है, इसलिए यहाँ सम्यग्मिथ्यात्व प्रकृतिकी अपेक्षा यह अन्तरकाल उक्त कालप्रमाण कहा है। बारह कषाय, भय और जुगुप्साकी जघन्य स्थितिकी उदीरणा करनेवाले जीव निरन्तर पाये जाते हैं, इसलिए इनकी अपेक्षा जघन्य स्थितिके उदीरकोंके अन्तरकालका निषेध किया है। तीन संज्वलन और पुरुषवेदके उदीरक जीव क्षपकश्रेणिपर न चढ़ें तो अधिकसे अधिक साधिक एक वर्षतक नहीं चढ़ते, इसलिए यहाँ इनकी जघन्य स्थितिके उदीरकोंका जघन्य अन्तरकाल एक समय और उत्कृष्ट अन्तरकाल साधिक एक वर्ष कहा है। स्त्रीवेदी और नपुंसकवेदी जीवोंकी अपेक्षा क्षपकश्रेणिका उत्कृष्ट अन्तरकाल वर्षपृथक्त्वप्रमाण है, इसलिए यहाँ स्त्रीवेद और नपुंसकवेदकी जघन्य स्थितिके उदीरकोंका जघन्य अन्तरकाल एक समय और उत्कृष्ट अन्तरकाल वर्षपृथक्त्व कहा है। चार नोकषायोंकी जघन्य स्थितिके उदीरकोंके जघन्य और उत्कृष्ट अन्तरकालका स्पष्टीकरण सम्यग्मिथ्यात्वकी

§ ६८७. आदेसेण णेरइय० मिच्छ०-सम्मामि० ओघं । सम्म० जह० ट्ठिदिउदी० जह० एयसमओ, उक्क० वासपुधत्तं । अजह० णत्थि अंतरं । सेसपयडी० जह० ट्ठिदिउदी० जह० एयस०, उक्क० अंगुलस्स असंखे०भागो । अजह० णत्थि अंतरं । एवं पढमाए । बिदियादि जाव सत्तमा त्ति एवं चेव । णवरि सम्म० अणंताणु०भंगो ।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

§ ६८८. तिरिक्खेसु मिच्छ०-सम्म०-सम्मामि० णिरओघं । सोलसक०-भय-दुगुंछा० जह० अजह० णत्थि अंतरं । सत्तणोक० जह० ट्ठिदिउदी० जह० एयसमओ, उक्क० अंगुलस्स असंखे०भागो । अजह० णत्थि अंतरं । पंचिंदियतिरिक्खतिय० दंसणतिय० णारयभंगो । सेसपयडी० जह० ट्ठिदिउदी० जह० एयस०, उक्क० अंगुलस्स असंखे०भागो । अजह० णत्थि अंतरं । णवरि[1] जोणिणीसु सम्म० बिदियपुढविभंगो । पंचि०तिरि०अपज्ज० सव्वपय० जह० ट्ठिदिउदी० जह० एयस०, उक्क० अंगुलस्स असंखे०भागो । अजह० णत्थि अंतरं । एवं मणुसअपज्ज० । णवरि अजह० जह०

जघन्य स्थितिके उदीरकोंके जघन्य और उत्कृष्ट अन्तरकालके समान है । शेष कथन सुगम है ।

§ ६८७. आदेशसे नारकियोंमें मिथ्यात्व और सम्यग्मिथ्यात्वका भंग ओघके समान है । सम्यक्त्वकी जघन्य स्थितिके उदीरकोंका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल वर्षपृथक्त्वप्रमाण है । अजघन्य स्थितिके उदीरकोंका अन्तरकाल नहीं है । शेष प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके उदीरकोंका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल अंगुलके असंख्यातवें भागप्रमाण है । अजघन्य स्थितिके उदीरकोंका अन्तरकाल नहीं है । इसीप्रकार प्रथम पृथिवीमें जानना चाहिए । दूसरीसे लेकर सातवीं पृथिवीतक इसीप्रकार जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि इनमें सम्यक्त्वका भंग अनन्तानुबन्धीचतुष्कके समान है ।

विशेषार्थ—ओघप्ररूपणामें जो खुलासा किया है उसे और अपने-अपने स्वामित्वको समझकर यहाँ स्पष्टीकरण कर लेना चाहिए । आगे भी इसीप्रकार खुलासा कर लेना चाहिए ।

§ ६८८. तिर्यञ्चोंमें मिथ्यात्व, सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका भंग सामान्य नारकियोंके समान है । सोलह कषाय, भय और जुगुप्साकी जघन्य और अजघन्य स्थितिके उदीरकोंका अन्तरकाल नहीं है । सात नोकषायोंकी जघन्य स्थितिके उदीरकोंका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल अंगुलके असंख्यातवें भागप्रमाण है । अजघन्य स्थितिके उदीरकोंका अन्तरकाल नहीं है । पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकमें दर्शनमोहनीयत्रिकका भंग नारकियोंके समान है । शेष प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके उदीरकोंका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल अंगुलके असंख्यातवें भागप्रमाण है । अजघन्य स्थितिके उदीरकोंका अन्तरकाल नहीं है । इतनी विशेषता है कि योनिनीतिर्यञ्चोंमें सम्यक्त्वका भंग दूसरी पृथिवीके समान है । पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंमें सब प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके उदीरकोंका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल अंगुलके असंख्यातवें भागप्रमाण है । अजघन्य स्थितिके उदीरकोंका अन्तरकाल नहीं है । इसीप्रकार मनुष्य अपर्याप्तकोंमें जानना चाहिए । इतनी

---

1. ता०प्रतौ अंतरं । एवं जोणिणीसु णवरि सम्म० इति पाठः ।

एयसमओ, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो ।

§ ६८९. मणुसतिए ओघं । णवरि बारसक० -भय-दुगुंछ० पंचिंदियतिरिक्खभंगो । णवरि पज्जत्तएसु इत्थिवेदो णत्थि मणुसिणी० पुरिसवेद-णवुंस० णत्थि । जम्हि छम्मासं वासं सादिरेयं तम्हि वासपुधत्तं ।

§ ६९०. देवेसु दंसणतियं णारयभंगो । सेसपय० जह० ट्ठिदिउदी० जह० एयसमओ, उक्क० अंगुलस्स असंखे०भागो । अजह० णत्थि अंतरं । एवं भवणादि जाव णवगेवज्जा त्ति । णवरि भवण०-वाणवें०-जोदिसि० सम्म० विदियपुढविभंगो । अणुदिसादि सव्वट्ठा त्ति सम्म०-बारसक०-सत्तणोक० आणदभंगो । णवरि सव्वट्ठे सम्म० जह० ट्ठिदिउदी० जह० एयस०, उक्क० पलिदो० संखे०भागो । अजह० णत्थि अंतरं । एवं जाव० ।

§ ६९१. भावाणु० सव्वत्थ ओदइओ भावो ।

§ ६९२. अप्पाबहुअं दुविहं—जीवप्पाबहुअं ट्ठिदिअप्पाबहुअं चेदि । जीवअप्पाबहुअं दुविहं—जह० उक्क० । उक्कस्से पयदं । दुविहो णि०—ओघेण आदेसेण य । ओघेण मिच्छ०-सोलसक०-सत्तणोक० सव्वत्थोवा उक्क० ट्ठिदिउदी० जीवा । अणुक०

विशेषता है कि इनमें अजघन्य स्थितिके उदीरकोंका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है ।

§ ६८९. मनुष्यत्रिकमें ओघके समान भंग है । इतनी विशेषता है कि बारह कषाय, भय और जुगुप्साका भंग पञ्चेन्द्रिय तिर्यंचोंके समान है । इतनी विशेषता है कि पर्याप्तकोंमें स्त्रीवेदकी उदीरणा नहीं है तथा मनुष्यिनियोंमें पुरुषवेद और नपुंसकवेदकी उदीरणा नहीं है । जहाँ छह माह और साधिक एक वर्ष कहा है वहाँ वर्षपृथक्त्व कहना चाहिए ।

§ ६९०. देवोंमें दर्शनमोहनीयत्रिकका भंग नारकियोंके समान है । शेष प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके उदीरकोंका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल अंगुलके असंख्यातवें भागप्रमाण है । अजघन्य स्थितिके उदीरकोंका अन्तरकाल नहीं है । इसीप्रकार भवनवासियोंसे लेकर नौ ग्रैवेयक तकके देवोंमें जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि भवनवासी, व्यन्तर और ज्योतिषी देवोंमें सम्यक्त्वका भंग दूसरी पृथिवीके समान है । अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धितकके देवोंमें सम्यक्त्व, बारह कषाय और सात नोकषायोंका भंग आनतकल्पके समान है । इतनी विशेषता है कि सर्वार्थसिद्धिमें सम्यक्त्वकी जघन्य स्थितिके उदीरकोंका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है । अजघन्य स्थितिके उदीरकोंका अन्तरकाल नहीं है । इसीप्रकार अनाहारक मार्गणातक जानना चाहिए ।

§ ६९१. भावानुगमकी अपेक्षा सर्वत्र औदयिक भाव है ।

§ ६९२. अल्पबहुत्व दो प्रकारका है—जीव अल्पबहुत्व और स्थितिअल्पबहुत्व । जीव अल्पबहुत्व दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट । उत्कृष्टका प्रकरण है । निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे मिथ्यात्व, सोलह कषाय और सात नोकषायोंकी उत्कृष्ट

ट्ठिदिउदी० जीवा अणंतगुणा। सम्म०-सम्मामि०-इत्थिवे०-पुरिसवे० सव्वत्थो० उक्क० ट्ठिदिउदी० जीवा। अणुक्क० ट्ठिदिउदी० जीवा असंखेज्जगुणा। एवं तिरिक्खा०।

§ ६९३. सव्वणेरइय०-सव्वपंचिंदियतिरिक्ख-मणुसअपज्ज०-देवा जाव अवराजिदा त्ति सव्वपय० सव्वत्थोवा उक्क० ट्ठिदिउदी० जीवा। अणुक्क० ट्ठिदिउदी० जीवा असंखे०गुणा। मणुसेसु सम्म०-सम्मामि०-इत्थिवे०-पुरिसवे० सव्वत्थोवा उक्क० ट्ठिदिउदी० जीवा। अणुक्क० ट्ठिदिउदी० जीवा संखे०गुणा। सेसपयडीणं सव्वत्थोवा उक्क० ट्ठिदिउदी० जीवा। अणुक्क० ट्ठिदिउदी० जीवा असंखे०गुणा। मणुसपज्ज०-मणुसिणी-सव्वट्ठदेवेसु सव्वपय० सव्वत्थोवा उक्क० ट्ठिदिउदी०। अणुक्क० ट्ठिदिउदी० जीवा संखे०गुणा। एवं जाव०।

§ ६९४. जह० पयदं दुविहो णि०—ओघेण आदेसेण य। ओघेण मिच्छ०-चदुसंजल०-णवुंस०-चदुणोकसाय० सव्वत्थोवा जह० ट्ठिदिउदी० जीवा। अजह० ट्ठिदिउदी० जीवा अणंतगुणा। सम्म०-सम्मामि०-बारसक-०इत्थिवे०-पुरिस०-भय-दुगुं० सव्वत्थोवा जह० ट्ठिदिउदी० जीवा। अजह० ट्ठिदिउदी० असंखेज्जगुणा। तिरिक्खेसु मिच्छ०-णवुंसय०-चदुणोक० सव्वत्थोवा जह० ट्ठिदिउदी० जीवा। अज० ट्ठिदिउदी० जीवा अणंतगुणा। सम्म०-सम्मामि०-सोलसक०-भय-दुगुंछ०-इत्थिवेद०-

---

स्थितिके उदीरक जीव सबसे स्तोक हैं। उनसे अनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरक जीव अनन्तगुणे हैं। सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व, स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी उत्कृष्ट स्थितिके उदीरक जीव सबसे स्तोक हैं। उनसे अनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरक जीव असंख्यातगुणे हैं। इसीप्रकार तिर्यञ्चोंमें जानना चाहिए।

§ ६९३. सब नारकी, सब पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च, मनुष्य अपर्याप्त और सामान्य देवोंसे लेकर अपराजितविमानतकके देवोंमें सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिके उदीरक जीव सबसे स्तोक हैं। उनसे अनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरक जीव असंख्यातगुणे हैं। मनुष्योंमें सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व, स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी उत्कृष्ट स्थितिके उदीरक जीव सबसे स्तोक हैं। उनसे अनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरक जीव संख्यातगुणे हैं। शेष प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिके उदीरक जीव सबसे थोड़े हैं। उनसे अनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरक जीव असंख्यातगुणे हैं। मनुष्य पर्याप्त, मनुष्यिनी और सर्वार्थसिद्धिके देवोंमें सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिके उदीरक जीव सबसे स्तोक हैं। उनसे अनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरक जीव संख्यातगुणे हैं। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणातक जानना चाहिए।

§ ६९४. जघन्यका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मिथ्यात्व, चार संज्वलन, नपुंसकवेद और चार नोकषायोंकी जघन्य स्थितिके उदीरक जीव सबसे स्तोक हैं। उनसे अजघन्य स्थितिके उदीरक जीव अनन्तगुणे हैं। सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व, बारह कषाय, स्त्रीवेद, पुरुषवेद, भय और जुगुप्साकी जघन्य स्थितिके उदीरक जीव सबसे स्तोक हैं। उनसे अजघन्य स्थितिके उदीरक जीव असंख्यातगुणे हैं। तिर्यञ्चोंमें मिथ्यात्व, नपुंसकवेद और चार नोकषायकी जघन्य स्थितिके उदीरक जीव सबसे स्तोक हैं। उनसे अजघन्य स्थितिके उदीरक जीव अनन्तगुणे हैं। सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व, सोलह कषाय,

पुरिसवे० सव्वत्थोवा जह० ट्ठिदिउदी० । अजह० ट्ठिदिउदी० जीवा असंखे०गुणा । सेसगदीसु सव्वपयडीणं जह० अजह० उक्कस्सभंगो । एवं जाव० ।

§ ६९५. ट्ठिदिअप्पाबहुअं दुविहं---जह० उक्क० । उक्कस्से पयदं । दुविहो णि०—ओघेण आदेसेण य । ओघेण सव्वत्थोवा णवणोक० उक्क० ट्ठिदिउदी० । सोलसक० उक्क० ट्ठिदिउदी० विसेसा० । सम्मामि० उक्क० ट्ठिदिउदी० विसेसा० । सम्म० उक्क० ट्ठिदिउदी० विसेसा० । मिच्छ० उक्क० ट्ठिदिउदी० विसेसा० । एवं सव्वणेरइय० । णवरि इत्थिवे०-पुरिस० णत्थि । तिरिक्ख-पंचिंदियतिरिक्खतिए ओघं । णवरि पज्जत्तएसु इत्थिवे० णत्थि । जोणिणीसु पुरिस०-णवुंस० णत्थि । पंचिंदियतिरिक्खअपज्ज०-मणुसअपज्ज० सव्वत्थोवा सोलसक०-सत्तणोक० उक्क० ट्ठिदिउदी० । मिच्छ० उक्क० ट्ठिदिउदी० विसेसा० । मणुसतिए पंचिंदियतिरिक्खतियभंगो ।

§ ६९६. देवाणमोघं । णवरि णवुंस० णत्थि । एवं भवण०-वाणवें०-जोदिसि०-सोहम्मीसाणे त्ति । सणक्कुमारादि सहस्सारे त्ति एवं चेव । णवरि इत्थिवे० णत्थि । आणदादि जाव णवगेवज्जा त्ति सव्वत्थोवा अरदि-सोग० उक्क० ट्ठिदिउदी० ।

भय, जुगुप्सा, स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी जघन्य स्थितिके उदीरक जीव सबसे स्तोक हैं। उनसे अजघन्य स्थितिके उदीरक जीव असंख्यातगुणे हैं। शेष गतियोंमें सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके उदीरकोंका भंग उत्कृष्टके समान है। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणातक जानना चाहिए।

§ ६९५. स्थिति अल्पबहुत्व दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट। उत्कृष्टका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे नौ नोकषायोंकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणा सबसे स्तोक है। उससे सोलह कषायोंकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणा विशेष अधिक है। उससे सम्यग्मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणा विशेष अधिक है। उससे सम्यक्त्वकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणा विशेष अधिक है। उससे मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणा विशेष अधिक है। इसीप्रकार सब नारकियोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनमें स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी उदीरणा नहीं है। तिर्यञ्च और पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकमें ओघके समान भंग है। इतनी विशेषता है कि तिर्यञ्च पर्याप्तकोंमें स्त्रीवेदकी उदीरणा नहीं है तथा योनिनी तिर्यञ्चोंमें पुरुषवेद और नपुंसकवेदकी उदीरणा नहीं है। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्तकोंमें सोलह कषाय और सात नोकषायोंकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणा सबसे स्तोक है। उससे मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणा विशेष अधिक है। मनुष्यत्रिकमें पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकके समान भंग है।

§ ६९६. देवोंमें ओघके समान भंग है। इतनी विशेषता है कि इनमें नपुंसकवेदकी उदीरणा नहीं होती। इसीप्रकार भवनवासी, व्यन्तर, ज्योतिषी तथा सौधर्म और ऐशानकल्पतकके देवोंमें जानना चाहिए। सनत्कुमारकल्पसे लेकर सहस्रार कल्पतकके देवोंमें इसीप्रकार जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनमें स्त्रीवेदकी उदीरणा नहीं होती। आनतकल्पसे लेकर नौ ग्रैवेयक तकके देवोंमें अरति और शोककी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणा सबसे स्तोक

सोलसक०-पंचणोक० उक्क० ट्ठिदिउदी० विसेसा० । सम्मामि० उक्क० ट्ठिदिउदी० विसेसा० । सम्म०-मिच्छ० उक्क० ट्ठिदिउदी० विसेसा० । अणुद्दिसादि सव्वट्ठा त्ति सव्वत्थो० अरदि-सोग० उक्क० ट्ठिदिउदी० । बारसक०-पंचणोक० उक्क० ट्ठिदिउदी० विसे० । सम्म० उक्क० ट्ठिदिउदी० विसेसा० । एवं जाव० ।

§ ६९७. जहण्णए पयदं । दुविहो णि०—ओघेण आदेसेण य । ओघेण सव्वत्थोवा मिच्छ०-सम्म०-चदुसंज०-तिण्णिवे० जह० ट्ठिदिउदी० । जट्ठिदिउदीर० असंखे०गुणा । हस्स-रदि० जह० ट्ठिदिउदी० असंखे०गुणा । अरदि-सोग० जह० ट्ठिदिउदी० विसेसा० । भय-दुगुंछा० जह० ट्ठिदिउदी० विसे० । बारसक० जह० ट्ठिदिउदी० विसेसा० । सम्मामि० जह० ट्ठिदिउदी० संखे०गुणा ।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

§ ६९८. आदेसेण णेरइय० सव्वत्थोवा मिच्छ०-सम्म० जह० ट्ठिदिउदी० । जट्ठिदिउदी० असंखे०गुणा । सम्मामि० जह० ट्ठिदिउदी० असंखे०गुणा । हस्स-रदि० जह० ट्ठिदिउदी० संखे०गुणा । अरदि-सोग० जह० ट्ठिदिउदी० विसेसा० । णवुंस० जह० ट्ठिदिउदी० विसेसा० । सोलसक०-भय-दुगुंछा० जह० ट्ठिदिउदी० विसेसा० । एवं पढमाए ।

है । उससे सोलह कषाय और पाँच नोकषायकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणा विशेष अधिक है । उससे सम्यग्मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणा विशेष अधिक है । उससे सम्यक्त्व और मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणा विशेष अधिक है । अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धितकके देवोंमें अरति और शोककी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणा सबसे स्तोक है । उससे बारह कषाय और पाँच नोकषायकी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणा विशेष अधिक है । उससे सम्यक्त्वकी उत्कृष्ट स्थिति-उदीरणा विशेष अधिक है । इसीप्रकार अनाहारक मार्गणातक जानना चाहिए ।

§ ६९७. जघन्यका प्रकरण है । निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे मिथ्यात्व, सम्यक्त्व, चार संज्वलन और तीन वेदकी जघन्य स्थितिउदीरणा सबसे स्तोक है । उससे यत्स्थितिउदीरणा असंख्यातगुणी है । उससे हास्य और रतिकी जघन्य स्थितिउदीरणा असंख्यातगुणी है । उससे अरति और शोककी जघन्य स्थितिउदीरणा विशेष अधिक है । उससे भय और जुगुप्साकी जघन्य स्थितिउदीरणा विशेष अधिक है । उससे बारह कषायकी जघन्य स्थितिउदीरणा विशेष अधिक है । उससे सम्यग्मिथ्यात्वकी जघन्य स्थितिउदीरणा संख्यातगुणी है ।

§ ६९८. आदेशसे नारकियोंमें मिथ्यात्व और सम्यक्त्वकी जघन्य स्थितिउदीरणा सबसे स्तोक है । उससे यत्स्थितिउदीरणा असंख्यातगुणी है । उससे सम्यग्मिथ्यात्वकी जघन्य स्थितिउदीरणा असंख्यातगुणी है । उससे हास्य और रतिकी जघन्य स्थितिउदीरणा संख्यात-गुणी है । उससे अरति और शोककी जघन्य स्थितिउदीरणा विशेष अधिक है । उससे नपुंसकवेदकी जघन्य स्थितिउदीरणा विशेष अधिक है । उससे सोलह कषाय, भय और जुगुप्साकी जघन्य स्थितिउदीरणा विशेष अधिक है । इसीप्रकार पहली पृथिवीमें जानना चाहिए ।

§ ६९९. बिदियादि जाव छट्ठि त्ति सव्वत्थोवा मिच्छ० जह० ट्ठिदिउदी० । जट्ठिदिउदी० असंखे०गुणा । सम्मामि० जह० ट्ठिदिउदी० असंखे०गुणा । सम्म० जह० ट्ठिदिउ० विसेसा० । बारसक०-सत्तणोक० जह० ट्ठिदिउदी० संखे०गुणा । अणंताणु०चउक्क० जह० ट्ठिदिउदो विसे० ।

§ ७००. सत्तमाए सव्वत्थोवा मिच्छ० जह० ट्ठिदिउदी० । जट्ठिदि० असंखे०-गुणा । सम्मामि० जह० ट्ठिदिउदी० असंखे०गुणा । सम्म० जह० ट्ठिदिउदी० विसेसा० । हस्स-रदि० जह० ट्ठिदिउदी० संखे०गुणा । अरदि-सोग० जह० ट्ठिदिउदी० विसे० । णवुंस० जह० ट्ठिदिउदी० विसे० । भय-दुगुंछा० जह० ट्ठिदिउदी० विसेसा० । सोलसक० जह० ट्ठिदिउदी० विसेसा० ।

§ ७०१. तिरिक्खेसु सव्वत्थोवा मिच्छ०-सम्म० जह० ट्ठिदिउदी० । जट्ठिदि० असंखे०गुणा । पुरिसवे० जह० ट्ठिदिउदी० असंखे०गुणा । इत्थिवेद० जह० ट्ठिदिउदी० विसेसा० । हस्स-रदि० जह० ट्ठिदिउदी० विसेसा० । अरदि-सोग० जह० ट्ठिदिउदी० विसेसा० । णवुंस० जह० ट्ठिदिउदी० विसेसा० । भय-दुगुंछा० जह० ट्ठिदिउदी० विसेसा० । सोलसक० जह० ट्ठिदिउदी० विसेसा० । सम्मामि० जह०

---

§ ६९९. दूसरीसे लेकर छठी पृथिवी तकके नारकियोंमें मिथ्यात्वकी जघन्य स्थिति-उदीरणा सबसे स्तोक है । उससे यत्स्थितिउदीरणा असंख्यातगुणी है । उससे सम्यग्मिथ्यात्वकी जघन्य स्थितिउदीरणा असंख्यातगुणी है । उससे सम्यक्त्वकी जघन्य स्थितिउदीरणा विशेष अधिक है । उससे बारह कषाय और सात नोकषायोंकी जघन्य स्थितिउदीरणा संख्यातगुणी है । उससे अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी जघन्य स्थितिउदीरणा विशेष अधिक है ।

§ ७००. सातवीं पृथिवीमें मिथ्यात्वकी जघन्य स्थितिउदीरणा सबसे स्तोक है । उससे यत्स्थितिउदीरणा असंख्यातगुणी है । उससे सम्यग्मिथ्यात्वकी जघन्य स्थितिउदीरणा असंख्यातगुणी है । उससे सम्यक्त्वकी जघन्य स्थितिउदीरणा विशेष अधिक है । उससे हास्य और रतिकी जघन्य स्थितिउदीरणा संख्यातगुणी है । उससे अरति और शोककी जघन्य स्थितिउदीरणा विशेष अधिक है । उससे नपुंसकवेदकी जघन्य स्थितिउदीरणा विशेष अधिक है । उससे भय और जुगुप्साकी जघन्य स्थितिउदीरणा विशेष अधिक है । उससे सोलह कषायोंकी जघन्य स्थितिउदीरणा विशेष अधिक है ।

§ ७०१. तिर्यञ्चोंमें मिथ्यात्व और सम्यक्त्वकी जघन्य स्थितिउदीरणा सबसे स्तोक है । उससे यत्स्थितिउदीरणा असंख्यातगुणी है । उससे पुरुषवेदकी जघन्य स्थितिउदीरणा असंख्यातगुणी है । उससे स्त्रीवेदकी जघन्य स्थितिउदीरणा विशेष अधिक है । उससे हास्य और रतिकी जघन्य स्थितिउदीरणा विशेष अधिक है । उससे अरति और शोककी जघन्य स्थितिउदीरणा विशेष अधिक है । उससे नपुंसकवेदकी जघन्य स्थितिउदीरणा विशेष अधिक है । उससे भय और जुगुप्साकी जघन्य स्थितिउदीरणा विशेष अधिक है । उससे सोलह कषायकी जघन्य स्थितिउदीरणा विशेष अधिक है । उससे सम्यग्मिथ्यात्वकी जघन्य स्थिति-

ट्ठिदिउदी० संखे०गुणा। एवं पंचिंदियतिरिक्खेसु। णवरि सोलसक०-भय-दुगुंछा० जह० ट्ठिदिउदी० सरिसा विसेसाहिया। एवं पंचिंदियतिरिक्खपज्ज०। णवरि इत्थिवेदो णत्थि।

§ ७०२. जोणिणीसु सव्वत्थोवा मिच्छ० जह० ट्ठिदिउदी०। जट्ठि०उदी० असंखे०गुणा। इत्थिवेद० जह० ट्ठिदिउदी० असंखे०गुणा। हस्स-रदि० जह० ट्ठिदिउदी० विसेसा०। अरदि-सोग० जह० ट्ठिदिउदी० विसेसा०। सोलसक०-भय-दुगुंछा० जह० ट्ठिदिउदी० विसेसा०। सम्मामि० जह० ट्ठिदिउदी० संखे०गुणा। सम्म० जह० ट्ठिदिउदी० विसेसा०।

§ ७०३. पंचिंदियतिरिक्खअपज्ज०-मणुसअपज्ज० सव्वत्थोवा हस्स-रदि० जह० ट्ठिदिउदी०। अरदि-सोग० जह० ट्ठिदिउदी० विसे०। णवुंस० जह० ट्ठिदिउदी० विसेसा०। सोलसक०-भय-दुगुंछा० जह० ट्ठिदिउदी० विसेसा०। मिच्छ० जह० ट्ठिदिउदी० विसेसा०। मणुसतिए ओघं। णवरि बारसक०-भय-दुगुंछा० जह० ट्ठिदिउदी० सरिसा। पज्जत्त० इत्थिवेदो णत्थि। मणुसिणी० पुरिसवे०-णवुंस० णत्थि।

§ ७०४. देवेसु सव्वत्थोवा मिच्छ०-सम्म० जह० ट्ठिदिउदी०। जट्ठिदि०उदी०

उदीरणा संख्यातगुणी है। इसीप्रकार पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि सोलह कषाय, भय और जुगुप्साकी जघन्य स्थितिउदीरणा सदृश होकर विशेष अधिक है। इसीप्रकार पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च पर्याप्तकोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनमें स्त्रीवेदकी उदीरणा नहीं है।

§ ७०२. योनिनी तिर्यञ्चोंमें मिथ्यात्वकी जघन्य स्थितिउदीरणा सबसे स्तोक है। उससे यत्स्थितिउदीरणा असंख्यातगुणी है। उससे स्त्रीवेदकी जघन्य स्थितिउदीरणा असंख्यातगुणी है। उससे हास्य और रतिकी जघन्य स्थितिउदीरणा विशेष अधिक है। उससे अरति और शोककी जघन्य स्थितिउदीरणा विशेष अधिक है। उससे सोलह कषाय, भय और जुगुप्साकी जघन्य स्थितिउदीरणा विशेष अधिक है। उससे सम्यग्मिथ्यात्वकी जघन्य स्थितिउदीरणा संख्यातगुणी है। उससे सम्यक्त्वकी जघन्य स्थितिउदीरणा विशेष अधिक है।

§ ७०३. पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्तकोंमें हास्य और रतिकी जघन्य स्थितिउदीरणा सबसे स्तोक है। उनसे अरति और शोककी जघन्य स्थितिउदीरणा विशेष अधिक है। उससे नपुंसकवेदकी जघन्य स्थितिउदीरणा विशेष अधिक है। उससे सोलह कषाय, भय और जुगुप्साकी जघन्य स्थितिउदीरणा विशेष अधिक है। उससे मिथ्यात्वकी जघन्य स्थितिउदीरणा विशेष अधिक है। मनुष्यत्रिकमें ओघके समान भंग है। इतनी विशेषता है कि बारह कषाय, भय और जुगुप्साकी जघन्य स्थितिउदीरणा सदृश है। पर्याप्तकोंमें स्त्रीवेदकी उदीरणा नहीं है तथा मनुष्यिनियोंमें पुरुषवेद और नपुंसकवेदकी उदीरणा नहीं है।

§ ७०४. देवोंमें मिथ्यात्व और सम्यक्त्वकी जघन्य स्थितिउदीरणा सबसे स्तोक है।

असंखे०गुणा । सम्मामि० जह० ट्ठिदिउदी० असंखे०गुणा । पुरिसवे० जह० ट्ठिदिउदी० संखे०गुणा । इत्थिवेद० जह० ट्ठिदिउदी० विसेसा० । हस्स-रदि० जह० ट्ठिदिउदी० विसेसा० । अरदि-सोग० जह० ट्ठिदिउदी० विसेसा० । सोलसक०-भय-दुगुंछा० जह० ट्ठिदिउदी० विसेसा० ।

§ ७०५. भवण०-वाणवें० सव्वत्थोवा मिच्छ० जह० ट्ठिदिउदी० । जट्ठिदि०उ० असंखे०गुणा । सम्मामि० जह० ट्ठिदिउदी० असंखे०गुणा । सम्म० जह० ट्ठिदिउदी० विसे० । पुरिसवेद० जह० ट्ठिदिउदी० संखे०गुणा । उवरि देवोघं ।

§ ७०६. जोदिसि० सव्वत्थोवा मिच्छ० जह० ट्ठिदिउदी० । जट्ठि०उ० असंखे०गुणा । सम्मामि० जह० ट्ठिदिउदी० असंखे०गुणा । सम्म० जह० ट्ठिदिउदी० विसेसा० । बारसक०-अट्ठणोक० जह० ट्ठिदिउदी० संखे०गुणा । अणंताणु०४ जह० ट्ठिदिउदी० विसेसा० । आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

§ ७०७. सोहम्मीसाण० सव्वत्थोवा मिच्छ०-सम्म० जह० ट्ठिदिउदी० । जट्ठि०उ० असंखे०गुणा । सम्मामि० जह० ट्ठिदिउदी० असंखे०गुणा । बारसक-सत्तणोक० जह० ट्ठिदिउदी० संखे०गुणा । अणंताणु०४ जह० ट्ठिदिउदी० संखे०गुणा । इत्थिवेद०

उससे यत्स्थितिउदीरणा असंख्यातगुणी है। उससे सम्यग्मिथ्यात्वकी जघन्य स्थितिउदीरणा असंख्यातगुणी है। उससे पुरुषवेदकी जघन्य स्थितिउदीरणा संख्यातगुणी है। उससे स्त्रीवेदकी जघन्य स्थितिउदीरणा विशेष अधिक है। उससे हास्य और रतिकी जघन्य स्थितिउदीरणा विशेष अधिक है। उससे अरति और शोककी जघन्य स्थितिउदीरणा विशेष अधिक है। उससे सोलह कषाय, भय और जुगुप्साकी जघन्य स्थितिउदीरणा विशेष अधिक है।

§ ७०५. भवनवासी और व्यन्तर देवोंमें मिथ्यात्वकी जघन्य स्थितिउदीरणा सबसे स्तोक है। उससे यत्स्थितिउदीरणा असंख्यातगुणी है। उससे सम्यग्मिथ्यात्वकी जघन्य स्थिति-उदीरणा असंख्यातगुणी है। उससे सम्यक्त्वकी जघन्य स्थितिउदीरणा विशेष अधिक है। उससे पुरुषवेदकी जघन्य स्थितिउदीरणा संख्यातगुणी है। इससे आगे सामान्य देवोंके समान भंग है।

§ ७०६. ज्योतिषी देवोंमें मिथ्यात्वकी जघन्य स्थितिउदीरणा सबसे स्तोक है। उससे यत्स्थितिउदीरणा असंख्यातगुणी है। उससे सम्यग्मिथ्यात्वकी जघन्य स्थितिउदीरणा असंख्यातगुणी है। उससे सम्यक्त्वकी जघन्य स्थितिउदीरणा विशेष अधिक है। उससे बारह कषाय और आठ नोकषायकी जघन्य स्थितिउदीरणा संख्यातगुणी है। उससे अनन्तानुबन्धी-चतुष्ककी जघन्य स्थितिउदीरणा विशेष अधिक है।

§ ७०७. सौधर्म और ऐशानकल्पमें मिथ्यात्व और सम्यक्त्वकी जघन्य स्थितिउदीरणा सबसे स्तोक है। उससे यत्स्थितिउदीरणा असंख्यातगुणी है। उससे सम्यग्मिथ्यात्वकी जघन्य स्थितिउदीरणा असंख्यातगुणी है। उससे बारह कषाय और सात नोकषायकी जघन्य स्थिति-उदीरणा संख्यातगुणी है। उससे अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी जघन्य स्थितिउदीरणा संख्यातगुणी

ज० ट्ठिदिउदी० विसेसा० । एवं सणक्कुमारादि जाव णवगेवज्जा त्ति । णवरि इत्थिवेदो णत्थि । अणुद्दिसादि सव्वट्ठा त्ति सव्वत्थोवा सम्म० जह० ट्ठिदिउदी० । जट्ठि०उ० असंखे०गुणा । बारसक०-सत्तणोक० जह० ट्ठिदिउदी० असंखेज्जगुणा । एवं जाव० ।

§ ७०८. भुजगारट्ठिदिउदीरणा त्ति तत्थ इमाणि तेरस अणिओगद्दाराणि—समुक्कित्तणादि जाव अप्पाबहुए त्ति । समुक्कित्तणाणु० दुविहो णि०—ओघेण आदेसेण य । ओघेण मिच्छ०-सम्म०-सोलसक०-णवणोक० अत्थि भुज०-अप्प०-अवट्ठि०-अवत्त०उदी० । सम्मामि० अत्थि अप्प०-अवत्त०ट्ठिदिउदी० ।

§ ७०९. आदेसेण णेरइय० मिच्छ०-सम्म०-सोलसक०-छण्णोक० अत्थि भुज०-अप्प०-अवट्ठि०-अवत्त०उदी० । णवुंस० अत्थि भुज०-अप्प०-अवट्ठि०ट्ठिदिउदी० । सम्मामि० ओघं । एवं सत्तसु पुढवीसु । तिरिक्खाणमोघं । एवं पंचिंदियतिरिक्खतिए । णवरि पज्जत्तएसु इत्थिवेदो णत्थि । जोणिणीसु पुरिसवेद-णवुंस० णत्थि । इत्थिवे० अवत्त० णत्थि । पंचिंदियतिरिक्खअपज्ज०-मणुसअपज्ज० मिच्छ० णवुंस० अत्थि भुज०-अप्प०-अवट्ठि०उदी० । सोलसक०-छण्णोक० ओघं । मणुस-

है । उससे स्त्रीवेदकी जघन्य स्थितिउदीरणा विशेष अधिक है । इसीप्रकार सनत्कुमारकल्पसे लेकर नौ ग्रैवेयकतकके देवोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनमें स्त्रीवेदकी उदीरणा नहीं है । अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धितकके देवोंमें सम्यक्त्वकी जघन्य स्थितिउदीरणा सबसे स्तोक है । उससे उत्कृष्ट स्थितिउदीरणा असंख्यातगुणी है । उससे बारह कषाय और सात नोकषायकी जघन्य स्थितिउदीरणा असंख्यातगुणी है । इसीप्रकार अनाहारक मार्गणातक जानना चाहिए ।

§ ७०८. भुजगार स्थितिउदीरणाका प्रकरण है । उसमें समुत्कीर्तनासे लेकर अल्पबहुत्वतक ये तेरह अनुयोगद्वार है । समुत्कीर्तनानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे मिथ्यात्व, सम्यक्त्व, सोलह कषाय और नौ नोकषायकी भुजगार, अल्पतर, अवस्थित और अवक्तव्यस्थितिके उदीरक जीव हैं । सम्यग्मिथ्यात्वकी अल्पतर और अवक्तव्यस्थितिके उदीरक जीव हैं ।

§ ७०९. आदेशसे नारकियोंमें मिथ्यात्व, सम्यक्त्व, सोलह कषाय और छह नोकषायकी भुजगार, अल्पतर, अवस्थित और अवक्तव्यस्थितिके उदीरक जीव हैं । नपुंसकवेदकी भुजगार, अल्पतर और अवस्थितस्थितिके उदीरक जीव हैं । सम्यग्मिथ्यात्वका भंग ओघके समान है । इसीप्रकार सातों पृथिवियोंमें जानना चाहिए । सामान्य तिर्यञ्चोंका भंग ओघके समान है । इसीप्रकार पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकमें जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि पर्याप्तकोंमें स्त्रीवेदकी उदीरणा नहीं है, योनिनियोंमें पुरुषवेद और नपुंसकवेदकी उदीरणा नहीं है तथा स्त्रीवेदकी अवक्तव्यस्थितिके उदीरक नहीं हैं । पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्तकोंमें मिथ्यात्व और नपुंसकवेदकी भुजगार, अल्पतर और अवस्थितस्थितिके उदीरक जीव हैं । सोलह कषाय और छह नोकषायका भंग ओघके समान है । मनुष्यत्रिकमें ओघके

तिए ओघं। णवरि पज्ज० इत्थिवे० णत्थि। मणुसिणीसु पुरिसवे०-णवुंस० णत्थि।

§ ७१०. देवेसु मिच्छ०-सम्म०-सम्मामि०-सोलसक०-अट्ठणोक० ओघं। णवरि इत्थिवे०-पुरिसवे० अवत्त० णत्थि। एवं भवण०-वाणवें०-जोदिसि०-सोहम्मीसाणे त्ति। सणक्कुमारादि सहस्सार त्ति एवं चेव। णवरि इत्थिवे० णत्थि। आणदादि णवगेवज्जा त्ति मिच्छ०-सम्मामि०-सोलसक०-छण्णोक० अत्थि अप्प०-अवत्त०। पुरिसवे० अत्थि अप्प०ट्ठिदिउदी०। सम्म० अत्थि भुज०-अप्प०-अवत्त०-ट्ठिदिउदी०। अणुदिसादि सव्वट्ठा त्ति सम्म०-बारसक० छण्णोक० अत्थि अप्प०-अवत्त०। पुरिसवे० अत्थि अप्प०ट्ठिदिउदी०। एवं जाव०।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

§ ७११. सामित्ताणु० दुविहो णि०—ओघेण आदेसेण य। ओघेण मिच्छ०-अणंताणु०४ भुज०-अप्प०-अवट्ठि०-अवत्त० कस्स? अण्णद० मिच्छाइट्ठिस्स। सम्मत्तस्स भुज०-अप्प० अवट्ठि०-अवत्त० कस्स? अण्णद० सम्माइट्ठि०। सम्मामि० अप्प०-अवत्त० कस्स? अण्णद० सम्मामिच्छादिट्ठि०। बारसक०-णवणोक० भुज०-अवट्ठि० कस्स? अण्णद० मिच्छाइट्ठि०। अप्प०-अवत्त० कस्स? अण्णद० मिच्छा-

---

समान भंग है। इतनी विशेषता है कि पर्याप्तकोंमें स्त्रीवेदकी उदीरणा नहीं है और मनुष्यिनियोंमें पुरुषवेद और नपुंसकवेदकी उदीरणा नहीं है।

§ ७१०. देवोंमें मिथ्यात्व, सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व, सोलह कषाय और आठ नोकषायका भंग ओघके समान है। इतनी विशेषता है कि इनमें स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी अवक्तव्यस्थितिके उदीरक जीव नहीं हैं। इसीप्रकार भवनवासी, व्यन्तर, ज्योतिषी और सौधर्म ऐशानकल्पके देवोंमें जानना चाहिए। सनत्कुमारकल्पसे लेकर सहस्रारकल्पतकके देवोंमें इसीप्रकार जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनमें स्त्रीवेदकी उदीरणा नहीं है। आनतकल्पसे लेकर नौ ग्रैवेयकतकके देवोंमें मिथ्यात्व, सम्यग्मिथ्यात्व, सोलह कषाय और छह नोकषायकी अल्पतर और अवक्तव्यस्थितिके उदीरक जीव हैं। पुरुषवेदकी अल्पतरस्थितिके उदीरक जीव हैं। सम्यक्त्वकी भुजगार, अल्पतर और अवक्तव्यस्थितिके उदीरक जीव हैं। अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धितकके देवोंमें सम्यक्त्व, बारह कषाय और छह नोकषायकी अल्पतर और अवक्तव्यस्थितिके उदीरक जीव हैं। पुरुषवेदकी अल्पतरस्थितिके उदीरक जीव हैं। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणातक जानना चाहिए।

§ ७११. स्वामित्वानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी भुजगार, अल्पतर, अवस्थित और अवक्तव्यस्थितिके उदीरक जीव कौन हैं? अन्यतर मिथ्यादृष्टि जीव उदीरक हैं। सम्यक्त्वकी भुजगार, अल्पतर, अवस्थित और अवक्तव्यस्थितिके उदीरक जीव कौन हैं? अन्यतर सम्यग्दृष्टि जीव उदीरक हैं। सम्यग्मिथ्यात्वकी अल्पतर और अवक्तव्य स्थितिके उदीरक जीव कौन हैं? अन्यतर सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीव उदीरक हैं। बारह कषाय और नौ नोकषायकी भुजगार और अवस्थितस्थितिके उदीरक जीव कौन हैं? अन्यतर मिथ्यादृष्टि जीव उदीरक हैं। अल्पतर और

इट्ठिस्स सम्माइट्ठिस्स वा ।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

§ ७१२. आदेसेण णेरइय० मिच्छ०-सम्म०-सम्मामि०-सोलसक०-सत्तणोक० ओघं। णवरि णवुंस० अवत्त० णत्थि। तिरिक्खेसु ओघं। णवरि तिण्णिवे० अवत्त० मिच्छाइट्ठिस्स। एवं पंचिंदियतिरिक्खतिए। णवरि पज्जत्तएसु इत्थिवेदो णत्थि। जोणिणीसु पुरिसवे०-णवुंस० णत्थि। इत्थिवे० अवत्तव्वं च णत्थि। पंचिं०तिरि०अपज्ज०-मणुसअपज्ज० सव्वपयडी० सव्वपदा कस्स? अण्णद०। मणुसतिए ओघं। णवरि पज्जत्तएसु इत्थिवेदो णत्थि। मणुसिणी० पुरिसवे०-णवुंस० णत्थि। इत्थिवे० अवत्त० कस्स? अण्णद० सम्माइट्ठिस्स।

§ ७१३. देवेसु सत्तावीसपयडी० ओघं। णवरि इत्थिवे०-पुरिसवे० अवत्त० णत्थि। एवं भवण०-वाणवें०-जोदिसि०-सोहम्मीसाणा त्ति। एवं सणक्कुमारादि सहस्सारा त्ति। णवरि इत्थिवे० णत्थि। आणदादि णवगेवज्जा त्ति मिच्छ०-अणंताणु०४ अप्प०-अवत्त० कस्स? अण्णद० मिच्छाइट्ठि०। सम्म० भुज०-अप्प०-अवत्त० कस्स०? अण्णद० सम्मा०। सम्मामि० ओघं। बारसक०-छण्णोक० अप्प०-

---

अवक्तव्यस्थितिके उदीरक जीव कौन हैं? अन्यतर मिथ्यादृष्टि और सम्यग्दृष्टि जीव उदीरक हैं।

§ ७१२. आदेशसे नारकियोंमें मिथ्यात्व, सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व, सोलह कषाय और सात नोकषायका भंग ओघके समान है। इतनी विशेषता है कि इनमें नपुंसकवेदकी अवक्तव्य स्थितिके उदीरक जीव नहीं हैं। तिर्यञ्चोंमें ओघके समान भंग है। इतनी विशेषता है कि इनमें तीन वेदकी अवक्तव्यस्थितिके उदीरक जीव मिथ्यादृष्टि हैं। इसीप्रकार पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि पर्याप्तकोंमें स्त्रीवेदकी उदीरणा नहीं है और योनिनियोंमें पुरुषवेद तथा नपुंसकवेदकी उदीरणा नहीं है। तथा इनमें स्त्रीवेदके उदीरकोंका अवक्तव्यपद नहीं है। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्तकोंमें सब प्रकृतियोंके सब पदोंके उदीरक जीव कौन हैं? अन्यतर जीव उदीरक हैं। मनुष्यत्रिकमें ओघके समान भंग है। इतनी विशेषता है कि पर्याप्तकोंमें स्त्रीवेदकी उदीरणा नहीं है तथा मनुष्यिनियोंमें पुरुषवेद और नपुंसकवेदकी उदीरणा नहीं है। मनुष्यिनियोंमें स्त्रीवेदकी अवक्तव्यस्थितिके उदीरक जीव कौन हैं? अन्यतर सम्यग्दृष्टि जीव उदीरक हैं।

§ ७१३. देवोंमें सत्ताईस प्रकृतियोंका भंग ओघके समान है। इतनी विशेषता है कि इनमें स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी अवक्तव्यस्थितिके उदीरक जीव नहीं हैं। इसीप्रकार भवनवासी, व्यन्तर, ज्योतिषी तथा सौधर्म और ऐशानकल्पके देवोंमें जानना चाहिए। इसीप्रकार सनत्कुमारसे लेकर सहस्रारकल्पतकके देवोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनमें स्त्रीवेदकी उदीरणा नहीं है। आनतकल्पसे लेकर नौ ग्रैवेयकतकके देवोंमें मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी अल्पतर और अवक्तव्यस्थितिके उदीरक जीव कौन हैं? अन्यतर मिथ्यादृष्टि जीव उदीरक हैं। सम्यक्त्वकी भुजगार, अल्पतर और अवक्तव्य स्थितिके उदीरक जीव कौन हैं? अन्यतर सम्यग्दृष्टि जीव उदीरक हैं। सम्यग्मिथ्यात्वका भंग ओघके समान है।

अवत्त० कस्स ? अण्णद० मिच्छाइट्ठि० सम्माइट्ठिस्स वा । एवं पुरिसवे० । णवरि अवत्त० णत्थि । अणुद्दिसादि सव्वट्ठा त्ति वीसं पय० सव्वपदा कस्स ? अण्णद० । एत्थोघपरूवणाए पुरिसवे०-चदुसंजलणभुजगारो सम्माइट्ठिस्स वि लब्भइ । एवं मणुसतिए चदुसंजलणभुजगारो वत्तव्वो । णवरि एस संभवो एत्थ ण विवक्खिओ । एवं जाव० ।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

§ ७१४. कालाणुगमेण दुविहो णि०—ओघेण आदेसेण य । ओघेण मिच्छ० भुज० जह० एयस०, उक्क० चत्तारि समया । अप्प०ट्ठिदिउदी० जह० एयसमओ, उक्क० एक्कत्तीसं सागरो० सादिरेयाणि । अवट्ठि०ट्ठिदिउदी० जह० एगसमओ, उक्क० अंतोमुहुत्तं । अवत्त०ट्ठिदिउदीरणा० जह० उक्क० एयस० । सम्म० भुज०-अवट्ठि०-अवत्त०ट्ठिदिउदी० जह० उक्क० एयस० । अप्प०ट्ठिदिउदी० जह० अंतोमु०, उक्क० छावट्ठिसागरो० देसूणाणि । सम्मामि० अप्प०ट्ठिदिउदी० जह० उक्क० अंतोमु० । अवत्त० जह० उक्क० एयस० । सोलसक०-भय-दुगुंछा० भुज०ट्ठिदिउदी० जह० एगस०, उक्क० एगूणवीसं समया । अप्प०-अवट्ठि०ट्ठिदिउदी० जह० एयस०, उक्क० अंतोमु० । अवत्त० जह० उक्क० एगस० । एवं हस्स-रदि० ।

बारह कषाय और छह नोकषायकी अल्पतर और अवक्तव्य स्थितिके उदीरक जीव कौन हैं ? अन्यतर मिथ्यादृष्टि और सम्यग्दृष्टि जीव उदीरक हैं । इसीप्रकार पुरुषवेदके विषयमें समझना चाहिए । इतनी विशेषता है कि इनमें पुरुषवेदकी अवक्तव्य स्थितिउदीरणा नहीं है । अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धितकके देवोंमें बीस प्रकृतियोंके सब पदोंके उदीरक जीव कौन हैं । अन्यतर जीव उदीरक हैं । यहाँपर ओघप्ररूपणाके अनुसार पुरुषवेद और चार संज्वलनका भुजगारपद सम्यग्दृष्टिके भी उपलब्ध होता है । इसीप्रकार मनुष्यत्रिकमें चार संज्वलनका भुजगारपद कहना चाहिए । इतनी विशेषता है कि यह सम्भव है इसकी यहाँ विवक्षा नहीं है । इसीप्रकार अनाहारक मार्गणातक जानना चाहिए ।

§ ७१४. कालानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे मिथ्यात्वकी भुजगार स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल चार समय है । अल्पतर स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल साधिक इकतीस सागर है । अवस्थित स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है । अवक्तव्य स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है । सम्यक्त्वकी भुजगार, अवस्थित और अवक्तव्य स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है । अल्पतर स्थितिउदीरणाका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट काल कुछ कम छयासठ सागर है । सम्यग्मिथ्यात्वकी अल्पतर स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है । अवक्तव्य-स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है । सोलह कषाय, भय और जुगुप्साकी भुजगारस्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल उन्नीस समय है । अल्पतर और अवस्थितस्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है । अवक्तव्य स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्टकाल एक समय है । इसीप्रकार

णवरि अप्पद० जह० एयस०, उक० छम्मासा। एवमरदि-सोग०। णवरि अप्प० जह० एयस०, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो। एवमित्थिवे०। णवरि अप्प० जह० एगस०, उक्क० पणवण्णपलिदो० देसूणाणि। एवं पुरिसवे०। णवरि अप्प० जह० एयस०, उक्क० तेवट्ठिसागरोवमसदं तीहि पलिदोवमेहि सादिरेयं। एवं णवुंस०। णवरि अप्पद० जह० एयस०, उक्क० तेत्तीसं सागरो० देसूणाणि।

हास्य और रतिकी अपेक्षा जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनकी अल्पतर स्थिति-उदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल छह महीना है। इसीप्रकार अरति और शोककी अपेक्षा जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनकी अल्पतर स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। इसीप्रकार स्त्रीवेदकी अपेक्षा जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इसकी अल्पतर स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल कुछ कम पचवन पल्य है। इसीप्रकार पुरुषवेदकी अपेक्षा जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इसकी अल्पतर स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल तीन पल्य अधिक एकसौ त्रेसठ सागर है। इसीप्रकार नपुंसकवेदकी अपेक्षा जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इसकी अल्पतर स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल कुछ कम तेतीस सागर है।

विशेषार्थ—जिस जीवने मिथ्यात्वका कमसे कम एक समयतक भुजगारस्थितिबन्ध किया है उसके तदनुसार एक समयतक भुजगार स्थितिउदीरणा होनेपर मिथ्यात्वकी भुजगार स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय कहा है। तथा जिस जीवने अद्धाक्षय और संक्लेशक्षय आदिके क्रमसे अधिकसे अधिक चार समयतक मिथ्यात्वकी भुजगार स्थितिका बन्ध किया है उसके चार समयतक भुजगार स्थितिउदीरणा सम्भव होनेसे मिथ्यात्वकी भुजगार स्थिति-उदीरणाका उत्कृष्ट काल चार समय कहा है। जिस जीवने कमसे कम एक समयतक अल्पतर स्थितिका बन्ध किया है उसके मिथ्यात्वकी एक समय तक अल्पतर स्थितिउदीरणा सम्भव होनेसे उसका जघन्य काल एक समय कहा है। तथा नौवें ग्रैवेयकमें मिथ्यादृष्टिके मिथ्यात्वकी निरन्तर अल्पतर स्थितिउदीरणा होनेसे उसका उत्कृष्ट काल इकतीस सागर कहा है। जिस जीवने सत्कर्मके समान मिथ्यात्वकी अवस्थित स्थितिका एक समयतक बन्ध किया है उसके एक समयतक उसकी अवस्थित स्थितिउदीरणा सम्भव होनेसे उसका जघन्य काल एक समय कहा है। तथा जिसने सत्कर्मके समान अन्तर्मुहूर्त कालतक उसका अवस्थित स्थितिबन्ध किया है उसके उतने कालतक मिथ्यात्वकी अवस्थित स्थितिउदीरणा सम्भव होनेसे उसका उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त कहा है। इसकी अवक्तव्य स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है यह स्पष्ट ही है, क्योंकि जो सम्यग्दृष्टि जीव मिथ्यात्वका अनुदीरक होकर मिथ्यादृष्टि होनेपर प्रथम समयमें इसकी उदीरणा करता है उसकी अवक्तव्य संज्ञा है। वेदकसम्यक्त्वका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट काल कुछ कम छयासठ सागर है, इसलिए सम्यक्त्वकी अल्पतर स्थितिउदीरणाका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट काल कुछ कम छयासठ सागर कहा है। जो मिथ्यादृष्टि जीव सम्यक्त्व सत्कर्मसे दो समय अधिक आदि मिथ्यात्वकी स्थिति बाँधकर वेदकसम्यग्दृष्टि होता है उसके सम्यक्त्वकी भुजगार स्थितिविभक्ति एक समय तक पाई जानेसे उसका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय कहा है। जो मिथ्यादृष्टि जीव

§ ७१५. आदेसेण णेरइय० मिच्छ०-सोलसक०-छण्णोक० भुज०ट्ठिदिउदी० जह० एयस०, उक्क० तिण्णि समया अट्ठारस समया। अप्प०-अवट्ठि० जह० एयस०, उक्क० अंतोमु०। अवत्त० जह० उक्क० एयस०। णवरि अरदि-सोग० अप्पद० जह० एयस०, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो। हस्स-रदि-भुज०ट्ठिदिउदी०

....

सम्यक्त्व सत्कर्मसे मिथ्यात्वकी एक समय अधिक स्थिति बाँधकर वेदकसम्यग्दृष्टि होता है उसके सम्यक्त्वकी अवस्थित स्थितिविभक्ति एक समयतक पाई जानेसे उसका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय कहा है। तथा जो मिथ्यादृष्टि या उपशमसम्यग्दृष्टि जीव वेदक-सम्यग्दृष्टि होता है उसके प्रथम समयमें एक समयतक अवक्तव्य स्थितिउदीरणा होनेसे उसका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय कहा है। सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थानका काल अन्तर्मुहूर्त है, इसलिए सम्यग्मिथ्यात्वकी अल्पतर स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त कहा है। तथा इस गुणस्थानके प्रथम समयमें सम्यग्मिथ्यात्वकी अवक्तव्य स्थितिउदीरणा होती है, इसलिए इसका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय कहा है। सोलह कषाय और नौ नोकषायोंकी भुजगार, अल्पतर और अवस्थित स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय मिथ्यात्वकी भुजगारादि स्थितिउदीरणाके जघन्य कालके समान घटित कर लेना चाहिए। इन सब प्रकृतियोंकी भुजगार स्थितिउदीरणाका जो उत्कृष्ट काल उन्नीस समय बतलाया है उसका खुलासा इस प्रकार है—जिस एकेन्द्रियकी सत्रह समय अधिक एक आवलि आयु शेष है वह विवक्षित कषायके सिवाय शेष पन्द्रह कषायोंका क्रमसे अद्धाक्षय होनेसे स्थिति बढ़ाकर बन्ध करे, फिर बन्धक्रमसे एक आवलि काल जानेपर उसी क्रमसे पन्द्रह समयोंके भीतर विवक्षित कषायमें उनका संक्रम करे। इसप्रकार भुजगारके ये पन्द्रह समय हुए। पुनः सोलहवें समयमें अद्धाक्षयसे विवक्षित कषायका स्थिति बढ़ाकर बन्ध करे, पुनः सत्रहवें समयमें संक्लेशक्षयसे विवक्षित कषायके साथ सब कषायोंका स्थिति बढ़ाकर बन्ध करे, पुनः अठारहवें समयमें मरकर एक विग्रहसे संज्ञियोंमें उत्पन्न होकर असंज्ञीके योग्य भुजगार स्थितिका बन्ध करे, पुनः उन्नीसवें समयमें संज्ञीके योग्य स्थिति बढ़ाकर बन्ध करे। इस प्रकार प्रत्येक कषायके भुजगारके उन्नीस समय होकर इसी क्रमसे उदीरणा होनेपर प्रत्येक कषायकी भुजगार स्थितिउदीरणाका उत्कृष्ट काल उन्नीस समय कहा है। इसीप्रकार नौ नोकषायोंकी भुजगार स्थितिउदीरणाका काल यथासम्भव जान लेना चाहिए। इन सब प्रकृतियोंकी अवक्तव्य स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है यह स्पष्ट ही है। इन सब प्रकृतियोंकी अवस्थित स्थिति-उदीरणाका उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है यह भी स्पष्ट है। मात्र इनकी अल्पतर स्थितिउदीरणाका काल १८ का अन्तर्मुहूर्त और शेषका जुदा-जुदा है सो जानकर घटित कर लेना चाहिए। कोई कठिनाई न होनेसे यहाँ अलगसे स्पष्टीकरण नहीं किया।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

§ ७१५. आदेशसे नारकियोंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय और छह नोकषायकी भुजगार स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल तीन समय तथा अठारह समय है। अल्पतर और अवस्थित स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। अवक्तव्य स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। इतनी विशेषता है कि अरति और शोककी अल्पतर स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। हास्य और रतिकी भुजगार

जह० एयस०, उक्क० सत्तारस समया। सम्म० भुज०-अवट्ठि०-अवत्त० जह० उक्क० एगस०। अप्प०ट्ठिदिउदी० जह० एगस०, उक्क० तेत्तीसं सागरो० देसूणाणि। सम्मामि० ओघं। णवुंस० भुज०ट्ठिदिउदी० जह० एयस०, उक्क० अट्ठारस समया। अप्प० जह० एगस०, उक्क० तेत्तीसं सागरो० देसूणाणि। अवट्ठि० जह० एयस०, उक्क० अंतोमु०। एवं पढमाए। णवरि सगट्ठिदी। अरदि-सोग० अप्प० जह० एगस०, उक्क० अंतोमु०।

§ ७१६. बिदियादि सत्तमा त्ति मिच्छ०-सोलसक०-छण्णोक० भुज० जह० एयसमओ, उक्क० बेसमया सत्तारस समया। अप्पद०-अवट्ठि०-अवत्त० पढमाए भंगो। सम्म० ओघं। णवरि अप्पद० जह० अंतोमु०, उक्क० सगट्ठिदी देसूणा। सम्मा० ओघं। णवुंस० भुज०ट्ठिदिउदी० जह० एयस०, उक्क० सत्तारस समया। अप्पद० जह० एयस०, उक्क० सगट्ठिदी देसूणा। अवट्ठि० ओघं। णवरि सत्तमाए

स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल सत्रह समय है। सम्यक्त्वकी भुजगार, अवस्थित और अवक्तव्य स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अल्पतर स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल कुछ कम तेतीस सागर है। सम्यग्मिथ्यात्वका भंग ओघके समान है। नपुंसकवेदकी भुजगार स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अठारह समय है। अल्पतर स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल कुछ कम तेतीस सागर है। अवस्थित स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। इसीप्रकार प्रथम पृथिवीमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि अपनी स्थिति कहनी चाहिए। अरति और शोककी अल्पतर स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है।

विशेषार्थ—एकेन्द्रिय जीव मरकर नरकमें नहीं उत्पन्न होता, इसलिए यहाँ मिथ्यात्वकी भुजगार स्थितिउदीरणाके तीन समय और सोलह कषाय तथा अरति-शोक और भय-जुगुप्साकी भुजगार स्थितिउदीरणाके अठारह समय कहे हैं। मात्र भुजगार स्थितिउदीरणाके ये अठारह समय हास्य और रतिके नहीं प्राप्त होते, इसलिए इनकी अपेक्षा सत्रह समय कहे हैं। शेष कथन सुगम है।

§ ७१६. दूसरी पृथिवीसे लेकर सातवीं पृथिवीतकके नारकियोंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय और छह नोकषायकी भुजगार स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल दो समय तथा सत्रह समय है। अल्पतर, अवस्थित और अवक्तव्य स्थितिउदीरणाका भंग प्रथम पृथिवीके समान है। सम्यक्त्वका भंग ओघके समान है। इतनी विशेषता है कि अल्पतर स्थितिउदीरणाका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट काल कुछ कम अपनी स्थितिप्रमाण है। सम्यग्मिथ्यात्वका भंग ओघके समान है। नपुंसकवेदकी भुजगार स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल सत्रह समय है। अल्पतर स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल कुछ कम अपनी स्थितिप्रमाण है। अवस्थित स्थितिउदीरणाका भंग ओघके समान है। इतनी विशेषता है कि सातवीं पृथिवीमें

अरदि-सोग० अप्प० जह० एयस०, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो ।

§ ७१७. तिरिक्खेसु मिच्छ० ओघं । णवरि अप्प० जह० एयस०, उक्क० तिण्णि पलिदो० सादिरेयाणि । एवमित्थिवेद-पुरिसवेदाणं । सोलसक०-छण्णोक० ओघं । णवरि अरदि-सोग०-हस्स-रदि० अप्प० जह० एयस०, उक्क० अंतोमु० । सम्म० ओघं । णवरि अप्प० जह० एयस०, उक्क० तिण्णि पलिदो० देसूणाणि । सम्मामि० ओघं । णवुंस० ओघं । णवरि अप्प० जह० एयस०, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो । एवं पंचिंदियतिरिक्खतिए । णवरि णवुंस० अप्प० जह० एयस०, उक्क० पुव्वकोडिपुधत्तं । पज्जत्त० इत्थिवे० णत्थि । जोणिणीसु पुरिसवेद-णवुंस० णत्थि । इत्थिवे० अवत्तव्वं च णत्थि । सम्म० अप्प० जह० अंतोमु०, उक्क० तिण्णि पलिदो० देसूणाणि ।

अरति और शोककी अल्पतर स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है ।

विशेषार्थ—द्वितीयादि नरकोंमें असंज्ञी जीव मरकर नहीं उत्पन्न होता, इसलिए इनमें मिथ्यात्वकी भुजगार स्थितिउदीरणाका उत्कृष्ट काल दो समय तथा सोलह कषाय और सात नोकषायोंकी भुजगार स्थितिउदीरणाका उत्कृष्ट काल सत्रह समय बनता है। अरति और शोककी अल्पतर स्थितिउदीरणाका उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण सातवें नरकमें ही प्राप्त होता है। शेष कथन सुगम है।

§ ७१७. तिर्यञ्चोंमें मिथ्यात्वका भंग ओघके समान है। इतनी विशेषता है कि अल्पतर स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल साधिक तीन पल्य है। इसीप्रकार स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी अपेक्षा जानना चाहिए। सोलह कषाय और छह नोकषायका भंग ओघके समान है। इतनी विशेषता है कि अरति-शोक तथा हास्य-रतिकी अल्पतर स्थिति-उदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। सम्यक्त्वका भंग ओघके समान है। इतनी विशेषता है कि इसकी अल्पतर स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल कुछ कम तीन पल्य है। सम्यग्मिथ्यात्वका भंग ओघके समान है। नपुंसकवेदका भंग ओघके समान है। इतनी विशेषता है कि अल्पतर स्थिति-उदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। इसीप्रकार पञ्चेन्द्रियतिर्यञ्चत्रिकमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनमें नपुंसकवेदकी अल्पतर स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल पूर्वकोटिपृथक्त्वप्रमाण है। पर्याप्तकोंमें स्त्रीवेदकी उदीरणा नहीं है और योनिनियोंमें पुरुषवेद तथा नपुंसकवेदकी उदीरणा नहीं है। योनिनियोंमें स्त्रीवेदकी अवक्तव्य स्थितिउदीरणा नहीं है। सम्यक्त्वकी अल्पतर स्थितिउदीरणाका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट काल कुछ कम तीन पल्य है।

विशेषार्थ—नपुंसकवेदकी अल्पतर स्थितिउदीरणाका उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण सामान्य तिर्यञ्चों ही बनता है। शेष कथन सुगम है।

§ ७१८. पंचिंदियतिरिक्खअपज्ज०-मणुसअपज्ज० मिच्छ० भुज०ट्ठिदिउदी० जह० एगस०, उक्क० चत्तारि समया । अप्प०-अवट्ठि० जह० एयस०, उक्क० अंतोमु० । एवं णवुंस० । णवरि भुज० जह० एयस०, उक्क० एगूणवीसं समया । एवं सोलसक०-छण्णोक० । णवरि अवत्त० जह० उक्क० एयसमओ ।

§ ७१९. मणुसतिए पंचिंदियतिरिक्खतियभंगो । णवरि सम्म० अप्प० जह० अंतोमु० । पज्जत्त० सम्म० अप्प० जह० एगस० । मणुसिणी० इत्थिवे० अवत्त० जह० उक्क० एयस० ।

§ ७२०. देवगदीए देवेसु मिच्छ०-सोलसक०-छण्णोक० पढमपुढविभंगो । णवरि मिच्छ० अप्प० जह० एगस०, उक्क० एक्कत्तीसं सागरोवमाणि । हस्स-रदि० भुज० जह० एयस०, उक्क० अट्ठारस समया । अप्प० जह० एगस०, उक्क० छम्मासं । अरदि-सोगाणं भुज० जह० एयस०, उक्क० सत्तारस समया । सम्म० ओघं । णवरि

§ ७१८. पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्तकोंमें मिथ्यात्वकी भुजगार स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल चार समय है। अल्पतर और अवस्थित स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। इसीप्रकार नपुंसकवेदकी अपेक्षा जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इसके भुजगार स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल उन्नीस समय है। इसीप्रकार सोलह कषाय और छह नोकषायकी अपेक्षा जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनकी अवक्तव्य स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है।

§ ७१९. मनुष्यत्रिकमें पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकके समान भंग है। इतनी विशेषता है कि सम्यक्त्वकी अल्पतर स्थितिउदीरणाका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है। मनुष्य पर्याप्तकोंमें सम्यक्त्वकी अल्पतर स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है। मनुष्यिनियोंमें स्त्रीवेदकी अवक्तव्य स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है।

विशेषार्थ—उत्तम भोगभूमिकी अपेक्षा मनुष्य पर्याप्तकोंमें सम्यक्त्वकी अल्पतर स्थिति-उदीरणाका जघन्य काल एक समय बन जाता है, क्योंकि जो मनुष्यिनी क्षायिक सम्यक्त्वको उत्पन्न कर रही है उसके सम्यक्त्वकी उदीरणामें एक समय शेष रहने पर मरकर वहाँके मनुष्य पर्याप्तकोंमें उत्पन्न होनेपर यह काल प्राप्त होता है तथा उपशमश्रेणिकी अपेक्षा मनुष्यिनियोंमें स्त्रीवेदकी अवक्तव्य स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय बन जाता है। शेष कथन सुगम है।

§ ७२०. देवगतिमें देवोंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय और छह नोकषायका भंग प्रथम पृथिवीके समान है। इतनी विशेषता है कि मिथ्यात्वकी अल्पतर स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल इकतीस सागर है। हास्य और रतिकी भुजगार स्थिति-उदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अठारह समय है। अल्पतर स्थिति-उदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल छह महीना है। अरति और शोककी

१. ता०-आ०प्रत्योः उक्क० देवगदीए इति पाठः।

अप्प० जह० एयस०, उक्क० तेत्तीसं सागरोवमाणि। सम्मामि० ओघं। इत्थिवे०-पुरिसवे० हस्सभंगो। णवरि अप्प० जह० एयस०, उक्क० पणवण्णं पलिदोवमं देसूणं तेत्तीसं सागरोवमं। अवत्त० णत्थि। एवं भवण०-वाणवें०। णवरि सगट्ठिदी। मिच्छ० अप्प० जह० एयस०, उक्क० अंतोमु०। सम्म० अप्प० जह० अंतोमु०। इत्थिवे० अप्प० जह० एयस०, उक्क० तिण्णि पलिदो० देसूणाणि पलिदो० सादिरेयाणि। हस्स-रदि० अप्प० जह० एगस०, उक्क० अंतोमु०। जोदिसि० वाण-वेंतरभंगो। णवरि मिच्छ०-सोलसक० अट्ठणोक० भुज० जह० एगस०, उक्क० बे समया सत्तारस समया। सोहम्मादि जाव सहस्सारे त्ति एवं चेव। णवरि सगट्ठिदी। सम्म० अप्प० जह० एयस०, उक्क० सगट्ठिदी। इत्थिवेद० अप्प० जह० एयस०, उक्क० पणवण्णं पलिदोवमं देसूणं। सणक्कुमारादिसु इत्थिवेदो णत्थि। सहस्सारे हस्स-रदि० अप्प० ओघं।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

भुजगार स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल सत्रह समय है। सम्यक्त्वका भंग ओघके समान है। इतनी विशेषता है कि अल्पतर स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल तेतीस सागर है। सम्यग्मिथ्यात्वका भंग ओघके समान है। स्त्रीवेद और पुरुषवेदका भंग हास्यके समान है। इतनी विशेषता है कि अल्पतर स्थिति-उदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल क्रमसे कुछ कम पचवन पल्य और पूरा तेतीस सागर है। इनकी अवक्तव्य स्थितिउदीरणा नहीं है। इसीप्रकार भवनवासी और व्यन्तर देवोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि अपनी स्थिति कहनी चाहिए। मिथ्यात्वकी अल्पतर स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। सम्यक्त्वकी अल्पतर स्थितिउदीरणाका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है। स्त्रीवेदकी अल्पतर स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल कुछ कम तीन पल्य और साधिक एक पल्य है। हास्य-रतिकी अल्पतर स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। ज्योतिषी देवोंमें व्यन्तरदेवोंके समान भंग है। इतनी विशेषता है कि मिथ्यात्व, सोलह कषाय और आठ नोकषायकी भुजगार स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल दो समय और सत्रह समय है। सौधर्म आदिसे लेकर सहस्रार कल्पतकके देवोंमें इसीप्रकार जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि अपनी स्थिति कहनी चाहिए। सम्यक्त्वकी अल्पतर स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अपनी स्थितिप्रमाण है। स्त्रीवेदकी अल्पतर स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल कुछ कम पचवन पल्य है। सनत्कुमारादिमें स्त्रीवेदकी उदीरणा नहीं है। सहस्रारमें हास्य और रतिकी अल्पतर स्थितिउदीरणाका भंग ओघके समान है।

विशेषार्थ—जो जीव मरकर देवोंमें उत्पन्न होता है उसके मरणके पूर्व अरति और शोकका बन्ध नहीं होता, इसलिए देवोंमें अरति और शोककी भुजगार स्थितिउदीरणाका उत्कृष्ट काल सत्रह समय कहा है। इसीप्रकार नारकियोंमें मरकर जो जीव उत्पन्न होता है उसके मरणके पूर्व हास्य और रतिका बन्ध नहीं होता, इसलिए नारकियोंमें हास्य और रतिकी भुजगार स्थितिउदीरणाका उत्कृष्ट काल सत्रह समय कह आये हैं। शेष कथन सुगम है।

§ ७२१. आणदादि जाव णवगेवज्जा त्ति मिच्छ० अप्प० जह० अंतोमुहुत्तं, उक्क० सगट्ठिदी। अवत्त० जह० उक्क० एयस०। सम्म० भुज०-अवत्त० जह० उक्क० एयस०। अप्प० जह० एयस०, उक्क० सगट्ठिदी। सम्मामि० ओघं। सोलसक०-छण्णोक० अप्प० जह० एगस०, उक्क० अंतोमु०। अवत्त० जह० उक्क० एगस०। पुरिसवे० अप्प० जहण्णुक्क० जहण्णुक्कस्सट्ठिदी।

§ ७२२. अणुद्दिसादि सव्वट्ठा त्ति सम्म० अप्प० जह० एगस०, उक्क० सगट्ठिदी। अवत्त० जह० एयस०, उक्क० एगसमओ। पुरिसवे० अप्प० जहण्णुक्क० जहण्णुक्कस्सट्ठिदीओ। बारसक०-छण्णोक० अप्प० जह० एगस०, उक्क० अंतोमु०। अवत्त० जह० उक्क० एगस०। एवं जाव०।

§ ७२३. अंतराणु० दुविहो णि०—ओघेण आदेसेण य। ओघेण मिच्छ० भुज०-अवट्ठि० जह० एयस०, उक्क० तेवट्ठिसागरोवमसदं तीहिं पलिदोवमेहिं सादिरेयं। अप्प० जह० एयस०, उक्क० बेछावट्ठिसागरो० देसूणाणि। अवत्त० जह० अंतोमु०,

§ ७२१. आनतकल्पसे लेकर नौ ग्रैवेयक तकके देवोंमें मिथ्यात्वकी अल्पतर स्थिति-उदीरणाका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट काल अपनी-अपनी स्थितिप्रमाण है। अवक्तव्य स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। सम्यक्त्वकी भुजगार और अवक्तव्य स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अल्पतर स्थिति-उदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अपनी-अपनी स्थितिप्रमाण है। सम्यग्मिथ्यात्वका भंग ओघके समान है। सोलह कषाय और छह नोकषायकी अल्पतर स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। अवक्तव्य स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। पुरुषवेदकी अल्पतर स्थिति-उदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल जघन्य और उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण है।

§ ७२२. अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धितकके देवोंमें सम्यक्त्वकी अल्पतर स्थिति-उदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अपनी-अपनी स्थितिप्रमाण है। अवक्तव्य स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल एक समय है। पुरुषवेदकी अल्पतर स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल जघन्य और उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण है। बारह कषाय और छह नोकषायकी अल्पतर स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। अवक्तव्य स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणातक जानना चाहिए।

§ ७२३. अन्तरानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मिथ्यात्वकी भुजगार और अवस्थित स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर तीन पल्य अधिक एकसौ त्रेसठ सागर है। अल्पतर स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम दो छयासठ सागरप्रमाण है। अवक्तव्य

१. आ०प्रतौ मिच्छ० जह० अंतो०, ता०प्रतौ मिच्छ० जह० (भुज०) अप्प० इति पाठः।

उक्क० उवड्ढपोग्गलपरियट्टं । एवमणंताणु०४ । णवरि अवत्त० जह० अंतोमु०, उक्क० बेछावट्ठिसागरो० देसूणाणि । एवमट्ठकसाय० । णवरि अप्प०-अवत्त० जह० एयस० अंतोमु०, उक्क० पुव्वकोडी देसूणा । एवं चदुसंजलण-भय-दुगुंछा० । णवरि अप्प०-अवत्त० जह० एगस०, उक्क० अंतोमु० । एवं हस्स-रदि० । णवरि अप्प०-अवत्त० जह० एगस० अंतोमु०, उक्क० तेत्तीसं सागरो० सादिरेयाणि । एवमरदि-सोग० । णवरि अप्प० जह० एगस०, उक्क० छम्मासं । सम्म० भुज०-अप्प०-अवट्ठि०-अवत्त० सम्मामि० अप्प० अवत्त० जह० अंतोमुहुत्तं, उक्क० उवड्ढपोग्गलपरियट्टं । इत्थिवे० पुरिसवे० भुज०-अप्प०-अवट्ठि० [illegible] अंतोमु०, उक्क० सव्वेसिमणंतकालमसंखेज्जा पोग्गलपरियट्टा । णवुंसवे० भुज०-अप्प०-अवट्ठि० जह० एगस०, उक्क० सागरोवमसदपुधत्तं । अवत्त० इत्थिवेदभंगो ।

स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम अर्धपुद्गलपरिवर्तनप्रमाण है । इसीप्रकार अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी अपेक्षा जान लेना चाहिए । इतनी विशेषता है कि अवक्तव्य स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम दो छयासठ सागरप्रमाण है । इसीप्रकार आठ कषायोंकी अपेक्षा जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि अल्पतर और अवक्तव्य स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर क्रमसे एक समय और अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम एक पूर्वकोटिप्रमाण है । इसीप्रकार चार संज्वलन, भय और जुगुप्साकी अपेक्षा जान लेना चाहिए । इतनी विशेषता है कि अल्पतर और अवक्तव्य स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है । इसीप्रकार हास्य और रतिकी अपेक्षा जान लेना चाहिए । इतनी विशेषता है कि अल्पतर और अवक्तव्य स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर क्रमसे एक समय और अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक तेतीस सागर है । इसीप्रकार अरति और शोककी अपेक्षा जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि अल्पतर स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर छह महीना है । सम्यक्त्वकी भुजगार, अल्पतर, अवस्थित और अवक्तव्य स्थितिउदीरणाका तथा सम्यग्मिथ्यात्वकी अल्पतर और अवक्तव्य स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम अर्ध पुद्गलपरिवर्तनप्रमाण है । स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी भुजगार, अल्पतर और अवस्थित स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर एक समय है, अवक्तव्य स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और सबका उत्कृष्ट अन्तर अनन्त काल है जो असंख्यात पुद्गलपरिवर्तनप्रमाण है । नपुंसकवेदकी भुजगार, अल्पतर और अवस्थित स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर सौ सागर पृथक्त्वप्रमाण है । अवक्तव्य स्थितिउदीरणाका भंग ओघके समान है ।

विशेषार्थ—जिन्होंने मनुष्यों और तिर्यञ्चोंमें मिथ्यात्वकी भुजगार और अवस्थित स्थितिकी उदीरणा प्रारम्भ किया । पुनः वहींपर अन्तर्मुहूर्त कालतक अल्पतर स्थितिउदीरणासे उन्हें अन्तरित किया । पुनः वे तीन पल्यकी आयुवाले जीवोंमें उत्पन्न होकर और एकसौ त्रेसठ सागर कालतक परिभ्रमण करके मनुष्योंमें उत्पन्न हुए और वहाँपर उन्होंने अन्तर्मुहूर्त

१. ता०प्रतौ अवत्त०-अप्प० इति पाठः ।

§ ७२७. आदेसेण णेरइय० मिच्छ०-अणंताणु०४-हस्स-रदि० भुज०-अप्प०-अवट्ठि० जह० एयस०, अवत्त० जह० अंतोमु०, उक्क० सव्वेसिं तेत्तीसं सागरो०

कालके बाद संक्लेशकी पूर्ति करके भुजगार और अवस्थित स्थितिका बन्ध कर उनकी उदीरणा की। इसप्रकार मिथ्यात्वकी इन दोनों स्थितिउदीरणाओंका तीन पल्य अधिक एकसौ त्रेसठ सागर-प्रमाण उत्कृष्ट अन्तर काल प्राप्त होनेसे वह उक्तप्रमाण कहा है। जो जीव बीचमें सम्यग्मिथ्यात्व-को प्राप्त कर कुछ कम दो छयासठ सागर कालतक सम्यक्त्वके साथ रहकर मिथ्यात्वमें आकर मिथ्यात्वकी अल्पतर स्थितिउदीरणा करता है उसके मिथ्यात्वकी अल्पतर स्थिति-उदीरणाका उत्कृष्ट अन्तर काल कुछ कम दो छयासठ सागरप्रमाण प्राप्त होनेसे वह उक्तप्रमाण कहा है। किसी जीवके सम्यक्त्वकी कमसे कम अन्तर्मुहूर्तके अन्तरसे और अधिकसे अधिक कुछ कम अर्धपुद्गलपरिवर्तन कालके अन्तरसे उदीरणा होती है, इसलिए इसकी अवक्तव्य स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम अर्धपुद्गलपरिवर्तन-प्रमाण कहा है। कोई जीव कमसे कम अन्तर्मुहूर्त कालके अन्तरसे और अधिकसे अधिक कुछ कम दो छयासठ सागर कालके अन्तरसे पुनः मिथ्यादृष्टि हो सकता है, इसलिए अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी अवक्तव्य स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम दो छयासठ सागर कहा है। क्रमसे देशसंयम और सकल संयमका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम एक पूर्वकोटि है, इसलिए आठ कषायोंकी अवक्तव्य स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त और अल्पतर व अवक्तव्य स्थिति-उदीरणाका उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम एक पूर्वकोटि बन जानेसे तत्प्रमाण कहा है। उपशमश्रेणिमें चार संज्वलन, भय, जुगुप्साकी उदीरणा अन्तर्मुहूर्त कालके अन्तरसे होती है, इसलिए इनकी अल्पतर और अवक्तव्य स्थितिउदीरणाका उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त कहा है। सातवें नरकमें तथा उसमें उत्पन्न होनेके पूर्व और वहाँसे निकलनेके बाद अन्तर्मुहूर्त कालतक हास्य और रतिकी उदीरणा न हो यह सम्भव है, इसलिए हास्य और रतिकी अल्पतर और अवक्तव्य स्थितिउदीरणाका उत्कृष्ट अन्तर काल साधिक तेतीस सागर कहा है। सहस्रार कल्पमें अरति और शोककी छह माहतक उदीरणा न हो यह सम्भव है, इसलिए इनकी अल्पतर स्थिति उदीरणाका उत्कृष्ट अन्तर काल छह महीना कहा है। यह जीव अनन्त काल अर्थात् असंख्यात पुद्गलपरिवर्तन कालतक नपुंसकवेदी बना रहे यह सम्भव है, इसलिए स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी भुजगारादि चारों स्थितिउदीरणाओंका उत्कृष्ट अन्तरकाल उक्त कालप्रमाण कहा है। यह जीव सौ सागर पृथक्त्व कालतक पुनः नपुंसकवेदी न हो यह सम्भव है, इसलिए नपुंसकवेदकी भुजगार, अल्पतर और अवस्थित स्थितिउदीरणाका उत्कृष्ट अन्तर उक्त कालप्रमाण कहा है। कोई जीव नपुंसकवेदकी अवक्तव्य स्थितिउदीरणा करके अनन्त काल अर्थात् असंख्यात पुद्गलपरिवर्तन कालतक नपुंसकवेदी रहा, पुनः मरणपूर्वक अन्य वेदी होकर अन्तर्मुहूर्त काल बाद मरणपूर्वक पुनः नपुंसकवेदी हो गया उसके स्त्रीवेदके समान नपुंसकवेदकी अवक्तव्य स्थितिउदीरणाका उत्कृष्ट अन्तर काल बन जानेसे वह उक्तप्रमाण कहा है। शेष कथन सुगम है।

§ ७२७. आदेशसे नारकियोंमें मिथ्यात्व, अनन्तानुबन्धीचतुष्क, हास्य और रतिकी भुजगार, अल्पतर और अवस्थित स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर एक समय है, अवक्तव्य स्थिति-उदीरणाका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और सबका उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तेतीस सागर है।

देसूणाणि । एवमरदि-सोग० । णवरि अप्प० जह० एयस०, उक्क० अंतोमु० । एवं बारसक०-भय-दुगुंछा० । णवरि अवत्त० जह० उक्क० अंतोमु० । एवं णवुंस० । णवरि अवत्त० णत्थि । सम्म० भुज०-अप्प०-अवट्ठि०-अवत्त० सम्मामि० अप्प०-अवत्त० जह० अंतोमु०, उक्क० तेत्तीसं सागरो० देसूणाणि । एवं सत्तमाए । एवं पढमादि जाव छट्ठि त्ति । णवरि सगट्ठिदी देसूणा । णवरि हस्स-रदि० अप्प०-अवत्त० अरदि-सोग० अवत्त० जह० एगस० अंतोमु०, उक्क० अंतोमु० ।

§ ७२५. तिरिक्खेसु मिच्छ० भुज०-अवट्ठि० जह० एयस०, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो । अप्प० जह० एगस०, उक्क० तिण्णि पलिदोवमाणि देसूणाणि । अवत्त० ओघं । एवमणंताणु०४ । णवरि अवत्त० जह० अंतोमु०, उक्क० तिण्णि पलिदो० देसूणाणि । एवमपच्चक्खाण चउक्क० । णवरि अप्पद०-अवत्त० जह० एगस० अंतोमु०, उक्क० पुव्वकोडी देसूणा । एवमट्ठकसा०-छण्णोक० । णवरि अप्प०-अवत्त०

इसीप्रकार अरति और शोककी अपेक्षा जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि इनकी अल्पतर स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है । इसीप्रकार बारह कषाय, भय और जुगुप्साकी अपेक्षा जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि इनकी अवक्तव्य स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है । इसीप्रकार नपुंसकवेदकी अपेक्षा जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि इसकी अवक्तव्य स्थितिउदीरणा नहीं है । सम्यक्त्वकी भुजगार, अल्पतर, अवस्थित और अवक्तव्य स्थितिउदीरणाका तथा सम्यग्मिथ्यात्वकी अल्पतर और अवक्तव्य स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तेतीस सागर है । इसीप्रकार सातवीं पृथिवीमें जानना चाहिए । इसीप्रकार प्रथम पृथिवीसे लेकर छठी पृथिवीतक जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि कुछ कम अपनी-अपनी स्थिति कहनी चाहिए । इतनी और विशेषता है कि हास्य और रतिकी अल्पतर और अवक्तव्य स्थितिउदीरणाका तथा अरति और शोककी अवक्तव्य स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर एक समय और अन्तर्मुहूर्त है तथा उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है ।

§ ७२५. तिर्यञ्चोंमें मिथ्यात्वकी भुजगार और अवस्थित स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है । अल्पतर स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तीन पल्य है । अवक्तव्यका भंग ओघके समान है । इसीप्रकार अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी अपेक्षा जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि अवक्तव्य स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तीन पल्य है । इसीप्रकार अप्रत्याख्यानावरणचतुष्ककी अपेक्षा जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि इनकी अल्पतर और अवक्तव्य स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर एक समय और अन्तर्मुहूर्त है तथा उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम एक पूर्वकोटिप्रमाण है । इसीप्रकार आठ कषाय और छह नोकषायकी अपेक्षा जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि इनकी अल्पतर और अवक्तव्य स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर क्रमसे एक समय और अन्तर्मुहूर्त है तथा उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है । इसीप्रकार नपुंसकवेदकी अपेक्षा जानना चाहिए । इतनी

जह० एगस० अंतोमु०, उक्क० अंतोमु० । एवं णवुंस० । णवरि अप्प० जह० एयस०, उक्क० पुव्वकोडिपुधत्तं । अवत्त० ओघं । सम्म०-सम्मामि०-इत्थिवे०-पुरिसवेद० ओघं ।

§ ७२६. पंचिंदियतिरिक्खतिय० मिच्छ० भुज०-अवट्ठि० जह० एयसमओ, उक्क० पुव्वकोडिपुधत्तं । अप्प० तिरिक्खोघं । अवत्त० जह० अंतोमु०, उक्क० सगट्ठिदी । एवमणंताणु०४ । णवरि अवत्त० तिरिक्खोघं । एवं बारसक०-छण्णोक० । णवरि अप्प०-अवत्त० तिरिक्खोघं । सम्म० भुज०-अप्प०-अवत्त० सम्मामि० अप्प०-अवत्त० जह० अंतोमु०, उक्क० सगट्ठिदी देसूणा । सम्म० अवट्ठि० जह० अंतोमु०, उक्क० पुव्वकोडिपुधत्तं । तिण्णिवेद० भुज०-अप्प०-अवट्ठि जह० एयस०, अवत्त० अंतोमु०, उक्क० पुव्वकोडिपुधत्तं । णवरि पज्जत्तएसु इत्थिवेदो णत्थि । जोणिणीसु पुरिस०-णवुंस० णत्थि । इत्थिवे० अवत्त० णत्थि । अप्प० जह० एयस०, उक्क० अंतोमु० ।

§ ७२७. पंचिंदियतिरिक्खअपज्ज०-मणुसअपज्ज० मिच्छ०-णवुंस० भुज०-अप्प०-अवट्ठि० जह० एयस०, उक्क० अंतोमु० । एवं सोलसक०-छण्णोक० । णवरि

विशेषता है कि इसकी अल्पतर स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर पूर्वकोटिपृथक्त्वप्रमाण है । अवक्तव्य स्थितिउदीरणाका भंग ओघके समान है । सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व, स्त्रीवेद और पुरुषवेदका भंग ओघके समान है ।

§ ७२६. पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकमें मिथ्यात्वकी भुजगार और अवस्थित स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर पूर्वकोटिपृथक्त्व प्रमाण है । अल्पतर स्थिति-उदीरणाका भंग सामान्य तिर्यञ्चोंके समान है । अवक्तव्य स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर अपनी स्थितिप्रमाण है । इसीप्रकार अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी अपेक्षा जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि इनकी अवक्तव्य स्थितिउदीरणाका भंग सामान्य तिर्यञ्चोंके समान जानना चाहिए । इसीप्रकार बारह कषाय और छह नोकषायकी अपेक्षा जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि इनकी अल्पतर और अवक्तव्य स्थितिउदीरणाका भंग सामान्य तिर्यञ्चोंके समान है । सम्यक्त्वकी भुजगार, अल्पतर और अवक्तव्य स्थिति-उदीरणाका तथा सम्यग्मिथ्यात्वकी अल्पतर और अवक्तव्य स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम अपनी स्थितिप्रमाण है । सम्यक्त्वकी अवस्थित स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर पूर्वकोटिपृथक्त्वप्रमाण है । तीन वेदोंकी भुजगार, अल्पतर और अवस्थित स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर एक समय है और अवक्तव्य स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है तथा उत्कृष्ट अन्तर पूर्वकोटि-पृथक्त्वप्रमाण है । इतनी विशेषता है कि पर्याप्तकोंमें स्त्रीवेदकी उदीरणा नहीं है और योनिनियोंमें पुरुषवेद और नपुंसकवेदकी उदीरणा नहीं है । तथा इनमें स्त्रीवेदकी अवक्तव्य स्थितिउदीरणा नहीं है । तथा अल्पतर स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है ।

§ ७२७. पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्तकोंमें मिथ्यात्व और नपुंसक-वेदकी भुजगार, अल्पतर और अवस्थित स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है । इसीप्रकार सोलह कषाय और छह नोकषायकी अपेक्षा जानना

अवत्त० जह० उक्क० अंतोमु० ।

§ ७२८. मणुसतिए मिच्छ०-अणंताणु०४-चदुसंजलण-छण्णोक० भुज०-अवट्ठि० जह० एयसमओ, उक्क० पुव्वकोडी देसूणा । अप्प०-अवत्त० पंचिंदियतिरिक्खभंगो । अट्ठक० भुज०-अप्प०-अवट्ठि० जह० एयस०, अवत्त० अंतोमु०, उक्क० सव्वेसिं पुव्वकोडी देसूणा । सम्म०-सम्मामि०-तिण्णि वेद० पंचिंदियतिरिक्खभंगो । णवरि पज्जत्तएसु इत्थिवेदो णत्थि । मणुसिणी० पुरिस०-णवुंस० णत्थि । इत्थिवे० भुज०-अवट्ठि० जह० एयस०, उक्क० पुव्वकोडी देसूणा । अप्प० जह० एयस०, उक्क० अंतोमु० । अवत्त० जह० अंतोमु०, उक्क० पुव्वकोडिपुधत्तं ।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

§ ७२९. देवेसु मिच्छ०-अणंताणु०४ भुज०-अवट्ठि० जह० एयस०, उक्क० अट्ठारस सागरो० सादिरेयाणि । अप्प०-अवत्त० जह० एगसमओ अंतोमु०, उक्क० एक्कत्तीसं सागरो० देसूणाणि । एवं बारसक०-भय-दुगुंछा० । णवरि अप्प०-अवत्त० जह० एयस०, उक्क० अंतोमु० । एवमरदि-सोग० । णवरि अप्प०-अवत्त० जह० एयस० अंतोमु०, उक्क० छम्मासं । एवं हस्स-रदि० । णवरि अप्प० जह०

चाहिए । इतनी विशेषता है कि इनकी अवक्तव्य स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है ।

§ ७२८. मनुष्यत्रिकमें मिथ्यात्व, अनन्तानुबन्धीचतुष्क और छह नोकषायकी भुजगार और अवस्थित स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम एक पूर्वकोटिप्रमाण है । अल्पतर और अवक्तव्य स्थितिउदीरणाका भंग पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चोंके समान है । आठ कषायकी भुजगार, अल्पतर और अवस्थित स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर एक समय है, अवक्तव्य स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और सबका उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम एक पूर्वकोटिप्रमाण है । सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व और तीन वेदोंका भंग पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चोंके समान है । इतनी विशेषता है कि पर्याप्तकोंमें स्त्रीवेदकी उदीरणा नहीं है और मनुष्यिनियोंमें पुरुषवेद तथा नपुंसकवेदकी उदीरणा नहीं है । तथा इनमें स्त्रीवेदकी भुजगार और अवस्थित स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम एक पूर्वकोटिप्रमाण है । अल्पतर स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है । अवक्तव्य स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर पूर्वकोटिपृथक्त्वप्रमाण है ।

§ ७२९. देवोंमें मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी भुजगार और अवस्थित स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक अठारह सागर है । अल्पतर और अवक्तव्य स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर एक समय और अन्तर्मुहूर्त है तथा उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम इकतीस सागर है । इसीप्रकार बारह कषाय, भय और जुगुप्साकी अपेक्षा जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि इनकी अल्पतर और अवक्तव्य स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है । इसीप्रकार अरति और शोककी अपेक्षा जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि इनकी अल्पतर और अवक्तव्य स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर एक समय और अन्तर्मुहूर्त है तथा उत्कृष्ट अन्तर छह महीना है । इसीप्रकार

एयस०, उक्क० अंतोमु० । एवं पुरिस० । णवरि अवत्त० णत्थि । सम्म० भुज०-अप्प०-अवत्त० सम्मामि० अप्प०-अवत्त० जह० अंतोमु०, उक्क० एक्कत्तीसं सागरो० देसूणाणि । सम्म० अवट्ठि० जह० अंतोमु०, उक्क० अट्ठारस सागरो० सादिरेयाणि । इत्थिवे० भुज०-अवट्ठि० जह० एयस०, उक्क० पणवण्णं पलिदो० देसूणाणि । अप्प० जह० एगस०, उक्क० अंतोमु० । एवं भवणादि जाव सहस्सार त्ति । णवरि सगट्ठिदीओ भाणिदव्वाओ । हस्स-रदि-अरदि-सोग० अप्प०-अवत्त० जह० एगस० अंतोमु०, उक्क० अंतोमु० । सहस्सारे हस्स-रदि-अरदि-सोग० अप्प०-अवत्त० देवोघं । णवरि भवण०-वाणवें०-जोदिसि०-सोहम्मीसाण० इत्थिवेद० भुज०-अवट्ठि० जह० एगस०, उक्क० [illegible] पलिदो० [illegible]णाणि-पलि० सादिरे० पणवण्णं पलिदो० देसूणाणि । अप्प० जह० एयस०, उक्क० अंतोमु० । उवरि इत्थिवेदो णत्थि ।

§ ७३०. आणदादि णवगेवज्जा त्ति मिच्छ०-सम्मामि०-अणंताणु०४ अप्प०-अवत्त० सम्म० भुज०-अप्प० अवत्त० जह० अंतोमु०, उक्क० सगट्ठिदी देसूणा । बारसक०-छण्णोक० अप्प०-अवत्त० जह० उक्क० अंतोमु० । पुरिसवे० अप्प० णत्थि

हास्य और रतिकी अपेक्षा जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इसकी अल्पतर स्थिति-उदीरणाका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। इसीप्रकार पुरुषवेदकी अपेक्षा जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इसकी अवक्तव्य स्थितिउदीरणा नहीं है। सम्यक्त्वकी भुजगार, अल्पतर और अवक्तव्य स्थितिउदीरणाका तथा सम्यग्मिथ्यात्वकी अल्पतर और अवक्तव्य स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम इकतीस सागर है। सम्यक्त्वकी अवस्थित स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक अठारह सागर है। स्त्रीवेदकी भुजगार और अवस्थित स्थिति-उदीरणाका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम पचवन पल्य है। अल्पतर स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। इसीप्रकार भवनवासियोंसे लेकर सहस्रार कल्पतक जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि अपनी अपनी स्थिति कहनी चाहिए। हास्य-रति और अरति-शोककी अल्पतर और अवक्तव्य स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर एक समय और अन्तर्मुहूर्त है तथा उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। सहस्रार कल्पमें हास्य-रति तथा अरति-शोककी अल्पतर और अवक्तव्य स्थितिउदीरणाका भंग सामान्य देवोंके समान है। इतनी विशेषता है कि भवनवासी, व्यन्तर, ज्योतिषी तथा सौधर्म और ऐशानकल्पमें स्त्रीवेदकी भुजगार और अवस्थित स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तीन पल्य, साधिक एक पल्य, साधिक एक पल्य और कुछ कम पचवन पल्य है। अल्पतर स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। आगे स्त्रीवेदकी उदीरणा नहीं है।

§ ७३०. आनतकल्पसे लेकर नौ ग्रैवेयकतकके देवोंमें मिथ्यात्व, सम्यग्मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी अल्पतर और अवक्तव्य स्थितिउदीरणाका तथा सम्यक्त्वकी भुजगार, अल्पतर और अवक्तव्य स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम अपनी अपनी स्थितिप्रमाण है। बारह कषाय और छह नोकषायकी अल्पतर और

अंतरं। अणुद्दिसादि सव्वट्ठा त्ति सम्म० अप्प०-अवत्त० पुरिसवे० अप्प० णत्थि अंतरं। बारसक०-छण्णोक० अप्पद०-अवत्त० जह० उक्क० अंतोमु०। एवं जाव०।

§ ७३१. णाणाजीवेहि भंगविचयाणु० दुविहो णि०—ओघेण आदेसेण य। ओघेण मिच्छ०-णवुंस० भुज०-अप्प०-अवट्ठि० णिय० अत्थि, सिया एदे य अवत्तव्वगो य, सिया एदे च अवत्तव्वगा य। सम्म० अप्प० णि० अत्थि। सेसपदाणि भयणिज्जाणि। सम्मामि० अप्पद०-अवत्त० भयणिज्जा। सोलसक०-छण्णोक० सव्वपदा णिय० अत्थि। इत्थिवे०-पुरिसवे० अप्प०-अवट्ठि० णिय० अत्थि। सेसपदा० भयणिज्जा०। एवं तिरिक्खा०।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

§ ७३२. आदेसेण णेरइय० मिच्छ०-सोलसक०-छण्णोक० अप्प०-अवट्ठि० णिय० अत्थि। सेसपदा० भयणिज्जाणि। सम्म०-सम्मामि० ओघं। णवुंस० अप्प०-अवट्ठि० णिय० अत्थि, सिया एदे य भुजगारट्ठिदिउदीरगो य, सिया एदे च भुज०-ट्ठिदिउदीरगा च। एवं सव्वणेरइय०।

§ ७३३. पंचिंदियतिरिक्खतिए मिच्छ०-सोलसक०-णवणोक० अप्प०-अवट्ठि० णिय० अत्थि। सेसपदा भयणिज्जा। सम्म०-सम्मामि० ओघं। णवरि पज्ज० इत्थिवेदो

अवक्तव्य स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। पुरुषवेदकी अल्पतर स्थितिउदीरणाका अन्तरकाल नहीं है। अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धितकके देवोंमें सम्यक्त्वकी अल्पतर और अवक्तव्य स्थितिउदीरणाका तथा पुरुषवेदकी अल्पतर स्थितिउदीरणाका अन्तरकाल नहीं है। बारह कषाय और छह नोकषायकी अल्पतर और अवक्तव्य स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणातक जानना चाहिए।

§ ७३१. नाना जीवोंका अवलम्बन लेकर भंगविचयानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मिथ्यात्व और नपुंसकवेदकी भुजगार, अल्पतर और अवस्थित स्थितिके उदीरक जीव नियमसे हैं, कदाचित् ये जीव हैं और अवक्तव्य स्थितिका उदीरक एक जीव है, कदाचित् ये जीव हैं और अवक्तव्य स्थितिके उदीरक नाना जीव हैं। सम्यक्त्वकी अल्पतर स्थितिके उदीरक जीव नियमसे हैं। शेष पद भजनीय हैं। सम्यग्मिथ्यात्वके अल्पतर और अवक्तव्य पद भजनीय हैं। सोलह कषाय और छह नोकषायके सब पदोंके उदीरक जीव नियमसे हैं। स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी अल्पतर और अवस्थित स्थितिके उदीरक जीव नियमसे हैं। शेष पद भजनीय हैं। इसीप्रकार तिर्यञ्चोंमें जानना चाहिए।

§ ७३२. आदेशसे नारकियोंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय और छह नोकषायकी अल्पतर और अवस्थित स्थितिके उदीरक जीव नियमसे हैं। शेष पद भजनीय हैं। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका भंग ओघके समान है। नपुंसकवेदकी अल्पतर और अवस्थित स्थितिके उदीरक जीव नियमसे हैं, कदाचित् ये जीव हैं और भुजगार स्थितिका उदीरक एक जीव है, कदाचित् ये जीव हैं और भुजगार स्थितिके उदीरक नाना जीव हैं। इसीप्रकार सब नारकियोंमें जानना चाहिए।

§ ७३३. पंचेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय और नौ नोकषायकी अल्पतर और अवस्थित स्थितिके उदीरक जीव नियमसे हैं। शेष पद भजनीय हैं। सम्यक्त्व और सम्यग्मि-

णत्थि । जोणिणीसु पुरिसवे०-णवुंस० णत्थि । इत्थिवे० अवत्त० णत्थि० । पंचिंदियतिरिक्खअपज्ज० मिच्छ०-णवुंस० अप्प०-अवट्ठि० णिय० अत्थि, सिया एदे च भुज०ट्ठिदिउदीरगो च, सिया एदे च भुज०ट्ठिदिउदीरगा च । सोलसक०-छण्णोक० अप्प०-अवट्ठि० णिय० अत्थि । सेसपदाणि भयणिज्जाणि । मणुसतिए पंचि०-तिरिक्खतियभंगो । णवरि मणुसिणी० इत्थिवे० अवत्त० अत्थि । मणुसअपज्ज० सव्वपयडीणं सव्वपदा० भयणिज्जाणि ।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

§ ७३४. देवेसु मिच्छ०-सोलसक०-छण्णोक०-सम्म०-सम्मामि० पंचिंदियतिरिक्खभंगो । इत्थिवे०-पुरिसवे० अप्प०-अवट्ठि० णिय० अत्थि, सिया एदे च भुजगारो च, सिया एदे च भुजगारा च । एवं भवण०-वाणवें०-जोदिसि०-सोहम्मीसाण० । एवं सणक्कुमारादि जाव सहस्सार त्ति । णवरि इत्थिवेदो णत्थि ।

§ ७३५. आणदादि णवगेवज्जा त्ति मिच्छ०-सोलसक०-छण्णोक० अप्प० णिय० अत्थि, सिया एदे च अवत्तव्वगो च, सिया एदे च अवत्तव्वगा च । सम्म० ओघं । णवरि अवट्ठि० णत्थि । सम्मामि० ओघं । पुरिसवे० अप्प० णिय० अत्थि ।

ध्यात्वका भंग ओघके समान है । इतनी विशेषता है कि पर्याप्तकोंमें स्त्रीवेदकी उदीरणा नहीं है तथा योनिनियोंमें पुरुषवेद और नपुंसकवेदकी उदीरणा नहीं है । इनमें स्त्रीवेदकी अवक्तव्य स्थितिउदीरणा नहीं है । पञ्चेन्द्रिय तिर्यंच अपर्याप्तकोंमें मिथ्यात्व और नपुंसकवेदकी अल्पतर और अवस्थित स्थितिके उदीरक जीव नियमसे हैं, कदाचित् ये जीव हैं और भुजगार स्थितिका उदीरक एक जीव है, कदाचित् ये जीव हैं और भुजगार स्थितिके उदीरक नाना जीव हैं । सोलह कषाय और छह नोकषायकी अल्पतर और अवस्थित स्थितिके उदीरक जीव नियमसे हैं । शेष पद भजनीय हैं । मनुष्यत्रिकमें पंचेन्द्रिय तिर्यंचत्रिकके समान भंग है । इतनी विशेषता है कि मनुष्यिनियोंमें स्त्रीवेदकी अवक्तव्य स्थितिउदीरणा है । मनुष्य अपर्याप्तकोंमें सब प्रकृतियोंके सब पद भजनीय हैं ।

§ ७३४. देवोंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय, छह नोकषाय, सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका भंग पंचेन्द्रिय तिर्यंचोंके समान है । स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी अल्पतर और अवस्थित स्थितिके उदीरक जीव नियमसे हैं, कदाचित् ये जीव हैं और भुजगार स्थितिका उदीरक एक जीव है, कदाचित् ये जीव हैं और भुजगार स्थितिके उदीरक नाना जीव हैं । इसीप्रकार भवनवासी, व्यन्तर, ज्योतिषी तथा सौधर्म-ऐशानकल्पके देवोंमें जानना चाहिए । इसीप्रकार सनत्कुमार कल्पसे लेकर सहस्रार कल्पतकके देवोंमें जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि इनमें स्त्रीवेदकी स्थितिउदीरणा नहीं है ।

§ ७३५. आनतकल्पसे लेकर नौ ग्रैवेयकतकके देवोंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय और छह नोकषायकी अल्पतर स्थितिके उदीरक जीव नियमसे हैं, कदाचित् ये जीव हैं और अवक्तव्य स्थितिका उदीरक एक जीव है, कदाचित् ये जीव हैं और अवक्तव्य स्थितिके उदीरक नाना जीव हैं । सम्यक्त्वका भंग ओघके समान है । इतनी विशेषता है कि अवस्थित पद नहीं है । सम्यग्मिथ्यात्वका भंग ओघके समान है । पुरुषवेदकी अल्पतर स्थितिके उदीरक जीव नियमसे

अणुद्दिसादि सव्वट्ठा त्ति बारसक०-सत्तणोक० आणदभंगो । सम्म० हस्सभंगो । एवं जाव० ।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

§ ७३६. भागाभागाणु० दुविहो णि०—ओघेण आदेसेण य । ओघेण मिच्छ०-णवुंस० भुज० सव्वजी० केव० भागो ? असंखे०भागो । अप्प० संखेज्जा भागा । अवट्ठि० संखे०भागो । अवत्त० अणंतभागो । सम्मामि० अप्प० ट्ठिदिउदी० असंखेज्जा भागा । सेसपदा असंखे०भागो । सोलसक०-अट्ठणोक० अप्प० संखेज्जा भागा । अवट्ठि० संखे०भागो । सेसपदा० असंखे०भागो । एवं तिरिक्खा० ।

§ ७३७. आदेसेण णेरइय० मिच्छ०-सोलसक०-सत्तणोक०[1] अप्प०ट्ठिदिउदी० संखेज्जा भागा । अवट्ठि० संखे०भागो । सेसपदा० असंखे०भागो । सम्म०-सम्मामि० ओघं । एवं सव्वणेरइय० ।

§ ७३८. पंचि०तिरिक्खतिय० मिच्छ०-सोलसक०-णवणोक०[2] अप्प०ट्ठिदिउदी० संखेज्जा भागा । अवट्ठि० संखे०भागो । सेसप० असं०भागो । सम्म०-सम्मामि० ओघं । णवरि पज्ज० इत्थिवेदो णत्थि । जोणिणीसु पुरिसवे०-णवुंस० णत्थि । इत्थिवे०

है । अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धितकके देवोंमें बारह कषाय और सात नोकषायका भंग आनतकल्पके समान है । सम्यक्त्वका भंग हास्यके समान है । इसीप्रकार अनाहारक मार्गणातक जानना चाहिए ।

§ ७३६. भागाभागानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे मिथ्यात्व और नपुंसकवेदकी भुजगार स्थितिके उदीरक जीव सब जीवोंके कितने भागप्रमाण हैं ? असंख्यातवें भागप्रमाण हैं । अल्पतर स्थितिके उदीरक जीव संख्यात बहुभागप्रमाण हैं । अवस्थित स्थितिके उदीरक जीव संख्यातवें भागप्रमाण हैं । अवक्तव्य स्थितिके उदीरक जीव अनन्तवें भागप्रमाण हैं । सम्यग्मिथ्यात्वकी अल्पतर स्थितिके उदीरक जीव असंख्यात बहुभागप्रमाण हैं । शेष पदोंके उदीरक जीव असंख्यातवें भागप्रमाण हैं । सोलह कषाय और आठ नोकषायकी अल्पतर स्थितिके उदीरक जीव संख्यात बहुभागप्रमाण हैं । अवस्थित स्थितिके उदीरक जीव संख्यातवें भागप्रमाण हैं । शेष पदोंके उदीरक जीव असंख्यातवें भागप्रमाण हैं । इसीप्रकार तिर्यञ्चोंमें जानना चाहिए ।

§ ७३७. आदेशसे नारकियोंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय और सात नोकषायकी अल्पतर स्थितिके उदीरक जीव संख्यात बहुभागप्रमाण हैं । अवस्थित स्थितिके उदीरक जीव संख्यातवें भागप्रमाण हैं । शेष पदोंके उदीरक जीव असंख्यातवें भागप्रमाण हैं । सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका भंग ओघके समान है । इसीप्रकार सब नारकियोंमें जानना चाहिए ।

§ ७३८. पंचेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय और नौ नोकषायकी अल्पतर स्थितिके उदीरक जीव संख्यात बहुभागप्रमाण हैं । अवस्थित स्थितिके उदीरक जीव संख्यातवें भागप्रमाण हैं । शेष पदोंके उदीरक जीव असंख्यातवें भागप्रमाण हैं । सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका भंग ओघके समान है । इतनी विशेषता है कि पर्याप्तकोंमें स्त्रीवेद नहीं है । योनिनियोंमें

---

१. ता०प्रतौ णव (सत्त) णोक० इति पाठः । २. ता०प्रतौ सत्तणोक इति पाठः ।

अवत्त० णत्थि । पंचि०तिरिक्खअपज्ज०-मणुसअपज्ज० मिच्छ०-सोलसक०-सत्तणोक० अप्पद० संखेज्जा भागा । अवट्ठि० संखे०भागो । सेसपदा० असंखे०भागो ।

§ ७३९. मणुसेसु मिच्छत्त-सोलसक०-सत्तणोक० पंचिंदियतिरिक्खभंगो । सम्म०-सम्मामि०-इत्थिवे०-पुरिसवे० अप्प० संखेज्जा भागा । सेसपदा संखे०भागो । मणुसपज्ज०-मणुसिणी० सव्वपय० अप्पद० संखेज्जा भागा । सेसपदा संखे०भागो ।

§ ७४०. देवेसु मिच्छ०-सोलसक०-अट्ठणोक० अप्प० संखेज्जा भागा । अवट्ठि० संखे०भागो । सेसप० असंखे०भागो । सम्म०-सम्मामि० ओघं । एवं भवण०-वाणवें०-जोदिसि०-सोहम्मीसाणे त्ति । एवं सणक्कुमारादि सहस्सार त्ति । णवरि इत्थिवेदो णत्थि ।

§ ७४१. आणदादि णवगेवज्जा त्ति मिच्छ०-सम्मामि०-सोलसक०-छण्णोक० अप्प० असंखेज्जा भागा । सेसप० असंखे०भागो । पुरिसवे० णत्थि भागाभागो । अणुदिसादि सव्वट्ठा त्ति सम्म०-बारसक०-छण्णोक० अप्प० असंखे०भागा । अवत्त० असंखे०भागो । पुरिसवे० णत्थि भागाभागो । णवरि सव्वट्ठे संखेज्जं कादव्वं । एवं जाव० ।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

पुरुषवेद और नपुंसकवेद नहीं है। इसमें स्त्रीवेदकी अवक्तव्य स्थितिउदीरणा नहीं है। पंचेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्तकोंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय और सात नोकषायकी अल्पतर स्थितिके उदीरक जीव संख्यात बहुभागप्रमाण हैं। अवस्थित स्थितिके उदीरक जीव संख्यातवें भागप्रमाण हैं। शेष पदोंके उदीरक जीव असंख्यातवें भागप्रमाण हैं।

§ ७३९. मनुष्योंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय और सात नोकषायका भंग पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चोंके समान है। सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व, स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी अल्पतर स्थितिके उदीरक जीव संख्यात बहुभागप्रमाण हैं। शेष पदोंके उदीरक जीव संख्यातवें भागप्रमाण हैं। मनुष्य पर्याप्त और मनुष्यिनियोंमें सब प्रकृतियोंकी अल्पतर स्थितिके उदीरक जीव संख्यात बहुभागप्रमाण हैं। शेष पदोंके उदीरक जीव संख्यातवें भागप्रमाण हैं।

§ ७४०. देवोंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय और आठ नोकषायकी अल्पतर स्थितिके उदीरक जीव संख्यात बहुभागप्रमाण हैं। अवस्थित स्थितिके उदीरक जीव संख्यातवें भागप्रमाण हैं। शेष पदोंके उदीरक जीव असंख्यातवें भागप्रमाण हैं। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका भंग ओघके समान है। इसीप्रकार भवनवासी, व्यन्तर, ज्योतिषी देवों तथा सौधर्म और ऐशान कल्पके देवोंमें जानना चाहिए। इसीप्रकार सनत्कुमार कल्पसे लेकर सहस्रार कल्पतकके देवोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनमें स्त्रीवेद नहीं है।

§ ७४१. आनतकल्पसे लेकर नौ ग्रैवेयकतकके देवोंमें मिथ्यात्व, सम्यग्मिथ्यात्व, सोलह कषाय और छह नोकषायकी अल्पतर स्थितिके उदीरक जीव असंख्यात बहुभागप्रमाण हैं। शेष पदोंके उदीरक जीव असंख्यातवें भागप्रमाण हैं। पुरुषवेदकी अपेक्षा भागाभाग नहीं है। अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धितकके देवोंमें सम्यक्त्व, बारह कषाय और छह नोकषायकी अल्पतर स्थितिके उदीरक जीव असंख्यात बहुभागप्रमाण हैं। अवक्तव्य स्थितिके उदीरक जीव असंख्यातवें भागप्रमाण हैं। पुरुषवेदकी अपेक्षा भागाभाग नहीं है। इतनी विशेषता है कि सर्वार्थसिद्धिमें असंख्यातके स्थानमें संख्यात करना चाहिए। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा

§ ७४२. परिमाणाणु० दुविहो णि०—ओघेण आदेसेण य । ओघेण मिच्छ०-णवुंस० भुज०-अप्प०-अवट्ठि० केत्तिया ? अणंता । अवत्त० केत्ति० ? असंखेज्जा । सोलसक०-छण्णोक० सव्वपदा के० ? अणंता । सम्म०-सम्मामि०-इत्थिवे०-पुरिस० सव्वपदा के० ? असंखेज्जा । एवं तिरिक्खा० ।

§ ७४३. सव्वणेर०-सव्वपंचि०तिरिक्ख-मणुसअपज्ज०-सव्वदेवा त्ति सव्वपय० सव्वपदा केत्तिया ? असंखेज्जा । णवरि अणुदिसादि अवराजिदा त्ति सम्म० अवत्त० केत्ति० ? संखेज्जा । सव्वट्ठे सव्वपयडीणं सव्वपदा केत्तिया ? संखेज्जा ।

मार्गदर्शक - आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

§ ७४४. मणुसेसु मिच्छ०-सोलसक०-सत्तणोक० सव्वपदा के० ? असंखेज्जा । णवरि मिच्छ०-णवुंस० अवत्त० के० ? संखेज्जा । सम्म०-सम्मामि०-इत्थिवे०-पुरिसवे० सव्वपदा के० ? संखेज्जा । मणुसपज्ज०-मणुसिणी० सव्वपयडीणं सव्वपदा के० ? संखेज्जा । एवं जाव० ।

§ ७४५. खेत्ताणुगमेण दुविहो णि०—ओघेण आदेसेण य । ओघेण मिच्छ०-सोलसक०-सत्तणोक० सव्वपदा केवडि खेत्ते ? सव्वलोगे । णवरि मिच्छ०-णवुंस०

तक जानना चाहिए ।

§ ७४२. परिमाणानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे मिथ्यात्व और नपुंसकवेदकी भुजगार, अल्पतर और अवस्थित स्थितिके उदीरक जीव कितने हैं ? अनन्त हैं । अवक्तव्य स्थितिके उदीरक जीव कितने हैं ? असंख्यात हैं । सोलह कषाय और छह नोकषायके सब पदोंके उदीरक जीव कितने हैं ? अनन्त हैं । सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व, स्त्रीवेद और पुरुषवेदके सब पदोंके उदीरक जीव कितने हैं ? असंख्यात हैं । इसीप्रकार तिर्यंचोंमें जान लेना चाहिए ।

§ ७४३. सब नारकी, सब पंचेन्द्रिय तिर्यंच, मनुष्य अपर्याप्त और सब देवोंमें सब प्रकृतियोंके सब पदोंके उदीरक जीव कितने हैं ? असंख्यात हैं । इतनी विशेषता है कि अनुदिशसे लेकर अपराजिततकके देवोंमें अवक्तव्य पदके उदीरक जीव कितने हैं ? संख्यात हैं । सर्वार्थसिद्धिमें सब प्रकृतियोंके सब पदोंके उदीरक जीव कितने हैं ? संख्यात हैं ।

§ ७४४. मनुष्योंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय और सात नोकषायके सब पदोंके उदीरक जीव कितने हैं ? असंख्यात हैं । इतनी विशेषता है कि मिथ्यात्व और नपुंसकवेदकी अवक्तव्य स्थितिके उदीरक जीव कितने हैं ? संख्यात हैं । सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व, स्त्रीवेद और पुरुषवेदके सब पदोंके उदीरक जीव कितने हैं ? संख्यात हैं । मनुष्य पर्याप्त और मनुष्यिनियोंमें सब प्रकृतियोंके सब पदोंके उदीरक जीव कितने हैं ? संख्यात हैं । इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए ।

§ ७४५. क्षेत्रानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे मिथ्यात्व, सोलह कषाय और सात नोकषायके सब पदोंके उदीरक जीवोंका कितना क्षेत्र है ? सर्वलोक क्षेत्र है । इतनी विशेषता है कि मिथ्यात्व और नपुंसकवेदकी अवक्तव्य स्थितिके

अवत्त० सम्म०-सम्मामि०-इत्थिवे०-पुरिसवे० सव्वपदा लोगस्स असंखे०भागे। एवं तिरिक्खा०। सेसगदीसु सव्वपयडीणं सव्वपदा लोग० असंखे०भागे। एवं जाव०।

§ ७४६. पोसणाणु० दुविहो णि०—ओघेण आदेसेण य। ओघेण मिच्छ०-सोलसक०-सत्तणोक० सव्वपदेहिं केवडियं खेत्तं पोसिदं? सव्वलोगो। णवरि मिच्छ० अवत्त० लोग० असंखे०भागो, अट्ठ-बारहचोद्दस भागा वा देसूणा। णवुंस० अवत्त० लोग० असंखे०भागो, सव्वलोगो वा। सम्म०-सम्मामि० सव्वपदा लोग० असंखे०-भागो, अट्ठचोद्दस० देसूणा। इत्थिवे०-पुरिसवे० सव्वप० लोग० असंखे०भागो, अट्ठचोद्दस० दे० सव्वलोगो वा। णवरि अवत्त० लोग० असंखे०भागो, सव्वलोगो वा।

उदीरक जीवोंका तथा सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व, स्त्रीवेद और पुरुषवेदके सब पदोंके उदीरक जीवोंका क्षेत्र लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण है। इसीप्रकार सामान्य तिर्यंचोंमें जानना चाहिए। शेष गतियोंमें सब प्रकृतियोंके सब पदोंके उदीरक जीवोंका क्षेत्र लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण है। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणातक जानना चाहिए।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

§ ७४६. स्पर्शनानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मिथ्यात्व, सोलह कषाय और सात नोकषायके सब पदोंके उदीरकोंने कितने क्षेत्रका स्पर्शन किया है? सर्व लोकक्षेत्रका स्पर्शन किया है। मिथ्यात्वकी अवक्तव्य स्थितिके उदीरकोंने लोकके असंख्यातवें भाग तथा त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ और बारह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। नपुंसकवेदकी अवक्तव्य स्थितिके उदीरक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग और सर्व लोकप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके सब पदोंके उदीरक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग तथा त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। स्त्रीवेद और पुरुषवेदके सब पदोंके उदीरक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग तथा त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ भाग और सर्व लोकप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। इतनी विशेषता है कि इसकी अवक्तव्य स्थितिके उदीरक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग और सर्व लोकप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है।

विशेषार्थ—जो देव विहारवत्स्वस्थानके समय सम्यक्त्वसे च्युत होकर मिथ्यात्वको प्राप्त होते हैं उनके मिथ्यात्वकी अवक्तव्य स्थितिके उदीरकोंका त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ भागप्रमाण स्पर्शन पाया जाता है। तथा नीचे कुछ कम पाँच राजु और ऊपर कुछ कम सात राजु इसप्रकार मिथ्यात्वकी अवक्तव्य स्थितिके उदीरकोंका त्रसनालीके चौदह भागोंमें-से कुछ कम बारह भागप्रमाण स्पर्शन भी बन जाता है। यहाँ मिथ्यात्वकी अवक्तव्य स्थितिके उदीरकोंका जो स्पर्शन कहा है उसमेंसे स्पष्टीकरण योग्य स्पर्शन यह खुलासा है। वेदक-सम्यग्दृष्टि और सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंके स्पर्शनको ध्यानमें रखकर यहाँ सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके सब पदोंके उदीरकोंका स्पर्शन कहा है। उससे अन्य कोई विशेषता न होनेसे यहाँ अलगसे खुलासा नहीं किया है। पञ्चेन्द्रिय और पंचेन्द्रिय पर्याप्त जीवोंके स्पर्शनको ध्यानमें रखकर यहाँ स्त्रीवेद और पुरुषवेदके सब पदोंके उदीरकोंका स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भाग तथा त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ भाग और सर्व लोकप्रमाण कहा है। मात्र आगमसे इन जीवोंके लोकका असंख्यात बहुभाग स्पर्शन प्रतरसमुद्घातकी अपेक्षा कहा गया है, किन्तु स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी उदीरणा करनेवाले जीवोंके प्रतरसमुद्घात नहीं होता,

§ ७४७. आदेसेण णेरइयमिच्छ०-सोलसक०-सत्तणोक० सव्वपदउदीर० लोग० असंखे०भागो, छचोद्दस० । णवरि मिच्छ० अवत्त० लोग० असंखे०भागो, पंचचोद्दस० । सम्म०-सम्मामि० खेत्तं । एवं विदियादि सत्तमा त्ति । णवरि सगपोसणं । सत्तमाए मिच्छ० अवत्त० खेत्तं । पढमाए खेत्तभंगो ।

§ ७४८. तिरिक्खेसु मिच्छ० ओघं । णवरि अवत्त० लोग० असंखे०भागो, सत्तचोद्दस० । सम्म० अप्प० छचोद्दस० । सेसपदाणं खेत्तं । सम्मामि० खेत्तं । सोलसक०-सत्तणोक० ओघं । इत्थिवे०-पुरिसवे० सव्वपदा लोग० असंखे०भागो सव्वलोगो वा ।

अतः उक्त स्पर्शनका उल्लेख यहां नहीं किया गया है । इतना विशेष यहाँ और समझना चाहिए कि स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी अवक्तव्य स्थितिके उदीरणाके समय त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ भागप्रमाण स्पर्शन नहीं घटित होता, इसलिए यहाँ स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी अवक्तव्य स्थितिके उदीरकोंका स्पर्शन मात्र लोकके असंख्यातवें भाग और सर्व लोकप्रमाण बतलाया गया है । शेष कथन सुगम है ।

§ ७४७. आदेशसे नारकियोंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय और सात नोकषायके सब पदोंके उदीरकोंने लोकके असंख्यातवें भाग और त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम छह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है । इतनी विशेषता है कि मिथ्यात्वकी अवक्तव्य स्थितिके उदीरकोंने लोकके असंख्यातवें भाग और त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम पाँच भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है । सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका भंग क्षेत्रके समान है । इसीप्रकार दूसरी पृथिवीसे लेकर सातवीं पृथिवीतक जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि अपना-अपना स्पर्शन कहना चाहिए । सातवीं पृथिवीमें मिथ्यात्वकी अवक्तव्य स्थितिके उदीरकोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है । प्रथम पृथिवीमें स्पर्शन क्षेत्रके समान है ।

विशेषार्थ—मिथ्यात्वकी अवक्तव्य स्थितिउदीरणा होती तो सातों पृथिवियोंमें है, किन्तु सातवें नरकमें मारणान्तिक समुद्घातके समय और वहाँ उत्पन्न होनेके प्रथम समयमें मिथ्यात्वकी अवक्तव्य स्थितिउदीरणा सम्भव नहीं है, इसलिए मिथ्यात्वकी अवक्तव्य स्थितिके उदीरकोंका स्पर्शन सामान्यसे नारकियोंमें त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम पाँच भागप्रमाण और सातवें नरकमें लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण कहा है । शेष कथन सुगम है ।

§ ७४८. तिर्यञ्चोंमें मिथ्यात्वका भंग ओघके समान है । इतनी विशेषता है कि इसकी अवक्तव्य स्थितिके उदीरकोंने लोकके असंख्यातवें भाग और त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम सात भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है । सम्यक्त्वकी अल्पतर स्थितिके उदीरकोंने त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम छह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है । शेष पदोंका भंग क्षेत्रके समान है । सम्यग्मिथ्यात्वका भंग क्षेत्रके समान है । सोलह कषाय और सात नोकषायका भंग ओघके समान है । स्त्रीवेद और पुरुषवेदके सब पदोंके उदीरकोंने लोकके असंख्यातवें भाग और सर्व लोकप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है ।

विशेषार्थ—जो तिर्यञ्च या मनुष्य मरणके बाद प्रथम समयमें मिथ्यादृष्टि होकर एकेन्द्रियोंमें उत्पन्न होते हैं वे ऊपर त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम सात भागप्रमाण

§ ७४९. पंचिंदियतिरिक्खतिए मिच्छ०-सोलसक०-णवणोक० सव्वपदा लोग० असंखे०भागो सव्वलोगो वा। णवरि मिच्छ० अवत्त० सत्तचोद्दस०। णवुंस० अवत्त० इत्थिवे०-पुरिसवे० भुज०-अवट्ठि०-अवत्त० खेत्तं। सम्म०-सम्मामि० तिरिक्खोघं। णवरि पज्जत्त० इत्थिवेदो णत्थि। जोणिणीसु पुरिसवे०-णवुंस० णत्थि। इत्थिवे० अवत्त० णत्थि। पंचि०तिरिक्खअपज्ज०-मणुसअपज्ज० सव्वपयडीणं सव्वपदा लोग० असंखे०भागो सव्वलोगो वा। मणुसतिए मिच्छ०-सोलसक०-णवणोक० पंचि०तिरिक्खतियभंगो। सम्म०-सम्मामि० खेत्तं। णवरि पज्ज० इत्थिवे० णत्थि। मणुसिणी० पुरिसवे०-णवुंस० णत्थि। इत्थिवे० अवत्त० खेत्तं।

§ ७५०. देवेसु सव्वपयडीणं सव्वपदा लोग० असंखे०भागो अट्ठ-णवचोद्दस०। णवरि इत्थिवे०-पुरिसवे० भुज०-अवट्ठि० सम्म०-सम्मामि० सव्वपदा लोग० असंखे०-भागो अट्ठचोद्दस०। एवं सोहम्मीसाणे। एवं भवण०-वाणवें०-जोदिसि०। णवरि

क्षेत्रका स्पर्शन करते हैं, इसलिए यहाँ पर मिथ्यात्वकी अवक्तव्य स्थितिके उदीरकोंका स्पर्शन उक्त क्षेत्रप्रमाण कहा है। शेष कथन सुगम है।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

§ ७४९. पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय और नौ नोकषायके सब पदोंके उदीरकोंने लोकके असंख्यातवें भाग और सर्व लोकप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। इतनी विशेषता है कि मिथ्यात्वकी अवक्तव्य स्थितिके उदीरकोंने त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम सात भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। नपुंसकवेदकी अवक्तव्य स्थितिके उदीरकोंका तथा स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी भुजगार, अवस्थित और अवक्तव्य स्थितिके उदीरकोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका भंग सामान्य तिर्यंचोंके समान है। इतनी विशेषता है कि पर्याप्तकोंमें स्त्रीवेद नहीं है तथा योनिनियोंमें पुरुषवेद और नपुंसकवेद नहीं है। इनमें स्त्रीवेदकी अवक्तव्य स्थितिउदीरणा नहीं है। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्तकोंमें सब प्रकृतियोंके सब पदवालोंने लोकके असंख्यातवें भाग और सर्व लोकप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। मनुष्यत्रिकमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय और नौ नोकषाय का भंग पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकके समान है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका भंग क्षेत्रके समान है। इतनी विशेषता है कि पर्याप्तकोंमें स्त्रीवेद नहीं है तथा मनुष्यिनियोंमें पुरुषवेद और नपुंसकवेद नहीं है। इनमें स्त्रीवेदकी अवक्तव्य स्थितिके उदीरकोंका भंग क्षेत्रके समान है।

विशेषार्थ—पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकके ऊपर एकेन्द्रियोंमें मारणान्तिक समुद्घात करते समय मिथ्यात्वकी अवक्तव्य स्थितिउदीरणा बन जाती है, इसलिए मिथ्यात्वकी अवक्तव्य स्थितिके उदीरकोंका स्पर्शन त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम सात भागप्रमाण कहा है। शेष कथन सुगम है।

§ ७५०. देवोंमें सब प्रकृतियोंके सब पदवालोंने लोकके असंख्यातवें भाग तथा त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ और नौ भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। इतनी विशेषता है कि स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी भुजगार और अवस्थित स्थितिके उदीरकोंने तथा सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके सब पदवालोंने लोकके असंख्यातवें भाग तथा त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। इसीप्रकार सौधर्म और ऐशान-

समपोसणं। सणक्कुमारादि जाव सहस्सार त्ति सव्वपयडीणं सव्वपदा लोग० असंखे०-भागो अट्ठचोद्दस०। आणदादि अच्चुदा त्ति सव्वपयडीणं सव्वपदा लोग० असंखे०भागो, छचोद्दस०। उवरि खेत्तं। एवं जाव०।

§ ७५१. णाणाजीवेहिं कालाणु० दुविहो णि०—ओघेण आदेसेण य। ओघेण मिच्छ०-सोलसक०-सत्तणोक० सव्वपदा सव्वद्धा। णवरि मिच्छ०-णवुंस० अवत्त० जह० एयस०, उक्क० आवलि० असंखे०भागो। इत्थिवेद-पुरिसवेद० अप्प०-अवट्ठि० सव्वद्धा। सेसपदाणं जह० एयस०, उक्क० आवलि० असंखे०भागो। सम्म० अप्प० सव्वद्धा। सेसपदा जह० एगस० उक्क० आवलि० असंखे० सम्मामि० अप्प० जह० अंतोमु०, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो। अवत्त० मिच्छत्तभंगो। एवं तिरिक्खा०।

कल्पमें जानना चाहिए। इसीप्रकार भवनवासी, व्यन्तर और ज्योतिषी देवोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि अपना अपना स्पर्शन कहना चाहिए। सनत्कुमारसे लेकर सहस्रार कल्पतकके देवोंमें सब प्रकृतियोंके सब पदवालोंने लोकके असंख्यातवें भाग और त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। आनतकल्पसे लेकर अच्युत कल्पतकके देवोंमें सब प्रकृतियोंके सब पदवालोंने लोकके असंख्यातवें भाग और त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम छह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। ऊपर क्षेत्रके समान स्पर्शन है। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणातक जानना चाहिए।

विशेषार्थ—देवोंके एकेन्द्रियोंमें मारणान्तिक समुद्घात करते समय स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी भुजगार और अवस्थित उदीरणा सम्भव नहीं है और न ही इनके सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी उदय-उदीरणा सम्भव है, इसलिए स्त्रीवेद और पुरुषवेदके उक्त दो पदवालोंका तथा सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके सब पदवालोंका स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भाग और त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ भागप्रमाण कहा है। शेष कथन सुगम है।

§ ७५१. नाना जीवोंका आलम्बन लेकर कालानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मिथ्यात्व, सोलह कषाय और सात नोकषायके सब पदवालोंका काल सर्वदा है। इतनी विशेषता है कि मिथ्यात्व और नपुंसकवेदकी अवक्तव्य स्थितिके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है। स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी अल्पतर और अवस्थित स्थितिके उदीरकोंका काल सर्वदा है। शेष पदोंके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भाग-प्रमाण है। सम्यक्त्वकी अल्पतर स्थितिके उदीरकोंका काल सर्वदा है। शेष पदके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है। सम्यग्मिथ्यात्वकी अल्पतर स्थितिके उदीरकोंका जघन्यकाल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। अवक्तव्य स्थितिके उदीरकोंका भंग मिथ्यात्वके समान है। इसीप्रकार सामान्य तिर्यञ्चोंमें जानना चाहिए।

विशेषार्थ—यहाँ जिन प्रकृतियोंके जिन पदोंके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय प्राप्त होता है उन्हींका उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण कहा है। सम्यग्मिथ्यात्व

§ ७५२. आदेसेण णेरइय० मिच्छ०-सोलसक०-सत्तणोक० अप्प०-अवट्ठि० सव्वद्धा। सेसपदा० जह० एयस०, उक्क० आवलि० असंखे०भागो। सम्म०-सम्मामि० ओघं। एवं सव्वणेरइय०।

§ ७५३. पंचिंदियतिरिक्खतिय० सव्वपयडीणं अप्प०-अवट्ठि० सव्वद्धा। सेसपदा० जह० एगस०, उक्क० आवलि० असंखे०भागो। णवरि सम्म०-सम्मामि० ओघं। पंचि०तिरिक्ख०अपज्ज० सव्वपयडीणं अप्प०-अवट्ठि० सव्वद्धा। सेसपदा जह० एगस०, उक्क० आवलि० असंखे०भागो। मणुसेसु मिच्छ०-सोलसक०-सत्तणोक० पंचिंदियतिरिक्खभंगो। णवरि मिच्छ०-णवुंस० अवत्त० जह० एगस०, उक्क० संखेज्जा समया। इत्थिवे०-पुरिसवे० अप्प०-अवट्ठि० सम्म० अप्प० सव्वद्धा। सेसपदा० जह० एयस०, उक्क० संखेज्जा समया। सम्मामि० अप्प० जह० उक्क० अंतोमु०। अवत्त० सम्मत्तभंगो।

गुणका एक जीवकी अपेक्षा भी उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है, इसलिए यहाँ सम्यग्मिथ्यात्वकी अल्पतर स्थितिके उदीरकोंका उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण कहा है। शेष कथन सुगम है।

§ ७५२. आदेशसे नारकियोंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय और सात नोकषायकी अल्पतर और अवस्थित स्थितिके उदीरकोंका काल सर्वदा है। शेष पदोंके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका भंग ओघके समान है। इसीप्रकार सब नारकियोंमें जानना चाहिए।

§ ७५३. पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकमें सब प्रकृतियोंकी अल्पतर और अवस्थित स्थितिके उदीरकोंका काल सर्वदा है। शेष पदोंके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है। इतनी विशेषता है कि सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका भंग ओघके समान है। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त जीवोंमें सब प्रकृतियोंकी अल्पतर और अवस्थित स्थितिके उदीरकोंका काल सर्वदा है। शेष पदोंके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है। मनुष्योंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय और सात नोकषायका भंग पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चोंके समान है। इतनी विशेषता है कि मिथ्यात्व और नपुंसकवेदकी अवक्तव्य स्थितिके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल संख्यात समय है। स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी अल्पतर और अवस्थित स्थितिके उदीरकोंका तथा सम्यक्त्वकी अल्पतर स्थितिके उदीरकोंका काल सर्वदा है। शेष पदोंके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल संख्यात समय है। सम्यग्मिथ्यात्वकी अल्पतर स्थितिके उदीरकोंका जघन्य और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। अवक्तव्य स्थितिके उदीरकोंका भंग सम्यक्त्वके समान है।

विशेषार्थ—मनुष्योंमें मिथ्यात्व, नपुंसकवेद, और पुरुषवेदकी अवक्तव्य स्थितिकी उदीरणा मनुष्य पर्याप्त तथा मिथ्यात्व और स्त्रीवेदकी अवक्तव्य स्थितिकी उदीरणा मनुष्यिनी जीव ही करते हैं। यतः इनकी संख्या संख्यात है अतः मनुष्योंमें उक्त प्रकृतियोंकी अवक्तव्य स्थितिकी उदीरणा करनेवालोंका उत्कृष्ट काल संख्यात समय कहा है। शेष कथन सुगम है।

§ ७५४. मणुसपज्ज०-मणुसिणी० सव्वपयडी० अप्प०-अवट्ठि० सव्वद्धा। सेसपदा जह० एयस०, उक्क० संखेज्जा समया। णवरि सम्म०-सम्मामि० मणुसभंगो। मणुसअपज्ज० सव्वपयडी० अप्प०-अवट्ठि० जह० एयस०, उक्क० पलिदो० असंखे०-भागो। सेसपदा० जह० एयस०, उक्क० आवलि० असंखे०भागो।

§ ७५५. देवेसु सव्वपद० अप्प०-अवट्ठि० सव्वद्धा। सेसपदा० जह० एयस०, उक्क० आवलि० असंखे०भागो। णवरि सम्म०-सम्मामि० ओघं। एवं भवणादि जाव सहस्सार त्ति। आणदादि णवगेवज्जा त्ति मिच्छ०-सम्म०-सोलसक०-छण्णोक० अप्प० सव्वद्धा। सेसपदा० जह० एयस०, उक्क० आवलि० असंखे०भागो। पुरिसवे० अप्प० सव्वद्धा। सम्मामि० ओघं। अणुद्दिसादि अवराजिदा त्ति सम्म० अप्प० सव्वद्धा। अवत्त० जह० एगसमओ, उक्क० संखेज्जा समया। बारसक०-छण्णोक० अप्प० सव्वद्धा। अवत्त० जह० एयस०, उक्क० आवलि० असंखे०भागो। पुरिसवे० अप्प० सव्वद्धा। एवं सव्वट्ठे। णवरि अवत्त० जह० एयसमओ, उक्क० संखेज्जा

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

§ ७५४. मनुष्य पर्याप्त और मनुष्यिनियोंमें सब प्रकृतियोंकी अल्पतर और अवस्थित स्थितिके उदीरकोंका काल सर्वदा है। शेष पदोंके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल संख्यात समय है। इतनी विशेषता है कि सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका भंग मनुष्योंके समान है। मनुष्य अपर्याप्तकोंमें सब प्रकृतियोंका अल्पतर और अवस्थित स्थितिके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। शेष पदोंके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है।

§ ७५५. देवोंमें सब प्रकृतियोंकी अल्पतर और अवस्थित स्थितिके उदीरकोंका काल सर्वदा है। शेष पदोंके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है। इतनी विशेषता है कि सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका भंग ओघके समान है। इसीप्रकार भवनवासियोंसे लेकर सहस्रार कल्पतकके देवोंमें जानना चाहिए। आनत कल्पसे लेकर नौ ग्रैवेयकतकके देवोंमें मिथ्यात्व, सम्यग्मिथ्यात्व, सोलह कषाय और छह नोकषायकी अल्पतर स्थितिके उदीरकोंका काल सर्वदा है। शेष पदोंके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है। पुरुषवेदकी अल्पतर स्थितिके उदीरकोंका काल सर्वदा है। सम्यग्मिथ्यात्वका भंग ओघके समान है। अनुदिशसे लेकर अपराजिततकके देवोंमें सम्यक्त्वकी अल्पतर स्थितिके उदीरक जीवोंका काल सर्वदा है। अवक्तव्य स्थितिके उदीरक जीवोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल संख्यात समय है। बारह कषाय और छह नोकषायकी अल्पतर स्थितिके उदीरक जीवोंका काल सर्वदा है। अवक्तव्य स्थितिके उदीरक जीवोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है। पुरुषवेदकी अल्पतर स्थितिके उदीरक जीवोंका काल सर्वदा है। इसीप्रकार सर्वार्थसिद्धिमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि अवक्तव्य स्थितिके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल संख्यात समय है। इसीप्रकार

१. ता०प्रतौ पलिदो० इति पाठः।

समया । एवं जाव० ।

§ ७५६. अंतराणु० दुविहो णि०—ओघेण आदेसेण य । ओघेण मिच्छ०-सोलसक०-सत्तणोक० सव्वपदाणं णत्थि अंतरं । णवरि मिच्छ० अवत्त० जह० एयस०, उक्क० सत्त रादिंदियाणि । णवुंस० अवत्त० जह० एयस०, उक्क० चउवीस-मुहुत्तं । सम्म० भुज० जह० एयस०, उक्क० चउवीसमहोरत्ते सादिरेगे । अप्प० णत्थि अंतरं । अवत्त० जह० एयस०, उक्क० सत्त रादिंदियाणि । अवट्ठि० जह० एगसमओ, उक्क० अंगुलस्स असंखे०भागो । सम्मामि० अप्प०-अवत्त० जह० एगस०, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो । इत्थिवेद-पुरिसवेद० भुज० जह० एयस०, उक्क० अंतोमु० । अप्प०-अवट्ठि० णत्थि अंतरं । अवत्त० णवुंस०भंगो । एवं तिरिक्खा० ।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

अनाहारक मार्गणातक जानना चाहिए ।

§ ७५६. अन्तरानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे मिथ्यात्व, सोलह कषाय और सात नोकषायके सब पदोंके उदीरकोंका अन्तरकाल नहीं है । इतनी विशेषता है कि मिथ्यात्वकी अवक्तव्य स्थितिके उदीरकोंका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल सात दिन-रात है । नपुंसकवेदकी अवक्तव्य स्थितिके उदीरकोंका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल चौबीस मुहूर्त है । सम्यक्त्वकी भुजगार स्थितिके उदीरकोंका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर-काल साधिक चौबीस दिन-रात है । अल्पतर स्थितिके उदीरकोंका अन्तरकाल नहीं है । अवक्तव्य स्थितिके उदीरकोंका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल सात दिन-रात है । अवस्थित स्थितिके उदीरकोंका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है । सम्यग्मिथ्यात्वकी अल्पतर और अवक्तव्य स्थितिके उदीरकोंका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है । स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी भुजगार स्थितिके उदीरकोंका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त है । अल्पतर और अवस्थित स्थितिके उदीरकोंका अन्तरकाल नहीं है । अवक्तव्य स्थितिके उदीरकोंका भंग नपुंसकवेदके समान है । इसीप्रकार सामान्य तिर्यञ्चोंमें जानना चाहिए ।

विशेषार्थ—आयके अनुसार व्यय होता है इस नियमके अनुसार उपशमसम्यक्त्वकी अवक्तव्य स्थितिके उदीरकोंके उत्कृष्ट अन्तरकालके समान यहाँ मिथ्यात्वकी अवक्तव्य स्थितिके उदीरकोंका उत्कृष्ट अन्तर सात दिन-रात कहा है । नपुंसकवेदकी अवक्तव्य स्थितिके उदीरक जीव सामान्यसे यदि अधिकसे अधिक काल तक न हों तो चौबीस मुहूर्त तक नहीं होते । इसीसे यहाँ इसकी अवक्तव्य स्थितिके उदीरकोंका उत्कृष्ट अन्तरकाल चौबीस मुहूर्त कहा है । स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी अवक्तव्य स्थितिके उदीरकोंका अन्तरकाल इतना ही है, इसलिए उसे नपुंसकवेदके समान जाननेकी सूचना की है । जो मिथ्यादृष्टि जीव सम्यक्त्वके सत्कर्मसे अधिक मिथ्यात्वकी स्थिति बाँधकर स्थितिघात किये बिना वेदकसम्यग्दृष्टि होते हैं उनके सम्यक्त्वकी भुजगार स्थितिउदीरणा बनती है । यतः यह उत्कृष्टरूपसे साधिक चौबीस दिन-रातके अन्तरसे प्राप्त होती है, इसलिए सम्यक्त्वकी भुजगार स्थितिके उदीरकोंका उत्कृष्ट अन्तर-

§ ७५७. आदेसेण णेरइय० सोलसक०-छण्णोक० भुज०-अवत्त० जह० एगस०, उक्क० अंतोमु० । सेसं णत्थि अंतरं । एवं मिच्छ० । णवरि अवत्त० ओघं । एवं णवुंस० । णवरि अवत्त० णत्थि । सम्म० सम्मामि० ओघं । एवं सव्वणेरइय० ।

§ ७५८. पंचिंदियतिरिक्खतिय० मिच्छ०-सम्म०-सम्मामि०-सोलसक०-छण्णोक० णारयभंगो । तिण्णिवेद० भुज० जह० एगस०, उक्क० अंतोमु० । अवत्त० ओघं । एवं सेसपदाणं णत्थि अंतरं । णवरि पज्ज० इत्थिवेदो णत्थि । जोणिणीसु पुरिसवे०-णवुंस० णत्थि । इत्थिवे० अवत्त० णत्थि । पंचिंदियतिरिक्खअपज्ज० मिच्छ०-सोलसक०-सत्तणोक० णारयभंगो । णवरि मिच्छ० अवत्त० णत्थि । मणुसतिए पंचि०तिरिक्खतियभंगो । णवरि मणुसिणी० इत्थिवे० अवत्त० जह० एगस०, उक्क० वासपुधत्तं । मणुसअपज्ज० सव्वपय० सव्वपदा० जह० एगस०, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो ।

काल साधिक चौबीस दिन-रात कहा है। सम्यक्त्वकी अवक्तव्य स्थितिके उदीरकोंका उत्कृष्ट अन्तरकाल सात दिन-रात उपशमसम्यक्त्वके उत्कृष्ट अन्तरकालको ध्यानमें रखकर कहा है। शेष कथन सुगम है। आगे गतिमार्गणाके उत्तर भेदोंमें यह अन्तरकाल इस अन्तरकालको ध्यानमें रखकर यथायोग्य जान लेना चाहिए।

§ ७५७. आदेशसे नारकियोंमें सोलह कषाय और छह नोकषायकी भुजगार और अवक्तव्य स्थितिके उदीरकोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। शेष पदोंके उदीरकोंका अन्तरकाल नहीं है। इसीप्रकार मिथ्यात्वकी अपेक्षा जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इसकी अवक्तव्य स्थितिके उदीरकोंका अन्तरकाल ओघके समान है। इसीप्रकार नपुंसकवेदकी अपेक्षा जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि यहाँ इसका अवक्तव्य पद नहीं है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका भंग ओघके समान है। इसीप्रकार सब नारकियोंमें जानना चाहिए।

§ ७५८. पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकमें मिथ्यात्व, सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व, सोलह कषाय और छह नोकषायका भंग नारकियोंके समान है। तीन वेदोंकी भुजगार स्थितिके उदीरकोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अवक्तव्य पदका भंग ओघके समान है। इसीप्रकार शेष पदोंके उदीरकोंका अन्तर नहीं है। इतनी विशेषता है कि तिर्यञ्च पर्याप्तकोंमें स्त्रीवेद नहीं है तथा योनिनियोंमें पुरुषवेद और नपुंसकवेद नहीं है। इनमें स्त्रीवेदकी अवक्तव्य स्थितिउदीरणा नहीं है। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय और सात नोकषायका भंग नारकियोंके समान है। इतनी विशेषता है कि इनमें मिथ्यात्वकी अवक्तव्य स्थितिउदीरणा नहीं है। मनुष्यत्रिकमें पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकके समान भंग है। इतनी विशेषता है कि मनुष्यिनियोंमें स्त्रीवेदकी अवक्तव्य स्थितिके उदीरकोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर वर्षपृथक्त्व है। मनुष्य अपर्याप्तकोंमें सब प्रकृतियोंके सब पदोंके उदीरकोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है।

§ ७५९. देवेसु मिच्छ०-सोलसक०-अट्ठणोक०-सम्म०-सम्मामि० पंचिंदियतिरिक्खभंगो। णवरि इत्थिवे०-पुरिसवे० अवत्त० णत्थि। एवं भवण०-वाणवें०-जोदिसि०-सोहम्मीसाणे त्ति। एवं सणक्कुमारादि सहस्सार त्ति। णवरि इत्थिवेदो णत्थि।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

§ ७६०. आणदादि जाव णवगेवज्जा त्ति मिच्छ०-सम्मामि०-सोलसक०-छण्णोक० अप्प०-अवत्त० णारयभंगो। पुरिसवेद० अप्प० णत्थि अंतरं। सम्म० ओघं। णवरि अवट्ठि० णत्थि। अणुद्दिसादि सव्वट्ठा त्ति सम्म० अप्प० णत्थि अंतरं। अवत्त० जह० एयस०, उक्क० वासपुधत्तं पलिदो० संखे०भागो। बारसक०-छण्णोक०-पुरिसवेद आणदभंगो। एवं जाव०।

§ ७६१. भावाणु० सव्वत्थ ओदइओ भावो।

§ ७६२. अप्पाबहुआणु० दुविहो णि०—ओघेण आदेसेण य। ओघेण मिच्छ०-णवुंस० सव्वत्थोवा अवत्त०। भुज०ट्ठिदिउदी० अणंतगुणा। अवट्ठि० असंखे०गुणा। अप्प० संखे०गुणा। सम्म० सव्वत्थोवा अवट्ठि०उदी०। भुज० असंखे०गुणा। अवत्त० असंखे०गुणा। अप्प० असंखे०गुणा। सम्मामि० सव्वत्थो०

---

§ ७५९. देवोंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय, आठ नोकषाय, सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका भंग पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चोंके समान है। इतनी विशेषता है कि इनमें स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी अवक्तव्य स्थितिउदीरणा नहीं है। इसीप्रकार भवनवासी, व्यन्तर, ज्योतिषी तथा सौधर्म और ऐशानकल्पके देवोंमें जानना चाहिए। इसीप्रकार सनत्कुमार कल्पसे लेकर सहस्रार कल्पतकके देवोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनमें स्त्रीवेद नहीं है।

§ ७६०. आनतकल्पसे लेकर नौ ग्रैवेयकतकके देवोंमें मिथ्यात्व, सम्यग्मिथ्यात्व, सोलह कषाय और छह नोकषायकी अल्पतर और अवक्तव्य स्थितिके उदीरकोंका भंग नारकियोंके समान है। पुरुषवेदकी अल्पतर स्थितिके उदीरकोंका अन्तरकाल नहीं है। सम्यक्त्वका भंग ओघके समान है। इतनी विशेषता है कि यहाँ इसकी अवस्थित स्थितिउदीरणा नहीं है। अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धितकके देवोंमें सम्यक्त्वकी अल्पतर स्थितिके उदीरकोंका अन्तरकाल नहीं है। इसकी अवक्तव्य स्थितिके उदीरकोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर क्रमसे वर्षपृथक्त्व और पल्यके संख्यातवें भागप्रमाण है। बारह कषाय, छह नोकषाय और पुरुषवेदका भंग आनतकल्पके समान है। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणातक जानना चाहिए।

§ ७६१. भावानुगमकी अपेक्षा सर्वत्र औदयिक भाव है।

§ ७६२. अल्पबहुत्वानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मिथ्यात्व और नपुंसकवेदकी अवक्तव्य स्थितिके उदीरक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे भुजगार स्थितिके उदीरक जीव अनन्तगुणे हैं। इनसे अवस्थित स्थितिके उदीरक जीव असंख्यातगुणे हैं। इनसे अल्पतर स्थितिके उदीरक जीव संख्यातगुणे हैं। सम्यक्त्वकी अवस्थित स्थितिके उदीरक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे भुजगार स्थितिके उदीरक जीव असंख्यातगुणे हैं। इनसे अवक्तव्य स्थितिके उदीरक जीव असंख्यातगुणे हैं। इनसे अल्पतर

अवत्त०ट्ठिदिउदी० । अप्प०ट्ठिदिउदी० असंखे०गुणा । सोलसक०-छण्णोक० सव्वत्थोवा भुज०ट्ठिदिउदी० । अवत्त०ट्ठिदिउदी० संखे०गुणा । अवट्ठि०ट्ठिदिउदी०
मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज
असंखे०गुणा । अप्प०ट्ठिदिउदी० संखे०गुणा । इत्थिवे०-पुरिसवे० सव्वत्थोवा अवत्त० । भुज०ट्ठिदिउदी० संखे०गुणा । अवट्ठि०ट्ठिदिउदी० असंखे०गुणा । अप्प०ट्ठिदिउदी० संखे०गुणा । एवं तिरिक्खा० ।

§ ७६३. आदेसेण णेरइय० सोलसक०-छण्णोक०-सम्म०-सम्मामि० ओघं० । मिच्छ० सव्वत्थोवा अवत्त०ट्ठिदिउदी० । भुज० असंखे०गुणा । अवट्ठि० असंखे०गुणा । अप्प०ट्ठिदिउदी० संखे०गुणा । एवं णवुंस० । णवरि अवत्त० णत्थि । एवं सव्वणेरइय० ।

§ ७६४. पंचिंदियतिरिक्खतिए ओघं । णवरि मिच्छ०-णवुंस० सव्वत्थोवा अवत्त०ट्ठिदिउदी० । भुज०ट्ठिदिउदी० असंखे०गुणा । अवट्ठि०उदी० असंखे०गुणा । अप्प०ट्ठिदिउदी० संखे०गुणा । णवरि पज्जत्तएसु इत्थिवेदो णत्थि । णवुंसय० पुरिसभंगो । जोणिणीसु पुरिस०-णवुंस० णत्थि । इत्थिवे० अवत्त० णत्थि ।

§ ७६५. पंचिं०तिरि०अपज्ज०-मणुसअपज्ज० मिच्छ०-णवुंसय० सव्वत्थोवा

स्थितिके उदीरक जीव असंख्यातगुणे हैं। सम्यग्मिथ्यात्वकी अवक्तव्य स्थितिके उदीरक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे अल्पतर स्थितिके उदीरक जीव असंख्यातगुणे हैं। सोलह कषाय और छह नोकषायकी भुजगार स्थितिके उदीरक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे अवक्तव्य स्थितिके उदीरक जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे अवस्थित स्थितिके उदीरक जीव असंख्यातगुणे हैं। इनसे अल्पतर स्थितिके उदीरक जीव संख्यातगुणे हैं। स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी अवक्तव्य स्थितिके उदीरक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे भुजगार स्थितिके उदीरक जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे अवस्थित स्थितिके उदीरक जीव असंख्यातगुणे हैं। इनसे अल्पतर स्थितिके उदीरक जीव संख्यातगुणे हैं। इसीप्रकार सामान्य तिर्यञ्चोंमें जानना चाहिए।

§ ७६३. आदेशसे नारकियोंमें सोलह कषाय, छह नोकषाय, सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका भंग ओघके समान है। मिथ्यात्वकी अवक्तव्य स्थितिके उदीरक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे भुजगार स्थितिके उदीरक जीव असंख्यातगुणे हैं। इनसे अवस्थित स्थितिके उदीरक जीव असंख्यातगुणे हैं। इनसे अल्पतर स्थितिके उदीरक जीव संख्यातगुणे हैं। इसीप्रकार नपुंसकवेदकी अपेक्षा जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि यहाँ इसकी अवक्तव्य स्थितिके उदीरक जीव नहीं है। इसीप्रकार सब नारकियोंमें जानना चाहिए।

§ ७६४. पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकमें ओघके समान भंग है। इतनी विशेषता है कि मिथ्यात्व और नपुंसकवेदकी अवक्तव्य स्थितिके उदीरक जीव सबसे स्तोक हैं। उनसे भुजगार स्थितिके उदीरक जीव असंख्यातगुणे हैं। उनसे अवस्थित स्थितिके उदीरक जीव असंख्यातगुणे हैं। उनसे अल्पतर स्थितिके उदीरक जीव संख्यातगुणे हैं। इतनी विशेषता है कि पर्याप्तकोंमें स्त्रीवेद नहीं है। नपुंसकवेदका भंग पुरुषवेदके समान है। योनिनी तिर्यञ्चोंमें पुरुषवेद और नपुंसकवेद नहीं है। इनमें स्त्रीवेदकी अवक्तव्य स्थितिउदीरणा नहीं है।

§ ७६५. पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्तकोंमें मिथ्यात्व और नपुंसक-

भुज० । अवट्ठि० असंखे०गुणा । अप्पद० संखे०गुणा । सोलसक०-छण्णोक० ओघं ।

§ ७६६. मणुसेसु मिच्छ०-सोलसक०सत्तणोक० पंचिंदियतिरिक्खभंगो । सम्म० सव्वत्थोवा अवट्ठि० । भुज० संखे०गुणा । अवत्त० संखे०गुणा । अप्प० संखे०गुणा । सम्मामि० सव्वत्थोवा अवत्त० । अप्प० संखे०गुणा । इत्थिवे०-पुरिसवे० सव्वत्थोवा अवत्त० । भुज० संखे०गुणा । अवट्ठि० संखे०गुणा । अप्प० संखे०गुणा । एवं मणुसपज्ज० । णवरि संखेज्जगुणं कादव्वं । इत्थिवेदो णत्थि । णवुंस० पुरिसभंगो । मणुसिणी० एवं चेव । णवरि पुरिसवे०-णवुंस० णत्थि । इत्थिवेद० मणुसोघं ।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

§ ७६७. देवेसु मिच्छ०-सोलसक०-छण्णोक०-सम्म०-सम्मामि० णारयभंगो । इत्थिवेद-पुरिसवेद० मिच्छत्तभंगो । णवरि अवत्त० णत्थि । एवं भवणादि जाव सोहम्मीसाणे त्ति । एवं सणक्कुमारादि जाव सहस्सार त्ति । णवरि इत्थिवेदो णत्थि । आणदादि णवगेवज्जा त्ति मिच्छ०-सम्मामि०-सोलसक०-छण्णोक० सव्वत्थोवा अवत्त० । अप्पद० असंखे०गुणा । सम्म० सव्वत्थोवा भुज० । अवत्त० असंखे०गुणा ।

वेदकी भुजगार स्थितिके उदीरक जीव सबसे स्तोक हैं । इनसे अवस्थित स्थितिके उदीरक जीव असंख्यातगुणे हैं । इनसे अल्पतर स्थितिके उदीरक जीव संख्यातगुणे हैं । सोलह कषाय और छह नोकषायका भंग ओघके समान है ।

§ ७६६. मनुष्योंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय और सात नोकषायका भंग पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चोंके समान है । सम्यक्त्वकी अवस्थित स्थितिके उदीरक जीव सबसे स्तोक हैं । उनसे भुजगार स्थितिके उदीरक जीव संख्यातगुणे हैं । उनसे अवक्तव्य स्थितिके उदीरक जीव संख्यातगुणे हैं । उनसे अल्पतर स्थितिके उदीरक जीव संख्यातगुणे हैं । सम्यग्मिथ्यात्वकी अवक्तव्य स्थितिके उदीरक जीव सबसे स्तोक हैं । उनसे अल्पतर स्थितिके उदीरक जीव संख्यातगुणे हैं । स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी अवक्तव्य स्थितिके उदीरक जीव सबसे स्तोक हैं । उनसे भुजगार स्थितिके उदीरक जीव संख्यातगुणे हैं । उनसे अवस्थित स्थितिके उदीरक जीव संख्यातगुणे हैं । उनसे अल्पतर स्थितिके उदीरक जीव संख्यातगुणे हैं । इसीप्रकार मनुष्य पर्याप्तकोंमें जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि संख्यातगुणा करना चाहिए । स्त्रीवेद नहीं है । नपुंसकवेदका भंग पुरुषवेदके समान है । मनुष्यिनियोंमें इसीप्रकार जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि इनमें पुरुषवेद और नपुंसकवेद नहीं है । स्त्रीवेदका भंग सामान्य मनुष्योंके समान है ।

§ ७६७. देवोंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय, छह नोकषाय, सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका भंग नारकियोंके समान है । स्त्रीवेद और पुरुषवेदका भंग मिथ्यात्वके समान है । इतनी विशेषता है कि इनकी अवक्तव्य स्थितिउदीरणा नहीं है । इसीप्रकार भवनवासियोंसे लेकर सौधर्म और ऐशान कल्पतकके देवोंमें जानना चाहिए । इसीप्रकार सनत्कुमार कल्पसे लेकर सहस्रार कल्पतकके देवोंमें जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि इनमें स्त्रीवेद नहीं है । आनत कल्पसे लेकर नौ ग्रैवेयकतकके देवोंमें मिथ्यात्व, सम्यग्मिथ्यात्व, सोलह कषाय और छह नोकषायकी अवक्तव्य स्थितिके उदीरक जीव सबसे स्तोक हैं । इनसे अल्पतर स्थितिके उदीरक जीव असंख्यातगुणे हैं । सम्यक्त्वकी भुजगार स्थितिके उदीरक जीव सबसे स्तोक हैं ।

अप्प० असंखे०गुणा। पुरिसवेद० णत्थि अप्पाबहुअं। अणुद्दिसादि सव्वट्ठा त्ति सम्म०-बारसक०-छण्णोक० सव्वत्थोवा अवत्त०। अप्प० असंखे०गुणा। पुरिस० णत्थि अप्पाबहुअं। णवरि सव्वट्ठे संखेज्जगुणं कादव्वं। एवं जाव०।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

भुजगारट्ठिदिउदीरणा समत्ता।

§ ७६८. पदणिक्खेवे तत्थ इमाणि तिण्णि अणियोगद्दाराणि—समुक्कित्तणा सामित्तमप्पाबहुअं च। समुक्कित्तणाणु० दुविहं—जहण्णुक्कस्सभेएण। उक्कस्से पयदं। दुविहो णि०—ओघेण आदेसेण य। ओघेण मिच्छ०-सम्म०-सोलसक०-णवणोक० अत्थि उक्क० वड्ढी० हाणी अवट्ठाणं च। सम्मामि० अत्थि उक्क० हाणी। आदेसेण सव्वणेरइय०-सव्वतिरिक्ख-सव्वमणुस्स-सव्वदेवा त्ति जाओ पयडीओ उदीरिज्जंति तासिमोघं। णवरि आणदादि णवगेवज्जा त्ति सम्म० अत्थि उक्क० वड्ढी हाणी च। अवट्ठाणं णत्थि। सेसपयडीणमत्थि उक्क० हाणी। अणुद्दिसादि सव्वट्ठा त्ति सम्म०-बारसक०-सत्तणोक० अत्थि उक्क० हाणी। एवं जाव०।

§ ७६९. एवं जहण्णयं पि णेदव्वं।

§ ७७०. सामित्तं दुविहं—जह० उक्क०। उक्कस्से पयदं। दुविहो णि०—ओघेण आदेसेण य। ओघेण मिच्छ०-सोलसक० उक्क वड्ढिट्ठिदिउदी० कस्स?

इनसे अवक्तव्य स्थितिके उदीरक जीव असंख्यातगुणे हैं। इनसे अल्पतर स्थितिके उदीरक जीव असंख्यातगुणे हैं। पुरुषवेदकी अपेक्षा अल्पबहुत्व नहीं है। अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें सम्यक्त्व, बारह कषाय और छह नोकषायकी अवक्तव्य स्थितिके उदीरक जीव सबसे स्तोक हैं। उनसे अल्पतर स्थितिके उदीरक जीव असंख्यातगुणे हैं। पुरुषवेदकी अपेक्षा अल्पबहुत्व नहीं है। इतनी विशेषता है कि सर्वार्थसिद्धिमें संख्यातगुणा करना चाहिए। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणातक जानना चाहिए।

इसप्रकार भुजगार स्थितिउदीरणा समाप्त हुई।

§ ७६८. पदनिक्षेपमें ये तीन अनुयोगद्वार हैं—समुत्कीर्तना, स्वामित्व और अल्पबहुत्व। समुत्कीर्तनानुगम दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट। उत्कृष्टका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मिथ्यात्व, सम्यक्त्व, सोलह कषाय और नौ नोकषायकी उत्कृष्ट वृद्धि, हानि और अवस्थान है। सम्यग्मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट हानि है। आदेशसे सब नारकी, सब तिर्यञ्च, सब मनुष्य और सब देव जिन प्रकृतियोंकी उदीरणा करते हैं उनका भंग ओघके समान है। इतनी विशेषता है कि आनतकल्पसे लेकर नौ ग्रैवेयकतकके देवोंमें सम्यक्त्वकी उत्कृष्ट वृद्धि और हानि है। अवस्थान नहीं है। शेष प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट हानि है। अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धितकके देवोंमें सम्यक्त्व, बारह कषाय और सात नोकषायकी उत्कृष्ट हानि है। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणातक जानना चाहिए।

§ ७६९. इसीप्रकार जघन्यका भी कथन करना चाहिए।

§ ७७०. स्वामित्व दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट। उत्कृष्टका प्रकरण है। निर्देश

अण्णद० जो तप्पाओग्ग-जहण्णट्ठिदिमुदीरेमाणो उक्कस्सट्ठिदिं पबंधो तस्स आवलियादीदस्स तस्स उक्क० वड्ढिउदी०। तस्सेव से काले उक्क० अवट्ठाणं। उक्क० हाणी कस्स? अण्णदरस्स जो उक्कस्सट्ठिदिमुदीरेमाणो उक्कस्सट्ठिदिखंडयं हणदि तस्स उक्क० हाणी। एवं णवणोक०। णवरि उक्क० वड्ढी कस्स? अण्णद० जो तप्पाओग्गजहण्णट्ठिदिमुदीरेमाणो उक्कस्सट्ठिदिं पडिच्छिदो तस्स आवलियादीदस्स उक्क० वड्ढी। तस्सेव से काले उक्क० अवट्ठाणं। सम्म० उक्क० वड्ढी कस्स? अण्णद० मिच्छत्तस्स उक्कस्सट्ठिदिं बंधिऊण अंतोमुहुत्तेण ट्ठिदिघादमकादूण सम्मत्तं पडिवण्णो तस्स बिदियसमयवेदगसम्माइट्ठिस्स उक्क० वड्ढी। उक्क० हाणी कस्स? अण्णद० जो उक्कस्सट्ठिदिमुदीरेमाणो उक्क० ट्ठिदिखंडयं हणदि तस्स उक्क० हाणी। उक्क० अवट्ठाणं कस्स? अण्णद० जो पुव्वुप्पण्णादो सम्मत्तादो मिच्छत्तस्स समयुत्तरट्ठिदिं बंधिऊण सम्मत्तं पडिवण्णो तस्स बिदियसमयवेदगसम्माइट्ठिस्स उक्क० अवट्ठाणं। सम्मामि० उक्क० हाणी कस्स? अण्णद० जो उक्कस्सट्ठिदिमुदीरेमाणो उक्क० ट्ठिदिखंडयं हणदि तस्स उक्क० हाणी। सव्वणेरइय०-तिरिक्ख-पंचिंदियतिरिक्खतिय-मणुसतिय-देवा भवणादि जाव सहस्सार त्ति जाओ पयडीओ उदीरिज्जंति तासिमोघं।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मिथ्यात्व और सोलह कषायकी उत्कृष्ट वृद्धि स्थितिउदीरणा किसके होती है? जो तत्प्रायोग्य जघन्य स्थितिकी उदीरणा करनेवाला उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करता है, एक आवलिके बाद अन्यतर उस जीवके उत्कृष्ट वृद्धि स्थितिउदीरणा होती है। तथा उसीके अनन्तर समयमें उत्कृष्ट अवस्थान होता है। उत्कृष्ट हानि स्थितिउदीरणा किसके होती है? जो उत्कृष्ट स्थितिकी उदीरणा करनेवाला जीव उत्कृष्ट स्थितिकाण्डकका घात करता है अन्यतर उस जीवके उत्कृष्ट हानि स्थितिउदीरणा होती है। इसीप्रकार नौ नोकषायोंकी अपेक्षा जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनकी उत्कृष्ट वृद्धि स्थितिउदीरणा किसके होती है? जो तत्प्रायोग्य जघन्य स्थितिकी उदीरणा करनेवाला जीव उत्कृष्ट स्थितिका नौ नोकषायरूप संक्रम करता है अन्यतर उसके एक आवलिके बाद उत्कृष्ट वृद्धि स्थितिउदीरणा होती है। उसीके तदनन्तर समयमें उत्कृष्ट अवस्थान होता है। सम्यक्त्वकी उत्कृष्ट वृद्धि स्थितिउदीरणा किसके होती है? जो मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट स्थिति बाँधकर स्थितिघात किये बिना अन्तर्मुहूर्तमें सम्यक्त्वको प्राप्त हुआ अन्यतर द्वितीय समयवर्ती उस वेदकसम्यग्दृष्टिके उत्कृष्ट वृद्धि स्थितिउदीरणा होती है। उत्कृष्ट हानि स्थितिउदीरणा किसके होती है? जो उत्कृष्ट स्थितिकी उदीरणा करनेवाला उत्कृष्ट स्थितिकाण्डकका घात करता है अन्यतर उसके उत्कृष्ट हानि स्थितिउदीरणा होती है। उत्कृष्ट अवस्थान किसके होता है? जो पूर्वमें उत्पन्न हुए सम्यक्त्वसे (पूर्वमें उत्पन्न हुई सम्यक्त्वकी स्थितिसे) मिथ्यात्वकी एक समय अधिक स्थितिका बन्धकर सम्यक्त्वको प्राप्त हुआ दूसरे समयमें स्थित हुए अन्यतर उस वेदकसम्यग्दृष्टि जीवके उत्कृष्ट अवस्थान होता है। सम्यग्मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट हानि स्थितिउदीरणा किसके होती है? जो उत्कृष्ट स्थितिकी उदीरणा करनेवाला जीव उत्कृष्ट स्थितिकाण्डकका घात करता है अन्यतर उसके उत्कृष्ट हानि स्थितिउदीरणा होती है। सब नारकी, सामान्य तिर्यञ्च, पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिक, मनुष्यत्रिक, देव तथा भवनवासियोंसे लेकर सहस्रार कल्पतकके देव जिन प्रकृतियोंकी उदीरणा

§ ७७१. पंचिंदियतिरिक्खअपज्ज०-मणुसअपज्ज० मिच्छ०-सोलसक०-सत्तणोक० उक्क० वड्ढी कस्स ? अण्णद० जो तप्पाओग्गजहण्णट्ठिदिमुदीरेमाणो तप्पाओग्गउक्क०-ट्ठिदिमुदीरेदि तस्स उक्क० वड्ढी। तस्सेव से काले उक्क० अवट्ठाणं। उक्क० हाणी कस्स ? अण्णदरस्स मणुस्स-मणुस्सिणीए वा पंचिंदियतिरिक्खजोणिणीयस्स वा उक्कस्सट्ठिदिं घादयमाणो अपज्जत्तएसु उववण्णो तस्स उक्क०ट्ठिदिखंडगे हदे तस्स उक्क० हाणी।

§ ७७२. आणदादि णवगेवज्जा त्ति मिच्छ०-सोलसक०-सत्तणोक० उक्क० हाणी कस्स ? अण्णद० तप्पाओग्गउक्क०ट्ठिदिमुदीरेमाणो पढमसम्मत्ताहिमुहेण पढमे ट्ठिदिखंडए हदे तस्स उक्क० हाणी। सम्म० उक्क० वड्ढी० कस्स ? अण्णद० जो वेदगसम्मत्तपाओग्गजहण्णट्ठिदिसंतकम्मि० सम्मत्तं पडिवण्णो तस्स बिदियसमय-वेदगसम्माइट्ठिस्स उक्क० वड्ढी। उक्क० हाणी कस्स ? अण्णद० जो तप्पाओग्गउक्क०-ट्ठिदिसंतकम्मि० अणंताणुबंधिं विसंजोजयस्स पढमे ट्ठिदिखंडए हदे तस्स उक्क० हाणी। सम्मामि० उक्क० हाणी कस्स ? अण्णद० अधट्ठिदिं गालेमाणगस्स तस्स उक्क० हाणी।

करते हैं उनमें उनका भंग ओघके समान है।

§ ७७१. पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्तकोंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय और सात नोकषायकी उत्कृष्ट वृद्धि स्थितिउदीरणा किसके होती है ? जो तत्प्रायोग्य जघन्य स्थितिकी उदीरणा करनेवाला जीव तत्प्रायोग्य उत्कृष्ट स्थितिकी उदीरणा करता है अन्यतर उसके उत्कृष्ट स्थितिउदीरणा होती है। उसीके तदनन्तर समयमें उत्कृष्ट अवस्थान होता है। उत्कृष्ट हानि स्थितिउदीरणा किसके होती है ? जो मनुष्य या मनुष्यिनी या पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च-योनि जीव उत्कृष्ट स्थितिका घात करता हुआ अपर्याप्तकोंमें उत्पन्न हुआ अन्यतर उस जीवके उत्कृष्ट स्थितिकाण्डकका घात करनेपर उत्कृष्ट हानि स्थितिउदीरणा होती है।

§ ७७२. आनतकल्पसे लेकर नौ ग्रैवेयकतकके देवोंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय और सात नोकषायकी उत्कृष्ट हानि स्थितिउदीरणा किसके होती है ? तत्प्रायोग्य उत्कृष्ट स्थितिकी उदीरणा करनेवाला जो जीव प्रथम सम्यक्त्वके अभिमुख होकर प्रथम स्थितिकाण्डकका घात करता है अन्यतर उसके उत्कृष्ट हानि स्थितिउदीरणा होती है। सम्यक्त्वकी उत्कृष्ट वृद्धि स्थितिउदीरणा किसके होती है ? वेदकसम्यक्त्वके प्रायोग्य सम्यक्त्वकी जघन्य स्थितिसत्कर्मवाला जो जीव सम्यक्त्वको प्राप्त हुआ दूसरे समयमें स्थित अन्यतर उस वेदकसम्यग्दृष्टि जीवके उत्कृष्ट वृद्धि स्थितिउदीरणा होती है। उत्कृष्ट हानि स्थितिउदीरणा किसके होती है ? तत्प्रायोग्य उत्कृष्ट स्थितिसत्कर्मवाले जिस जीवने अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजना करते हुए प्रथम स्थितिकाण्डकका घात किया है उसके उत्कृष्ट हानि स्थितिउदीरणा होती है। सम्यग्मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट हानि स्थितिउदीरणा किसके होती है ? अधःस्थितिको गलानेवाले अन्यतर जीवके उसकी उत्कृष्ट हानि स्थितिउदीरणा होती है।

§ ७७३. अणुद्दिसादि सव्वट्ठा त्ति सम्म०-बारसक०-सत्तणोक० उक्क० हाणी कस्स ? अण्णद० अणंताणुबंधिं विसंजोजयस्स पढमे ट्ठिदिखंडए हदे तस्स उक्क० हाणी । एवं जाव० ।

§ ७७४. जहण्णए पयदं । दुविहो णि०—ओघेण आदेसेण य । ओघेण मिच्छ०-सोलसक०-णवणोक० जह० वड्ढी कस्स ? अण्णद० जो समयूणट्ठिदिमुदीरेमाणो उक्कस्सट्ठिदिमुदीरेदि तस्स जह० वड्ढी । जह० हाणी कस्स ? अण्णद० जो उक्क० ट्ठिदिमुदीरेमाणो समऊणट्ठिदिमुदीरेदि तस्स जह० हाणी । एगदरत्थावट्ठाणं । सम्म० जह० वड्ढी कस्स ? अण्णद० जो पुव्वुप्पण्णादो सम्मत्तादो मिच्छत्तस्स दुसमयुत्तरं ट्ठिदिं बंधिऊण सम्मत्तं पडिवण्णो तस्स बिदियसमयवेदगसम्माइट्ठिस्स जह० वड्ढी । जह० अवट्ठाणमुक्कस्सभंगो । जह० हाणी कस्स ? अण्णद० अधट्ठिदिं गालेमाणयस्स तस्स जह० हाणी । सम्मामि० जह० हाणी कस्स ? अण्ण० अधट्ठिदिं गालेमाणगस्स ।

आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

§ ७७५. आदेसेण सव्वणेरइय०-सव्वतिरिक्ख-सव्वमणुस्स-देवा भवणादि जाव सहस्सार त्ति जाओ पयडीओ उदीरिज्जंति तासिमोघं । आणदादि णवगेवज्जा त्ति

§ ७७३. अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धितकके देवोंमें सम्यक्त्व, बारह कषाय और सात नोकषायकी उत्कृष्ट हानि स्थितिउदीरणा किसके होती है ? अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजना करनेवालेके प्रथम स्थितिकाण्डकका घात करनेपर उनकी उत्कृष्ट हानि स्थितिउदीरणा होती है । इसीप्रकार अनाहारक मार्गणातक जानना चाहिए ।

§ ७७४. जघन्यका प्रकरण है । निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे मिथ्यात्व, सोलह कषाय और नौ नोकषायकी जघन्य वृद्धि स्थितिउदीरणा किसके होती है ? जो एक समय कम स्थितिकी उदीरणा करनेवाला जीव उत्कृष्ट स्थितिकी उदीरणा करता है अन्यतर उसके उन प्रकृतियोंकी जघन्य वृद्धि स्थितिउदीरणा होती है । जघन्य हानि स्थितिउदीरणा किसके होती है ? जो उत्कृष्ट स्थितिकी उदीरणा करनेवाला जीव एक समय कम स्थितिकी उदीरणा करता है अन्यतर उसके उन प्रकृतियोंकी जघन्य हानि स्थितिउदीरणा होती है । तथा किसी एक स्थानपर जघन्य अवस्थान होता है । सम्यक्त्वकी जघन्य वृद्धि स्थितिउदीरणा किसके होती है ? जो पूर्वमें उत्पन्न हुए सम्यक्त्वकी स्थितिसे मिथ्यात्वकी दो समय अधिक स्थितिका बन्ध कर सम्यक्त्वको प्राप्त हुआ, दूसरे समयवर्ती वेदकसम्यग्दृष्टि अन्यतर उस सम्यग्दृष्टिके उसकी जघन्य वृद्धि स्थितिउदीरणा होती है । जघन्य अवस्थानका भंग उत्कृष्टके समान है । जघन्य हानि स्थितिउदीरणा किसके होती है ? अधःस्थितिको गलानेवाले अन्यतर उस जीवके उसकी जघन्य हानि स्थितिउदीरणा होती है । सम्यग्मिथ्यात्वकी जघन्य हानि स्थितिउदीरणा किसके होती है ? अधःस्थितिको गलानेवाले अन्यतर जीवके उसकी जघन्य हानि स्थितिउदीरणा होती है ।

§ ७७५. आदेशसे सब नारकी, सब तिर्यञ्च, सब मनुष्य, देव, भवनवासियोंसे लेकर सहस्रार कल्पतकके देव जिन प्रकृतियोंकी उदीरणा करते हैं उनका भंग ओघके समान है ।

सम्म० जह० वड्ढी कस्स ? अण्णद० जो सम्माइट्ठी मिच्छत्तं गंतूण एगमुव्वेल्लणकंदय-मुव्वेल्लेऊण सम्मत्तं पडिवण्णो तस्स बिदियसमयवेदयसम्माइट्ठिस्स जह० वड्ढी। जह० हाणी कस्स० ? अण्णद० अधट्ठिदिं गालेमाणगस्स तस्स जह० हाणी। मिच्छ०-सम्मामि०-सोलसक०-सत्तणोक० जह० हाणी कस्स ? अण्णदरस्स अधट्ठिदिं गालेमाणगस्स। अणुद्दिसादि सव्वट्ठा त्ति सम्म०-बारसक०-सत्तणोक० जह० हाणी कस्स ? अण्णद० अधट्ठिदिं गालेमाणयस्स तस्स जह० हाणी। एवं जाव०।

§ ७७६. अप्पाबहुअं दुविहं—जह० उक्क०। उक्कस्से पयदं। दुविहो णि०—ओघेण आदेसेण य। ओघेण मिच्छ०-सोलसक०-णवणोक० सव्वत्थोवा उक्क० हाणी। वड्ढी अवट्ठाणं च विसेसाहियं। सम्म० सव्वत्थोवमुक्कस्समवट्ठाणं। उक्क० हाणी असंखे०गुणा। उक्क० वड्ढी विसेसाहिया। सम्मामि० णत्थि अप्पाबहुअं।

§ ७७७. आदेसेण सव्वणेरइय-तिरिक्ख-पंचिंदियतिरिक्खतिय-मणुसतिय-देवा भवणादि जाव सहस्सार त्ति जाओ पयडीओ उदीरिज्जंति तासिमोघं। पंचिंदिय-तिरिक्खअपज्ज०-मणुसअपज्ज० मिच्छ०-सोलसक०-सत्तणोक० सव्वत्थोवा उक्क० वड्ढी अवट्ठाणं च। उक्क० हाणी संखे०गुणा। आणदादि णवगेवज्जा त्ति णत्थि अप्पाबहुअं।

आनतकल्पसे लेकर नौ ग्रैवेयक तकके देवोंमें सम्यक्त्वकी जघन्य वृद्धि स्थितिउदीरणा किसके होती है ? जो सम्यग्दृष्टि मिथ्यात्वको प्राप्त होकर एक उद्वेलना काण्डककी उद्वेलना कर सम्यक्त्वको प्राप्त हुआ, दूसरे समयमें स्थित अन्यतर उस वेदकसम्यग्दृष्टि जीवके उसकी जघन्य वृद्धि स्थितिउदीरणा होती है। जघन्य हानि स्थितिउदीरणा किसके होती है ? अधः-स्थितिको गलानेवाले अन्यतर जीवके उसकी जघन्य हानि स्थितिउदीरणा होती है। मिथ्यात्व, सम्यग्मिथ्यात्व, सोलह कषाय और सात नोकषायकी जघन्य हानि स्थितिउदीरणा किसके होती है ? अधःस्थितिको गलानेवाले अन्यतर जीवके उनकी जघन्य हानि स्थितिउदीरणा होती है। अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धितकके देवोंमें सम्यक्त्व, बारह कषाय और सात नोकषायकी जघन्य हानि स्थितिउदीरणा किसके होती है ? अधःस्थितिको गलानेवाले अन्यतर जीवके उनकी जघन्य हानि स्थितिउदीरणा होती है। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणातक जानना चाहिए।

§ ७७६. अल्पबहुत्व दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट। उत्कृष्टका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मिथ्यात्व, सोलह कषाय और नौ नोकषायकी उत्कृष्ट हानि सबसे स्तोक है। उससे उत्कृष्ट वृद्धि और अवस्थान विशेष अधिक है। सम्यक्त्वका उत्कृष्ट अवस्थान सबसे स्तोक है। उससे उत्कृष्ट हानि असंख्यातगुणी है। उससे उत्कृष्ट वृद्धि विशेष अधिक है। सम्यग्मिथ्यात्वका अल्पबहुत्व नहीं है।

§ ७७७. आदेशसे सब नारकी, तिर्यञ्च, पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिक, मनुष्यत्रिक, देव और भवनवासियोंसे लेकर सहस्रार कल्पतकके देवोंमें जिन प्रकृतियोंकी उदीरणा होती है उनका भंग ओघके समान है। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्तकोंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय और सात नोकषायकी उत्कृष्ट वृद्धि और अवस्थान सबसे स्तोक है। उससे उत्कृष्ट हानि संख्यातगुणी है। आनतकल्पसे लेकर नौ ग्रैवेयकतकके देवोंमें अल्पबहुत्व नहीं

णवरि सम्म० सव्वत्थोवा उक० हाणी। वड्ढी संखे०गुणा। अणुद्दिसादि सव्वट्ठा त्ति णत्थि अप्पाबहुअं। एवं जाव०।

§ ७७८. जह० पयदं। दुविहो णि०—ओघेण आदेसेण य। ओघेण मिच्छ०-सोलसक०-णवणोक-सम्म० जह० वड्ढी हाणी अवट्ठाणाणि सरिसाणि। सम्मामि० णत्थि अप्पाबहुअं।

§ ७७९. आदेसेण सव्वणेरइय०-सव्वतिरिक्ख०-सव्वमणुस-देवा भवणादि जाव सहस्सारा त्ति जाओ पयडीओ उदीरिज्जंति तासिमोघं। आणदादि णवगेवज्जा त्ति णत्थि अप्पाबहुअं। णवरि सम्म० सव्वत्थोवा जहण्णिया हाणी। जहण्णिया वड्ढी असंखेज्जगुणा। अणुद्दिसादि सव्वट्ठा त्ति णत्थि अप्पाबहुअं। एवं जाव०।

§ ७८०. वड्ढिट्ठिदिउदीरणाए तत्थ इमाणि तेरस अणियोगद्दाराणि—समुक्कित्तणा जाव अप्पाबहुए त्ति। समुक्कित्तणाणु० दुविहो णि०—ओघेण आदेसेण य। ओघेण मिच्छ०-सम्म०-इत्थिवे०-णवुंस० अत्थि तिण्णिवड्ढि-चत्तारिहाणि-अवट्ठाणि-अवत्त०। सम्मामि० अत्थि तिण्णिहाणि-अवत्त०। बारसक०-छण्णोक० अत्थि तिण्णिवड्ढि-हाणि-अवट्ठि०-अवत्त०। चदुसंज०-पुरिसवे० अत्थि चत्तारिवड्ढि-हाणि-अवट्ठाणमवत्तव्वयं च। एवं मणुसतिए। णवरि पुरिसवे० असंखे०गुणवड्ढी०

है। इतनी विशेषता है कि सम्यक्त्वकी उत्कृष्ट हानि सबसे स्तोक है। उससे उत्कृष्ट वृद्धि संख्यातगुणी है। अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धितकके देवोंमें अल्पबहुत्व नहीं है। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणातक जानना चाहिए।

§ ७७८. जघन्यका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मिथ्यात्व, सोलह कषाय, नौ नोकषाय और सम्यक्त्वकी जघन्य वृद्धि, हानि और अवस्थान समान हैं। सम्यग्मिथ्यात्वका अल्पबहुत्व नहीं है।

§ ७७९. आदेशसे सब नारकी, सब तिर्यञ्च, सब मनुष्य, देव और भवनवासियोंसे लेकर सहस्रार कल्पतकके देवोंमें जिन प्रकृतियोंकी उदीरणा होती है उनका भंग ओघके समान है। आनतकल्पसे लेकर नौ ग्रैवेयकतकके देवोंमें अल्पबहुत्व नहीं है। इतनी विशेषता है कि सम्यक्त्वकी जघन्य हानि सबसे स्तोक है। उससे जघन्य वृद्धि असंख्यातगुणी है। अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धितकके देवोंमें अल्पबहुत्व नहीं है। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणातक जानना चाहिए।

§ ७८०. वृद्धि स्थितिउदीरणाका प्रकरण है। उसमें ये तेरह अनुयोगद्वार हैं—समुत्कीर्तनासे लेकर अल्पबहुत्व तक। समुत्कीर्तनानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मिथ्यात्व, सम्यक्त्व, स्त्रीवेद और नपुंसकवेदकी तीन वृद्धि, चार हानि, अवस्थान और अवक्तव्य स्थितिउदीरणा है। सम्यग्मिथ्यात्वकी तीन हानि और अवक्तव्य स्थितिउदीरणा है। बारह कषाय और छह नोकषायकी तीन वृद्धि, तीन हानि, अवस्थित और अवक्तव्य स्थितिउदीरणा है। चार संज्वलन और पुरुषवेदकी चार वृद्धि, चार हानि, अवस्थान और अवक्तव्य स्थितिउदीरणा है। इसीप्रकार मनुष्यत्रिकमें जानना

णत्थि। पज्जत्तएसु इत्थिवेदो णत्थि। मणुसिणी० पुरिसवे०-णवुंस० णत्थि।

§ ७८१. आदेसेण णेरइय० मिच्छ०-सम्मामि० ओघं। सम्म०-सोलसक०-सत्तणोक० अत्थि तिण्णिवड्ढि-हाणि-अवट्ठि०-अवत्त०। णवरि णवुंस० अवत्त० णत्थि। एवं सव्वणेरइय०।

§ ७८२. तिरिक्खेसु मिच्छ०-सम्म०-सम्मामि०-सोलसक०-छण्णोक० णारयभंगो। तिण्णिवेद० अत्थि तिण्णिवड्ढि-हाणि-अवट्ठि०-अवत्त०। एवं पंचिंदियतिरिक्खतिए। णवरि पज्जत्तएसु इत्थिवेदो णत्थि। जोणिणीसु पुरिसवेद-णवुंस० णत्थि। इत्थिवेद० अवत्त० णत्थि। पंचिंदियतिरिक्खअपज्ज०-मणुसअपज्ज० मिच्छ०-णवुंस० अत्थि तिण्णिवड्ढि-तिण्णिहाणि-अवट्ठि०। सोलसक०-छण्णोक० णारयभंगो।

§ ७८३. देवेसु दंसणतिय-सोलसक०-अट्ठणोक० तिरिक्खभंगो। णवरि इत्थिवेद-पुरिसवेद० अवत्त० णत्थि। एवं भवणादि जाव सोहम्मीसाणा त्ति। एवं सणक्कुमारादि जाव सहस्सारा त्ति। णवरि इत्थिवेदो णत्थि।

§ ७८४. आणदादि णवगेवज्जा त्ति मिच्छ० अत्थि असंखे०भागहाणि-संखे०-भागहाणि-असंखे०गुणहाणि-अवत्त०उदीर०। सम्म० तिण्णिवड्ढि-दोहाणि-अवत्त०-

---

चाहिए। इतनी विशेषता है कि पुरुषवेदकी असंख्यात गुणवृद्धि नहीं है। पर्याप्तकोंमें स्त्रीवेद नहीं है तथा मनुष्यिनियोंमें पुरुषवेद और नपुंसकवेद नहीं है।

§ ७८१. आदेशसे नारकियोंमें मिथ्यात्व और सम्यग्मिथ्यात्वका भंग ओघके समान है। सम्यक्त्व, सोलह कषाय और सात नोकषायकी तीन वृद्धि, तीन हानि, अवस्थित और अवक्तव्य स्थितिउदीरणा है। इतनी विशेषता है कि नपुंसकवेदकी अवक्तव्य स्थितिउदीरणा नहीं है। इसीप्रकार सब नारकियोंमें जानना चाहिए।

§ ७८२. तिर्यञ्चोंमें मिथ्यात्व, सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व, सोलह कषाय और छह नोकषायका भंग नारकियोंके समान है। तीन वेदोंकी तीन वृद्धि, तीन हानि, अवस्थित और अवक्तव्य स्थितिउदीरणा है। इसीप्रकार पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि पर्याप्तकोंमें स्त्रीवेद नहीं है। योनिनियोंमें पुरुषवेद और नपुंसकवेद नहीं है। इनमें स्त्रीवेदकी अवक्तव्य स्थितिउदीरणा नहीं है। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्तकोंमें मिथ्यात्व और नपुंसकवेदकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित स्थितिउदीरणा है। सोलह कषाय और छह नोकषायका भंग नारकियोंके समान है।

§ ७८३. देवोंमें तीन दर्शनमोहनीय, सोलह कषाय और आठ नोकषायका भंग सामान्य तिर्यञ्चोंके समान है। इतनी विशेषता है कि स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी अवक्तव्य स्थितिउदीरणा नहीं है। इसीप्रकार भवनवासियोंसे लेकर सौधर्म और ऐशान कल्पतकके देवोंमें जानना चाहिए तथा इसीप्रकार सनत्कुमार कल्पसे लेकर सहस्रार कल्पतकके देवोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनमें स्त्रीवेद नहीं है।

§ ७८४. आनतकल्पसे लेकर नौ ग्रैवेयकतकके देवोंमें मिथ्यात्वकी असंख्यात भागहानि, संख्यात भागहानि, असंख्यात गुणहानि और अवक्तव्य स्थितिउदीरणा है। सम्यक्त्वकी तीन

उदी० । सम्मामि० अत्थि असंखे०भागहाणि-अवत्त० । सोलसक०-छण्णोक० अत्थि असंखे०भागहाणि-संखे०भागहाणि-अवत्त० । एवं पुरिसवेद० । णवरि अवत्त० णत्थि । अणुदिसादि सव्वट्ठा त्ति सम्म०-बारसक०-छण्णोक० अत्थि दोहाणि-अवत्त० । एवं पुरिसवेद० । णवरि अवत्त० णत्थि । एवं जाव० ।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

§ ७८५. सामित्ताणु० दुविहो णि०—ओघेण आदेसेण य । ओघेण मिच्छ०-अणंताणु०चउक० सव्वपदा कस्स ? अण्णद० मिच्छाइट्ठिस्स । सम्म० सव्वपदा कस्स ? अण्णद० सम्माइट्ठिस्स । सम्मामि० सव्वपदा कस्स ? अण्ण० सम्मामिच्छाइट्ठिस्स । बारस०-णवणोक० तिण्णिवड्ढि-अवट्ठि० कस्स ? अण्णद० मिच्छाइट्ठिस्स । तिण्णिहाणि-अवत्त० कस्स ? अण्णद० सम्माइट्ठि० मिच्छाइट्ठिस्स वा । णवरि चदुसंजल०-पुरिसवे० असंखे०गुणवड्ढि-हाणि० इत्थिवे०-णवुंस० असंखे०-गुणवड्ढि-हाणि० कस्स ? अण्णद० सम्माइट्ठिस्स । एवं मणुसतिए । णवरि पुरिसवे०-चदुसंजल० असंखेज्जगुणवड्ढि० णत्थि । णिसेयपहाणत्ते चदुसंजल० असंखे०गुणवड्ढि० मणुसतिए वि संभवइ, खवगसेढीए किट्टीवेदगम्मि संगहकिट्टीणं संधीसु तदुवलंभादो । लोभसंजलणस्स पुण कालपहाणत्ते वि असंखेज्जगुणवड्ढि० अत्थि, उवसमसेढीए सुहुम-

वृद्धि, दो हानि और अवक्तव्य स्थितिउदीरणा है । सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यात भागहानि और अवक्तव्य स्थितिउदीरणा है । सोलह कषाय और छह नोकषायकी असंख्यात भागहानि, संख्यात भागहानि और अवक्तव्य स्थितिउदीरणा है । इसीप्रकार पुरुषवेदकी अपेक्षा जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि इसकी अवक्तव्य स्थितिउदीरणा नहीं है । अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धितकके देवोंमें सम्यक्त्व, बारह कषाय और छह नोकषायकी दो हानि और अवक्तव्य स्थितिउदीरणा है । इसीप्रकार पुरुषवेदकी अपेक्षा जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि इसकी अवक्तव्य स्थितिउदीरणा नहीं है । इसीप्रकार अनाहारक मार्गणातक जानना चाहिए ।

§ ७८५. स्वामित्वानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धीचतुष्कके सब पद किसके होते हैं ? अन्यतर मिथ्यादृष्टिके होते हैं । सम्यक्त्वके सब पद किसके होते हैं ? अन्यतर सम्यग्दृष्टिके होते हैं । सम्यग्मिथ्यात्वके सब पद किसके होते हैं ? अन्यतर सम्यग्मिथ्यादृष्टिके होते हैं । बारह कषाय और नौ नोकषायकी तीन वृद्धि और अवस्थित स्थितिउदीरणा किसके होती है ? अन्यतर मिथ्यादृष्टिके होती है । तीन हानि और अवक्तव्य स्थितिउदीरणा किसके होती है ? अन्यतर सम्यग्दृष्टि या मिथ्यादृष्टिके होती है । इतनी विशेषता है कि चार संज्वलन और पुरुषवेदकी असंख्यात गुणवृद्धि और असंख्यात गुणहानि तथा स्त्रीवेद और नपुंसकवेदकी असंख्यात गुणवृद्धि और असंख्यात गुणहानि स्थितिउदीरणा किसके होती है ? अन्यतर सम्यग्दृष्टिके होती है । इसीप्रकार मनुष्यत्रिकमें जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि पुरुषवेद और चार संज्वलनकी असंख्यात गुणवृद्धि स्थितिउदीरणा नहीं है । निषेकोंकी प्रधानतामें चार संज्वलनकी असंख्यात गुणवृद्धि स्थितिउदीरणा मनुष्यत्रिकमें भी सम्भव है, क्योंकि क्षपकश्रेणिमें कृष्टिवेदकके संग्रहकृष्टियोंकी सन्धियोंमें वह पाई जाती है । परन्तु लोभसंज्वलनकी कालकी प्रधानतामें भी असंख्यात

त्थिवेदगपढमसमए परिप्फुडमेव तदुवलंभादो। णवरि एवंविहसंभवो उच्चारणाकारेण ण विवक्खिओ। पज्जत्तएसु इत्थिवेदो णत्थि। मणुसिणीसु पुरिसवेद-णवुंस० णत्थि। इत्थिवेद० अवत्त० सम्माइट्ठिस्स।

§ ७८६. आदेसेण णेरइय० मिच्छ०-सम्मामि०-अणंताणु०४ ओघं। सम्म० ओघं। णवरि असंखे०गुणहाणि० णत्थि। बारसक०-छण्णोक० ओघं। णवरि चदुसंज० असंखे०गुणवड्ढि-हाणि० णत्थि। एवं णवुंस। णवरि अवत्त० णत्थि। एवं सव्वणेरइय०। तिरिक्खेसु पढमपुढविभंगो। णवरि तिण्णवे० तिण्णिवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० ओघं। अवत्त० कस्स? अण्णद० मिच्छाइट्ठिस्स। एवं पंचिंदियतिरिक्खतिए। णवरि पज्ज० इत्थिवेदो णत्थि। जोणिणीसु पुरिसवे०-णवुंस० णत्थि। इत्थिवे० अवत्त० णत्थि। पंचिं०तिरिक्खअपज्ज०-मणुसअपज्ज० अणुद्दिसादि सव्वट्ठा त्ति सव्वपयडीणं सव्वपदा कस्स? अण्णदरस्स।

§ ७८७. देवेसु मिच्छ०-सम्मामि०-सम्म०-सोलसक०-अट्ठणोक० तिरिक्खभंगो। णवरि इत्थिवे०-पुरिसवे० अवत्त० णत्थि। एवं भवणादि जाव सोहम्मीसाणा

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

गुणवृद्धि स्थितिउदीरणा है, क्योंकि उपशमश्रेणिमें सूक्ष्मकृष्टिवेदकके प्रथम समयमें स्पष्ट रूपसे वह उपलब्ध होती है। इतनी विशेषता है कि इसप्रकारका सम्भव उच्चारणाकारने विवक्षित नहीं किया। पर्याप्तकोंमें स्त्रीवेद नहीं है तथा मनुष्यिनियोंमें पुरुषवेद और नपुंसकवेद नहीं है। इनमें स्त्रीवेदकी अवक्तव्य स्थितिउदीरणा सम्यग्दृष्टिके होती है।

§ ७८६. आदेशसे नारकियोंमें मिथ्यात्व, सम्यग्मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धीचतुष्कका भंग ओघके समान है। सम्यक्त्वका भंग ओघके समान है। इतनी विशेषता है कि असंख्यात गुणहानि स्थितिउदीरणा नहीं है। बारह कषाय और छह नोकषायका भंग ओघके समान है। इतनी विशेषता है कि चार संज्वलनकी असंख्यात गुणवृद्धि और असंख्यात गुणहानि स्थितिउदीरणा नहीं है। इसीप्रकार नपुंसकवेदकी अपेक्षा जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि अवक्तव्य स्थितिउदीरणा नहीं है। इसीप्रकार सब नारकियोंमें जानना चाहिए। तिर्यञ्चोंमें प्रथम पृथिवीके समान भंग है। इतनी विशेषता है कि तीन वेदोंकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित स्थितिउदीरणाका भंग ओघके समान है। अवक्तव्य स्थितिउदीरणा किसके होती है? अन्यतर मिथ्यादृष्टिके होती है। इसीप्रकार पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि पर्याप्तकोंमें स्त्रीवेद नहीं है। योनिनियोंमें पुरुषवेद और नपुंसकवेद नहीं है। इनमें स्त्रीवेदकी अवक्तव्य स्थितिउदीरणा नहीं है। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त, मनुष्य अपर्याप्त और अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धितकके देवोंमें सब प्रकृतियोंके सब पद किसके होते हैं? अन्यतरके होते हैं।

§ ७८७. देवोंमें मिथ्यात्व, सम्यग्मिथ्यात्व, सम्यक्त्व, सोलह कषाय और आठ नोकषायका भंग तिर्यञ्चोंके समान है। इतनी विशेषता है कि इनमें स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी अवक्तव्य स्थितिउदीरणा नहीं है। इसीप्रकार भवनवासियोंसे लेकर सौधर्म और ऐशान कल्पतकके देवोंमें

त्ति । एवं सणक्कुमारादि सहस्सार त्ति । णवरि इत्थिवेदो णत्थि ।

§ ७८८. आणदादि णवगेवज्जा त्ति मिच्छ०-अणंताणु०४ सव्वपदा कस्स ? अण्णद० मिच्छाइट्ठि० । सम्म० सगपदा सम्माइट्ठिस्स । सम्मामिच्छ० सगपदा सम्मामिच्छाइट्ठिस्स । बारसक०-सत्तणोक० सगपदा कस्स ? अण्णद० सम्माइट्ठि० मिच्छाइट्ठि० वा । एवं जाव० ।

§ ७८९. कालाणु० दुविहो णि०—ओघेण आदेसेण य । ओघेण मिच्छ० तिण्णिवड्ढि० जह० एगस०, उक्क० बे समया । असंखे०भागहाणि० जह० एयस०, उक्क० एक्कत्तीसं सागरोवमाणि सादिरेयाणि । तिण्णिहाणि०-अवत्त० जहण्णुक्क० एयसमओ । अवट्ठि० जह० एगसमओ, उक्क० अंतोमु० । सम्म० असंखे०भागहाणि० जह० अंतोमु०, उक्क० छावट्ठिसागरो० देसूणाणि । सेसपदा० जह० उक्क० एगसमओ । सम्मामि० असंखे०भागहाणि० जह० उक्क० अंतोमु० । दोहाणि-अवत्त० जह० उक्क० एगस० । सोलसक०-भय-दुगुंछ० असंखे०भागवड्ढि० जह० एगस०, उक्क० सत्तारस समया । असंखे०भागहाणि० जह० एगसमओ, उक्क० अंतोमु० । सेसपदाणं मिच्छत्तभंगो । णवरि चदुसंजल० असंखेज्जगुणवड्ढि-हाणि० जह० उक्क० एगस० । पुरिसवे० असंखे०-

जानना चाहिए । इसीप्रकार सनत्कुमारसे लेकर सहस्रार कल्पतकके देवोंमें जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि इनमें स्त्रीवेद नहीं है ।

§ ७८८. आनतकल्पसे लेकर नौ ग्रैवेयकतकके देवोंमें मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धीचतुष्कके सब पद किसके होते हैं ? अन्यतर मिथ्यादृष्टिके होते हैं । सम्यक्त्वके अपने पद सम्यग्दृष्टिके होते हैं । सम्यग्मिथ्यात्वके अपने पद सम्यग्मिथ्यादृष्टिके होते हैं । बारह कषाय और सात नोकषायके अपने पद किसके होते हैं ? अन्यतर सम्यग्दृष्टि या मिथ्यादृष्टिके होते हैं । इसीप्रकार अनाहारक मार्गणातक जानना चाहिए ।

§ ७८९. कालानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे मिथ्यात्वकी तीन वृद्धि स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल दो समय है । असंख्यात भागहानि स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल साधिक इकतीस सागर है । तीन हानि और अवक्तव्य स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है । अवस्थित स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है । सम्यक्त्वकी असंख्यात भागहानि स्थितिउदीरणाका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट काल कुछ कम छ्यासठ सागर है । शेष पद स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है । सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यात भागहानि स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है । दो हानि और अवक्तव्य स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है । सोलह कषाय, भय और जुगुप्साकी असंख्यात भागवृद्धि स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल सत्रह समय है । असंख्यात भागहानि स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है । शेष पदोंका भंग मिथ्यात्वके समान है । इतनी विशेषता है कि चार संज्वलनकी असंख्यात गुणवृद्धि और

भागहाणि० जह० एगस०, उक्क० तेवट्ठिसागरोवमसदं । संखे०भागवड्ढि० जह० उक्क० एगस० । सेसपदा संजलणभंगो । एवमित्थिवेद० । णवरि असंखे०गुणवड्ढी णत्थि । असंखे०भागहाणि० जह० एगस०, उक्क० पणवण्णपलिदो० देसूणाणि । णवुंस० संजलणभंगो । णवरि असंखे०गुणवड्ढि० णत्थि । असंखे०भागहाणि० जह० एगस०, उक्क० तेत्तीसं सागरो० देसूणाणि । हस्स-रदि० असंखे०भागहा० जह० एगस०, उक्क० छम्मासं । सेसपदाणं भयभंगो । अरदि-सोग० असंखे०भागहा० जह० एगस०, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो । सेसपदाणं भयसंकलक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

असंख्यात गुणहानि स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। पुरुषवेदकी असंख्यात भागहानि स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल एकसौ त्रेसठ सागर है। संख्यात भागवृद्धि स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। शेष पदोंका भंग संज्वलनके समान है। इसीप्रकार स्त्रीवेदकी अपेक्षा जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि असंख्यात गुणवृद्धि स्थितिउदीरणा नहीं है। असंख्यात भागहानि स्थिति उदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल कुछ कम पचवन पल्य है। नपुंसक-वेदका भंग संज्वलनके समान है। इतनी विशेषता है कि असंख्यात गुणवृद्धि स्थितिउदीरणा नहीं है। असंख्यात भागहानि स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल कुछ कम तेतीस सागर है। हास्य और रतिकी असंख्यात भागहानि स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल छह महीना है। शेष पदोंका भंग भयके समान है। अरति और शोककी असंख्यात भागहानि स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। शेष पदोंका भंग भयके समान है।

विशेषार्थ—जो जीव अद्धाक्षय या संक्लेशक्षयसे एक समयतक मिथ्यात्वकी स्थितिको बढ़ाकर बाँधता है और एक आवलिके बाद उसी रूपमें उसकी उदीरणा करता है। उसके मिथ्यात्वकी वृद्धि स्थितिउदीरणा पाई जाती है जो असंख्यात भागवृद्धि, संख्यात भागवृद्धि और संख्यात गुणवृद्धि इन तीनों रूप सम्भव है। इसलिए मिथ्यात्वकी इन तीन वृद्धि स्थिति-उदीरणाओंका जघन्य काल एक समय कहा है। इनका उत्कृष्ट काल दो समय है। खुलासा इस प्रकार है—प्रथम समयमें अद्धाक्षयसे और दूसरे समयमें संक्लेशक्षयसे मिथ्यात्वका असंख्यात वृद्धिरूप स्थिति बन्ध कराके एक आवलिके बाद उसी रूपमें उदीरणा होनेपर मिथ्यात्वकी असंख्यात वृद्धि स्थितिउदीरणाका उत्कृष्ट काल दो समय प्राप्त हो जाता है। किसी द्वीन्द्रिय जीवने संक्लेश क्षयसे एक समयतक मिथ्यात्वका संख्यातवृद्धि रूप स्थितिबन्ध किया। इसके बाद दूसरे समयमें वह मरा और त्रीन्द्रियोंमें उत्पन्न होकर वहाँ प्रथम समयमें पुनः संख्यात भागवृद्धिको लिये हुए तत्प्रायोग्य स्थितिबन्ध किया। अनन्तर एक आवलिके बाद उनकी उसी क्रमसे उदीरणा हुई। इसप्रकार मिथ्यात्वकी संख्यात भागवृद्धि स्थितिउदीरणाका उत्कृष्ट काल दो समय प्राप्त होता है। तथा किसी एक एकेन्द्रिय जीवने एक विग्रहसे संज्ञी पञ्चेन्द्रियोंमें उत्पन्न होकर असंज्ञीके योग्य मिथ्यात्वका स्थितिबन्ध करके संख्यात गुणवृद्धि की तथा दूसरे समयमें शरीरको ग्रहण करके संज्ञीके योग्य मिथ्यात्वका स्थितिबन्ध करके संख्यात गुणवृद्धि की। अनन्तर एक आवलिके बाद उनकी उसी क्रमसे उदीरणा की। इसप्रकार मिथ्यात्वकी संख्यात गुणवृद्धि स्थितिउदीरणाका उत्कृष्ट काल दो समय प्राप्त होता है। जो जीव एक समयतक मिथ्यात्वके स्थितिसत्त्वसे एक समय कम स्थितिका बन्ध कर बन्धावलिके बाद

§ ७९०. आदेसेण णेरइय० मिच्छ०-सोलसक०-हस्स-रदि-भय-दुगुंछाणं असंखे०-भागवड्ढी जह० एयस०, उक्क० बेसमया सत्तारस समया। असंखे०भागहाणि-अवट्ठि० जह० एयस०, उक्क० अंतोमु०। सेसपदाणं जह० उक्क० एगस०। सम्म० असंखे०-भागहा० जह० एगस०, उक्क० तेत्तीसं सागरो० देसूणाणि। सेसपदाणं जह० उक्क० एगस०। अरदि-सोगाणं हस्सभंगो। णवरि असंखे०भागहा० जह० एयस०, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो। एवं णवुंस०। णवरि असंखे०भागहाणी ओघं। सम्मामि० ओघं। एवं सत्तमाए। णवरि सम्म० असंखे०भागहाणी जह० अंतोमु०, उक्क०

इसी क्रमसे उसकी उदीरणा करता है उसके मिथ्यात्वकी असंख्यात भागहानि स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय प्राप्त होता है। तथा जो जीव नौवें ग्रैवेयकमें इकतीस सागर कालतक मिथ्यात्वकी असंख्यात भागहानि स्थितिउदीरणा करके मनुष्योंमें उत्पन्न हो तत्प्रायोग्य काल तक असंख्यात भागहानि स्थितिउदीरणा करता रहता है उसके मिथ्यात्वकी असंख्यात भाग-हानि स्थितिउदीरणाका उत्कृष्ट काल साधिक इकतीस सागर प्राप्त होता है। यहाँ इतना विशेष जानना चाहिए कि नौवें ग्रैवेयकमें जानेके पूर्व भी तत्प्रायोग्य कालतक असंख्यात भागहानि स्थितिउदीरणा बन जाती है। मिथ्यात्वकी संख्यात भागहानि और संख्यात गुणहानि स्थिति-उदीरणा अपने-अपने योग्य काण्डकघातकी अन्तिम फालिके पतनके समय एक समयतक ही होती है तथा असंख्यात गुणहानि स्थितिउदीरणा मिथ्यात्वकी उपशमनाके कालमें एक समय तक होती है, इसलिए इन तीन हानियोंका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय ही प्राप्त होता है। अवक्तव्य स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय तथा अवस्थित स्थिति-उदीरणाका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है यह स्पष्ट ही है। यहाँ मिथ्यात्व कर्मकी असंख्यात भागवृद्धि स्थितिउदीरणा आदिके जघन्य और उत्कृष्ट कालका जिस प्रकार खुलासा किया उसीप्रकार अन्य प्रकृतियोंके यथायोग्य पदोंका खुलासा कर लेना चाहिए। तथा गतिमार्गणाके भेद-प्रभेदोंमें भी इसीप्रकार विचार कर कालप्ररूपणा जान लेनी चाहिए।

§ ७९०. आदेशसे नारकियोंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय, हास्य, रति, भय और जुगुप्साकी असंख्यात भागवृद्धि स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल मिथ्यात्वका दो समय तथा शेषका सत्रह समय है। असंख्यात भागहानि और अवस्थित स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। शेष पदोंका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। सम्यक्त्वकी असंख्यात भागहानि स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल कुछ कम तेतीस सागर है। शेष पदोंका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अरति और शोकका भंग हास्यके समान है। इतनी विशेषता है कि इनकी असंख्यात भागहानि स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। इसीप्रकार नपुंसकवेदकी अपेक्षा जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि असंख्यात भागहानि स्थितिउदीरणाका काल ओघके समान है। सम्यग्मिथ्यात्वका भंग ओघके समान है। इसीप्रकार सातवीं पृथिवीमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि सम्यक्त्वकी असंख्यात भागहानि स्थितिउदीरणाका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

तेत्तीसं सागरो० देसूणाणि । एवं पढमाए जाव छट्ठि त्ति । णवरि सगट्ठिदी देसूणा । अरदि-सोग० हस्सभंगो । णवरि पढमाए सम्म० असंखे०भागहा० जह० एयस०, उक्क० सागरोवमं देसूणं ।

§ ७९१. तिरिक्खेसु मिच्छ० ओघं । णवरि असंखे०भागहाणि० जह० एयस०, उक्क० तिण्णि पलिदो० सादिरेयाणि । सम्म० असंखे०भागहाणि० जह० एयस०, उक्क० तिण्णि पलिदो० देसूणाणि । सेसपदाणं जह० उक्क० एयस० । सम्मामि० ओघं । सोलसक०-छण्णोक० असंखे०भागवड्ढि० ओघं । असंखे०भागहा० जह० एयस०, उक्क० अंतोमु० । सेसपदाणं मिच्छत्तभंगो । इत्थिवे०-पुरिसवेद० अप्पप्पणो पदाणमोघं । णवरि असंखे०भागहाणि० मिच्छत्तभंगो । णवुंस० हस्सभंगो । णवरि असंखे०भागहा० जह० एयस०, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो । एवं पंचिंदियतिरिक्खतिए । णवरि मिच्छ०-सोलसक०-सत्तणोक० संखे०भागवड्ढि० जह० उक्क० एयस० । णवुंस० असंखे०भागहा० जह० एयस०, उक्क० पुव्वकोडिपुधत्तं । णवरि पज्जत्तएसु इत्थिवेदो णत्थि । जोणिणी० पुरिस०-णवुंस० णत्थि । इत्थिवे० अवत्तव्वं च णत्थि । सम्म० असंखे०भागहाणि० जह० अंतोमु०, उक्क० तिण्णि पलिदो०

काल कुछ कम तेतीस सागर है । इसीप्रकार पहली पृथिवीसे लेकर छठी पृथिवीतकके नारकियोंमें जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि कुछ कम अपनी-अपनी स्थिति कहनी चाहिए । अरति और शोकका भंग हास्यके समान है । इतनी विशेषता है कि पहली पृथिवीमें सम्यक्त्वकी असंख्यात भागहानि स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल कुछ कम एक सागर है ।

§ ७९१. तिर्यञ्चोंमें मिथ्यात्वका भंग ओघके समान है । इतनी विशेषता है कि असंख्यात भागहानि स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल साधिक तीन पल्य है । सम्यक्त्वकी असंख्यात भागहानि स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल कुछ कम तीन पल्य है । शेष पदोंका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है । सम्यग्मिथ्यात्वका भंग ओघके समान है । सोलह कषाय और छह नोकषायोंकी असंख्यात भागवृद्धि स्थितिउदीरणाका भंग ओघके समान है । असंख्यात भागहानि स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है । शेष पदोंका भंग मिथ्यात्वके समान है । स्त्रीवेद और पुरुषवेदके अपने-अपने पदोंका भंग ओघके समान है । इतनी विशेषता है कि असंख्यात भागहानि स्थितिउदीरणाका भंग मिथ्यात्वके समान है । नपुंसकवेदका भंग हास्यके समान है । इतनी विशेषता है कि असंख्यात भागहानि स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है । इसीप्रकार पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकमें जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि मिथ्यात्व, सोलह कषाय और सात नोकषायकी संख्यात भागवृद्धि स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है । नपुंसकवेदकी असंख्यात भागहानि स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल पूर्वकोटिपृथक्त्वप्रमाण है । इतनी विशेषता है कि पर्याप्तकोंमें स्त्रीवेद नहीं है तथा योनिनियोंमें पुरुषवेद और नपुंसकवेद नहीं है और योनिनियोंमें स्त्रीवेदकी अवक्तव्य स्थितिउदीरणा नहीं है । तथा इनमें सम्यक्त्वकी

देसूणाणि ।

§ ७९२. पंचि०तिरिक्खअपज्ज०-मणुसअपज्ज० मिच्छ०-सोलसक०-सत्तणोक० असंखे०भागवड्ढि० जह० एयस०, उक्क० वेसमया सत्तारस समया । असंखे०भागहाणि-अवट्ठि० जह० एयस०, उक्क० अंतोमु० । संखे०गुणवड्ढि० जह० एयस०, उक्क० वेसमया । सेसपदाणं जह० उक्क० एयस० ।

§ ७९३. मणुसतिय० पंचिंदियतिरिक्खतियभंगो । णवरि जासिं पयडीणं असंखे०गुणहाणि० अत्थि तासिं जह० उक्क० एगस० । णवरि सम्म० असंखे०भागहा० जह० अंतोमु०, उक्क० तिण्णि पलिदो० देसूणाणि । पज्जत्त० इत्थिवे० णत्थि । सम्म० असंखे०भागहाणि० जह० एयस०, उक्क० तं चेव । मणुसिणी पुरिसवे०-णवुंस० णत्थि । इत्थिवे० अवत्त० जहण्णुक्क० एगस० ।

§ ७९४. देवेसु मिच्छ०-सोलसक०-छण्णोक०-सम्मामि० पढमपुढविभंगो । णवरि मिच्छ० असंखे०भागहा० जह० एयस०, उक्क० एकत्तीसं सागरो० । हस्स-रदि० असंखे०भागहाणि० ओघं । इत्थिवेद-पुरिसवे० हस्सभंगो । णवरि अवत्त० णत्थि । असंखे०भागहाणि० जह० एगस०, उक्क० पणवण्णं पलिदो० देसूणाणि तेत्तीसं

असंख्यात भागहानि स्थितिउदीरणाका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट काल कुछ कम तीन पल्य है ।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

§ ७९२. पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्तकोंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय और सात नोकषायकी असंख्यात भागवृद्धि स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल मिथ्यात्वका दो समय तथा शेषका सत्रह समय है । असंख्यात भागहानि और अवस्थित स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है । संख्यात भागवृद्धि स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल दो समय है । शेष पदोंका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है ।

§ ७९३. मनुष्यत्रिकमें पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकके समान भंग है । इतनी विशेषता है कि जिन प्रकृतियोंकी असंख्यात गुणहानि स्थितिउदीरणा है उनका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है । इतनी विशेषता है कि सम्यक्त्वकी असंख्यात भागहानि स्थितिउदीरणाका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट काल कुछ कम तीन पल्य है । पर्याप्तकोंमें स्त्रीवेद नहीं है । इनमें सम्यक्त्वकी असंख्यात भागहानि स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल वही है । मनुष्यिनियोंमें पुरुषवेद और नपुंसकवेद नहीं है । इनमें स्त्रीवेदकी अवक्तव्य स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है ।

§ ७९४. देवोंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय, छह नोकषाय और सम्यग्मिथ्यात्वका भंग प्रथम पृथिवीके समान है । इतनी विशेषता है कि मिथ्यात्वकी असंख्यात भागहानि स्थिति-उदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल इकतीस सागर है । हास्य और रतिकी असंख्यात भागहानि स्थितिउदीरणाका काल ओघके समान है । स्त्रीवेद और पुरुषवेदका भंग हास्यके समान है । इतनी विशेषता है कि इनकी अवक्तव्य स्थितिउदीरणा नहीं है । असंख्यात भागहानि स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल क्रमशः

सागरोवमाणि। सम्म० असंखे०भागहाणि० जह० एगस०, उक्क० तेत्तीसं सागरो०। मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज सेसपदाणं जह० उक्क० एगसमओ। एवं सोहम्मादि जाव सहस्सार त्ति। णवरि सगट्ठिदी। हस्स-रदि० अरदि-सोगभंगो। मिच्छ० असंखे०भागहाणि० जह० एगस०, उक्क० अंतोमुहुत्तं। णवरि सहस्सारे हस्स-रदि० देवोघं। सोहम्मीसाणे इत्थिवेद० देवोघं। उवरि णत्थि।

§ ७९५. भवण०-वाणवें०-जोदिसि० सोहम्मभंगो। णवरि सगट्ठिदी। सम्म० असंखे०भागहाणि० जह० अंतोमु०, उक्क० सगट्ठिदी देसूणा। इत्थिवेद० असंखे०-भागहाणि० जह० एयस०, उक्क० तिण्णि पलिदो० देसूणाणि पलिदो० सादिरेयाणि २।

§ ७९६. आणदादि जाव णवगेवज्जा त्ति मिच्छ०-पुरिसवे० असंखे०भागहाणि० जह० अंतोमु०, उक्क० सगट्ठिदीओ णादव्वाओ। सेसपदाणं जह० उक्क० एयस०। सम्म० असंखे०भागहाणि० जह० एयस०, उक्क० सगट्ठिदी देसूणा। सेसपदाणं जह० उक्क० एयस०। सम्मामि० असंखे०भागहाणि० जह० उक्क० अंतोमु०। अवत्त० जह० उक्क० एयस०। सोलसक०-छण्णोक० असंखे०भागहाणि जह० एगस०, उक्क०

कुछ कम पचवन पल्य और तेतीस सागर है। सम्यक्त्वकी असंख्यात भागहानि स्थिति-उदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल तेतीस सागर है। शेष पदोंका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। इसीप्रकार सौधर्म कल्पसे लेकर सहस्रार कल्पतक जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि अपनी-अपनी स्थिति कहनी चाहिए। हास्य और रतिका भंग अरति और शोकके समान है। मिथ्यात्वकी असंख्यात भागहानि स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। इतनी विशेषता है कि सहस्रार कल्पमें हास्य-रतिका भंग सामान्य देवोंके समान है। सौधर्म और ऐशानकल्पमें स्त्रीवेदका भंग सामान्य देवोंके समान है। ऊपर स्त्रीवेद नहीं है।

§ ७९५. भवनवासी, व्यन्तर और ज्योतिषी देवोंमें सौधर्म कल्पके समान भंग है। इतनी विशेषता है कि अपनी स्थिति कहनी चाहिए। सम्यक्त्वकी असंख्यात भागहानि स्थिति-उदीरणाका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट काल कुछ कम अपनी स्थितिप्रमाण है। स्त्रीवेदकी असंख्यात भागहानि स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल कुछ कम तीन पल्य, साधिक एक पल्य और साधिक एक पल्य है।

§ ७९६. आनतकल्पसे लेकर नौ ग्रैवेयकतकके देवोंमें मिथ्यात्व और पुरुषवेदकी असंख्यात भागहानि स्थितिउदीरणाका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट काल अपनी-अपनी स्थितिप्रमाण जानना चाहिए। शेष पदोंका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। सम्यक्त्वकी असंख्यात भागहानि स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल कुछ कम अपनी स्थितिप्रमाण है। शेष पदोंका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यात भागहानि स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। अवक्तव्य स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। सोलह कषाय और छह नोकषायकी असंख्यात भागहानि स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

अंतोमु० । सेसपदाणं जहण्णुक० एगस० ।

§ ७९७. अणुद्दिसादि सव्वट्ठा त्ति सम्म०-पुरिसवेद० असंखे०भागहाणि० जह० एयस० अंतोमु०, उक्क० सगट्ठिदी । सेसपदा जह० उक्क० एगस० । बारसक०-छण्णोक० आणदभंगो । एवं अणा० ।

§ ७९८. अंतराणु० दुविहो णि०—ओघेण आदेसेण य । ओघेण मिच्छ० असंखे०भागवड्ढि-अवट्ठि जह० एगस०, उक्क० तेवड्ढिसागरोवमसदं तीहिं पलिदोवमेहिं सादिरेयं । असंखे०भागहाणि० जह० एयस०, उक्क० बेछावट्ठिसागरोवमाणि देसूणाणि । दोवड्ढि-हाणि० जह० एगस० अंतोमु०, उक्क० अणंतकालमसंखेज्जा० । असंखे०गुण-हाणि० जह० पलिदो० असंखे०भागो, अवत्त० जह० अंतोमु०, उक्क० दोण्हं पि उवड्ढपोग्गलपरियट्टं । एवमणंताणु०४ । णवरि असंखे०गुणहाणि० णत्थि । अवत्त० जह० अंतोमु०, उक्क० बेछावट्ठिसागरो० देसूणाणि । एवमट्ठक० । णवरि असंखे०भाग-हाणि-अवत्त० जह० एयस० अंतोमु०, उक्क० पुव्वकोडी देसूणा । एवं हस्स-रदि० । णवरि असंखे०भागहाणि-अवत्त० जह० एयस० अंतोमु०, उक्क० तेत्तीसं सागरोवमं

अन्तर्मुहूर्त है । शेष पदोंका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है ।

§ ७९७. अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धितकके देवोंमें सम्यक्त्व और पुरुषवेदकी असंख्यात भागहानि स्थितिउदीरणाका जघन्य काल एक समय और अन्तर्मुहूर्त है तथा उत्कृष्ट काल अपनी-अपनी स्थितिप्रमाण है । शेष पदोंका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है । बारह कषाय और छह नोकषायका भंग आनतकल्पके समान है । इसीप्रकार अनाहारक मार्गणातक जानना चाहिए ।

§ ७९८. अन्तरानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे मिथ्यात्वकी असंख्यात भागवृद्धि और अवस्थित स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर तीन पल्य अधिक साधिक एकसौ त्रेसठ सागर है । असंख्यात भागहानि स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम दो छयासठ सागर है । दो वृद्धि और दो स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर एक समय और अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर अनन्त काल है जो असंख्यात पुद्गलपरिवर्तनप्रमाण है । असंख्यात गुणहानिका जघन्य अन्तर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है और अवक्तव्य स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और दोनोंका उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम अर्धपुद्गलपरिवर्तनप्रमाण है । इसीप्रकार अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी अपेक्षा जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि इसकी असंख्यात गुणहानि स्थितिउदीरणा नहीं है । अवक्तव्य स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम दो छयासठ सागरप्रमाण है । इसीप्रकार आठ कषायकी अपेक्षा जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि असंख्यात भागहानि और अवक्तव्य स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर एक समय और अन्तर्मुहूर्त है तथा उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम एक पूर्वकोटि है । इसीप्रकार हास्य और रतिकी अपेक्षा जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि असंख्यात भागहानि और अवक्तव्य स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर एक समय और अन्तर्मुहूर्त है तथा

सादिरेयं। एवमरदि-सोग०। णवरि असंखे०भागहाणि० जह० एयस०, उक्क० छम्मासं। एवं चदुसंजल०-भय-दुगुंछा०। णवरि असंखे०भागहाणि-अवत्त० जह० एयस० अंतोमु०। उक्क० अंतोमु०। णवरि चदुसंजलण० असंखे०गुणवड्ढि णत्थि अंतरं। असंखे०गुणहाणि० जह० अंतोमु०, उक्क० उवड्ढपोग्गलपरियट्टं। इत्थिवेद० असंखे०-भागवड्ढि-हाणि-अवट्ठि०-संखे०गुणवड्ढि० जह० एयस०, संखे०भागवड्ढि हाणि-संखे०-गुणहाणि-अवत्त० जह० अंतोमु०, उक्क० सव्वेसिमणंतकालमसंखेज्जा पोग्गलपरियट्टा। असंखे०गुणहाणि० संजलणभंगो। एवं पुरिसवेद०। णवरि असंखे०गुणवड्ढि० णत्थि अंतरं। णवुंस० असंखे०भागवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० जह० एयसमओ, उक्क० सागरोवम-सदपुधत्तं। सेसपदाणमित्थिवेदभंगो। णवरि संखे०भागवड्ढि० जह० एयस०, उक्क० तं चेव। सम्म०-सम्मामि० असंखे०भागहाणि० जह० एयसमओ, सेसप० जह० अंतोमु०, उक्क० सव्वेसिमुवड्ढपोग्गलपरियट्टं।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

उत्कृष्ट अन्तर साधिक तेतीस सागर है। इसीप्रकार अरति और शोककी अपेक्षा जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि असंख्यात भागहानि स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर छह महीना है। इसीप्रकार चार संज्वलन तथा भय और जुगुप्साकी अपेक्षा जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि असंख्यात भागहानि और अवक्तव्य स्थिति-उदीरणाका जघन्य अन्तर एक समय और अन्तर्मुहूर्त है तथा उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। इतनी विशेषता है कि चार संज्वलनकी असंख्यात गुणवृद्धि उदीरणाका अन्तरकाल नहीं है। असंख्यात गुणहानि स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम अर्धपुद्गलपरिवर्तनप्रमाण है। स्त्रीवेदकी असंख्यात भागवृद्धि, असंख्यात भागहानि, अवस्थित और संख्यात गुणवृद्धि स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर एक समय है, संख्यात भागवृद्धि, संख्यात भागहानि, संख्यात गुणहानि और अवक्तव्य स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और सबका उत्कृष्ट अन्तर अनन्त काल है जो असंख्यात पुद्गलपरिवर्तन-प्रमाण है। असंख्यात गुणहानि स्थितिउदीरणाका भंग संज्वलनके समान है। इसीप्रकार पुरुषवेदकी अपेक्षा जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि असंख्यात गुणवृद्धि स्थितिउदीरणाका अन्तरकाल नहीं है। नपुंसकवेदकी असंख्यात भागवृद्धि, असंख्यात भागहानि और अवस्थित स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर सौ सागर पृथक्त्वप्रमाण है। शेष पदोंका भंग स्त्रीवेदके समान है। इतनी विशेषता है कि संख्यात भागवृद्धि स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर वही है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यात भागहानि स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर एक समय है, शेष पदोंका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और सबका उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम अर्धपुद्गलपरिवर्तनप्रमाण है।

विशेषार्थ—भुजगारप्ररूपणामें मिथ्यात्वकी भुजगार और अवस्थित स्थितिउदीरणाका उत्कृष्ट अन्तरकाल तीन पल्य अधिक एकसौ त्रेसठ सागर घटित करके बतला आये हैं वही यहाँ मिथ्यात्वकी असंख्यात भागवृद्धि और अवस्थित स्थितिउदीरणाका प्राप्त होनेसे उक्त प्रमाण कहा है। मिथ्यात्वका उत्कृष्ट अन्तरकाल कुछ कम दो छयासठ सागरप्रमाण है उसे ध्यानमें रखकर यहाँ मिथ्यात्वकी असंख्यात भागहानि स्थितिउदीरणाका उत्कृष्ट अन्तरकाल उक्त काल-

§ ७९९. आदेसेण णेरइय० मिच्छ० असंखे०भागवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० जह० एयस०, दोवड्ढि-हाणि-अवत्त० जह० अंतोमु०, असंखे०गुणहाणि० जह० पलिदो० असंखे०भागो, उक्क० सव्वेसिं तेत्तीसं सागरो० देसूणाणि। एवमणंताणु०४-हस्स-रदीणं। णवरि असंखे०गुणहाणि० णत्थि। एवमरदि-सोग०। णवरि असंखे०-

प्रमाण कहा है। निरन्तर एकेन्द्रियोंमें रहनेका उत्कृष्ट काल अनन्त काल है। इस कालके मध्य मिथ्यात्वकी दो वृद्धि और दो हानि स्थितिउदीरणा नहीं होती, इसलिए इनका उत्कृष्ट अन्तरकाल उक्तकालप्रमाण कहा है। एक जीवकी अपेक्षा प्रथमोपशम सम्यक्त्वका जघन्य अन्तरकाल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है और मिथ्यात्व गुणस्थानका जघन्य अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त है, इसलिए तो मिथ्यात्वकी असंख्यात गुणहानि स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण और उसकी अवक्तव्य स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त कहा है तथा सामान्यसे सम्यक्त्वका उत्कृष्ट अन्तरकाल कुछ कम अर्धपुद्गलपरिवर्तनप्रमाण
मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज
है। इतने कालतक कोई जीव प्रथमोपशम सम्यग्दृष्टि न हो और मिथ्यादृष्टि बना रहे यह सम्भव है, इसलिए मिथ्यात्वके उक्त दोनों पदोंका उत्कृष्ट अन्तरकाल कुछ कम अर्धपुद्गलपरिवर्तन-प्रमाण कहा है। इसीप्रकार अनन्तानुबन्धीचतुष्कके सब पदोंका अन्तरकाल बन जानेसे उसे मिथ्यात्वके समान जाननेकी सूचना की। मात्र अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी असंख्यात गुणहानि स्थितिउदीरणा नहीं होती, इसलिए उसका निषेध किया है। यहाँ इतना और विशेष समझना चाहिए कि अनन्तानुबन्धीचतुष्कका अवक्तव्य पद मिथ्यादृष्टिके होता है, इसलिए मिथ्यात्वके उत्कृष्ट अन्तरकालको ध्यानमें रखकर यहाँ उसका उत्कृष्ट अन्तरकाल कुछ कम दो छयासठ सागरप्रमाण कहा है। जघन्य अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त है यह सुगम है। इसीप्रकार आठ कषायोंकी अपेक्षा जानना चाहिए मात्र इनकी उदीरणा क्रमसे पाँचवें और छठे गुणस्थानमें नहीं होती, इसलिए इन गुणस्थानोंके उत्कृष्ट कालको ध्यानमें रखकर यहाँ इनकी असंख्यात भागहानि और अवक्तव्य स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तरकाल कुछ कम एक पूर्वकोटि कहा है। इनका जघन्य अन्तरकाल क्रमसे एक समय और अन्तर्मुहूर्त सुगम है। हास्य और रतिकी किसी जीवके सातवें नरकमें उदीरणा ही न हो यह सम्भव है, इसलिए इनकी असंख्यात भागहानि और अवक्तव्य स्थितिउदीरणाका उत्कृष्ट अन्तरकाल साधिक तेतीस सागर कहा है। अरति और शोककी किसी जीवके बारहवें कल्पमें छह माह तक उदीरणा न हो यह भी सम्भव है, इसलिए इनकी असंख्यात भागहानि स्थितिउदीरणाका उत्कृष्ट अन्तरकाल छह माह कहा है। चार संज्वलनकी उदीरणा उपशमश्रेणिमें अन्तर्मुहूर्त कालतक नहीं होती, तथा भय और जुगुप्साकी निरन्तर उदीरणाका नियम नहीं। हाँ संसार अवस्थामें अधिकसे अधिक अन्तर्मुहूर्त कालके बाद इनकी उदीरणा अवश्य होती है, इसलिए इनकी असंख्यात भागहानि और अवक्तव्य स्थितिउदीरणाका उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त कहा है। शेष कथन सुगम है।

§ ७९९. आदेशसे नारकियोंमें मिथ्यात्वकी असंख्यात भागवृद्धि, असंख्यात भागहानि और अवस्थित स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर एक समय है, दो वृद्धि, दो हानि और अवक्तव्य स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और असंख्यात गुणहानि स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है तथा सभीका उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तेतीस सागर है। इसीप्रकार अनन्तानुबन्धीचतुष्क, हास्य और रतिकी अपेक्षा जान लेना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनकी असंख्यात गुणहानि स्थितिउदीरणा नहीं है। इसीप्रकार अरति

भागहाणि० जह० एगसमओ, उक्क० अंतोमु० । एवं बारसक०-भय-दुगुंछ० । णवरि अवत्त० जह० उक्क० अंतोमु० । एवं णवुंस० । णवरि अवत्त० णत्थि । सम्म०-सम्मामि० असंखे०भागहाणि० जह० एयस०, सेसपदाणं जह० अंतोमु०, उक्क० सव्वेसिं तेत्तीसं सागरो० देसूणाणि । एवं सत्तमाए । पढमादि जाव छट्ठि त्ति एवं चेव । णवरि सगट्ठिदी देसूणा । णवरि हस्स-रदि-अरदि-सोग० भयभंगो ।

§ ८००. तिरिक्खेसु मिच्छ० असंखे०भागवड्ढि-अवट्ठि० जह० एयस०, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो । असंखे०भागहाणि० जह० एगसमओ, उक्क० तिण्णि पलिदो० देसूणाणि । सेसमोघं । एवमणंताणु०४ । णवरि असंखे०गुणहाणि० णत्थि । अवत्त० जह० अंतोमु०, उक्क० तिण्णि पलिदो० देसूणाणि । एवमपच्चक्खाण०४ । णवरि असंखे०भागहाणि-अवत्त० जह० एयस० अंतोमु०, उक्क० पुव्वकोडी देसूणा । एवमट्ठक०-छण्णोक० । णवरि असंखे०भागहाणि-अवत्त० जह० एगस०, उक्क० अंतोमु० । सम्म०-सम्मामि०-इत्थिवे०-पुरिसवे० सव्वपदाणमोघं । णवुंस० हस्सभंगो ।

और शोककी अपेक्षा जान लेना चाहिए । इतनी विशेषता है कि इनकी असंख्यात भागहानि स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है । इसीप्रकार बारह कषाय, भय और जुगुप्साकी अपेक्षा जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि इनकी अवक्तव्य स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त है । इसीप्रकार नपुंसकवेदकी अपेक्षा जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि इसकी अवक्तव्य स्थितिउदीरणा नहीं है । सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यात भागहानि स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तरकाल एक समय है, शेष पदोंका जघन्य अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त है तथा सबका उत्कृष्ट अन्तरकाल कुछ कम तेतीस सागर है । इसीप्रकार सातवीं पृथिवीमें जानना चाहिए । प्रथम पृथिवीसे लेकर छठी पृथिवीतक इसीप्रकार जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि कुछ कम अपनी-अपनी स्थिति कहनी चाहिए । इतनी विशेषता है कि हास्य, रति, अरति और शोकका भंग भयके समान है ।

§ ८००. तिर्यञ्चोंमें मिथ्यात्वकी असंख्यात भागवृद्धि और अवस्थित स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है । असंख्यात भागहानि स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तीन पल्य है । शेष भंग ओघके समान है । इसीप्रकार अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी अपेक्षा जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि असंख्यात गुणहानि स्थितिउदीरणा नहीं है । अवक्तव्य स्थिति-उदीरणाका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तीन पल्य है । इसीप्रकार अप्रत्याख्यानावरणचतुष्ककी अपेक्षा जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि असंख्यात भागहानि और अवक्तव्य स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर एक समय और अन्तर्मुहूर्त है तथा उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम एक पूर्वकोटि है । इसीप्रकार आठ कषाय और छह नोकषायकी अपेक्षा जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि असंख्यात भागहानि और अवक्तव्य स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है । सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व, स्त्रीवेद और पुरुषवेदके सब पदोंका भंग ओघके समान है । नपुंसकवेदका भंग हास्यके समान

णवरि असंखे०भागहाणि० जह० एयस०, उक्क० पुव्वकोडिपुधत्तं । अवत्त० ओघं ।

§ ८०१. पंचिंदियतिरिक्खतिय० मिच्छ० असंखे०भागवड्ढि-संखे०गुणवड्ढि-अवट्ठि० जह० एयसमओ, संखे०भागवड्ढि-संखे०गुणहाणि० जह० अंतोमु०, उक्क० सव्वेसिं पुव्वकोडिपुधत्तं । असंखे०भागहाणि० तिरिक्खोघं । असंखे०गुणहाणि-अवत्त० जह० पलिदो० असंखे०भागो अंतोमु०, उक्क० सगट्ठिदी । संखे०भागहाणि० जह० अंतोमु०, उक्क० तिण्णि पलिदो० सादिरेयाणि । एवं सोलसक०-छण्णोक० । णवरि असंखे०गुणहाणि० णत्थि । असंखे०भागहाणि-अवत्त० तिरिक्खोघं । सम्म० तिण्णि वड्ढि-संखे०भागहाणि-अवत्त० जह० अंतोमु०, असंखे०भागहाणि० जह० एयस०, उक्क० सव्वेसिं सगट्ठिदी । संखे०गुणहाणि-अवट्ठि० जह० अंतोमु०, उक्क० पुव्वकोडिपुधत्तं । सम्मामि० असंखे०भागहाणि० जह० एयस०, अवत्त० जह० अंतोमु०, उक्क० दोण्हं पि सगट्ठिदीओ । दोहाणि० जह० अंतोमु०, उक्क० पुव्वकोडिपुधत्तं । इत्थिवे०-पुरिसवेद० हस्सभंगो । णवरि असंखे०भागहाणि-अवत्त० जह० एगस० अंतोमुहुत्तं, उक्क० पुव्वकोडिपुधत्तं । एवं णवुंस० । णवरि संखे०भागहा० जह०

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

है । इतनी विशेषता है कि असंख्यात भागहानि स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर पूर्वकोटिपृथक्त्वप्रमाण है । अवक्तव्य स्थितिउदीरणाका भंग ओघके समान है ।

§ ८०१. पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकमें मिथ्यात्वकी असंख्यात भागवृद्धि, संख्यात गुणवृद्धि और अवस्थित स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर एक समय है, संख्यात भागवृद्धि और संख्यात गुणवृद्धि स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है तथा सबका उत्कृष्ट अन्तर पूर्वकोटिपृथक्त्वप्रमाण है । असंख्यात भागहानि स्थितिउदीरणाका भंग सामान्य तिर्यञ्चोंके समान है । असंख्यात गुणहानि और अवक्तव्य स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण और अन्तर्मुहूर्त है तथा उत्कृष्ट अन्तर अपनी स्थितिप्रमाण है । संख्यात भागहानि स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक तीन पल्य है । इसीप्रकार सोलह कषाय और छह नोकषायकी अपेक्षा जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि असंख्यात गुणहानि स्थितिउदीरणा नहीं है । असंख्यात भागहानि और अवक्तव्य स्थितिउदीरणाका भंग सामान्य तिर्यञ्चोंके समान है । सम्यक्त्वकी तीन वृद्धि, संख्यात भागहानि और अवक्तव्य स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है, असंख्यात भागहानि स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर एक समय है और सबका उत्कृष्ट अन्तर अपनी स्थितिप्रमाण है । संख्यात गुणहानि और अवस्थित स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर पूर्वकोटिपृथक्त्वप्रमाण है । सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यात भागहानि स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर एक समय है, अवक्तव्य स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और दोनोंका ही उत्कृष्ट अन्तर अपनी स्थितिप्रमाण है । दो हानि स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर पूर्वकोटिपृथक्त्वप्रमाण है । स्त्रीवेद और पुरुषवेदका भंग हास्यके समान है । इतनी विशेषता है कि असंख्यात भागहानि और अवक्तव्य स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर एक समय और अन्तर्मुहूर्त है तथा उत्कृष्ट अन्तर पूर्वकोटिपृथक्त्वप्रमाण है । इसीप्रकार

अंतोमु०, उक्क० पुव्वकोडिपुधत्तं । णवरि पज्जत्त०-इत्थिवेदो णत्थि । जोणिणीसु पुरिसवे०-णवुंस० णत्थि । इत्थिवे० अवत्तव्वं पि णत्थि । असंखे०भागहाणि० जह० एयसमओ, उक्क० अंतोमु० ।

§ ८०२. पंचिंदियतिरिक्खअपज्ज०-मणुसअपज्ज० मिच्छ०-सोलसक०-सत्तणोक० असंखे०भागवड्ढि हाणि-संखेज्जगुणवड्ढि-अवट्ठि० जह० एयस०, उक्क० अंतोमु० । सेसपदाणं जहण्णुक्क० अंतोमु० ।

§ ८०३. मणुसेसु मिच्छ० असंखे०भागवड्ढि-संखेज्जगुणवड्ढि-अवट्ठि० जह० एयस०, संखे०भागवड्ढि संखे०गुणहाणि० जह० अंतोमु०, उक्क० सव्वेसिं पुव्वकोडी देसूणा । सेसपदाणं पंचिंदियतिरिक्खभंगो । एवमणंताणु०४ । णवरि असंखे०गुण-

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

हाणि० णत्थि । अवत्त० पंचिंदियतिरिक्खभंगो । एवमट्ठक० । णवरि असंखे०भागहा०-अवत्त० ओघं । एवं चदुसंजलण०-छण्णोक० । णवरि असंखे०भागवड्ढि-अवट्ठि० जह० एयस०, उक्क० अंतोमुहुत्तं । णवरि चदुसंज० असंखे०गुणहाणि० जह० अंतोमु०,

नपुंसकवेदकी अपेक्षा जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि संख्यात भागहानि स्थिति-उदीरणाका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर पूर्वकोटिपृथक्त्वप्रमाण है। इतनी विशेषता है कि पर्याप्तकोंमें स्त्रीवेद नहीं है। तथा योनिनियोंमें पुरुषवेद और नपुंसकवेद नहीं है। तथा योनिनियोंमें स्त्रीवेदकी अवक्तव्य स्थितिउदीरणा भी नहीं है। असंख्यात भागहानि स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है।

§ ८०२. पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्तकोंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय और सात नोकषायकी असंख्यात भागवृद्धि, असंख्यात भागहानि, संख्यात गुणवृद्धि और अवस्थित स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। शेष पदोंका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है।

§ ८०३. मनुष्योंमें मिथ्यात्व, असंख्यात भागवृद्धि, संख्यात गुणवृद्धि और अवस्थित स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर एक समय है, संख्यात भागवृद्धि और संख्यात गुणहानि स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और सबका उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम एक पूर्वकोटिप्रमाण है। शेष पदोंका भंग पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चोंके समान है। इसीप्रकार अनन्तानुबन्धी-चतुष्ककी अपेक्षा जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि असंख्यात गुणहानि स्थितिउदीरणा नहीं है। अवक्तव्य स्थितिउदीरणाका भंग पञ्चेन्द्रिय तिर्यंचोंके समान है। इसीप्रकार आठ कषायोंकी अपेक्षा जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि असंख्यात भागहानि और अवक्तव्य स्थितिउदीरणाका भंग ओघके समान है। इसीप्रकार चार संज्वलन और छह नोकषायकी अपेक्षा जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि असंख्यात भागवृद्धि और अवस्थित स्थिति-उदीरणाका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। इतनी विशेषता है कि चार संज्वलनकी असंख्यात गुणहानि स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और

---

१ आ०प्रतौ छण्णोक० । असंखेभागवड्ढि जह० इति पाठः ।

उक्क० पुव्वकोडिपुधत्तं । सम्म०-सम्मामि०-तिण्णिवेदाणं पंचि०तिरिक्खभंगो । णवरि तिण्हं वेदाणं सम्म० असंखे०गुणहाणि० संजलणभंगो । णवरि पज्जत्त० इत्थिवेदो णत्थि । मणुसिणी० पुरिस० णवुंस० णत्थि । इत्थिवे० संजलणभंगो । णवरि अवत्त० जह० अंतोमु०, उक्क० पुव्वकोडिपुधत्तं ।

§ ८०४. देवेसु मिच्छ० असंखे०भागवड्ढि०-अवट्ठि० जह० एयस०, उक्क० अट्ठारस सागरो० सादिरेयाणि असंखे०भागहाणि० जह० एयस०, संखे०भागहाणि-अवत्त० जह० अंतोमु०, असंखे०गुणहाणि० जह० पलिदो० असंखे०भागो, उक्क० चदुण्हं पि एक्कत्तीसं सागरो० देसूणाणि । सेसपदाणं जह० अंतोमु०, उक्क० अट्ठारस सागरो० सादिरेयाणि । एवमणंताणु०४ । णवरि असंखे०गुणहाणि० णत्थि । एवं बारसक०-छण्णोक० । णवरि असंखे०भागहाणि-अवत्त० जह० एयस० अंतोमु०, उक्क० अंतोमु० । णवरि हस्स-रदि० अवत्त० जह० अंतोमु०, उक्क० छम्मासं । अरदि-सोग० असंखे०भागहाणि-अवत्त० जह० एयस० अंतोमु०, उक्क० छम्मासं । सम्म० तिण्णिवड्ढि-संखे०भागहाणि-अवत्त० जह० अंतोमु०, असंखे०भागहा० जह० एयस०, उक्क० सव्वेसिमेक्कत्तीसं सागरो० देसूणाणि । संखे०गुणहाणि-अवट्ठि० सम्मामि०

उत्कृष्ट अन्तर पूर्वकोटिपृथक्त्वप्रमाण है । सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व और तीन वेदोंका भंग पंचेन्द्रिय तिर्यंचोंके समान है । इतनी विशेषता है कि तीन वेद और सम्यक्त्वकी असंख्यात गुणहानि स्थितिउदीरणाका भंग संज्वलनके समान है । इतनी विशेषता है कि पर्याप्तकोंमें स्त्रीवेद नहीं है, मनुष्यिनियोंमें पुरुषवेद और नपुंसकवेद नहीं है । स्त्रीवेदका भंग संज्वलनके समान है । इतनी विशेषता है कि अवक्तव्य स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर पूर्वकोटिपृथक्त्वप्रमाण है ।

§ ८०४. देवोंमें मिथ्यात्वकी असंख्यात भागवृद्धि और अवस्थित स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक अठारह सागर है । संख्यात भागहानि स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर एक समय है, संख्यात भागहानि और अवक्तव्य स्थिति-उदीरणाका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है, असंख्यात गुणहानि स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है तथा चारोंका ही उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम इकतीस सागर है । शेष पदोंका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक अठारह सागर है । इसीप्रकार अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी अपेक्षा जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि असंख्यात गुणहानि स्थितिउदीरणा नहीं है । इसीप्रकार बारह कषाय और छह नोकषायकी अपेक्षा जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि असंख्यात भागहानि और अवक्तव्य स्थिति-उदीरणाका जघन्य अन्तर एक समय और अन्तर्मुहूर्त है तथा उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है । इतनी विशेषता है कि हास्य और रतिकी अवक्तव्य स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर छह महीना है । अरति और शोककी असंख्यात भागहानि और अवक्तव्य स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर एक समय और अन्तर्मुहूर्त है तथा उत्कृष्ट अन्तर छह महीना है । सम्यक्त्वकी तीन वृद्धि, संख्यात भागहानि और अवक्तव्य स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है, असंख्यात भागहानि स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर एक समय है

दोहाणि० जह० अंतोमु०, उक्क० अट्ठारस सागरो० सादिरेयाणि। असंखे०भागहाणि-अवत्त० जह० एयस० अंतोमु०, उक्क० एक्कत्तीसं सागरो० देसूणाणि। इत्थिवेद० असंखे०भागवड्ढि-अवट्ठि० जह० एयस०, दोवड्ढि-हाणि० जह० अंतोमु०, उक्क० सव्वेसिं पणवण्णं पलिदो० देसूणाणि। असंखे०भागहाणि० जह० एयस०, उक्क० अंतोमु०। पुरिसवेद० भय-दुगुंछभंगो। णवरि अवत्तव्व० णत्थि। एवं भवणादि जाव सहस्सारा त्ति। णवरि सगट्ठिदीओ। हस्स-रदि-अरदि-सोग० भयभंगो। णवरि सहस्सारे हस्स-रदि-अरदि-सोग० असंखे०भागहाणि-अवत्त० देवोघं। णवरि भवण०-वाण०-जोदिसि० इत्थिवे० असंखे०भागवड्ढि-अवट्ठि० जह० एयस०, दोवड्ढि-हाणि० जह० अंतोमु०, उक्क० सव्वेसिं तिण्णि पलिदो० देसूणाणि पलिदो० सादिरेयाणि पलि० सादिरे०। असंखे०भागहाणि० जह० एगस०, उक्क० अंतोमु०। सोहम्मीसाणे इत्थिवेद० देवोघं। उवरि इत्थिवेदो णत्थि।

§ ८०५. आणदादि जाव णवगेवज्जा त्ति मिच्छ० असंखे०भागहाणि० जह० एयस०, संखे०भागहाणि-अवत्त० जह० अंतोमु०, असंखे०गुणहाणि जह० पलिदो०

और सबका उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम इकतीस सागर है। संख्यात गुणहानि और अवस्थित स्थितिउदीरणाका तथा सम्यग्मिथ्यात्वकी दो हानि स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक अठारह सागर है। असंख्यात भागहानि और अवक्तव्य स्थिति-उदीरणाका जघन्य अन्तर एक समय और अन्तर्मुहूर्त है तथा उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम इकतीस सागर है। स्त्रीवेदकी असंख्यात भागवृद्धि और अवस्थित स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर एक समय है, दो वृद्धि और दो हानि स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है तथा सबका उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम पचवन पल्य है। असंख्यात भागहानि स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। पुरुषवेदका भंग भय और जुगुप्साके समान है। इतनी विशेषता है कि अवक्तव्य स्थितिउदीरणा नहीं है। इसीप्रकार भवनवासियोंसे लेकर सहस्रार कल्पतकके देवोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि अपनी-अपनी स्थिति कहनी चाहिए। हास्य, रति, अरति और शोकका भंग भयके समान है। इतनी विशेषता है कि सहस्रार कल्पमें हास्य, रति, अरति और शोककी असंख्यात भागहानि और अवक्तव्य स्थिति-उदीरणाका भंग सामान्य देवोंके समान है। इतनी विशेषता है कि भवनवासी, व्यन्तर और ज्योतिषी देवोंमें स्त्रीवेदकी असंख्यात भागवृद्धि और अवस्थित स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर एक समय है, दो वृद्धि और दो हानि स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और सबका उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तीन पल्य, साधिक एक पल्य और साधिक एक पल्यप्रमाण है। असंख्यात भागहानि स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। सौधर्म और ऐशानकल्पमें स्त्रीवेदका भंग सामान्य देवोंके समान है। आगे स्त्रीवेद नहीं है।

§ ८०५. आनतकल्पसे लेकर नौ ग्रैवेयकतकके देवोंमें मिथ्यात्वकी असंख्यात भागहानि स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर एक समय है, संख्यात भागहानि और अवक्तव्य स्थिति-उदीरणाका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है, असंख्यात गुणहानि स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर

असंखे०भागो, उक्क० सव्वेसिं सगट्ठिदी देसूणा । एवमणंताणु०४ । णवरि असंखे०-गुणहाणि० णत्थि । एवं बारसक०-छण्णोक० । णवरि असंखे०भागहाणि-अवत्त० जह० एयस० अंतोमु०, उक्क० अंतोमु० । सम्म० असंखे०भागहाणि० जह० एयस०, असंखे०भागवड्ढि-संखे०भागहाणि-अवत्त० जह० अंतोमु०, दोवड्ढि० जह० पलिदो० असंखे०भागो, उक्क० सव्वेसिं सगट्ठिदी देसूणा । सम्मामि० असंखे०भागहाणि-अवत्त० जह० अंतोमु०, उक्क० सगट्ठिदी देसूणा । पुरिसवे० असंखे०भागहाणि० जह० उक्क० एयस० । संखे०भागहाणि० मिच्छत्तभंगो ।

§ ८०६. अणुद्दिसादि सव्वट्ठा त्ति सम्म० असंखे०भागहाणि० जह० उक्क० एयस० । संखे०भागहाणि० जहण्णुक्क० अंतोमु० । अवत्त० णत्थि अंतरं । एवं पुरिसवे० । णवरि अवत्त० णत्थि । बारसक०-छण्णोक० असंखे०भागहाणि० जह० एगस०, उक्क० [illegible] अंतोमुहुत्तं । एवं जाव० ।

§ ८०७. णाणाजीवेहि भंगविचयाणु० दुविहो णि०—ओघेण आदेसेण य । ओघेण मिच्छ०-णवुंस० असंखे०भागवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० णिय० अत्थि । सेसपदा भयणिज्जा । सोलसक०-छण्णोक० असंखे०भागवड्ढि-हाणि-अवट्ठि०-अवत्त० णिय०

पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है तथा सबका उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम अपनी स्थितिप्रमाण है । इसीप्रकार अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी अपेक्षा जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि असंख्यात गुणहानि स्थितिउदीरणा नहीं है । इसीप्रकार बारह कषाय और छह नोकषायकी अपेक्षा जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि असंख्यात भागहानि और अवक्तव्य स्थिति-उदीरणाका जघन्य अन्तर एक समय और अन्तर्मुहूर्त है तथा उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है । सम्यक्त्वकी असंख्यात भागहानि स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर एक समय है, असंख्यात भागवृद्धि, संख्यात भागहानि और अवक्तव्य स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है, दो वृद्धियोंका जघन्य अन्तर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है तथा सबका उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम अपनी स्थितिप्रमाण है । सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यात भागहानि और अवक्तव्य स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम अपनी स्थिति-प्रमाण है । पुरुषवेदकी असंख्यात भागहानि स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर एक समय है । संख्यात भागहानि स्थितिउदीरणाका भंग मिथ्यात्वके समान है ।

§ ८०६. अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धितकके देवोंमें सम्यक्त्वकी असंख्यात भागहानि स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर एक समय है । संख्यात भागहानि स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है । अवक्तव्य स्थितिउदीरणा नहीं है । बारह कषाय और छह नोकषायकी असंख्यात भागहानि स्थितिउदीरणाका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है । संख्यात भागहानि और अवक्तव्य स्थितिउदीरणाका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है । इसीप्रकार अनाहारक मार्गणातक जानना चाहिए ।

§ ८०७. नाना जीवोंका अवलम्बन कर भंगविचयानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे मिथ्यात्व और नपुंसकवेदकी असंख्यात भागवृद्धि, असंख्यात भागहानि और अवस्थित स्थितिउदीरणा नियमसे है । शेष पद भजनीय हैं । सोलह कषाय

अत्थि। सेसपदा भयणिज्जा। सम्म० असंखे०भागहाणि० णियमा अत्थि। सेसपदा भयणिज्जा। सम्मामि० सव्वपदा भयणिज्जा। इत्थिवेद-पुरिसवेद० असंखे०भागहाणि-अवट्ठि० णियमा अत्थि। सेसपदाणि भयणिज्जाणि। एवं तिरिक्खा०।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

§ ८०८. आदेसेण णेरइय० मिच्छ०-सोलसक०-सत्तणोक० असंखे०भागहाणि-अवट्ठि० णियमा अत्थि। सेसपदा भयणिज्जा। सम्म०-सम्मामि० सव्वपदाणमोघं। एवं सव्वणेरइय-सव्वपंचिंदियतिरिक्ख-मणुसतिय-देवा भवणादि जाव सहस्सार त्ति सव्वपयडीणमसंखे० भागहाणि-अवट्ठि० णियमा अत्थि। सेसपदा भयणिज्जा। णवरि सम्म०-सम्मामि० ओघं। मणुसअपज्ज० सव्वपयडी० सव्व० भयणिज्जा।

§ ८०९. आणदादि णवगेवज्जा त्ति सव्वपय० असंखे०भागहाणि० णियमा अत्थि। सेसपदा भयणिज्जा। णवरि सम्मामि० सव्वपदाणि भयणिज्जाणि। अणुद्दिसादि सव्वट्ठा त्ति सव्वपयडी० असंखे०भागहाणि० णियमा अत्थि। सेसपदा० भयणिज्जा। एवं जाव०।

§ ८१०. भागाभागाणु० दुविहो णि०—ओघेण आदेसेण य। ओघेण मिच्छ०-णवुंस० असंखे०भागवड्ढिउदी० सव्वजी० केव० ? असंखे०भागो। असंखे०-

---

और छह नोकषायकी असंख्यात भागवृद्धि, असंख्यात भागहानि, अवस्थित और अवक्तव्य स्थितिउदीरणा नियमसे है। शेष पद भजनीय हैं। सम्यक्त्वकी असंख्यात भागहानि स्थिति-उदीरणा नियमसे है। शेष पद भजनीय हैं। सम्यग्मिथ्यात्वके सब पद भजनीय हैं। स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी असंख्यात भागहानि और अवस्थित स्थितिउदीरणा नियमसे है। शेष पद भजनीय हैं। इसीप्रकार तिर्यञ्चोंमें जानना चाहिए।

§ ८०८. आदेशसे नारकियोंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय और सात नोकषायकी असंख्यात भागहानि और अवस्थित स्थितिउदीरणा नियमसे है। शेष पद भजनीय हैं। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके सब पदोंका भंग ओघके समान है। इसीप्रकार सब नारकियोंमें जानना चाहिए। सब पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च, मनुष्यत्रिक, सामान्य देव तथा भवनवासियोंसे लेकर सहस्रार कल्पतकके देवोंमें सब प्रकृतियोंकी असंख्यात भागहानि और अवस्थित स्थितिउदीरणा नियमसे है। शेष पद भजनीय हैं। इतनी विशेषता है कि सम्यक्त्व सम्यग्मिथ्यात्वका भंग ओघके समान है। मनुष्य अपर्याप्तकोंमें सब प्रकृतियोंके सब पद भजनीय हैं।

§ ८०९. आनतकल्पसे लेकर नौ ग्रैवेयकतकके देवोंमें सब प्रकृतियोंकी असंख्यात भागहानि स्थितिउदीरणा नियमसे है। शेष पद भजनीय हैं। इतनी विशेषता है कि सम्यग्मि-थ्यात्वके सब पद भजनीय हैं। अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धितकके देवोंमें सब प्रकृतियोंकी असंख्यात भागहानि स्थितिउदीरणा नियमसे है। शेष पद भजनीय हैं। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणातक जानना चाहिए।

§ ८१०. भागाभागानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मिथ्यात्व और नपुंसकवेदकी असंख्यात भागवृद्धि स्थितिके उदीरक जीव सब जीवोंके कितने

भागहा० संखेज्जा भागा। अवट्ठि० संखे०भागो। सेसपदा० अणंतभागो। एवं सोलसक०-छण्णोक०। णवरि अवत्त० असंखे०भागो। सम्म०-सम्मामि० असंखे०-भागहा० असंखेज्जा भागा। सेसपदा० असंखे०भागो। इत्थिवे०-पुरिसवे० अवट्ठि० संखे०भागो। असंखे०भागहाणि० संखेज्जा भागा। सेसपदा० असंखे०भागो। एवं तिरिक्खा०।

§ ८११. सव्वणेरइय-सव्वपंचिंदियतिरिक्ख-मणुसअपज्ज० देवा भवणादि जाव सहस्सारा त्ति सव्वपयडी० अवट्ठि० संखे०भागो। असंखे०भागहाणि० संखेज्जा भागा। सेसपदा० असंखे०भागो। णवरि जम्मि सम्म०-सम्मामि० अत्थि तम्मि सव्वपदाणमोघं।

§ ८१२. मणुसेसु सम्म०-सम्मामि०-इत्थिवेद-पुरिसवेद० असंखे०भागहाणि० संखेज्जा भागा। सेसपदा० संखे०भागो। सेसपयडीणं णारयभंगो। पज्जत्त-मणुसिणी-सव्वट्ठदेवेसु सव्वपयडीणमसंखे०भागहाणि० संखेज्जा भागा। सेसपदा० संखे०भागो। आणदादि अवराजिदा त्ति अप्पप्पणो पयडीणमसंखे०भागहाणि० असंखेज्जा भागा। सेसपदा० असंखे०भागो। एवं जाव०।

भागप्रमाण हैं? असंख्यातवें भागप्रमाण हैं। असंख्यात भागहानि स्थितिके उदीरक जीव संख्यात बहुभागप्रमाण हैं। अवस्थित स्थितिके उदीरक जीव संख्यातवें भागप्रमाण हैं। शेष पदोंके उदीरक जीव अनन्तवें भागप्रमाण हैं। इसीप्रकार सोलह कषाय और छह नोकषायकी अपेक्षा जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनकी अवक्तव्य स्थितिके उदीरक जीव असंख्यातवें भागप्रमाण हैं। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यात भागहानि स्थितिके उदीरक जीव असंख्यात बहुभागप्रमाण हैं। शेष पदोंके उदीरक जीव असंख्यातवें भागप्रमाण हैं। स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी अवस्थित स्थितिके उदीरक जीव संख्यातवें भागप्रमाण हैं। असंख्यात भागहानि स्थितिके उदीरक जीव संख्यात बहुभागप्रमाण हैं। शेष पदोंके उदीरक जीव असंख्यातवें भागप्रमाण हैं। इसीप्रकार तिर्यञ्चोंमें जानना चाहिए।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

§ ८११. सब नारकी, सब पंचेन्द्रिय तिर्यंच, मनुष्य अपर्याप्त, सामान्य देव और भवनवासियोंसे लेकर सहस्रार कल्पतकके देवोंमें सब प्रकृतियोंकी अवस्थित स्थितिके उदीरक जीव संख्यातवें भागप्रमाण हैं। असंख्यात भागहानि स्थितिके उदीरक जीव संख्यात बहुभाग-प्रमाण हैं। शेष पदोंके उदीरक जीव असंख्यातवें भागप्रमाण हैं। इतनी विशेषता है कि जहाँ सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्व है वहाँ सब पदोंका भंग ओघके समान है।

§ ८१२. मनुष्योंमें सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व, स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी असंख्यात भागहानि स्थितिके उदीरक जीव संख्यात बहुभागप्रमाण हैं। शेष पदोंके उदीरक जीव संख्यातवें भागप्रमाण हैं। शेष प्रकृतियोंकी अपेक्षा भंग नारकियोंके समान है। मनुष्य पर्याप्त, मनुष्यिनी और सर्वार्थसिद्धिके देवोंमें सब प्रकृतियोंकी असंख्यात भागहानि स्थितिके उदीरक जीव संख्यात बहुभागप्रमाण हैं। शेष पदोंके उदीरक जीव संख्यातवें भागप्रमाण हैं। आनतकल्पसे लेकर अपराजित कल्पतकके देवोंमें अपनी-अपनी प्रकृतियोंकी असंख्यात भागहानि स्थितिके उदीरक जीव असंख्यात बहुभागप्रमाण हैं। शेष पदोंके उदीरक जीव असंख्यातवें भागप्रमाण हैं। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणातक जानना चाहिए।

§ ८१३. परिमाणाणु० दुविहो णि०—ओघेण आदेसेण य । ओघेण मिच्छ०-णवुंस० असंखेज्जभागवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० केत्ति० ? अणंता । सेसपदा० केत्ति० ? असंखेज्जा । णवरि णवुंस० असंखे०गुणहाणि० केत्ति० ? संखेज्जा । सम्म० असंखे०-गुणहाणि० के० ? संखेज्जा । सेसपदा० के० ? असंखेज्जा । एवमित्थिवेद-पुरिसवेद० । णवरि पुरिसवे० असंखे०गुणवड्ढि० के० ? संखेज्जा । सोलसक०-छण्णोक० मिच्छत्त-भंगो । णवरि अवत्त० अणंता । चदुसंजल० असंखे०गुणवड्ढि-हाणि० केत्ति० ? संखेज्जा ।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

§ ८१४. सव्वणेरइय०-सव्वपंचिंदियतिरिक्ख-मणुसअपज्ज० देवा भवणादि जाव णवगेवज्जा त्ति अप्पप्पणो पयडीणं सव्वपदा० के० ? असंखेज्जा ।

§ ८१५. तिरिक्खेसु सव्वपयडी० सव्वपदा० ओघं । मणुसेसु मिच्छ०-णवुंस० असंखे०गुणहाणि०-अवत्त० के० ? संखेज्जा । सेसपदा० केत्ति० ? असंखेज्जा । एवं चदुसंजलण० । णवरि अवत्त० केत्ति० ? असंखेज्जा । सम्म०-सम्मामि०-इत्थिवे०-पुरिसवे० सव्वपदा० के० ? संखेज्जा । बारसक०-छण्णोक० सव्वपदा० के० ? असंखेज्जा । मणुसपज्जत्त-मणुसिणी-सव्वट्ठदेवा० अप्पप्पणो पयडी० सव्वपदा० के० ? संखेज्जा ।

§ ८१३. परिमाणानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे मिथ्यात्व और नपुंसकवेदकी असंख्यात भागवृद्धि, असंख्यात भागहानि और अवस्थित स्थितिके उदीरक जीव कितने हैं ? अनन्त हैं । शेष पदोंके उदीरक जीव कितने हैं ? असंख्यात हैं । इतनी विशेषता है कि नपुंसकवेदकी असंख्यात गुणहानि स्थितिके उदीरक जीव कितने हैं ? संख्यात हैं । सम्यक्त्वकी असंख्यात गुणहानि स्थितिके उदीरक जीव कितने हैं ? संख्यात हैं । शेष पदोंकी स्थितिके उदीरक जीव कितने हैं ? असंख्यात हैं । इसीप्रकार स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी अपेक्षा जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि पुरुषवेदकी असंख्यात गुणवृद्धिके उदीरक जीव कितने हैं ? संख्यात हैं । सोलह कषाय और छह नोकषायका भंग मिथ्यात्वके समान है । इतनी विशेषता है कि इनकी अवक्तव्य स्थितिके उदीरक जीव अनन्त हैं । चार संज्वलनकी असंख्यात गुणवृद्धि और असंख्यात गुणहानिके उदीरक जीव कितने हैं ? संख्यात हैं ।

§ ८१४. सब नारकी, सब पंचेन्द्रिय तिर्यंच, मनुष्य अपर्याप्त सामान्य देव तथा भवनवासियोंसे लेकर नौ ग्रैवेयक तकके देवोंमें अपनी-अपनी प्रकृतियोंके सब पदोंके उदीरक जीव कितने हैं ? असंख्यात हैं ।

§ ८१५. तिर्यञ्चोंमें सब प्रकृतियोंके सब पदोंके उदीरक जीवोंका भंग ओघके समान है । मनुष्योंमें मिथ्यात्व और नपुंसकवेदकी असंख्यात गुणहानि और अवक्तव्य स्थितिके उदीरक जीव कितने हैं ? संख्यात हैं । शेष पदोंके उदीरक जीव कितने हैं ? असंख्यात हैं । इसीप्रकार चार संज्वलनकी अपेक्षा जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि अवक्तव्य स्थितिके उदीरक जीव कितने हैं ? असंख्यात हैं । सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व, स्त्रीवेद और पुरुषवेदके सब पदोंकी स्थितिके उदीरक जीव कितने हैं ? संख्यात हैं । बारह कषाय और छह नोकषायके सब पदोंकी स्थितिके उदीरक जीव कितने हैं ? असंख्यात हैं । मनुष्य पर्याप्त, मनुष्यिनी और

अणुदिसादि अवराजिदा त्ति सव्वपयडीणं सव्वपदा० के० ? असंखेज्जा। णवरि सम्म० अवत्त० केत्ति० ? संखेज्जा। एवं जाव०।

§ ८१६. खेत्ताणु० दुविहो णिद्देसो—ओघेण आदेसेण य। ओघेण मिच्छ०-णवुंस० असंखे०भागवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० केवडिखेत्ते ? सव्वलोगे। सेसपदा० लोग० असंखे०भागे। एवं सोलसक०-छण्णोक०। णवरि अवत्त० सव्वलोगे। सम्म०-सम्मामि०-इत्थिवेद-पुरिसवेद० सव्वपदा० लोग० असंखे०भागे। एवं तिरिक्खा०। सेसगदीसु सव्वपयडी० सव्वपदा० लोग० असंखे०भागे। एवं जाव०।

§ ८१७. फोसणाणु० दुविहो णि०—ओघेण आदेसेण य। ओघेण मिच्छ० असंखे०भागवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० केव० फोसिदं ? सव्वलोगो। दोवड्ढि-हाणि० लोग० असंखे०भागो अट्ठचोद्दस० सव्वलोगो वा। असंखे०गुणहाणि० लोग० असंखे०भागो अट्ठचोद्दस०। अवत्त० लोग० असंखे०भागो अट्ठ-बारहचोद्दस०। एवं सोलसक०-छण्णोक०। णवरि अवत्त० सव्वलोगो। चदुसंज० असंखे०गुणवड्ढि-

---

सर्वार्थसिद्धिके देवोंमें अपनी-अपनी प्रकृतियोंके सब पदोंकी स्थितिके उदीरक जीव कितने हैं ? संख्यात हैं। अनुदिशसे लेकर अपराजित तकके देवोंमें सब प्रकृतियोंके सब पदोंकी स्थितिके उदीरक जीव कितने हैं ? असंख्यात हैं। इतनी विशेषता है कि सम्यक्त्वकी अवक्तव्य स्थितिके उदीरक जीव कितने हैं ? संख्यात हैं। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणातक जानना चाहिए।

§ ८१६. क्षेत्रानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मिथ्यात्व और नपुंसकवेदकी असंख्यात भागवृद्धि, असंख्यात भागहानि और अवस्थित स्थितिके उदीरक जीवोंका कितना क्षेत्र है ? सर्व लोकक्षेत्र है। शेष पद स्थितिके उदीरक जीवोंका क्षेत्र लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण है। इसीप्रकार सोलह कषाय और छह नोकषायकी अपेक्षा जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनकी अवक्तव्य स्थितिके उदीरक जीवोंका क्षेत्र सर्व लोकप्रमाण है। सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व, स्त्रीवेद और पुरुषवेदके सब पदोंकी स्थितिके उदीरक जीवोंका क्षेत्र लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण है। इसीप्रकार सामान्य तिर्यञ्चोंमें जानना चाहिए। शेष गतियोंमें सब प्रकृतियोंके सब पदोंकी स्थितिके उदीरक जीवोंका क्षेत्र लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण है। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणातक जानना चाहिए।

§ ८१७. स्पर्शनानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मिथ्यात्वकी असंख्यात भागवृद्धि, असंख्यात भागहानि और अवस्थित स्थितिके उदीरक जीवोंने कितने क्षेत्रका स्पर्शन किया है ? सब लोकप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। दो वृद्धि और दो हानि स्थितिके उदीरक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग तथा त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ भाग और सर्व लोकप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। असंख्यात गुणहानि स्थितिके उदीरक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग और त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अवक्तव्य स्थितिके उदीरक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग तथा त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ और बारह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। इसीप्रकार सोलह कषाय और छह नोकषायकी अपेक्षा जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनकी अवक्तव्य स्थितिके उदीरक जीवोंने सर्व लोकप्रमाण क्षेत्रका

हाणि० केव० फोसिदं ? लोग० असंखे०भागो । सम्म०-सम्मामि० सव्वपद० केव० फोसिदं ? लोग० असंखे०भागो । अट्ठचोद्दस० । णवरि सम्म० असंखेज्जगुणहाणि० खेत्तं । इत्थिवे०-पुरिसवे० तिण्णिवड्ढि-अवट्ठि० केव० फोसिदं ? लोग० असंखे०भागो अट्ठचोद्दस० । तिण्णिहाणि० केव० फोसिदं ? लोग० असं०भागो अट्ठचोद्दस० देसूणा सव्वलोगो वा । अवत्त० लोग० असंखे०भागो सव्वलोगो वा । असंखे०-गुणहाणि० खेत्तं । पुरिस० असंखे०गुणवड्ढि-हाणि० खेत्तं । णवुंस० मिच्छत्तभंगो । णवरि दोवड्ढि-हाणि-अवत्त० लोग० असं०भागो सव्वलोगो वा । असंखे०-गुणहाणि० खेत्तं ।

§ ८१८. आदेसेण णेरइय० मिच्छ०-सोलसक०-सत्तणोक० सव्वपदा० केव० फोसिदं ? लोग० असंखे०भागो छचोद्दस० । णवरि मिच्छ० असंखे०गुणहाणि० खेत्तं । अवत्त० लोग० असंखे०भागो पंचचोद्दस० । सम्म०-सम्मामि० खेत्तं । एवं बिदियादि

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

स्पर्शन किया है। चार संज्वलनकी असंख्यात गुणवृद्धि और असंख्यात गुणहानि स्थितिके उदीरक जीवोंने कितने क्षेत्रका स्पर्शन किया है ? लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके सब पदोंकी स्थितिके उदीरक जीवोंने कितने क्षेत्रका स्पर्शन किया है ? लोकके असंख्यातवें भाग तथा त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। इतनी विशेषता है कि सम्यक्त्वकी असंख्यात गुणहानि स्थितिके उदीरक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी तीन वृद्धि और अवस्थित स्थितिके उदीरक जीवोंने कितने क्षेत्रका स्पर्शन किया है ? लोकके असंख्यातवें भाग और त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। तीन हानि स्थितिके उदीरक जीवोंने कितने क्षेत्रका स्पर्शन किया है ? लोकके असंख्यातवें भाग, त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे आठ भाग और सर्व लोकप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अवक्तव्य स्थितिके उदीरक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग और सर्व लोकप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। असंख्यात गुणहानि स्थितिके उदीरक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। पुरुषवेदकी असंख्यात गुणवृद्धि और असंख्यात गुणहानि स्थितिके उदीरक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। नपुंसकवेदका भंग मिथ्यात्वके समान है। इतनी विशेषता है कि दो वृद्धि, दो हानि और अवक्तव्य स्थितिके उदीरक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग और सर्व लोकप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। असंख्यात गुणहानि स्थितिके उदीरक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है।

विशेषार्थ—मिथ्यात्वादि किस प्रकृतिके कौन कौन पद हैं और उनका स्वामी कौन-कौन जीव है इसका स्वामित्वानुगमसे विचार कर स्पर्शन जान लेना चाहिए। इसीप्रकार चारों गतियों और उनके अवान्तर भेदोंमें भी स्पर्शन जान लेना चाहिए।

§ ८१८. आदेशसे नारकियोंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय और सात नोकषायके सब पदोंकी स्थितिके उदीरक जीवोंने कितने क्षेत्रका स्पर्शन किया है ? लोकके असंख्यातवें भाग और त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे छह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। इतनी विशेषता है कि मिथ्यात्वकी असंख्यात गुणहानि स्थितिके उदीरक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। अवक्तव्य स्थितिके उदीरक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग और त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे

जाव सत्तमा त्ति । णवरि सगपोसणं । णवरि सत्तमाए मिच्छ० अवत्त० खेत्तं । पढमाए खेत्तभंगो ।

§ ८१९. तिरिक्खेसु मिच्छ० असंखे०भागवड्ढि-हाणि०-अवट्ठि० सव्वलोगो । दोवड्ढि-हाणि० लोग० असंखे०भागो सव्वलोगो वा । अवत्त० लोग० असंखे०भागो सत्तचोद्दस० । असंखे०गुणहाणि० खेत्तं । एवं णवुंस० । णवरि असंखे०गुणहाणि० णत्थि । अवत्त० लोग० असं०भागो सव्वलोगो वा । एवं सोलसक०-छण्णोक० । णवरि अवत्त० केव० पो० ? सव्वलोगो । सम्म०-सम्मामि० खेत्तं । णवरि सम्म० असंखे०भागहाणि० लोग० असंखे०भागो छचोद्दस० । इत्थिवेद-पुरिसवेद० तिण्णिवड्ढि०-अवट्ठि० खेत्तभंगो । तिण्णिहाणि-अवत्त० लोग० असंखे०भागो सव्वलोगो वा ।

§ ८२०. पंचि०तिरिक्खतिय० मिच्छ०-सोलसक०-णवणोक० सव्वपद० लोग० असंखे०भागो सव्वलोगो वा । णवरि मिच्छ० अवत्त० लोग० असंखे०भागो

कुछ कम पाँच भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका भंग क्षेत्रके समान है। इसीप्रकार दूसरी पृथिवीसे लेकर सातवीं पृथिवी तकके नारकियोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि अपना-अपना स्पर्शन कहना चाहिए। इतनी और विशेषता है कि सातवीं पृथिवीमें मिथ्यात्वकी अवक्तव्य स्थितिके उदीरक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। पहिली पृथिवीमें स्पर्शन क्षेत्रके समान है।

§ ८१९. तिर्यञ्चोंमें मिथ्यात्वकी असंख्यात भागवृद्धि, असंख्यात भागहानि और अवस्थित स्थितिके उदीरकोंने सर्व लोकप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। दो वृद्धि और दो हानि स्थितिके उदीरकोंने लोकके असंख्यातवें भाग और सर्व लोकप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अवक्तव्य स्थितिके उदीरकोंने लोकके असंख्यातवें भाग और त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम सात भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। असंख्यात गुणहानि स्थितिके उदीरकोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। इसीप्रकार नपुंसकवेदकी अपेक्षा जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इसकी असंख्यात गुणहानि स्थितिउदीरणा नहीं है। अवक्तव्य स्थितिके उदीरकोंने लोकके असंख्यातवें भाग और सर्व लोकप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। इसीप्रकार सोलह कषाय और छह नोकषायकी अपेक्षा जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनकी अवक्तव्य स्थितिके उदीरकोंने कितने क्षेत्रका स्पर्शन किया है ? सर्व लोकप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका भंग क्षेत्रके समान है। इतनी विशेषता है कि सम्यक्त्वकी असंख्यात भागहानि स्थितिके उदीरकोंने लोकके असंख्यातवें भाग और त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम छह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी तीन वृद्धि और अवस्थित स्थितिके उदीरकोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। तीन हानि और अवक्तव्य स्थितिके उदीरकोंने लोकके असंख्यातवें भाग और सर्व लोकप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है।

§ ८२०. पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय और नौ नोकषायके सब पदोंकी स्थितिके उदीरकोंने लोकके असंख्यातवें भाग और सर्व लोकप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। इतनी विशेषता है कि मिथ्यात्वकी अवक्तव्य स्थितिके उदीरकोंने लोकके असंख्यातवें

सत्तचोद्दस० । असंखे०गुणहाणि० इत्थिवेद-पुरिसवेद तिण्णिवड्ढि-अवट्ठि०-अवत्त० णवुंस०-अवत्त० केव० पो० ? लोग० असंखे०भागो। सम्म०-सम्मामि० तिरिक्खोघं। णवरि पज्ज० इत्थिवेदो णत्थि। जोणिणीसु पुरिस०-णवुंस० णत्थि। इत्थिवेद० अवत्त० णत्थि। पंचिं०तिरिक्खअपज्ज-मणुसअपज्ज० मिच्छ०-सोलसक०-सत्तणोक० सव्वपद० केव० खेत्तं पोसिदं ? लोग० असंखे०भागो सव्वलोगो वा। मणुसतिए पंचिंदियतिरिक्खतियभंगो। णवरि सम्म०-सम्मामि० खेत्तं। मिच्छ०-चदुसंजल०-तिण्णिवेद० असंखे०गुणहाणि० खेत्तं। णवरि पज्ज० इत्थिवे० णत्थि। मणुसिणी० पुरिसवे०-णवुंस० णत्थि।

§ ८२१. देवेसु अप्पणो पयडि० सव्वपद० लोग० असंखे०भागो अट्ठ-चोद्दस०। णवरि मिच्छ० असंखे०गुणहाणि० सम्म०-सम्मामि० सव्वपदा० इत्थिवे०-पुरिसवे० तिण्णिवड्ढि-अवट्ठि० अट्ठचोद्दस०। एवं सोहम्मीसाण०। एवं भवण०-वाणवें०-जोदिसि०। णवरि जम्हि अट्ठचोद्दस० तम्हि अद्भुट्ठा वा अट्ठचोद्दस०।

भाग और त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम सात भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। इसकी असंख्यात गुणहानि स्थिति, स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी तीन वृद्धि, अवस्थित और अवक्तव्य स्थिति तथा नपुंसकवेदकी अवक्तव्य स्थितिके उदीरकोंने कितने क्षेत्रका स्पर्शन किया है ? लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका भंग सामान्य तिर्यञ्चोंके समान है। इतनी विशेषता है कि पर्याप्तकोंमें स्त्रीवेद नहीं है। योनिनियोंमें पुरुषवेद और नपुंसकवेद नहीं है तथा स्त्रीवेदकी अवक्तव्य स्थितिउदीरणा नहीं है। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्तकोंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय और सात नोकषायके सब पदोंकी स्थितिके उदीरकोंने कितने क्षेत्रका स्पर्शन किया है ? लोकके असंख्यातवें भाग और सर्व लोकप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। मनुष्यत्रिकमें पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकके समान भंग है। इतनी विशेषता है कि सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका भंग क्षेत्रके समान है। मिथ्यात्व, चार संज्वलन और तीन वेदकी असंख्यात गुणहानि स्थितिके उदीरकोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। इतनी विशेषता है कि पर्याप्तकोंमें स्त्रीवेद नहीं है तथा मनुष्यिनियोंमें पुरुषवेद और नपुंसकवेद नहीं है।

§ ८२१. देवोंमें अपनी-अपनी प्रकृतियोंके सब पदोंकी स्थितिके उदीरकोंने लोकके असंख्यातवें भाग और त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। इतनी विशेषता है कि मिथ्यात्वकी असंख्यात गुणहानि स्थिति, सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके सब पदोंकी स्थिति तथा स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी तीन वृद्धि और अवस्थित स्थितिके उदीरकोंने त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। इसीप्रकार सौधर्म और ऐशानकल्पमें जानना चाहिए। तथा इसीप्रकार भवनवासी, व्यन्तर और ज्योतिषी देवोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि जहाँ 'त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है।' यह कहा है वहाँ 'त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम साढ़े तीन और आठ भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है' यह कहना चाहिए।

§ ८२२. सणक्कुमारादि सहस्सार त्ति सव्वपयडी० सव्वपदा० केव० फोसिदं ? लोग० असंखे०भागो अट्ठचोद्दस० । आणदादि अच्चुदा त्ति सव्वपयडि० सव्वपद० केव० पोसिदं ? लोग० असंखे०भागो छचोद्दस० । उवरि खेत्तभंगो । एवं जाव० ।

§ ८२३. कालाणु० दुविहो णि०—ओघेण आदेसेण य । ओघेण मिच्छ० असंखे०भागवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० केवचिरं ? सव्वद्धा । सेसपद० जह० एयस०, उक्क० आवलि० असंखे०भागो । एवं णवुंस० । णवरि असंखे०गुणहाणि० जह० एयस०, उक्क० संखेज्जा समया । एवं चदुसंजल० । णवरि अवत्त० सव्वद्धा । असंखे०गुणवड्ढि० जह० एयस०, उक्क० संखेज्जा समया । एवं बारसक०-छण्णोक० । णवरि असंखे०-गुणवड्ढि-हाणि० णत्थि । सम्म० असंखे०भागहाणि० सव्वद्धा । सेसपदा० जह० एयस०, उक्क० आवलि० असंखे०भागो । असंखे०गुणहाणि० जह० एयस०, उक्क० संखेज्जा समया । सम्मामि० असंखे०भागहा० जह० अंतोमु०, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो । सेसपदा० जह० एयस०, उक्क० आवलि० असंखे०भागो । इत्थिवेद-

§ ८२२. सनत्कुमार कल्पसे लेकर सहस्रार कल्पतकके देवोंमें सब प्रकृतियोंके सब पदोंकी स्थितिके उदीरकोंने कितने क्षेत्रका स्पर्शन किया है ? लोकके असंख्यातवें भाग और त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है । आनतकल्पसे लेकर अच्युत कल्पतकके देवोंमें सब प्रकृतियोंके सब पदोंकी स्थितिके उदीरकोंने कितने क्षेत्रका स्पर्शन किया है ? लोकके असंख्यातवें भाग और त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम छह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है । ऊपर स्पर्शन क्षेत्रके समान है । इसीप्रकार अनाहारक मार्गणातक जानना चाहिए ।

§ ८२३. कालानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे मिथ्यात्वकी असंख्यात भागवृद्धि, असंख्यात भागहानि और अवस्थित स्थितिके उदीरकोंका कितना काल है । सर्वदा काल है । शेष पदोंकी स्थितिके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है । इसीप्रकार नपुंसकवेदकी अपेक्षा जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि असंख्यात गुणहानि स्थितिके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल संख्यात समय है । इसीप्रकार चार संज्वलनोंकी अपेक्षा जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि अवक्तव्य स्थितिके उदीरकोंका काल सर्वदा है । असंख्यात गुणवृद्धि स्थितिके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल संख्यात समय है । इसीप्रकार बारह कषाय और छह नोकषायोंकी अपेक्षा जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि इनकी असंख्यात गुणवृद्धि और असंख्यात गुणहानि स्थितिउदीरणा नहीं है । सम्यक्त्वकी असंख्यात भागहानि स्थितिके उदीरकोंका काल सर्वदा है । शेष पदोंकी स्थितिके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है । असंख्यात गुणहानि स्थितिके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल संख्यात समय है । सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यात भागहानिकी स्थितिके उदीरकोंका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है । शेष पदोंकी स्थितिके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है ।

पुरिसवेद० असंखे०भागहाणि-अवट्ठि० सव्वद्धा। सेसपदा० सम्मत्तभंगो। णवरि पुरिसवे० असंखे०गुणवड्ढि० जह० एगस०, उक्क० संखेज्जा समया।

§ ८२४. आदेसेण सव्वणेरइय०-पंचिंदियतिरिक्खतिय-देवा भवणादि जाव सहस्सारा त्ति अप्पप्पणो पयडि० असंखे०भागहाणि-अवट्ठि० सव्वद्धा। सेसपदा० जह० एगस०, उक्क० आवलि० असंखे०भागो। णवरि सम्मामि० ओघं। सम्म० असंखे०भागहाणि० सव्वद्धा। सेसपदा० जह० एगस०, उक्क० आवलि० असंखे०भागो।

§ ८२५. तिरिक्खेसु सव्वपयडी० सव्वपदा० ओघं। पंचिंदियतिरिक्खअप० सव्वपयडी० असंखेज्जभागहा०-अवट्ठि० सव्वद्धा। सेसपदा० जह० एग०, उक्क० आवलि० असंखे०भागो।

§ ८२६. मणुसेसु मिच्छ०-णवुंस० पंचिंदियतिरिक्खभंगो। णवरि असंखे०-गुणहाणि-अवत्त० जह० एगस०, उक्क० संखेज्जा समया। सम्म० असंखे०भागहाणि० इत्थिवे०-पुरिस० असंखे०भागहा०-अवट्ठि० सव्वद्धा। सेसपदा० जह० एगस०,

---

स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी असंख्यात भागहानि और अवस्थित स्थितिके उदीरकोंका काल सर्वदा है। शेष पदोंकी स्थितिके उदीरकोंका भंग सम्यक्त्वके समान है। इतनी विशेषता है कि पुरुषवेदकी असंख्यात गुणवृद्धिकी स्थितिके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल संख्यात समय है।

§ ८२४. आदेशसे सब नारकी, पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिक, सामान्य देव और भवनवासियोंसे लेकर सहस्रार कल्पतकके देवोंमें अपनी-अपनी प्रकृतियोंकी असंख्यात भागहानि और अवस्थित स्थितिके उदीरकोंका काल सर्वदा है। शेष पदोंकी स्थितिके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है। इतनी विशेषता है कि सम्यग्मिथ्यात्वका भंग ओघके समान है। सम्यक्त्वकी असंख्यात भागहानि स्थितिके उदीरकोंका काल सर्वदा है। शेष पदोंकी स्थितिके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है।

§ ८२५. तिर्यञ्चोंमें सब प्रकृतियोंके सब पदोंकी स्थितिके उदीरकोंका भंग ओघके समान है। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंमें सब प्रकृतियोंकी असंख्यात भागहानि और अवस्थित स्थितिके उदीरकोंका काल सर्वदा है। शेष पदोंकी स्थितिके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है।

§ ८२६. मनुष्योंमें मिथ्यात्व और नपुंसकवेदका भंग पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चोंके समान है। इतनी विशेषता है कि असंख्यात गुणहानि और अवक्तव्य स्थितिके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल संख्यात समय है। सम्यक्त्वकी असंख्यात भागहानि स्थिति तथा स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी असंख्यात भागहानि और अवस्थित स्थितिके उदीरकोंका काल सर्वदा है। शेष पदोंकी स्थितिके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल

उक्क० संखेज्जा समया । सम्मामि० असंखे०भागहा० जह० उक्क० अंतोमु० । सेसपदा० जह० एगस०, उक्क० संखेज्जा समया । सोलसक०-छण्णोक० पंचिंदियतिरिक्खभंगो । णवरि चदुसंज० असंखेज्जगुणहाणि० ओघं ।

§ ८२७. मणुसपज्ज०-मणुसिणीसु सव्वपयडी० असंखे०भागहाणि-अवट्ठि० सव्वद्धा । सेसपदा० जह० एयस०, उक्क० संखेज्जा समया । णवरि सम्म०-सम्मामि० मणुसोघं । मणुसअपज्ज० सव्वपयडी० असंखे०भागहाणि०-अवट्ठि० जह० एगस०, पलिदो० असंखे०भागो । सेसपदा० जह० एगस०, उक्क० आवलि० असंखे०भागो ।

§ ८२८. आणदादि जाव णवगेवज्जा त्ति मिच्छत्त-सम्म०-सोलसक०-सत्तणोक० असंखे०भागहाणि० सव्वद्धा । सेसपदा० जह० एगस०, उक्क० आवलि० असंखे०भागो । सम्मामि० असंखे०भागहाणि०-अवत्त० ओघं ।

§ ८२९. अणुद्दिसादि सव्वट्ठा त्ति सव्वपयडि० असंखे०भागहाणि० सव्वद्धा । सेसपदा० जह० एगस०, उक्क० आवलि० असंखे०भागो । णवरि सम्म० अवत्त० जह० एयस०, उक्क० संखेज्जा समया । णवरि सव्वट्ठे संखेज्जसमया कादव्वा ।

संख्यात समय है । सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यात भागहानि स्थितिके उदीरकोंका जघन्य और
मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज
उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है । शेष पदोंकी स्थितिके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल संख्यात समय है । सोलह कषाय और छह नोकषायका भंग पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चोंके समान है । इतनी विशेषता है कि चार संज्वलनकी असंख्यात गुणहानि स्थितिके उदीरकोंका भंग ओघके समान है ।

§ ८२७. मनुष्य पर्याप्त और मनुष्यिनियोंमें सब प्रकृतियोंकी असंख्यात भागहानि और अवस्थित स्थितिके उदीरकोंका काल सर्वदा है । शेष पदोंकी स्थितिके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल संख्यात समय है । इतनी विशेषता है कि सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका भंग सामान्य मनुष्योंके समान है । मनुष्य अपर्याप्तकोंमें सब प्रकृतियोंकी असंख्यात भागहानि और अवस्थित स्थितिके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है । शेष पदोंकी स्थितिके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है ।

§ ८२८. आनतकल्पसे लेकर नौ ग्रैवेयकतकके देवोंमें मिथ्यात्व, सम्यक्त्व, सोलह कषाय और सात नोकषायकी असंख्यात भागहानि स्थितिके उदीरकोंका काल सर्वदा है । शेष पदोंकी स्थितिके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है । सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यात भागहानि और अवक्तव्य स्थितिके उदीरकोंका भंग ओघके समान है ।

§ ८२९. अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धितकके देवोंमें सब प्रकृतियोंकी असंख्यात भागहानि स्थितिके उदीरकोंका काल सर्वदा है । शेष पदोंकी स्थितिके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है । इतनी विशेषता है कि सम्यक्त्वकी अवक्तव्य स्थितिके उदीरकोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल संख्यात समय है । इतनी विशेषता है कि सर्वार्थसिद्धिमें आवलिके असंख्यातवें भागके स्थानमें

एवं जाव० ।

§ ८३०. अंतराणु० दुविहो णि०—ओघेण आदेसेण य । ओघेण मिच्छ०-णवुंस असंखे०भागवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० णत्थि अंतरं । सेसपदा० जह० एयस०, उक्क० अंतोमु० । णवरि संखे०गुणहाणि-अवत्त० जह० एयस०, उक्क० सत्त रादिंदियाणि । णवुंस० अवत्त० भुज०भंगो । असंखे०गुणहाणि० जह० एयस०, उक्क० वासपुधत्तं । सम्म० असंखे०भागहाणि० णत्थि अंतरं । अवट्ठि०-अवत्त० भुजभंगो । सेसपदा० जह० एगस०, उक्क० चउवीसमहोरत्ते सादिरेगे । असंखे०गुणहाणि० जह० एयस०, उक्क० छम्मासं । सम्मामि० सव्वपदा० जह० एयस०, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो । सोलसक०-छण्णोक० असंखे०भागवड्ढि-हाणि-अवट्ठि०-अवत्त० णत्थि अंतरं । सेसपदा० जह० एगस०, उक्क० अंतोमु० । णवरि चदुसंज० असंखे०गुणवड्ढि० जह० एयस०, उक्क० वासपुधत्तं । असंखे०गुणहाणि० जह० एयस०, उक्क० वासं सादिरेयं । णवरि लोभसंजल० असंखे०गुणहाणि० जह० एगस०, उक्क० छम्मासं । इत्थिवे०-पुरिसवे० असंखे०भागहाणि-अवट्ठि० णत्थि अंतरं । सेसप० जह० एयस०, उक्क०

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

संख्यात समय कहना चाहिए । इसीप्रकार अनाहारक मार्गणातक जानना चाहिए ।

§ ८३०. अन्तरानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे मिथ्यात्व और नपुंसकवेदकी असंख्यात भागवृद्धि, असंख्यात भागहानि और अवस्थित स्थितिके उदीरकोंका अन्तरकाल नहीं है । शेष पदोंकी स्थितिके उदीरकोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है । इतनी विशेषता है कि संख्यात गुणहानि और अवक्तव्य स्थितिके उदीरकोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर सात दिन-रात है । नपुंसकवेदकी अवक्तव्य स्थितिके उदीरकोंका भंग भुजगारके समान है । असंख्यात गुणहानि स्थितिके उदीरकोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर वर्षपृथक्त्व-प्रमाण है । सम्यक्त्वकी असंख्यात भागहानि स्थितिउदीरणाका अन्तरकाल नहीं है । अवस्थित और अवक्तव्य स्थितिके उदीरकोंका भंग भुजगारके समान है । शेष पदोंकी स्थितिके उदीरकोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक चौबीस दिन-रातप्रमाण है । असंख्यात गुणहानि स्थितिके उदीरकोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर छह महीना प्रमाण है । सम्यग्मिथ्यात्वके सब पदोंकी स्थितिके उदीरकोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है । सोलह कषाय और छह नोकषायकी असंख्यात भागवृद्धि, असंख्यात भागहानि, अवस्थित और अवक्तव्य स्थितिके उदीरकोंका अन्तरकाल नहीं है । शेष पदोंकी स्थितिके उदीरकोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है । इतनी विशेषता है कि चार संज्वलनकी असंख्यात गुणवृद्धि स्थितिके उदीरकोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर वर्षपृथक्त्वप्रमाण है । असंख्यात गुणहानि स्थितिके उदीरकोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक एक वर्ष है । इतनी विशेषता है कि लोभसंज्वलनकी असंख्यात गुणहानि स्थितिके उदीरकोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर छह महीना है । स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी [अस]ंख्यात भागहानि और अवस्थित स्थितिके उदीरकोंका अन्तरकाल नहीं है । शेष पदोंकी

अंतोमु० । णवरि अवत्त० णवुंसयभंगो । असंखे०गुणहाणि० जह० एयस०, उक्क० वासपुधत्तं । पुरिसवे० असंखे०गुणवड्डि-हाणि० कोहसंजलणभंगो ।

§ ८३१. आदेसेण णेरइय मिच्छत्त-सोलसक०-सत्तणोक० असंखे०भागहाणि-अवट्ठि० णत्थि अंतरं । सेसपदा० जह० एयस०, उक्क० अंतोमु० । णवरि मिच्छ० असंखे०गुणहाणि-अवत्त० ओघं । सम्म०-सम्मामि० सव्वपदा० ओघं । एवं सव्वणेरइय० ।

§ ८३२. तिरिक्खेसु सव्वपयडी० अप्पप्पणो पदा० ओघं । पंचिंदिय-

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

तिरिक्खतिए णारयभंगो । णवरि तिण्णिवेद० असंखे०भागहा०-अवट्ठि० णत्थि अंतरं । सेसपदा० जह० एगस०, उक्क० अंतोमु० । अवत्त० ओघं । णवरि पज्जत्त० इत्थिवेदो णत्थि । जोणिणीसु पुरिसवे०-णवुंस० णत्थि । इत्थिवे० अवत्त० णत्थि । पंचिं०तिरि०अपज्ज० सव्वपय० असंखे०भागहाणि-अवट्ठि० णत्थि अंतरं । सेसपदा० जह० एयस०, उक्क० अंतोमु० ।

§ ८३३. मणुसतिए पंचिंदियतिरिक्खभंगो । णवरि सम्म०-सम्मामि० ओघं ।

स्थितिके उदीरकोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है । इतनी विशेषता है कि इनकी अवक्तव्य स्थितिके उदीरकोंका भंग नपुंसकवेदके समान है । असंख्यात गुणहानि स्थितिके उदीरकोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर वर्षपृथक्त्वप्रमाण है । पुरुषवेदकी असंख्यात गुणवृद्धि और असंख्यात गुणहानि स्थितिके उदीरकोंका भंग क्रोधसंज्वलनके समान है ।

§ ८३१. आदेशसे नारकियोंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय और सात नोकषायकी असंख्यात भागहानि और अवस्थित स्थितिके उदीरकोंका अन्तरकाल नहीं है । शेष पदोंकी स्थितिके उदीरकोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है । इतनी विशेषता है कि मिथ्यात्वकी असंख्यात गुणहानि और अवक्तव्य स्थितिके उदीरकोंका भंग ओघके समान है । सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके सब पदोंकी स्थितिके उदीरकोंका भंग ओघके समान है । इसीप्रकार सब नारकियोंमें जानना चाहिए ।

§ ८३२. तिर्यञ्चोंमें सब प्रकृतियोंके अपने-अपने पदोंकी स्थितिके उदीरकोंका भंग ओघके समान है । पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकमें नारकियोंके समान भंग है । इतनी विशेषता है कि तीन वेदोंकी असंख्यात भागहानि और अवस्थित स्थितिके उदीरकोंका अन्तरकाल नहीं है । शेष पदोंकी स्थितिके उदीरकोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है । अवक्तव्य स्थितिके उदीरकोंका भंग ओघके समान है । इतनी विशेषता है कि पर्याप्तकोंमें स्त्रीवेद नहीं है । योनिनियोंमें पुरुषवेद और नपुंसकवेद नहीं है । स्त्रीवेदकी अवक्तव्य स्थितिउदीरणा नहीं है । पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंमें सब प्रकृतियोंकी असंख्यात भागहानि और अवस्थित स्थितिके उदीरकोंका अन्तरकाल नहीं है । शेष पदोंकी स्थितिके उदीरकोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है ।

§ ८३३. मनुष्यत्रिकमें पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चोंके समान भंग है । इतनी विशेषता है कि

चदुसंजल०-तिण्णिवेद० असंखे०गुणहाणि० ओघं। णवरि पज्ज० इत्थिवेदो णत्थि। मणुसिणी० पुरिस०-णवुंस० णत्थि। इत्थिवे० अवत्त० जह० एगस०, उक्क० वासपुधत्तं। जम्हि छम्मासं वासं सादिरेयं तम्हि वासपुधत्तं। मणुसअपज्ज० सव्वपयडीणं सव्वपदा० जह० एगस०, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो।

§ ८३४. देवाणं पंचिंदियतिरिक्खभंगो। णवरि णवुंस० णत्थि। इत्थिवे०-पुरिसवे० अवत्त० णत्थि। एवं भवणादि सोहम्मा त्ति। एवं सणक्कुमारादि जाव सहस्सारा त्ति। णवरि इत्थिवे० णत्थि।

§ ८३५. आणदादि णवगेवज्जा त्ति मिच्छ० असंखे०भागहाणि० णत्थि अंतरं। सेसप० जह० एगस०, उक्क० सत्त रादिंदियाणि। सम्म० तिण्णिवड्ढि-दोहाणि-अवत्त० ओघं। सम्मामि० असंखे०भागहाणि-अवत्त० ओघं। सोलसक०-छण्णोक० असंखे० भागहाणि० णत्थि अंतरं। संखे०भागहाणि० जह० एगस०, उक्क० सत्त रादिंदियाणि। अवत्त० जह० एगस०, उक्क० अंतोमु०। एवं पुरिस०। णवरि अवत्त० णत्थि।

मार्गदर्शक: आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका भंग ओघके समान है। चार संज्वलन और तीन वेदकी असंख्यात गुणहानिके स्थितिके उदीरकोंका भंग ओघके समान है। इतनी विशेषता है कि पर्याप्तकोंमें स्त्रीवेद नहीं है। मनुष्यिनियोंमें पुरुषवेद और नपुंसकवेद नहीं है। स्त्रीवेदकी अवक्तव्य स्थितिके उदीरकोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर वर्षपृथक्त्वप्रमाण है। जहाँ छह माह और साधिक एक वर्ष अन्तर कहा है वहाँ वर्षपृथक्त्व कहना चाहिए। मनुष्य अपर्याप्तकोंमें सब प्रकृतियोंके सब पदोंकी स्थितिके उदीरकोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है।

§ ८३४. देवोंमें पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चोंके समान भंग है। इतनी विशेषता है कि इनमें नपुंसकवेद नहीं है। तथा स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी अवक्तव्य स्थितिउदीरणा नहीं है। इसी प्रकार भवनवासियोंसे लेकर सौधर्म-ऐशान कल्पतकके देवोंमें जानना चाहिए। तथा इसीप्रकार सनत्कुमार कल्पसे लेकर सहस्रार कल्पतकके देवोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि स्त्रीवेद नहीं है।

§ ८३५. आनत कल्पसे लेकर नौ ग्रैवेयकतकके देवोंमें मिथ्यात्वकी असंख्यात भागहानि स्थितिके उदीरकोंका अन्तरकाल नहीं है। शेष पदोंकी स्थितिके उदीरकोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर सात दिन-रात है। सम्यक्त्वकी तीन वृद्धि, दो हानि और अवक्तव्य स्थितिके उदीरकोंका भंग ओघके समान है। सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यात भागहानि और अवक्तव्य स्थितिके उदीरकोंका भंग ओघके समान है। सोलह कषाय और छह नोकषायकी असंख्यात भागहानिकी स्थितिके उदीरकोंका अन्तरकाल नहीं है। संख्यात भागहानि स्थितिके उदीरकोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर सात दिन-रात है। अवक्तव्य स्थितिके उदीरकोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। इसीप्रकार पुरुषवेदकी अपेक्षा जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इसकी अवक्तव्य स्थितिउदीरणा नहीं है।

§ ८३६. अणुद्दिसादि सव्वट्ठा त्ति सम्म० असंखे०भागहा० णत्थि अंतरं। संखे०भागहाणि-अवत्त० जह० एगस०, उक्क० वासपुधत्तं। सव्वट्ठे पलिदो० संखे०-भागो। एवं पुरिसवे०। णवरि अवत्त० णत्थि। एवं बारसक०-छण्णोक०। णवरि अवत्त० जह० एयस०, उक्क० अंतोमु०। एवं जाव०।

§ ८३७. भावाणुगमेण सव्वत्थ ओदइओ भावो।

§ ८३८. अप्पाबहुआणु० दुविहो णि०—ओघेण आदेसेण य। ओघेण मिच्छ०-णवुंस० सव्वत्थो० असंखे०गुणहाणि०। अवत्त०उदीर० असंखे०गुणा। संखे०गुणहाणि० असंखे०गुणा। संखे०भागहाणि० संखे०गुणा। संखे०गुणवड्ढि० असंखे०गुणा। संखे०भागवड्ढि० संखे०गुणा। असंखे०भागवड्ढि० अणंतगुणा। अवट्ठि० असंखे०गुणा। असंखे०भागहाणि० संखे०गुणा।

§ ८३९. सम्मत्त० सव्वत्थोवा असंखे०गुणहाणि०। अवट्ठि० असंखे०गुणा। असंखे०भागवड्ढि० असंखे०गुणा। संखेज्जगुणवड्ढि० असंखे०गुणा। संखे०भागवड्ढि० संखे०गुणा। संखे०गुणहाणि० असंखे०गुणा। संखे०भागहाणि० असंखे०गुणा।

---

§ ८३६. अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धितकके देवोंमें सम्यक्त्वकी असंख्यात भागहानि स्थितिके उदीरकोंका अन्तरकाल नहीं है। संख्यात भागहानि और अवक्तव्य स्थितिके उदीरकोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर वर्षपृथक्त्वप्रमाण है। सर्वार्थसिद्धिमें पल्यके संख्यातवें भागप्रमाण है। इसीप्रकार पुरुषवेदकी अपेक्षा जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इसकी अवक्तव्य स्थितिउदीरणा नहीं है। इसीप्रकार बारह कषाय और छह नोकषायकी अपेक्षा जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनकी अवक्तव्य स्थितिके उदीरकोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणातक जानना चाहिए।

मार्गदर्शक आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

§ ८३७. भावानुगमकी अपेक्षा सर्वत्र औदयिक भाव है।

§ ८३८. अल्पबहुत्वानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मिथ्यात्व और नपुंसकवेदकी असंख्यात गुणहानि स्थितिके उदीरक जीव सबसे स्तोक हैं। उनसे अवक्तव्य स्थितिके उदीरक जीव असंख्यातगुणे हैं। उनसे संख्यात गुणहानि स्थितिके उदीरक जीव असंख्यातगुणे हैं। उनसे संख्यात भागहानि स्थितिके उदीरक जीव संख्यातगुणे हैं। उनसे संख्यात गुणवृद्धि स्थितिके उदीरक जीव असंख्यातगुणे हैं। उनसे संख्यात भागवृद्धि स्थितिके उदीरक जीव संख्यातगुणे हैं। उनसे असंख्यात भागवृद्धि स्थितिके उदीरक जीव अनन्तगुणे हैं। उनसे अवस्थित स्थितिके उदीरक जीव असंख्यातगुणे हैं। उनसे असंख्यात भागहानि स्थितिके उदीरक जीव संख्यातगुणे हैं।

§ ८३९. सम्यक्त्वकी असंख्यात गुणहानि स्थितिके उदीरक जीव सबसे स्तोक हैं। उनसे अवस्थित स्थितिके उदीरक जीव असंख्यातगुणे हैं। उनसे असंख्यात भागवृद्धि स्थितिके उदीरक जीव असंख्यातगुणे हैं। उनसे संख्यात गुणवृद्धि स्थितिके उदीरक जीव असंख्यातगुणे हैं। उनसे संख्यात भागवृद्धि स्थितिके उदीरक जीव संख्यातगुणे हैं। उनसे संख्यात गुणहानि स्थितिके उदीरक जीव असंख्यातगुणे हैं। उनसे संख्यात भागहानि स्थितिके उदीरक जीव

अवत्त० असंखे०गुणा । असंखे०भागहा० असंखे०गुणा ।

§ ८४०. सम्मामि० सव्वत्थो० संखे०गुणहाणि० । संखे०भागहाणि० संखे०-गुणा । अवत्त० असंखे०गुणा । असंखे०भागहाणि० असंखे०गुणा ।

§ ८४१. बारसक०-छण्णोक० सव्वत्थो० संखे०गुणहाणि० । संखे०भागहाणि०
मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज
संखे०गुणा । संखेज्जगुणवड्ढि० असंखे०गुणा । संखे०भागवड्ढि० संखे०गुणा । असंखे०-भागवड्ढि० अणंतगुणा । अवत्त० संखे०गुणा । अवट्ठि० असंखे०गुणा । असंखे०-भागहाणि० संखे०गुणा ।

§ ८४२. चदुसंजलण० सव्वत्थोवा असंखे०गुणवड्ढि० । असंखे०गुणहाणि० संखे०गुणा । संखे०गुणहाणि० असंखे०गुणा । सेसं कसायभंगो ।

§ ८४३. इत्थिवेद० सव्वत्थोवा असंखे०गुणहाणि० । संखे०गुणहाणि० असंखे०गुणा । संखे०भागहाणि० संखे०गुणा । संखे०गुणवड्ढि० असंखे०गुणा । संखे०भागवड्ढि० संखे०गुणा । असंखे०भागवड्ढि० असंखे०गुणा । अवत्त० संखे०गुणा । अवट्ठि० असंखे०गुणा । असंखे०भागहाणि० संखे०गुणा ।

असंख्यातगुणे हैं । उनसे अवक्तव्य स्थितिके उदीरक जीव असंख्यातगुणे हैं । उनसे असंख्यात भागहानि स्थितिके उदीरक जीव असंख्यातगुणे हैं ।

§ ८४०. सम्यग्मिथ्यात्वकी संख्यात गुणहानि स्थितिके उदीरक जीव सबसे स्तोक हैं । उनसे संख्यात भागहानि स्थितिके उदीरक जीव संख्यातगुणे हैं । उनसे अवक्तव्य स्थितिके उदीरक जीव असंख्यातगुणे हैं । उनसे असंख्यात भागहानि स्थितिके उदीरक जीव असंख्यात-गुणे हैं ।

§ ८४१. बारह कषाय और छह नोकषायकी संख्यात गुणहानि स्थितिके उदीरक जीव सबसे स्तोक हैं । उनसे संख्यात भागहानि स्थितिके उदीरक जीव संख्यातगुणे हैं । उनसे संख्यात गुणवृद्धि स्थितिके उदीरक जीव असंख्यातगुणे हैं । उनसे संख्यात भागवृद्धि स्थितिके उदीरक जीव संख्यातगुणे हैं । उनसे असंख्यात भागवृद्धि स्थितिके उदीरक जीव अनन्तगुणे हैं । उनसे अवक्तव्य स्थितिके उदीरक जीव संख्यातगुणे हैं । उनसे अवस्थित स्थितिके उदीरक जीव असंख्यातगुणे हैं । उनसे असंख्यात भागहानि स्थितिके उदीरक जीव संख्यातगुणे हैं ।

§ ८४२. चार संज्वलनकी असंख्यात गुणवृद्धि स्थितिके उदीरक जीव सबसे स्तोक हैं । उनसे असंख्यात गुणहानि स्थितिके उदीरक जीव संख्यातगुणे हैं । उनसे संख्यात गुणहानि स्थितिके उदीरक जीव असंख्यातगुणे हैं । शेष भंग कषायोंके समान है ।

§ ८४३. स्त्रीवेदकी असंख्यात गुणहानि स्थितिके उदीरक जीव सबसे स्तोक हैं । उनसे संख्यात गुणहानि स्थितिके उदीरक जीव असंख्यातगुणे हैं । उनसे संख्यात भागहानि स्थितिके उदीरक जीव संख्यातगुणे हैं । उनसे संख्यात गुणवृद्धि स्थितिके उदीरक जीव असंख्यातगुणे हैं । उनसे संख्यात भागवृद्धि स्थितिके उदीरक जीव संख्यातगुणे हैं । उनसे असंख्यात भागवृद्धि स्थितिके उदीरक जीव असंख्यातगुणे हैं । उनसे अवक्तव्य स्थितिके उदीरक जीव संख्यातगुणे हैं । उनसे अवस्थित स्थितिके उदीरक जीव असंख्यातगुणे हैं । उनसे असंख्यात भागहानि स्थितिके उदीरक जीव संख्यातगुणे हैं ।

§ ८४४. पुरिसवेद० सव्वत्थोवा असंखे०गुणवड्ढि० । असंखे०गुणहाणि० संखे०गुणा । सेसमित्थिवेदभंगो । एवं तिरिक्खा० । णवरि चदुसंजलण-तिण्णिवेद-सम्म० असंखे०गुणवड्ढि-हाणि० णत्थि ।

§ ८४५. आदेसेण णेरइय० मिच्छ० सव्वत्थोवा असंखे०गुणहाणि० । अवत्त० असंखे०गुणा । संखे०गुणहाणि० असंखे०गुणा । संखे०गुणवड्ढि० विसेसाहिया । संखे०-भागवड्ढि-हाणि० दो वि सरिसा संखे०गुणा । असंखे०भागवड्ढि० असंखे०गुणा । अवत्त० संखे०गुणा । अवट्ठि० असंखे०गुणा । असंखे०भागहाणि० संखे०गुणा । सम्म० ओघं । णवरि असंखेज्जगुणहा० णत्थि । सम्मामि० ओघं ।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

§ ८४६. सोलसक०-छण्णोक० सव्वत्थोवा संखेज्जगुणहा० । संखे०गुणवड्ढि० विसेसा० । संखेज्जभागवड्ढि-हा० दो वि सरिसा संखे०गुणा । असंखे०भागवड्ढि० असंखेज्जगुणा । अवत्त० संखे०गुणा । अवट्ठि० असंखेज्जगुणा । असंखे०भागहा० संखे०गुणा । एवं णवुंस० । णवरि अवत्त० णत्थि । एवं पढमाए । बिदियादि सत्तमा

---

§ ८४४. पुरुषवेदकी असंख्यात गुणवृद्धि स्थितिके उदीरक जीव सबसे स्तोक हैं । उनसे असंख्यात गुणहानि स्थितिके उदीरक जीव संख्यातगुणे हैं । शेष भंग स्त्रीवेदके समान है । इसीप्रकार सामान्य तिर्यञ्चोंमें जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि इनमें चार संज्वलन, तीन वेद और सम्यक्त्वकी असंख्यात गुणवृद्धि और असंख्यात गुणहानि स्थितिउदीरणा नहीं है ।

§ ८४५. आदेशसे नारकियोंमें मिथ्यात्वकी असंख्यात गुणहानि स्थितिके उदीरक जीव सबसे स्तोक हैं । उनसे अवक्तव्य स्थितिके उदीरक जीव असंख्यातगुणे हैं । उनसे संख्यात गुणहानि स्थितिके उदीरक जीव असंख्यातगुणे हैं । उनसे संख्यात गुणवृद्धि स्थितिके उदीरक जीव विशेष अधिक हैं । उनसे संख्यात भागवृद्धि और संख्यात भागहानि इन दोनों ही स्थितियोंके उदीरक जीव समान होकर संख्यातगुणे हैं । उनसे असंख्यात भागवृद्धि स्थितिके उदीरक जीव असंख्यातगुणे हैं । उनसे अवक्तव्य स्थितिके उदीरक जीव संख्यातगुणे हैं । उनसे अवस्थित स्थितिके उदीरक जीव असंख्यातगुणे हैं । उनसे असंख्यात भागहानि स्थितिके उदीरक जीव संख्यातगुणे हैं । सम्यक्त्वका भंग ओघके समान है । इतनी विशेषता है कि इसकी असंख्यात गुणहानि स्थितिउदीरणा नहीं है । सम्यग्मिथ्यात्वका भंग ओघके समान है ।

§ ८४६. सोलह कषाय और छह नोकषायकी संख्यात गुणहानि स्थितिके उदीरक जीव सबसे स्तोक हैं । उनसे संख्यात गुणवृद्धि स्थितिके उदीरक जीव विशेष अधिक हैं । उनसे संख्यात भागवृद्धि और संख्यात भागहानि इन दोनों स्थितियोंके उदीरक जीव परस्पर समान होकर संख्यातगुणे हैं । उनसे असंख्यात भागवृद्धि स्थितिके उदीरक जीव असंख्यातगुणे हैं । उनसे अवक्तव्य स्थितिके उदीरक जीव संख्यातगुणे हैं । उनसे अवस्थित स्थितिके उदीरक जीव असंख्यातगुणे हैं । उनसे असंख्यात भागहानि स्थितिके उदीरक जीव संख्यातगुणे हैं । इसीप्रकार नपुंसकवेदकी अपेक्षा जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि इसकी अवक्तव्य स्थितिउदीरणा नहीं है । इसीप्रकार पहिली पृथिवीमें जानना चाहिए । दूसरसे लेकर सातवीं पृथिवीतककी

त्ति एवं चेव । णवरि मिच्छ०-सोलसक०-सत्तणोक० संखे०गुणवड्ढि-हाणि० दो वि सरिसा । पंचिंदियतिरिक्खतिए णारयभंगो । णवरि इत्थिवे०-पुरिसवे० कसायभंगो । णवुंस० मिच्छत्तभंगो । णवरि असंखे०गुणहाणि० णत्थि । पज्जत्त० इत्थिवेदो णत्थि । णवुंसय० पुरिसवेदभंगो । जोणिणीसु पुरिस०-णवुंस० णत्थि । इत्थिवे० अवत्त० णत्थि । पंचिंदियतिरिक्खअपज्ज०-मणुसअपज्ज० सोलसक०-छण्णोक० पंचिं०तिरिक्खभंगो । एवं मिच्छ०-णवुंस० । णवरि अवत्त० णत्थि ।

§ ८४७. मणुसेसु मिच्छ०-णवुंस० सव्वत्थोवा असंखे०गुणहाणि० । अवत्त० संखे०गुणा । सेसं पंचिंदियतिरिक्खभंगो । सम्म०-सम्मामि० ओघं । णवरि संखेज्ज-गुणं कायव्वं । बारसक०-छण्णोक० पंचिंदियतिरिक्खभंगो । चदुसंजल० सव्वत्थो० असंखे०गुणहाणि० । संखे०गुणहाणि० असंखे०गुणा । संखेज्जगुणवड्ढि० विसेसाहिया । सेसं पंचिं०तिरिक्खभंगो । इत्थिवे०-पुरिस० एवं चेव । णवरि संखे०गुणं कायव्वं । एवं मणुसपज्ज० । णवरि संखे०गुणं कायव्वं । णवरि इत्थिवेदो णत्थि । णवुंस० पुरिस०भंगो । मणुसिणी० एवं चेव । णवरि पुरिस०-णवुंस० णत्थि । इत्थिवेद०

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

इसीप्रकार जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि मिथ्यात्व, सोलह कषाय और सात नोकषाय-की संख्यात गुणवृद्धि और संख्यात गुणहानि इन दोनों स्थितियोंके उदीरक जीव समान हैं। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकमें नारकियोंके समान भंग है। इतनी विशेषता है कि स्त्रीवेद और पुरुष-वेदका भंग कषायके समान है। नपुंसकवेदका भंग मिथ्यात्वके समान है। इतनी विशेषता है कि असंख्यात गुणहानि स्थितिउदीरणा नहीं है। पर्याप्तकोंमें स्त्रीवेद नहीं है। नपुंसकवेदका भंग पुरुषवेदके समान है। योनिनियोंमें पुरुषवेद और नपुंसकवेद नहीं है। स्त्रीवेदका अवक्तव्य स्थितिउदीरणा नहीं है। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्तकोंमें सोलह कषाय और छह नोकषायका भंग पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चोंके समान है। इसीप्रकार मिथ्यात्व और नपुंसक-वेदकी अपेक्षा जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि अवक्तव्य स्थितिउदीरणा नहीं है।

§ ८४७. मनुष्योंमें मिथ्यात्व और नपुंसकवेदकी असंख्यात गुणहानि स्थितिके उदीरक जीव सबसे स्तोक हैं। उनसे अवक्तव्य स्थितिके उदीरक जीव संख्यातगुणे हैं। शेष भंग पंचेन्द्रिय तिर्यञ्चोंके समान है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका भंग ओघके समान है। इतनी विशेषता है कि संख्यातगुणा करना चाहिए। बारह कषाय और छह नोकषायका भंग पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चोंके समान है। चार संज्वलनकी असंख्यात गुणहानि स्थितिके उदीरक जीव सबसे स्तोक हैं। उनसे संख्यात गुणहानि स्थितिके उदीरक जीव असंख्यातगुणे हैं। उनसे संख्यात गुणवृद्धि स्थितिके उदीरक जीव विशेष अधिक हैं। शेष भंग पंचेन्द्रिय तिर्यंचोंके समान है। स्त्रीवेद और पुरुषवेदका भंग इसीप्रकार है। इतनी विशेषता है कि संख्यातगुणा करना चाहिए। इसीप्रकार मनुष्य पर्याप्तकोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि संख्यातगुणा करना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनमें स्त्रीवेद नहीं है। नपुंसकवेदका भंग पुरुषवेदके समान है। मनुष्यिनियोंमें इसीप्रकार जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि पुरुषवेद और नपुंसक-

१ ता०प्रतौ एवं चेव । एवं इति पाठः ।

सव्वत्थोवा अवत्त० । असंखे०[1] गुणहाणि० संखे०गुणा । सेसं तं चेव ।

§ ८४८. देवाणं पंचिंदियतिरिक्खभंगो। णवरि णवुंसयवेदो णत्थि। इत्थिवे०-पुरिसवे० अवत्त० णत्थि। एवं भवण०-वाणवें०-जोदिसि०। सोहम्मीसाण० बिदियपुढविभंगो। णवरि इत्थिवे०-पुरिसवेद० कसायभंगो। अवत्त० णत्थि। णवुंस० णत्थि। एवं सणक्कुमारादि जाव सहस्सारा त्ति। णवरि इत्थिवेदो णत्थि।

§ ८४९. आणदादि णवगेवज्जा त्ति मिच्छ० सव्वत्थोवा असंखे०गुणहाणि०। संखे०भागहाणि० संखे०गुणा। अवत्त० असंखे०गुणा। असंखे०भागहा० असंखे०गुणा। सम्म० सव्वत्थोवा असंखे०भागवड्ढि०। संखे०गुणवड्ढि० असंखे०गुणा। संखे०भागवड्ढि० संखे०गुणा। संखे०भागहाणि० असंखे०गुणा। अवत्त० असंखे०गुणा। असंखे०भागहाणि० असंखे०गुणा। सम्मामि० सव्वत्थोवा अवत्त०। असंखे०भागहा० असंखे०गुणा। सोलसक०-छण्णोक० सव्वत्थोवा संखे०भागहाणि०। अवत्त० असंखे०गुणा। असंखे०भागहाणि० असंखे०गुणा। एवं पुरिस०। णवरि अवत्त० णत्थि।

वेद नहीं है। इनमें स्त्रीवेदकी अवक्तव्य स्थितिके उदीरक जीव सबसे स्तोक हैं। उनसे असंख्यात गुणहानि स्थितिके उदीरक जीव संख्यातगुणे हैं। शेष उसी प्रकार है।

§ ८४८. देवोंमें पंचेन्द्रिय तिर्यञ्चोंके समान भंग है। इतनी विशेषता है कि नपुंसकवेद नहीं है। स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी अवक्तव्य स्थितिउदीरणा नहीं है। इसीप्रकार भवनवासी, व्यन्तर और ज्योतिषी देवोंमें जानना चाहिए। सौधर्म और ऐशान कल्पमें दूसरी पृथिवीके समान भंग है। इतनी विशेषता है कि स्त्रीवेद और पुरुषवेदका भंग कषायके समान है। इनकी अवक्तव्य स्थितिउदीरणा नहीं है। नपुंसकवेद नहीं है। इसीप्रकार सनत्कुमार कल्पसे लेकर सहस्रार कल्पतकके देवोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि स्त्रीवेद नहीं है।

§ ८४९. आनत कल्पसे लेकर नौ ग्रैवेयकतकके देवोंमें मिथ्यात्वकी असंख्यात गुणहानि स्थितिके उदीरक जीव सबसे स्तोक हैं। उनसे संख्यात गुणहानि स्थितिके उदीरक जीव संख्यातगुणे हैं। उनसे अवक्तव्य स्थितिके उदीरक जीव असंख्यातगुणे हैं। उनसे असंख्यात भागहानि स्थितिके उदीरक जीव असंख्यातगुणे हैं। सम्यक्त्वकी असंख्यात भागवृद्धि स्थितिके उदीरक जीव सबसे स्तोक हैं। उनसे संख्यात गुणवृद्धि स्थितिके उदीरक जीव असंख्यातगुणे हैं। उनसे संख्यात भागवृद्धि स्थितिके उदीरक जीव संख्यातगुणे हैं। उनसे संख्यात भागहानि स्थितिके उदीरक जीव असंख्यातगुणे हैं। उनसे अवक्तव्य स्थितिके उदीरक जीव असंख्यातगुणे हैं। उनसे असंख्यात भागहानि स्थितिके उदीरक जीव असंख्यातगुणे हैं। सम्यग्मिथ्यात्वकी अवक्तव्य स्थितिके उदीरक जीव सबसे स्तोक हैं। उनसे असंख्यात भागहानि स्थितिके उदीरक जीव असंख्यातगुणे हैं। सोलह कषाय और छह नोकषायकी संख्यात भागहानि स्थितिके उदीरक जीव सबसे स्तोक हैं। उनसे अवक्तव्य स्थितिके उदीरक जीव असंख्यातगुणे हैं। उनसे असंख्यात भागहानि स्थितिके उदीरक जीव असंख्यातगुणे हैं। इसीप्रकार पुरुषवेदकी अपेक्षा जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इसकी अवक्तव्य स्थितिउदीरणा नहीं है।

---

१ आ०प्रतौ संखे० इति पाठः।

§ ८५०. अणुदिसादि सव्वट्ठा त्ति सम्म० सव्वत्थोवा अवत्त० । संखे०-भागहाणि० असंखे०गुणा । असंखे०भागहाणि० असंखे०गुणा । बारसक०-सत्तणोक० आणदभंगो । णवरि सव्वट्ठे जम्हि असंखे०गुणा तम्हि संखेज्जगुणं कादव्वं । एवं जाव० ।

एवं वड्ढिउदीरणा समत्ता ।

§ ८५१. एत्थ ट्ठाणपरूवणे कीरमाणे ट्ठिदि-संकमभंगो । णवरि अप्पप्पणो उक्कस्सट्ठिदिउदीरणमादिं कादूण जाव अप्पप्पणो उदीरणा-पाओग्गजहण्णट्ठिदिसंतकम्मे त्ति ओदारिय । तदो 'को कदमाए ट्ठिदीए पवेसगो' त्ति पदस्स अत्थो समत्तो ।

मार्गदर्शक :- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज

गेण्हियव्वं एवं ट्ठिदिउदीरणा समत्ता ।

— —:—

§ ८५०. अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धितकके देवोंमें सम्यक्त्वकी अवक्तव्य स्थितिके उदीरक जीव सबसे स्तोक हैं । उनसे संख्यात भागहानि स्थितिके उदीरक जीव असंख्यातगुणे हैं । उनसे असंख्यात भागहानि स्थितिके उदीरक जीव असंख्यातगुणे हैं । बारह कषाय और सात नोकषायका भंग आनतकल्पके समान है । इतनी विशेषता है कि सर्वार्थसिद्धिमें जहाँ असंख्यातगुणा है वहाँ संख्यातगुणा करना चाहिए । इसीप्रकार अनाहारक मार्गणातक जानना चाहिए ।

इसप्रकार वृद्धिउदीरणा समाप्त हुई ।

§ ८५१. यहाँपर स्थानप्ररूपणा करनेपर स्थितिसंक्रमके समान भंग है । इतनी विशेषता है कि अपनी-अपनी उत्कृष्ट स्थितिउदीरणासे लेकर अपने-अपने उदीरणा प्रायोग्य जघन्य सत्कर्मतक उतारकर ग्रहण करना चाहिए । इसके बाद 'को कदमाए ट्ठिदीए पवेसगो' इस पदका अर्थ समाप्त हुआ ।

इसप्रकार स्थितिउदीरणा समाप्त हुई ।

शुद्धि-पत्र

पृष्ठ	पं०	अशुद्धि	शुद्धि
१६	१३	जानना चाहिए। प्रथम नरकमें	जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि इसमें अपना-अपना स्पर्शन कहना चाहिए। प्रथम नरकमें
१८	२४	अनुदीरक होते हैं। पञ्चेन्द्रिय	अनुदीरक होते हैं। योनिनी तिर्यञ्चोंमें स्त्रीवेदकी अनुदीरणा नहीं है। पञ्चेन्द्रिय
२४	२	पलिदोवमाणि पुव्वकोडिपुधत्तेणब्भहियाणि ?	पुव्वकोडिपुधत्तं ?
२४	१९	सम्मुख क्षायिक सम्यग्दृष्टि	[illegible] मार्गदर्शक- आचार्य श्री सुविधिसागर जी महाराज
२७	१७	रहता है।	सम्भव है।
३१	१६	दो भंगोंका नियमसे	दो भंगोंका तथा नपुंसकवेदका नियमसे
३१	३२	स्त्रीवेदकी	नपुंसकवेदकी
३३	१५	सिया। उदीर०	सिया उदीर०
३७	३४	भीतर दो बार	भीतर संयमासंयमके साथ दो बार

सूचना—यहाँपर हमने प्रकृत भागके कुछ उपयुक्त संशोधन दिये हैं। इसमें यदि विषय-सम्बन्धी कुछ संशोधन स्वाध्यायप्रेमियोंके ध्यानमें आवें तो उनकी सूचना मिलनेपर परामर्श करके उन्हें अगले भागमें दे दिया जायगा। जयधवलाके पूरे मुद्रणके अन्तमें इस ग्रन्थके विषय-सम्बन्धी सब संशोधनोंको देनेका भी हमारा विचार है।